[प्राचीन शास्त्रार्थ संग्रह भाग-एक]

निर्णय के तट पर

संकलनकर्ता
अमर स्वामी सरस्वती
लाजपत राय अग्रवाल

प्रकाशक :
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग
गाज़ियाबाद

निर्णय के तट पर

(शास्त्रार्थ संग्रह)

[प्रथम भाग]

प्रकाशक :—

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग

१०५८, विवेकानन्द नगर, गाज़ियाबाद (उ० प्र०)-२०१००१

भारत
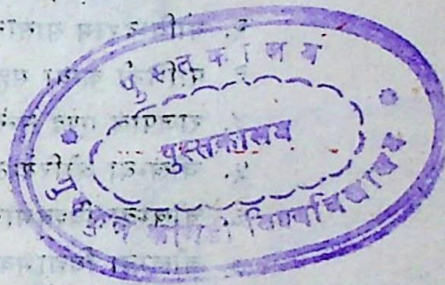
द्वितीय संस्करण
५०० प्रतियां

अक्टूबर सन् १९९२

मूल्य : भारत में—३००-००
विदेशों में—४० पौंड

प्रकाशन : अमर स्वामी प्रकाशम विभाग, गाजियाबाद (उत्तर-प्रदेश)

सम्पादक एवं संकलनकर्त्ता : (१) अमर स्वामी सरस्वती (२) लाजपत राय अग्रवाल

मूल्य : भारत में, तीन सौ रुपये
विदेशों में, चालीस पौंड

मुद्रक : कला प्रिन्टर्स, बी-४०/४, कान्ती नगर एक्सटेन्शन, कृष्ण नगर, दिल्ली-५१

संस्करण : द्वितीय — पांच सौ प्रतियां

पुस्तक प्राप्ती स्थान :
१, अमर स्वामी प्रकाशन विभाग, १०५८, विवेकानन्द नगर, गाजियाबाद (उ०प्र०)
२. गोविन्दराम सासानन्द, ४४०८, नई सड़क, दिल्ली-६
३. पाणिनी कन्या महाविद्यालय, पो० तुलसीपुर, वाराणसी (उ० प्र०)
४. राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६
५. चौखम्बा ओरियेन्टला, चौक वाराणसी (उ०प्र०)
६. चौखम्बा विश्वभारती, चौक वाराणसी (प्र० प्र०)
७. चौखम्बा विद्याभवन, चौक वाराणसी (उ० प्र०)
८. सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द भवन रामलीला मैदान नई दिल्ली-२
९. मुंशीराम मनोहर लाल, नई सड़क, दिल्ली:६
१०. मोतीलाल, बनारसीदास, बैंग्लों रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-७
११. मधुर प्रकाशन, बाजार सीताराम, गली आर्य समाज, दिल्ली-६
१२. आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-१
१३. वैदिक साहित्य प्रकाशन, आर्य समाज सुलतान बाजार, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)
१४. आर्य समाज बड़ा बाजार, पुस्तक विक्रय विभाग, मुंशी सद्‌रूद्दीन लैन कलकत्ता-७
१५, आर्य समाज, १९ विधान सरणी, पुस्तक विक्रय विभाग, कलकत्ता-७
१६. स्टार पाकेट बुक्स. आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
१७. मेहरचन्द लक्षमणदास, अन्सारी रोड, दिल्ली-६
१८. भारती साहित्य सदन सेल्स, मद्रास होटल, ३०/९०, कनाट सर्कस, नई दिल्ली
१९. विश्वेश्वरानन्द बुक एजेन्सी, होशियारपुर (पंजाब)
२०. सूर्य प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली-६
२१. आर्य समाज, पुस्तक विक्रय विभाग, कांकरिया रोड, अहमदाबाद (गुजरात)

NIRNAY KE TAT PER

Published By :

LAJPAT RAI AGGARWAL (Proprietor)
AMAR SWAMI PRAKASHAN VIBHAG
1058, VIVEKANAND NAGAR. GHAZIABAD-201001 (U.P.) INDIA

॥ ओ३म् ॥

निर्णय के तट पर (प्रथम भाग)

[NIRNAY KE TAT PER-Vol. I]

(शास्त्रार्थ संग्रह)
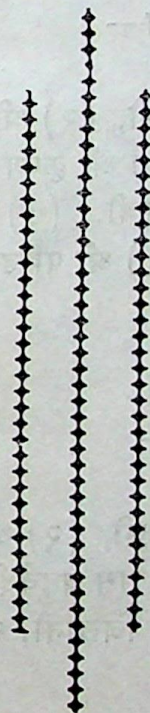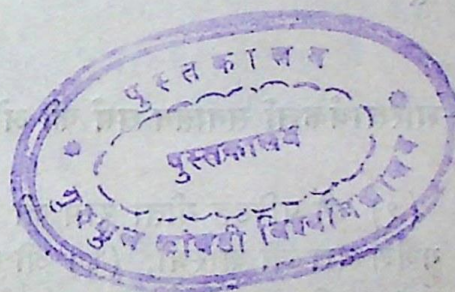
सम्पादक एवं संग्रहकर्त्ता--

१. अमर स्वामी सरस्वती

२. लाजपत राय अग्रवाल
(गवर्नमैण्ट कान्ट्रेक्टर)

प्रस्तुत पुस्तक में निम्न शास्त्रार्थ महारथियों के शास्त्रार्थ संग्रहीत हैं--

(१)—शास्त्रार्थकर्त्ता आर्य समाज की ओर से—

(१) श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी (अमर स्वामी जी महाराज), (२) श्री पण्डित कृपाराम जी "शास्त्रार्थी" (स्वामी दर्शनानन्द जी), (३) श्री महेन्द्र जी आर्य एम० ए० (४) श्री पण्डित राम दयालु जी शास्त्री "तर्क शिरोमणी", (५) श्री पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी, (६) श्री पण्डित धर्म भिक्षु जी "लखनवी", (७) श्री वेद प्रकाश जी एडवोकेट, (८) श्री रेवती रमन जी एडवोकेट, (९) श्री आचार्य डाक्टर श्रीराम जी आर्य, (१०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी "न्याय भूषण"।

(२)—शास्त्रार्थकर्त्ता सनातन धर्म की ओर से—

(१) श्री पण्डित गीता राम जी शास्त्री, (२) श्री पण्डित गोकल चन्द जी शास्त्री, (३) श्री पण्डित गणेश दत्त जी शास्त्री, (४) श्री पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री, (५) श्री पण्डित कालू राम जी शास्त्री, (६) श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री, (७) श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न, (८) श्री पण्डित भीमसैन जी प्रतिवादी भयंकर, (९) श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री, (१०) श्री १००८ स्वामी प्रेमदास जी।

(३)—शास्त्रार्थकर्त्ता मुसलमानों की ओर से—

(१) श्री मौलाना सनाउल्ला साहिब जी, (२) श्री मौलवी मौहम्मद अली साहिब जी, (३) श्री मौलवी खलील अहमद उर्फ बाबा खलील दास चतुर्वेदी, (४) श्री मौलाना सज्जाद हुसैन जी, (५) श्री मौलवी इदरीस अहमद खां, (६) श्री जैड जिलानी, जी (७) श्री आरिफ़ खान एडवोकेट।

(४)—शास्त्रार्थकर्त्ता ईसाइयों की ओर से—

(१) श्री पादरी अब्दुल हक़ साहिब जी।

(५)—शास्त्रार्थकर्त्ता जैनियों की ओर से—

(१) श्री वर्धमान जी शास्त्री।

सम्पादकीय

पाठक वृन्द ! कुछ विचार हैं, कुछ बातें हैं, जो यहाँ स्पष्ट करनी थी, परन्तु अगर उन सभी बातों को विस्तार से वर्णन करूँ तो एक अलग से पुस्तक बन सकती है, यहाँ मैं मात्र बहुत ही संक्षेप में कुछविचार उपस्थित करता हूं ।

पूज्य अमर स्वामी जी महाराज अब इस असार-संसार में नहीं रहे, जिनकी प्रेरणा से इस कार्य में निरन्तर प्रगति हो रही थी, मेरे ऊपर जो उनका स्नेह, अनुग्रह था उसका ऋण मैं जीवन भर नहीं चुका सकता । उनकी प्रेरणा और मेरा परिश्रम दोनों से मिल कर परिणाम स्वरूप फल आपके हाथों में हैं, स्वामी जी के बारे में कुछ भी लिखना सूर्य को दीपक दिखाने के समान ही है । **"यह ग्रन्थ क्या है ? कितना उपयोगी है ? यह स्वयं आपको अपना परिचय दे देगा ।"** वैसे मैंने कुछ विशेष-विशेष सम्मतियों का समावेश इसी प्रथम भाग के अन्त में कर भी दिया है ।

इस कार्य को पूर्ण करने हेतु-बीच में अनेकों बाधाएँ उपस्थित हुईं । परन्तु वे बाधाएँ इस कार्य को रोक नही पाईं । विशेष कर बाधा तब उपस्थित हुई जब स्वामी जी महाराज परलोकवासी हो गये । इसीलिए ग्रन्थ समय पर तैयार न हो सका । हमारे कई पाठक वृन्द तो निराश ही हो गये थे, परन्तु यह ज्ञान यज्ञ अनेकों विघ्न बाधाओं के आने पर भी पूर्ण हुआ, उस परम पिता परमात्मा की असीम कृपा है । और आप सभी लोगों का भी बहुत-बहुत धन्यवाद है । इस ग्रन्थ के पूर्ण होने तक जो प्रतिक्षा हमारे पाठकों को करनी पड़ी, इस बीच उनको जो भी कष्ट हुआ उसके लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं ।

स्वामी जी महाराज अपनी सभी शास्त्रार्थ सम्बन्धी सामग्री जो विपुल मात्रा में उनके पास संग्रहीत थी, उसे प्रकाशनार्थ मुझे दे गये हैं, अब उनके द्वारा दी गई जो भी शास्त्रार्थ सामग्री शेष रह गयी है उसे इस शास्त्रार्थ शृङ्खला के चौथे भाग में दिया जावेगा ।

किमधिकम् लेखेन् ॥

विदुषामनुचरः

"लाजपत राय अग्रवाल"
(गवर्नमैण्ट कान्ट्रेक्टर)
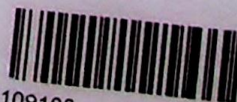
इस द्वितीय संस्करण की विशेषता

सज्जनों !

इस प्रथम खण्ड के प्रथम संस्करण का प्रकाशन प्रथम बार सन् १९७९ ई० में हुआ था, जिसमें लगभग ३०८ पृष्ठ थे, एवं उसमें पन्द्रह शास्त्रार्थों का समावेश था; परन्तु इस बार जब इसका प्रकाशन आरम्भ हुआ तो पूज्य अमर स्वामी जी महाराज के सुझाव पर उसमें जो काल्पनिक चित्र दिये हुए थे उनको अनुपयोगी समझते हुए निकाल दिया गया, एवं जहाँ-तहाँ ग्रन्थ के अन्दर व्यर्थ में जगह छुटी हुई थी, उसको समाप्त कर दिया गया, परिणाम स्वरूप वह ३०८ पेज की सामग्री मात्र २०० पेजों में ही आ गयी, परन्तु हमें अपनी घोषणानुसार लगभग ४०० पेज का ग्रन्थ पूरा करना था, इसलिये जो शास्त्रार्थ सामग्री प्रकाश में नहीं आई थी, उसका समावेश शेष पृष्ठों में किया गया, अब इस ४७६ पेज के ग्रन्थ में पच्चीस शास्त्रार्थों का समावेश हो गया है। एवं साथ में पूज्य अमर स्वामी जी महाराज के बृहद जीवन-चरित्र का भी समावेश इसी भाग में हो गया है।

अब विचार इस बात पर हुआ कि जिन सज्जनों के पास इस प्रथम भाग का पहला संस्करण है उनको यह सामग्री कैसे प्राप्त हो ? क्या वे पुनः इस द्वितीय संस्करण की प्रति को खरीदें ? अन्यथा वह अपने इस खण्ड को कैसे पूरा करें ? इसके समाधान हेतु हमने शेष १० शास्त्रार्थों की सामग्री व पूज्य अमर स्वामी जी महाराज का जीवन चरित्र जो २७६ पृष्ठों के अन्दर इस द्वितीय संस्करण में ज्यादा आया है उसको अलग से भी छपा कर बाइण्डिग करा दिया गया है।

अतः जिन सज्जनों के पास इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड का पहला संस्करण है वह इस द्वितीय संस्करण के २७६ पृष्ठों के अंश को लेकर अपना ग्रन्थ पूरा कर सकते हैं, उनको पुनः यह सम्पूर्ण प्रथम खण्ड का द्वितीय संस्करण खरीदने की आवश्यकता नहीं है।

इस प्रकार इस शास्त्रार्थ शृङ्खला के तीन भाग छप कर पूर्ण हो चुके हैं। चौथा भाग भी छपाने का निश्चय हो चुका है। इन तीनों भागों में निम्न विवरण के अनुसार शास्त्रार्थों का समावेश हो चुका है। आगे की शेष शास्त्रार्थ सामग्री अब चौथे भाग में आयेगी।

विवरण—

क्रम संख्या	निर्णय के तट पर (शास्त्रार्थ संग्रह)	पृष्ठ संख्या	शास्त्रार्थों की संख्या
१.	भाग—१	४७६	२५
२.	भाग—२	३६८	४०
३.	भाग—३	४२०	३२
		योग =	९७

इस तीसरे भाग तक ९७ शास्त्रार्थों का समावेश हो चुका है। अब चौथे भाग में ९८वें नं० से शास्त्रार्थों का समावेश किया जावेगा।

धन्यवाद !!

निवेदक—

"सम्पादक"

समर्पण

आर्य जगत के महान सन्यासी, महर्षि दयानन्द की सेना के महान सैनानी,
ब्राह्मण समाज के पूज्य, क्षत्रीय समाज में अग्रणी, महात्मा, स्वनामधन्य
जिन्होंने अपना सर्वस्व, आर्य समाज के सिद्धान्तों के प्रचार एवं प्रसार
में समर्पित कर दिया, प्रमाण महार्णव, रामायण, गीता, महाभारत
के महान व्याख्याता, वेद, शास्त्र, उपनिषद मर्मज्ञ, पुराण, कुरान आदि
अवैदिक मतों के मानमर्दन करने वाले, अद्वितीय वक्ता, शास्त्रार्थ केशरी,
जिन्होंने दिग्दिगान्तर में वैदिक सिद्धान्तों की विजय वैजयन्ती फहराई, उन

महात्मा अमर स्वामी सरस्वती के प्रति

जिस दिव्य गुरु ने "**अग्निना अग्नि समिध्यते**" को जीवन में चरितार्थ
कर हजारों शिष्यों को व्याख्याता, संगीतज्ञ, राजनीतिज्ञ, प्रोफेसर,
डाक्टर और न जाने क्या-क्या उच्च पदों के योग्य बना उन्हें दलित व
पीडितजनों के लिए उनमें हितैषी भावना भर कर समाज को समर्पित किया।
इसी "**अजेय योद्धा**" जिन्होंने ४ सितम्बर सन् १९८७ ई० को सांय पांच बजे
अपने जीवन के छियानवें वर्ष पूरे कर इस नश्वर देह का त्याग किया,
उनकी पुण्य स्मृति में यह ग्रन्थ सादर समर्पित है।

समर्पण कर्त्ता—

"लाजपतराय अग्रवाल"
(गवर्नमैण्ट कान्ट्रेक्टर)

॥ ओ३म् ॥

पोल खुलते ही पुराणों का, महातम घट गया।
"बुद्ध" की बुद्धि बँध गई, मद जैन मत का घट गया॥
दम घुटा तौरेत का, छल बल जबूरी कट गया।
जी जला इञ्जील का, दिल बाईबिल का फट गया॥
सामने कुरआन के ले, वेद चारों अड़ गये।
मार, मन्त्रों की पड़ी, पर आयतों के झड़ गये॥
डूब कर गहरे दलायल में, गपोड़े सड़ गये।
कुल हदीसों के हवाले भी, भँवर में पड़ गये॥

महाकवि श्री पण्डित नाथूराम शङ्कर शर्मा "शङ्कर"

॥ आवश्यक दृष्टव्य ॥

इस विशाल ग्रन्थ के विषय में "सम्मति रूप" हजारों पत्र आये, उनमें से हमनें कुछ मुख्य-मुख्य सम्मतियों को इसी भाग के अन्त में प्रकाशित करा दिया है, पाठकगण वहाँ देख सकते हैं।

कष्ट के लिए क्षमा चाहते हैं।

निवेदक—
"सम्पादक"

—अमर स्वामी सरस्वती"

निगाहें कामिलों पर पड़ ही जाती हैं जमाने की।
कहीं छिपता है "अकबर" फूल पत्तों में निहां होकर ।।

परिचय—भारत की उर्वर वसुन्धरा ने विश्व को ज्ञान और ज्ञानी दिये हैं, कर्मवीर देश-भक्त दिये हैं। आदिकाल से अब तक विद्वानों और सद्विवेकियों की परम्परा ने अपने ज्ञान के आलोक से अविद्या अन्धकार को छिन्न-भिन्न किया। आर्य समाज ने अक्षपाद गौतम न्यायदर्शनकार के विद्यालय में दीक्षित रूढ़िग्रस्त धारणाओं पर कठोर प्रहार करने वाले तार्किक एवं शास्त्रार्थ महारथी उत्पन्न किये। स्वनाम धन्य स्वामी दर्शनानन्द, पण्डित प्रवर गणपति शर्मा, आर्य पथिक पण्डित लेखराम, पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी जैसे शास्त्रार्थ महारथियों की श्रृंखला में आर्य जगत के विख्यातनामा **"श्री अमर स्वामी जी महाराज"** हैं आपका जन्म वि० सं० १९५१ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को ग्राम अरनियां, जिला बुलन्दशहर में हुआ था, आपके पिता का नाम श्री ठाकुर टीकम सिंह जी तथा माता का नाम श्रीमती राजकुमारी देवी था। आपने अनेकों सम्प्रदायों से विभिन्न विषयों पर शास्त्रार्थ किये। शास्त्रार्थसमर में आपकी चहुंमुखी तलवार चलती है। आपकी प्रतिभा की प्रशंसा विरधी भी करते हैं। यह कम गौरव की बात नहीं है। आपने अपने जीवन में सैकड़ों युवक तैयार किये जो आज देश के कौने कौने में वैदिक धर्म का प्रचार कर रहे हैं। आप इस ९२ वर्ष की आयु में अब भी वैदिक धर्म के प्रचार में संलग्न है। वर्तमान समय में आर्य समाज के अन्दर आपकी सानी का अन्य कोई सन्यासी नहीं है। स्वामी जी में प्रकाण्ड पाण्डित्य, पैनी तर्क शक्ति के दर्शन आज भी किये जा सकते हैं। स्वामी जी के बारे में लिखना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है।

"शिव कुमार शास्त्री"
(भू० पू० संसद सदस्य)

नोट—उपरोक्त "श्रद्धासुमन" (परिचय) श्री शास्त्री जी द्वारा स्वामी जी के जीवन काल में ही दिये गये थे।

—"सम्पादक"

इस वृद्धावस्था में भी श्री अमर स्वामी जी महाराज का शास्त्रार्थ गर्जन–
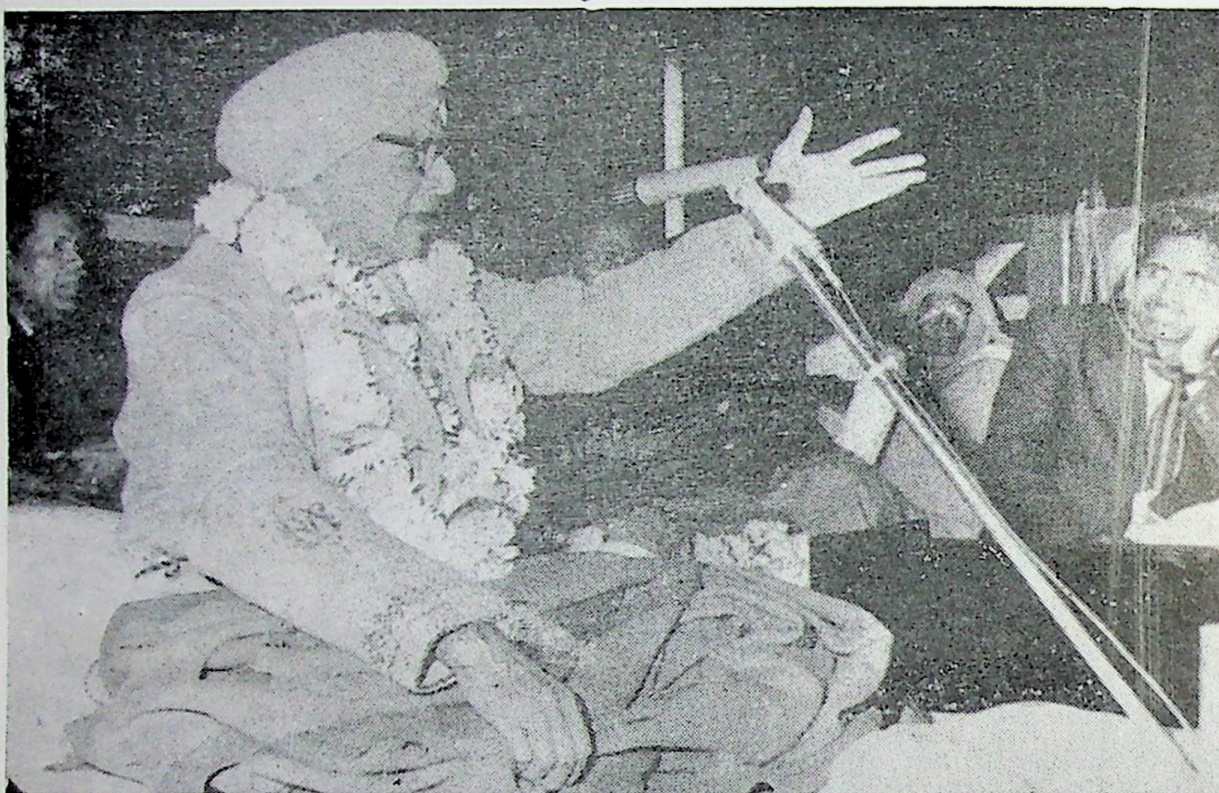
"आये कोई माई का लाल मैदान में"

यह विरक्त, यह वीर पुरुष, यह अमर स्वामि सन्यासी । पाखंडों का सदा सदा विद्रोही, ईश विश्वासी ।।
जीवन भर जो रहा पूजता वैदिक आदर्शों को । सदा सदा आमन्त्रित करता आया संघर्षों को ।।
वेद ज्योति से अपने जीवन को ज्योतित कर डाला । निज वाणी से लेखनी से, जग अलौकिक कर डाला ।।
शास्त्र समर में यह योद्धा जिस जां पर अड़ जाता है । कौन हिला पाये अंगद का पांव गड़ जाता है ।।
दयानन्द का सैनिक यह सेनानी यह आर्य सेना का । बढ़ा जिधर को ॐ ध्वजा ले, फहरी विजय पताका ।।
तर्क बाण, जब यह प्रमाण का वेत्ता बरसाता है । पाखंडों का दुर्ग धराशाही हो गिर जाता है ।।
क्या साहस ले, साम्प्रदायवादी विवाद की ठाने । हैं पुराण, कुरआन, बाईबिल सब जाने पहचाने ।।
इसी मनस्वी, ज्ञान वारिधि का यह अभिनन्दन है । इस विरक्त के स्वागत में पुलकित हर्षित जन मन है ।।
जुग जुग जिये, सदा चमके तेजस्वी! तेरा जीवन । यही कामना है ईश्वर से, "शरर" यही अभिनन्दन ।।

"प्रो० उत्तम चन्द शरर एम० ए०"
(पानीपत)

नोट—उपरोक्त पक्तियां स्वामी जी के जीवन काल में ही श्री "शरर" जी द्वारा लिखी गई थी । —**"सम्पादक"**

प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशक एवं संग्रहकर्त्ता व सम्पादक—

परिचय—प्रिय लाजपत राय जी एक अच्छे योग्य एवं होनहार युवक है। इनकी कार्य करने की लगन अद्‌भुत हैं, इनका जन्म एक प्रसिद्ध सम्पन्न अग्रवाल वंश में हुआ एवं ये भी अपने पूर्वजों की भांति रात-दिन वैदिक धर्म के प्रचार एवं प्रसार में संलग्न है। इनके परिवार को मैं अच्छी तरह जानता हूं। इनके परिवार में से ही इनके तायरे भाई **"श्री कृष्ण चन्द जी" जो दिल्ली राज्य के उप-राज्यपाल भी रहे।** जिला सहारनपुर में इनके यहां अच्छी-खासी जमींदारी है। श्री लाजपत राय जी के बाबा "श्री लाला महताबराय जी" आदि कट्टर ऋषि भक्त थे बड़े-बड़े विद्वानों का इनके यहां आना-जाना रहता था।

आर्य जगत के मूर्धन्य विद्वान श्री अमर स्वामी जी ने सैकड़ों इतने बड़े-बड़े विद्वान, अपने पास रखकर तैयार किये हैं जो सारे देश में वैदिक धर्म का प्रचार एवं प्रसार कर रहें हैं, श्री लाजपत राय जी भी उन्हीं में से एक हैं।

"LAJ PAT RAI AGGARWAL" (Govt. Contractor)

श्री लाजपत राय जी के स्तुत्य प्रयास से ही यह शास्त्रार्थों का संग्रह तैयार हो सका, परमेश्वर इनको दीर्घायु प्रदान करें एवं ये हमेशा अपने कार्यों में सफलता प्रदान करें। इसके साथ-साथ श्री अमर स्वामी जी भी धन्यवाद के पात्र है जिन्होंने अपने कठिन तप व त्याग से ऐसे अद्‌भुत लगनशील रत्न तैयार किये हैं।

श्री लाजपत राय जी एक अच्छे राजकीय ठेकेदार भी हैं, जो इस समय विद्युत विभाग व जल निगम आदि अन्य सम्मानित सरकारी विभागों में कार्यरत हैं, इनको सभी सिविल के निर्माण कार्यों का एक अच्छा अनुभव है। बल्कि यों कहिए जो एक अच्छे कान्ट्रेक्टर (ठेकेदार) के अन्दर अपनी स्वयं को प्रतिभा होनी चाहिए, वो इनमें मौजूद है। इतने व्यस्त कार्यों में से भी समय निकाल कर वैदिक धर्म के प्रचार हेतु प्रकाशन विभाग को चलाना, इनकी लग्न का एक नमूना है।

वैदिक धर्म का—
"बिहारीलाल शास्त्री काव्यतीर्थ"
(बरेली)

॥ ओ३म् ॥

भारत के शुभ नभ मंडल में,
हुए अनेकों पथगामी ।
एक उन्हीं में थे उज्ज्वल तारा,
श्री श्रद्धेय "अमर स्वामी" ॥

—"सम्पादक"

शास्त्रार्थ के सामान्य नियम

—अमर स्वामी परिव्राजक

शास्त्रार्थ दो पक्षों के मन्तव्य और अमन्तव्यों के "**सत्यासत्य की परीक्षा के लिये होता है, न कि दोनों पक्षों के वक्ताओं की विद्या की परीक्षा के लिये**" इसलिये स्पष्ट हैं कि—शास्त्रार्थ उस भाषा में होना चाहिये जिसको श्रोता समुदाय सरलता से समझ सकता हो, व्याख्यान उस समुदाय को समझाने के लिये जिस भाषा में दिये जाते हैं, उस भाषा में ही, शास्त्रार्थ भी होने चाहिये, जिस भाषा में नित्य व्याख्यान होते हैं, उसको छोड़ कर शास्त्रार्थ भिन्न भाषा (संस्कृत) में करने का आग्रह अनावश्यक, अनुपयुक्त, अयुक्त और दुराग्रह मात्र है, जो सर्वथा असद्भावना का ही प्रमाण है। ज़ैनियों ने संस्कृत भाषा में शास्त्रार्थ करने का आग्रह कभी नहीं किया, ईसाइयों से असंख्य मुबाहिसे (शास्त्रार्थ) हुए उन्होंने अंग्रेजी या हिब्रू भाषा में मुबाहिसा करने की मांग कभी नहीं की। मुसलमानों और अहमदियों के साथ भी असंख्य मुबाहिसे हो चुके उन्होंने कभी अरबी भाषा में मुबाहिसा करने का प्रश्न नहीं उठाया। केवल कोई-कोई पौराणिक संस्कृत में शास्त्रार्थ करने का हठ करते हैं। जो इस बात का पुष्ट प्रत्यक्ष प्रमाण है कि—वे अपने मन्तव्यों की पोल को छुपाने के लिये संस्कृत की चादर में छुपना चाहते हैं। हम उनको कहते हैं कि जिस भाषा में आपने-अपने व्याख्यानों द्वारा जनता में भ्रम फैलाया है, लोगों को जिस भाषा द्वारा बहकाया है। उसी भाषा में शास्त्रार्थ होगा। और उसी भाषा में आपके मिथ्या मत की पोल खोली जायगी। मेरा निश्चित मत है कि—पौराणिकों की इस चाल में कभी नहीं आना चाहिये। इस हठ और दुराग्रह के ये कारण हैं। (१)—यदि संस्कृत में शास्त्रार्थ हुआ तो उनके ढोल की पोल श्रोता समुदाय नहीं समझ सकेगा। (२) यदि संस्कृत का हिन्दी में अनुवाद भी किया जायेगा तो भी पोल खुलने का डर आधा तो कम हो ही जायगा। (३)—संस्कृत और हिन्दी दोनों में शास्त्रार्थ होने से एक झगड़ा यह भी डाला जा सकता है, कि वक्ता ने संस्कृत में कुछ और तथा हिन्दी भाषा मैं और कुछ बोला है। (४)—संस्कृत में शास्त्रार्थ होने से संस्कृत को अशुद्ध बताकर व्याकरण का झगड़ा डाला जायेगा। और सारा समय उसी में नष्ट हो जायेगा, तब पोल खुलने से वचाव हो जायेगा, "जान बची और लाखों पाये"। (५)—सिद्धान्त निर्णय की दृष्टि से यदि संस्कृत में शास्त्रार्थ करने से इन्कार किया जायगा, तो मूर्खों पर यह प्रभाव डाला जा सके, कि—"आर्य समाजी संस्कृत नहीं जानते हैं," पर यह इतना असत्य है जितना दिन को रात्रि बताना, आर्य समाज में शास्त्रियों और आचार्यों की भरमार है, विश्वविद्यालयों से परीक्षा पास किये हुए और उपाधिधारण किये हुओं की भी कोई कमी नहीं है। ऐसे भी बहुत है, जो विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं में उत्तीर्ण न होते हुए भी धारा प्रवाह संस्कृत बोलते हैं। वे शास्त्रार्थों में संस्कृत केवल इसी कारण से स्वीकार नही हैं करते कि—इससे असत्य की पोलखुलने का अमूल्य समय आधा व्यर्थ नष्ट हो जायेगा। अब सवाल पैदा होता है कि—"**क्या शास्त्रार्थ संस्कृत में होने से ही संस्कृत का प्रचार होगा?**" यह अयुक्तियुक्त बात एक बार हिन्दू महासभा के प्रधान श्री प्रो० रामसिंह जी ने केवल पौराणिकों

को प्रसन्न करने के लिए ही कही थी। शास्त्रार्थ नित्य नहीं होते हैं, वर्षों-वर्षों के बाद कभी-कभी शास्त्रार्थ होते हैं। जिस समाज के मञ्च पर प्रो० साहब ने यह बात कही, उस समाज के जन्म से उस समय वह पहिले-पहल शास्त्रार्थ हुए थे, वह शास्त्रार्थ यदि संस्कृत में हो जाते तो क्या संस्कृत का प्रचार हो जाता ? वहां का बच्चा-बच्चा संस्कृत बोलने लग जाता ? कदापि नहीं ! व्याख्यान इस समय तक कई हजार हो चुके जो सबके सब हिन्दी भाषा में हुये, यहाँ तक है कि—प्रो० साहब ने स्वयं अब तक अपनी आयु में कई हजार व्याख्यान हिन्दी ही में दिये हैं, संस्कृत का प्रचार करने की भावना उन व्याख्यानों के देते समय कभी जाग्रत नहीं हुई। वर्षों-वर्षों के पीछे कोई शास्त्रार्थ होगा, और वह संस्कृत में होगा तो उससे संस्कृत का प्रचार हो जायेगा, ऐसी कल्पना कभी भी सत्य नहीं मानी जायेगी। हाँ ! इससे शास्त्रार्थ का उद्देश्य "सत्यासत्य" का जन समुदाय पर प्रकट करना, यह अवश्य नष्ट हो जाता है। श्री प्रो० राम सिंह जी गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के वर्षों कुलपति रहे हैं, वहाँ उन्होंने कभी यत्न नहीं किया कि, वहाँ के रहने वाले सभी छात्र और अध्यापक सदा संस्कृत ही बोला करें। मैं प्रो० साहिब का सदा सम्मान करता हूं और वह भी मेरा बहुत मान करते हैं पर यह व्यवस्था उनकी किसी प्रकार भी उचित नहीं जंची। उनकी व्यवस्था को सुनते ही आर्यों ने कहा कि यह केवल पौराणिकों को प्रसन्न करने का प्रयास है।

अनेकों स्थानों पर पौराणिक लोग यह माँग भी अवश्य करते हैं कि, शास्त्रार्थ संस्कृत में हो, तथा लेख बद्ध हो। यह मांग सर्वथा छल युक्त है, इसको वह स्वीकार कर सकते हैं, जो शास्त्रार्थ से होने वाले लाभालाभ के विषय में कुछ भी ज्ञान नहीं रखते हैं, या जो कुछ भी न करके उन अनुचित माँग करने वालों को भी प्रसन्न करके भी नेता बने रहना चाहते हैं, संस्कृत में लेखबद्ध शास्त्रार्थ से क्या हानियाँ हैं ? इस पर भी विचार करिये। जो कुछ पाँच मिनट में बोला जाता है. वह पच्चीस मिनट में लिखा जाता है, पाँच मिनट की संस्कृत पच्चीस मिनट में लिखी गयी। और पच्चीस मिनट में उसका हिन्दी अनुवाद लिखा गया, पचास मिनट हो गये, फिर संस्कृत को पाँच मिनट में सुनाया गया, और पांच मिनट में उसका अनुवाद सुनाया गया, तो एक घण्टा समाप्त हो गया। इसी प्रकार दूसरे पक्ष का एक घण्टा समाप्त हुआ, इन दो घण्टों के शास्त्रार्थ में दोनों पक्ष से पाँच-पाँच मिनट श्रोताओं की भाषा बोली गई, दो घण्टे में केवल दस मिनट श्रोता समुदाय के लिए काम में आये, यदि चार घण्टे भी शास्त्रार्थ हो, तो केवल बीस मिनट उसमें श्रोताओं के लिए होंगे। लो ! हो गया शास्त्रार्थ ! हो गया निर्णय सत्यासत्य का !! पचास मिनट तक एक पक्ष का पण्डित बैठा लिखता रहेगा, तो श्रोता क्या वहां बैठे-बैठे मक्खी मारेंगे ? इसमें भी झगड़े डाले जा सकते हैं, शुद्धाशुद्ध संस्कृत के, ऐसे शास्त्रार्थ के लिये श्रोताओं का बुलाना महामूर्खता का काम है। अपने-अपने घर से दोनों पक्षों के पण्डित लिख-लिख कर भेजते रहें, ऐसे शास्त्रार्थ महीनों भी चल सकते हैं। तथा वर्षों भी चल सकते है इस प्रकार के शास्त्रार्थों की मांग करना धूर्त्तता के बिना नहीं हो सकता।

तीसरी माँग पौराणिकों की ओर से यह होती है कि शास्त्रार्थ में जय-पराजय जीत और हार का निर्णय देने वाला भी एक व्यक्ति "मध्यस्थ" या "निर्णायक" होना चाहिये, कभी-कभी तो वह यहाँ तक भी कहते हैं कि, कोई हाईकोर्ट का जज या कोई सुप्रीमकोर्ट का जज मध्यस्थ रूप में होना चाहिये। "न नौ मन तेल होगा, न···नाचेगी" इस माँग में क्या कोई औचित्य है ? इस पर विचार किया जायेगा तो पता लगेगा कि यह उनको तीसरो मांग भी सर्वथा अनुचित और शास्त्रार्थ में रुकावट डालने वाली

ही है। दोनों पक्षों के विद्वानों से अधिक संस्कृत तथा उस सारे साहित्य का प्रकाण्ड पण्डित हो, जो दोनों पक्षों में माना जाता हो, और जिसके दोनों पक्षों से प्रमाण दिये जाते हैं, ऐसा विद्वान मध्यस्थ या तो आर्य समाजी होगा, या सनातन धर्मी होगा। जो आर्य समाजी होगा, उसके निर्णय को पौराणिक नहीं मानेंगे और अगर मध्यस्थ पौराणिक होगा तो उसके निर्णय को आर्य समाजी नहीं मानेंगे, और यह भी हो सकता है कि मध्यस्थ पक्षपात करे। न भी करे तो हारा हुआ पक्ष यह कह सकता है कि, मध्यस्थ ने पक्षपात किया है, श्री प्रोफेसर रामसिंह जी ने आवश्यकता न होते हुए भी यह कहा कि मैं यदि मध्यस्थ हूंगा, तो कभी पक्षपात नहीं करूंगा कुछ लोगों ने उसी समय यह कहा कि—इन्होंने तो इस समय भी आवश्यकता और अधिकार न होते हुए भी पौराणिकों के असत्य पक्ष का "संस्कृत में शास्त्रार्थ और मध्यस्थ" का व्यर्थ समर्थन किया है, जिसका प्रयोजन उनकी प्रसन्नता प्राप्त करने के सिवाय और कुछ भी नहीं है। ईसाई या मुसलमान मध्यस्थ हों तो दोनों पक्षों के सारे साहित्य और संस्कृत का प्रकाण्ड पण्डित उनमें कहाँ से आयेगा ?

व्यक्तिगत निर्णय की अपील—छोटी अदालत के निर्णय की अपील बड़ी अदालत में और उसके निर्णय की अपील उससे बड़ी अदालत में, की जाती है, यहां तक कि सर्वोच्च न्यायालय (सुप्रीमकोर्ट) में भी अपील की जाती है सुप्रीम कोर्ट का निर्णय यद्यपि अन्तिम होता है, तो भी क्या वह ईश्वरीय न्याय के समान हो सकता है ? कदापि नहीं। सुप्रीम कोर्ट के जज सर्वज्ञ नहीं होते हैं। प्रश्न यह है कि क्या मध्यस्थ के निर्णय की अपील भी हुआ करेगी ? यदि हाँ ! तो वह क्या निर्णय हुआ ? फिर प्रश्न है कि राज्य नियमों के पण्डित धार्मिक सिद्धान्तों का निर्णय दें, वह ऐसा ही होगा जैसा वकील द्वारा रोगी की चिकित्सा, और वैद्य या हकीम द्वारा मुकदमा। यदि मध्यस्थ द्वारा ही जय-पराजय और सत्यासत्य का निर्णय लेना हो, तो कमरे में दो पण्डित शास्त्रार्थ करें, जज साहिब निर्णय दे दें, उसे प्रकाशित करा दिया जाये, श्रोताओं की भीड़ जमा करना व्यर्थ है, श्री आद्य शंकराचार्य जी द्वारा सैकड़ों शास्त्रार्थ हुए होंगे, मध्यस्थ तो एक मण्डनमिश्र वाले शास्त्रार्थ में ही मण्डनमिश्र की पत्नी मध्यस्थ बनी जिसने शास्त्रार्थ को कुछ भी न समझा और पति के गले की माला को मुरझायी हुई देखकर ही अपने पति के विरुद्ध निर्णय दे दिया, फिर स्वयं शास्त्रार्थ करने को बैठ गयी, सब कुछ चौपट कर दिया, उस ही के कारण मण्डन का मुण्डन हो गया, कोई भी विद्वान, बुद्धिमान और सत्य का प्रचारक शास्त्रार्थ का निर्णय एक व्यक्ति द्वारा कराना पसन्द नहीं करेगा। ये तीन अनुचित माँगें हैं। जो पौराणिकों की ओर से अपनी दुर्बलता छुपाने, शास्त्रार्थ को टालने, अपना भयंकर घटाटोप दिखाने के लिये अवश्य ही रक्खी जाती है, मूर्ख उनके साथ हो जाते हैं। आर्य समाजियों को उनकी इन अनुचित माँगों के सम्मुख कदापि नहीं झुकना चाहिए, यदि इन माँगों की पूर्त्ति के बिना पौराणिक लोग शास्त्रार्थ न करें तो युक्ति, प्रमाण और सभ्यता पूर्वक, उनके मिथ्या मत की खूब पोल खोली जानी चाहिए, इनमें कमी कदापि न की जाये, और इन माँगों की कलई खोली जावे। चौथी एक और भी अनुचित माँग यह है कि शास्त्रार्थ में प्रमाण केवल वेदों के ही दिये जावें। पौराणिकों की यह माँग भी सर्वथा अनुचित है- और यह माँग केवल इसलिये है कि, उनके अपने ही ग्रन्थों से उनके मन्तव्यों का खंडन और आर्य समाज के मन्तव्यों का मण्डन न हो जाये, और पौराणिक पन्थ की पोल न खुल जाय, इस माँग के अनौचित्य पर भी प्रकाश डाला जाना चाहिये, इस विषय में उचित नियम यह है, कि "जो पक्ष जिन-जिन ग्रन्थों को प्रमाणित मानता है, उन-उन ग्रन्थों के प्रमाण उस पक्ष के लिये दिये

जायेंगे" यथा जैनियों के लिये जैन ग्रन्थों के, ईसाइयों के लिए बाइबिल के, मुसलमानों के लिये कुरआन हदीसों और तफसीरों आदि के, अहमदियों के लिये मिर्जा गुलाम अहमद आदि अहमदियों की किताबों के, पौराणिकों के लिये वेदादि के साथ पुराणादि ग्रन्थों के प्रमाण भी दिये जायेंगे, आर्य समाजियों के लिये वेद तथा वेदानुकूल दर्शन उपनिषद तथा ऋषि दयानन्द जी के ग्रन्थ प्रमाण में देने योग्य हैं, उपरोक्त नियम सबके लिये समान रूप से लागू हो सकता है, जो इस प्रकार है कि – "जो पक्ष जिन-जिन ग्रन्थों को प्रामाणिक मानता है, उन-उन ग्रन्थों के प्रमाण उस पक्ष के लिये दिये जावें"। केवल वेद के प्रमाणों वाला नियम कहीं भी उचित नहीं है।

सार रूप में नियम इस प्रकार हुए—

(१)—जिस भाषा में व्याख्यान दिये जाते हैं, अर्थात् जिस भाषा को श्रोता लोग समझते हैं उसी भाषा में शास्त्रार्थ होना चाहिये, क्योंकि शास्त्रार्थ उन्हीं को सुनाने समझाने तथा उन्ही पर सत्यासत्य प्रकट करने के लिये होते हैं शास्त्रार्थ कर्ताओं की योग्यताओं का प्रदर्शन करने या उनकी योग्यता की परीक्षा लेने के लिये नहीं। (२)—शास्त्रार्थ-श्रोताओं के सम्मुख केवल मौखिक होना चाहिये। लेख बद्ध ही करना हो तो जन समुदाय को बुलाना व्यर्थ है, अपने-अपने घरों से लिख लिख कर दोनों पक्ष भेजते रहें। साथ-साथ समाचार पत्रों में छपता रहे. या एकत्रित होकर पुस्तकाकार हो जावे। (३)—शास्त्रार्थ का समय बताने तथा वक्ताओं को विषयान्तर में जाने से रोकने तथा श्रोताओं को नियन्त्रण में रखने के लिये एक या दो अध्यक्ष होने चाहिये। (४)—जो पक्ष जिन-जिन ग्रन्थों को प्रामाणिक मानता है, उसके लिये उन-उन ग्रन्थों के प्रमाण दिये जायें। (५)—एक समय में तीन घण्टे से अधिक शास्त्रार्थ नहीं होना चाहिये, पहली बारी में १५-१५ मिनट तथा आगे दस-दस मिनट वक्ता बोलें, आवश्यकता समझें तो अन्तिम बारी में भी १५-१५ मिनट बोला जाय। (६)—"अध्यक्ष" शास्त्रार्थ के विषय में कुछ सम्मति न दें, वह केवल आवश्यकतानुसार धन्यवाद तथा सभा समाप्ति की सूचना दें। श्रोता लोग कोई असभ्यता तथा अशिष्टता का व्यवहार न करें, जयकारे न लगायें तथा तालियाँ न बजायें इसका ध्यान रक्खें। (७)—दोनों पक्षों के शास्त्रार्थकर्त्ता-परस्पर सभ्यता से वाक् व्यवहार करें व्यक्तिगत आक्षेप कोई न करें। (८)– दोनों पक्षों के सम्माननीय महानुभावों के नाम सभ्यता और सम्मान के साथ लिये जावें अपमानजनक शब्द न बोले जायें। (९)—दोनों पक्षों के वक्ता शास्त्रार्थ में माधुर्य रखने तथा कटुता से बचने का विशेष ध्यान रक्खें, इन नियमों पर उभय पक्ष के अधिकारियों के हस्ताक्षर होने चाहिये और इन नियमों की कापियाँ दोनो पक्षों के पास रखनी चाहिये।

कुछ अपने साथियों के लिए निर्देश—

(१)— शास्त्रार्थ के लिये तैयारी सदा करते रहना चाहिये, युद्ध, यदा, कदा वर्षों के पीछे होते हैं, पर सिपाहियों की परेड तथा युद्धाभ्यास सदा होता रहता है, उन्हें सदा ध्यान रखना चाहिये कि "**अनभ्यासे विषं विद्या**"। (२)—बहुत कुछ कण्ठस्थ रहना चाहिये, ग्रन्थ तो थोड़े संकेत के लिये रहने चाहिये, ध्यान रहे—"**पुस्तकस्था यथा विद्या, परहस्त गतं धनम्। कार्य काले च सम्प्राप्ते, न सा विद्या न तद्धनम्॥**"—अर्थात्—"पुस्तकों में छपी विद्या एवं दूसरे के हाथ में गया धन कभी समय पर काम नहीं आता" हमेशा अपने कण्ठ की विद्या तथा अपनी जेब का पैसा हो समय पर काम आता है।

(३)--विरोधी के प्रत्येक प्रश्न-उत्तर-आक्षेप या प्रमाण नोट करते जाना चाहिये, विरोधी का भाषण सावधान होकर सुनना चाहिये। (४)— विपक्षी की अनावश्यक बातों का संक्षेप में संकेत कर देना चाहिये, उन पर अधिक समय नहीं लगाना चाहिये, यदि उन्हीं में समय समाप्त हो गया और आवश्यक बातों को कहने के लिये समय न बचा तो विपक्षी अपने उद्देश्य में सफल हो गया, उसने अनावश्यक बाँतों में फंसा लिया। (५) --आवश्यक बातें अवश्य कहनी चाहियें। (६)—अधिक विस्तार से बोलने के अभ्यासी शास्त्रार्थ में सफल नहीं होते हैं। अतः अपने उत्तर को संक्षेप में कहना चाहिये, पर इतना संक्षेप भो न करें कि बात ही न स्पष्ट होने पावे। (७)—शास्त्रार्थ कर्त्ता के पास युक्तियों और प्रमाणों का बाहुल्य होना चाहिये। (८)—शास्त्रार्थ के विषय में अपना पक्ष तथा विरोधी पक्ष दोनों का बहुत ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये। (९)—जब शास्त्रार्थ करने का समय आवे तब शास्त्रार्थ के विषय पर विशेष तैयारी कर लेनी चाहिये। (१०)—अपने साथियों से विचार विनिमय करने, आवश्यक बातें पूछने तथा बताने में कभी संकोच नहीं करना चाहिये। (११)—कहने योग्य प्रमाणों-युक्तियों और कहने योग्य प्रश्नों की सूची बनाकर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखकर अपने पास रखनी चाहिये. और प्रमाणों की पुस्तकों में प्रमाण का संकेत तथा पृष्ठांक लिखकर कागज की पट्टियां लगा रखनी चाहिये। (१२) प्रमाण निकालने वाले सज्जन को सारे प्रमाण देख लेने चाहिये, सूची उनके पास भी रहे तो अच्छा है, प्रमाण निकालने में बहुत फुर्ती से काम लेना चाहिये। प्रमाण निकालने वाले की सुस्ती अच्छी नहीं उनकी असावधानी शास्त्रार्थकर्ता के साथ शत्रुता का काम देगी। (१३)—शास्त्रार्थ में ज़िन ग्रन्थों के प्रमाण देने हों, उनको उस समय वेदी पर अवश्य रखना चाहिये। जो ग्रन्थ पास नहीं है, अथवा जिस प्रमाण का सही पता ज्ञात नहीं है, उस प्रमाण का देना पराजय का कारण बन सकता है। (१४)—शास्त्रार्थ कर्त्ता को क्रोधावेश में कभी नहीं आना चाहिये। (१५)— शास्त्रार्थ करने के लिए उसी व्यक्ति को आना और लाना चाहिये, ज़िसके पास प्रमाणों का भण्डार हो, जिसके पास बहुत सी युक्तियां हों और जिसको तात्कालिक सूझ व बुद्धि हो जो प्रत्युत्पन्न मति हो जिसने स्वपक्ष तथा परपक्ष को भी देखा हो, और समझा हुआ भी हो। (१६)—वक्ता की वाणी में मिठास, बल, ओज और चमत्कार होना चाहिये, प्रश्न करते और उत्तर देते समय बहुत मनोरंजक वाक्य शैली का प्रयोग करने का अभ्यास रहना चाहिये। (१७)—प्रथम समय में उपक्रम और अन्तिम समय में उपसंहार बहुत प्रभावोत्पादक होना चाहिये। मैंने सारी आयु भर शास्त्रार्थ किये हैं, मेरा देश भर के पौराणिकों एवं अन्य मतावलम्बियों को पहले भी खुला चैलेन्ज है कि वैदिक धर्म (आर्य समाज) के सिद्धांत अकाट्य तथा सर्व प्रकार से सत्य हैं। इनको कोई भी असत्य सिद्ध नहीं कर सकता। में अब भी हर समय शास्त्रार्थ करने को तैयार हूं, संसार का कोई भी मतानुयायी आर्य समाज के सिद्धान्तों पर, अगर उसे इनके सत्य होने में कोई शंका है तो वह शास्त्रार्थ कर सकता है।

वैदिक धर्म का—
"अमर स्वामी परिव्राजक"

नोट—

पूज्य पाद शास्त्रार्थ महारथी स्व० श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री (बरेली निवासी) द्वारा दिये गये "**शास्त्रार्थ कर्त्ताओं के लिए आवश्यक नियम व निर्देश**" इसी ग्रन्थ के अन्तिम पृष्ठों पर छपे हुए हैं, उनका भी अवलोकन अवश्य करें। **"सम्पादक"**

विषयानुक्रमणिका

नोट—अब आप इस प्रथम खण्ड में आये हुए शास्त्रार्थों का अध्ययन कर लाभ उठायें। शेष खण्डों के लिए प्रकाशन से सम्पर्क करें।

"सम्पादक"

शास्त्रार्थ से पहले

शास्त्रार्थ की पृष्ठ भूमि—

"**पिण्डीघेप**" जिला अटक की एक तहसील थी, सीमा प्रान्त सरहदी सूबा (फ्राण्टियर) में "**अटक**" नाम की एक प्रसिद्ध और बड़ी नदी है। उस नदी के किनारे पर बसा हुआ "**अटक**" नाम का ही एक नगर है। इस नदी पर पहले पुल नहीं होता था, तब "**वीर हरि सिंह नलवा**" ने अपनी सेना के साथ काबुल पर आक्रमण करने के लिए इस नदी को पार करते समय कहा था कि—

सबहि भूमि गोपाल की यामें "अटक" कहाँ ?
जाके मन में "अटक" है सोई "अटक" रहा ॥

वह "**अटक**" जिला था, वह बदल कर बाद में जिला "**कैम्बलपुर**" हो गया था, फिर इसी अटक नगर को कैम्बलपुर के नाम से जाना जाने लगा। इस जिले की तहसील "**पिण्डीघेप**" में आर्य समाज मन्दिर भी था तथा आर्य कन्या पाठशाला भी थी। जो अब पाकिस्तान में है।

२ से ४ फरवरी १९१९ को आर्य समाज पिण्डीघेप का वार्षिकोत्सव था, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा लाहोर के महोपदेशक श्री पण्डित महता राम चन्द जी शास्त्री, श्री पण्डित यज्ञदत्त जी शास्त्री, (स्नातक-गुरुकुल पोठोहार चोहा भक्तां) श्री मास्टर अमर नाथ जी और, मैं (अमर सिंह आर्य पथिक) स्नातक आर्य मुसाफिर विद्यालय आगरा, उस उत्सव पर आये हुए थे। उत्सव के प्रथम दिन सनातन धर्मीकहलाने वाले दो पण्डित, दो फरवरी को (उत्सव के प्रथम दिन) आर्योपदेशकों के पास आये, और कहने लगे कि, कल तीन फरवरी को दिन के दो बजे हम आप लोगों के साथ शास्त्रार्थ करना चाहते हैं, सो आप स्वीकृति दे दीजिये। आर्य समाज के पण्डितों ने कहा कि, शास्त्रार्थ का विषय निश्चित कर लीजिये तो शास्त्रार्थ कल कर लिया जायेगा।

इस पर पौराणिक पण्डितों ने कहा कि विषय तो शास्त्रार्थ के समय पर ही बताया जायेगा। यह सुनते ही आर्य पण्डितों ने कहा, महाराज जी ! इस प्रकार शास्त्रार्थ नहीं होता, पहले विषय बताइये। विषय निश्चय किये बिना शास्त्रार्थ की स्वीकृति नहीं दी जा सकती। यह सुनते ही पौराणिक पण्डित उठ कर चल पड़े। उस समय मैं (अमर सिंह आर्य पथिक) जोशीला नौजवान था, मैं ये सब वार्ता सुन रहा था, मुझ से रहा न गया, और मैंने कहा..."जिन विषयों पर आर्य समाज और पौराणिक पक्ष के शास्त्रार्थ होते हैं उन्हीं में सें कोई विषय होगा, ये लोग शास्त्रार्थ का विषय नहीं बताते हैं तो न बतावें आप अपनी ओर से स्वीकृति दे दीजिये"। मेरा इस प्रकार कहना उन आर्य पण्डितों को अच्छा न लगा, और उन्होंने गुस्से से भर कर मुझे कहा—"तो फिर शास्त्रार्थ भी आप ही करना" ! और मैंने कह दिया कि—ठीक है मैं ही कर लूंगा। पाठक वृन्द ! सच तो यह है कि, उन पौराणिक पण्डितों का यों उठ कर जाना मुझें ऐसा लगा था जैसे "परमोत्तम भोजन का थाल, सामने से उठा जा रहा हो"। उस समय की वह अनुभूति मुझे आज भी याद है।

उत्सव के दूसरे दिवस, दिन के दो बजे, तीन तिलकधारी पण्डित आ गये और शास्त्रार्थ आरम्भ हो गया। क्या हुआ ? कैसे हुआ ? आप पढ़िये और लाभ उठाइये जिसके परिणाम स्वरूप मुझे "**शास्त्रार्थ महारथी**" की उपाधि मिली।

वैदिक धर्म का—
"अमर स्वामी सरस्वती"

प्रथम शास्त्रार्थ--

स्थान : "पिण्डीघेप" जिला अटक (कैम्बलपुर) सीमा प्रान्त

(वर्तमान पाकिस्तान)
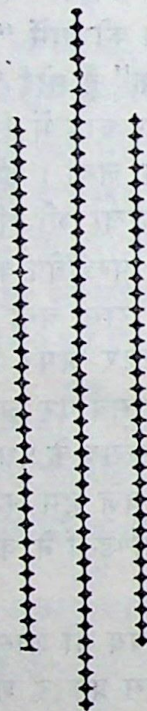
दिनाङ्क : ३ फरवरी सन् १९१९ ई०

विषय : क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है ?

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : शास्त्रार्थ केसरी श्री ठाकुर अमर सिंह जी आर्य पथिक ।

(वर्तमान-अमर स्वामी जी महाराज)

पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : पौराणिक पं० श्री गीता राम जी शास्त्री ।

प्रधान : लाला अमीर चन्द जी रिटायर्ड तहसीलदार

उपस्थित विद्वान् : (१) श्री पण्डित महता रामचन्द जी शास्त्री, (२) श्री पण्डित यज्ञदत्त जी शास्त्री, (३) श्री मास्टर अमर नाथ जी आदि ।

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित गीताराम जी शास्त्री—

सज्जन पुरुषो ! यजुर्वेद के अध्याय १९ में, मन्त्र ५७ और ५८ इस प्रकार हैं—

उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु ।
त आगमन्तु तइह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥५७॥
आयन्तु न पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ता पभिभि र्देवयानैः ।
अस्मिन् यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥५८॥

इन दोनों मन्त्रों में "**मृतक श्राद्ध**" का स्पष्ट विधान है। इन मन्त्रों में कहा गया है कि—जो पितर अग्नि में जलाये गये हैं, वे श्राद्ध में आवें और भोजन करें। वेद में "**मृतक श्राद्ध**" का विधान है, और मृतक श्राद्ध को आर्य समाज नहीं मानता, तो आर्य समाज वेद विरोधी समाज हुआ कि नहीं ? उत्तर दीजिए।

नोट—श्री पण्डित गीताराम जी शास्त्री को बोलने के लिए १० मिनट दिये गये थे, परन्तु वह केवल तीन मिनट बोलकर बैठ गये।

शास्त्रार्थ केसरी श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी—

सत्याभिलाषी सज्जनो ! श्री पं० जी ने यजुर्वेद के दो मंत्र बोले हैं। और उनसे "**मृतक श्राद्ध**" सिद्ध होता है, यह प्रतिज्ञा की है, परन्तु दोनों मंत्रों में न तो "**मृतक**" शब्द है और न "**श्राद्ध**"। "**छिन्ने मूले नैव शाखा न पत्रम्**"। जड़ ही कट गई, अब न शाखा होगी न पत्ते। इन मंत्रों के शब्दों से सिद्ध होता है कि—जीवित माता-पिता तथा पितामह आदि को बुलाकर भोजन कराने का इनमें वर्णन है। सुनिये मैं इनका अर्थ बोलता हूं। "**उपहूताः... ..पितरः......आगमन्तु**" इसका अर्थ यह है, "**बुलाये हुए पितर आवें**। अब आप ही विचारिये, एक नाम के दो मनुष्य हों, उनमें से एक मर गया हो आप मुझे ही मान लीजिये। अमर सिंह दो थे, एक मर गया और एक जीवित है, एक गृहस्थ पुरुष किसी को कहे कि अमर सिंह को बुला लाओ वह भोजन करले। आप सोचिये ! जिस व्यक्ति को भेजा जाय, वह यह पूछेगा कि कौन से अमर सिंह को बुला लाऊं ? क्या जो मर गया उसको ? कहिये ऐसा पूछने वाले को पागल कहा जायेगा या नहीं ? मेरे विचार से तो अवश्य ही सब लोग उसे पागल बतायेंगे। और कहेंगे कि अरे मूर्ख ! कहीं मरे हुए भी बुलायें जाते हैं। जो जीवित है उसे बुलाकर ला। स्पष्ट है कि—

जीवित पितरों को बुलाने की बात है, मरे हुओं की नहीं। दूसरी बात यह ध्यान देने की है, इन मंत्रों मैं चार शब्द हैं जो जीवितों के लिए ही कहे जा सकते हैं, मरे हुओं के लिए नहीं।

१. "**श्रुवन्तु ते**"—अर्थात् वे हमारे वचन सुनें। अब आप लोग पण्डित जी से पूछिये कि मरा हुआ कैसे सुनेगा ! जब कोई व्यक्ति मरता है, तब उसके सम्बन्धी रो रोकर कहते हैं, "कुछ हमारी भी सुनो ! मरे हुए की लाश पड़ी है, उसके कान भी हैं, फिर भी नहीं सुनता शव जलने के साथ-साथ कानों के नष्ट हो जाने पर वह कैसे सुनेगा ?

२. "**अधिब्रुवन्तु**—अर्थात् हम से भली प्रकार से बोलो। लाश पड़ी होने पर सारे सम्बन्धी कहते हैं, "कुछ हमको तो कह जाओ" अपनी पत्नी अपने पुत्रों को कुछ कहो, वह कुछ भी नहीं बोलता, जलने के बाद वह कैसे बोलेगा ?

३. "**अवन्त्वस्मान**"—अर्थात् हमारी रक्षा करें। मरा हुआ अपनी लाश की रक्षा नहीं कर सका, जलने के बाद वह रक्षा करने को कैसे आयेगा ? क्या बुद्धि इन बातों को स्वीकार करती है ? पण्डित जी महाराज ! चुप क्यों हो ? कुछ तो सांस निकालो। और देखो चौथा शब्द है।

४. "**स्वधयामदन्तः**"—अर्थात् अन्न के द्वारा भोजन से तृप्त होते हुए। क्यों भाइयो ! मुर्दा—भोजन कैसे करेगा ? अगर किसी ने मुर्दे को कहीं पानी भी पीते देखा हो तो खड़ा होकर बताये। भोजन की तो दूर की बात है। कोई खड़ा न हुआ, (जनता में हंसी)। स्पष्ट है कि—जीवित पितरों को बुलाकर उनसे यह कामना की जा सकती है कि ये लोग यहां हमारे घर में—१. भोजन से तृप्त हों। २. हमारी बातें अर्थात् प्रार्थनाएं आदि सुनें। ३. हमको उपदेश करें। ४ हमारी बातों के उत्तर दें। ५. हमारी रक्षा करें। इन मंत्रों में क्या चारों वेदों में कहीं मृतक श्राद्ध का संकेत भी नहीं है। आर्य समाज वेदों को है मानता है उनका सम्मान करता है वेदों की निन्दा तो क्या अवहेलना भी कभी नहीं करता है, इसलिए जानता आर्य समाज पूर्णरूपेण आस्तिक समाज है। श्री शास्त्री जी के प्रश्न का उत्तर मैंने दे दिया कहिये पण्डित जी महाराज ! क्या पूछना है ?

श्री पण्डित गीताराम जी शास्त्री :—

(श्री शास्त्री जी खड़े होकर बड़े जोश में बोले कि)—यह अर्थ आप किस का किया हुआ बोलते हैं ?

शास्त्रार्थ केसरी श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी—

श्री ठाकुर साहब ने खड़े होकर पंडित जी से भी दुगने जोश के साथ कड़कती हुई आवाज में कहा कि—पण्डित जी महाराज ! यह अर्थ मेरा किया हुआ है अगर इसमें कोई दोष नजर आता हो तो बताइये।

श्री पण्डित गीताराम जी शास्त्री—

शास्त्री जी कहने लगे कि—लो भाइयो ! सुना है आपने, हम तो श्री शङ्कराचार्य जी महाराज का किया हुआ अर्थ बोलते हैं। और ये महाराज जी अपना किया हुआ अर्थ बोलते हैं ! कहो ! सज्जनो !! श्री शङ्कराचार्य जी का अर्थ मानें या इनका मानें ? भाई हम तो श्री शङ्कराचार्य जी का ही अर्थ मानेंगे।

शास्त्रार्थ केसरी श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी—

ठाकुर जी गर्जकर बोले कि—श्री शङ्कराचार्य जी ने किसी वेद या एक भी वेद मन्त्र का भाष्य नहीं किया, आप बिल्कुल झूठ बोलते हैं।

नोट :—"श्री पं० गीताराम जी के साथ दो पंडित सनातन धर्मी ही तिलक छाप लगाए हुए बैठे थे," उनकी तरफ श्री ठाकुर साहब ने इशारा करके कहा कि—

"आप बताइये पण्डित जी ! आपने श्री शङ्कराचार्य जी का वेद भाष्य पढ़ा अथवा सुना है ? यदि हां तो बताइये कि किस वेद का भाष्य उन्होंने किया है और कहां छपा है ?"

नोट :—श्री प्रधान लाला अमीरचन्द जी रिटायर्ड तहसीलदार के बार-बार विशेष आग्रह करने पर यह दोनों पण्डित उठ खड़े हुए तथा हाथ जोड़कर बोले—"श्री शङ्कराचार्य जी ने किसी भी वेद का

भाष्य नहीं किया"। यह सुनकर श्री पं० गीताराम जी शास्त्री क्रोध में भर गये, और अपने पोथी, पत्रे आदि उठाकर अपने दोनों साथियों को कोसते हुए तथा गाली देते हुए उठकर चले गये। और उन पण्डितों से कहने लगे कि—

आर्य समाजियों की गवाही दे दी—मैं तुम्हारे लिए लड़ता था, तुम उनके साथी हो गये। मरो। लो मैं जाता हूं। वह चले गये। शास्त्रार्थ समाप्त हो गया, और पं० ठाकुर अमर सिंह जी को उसी दिन से समाज के लोगों ने **"शास्त्रार्थ केशरी"** की पदवी दे दी। और पं० ठाकुर अमर सिंह जी उसी दिन से शास्त्रार्थ महारथी हो गये।

शास्त्रार्थ के समय आर्य प्रादेशिक सभा के महोपदेशक श्री महता रामचन्द्र जी शास्त्री, श्री पण्डित अमर नाथ जी मास्टर तथा श्री पं० यज्ञदत्त जी शास्त्री उक्त सभा के तीनों उपदेशक उपस्थित थे। तीनों उपदेशकों ने श्री ठाकुर जी को बारबार गले लगाया, ठाकुर जी को बहुत ही प्यार किया तथा बहुत ही प्रशंसा की सारे नगर – "**पिण्डी घेप**" में आर्य समाज की धूम मच गई और उत्सव में उस दिन भी तथा अन्तिम दिन ४ फरवरी को भी बहुत भीड़ आती रही। आर्य समाज के प्रधान श्री लाला अमीरचन्द जी रिटायर्ड तहसीलदार तथा मन्त्री श्री लाला नत्थूराम जी एडवोकेट थे।

नोट : - "श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी की आयु उस समय केवल लगभग २५ पच्चीस वर्ष की थी तथा यह शास्त्रार्थ उनके जीवन का प्रथम शास्त्रार्थ था"। इस शास्त्रार्थ में केवल २० मिनट ही लगे थे।

द्वितीय शास्त्रार्थ--

स्थान : "**कोहाट**" (**सीमा प्रान्त**) "**फ्राण्टियर**"

(**वर्तमान पाकिस्तान**)
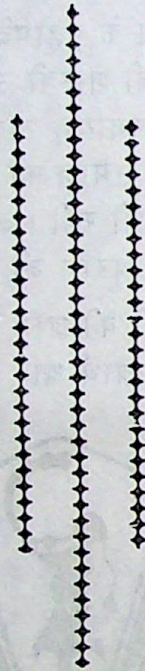
दिनाङ्क : २०, २१, **दिसम्बर सन् १६१६ (दिन के दो बजे)**

विषय : **क्या ईश्वर का अवतार होता है ?**

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **शास्त्रार्थ महारथी श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी 'आर्य पथिक' (वर्तमान महात्मा अमर स्वामी जी महाराज)**

एवं

सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री**

प्रधान : **श्री मास्टर बोधराज जी (प्रधान आर्य समाज कोहाट)**

नोट :—आर्य समाज के मन्त्री मास्टर श्री नन्दलाल जी एवं श्री महता पृथ्वी चन्द जी प्रभाव शाली व्यक्ति तथा श्री बाबा हरा सिंह जी दानी पुरुष भी मौजूद थे।

नोट :—दिन के दो बजे श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री आर्य समाज मन्दिर कोहाट में प्रविष्ट हुए, गले में फूलों की माला पहिने हुए थे, बहुत से सनातन धर्मी आर्य समाज मन्दिर के द्वार तक उन के साथ शंख और घड़ियाल बड़े जोर-जोर से बजाते हुए आये।

श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री—

सज्जन वृन्द ! आज के शास्त्रार्थ का विषय अवतार वाद निश्चय किया गया है। आर्य समाज ईश्वर को सर्व शक्ति मान कहता हुआ भी अल्प शक्ति युक्त ही मानता है। आर्य समाज कहता है, कि वह परमेश्वर अवतार नहीं ले सकता, तो बताओ ! वह एक शक्ति से तो हीन हुआ। १. मैं पूछता हूं जो अवतार नहीं ले सकका, जन्म नहीं ले सकता, शरीर धारण नहीं कर सकता तो वह सर्व शक्तिमान किस प्रकार हुआ ? सर्व शक्तिमान का अर्थ तो है ही यही, जिसमें सब कुछ करने की शक्ति हो, अतः अवतार न लेने से वह एक शक्ति हीन हुआ, तो सर्व शक्ति मान कहां रहा ? २. सृष्टि में जब जब अधर्म बढ़ जाता है, तथा धर्म घट जाता है, तब-तब धर्म की स्थापना के लिए भगवान अवतार लेते हैं, और भाँति-भाँति के शरीर धारण करके अधर्म और अधर्मियों का संहार तथा धर्म का विस्तार करते हैं। गोस्वामी तुलसी दास जी ने भी कहा है—

जब-जब होय धर्म की हानी। बाढ़हिं असुर-अधम, अभिमानी॥
करहि अनीति जाय नहीं बरणी। सीदहिं विप्र धेनु सुर धरणी॥
तब-तब प्रभु धरि विविध शरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा॥

दोहा—असुर मारि थापहिं सुरन राखहिं निज श्रुति सेतु। जग विस्तारहिं बिषद यश राम जन्म कर हेतु॥

इसी प्रकार गीता अध्याय ४ श्लोक ७, में भगवान स्वयं कहते हैं—

यदा-यदा हि धर्मस्य, ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य, तदात्मानं सृजाम्यहम्॥७॥
परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्म संस्थापनार्थाय, सम्भवामि युगे-युगे॥८॥

अर्थात् "जब-जब धर्म की ग्लानि होती है, और अधर्म बढ़ जाता है, तब-तब मैं अपने आप को उत्पन्न करता हूं। अर्थात् जन्म लेता हूं।" किसी राजा का प्यारा बच्चा यदि अचानक पानी आदि में गिर जाये, तो राजा भी यह नहीं सोचता कि कोई नौकर ही उसको पानी में से निकाले, या राजा अपने नौकर से कहे, कि तुम बच्चे को निकालो, वह स्वयं ही बच्चे को निकालने के लिए जल में कूद पड़ता है, इसी प्रकार परमेश्वर भी जब भूमि पर अत्याचार देखते हैं, तो उसको नष्ट करने के लिए स्वयं जन्म ले लेते हैं, अतः भगवाद का अवतार वेदानुकूल है, और सर्व प्रकार से ठीक है, भगवान के अवतार को न मादना वेद का तथा परमेश्वर का अपमान करना है।

शास्त्रार्थ केशरी पं० ठाकुर अमर सिंह जी—

सज्जनो ! आज अत्यावश्यक विषय पर शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। यदि यह ढंग से चला तो सुनने वालों को अपार लाभ होगा, ईश्वर जन्म लेता है, या नहीं ? इसका आज भली-भांति निर्णय आप लोगों के सामने आ जायेगा। श्री पं० जी ने ईश्वर के अवतार को वेदानुकूल तो बताया पर वेद का प्रमाण ईश्वरावतार के पक्ष में एक भी न दिया। लीजिये मैं ईश्वर के शरीरधारी होने के विरुद्ध प्रमाण देता हूं, और आवश्यकता होने पर बहुत से और प्रमाण भी दूंगा। सुनिये ! यजेर्वेद अध्याय ४० का आठवां मन्त्र —"**सपर्य्यगाच्छक्रमकायमव्रण मस्नाविरं शुद्धमपाप विद्धम्**" यह मन्त्र का पूर्वार्द्ध है, इसमें कहा गया है कि,

परमेश्वर सर्व व्यापक है, सर्वथा शुद्ध पवित्र है, और **अकाय** अर्थात् शरीर रहित है। वेद पहले भी थे, अब भी हैं, और आगे भी सदा रहेंगे। न वेद के शब्द बदलेंगे और न अर्थ बदलेगा इस मन्त्र में परमेश्वर को "**अकाय**" शरीर रहित बताया है, इसका प्रयोजन यह कि वह भूत भविष्यत् और वर्तमान तीनों कालों में शरीर रहित ही रहता है। कभी भी शरीर धारी नहीं होता है। पण्डित जी ने कोई प्रमाण न देकर परमेश्वर के सर्व "शक्तिमान विशेषण पर व्यर्थ बहस की" यह नहीं सोचा कि शक्ति के रहते हुए भी शक्तिमान को वही कार्य करना चाहिए, जिसका करना उचित और आवश्यक हो, अनुचित और अनावश्यक कार्य को करने वाला मनुष्य बुद्धिमान नहीं कहलाता है, परमेश्वर अनुचित और अनावश्यक कार्य को करेगा ही क्यों ? शरीर धारण करना उसकी शक्ति में है, केवल इसलिए शरीर धारण कर लेगा या उसकी आवश्यकता कोई होगी, तब करेगा ? यदि आवश्यकता होने पर शरीर धारण करेगा तो बताइये ऐसा कौन सा कार्य है, जिसको शरीर धारण किये बिना वह नहीं कर सकता ? सर्व शक्तिमान का अनावश्यक झगड़ा डाल कर आप "**उभय पाशारज्जू**" में फंस गये हैं।

यदि कोई कार्य ऐसा बतायेंगे जिसको बिना शरीर धारण किये नहीं कर सकता तो परमेश्वर आपके शब्दों में "**सर्व शक्तिमान**" नहीं रहेगा, क्योंकि आप स्वयं ही कहेंगे कि अमुक कार्य को वह नहीं कर सकता, यदि परमेश्वर में किसी कार्य विशेष के करने की शक्ति शरीर के बिना नहीं है, और शरीर धारण करने पर आयेगी तो वह शक्ति परमेश्वर की स्वाभाविक न हुई, शरीर के निमित्त से आने के कारण नैमित्तिक ही हुई। बस आपके अर्थों वाला वह सर्व शक्तिमान न रहा। रही चौपाइयों की बात, गोस्वामी तुलसीदास जी का वचन हमारे लिए प्रमाण नहीं है। गीता के दो श्लोक आपने बोले, वह श्री कृष्ण जी के वचन हैं, परमेश्वर के नहीं, श्री कृष्ण परमेश्वर हैं, यह तो आपको अभी सिद्ध करना शेष है जब तक आप यह सिद्ध न करलें कि श्री कृष्ण जी परब्रह्म परमेश्वर थे, तब तक आपके बोले हुए दोनों श्लोक प्रमाण नहीं बन सकते। यह भी साध्य है कि श्री राम जी और श्रीकृष्ण जी ईश्वर थे। और यह भी "**साध्य**" है कि ईश्वर अवतार लेता है। आप साध्य से साध्य की सिद्धि करना चाहते हैं ! तो यह "**साध्यसम हेत्वाभास**" है। अतः यह प्रमाण व्यर्थ हुए, आपको यह भी बताना पड़ेगा कि सृष्टि के आरम्भ से अब तक कितने और कौन-कौन अवतार हुए ? यह मेरा प्रश्न नोट करिये और अवतारों की संख्या तथा अवतारों के नाम भी बताने की कृपा करिये जिससे शास्त्रार्थ ठीक मार्ग पर चल सके और किसी निर्णय पर पहुंचने में सहायता मिल सके। राजा का उदाहरण आपने जो दिया वह विषम है, राजा एक देशी और अल्प शक्ति वाला होता है, और परमेश्वर सर्व देशी तथा अपार शक्तियों से युक्त सदा रहता है, एक देशी राजा की तरह उसको जल आदि में कूदने की कुछ भी आवश्यकता नहीं है, वह जल आदि में सदा विद्यमान रहता है। वेद में कहा है—"**उतास्मिन् अल्प उदके निलीनः।**" (अथर्ववेद काण्ड ४ सूक्त १६ मन्त्र ३,(अर्थात् वह पानी की प्रत्येक बून्द में भी विद्यमान है।)

श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री—

मैं पूछता हूं क्या आप कोई काम ऐसे बता सकते हैं, जिन्हें परमेश्वर न कर सके ? और क्या कोई कार्य ऐसे भी हैं, जिनका करना ईश्वर के लिए अनुचित हो ? गोस्वामी तुलसी दास जी का वचन आपके लिए प्रमाण नहीं है, तो वेद का प्रमाण तो आप मानेंगे ही लीजिए वेद का प्रमाण भी देता हूं।

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते।
तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विश्वाः॥

(यह यजुर्वेद अध्याय ३१ का १९वां मन्त्र है,) इसमें स्पष्ट कहा है, कि प्रजापति परमात्मा गर्भ में आता हैं। और जन्म लेकर बहुत प्रकार से प्रकट होता है। आर्य समाजी पण्डित जी ने इस प्रश्न पर

बहुत बल दिया है कि, भगवान के अवतार कितने और कौन-कौन से हुए हैं, यह बताया जाये। इसके उत्तर में मैं आपको बताता हूं सुनिये --भगवान के अवतार अनादि काल से होते आये हैं। उनकी गणना कोई नहीं कर सकता है। तो भी मुख्य अवतार हमारे यहां २४ माने जाते हैं। उनमें से भी मुख्य दस कहे गये हैं। चार सतयुग में। तीन त्रेता युग में। दो द्वापर में हुए। इस प्रकार नौ अवतार हो चुके एक कलियुग में होता है सौ होना शेष है। जो हो चुके उनके नाम लिखिये मैं बताता हूं। १ वराह (सूकर) २. मत्स्य ३. कच्छप ४. नृसिंह ये चार अवतार तो सतयुग में हुए। **तथा**—१. वामन २. श्री राम जी ३. श्री परशुराम जी ये तीन अवतार त्रेता युग के इस प्रकार से सात अवतार हुए। **और**—१. श्रीकृष्ण जी। २ श्री बलराम जी। ये दो अवतार द्वापर में हुए इस प्रकार कुल "**९ अवतार**" हुए हैं, दसवाँ कलियुग में कल्कि अवतार होता है। सतयुग में चारों चरण धर्म रहता है। त्रेतायुग में तीन चरण होता है। द्वापर में दो चरण होता है, तथा कलियुग में एक चरण धर्म शेष रह जाता है। धर्म की रक्षा तथा अधर्म का विनाश करने के लिए भगवान का अवतार होता है। भगवान परम दयालु है। अपने भक्तों पर दया करके समय-समय पर शरीर धारण करते रहते हैं।

शास्त्रार्थ केशरी श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी—

पण्डित जी महाराज! आपने बड़ी कृपा की जो एक वेद मन्त्र अपने पक्ष में समझ कर बोल दिया। मैं सर्व प्रथम उस मन्त्र पर ही विचार करता हूं। क्योंकि—

अर्थकामेष्वसक्तानां, धर्मज्ञानं विधीयते।
धर्म जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः॥ मनुस्मृति—अध्याय २ श्लोक १३,

जिनको सत्यासत्य के जानने की इच्छा है, उनके लिए वेद परम प्रमाण है। ऐसा यह मनुस्मृति का वचन कहता है। "**प्रजापतिश्चरति गर्भे**" का अर्थ आपने यह किया कि (परमात्मा गर्भ में आता है।) श्रीमान जी परमेश्वर तो सर्वदेशी है। तथा सर्वव्यापक है। उसका आना जाना कैसा? आना तो वहीं उसको होता है, जो जहाँ आने से पहले वहां न हो। जो सब जगह मौजूद है, उसका आना क्या और जाना क्या? क्या गर्भ में परमात्मा पहले नहीं होता है? जो कभी आता है। महाराज जी वेद ही में कहा है—"**तदन्तरस्य सर्वस्य तदुसर्वस्यास्य बाह्यतः।**" (यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ५,) अर्थात् वह परमेश्वर इस सर्व जगत के भीतर हैं और बाहर भी है। वह गर्भ में भी बच्चे को भोजन देता है। उसको जीवित रखता और बढ़ाता है इसलिए कहा है कि—"**प्रजापतिश्चरति गर्भे**" प्रजापति परमात्मा गर्भ में भी कार्य करता है। आपने कहा जन्म लेकर बहुत प्रकार से प्रकट होता है। आपने जिस शब्द को 'जायमान्' कहा है वह 'अजायमान' है, और उसका अर्थ आपके आचार्य उव्वट और महीधर जी ने भी 'अनुत्पद्यमान' न उत्पन्न होने वाला, किया है। आप 'जन्म लेना' उसका अर्थ कैसे करते हैं? इस मन्त्र में आगे कहा है। "**तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीराः**" अर्थात् उसके स्वरूप को बुद्धिमान लोग ही देखते हैं। शास्त्री जी! यदि परमात्मा शरीर धारण कर लेगा तो उसके उस रूप को मनुष्य-पशु-गधे-घोड़े सभी देख सकेंगे, केवल बुद्धिमान ही नहीं वह केवल बुद्धि का विषय न रह कर आँखों का विषय बन जायेगा, आँखों से तो पशु भी देख लेगा, पशु को केवल आँखों से देखने वाला कहा गया है। "**पश्यतीति पशुः**" अर्थात् जो आँखों से देखता है, बुद्धि से नहीं वही पशु है। "**तस्य योनि परि पश्यन्ति धीराः**" से शरीरधारी और साकार सिद्ध नहीं होता। इस मन्त्र से अवतारवाद का मण्डन नहीं होता। बल्कि खण्डन ही होता है, इसका अर्थ है कि बुद्धिमान लोग ही उसप रमेश्वर के स्वरूप को देख सकते हैं, क्यों कि—वह बुद्धि से ही दीखता है आँखों से नहीं, आँखों से उसकी कारीगरी दीखती है। उपनिषद में भी कहा गया है—"**दृश्यते त्वग्रया बुद्धया, सूक्ष्मया सूक्ष्म दर्शिभिः**" सूक्ष्म से सूक्ष्म देखने वालों के द्वारा बुद्धि

से ही दीखता है, आँखों से नहीं, आपने अवतारों की संख्या और अवतारों के नाम बताकर शास्त्रार्थ का मार्ग प्रशस्त कर दिया। भगवान् आपका भला करे। शास्त्री जी! जब सतयुग में चारों चरण धर्म रहता है। तब तो एक भी अवतार की आवश्यकता नही, फिर चार अवतारों का होना बुद्धि संगत नहीं, आपकी युक्ति से तो, कलियुग में तीन, द्वापर में दो, त्रेता में एक, अवतार होता। सतयुग में एक भी नहीं होना चाहिये था, जब चारों चरण धर्म विद्यमान हैं, तब धर्म से ग्लानि हो ही नहीं सकती, परमेश्वर के अवतार उस समय व्यर्थ ही कूदते रहते हैं। और कलयुग में धर्म के तीन चरण टूट जाते हैं, तब एक अकेला अवतार आकर क्या करेगा? वास्तविकता यह है कि, ईश्वरावतार की कल्पना ही निराधार है, आपने अवतार होने के कारण इस प्रकार बताये। १. धर्म की ग्लनि का होना। २ अधर्म की वृद्धि का होना। ३. धर्म की स्थापना। ४. धर्मात्माओं की रक्षा। ५. पापियों का विनाश। आपके पुराणों में इसके विरुद्ध स्पष्ट लिखा है। आपके बताये सारे अवतार शाप से हुए। भृगु ऋषि की पत्नी का शिर विष्णु जी ने इन्द्र के कहने पर काट दिया। इस पर भृगु ऋषि ने विष्णु को शाप दिया। देखिये—देवी भागवत स्कन्द ४० अध्याय १२ श्लोक ८—

अवताराः मृत्यु लोके, संतुमच्छाप संभवाः।
प्रायोगर्भभवं दुःखं, भुंक्ष्व पापाज्जनार्दन ॥८॥

भृगु ने कहा—हे विष्णु मेरे शाप से मृत्यु लोक में तुम्हारे अवतार हों, हे विष्णु तुम (अपने इस) पाप से गर्भ में होने वाले दुःखों को भोगो। देवी भागवत् स्कन्द ५ अध्याय १९ श्लोक १८ में भी देखिये—

शप्तो हरिस्तु भृगुणा कमठेन कामं, मीनो बभूव कमठः खलुशूकरस्तु।
पश्चान्नृसिंह इति यच्छलं कृद्धरायां, तान सेवताम् जननी मृत्यु भयं न किंस्यात् ॥१८॥,

कुपित भृगु के द्वारा दिये गये शाप से विष्णु मछली बना, अवतार धारण करके कच्छप बना, शूकर बना, पश्चात् नृसिंह बना, और भूमि पर छल करने वाला (बली राजा को ठगने वाला) वामन अवतार हुआ..

......कहते हैं कि हे जननी! उनका सेवन-पूजन करने वालों को मृत्यु का भय क्यों न होगा? अर्थात् अवश्य होगा, इन प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध है कि, आपके भगवान का अवतार, धर्म का उद्धार करने के लिए नहीं प्रत्युत शाप का फलस्वरूप दुःख भोगने के लिए, कच्छप, मछली और सूकर, जैसी नीच योनियों में उसको जाना पड़ा। और सुनिये—देवी भागवत स्कन्द ६ अध्याय ७ श्लोक ३४ से ३७, तक

भृगु पत्नी शिरच्छेदाद्भगवान्हरिरच्युतः ॥३४॥
ब्रह्मा शापात्पशोर्योनो, संजातो मकरादिषु।
विष्णुश्च वामनो भूत्वा, याचनार्थं बलेर्ग्रहे ॥३५॥
अतः किं परम् दुःखं, प्राप्नोति दुष्कृती नरः।
रामोऽपि वनवासेषु सीता विरहजं बहुः ॥३६॥
दुःखं च प्राप्तवान् घोरं भृगुशापेन भारत ॥३७॥

भृगु ऋषि की पत्नी का सिर काट देने के कारण भगवान विष्णु भृगु ब्राह्मण के शाप से पशु योनियों में जन्मे, और वामन बनकर राजा बली के घर में भिक्षा माँगने के लिए गये। पाप कर्म करने वाला मनुष्य इससे अधिक दुःख और क्या भोग सकता है? राम जी भी वनवास में सीता के वियोग से उत्पन्न हुए घोर दुःख को भृगु शाप से प्राप्त हुए विष्णु ने जालन्धर का रूप बना कर वृन्दा से व्यभिचार किया, वृन्दा को जब व्यभिचार के पीछे पता लगा कि, यह मेरा पति जालन्धर नहीं है बल्कि यह

तो विष्णु हैं, इस पर उसने शाप दिया—"हे विष्णो ! पराई स्त्री के साथ व्यभिचार करने वाले तेरे इस स्वभाव को धिक्कार है, मैंने जान लिया तू छल-कपट युक्त तपस्वी है, मुझको जैसे छल-युक्त तपस्वी द्वारा धोखा दिया गया है उसी प्रकार तुम्हारी स्त्री को भी कोई छली-कपटी, तपस्वी ले जायगा।" (पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १५० श्लोक १ से ३० तक) तथा (पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १६, श्लोक ५४ से ७२ तक) एवं इसी प्रकार (शिव पुराण रुद्र संहिता अध्याय ३ व ४) में नारद के शाप से विष्णु का रामावतार होना बताया गया है। श्री शास्त्री जी ! आपका कहना है कि भगवान का अवतार धर्म की रक्षा तथा अधर्म का विनाश करने के लिए होता है। यह आपके माने हुए पुराणों से सिद्ध नहीं होता है। पुराणों से तो यह भी सिद्ध होता है कि पाप कर्मों का फल भोगने के लिए विष्णु के मछली आदि की योनियों में जन्म हुए। देखिये शास्त्री जी महाराज ! और नोट कीजिये। गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय ११३ के श्लोक १५ में—

ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो, ब्रह्माण्ड़ भाण्डोदरे।
विष्णुर्येन दशावतार गहने, क्षिप्तो महासंकटे॥
रूद्रो येन कपालपाणि, पुटके भिक्षाटनं कारितः।
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव, गगने तस्मै नमः कर्मणे॥

पण्डित जी ! मेरे पास सैकड़ों प्रमाण पुराण आदि ग्रन्थों के ऐसे हैं. जिनसे सिद्ध होता है कि जिन-जिनको आप भगवान-परमेश्वर का अवतार मानते हैं, वह सब कर्म फल भोगने वाले जीव ही थे। परमेश्वर के अवतार नहीं। बालमीकीय रामायण में श्री राम जी का वचन भी कहा हुआ यही सिद्ध करता है। सुनिए—बालमीकीय रामायण अरण्यकाण्ड सर्ग ६३ श्लोक ३ व ४, में—

न मद्विधो दुष्कृत कर्मकारी, मन्ये द्वितीयोऽस्ति वसुन्धरायाम्।
शोकेन शोकोहि परम्पराया मामेति, भिनन्दन् हृदयं मनश्च॥३॥
पूर्वं मया नूनमभीप्सितानि, पापानि कर्माण्यसंत्कृतकृतानि
तत्रायमद्यापततो विपाको दुःखेन दुःखं यदहं विशामि॥४॥

श्री राम जी कहते हैं कि— मैं मानता हूं कि मेरे समान पाप कर्म करने वाला दूसरा मनुष्य इस भूमि पर नहीं है, शोक से शोक परम्परा से हृदय तथा मन को भेदन करता हुआ मुझ को प्राप्त होता है, निश्चय ही मैंने पूर्व जन्म में, बहुत पाप बार-बार किये हैं। उन्हीं का फल मुझको यह है कि दुःख पर दुःख प्राप्त हो रहा है।

योग दर्शन में परमेश्वर का लक्षण इस प्रकार बताया है—"**क्लेश कर्म विपाकाशयैरपरामृष्ट : पुरुष विशेष ईश्वरः॥२९॥**" (योग दर्शन पाद १ सूत्र २९)। अविद्या (विपरीत ज्ञान), अस्मिता (अहंकार) राग द्वेष और अभिनिवेष, (मृत्यु का भय) ये पाँच क्लेश, जिनसे सुख और दुःख प्राप्त हों वह शुभाशुभ कर्म विपाक कर्म फल आशय (कर्मों की वासना) इनसे सर्वथा रहित पुरुष विशेष परमेश्वर है ! राम आदि सबको क्लेश हुए इनमें राग और द्वेष भी दिखाई देता है। ये कर्म फल भी भोगते थे, इसलिए ये सब ईश्वर नही थे। पण्डित जी महाराज ! सनातन धर्म के अनुसार तो यह भी सिद्ध होना कठिन है, कि ब्रह्मा, विष्णु, शिव, और दुर्गा, इन चारों में से परमेश्वर कौन हैं ? पुराणों में कहीं ब्रह्मा जी को सब से बड़ा बताया है, कहीं शिव जी को सब से बड़ा बताया है, कहीं विष्णु जी ही सबसे बड़े कहे गये हैं। कहीं शक्ति को ही इन सब पर शासन करने वाली बतायी गयी है। इतना ही नहीं ! कहीं ब्रह्मा की निन्दा

लिखी है। कहीं शिव की और कहीं विष्णु की निन्दा की गई है। अतः बताने की कृपा करें कि आपका ईश्वर कौन है? तथा आप किसका अवतार सिद्ध करना चाहते हैं?

श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री—

लीजिये मैं एक दो वेद मन्त्र और बोलता हूं—(१) **इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदं समूढस्य पांसुरे ॥१५॥** (यजुर्वेद अध्याय ५ का मन्त्र १५ है)। इस मन्त्र में विष्णु के वामनावतार के तीन पदों का वर्णन है, राजा बली के राज्यादि और शरीर को भी वामनावतार में तीन पगों से नाप लिया था। (२) **प्रतद्विष्णु स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ॥२०॥** यह यजुर्वेद अध्याय ५ का मन्त्र २० है इस मन्त्र में विष्णु के नृसिहावतार का वर्णन है। (३) **भद्रो भद्रया सचमान आगात् स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात् ॥३॥** यह ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त ३ का मन्त्र ३, है। इस मन्त्र में रामावतार और सीता के जार (रावण) का भी वर्णन है, और वराह व कृष्ण नाम भी वेद में आते हैं, पुराणों के आपने बहुत प्रमाण दिये हैं, दुर्भाग्य से हमने श्रीमद्भागवत पुराण ही पढ़ा है, और गरुड़ पुराण तो बार-बार ही पढ़ना पड़ता है, जब किसी की मृत्यु हो जाती है, तब उस घर में हम गरुड़ पुराण ही पढ़ते हैं। '**ब्रह्मायेन कुलाल वन्नियर्यमितो**···" आदि यह श्लोक तो उसमें कभी आया ही नहीं। अन्य पुराणों को हमने पढ़ा नहीं है। इस लिए उनके विषय में अभी कुछ कह नही सकते। नारद ने विष्णु को शाप क्यों दिया? इसको स्पष्ट करिये। ब्रह्मा आदि की प्रशंसा जहाँ-जहाँ है, "**वह तो जिसका विवाह उसके गीत**" पर पुराणों में निन्दा भी इनकी है, ऐसा हमारा विश्वास नहीं है, बता सकते हों तो बताइये?

आर्य समाजी पण्डित जी की बहुत बातों का उत्तर हमारे पास नहीं है। उनका पाण्डित्य भी बहुत है, तथा उनकी सभ्यता और शिष्टाचार की हम सराहना करते हैं, इस शास्त्रार्थ से बहुत सी बातें नई सामने आई हैं, पण्डित जी के अन्तिम भाषण में और भी आयेंगी उन सब पर विचार करेंगे, और हम आशा करते हैं, श्री पण्डित अमर सिंह जी महाराज से हमारा फिर भी सम्पर्क और सम्वाद होगा।

शास्त्रार्थ केशरी श्री पं० ठाकुर अमर सिंह जी—

भाइयो श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री विद्वान तथा हठ दुराग्रह से रहित हैं। मैं आशा और विश्वास करता हूं कि, श्री पं० जी शीघ्र ही आर्य समाजी हो जावेंगे, और यह मानने लगेंगे कि ईश्वर कभी जन्म नहीं लेता है। पण्डित जी ने जो वेदमन्त्र बोले हैं, उनके विषय में, मैं स्पष्टीकरण करता हूं ध्यान से सुनिये।

(१)—"**इदं विष्णुर्विचक्रमे**···" इस मन्त्र में न तो वामन अवतार का नाम है, और न राजा बली का! केवल तीन पगों (पदों) का वर्णन होने से न वामनावतार न बली राजा को ठगना, अर्थात् उससे ठगी करना सिद्ध होता है। धोखा देना परमेश्वर का काम नहीं हैं, इस मन्त्र में विष्णु नाम से सूर्य का वर्णन किया जाता है, सूर्य के तीन पग, पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौ में होते हैं, दूसरा अर्थ विष्णु का यज्ञ है। शतपथ ब्राह्मण में भी कहा गया है कि—"**यज्ञो वै विष्णुः**" वह भी पृथ्वी अन्तरिक्ष, और द्यौ तक जाता है, श्री मनु जी ने भी मनुस्मृति में कहा है—"**अग्नो प्रास्ताहुति सम्यक् आदित्यमुप तिष्ठते**" अग्नि में अच्छी प्रकार दी हुई आहुति सूर्य तक पहुंचती है। विष्णु परमेश्वर का भी नाम है। उसके तीन पग कई प्रकार से कहे जाते हैं, सूर्य, अग्नि, और वायु, पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौ, तथा भूत, भविष्यत् और वर्तमान आदि। ईश्वर जन्म लेता है, ऐसा बताने वाला वेद में कोई मन्त्र है तो बताइये?

(२)—"**प्रतद्विष्णु स्तवते वीर्येण**···"—आदि मन्त्र में न नृसिंह अवतार का नाम है, न भक्त प्रह्लाद का तथा न उसको सताने वाले उसके पिता हिरण्यकष्यप का कहीं नाम निशान है। मन्त्र का अर्थ

इस प्रकार है। इस मन्त्र में उपमालंकार है, जैसे सिंह अपने पराक्रम से अन्य पशुओं का वध करता फिरता है, वैसे ही जगदीश्वर अपने पराक्रम से सब लोगों का नियमन करता है।

(३) "**भद्रो भद्रया सह** " इस मन्त्र में न राम है, न सीता, और न रावण है, भद्र का अर्थ राम ही क्यों? कोई भी भला पुरुष भद्र कहला सकता है। मैं कहता हूं इस मन्त्र में भद्र श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री को कहा गया है। तो आप कैसे मेरी बात का खण्डन करेंगे? वैसे इस पूरे मन्त्र का अर्थ मैं आपको कहे देता हूं। पहले पूरा मन्त्र सुनिये—

भद्रो भद्रया सचमान आगात्स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात्।
सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन् शद्भिर्वर्णैरभि राममस्थात् ॥३॥

(ऋग्वेद मन्डल १० सूक्त ३ मन्त्र ३,)

जैसे (**जारः**) रात्रि का विनाश करता हुआ सूर्य (**स्वसारं पश्चात् अभि एति**) अपनी भगिनी के तुल्य अन्धकार हटाने वाली उषा के पीछे-पीछे दौड़ता है, और स्वयं (**भद्रः**) सुखकारी होकर (**भद्रया सचमानः आगात**) सुखदायिनी उषा के साथ मिल कर आता है, और वह (**उशद्भिः वर्णैः**) उज्वल रश्मियों से (**रामम् अभि आस्थात्**) रात्रि के अन्धकार को पराजित करता है, वैसे ही (**भद्रः**) प्रजा को सुख देने वाला विद्वान् (**भद्रया सचमानः**) प्रजा को सुख देने वाली बुद्धि या नीति से युक्त होकर (**आगात्**) प्राप्त हो। वह (**जारः**) शत्रु या दुष्टों का नाश करने वाला होकर (**स्वसार**) सुख से शत्रु को उखाड़ने वाली सेना वा (**स्वसारं**) स्वयं आने वाली प्रजा के (**पश्चात् अभिएति**) पीछे तदनुकूल रह कर वश करे। वह (**अग्निः**) अग्नि के समान पुरुष (**सू-प्र-केतैः**) ज्ञानवान् (**द्युभिः**) रश्मितुल्य विद्वानों के साथ (**वितिष्ठन्**) विविध कार्यों को करता हुआ (**उशद्भिः**) उज्ज्वल कामना वाले (**वर्णैः**) विद्वानों के साथ (**रामम् अभिअस्थात्**) अन्धकार तुल्य शत्रु पर चढ़ाई करे।

इस मन्त्र में जार यदि रावण को कहा गया है, तो—"**स्वसारं जारो अभ्येति**" का क्या अर्थ होगा? "**स्वसा**" का अर्थ तो बहिन है, बहिन को जार सब ओर से प्राप्त होता है। पर यह कौन सा अवतार सिद्ध हुआ?

"**वराह**" का अर्थ निरूक्त में यास्काचार्य ने "**मेघ**" किया है। यथा—"**वराहो मेघो भवति**" (निरुक्त ५-४) राम का अर्थ किसी भाष्यकार ने भी दशरथी राम नहीं किया और न कोई और रामावतार हुआ। और न बताया। सायण महीधर तथा उव्वट तीनों आचार्य, राम का अर्थ रात्रि का अँधेरा और कृष्ण का अर्थ वासुदेव का पुत्र कृष्ण न करके काला रंग बताते हैं। नारद के शाप की बात आपने पूछी है। सो ध्यान देकर सुनिये और नोट करिये! शिव पुराण रुद्र संहिता २, अध्याय ३-४, श्री वेंक्टेश्वर प्रैस बम्बई, भाषा टीका सहित सम्वत् १९८२ विक्रमी को प्रकाशित हुई। एक राजकन्या का स्वयंवर होना था, नारद जी ने विष्णु जी से कहा कि मेरा मुख सुन्दर बना दीजिये। जिससे राजकन्या मुझी को अपना पति वरण करे, श्री विष्णु जी ने नारद जी का मुंह बन्दर का सा बना दिया, और स्वयं स्वयंवर में जा विराजे, राजकन्या ने विष्णु जी को ही वरण कर लिया, नारद जी ने अपना मुंह जल में देखा तो वह बन्दर का-सा मुख था, तो श्री नारद जी ने, विष्णु जी को शाप दिया, और रुष्ट होकर नारद जी बोले -"**हे हरे त्वम् महा दुष्टः कपटी विश्व मोहनः। परोत्साहं न सहसे मायावी मलिनाशयः ॥६॥** (शिव पुराण रुद्र संहिता २ अध्याय ४,) अर्थात्—हे विष्णु तुम महा दुष्ट हो, कपटी हो विश्व को मोहने वाले हो, पराई उन्नति को तुम सहन नहीं करते हो, तुम मायावी हो, और मलिन आशय वाले हों, मैं तुम्हें शाप देता हूं, कि तुम भी अपनी स्त्री के वियोग दुःख को प्राप्त करो। नारद के

इस शाप से विष्णु जी ने राम का जन्म लिया, और अपनी स्त्री को जो रावण हरकर ले गया था, तब उसके वियोग का दुःख नारद के शाप से उन्होंने भोगा। ब्रह्मा, विष्णु और शिव की निन्दा पुराणों में कहाँ है ? यह आपने पूछा है। सो अति संक्षेप में बताता हूं। विस्तार से बोलने के लिए बहुत समय ही नहीं बल्कि बहुत दिन होने चाहियें। आपने शास्त्री जी श्रीमद्भागवत् को पढ़ा है, उसमें ही पुत्री गमन का दोष ब्रह्मा जी पर लगाया गया है। यही नहीं अन्य भी जो जो दोष लगाये गये उनको कहता हूं—

१. ब्रह्मा जी पुत्रीगामी थे। (श्रीमद् भागवत् स्कन्ध ३ अध्याय १२, श्लोक २८ व २९)।

२. ब्रह्मा जी का वीर्यपात।

३ ब्रह्मा के पाँच सिर थे। (शिव पुराण विद्येश्वरी संहिता अध्याय ८ श्लोक ४ तथा ७)।

१. श्री ब्रह्मा जी पर पुत्रीगमन का घृणित दोषारोपण—

वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयं भूर्हरतींमनः।
अकामां चकमे क्षत्तः सकाम इति न श्रुतम् ॥२८॥
तमधर्मेकृतमतिं विलोक्य पितरं सुताः।
मरीचि मुख्याः मुनयो विश्रम्भात् प्रत्यबोधयन् ॥२९॥
नेतत् पूर्वैः कृतं त्वद्य न करिष्यन्ति चापरे।
यत्त्वं दुहितरं गच्छेरनिगृह्यांगजां प्रभुः ॥३०॥

श्रीमद्भागवत् पुराण स्कंद ३ अध्याय १२ श्लोक २८-२९-३०,

अर्थ—हे विदुर ! वाणी से श्रेष्ठ देह वाली सरस्वती हुई, कि जिसे देखकर ब्रह्मा जी ने काम के वशीभूत होकर उसके साथ काम की इच्छा की ऐसा ही मैंने सुना है। सम्पूर्ण पुत्र मरीचि आदि ऋषियों ने अपने पिता की खोटी बुद्धि देखकर समझाया। कि ऐसा पहले किसी ने नहीं किया और न कोई करेगा कि जो तुम अपने अंग से उत्पन्न हुई पुत्री को ग्रहण करते हो यह ग्रहण करने योग्य नहीं हैं।

३. ब्रह्मा जी के पाँच सिर थे—

शिवजी की आज्ञा से भैरव ने उन पाँच सिरों में से एक को काट दिया, देखिये—महादेव द्वारा ब्रह्मा जी का अभिमान दूर करना :—

ससर्जाथ महादेवः पुरुषं कंचिदद्भुतम्।
भैरवाख्यं भ्रुवोमध्याद्ब्रह्म दर्प जिघांसया ॥ १ ॥
सवै तदा तत्रपतिं प्रणम्य शिवमंगणे।
किं कार्यं करवाण्यत्र शीघ्रमाज्ञापय प्रभो ॥ २ ॥
वत्सपोऽयँ विधिः साक्षाज्जगतामाद्यदैवतम्।
नूनमर्चय खड्गेन तिग्मेन जवसा परम् ॥ ३ ॥
सर्व गृहीत्वैक करेण केशं, तत्पंचमंदृप्तमसत्य भाषिणम्।
छित्वा शिरोह्यस्य निहन्तुमुद्यतः प्रकम्पयन खगमतिस्फुटं करैः ॥ ४ ॥
पिता तवोत्सृष्ट विभूषणांवर स्रगुत्तरीयामलकेश संहतिः।
प्रवातरंमेव लतेव चंचलः पपात वै भैरव पाद पंकजे ॥ ५ ॥
तावद्विधि तात दिदृक्षुरच्युतः कृपालुरस्मत्प्रतिपाद पल्लवम्।
निषिच्य वाष्पैरवबत्कृताञ्जलिर्यथाशिशुः स्वपितरं कलाक्षरम् ॥ ६ ॥

(शिवपुराण विद्येश्वरी सं० १ अध्याय ८ भाषा टीका वाले का पृष्ठ १३ (बैंकटेश्वर प्रेस बम्बई से प्रकाशित)

अर्थ—तब महादेव जी ने ब्रह्मा जी का मद दूर करने के लिए भृकुटी के मध्य से एक अद्भुत पुरुष भैरव की रचना की। उत्पन्न होते ही समरांगण में उस पुरुष ने शिवजी को प्रणाम किया। और कहा भगवन्! मैं क्या करूँ? शीघ्र आज्ञा दीजिए। शिवजी ने कहा—हे वत्स! यह जो जगत के आदि देवता ब्रह्मा हैं, तीक्ष्ण धारवाले वेगवान खड्ग से इनकी अर्चा (पूजा) करो अर्थात् इन पर प्रहार करो। यह सुनते ही भैरव ने एक हाथ से केश पकड़ कर वह ब्रह्मा जी का पाँचवाँ असत्य भाषी सिर काट, हाथ से स्फुरायमान होते हुए खड्ग से उनके और भी सिर काटने की इच्छा की। तब तुम्हारे पिता ब्रह्मा जी गहने-माला और उत्तरीय वस्त्र त्याग केश खोले हुए हवा चलने से केले और बेल के समान कम्पित होकर भैरव जी के चरण कमल में गिर पड़े। ब्रह्मा जी की यह दशा देखते ही, विष्णु जी ने हमारे स्वामी के चरण कमलों में अश्रु मोचन करते-करते हाथ जोड़कर कहा। जैसे बालक, पिता से कहते हैं। उन्होंने कहा—

त्वया प्रसन्नेन पुराहिदत्तं यदीश पंचाननमीश चिह्नम्।
तस्मात्क्षमस्वाद्यमनुग्रहार्हं कुरु प्रसादं विधये ह्यमुष्यै॥ ७॥

(शिवपुराण विद्ये० सं० १ अध्याय ८ भाषा टीका पृष्ठ १३ वैंकटेश्वर प्रेस बम्बई से प्रकाशित)

अर्थ—विष्णु बोले—हे भगवान्! प्रथम आपने कृपा करके इनको पाँच सिर दिये थे। अब एक जाता रहा, इस कारण क्षमा करके ब्रह्माजी पर प्रसन्नता करो। विष्णु जी की निन्दा तो आपने अभी सुनी है। विष्णु जी ने व्रिन्दा से व्यभिचार किया, उसके पति जालन्धर का रूप बनाकर धोखे से उसका पतिव्रत धर्म नष्ट किया। विष्णु ने नृसिंह बनकर शिव के भक्त हिरण्यकश्यप का वध किया, तो उसके दण्ड स्वरूप शिवजी ने नृसिंह को पटक-पटक कर मारा, और उसकी खाल उतार ली, शिवजी के चित्रों में शेर का चमड़ा पहने हुए उनको अब भी दिखाया जाता है। और शिवजी के गले में कभी-कभी एक नर मुण्डों की माला दिखाई जाती है। उसके बीच में नृसिंह का भी मुख दिखाया जाता है। शास्त्री जी आप निम्न पते पर पूरे विस्तार से देख सकते हैं।

"शिवपुराण शत रुद्र संहिता" ३, अध्याय १२, श्लोक १ से ३६ तक।

शिव पुराण में शिवजी का नंगे होकर ऋषि पत्नियों के सामने जाना लिखा है। ऋषियों के शाप से शिवजी की मूत्रेन्द्रिय टुकड़े-टुकड़े होकर भूमि पर गिर गयी देखिये—**"शिवपुराण कोटिरुद्र संहिता अ० ११ श्लोक ६ से १९ तक।"** शिव जी ने विष्णु जी के मोहनी रूप को देखा तो उनका वीर्यपात हो गया—देखिये—**"श्रीमद्भागवत् स्कंन्द ८ अ० १२ श्लोक १८ से ३३"** तक। शिव जी ने महानन्दा नाम वाली वेश्या से समागम किया—देखिये—**"शिवपुराण शतरुद्र संहिता अ० २५ श्लोक १३ से ३०"** तक। ब्रह्मा, विष्णु और शिव जी तीनों ने अत्रि ऋषि की पत्नी अनुसूइया के साथ अत्यन्त घृणित कुचेष्टाएँ कीं।—देखिये—**"भविष्यपुराण प्रतिसर्ग पर्वखण्ड ४, अध्याय १७ श्लोक ६७ से ७५"** तक मैं आपको आज एक या दो नहीं अनेकों प्रमाण दूंगा और तब तक देता रहूंगा जब तक शास्त्री जी अच्छी तरह छक न जायें और मना न करने लगें।

नोट—बीच में ही उठकर श्री पण्डित गोकुलचन्द जी शास्त्री कहने लगे बस! बस!! महाराज इतने ही प्रमाण बहुत हैं। श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने अन्त में कहा कि—माननीय शास्त्रीजी!

आपने यह कहा कि, ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी की भिन्न-भिन्न पुराणों के भिन्न-भिन्न स्थलों में जो एक-दूसरे से बढ़ाकर प्रशंसा लिखी है। वह तो "जिसका विवाह उसके गीत" हैं। यदि आपकी यह बात भी मान ली जाये, तो भी तो वह तीन पृथक-पृथक सिद्ध हुए। मेरा तो प्रश्न यह है कि इन तीनों में से किसको परमेश्वर माना जाए? जब परमेश्वर का निश्चय ही नहीं तो अवतार किस का सिद्ध

करोगे ? मैंने तो सिद्ध कर दिया कि ईश्वर का अवतार किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं हो सकता, शास्त्रार्थ का समय तो समाप्त हो गया। और नियमानुसार मुझे ही अन्त में बोलना था, शास्त्री जी आपका तो अन्तिम भाषण हो चुका, तो भी यदि आप कुछ कहना चाहें तो मैं कोई आपत्ति नहीं उठाऊँगा आप कुछ कहना चाहें तो कहें।

श्री पं० गोकुल चन्द जी शास्त्री —

मैं शास्त्रार्थ के अन्त में आर्य पण्डित जी को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने मेरा बोलने का अधिकार न रहने पर भी मुझको अपनी उदारता से बोलने का अधिकार दिया है। मैं उनका हार्दिक धन्यवाद करता हूं। और आगे कुछ और न चाहता हुआ यह ही कहता हूं कि पुराणों के सारे प्रमाण तथा मेरे दिये हुए वेद मन्त्रों के अर्थ भी मेरे लिए सर्वथा नये हैं। मैं इन सब पर फिर विचार करूँगा। निवेदन इतना ही हैं कि सनातन धर्म के अवतारवाद विधायक पक्ष को अभी सर्वथा खण्डित हुआ न माना जावे, मुझको बहुत कुछ नई बातें मिली हैं। उन पर विचार करूँगा श्री पं० जी मेरे लिए शुभकामना ही करेंगे ऐसी मुझको आशा है।

शास्त्रार्थ केशरी श्री पं० ठाकुर अमरसिंह जी —

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि पण्डित जी हठ, दुराग्रह रहित यथा निष्कपट हैं। एवं विद्वान तथा सज्जन साधु स्वभाव वाले हैं। सनातन धर्मी भाई इनको बहुत श्रद्धा के साथ लाये हैं। मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि, श्री शास्त्री जी को उसी प्रकार श्रद्धा और प्रेम के साथ ले जायें, पण्डित जी में कोई कमी नहीं है। वास्तविकता यह है, कि अवतारवाद का मानना सर्वथा अनुचित है। इसको कोई भी सत्य सिद्ध कर ही नहीं सकता, मैं श्री पं० जी के लिए यह शुभ कामना करता हूं कि वह परमेश्वर की कृपा से अवतारवाद के मिथ्या मत को छोड़कर सत्य सनातन वैदिक धर्म के मानने वाले बन जायें। **(जनता में चारों ओर हर्ष ध्वनि)** आप लोग हँसें नहीं ! आज बहुत सी बातें सामने आयीं अनेकों प्रमाण सामने आये, जिनसे मैं समझता हूं श्रोतागणों को अत्याधिक लाभ होगा। इस प्रकार के वाद-विवाद होते ही रहने चाहियें, इनसे बड़ी-बड़ी समस्याओं का समाधान होता है। श्री पण्डित गोकुल चन्द जी शास्त्री बड़े विद्वान एवँ साधु स्वभाव के व्यक्ति हैं। इनका पाण्डित्य भी कम नहीं है। आज का यह शास्त्रार्थ निर्विघ्न समाप्त हुआ। इसके लिए आप सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

नोट :—पण्डित गोकुल चन्द जी शास्त्री स्टेज से उठ कर चलने लगे। तो सनातन धर्मी लोग बिना शंख, घड़ियाल बजाये शास्त्री जी को बिना पुष्प हार पहनाये चुपचाप लेकर चले गये। आर्य समाज का बहुत अच्छा प्रभाव रहा, अपनों और परायों सभी ने आर्य पण्डित श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी की भूरि-भूरि प्रशँसा की। एवं पुष्प मालाओं से ठाकुर अमर सिंह जी को लाद दिया। चारों ओर के जयकारों से आकाश गूंज उठा—

वैदिक धर्म की—जय, महर्षि दया नन्द की—जय, आर्य समाज—अमर रहे। वेद की ज्योति—जलती रहे, परमेश्वर का अवतार - नहीं होता। ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी की—जय।

तथा ठाकुर साहब को हाथों पर उठा लिया, एवं पिण्डाल से जहाँ ठाकुर साहब ठहरे हुए थे, वहाँ तक हाथों ही हाथों पर लिए हुए जुलूस की हालत में नारे लगाते हुए पहुंचे। इस प्रकार यह शास्त्रार्थ समाप्त हुआ।

॥ इतिशम् ॥

तृतीय शास्त्रार्थ–

स्थान : "**वजीराबाद**" **जिला गुजरांवाला (पंजाब)**

(वर्तमान पाकिस्तान)
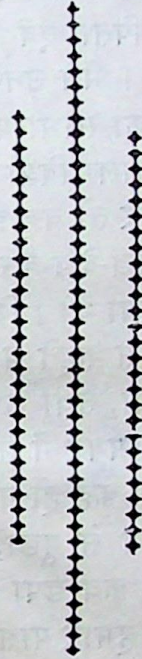
दिनाङ्क : **१९ मई १८९५ ई०** (**दिन के चार बजे**)

विषय : **क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है ?**

प्रधान : **बाबू सिकन्दर लाल जी (मजिस्ट्रेट)**

शास्त्रार्थ कर्त्ता पौराणिकों की ओर से : **श्री पं० गणेशदत्त जी शास्त्री**,

शास्त्रार्थ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से : **श्री पं० कपाराम जी शास्त्रार्थी**
(जो बाद में स्वामी दर्शनानन्द जी के नाम से विख्यात हुए)

मध्यस्थ : **प्रोफेसर मैक्समूलर, ओक्सफोर्ड, (जर्मनी निवासी)**

नोट :—(१) यह शास्त्रार्थ लिखित रूप में हुआ, एवं इसमें **डी० ए० वी० कालेज के प्रोफेसर श्री पण्डित राजाराम जी शास्त्री** भी मौजूद थे।

(२) प्रोफेसर मैक्समूलर, अध्यक्ष संस्कृत विभाग, ओक्सफोर्ड युनिवर्सिटी, जर्मनी निवासी की सम्मति सहित।

इस शास्त्रार्थ के विषय में

माननीय !

पाठक गण, मुझे पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज की छत्र-छाया में काफी लम्बा समय व्यतीत करने का अवसर प्राप्त हुआ । बल्कि अगर यह कहा जाय कि मुझे बचपन से जवानी तक अगर बड़ा करने वाले हैं तो केवल स्वामी जी महाराज हैं ।

दुनियां में अपनों को तो सभी को पालते देखा है ।
मगर किसी दूसरे को पाल कर दिखाये तो हम जानें ।।

स्वामी जी महाराज ने मुझे माता-पिता एवं गुरु तीनों का संयुक्त प्यार देकर पाला है । ऐसे तो कोई अपनों को भी नहीं पाल सकता । मैंने उनके साथ रहकर उनके अनेकों व्याख्यान तथा शंकासमाधान एवं शास्त्रार्थ सुनने व देखने का सौभाग्य प्राप्त किया है । जब भी कभी शास्त्रार्थों की चर्चा होती थी, तो इस शास्त्रार्थ का बड़ा हवाला दिया जाता था, एवं अब भी दिया जाता है । कोई भी पौराणिक **"मृतक श्राद्ध"** पर शास्त्रार्थ करे तो वह इस शास्त्रार्थ का, हवाला दिये बगैर नहीं रह सकता, और वह बार-बार जनता की ओर देख-देख कर कहते ! सुनो भाइयो, आज से ७०-७५ वर्ष पूर्व आर्य समाज को सनातनधर्म ने हरा दिया था । जिसका निर्णय प्रोफेसर मैक्समूलर द्वारा हुआ था, परन्तु दिखाते नहीं थे, केवल जैसे उधर से कहते थे, ऐसे ही इधर से उत्तर दे देते थे । परन्तु मुझे ऐसा देखकर व सुनकर बड़ा दुःख भी होता था, तथा कभी-कभी आश्चर्य एवं गुस्सा भी आता था। कभी-कभी सब झूठ-सा भी मालूम होता था, मगर मैं सोचा करता था कि झूठ तो हो ही नहीं सकता, अगर बिल्कुल झूठ होता तो वह इस प्रकार से कह ही नहीं सकते थे । कुछ न कुछ बात अवश्य है। और मैंने ऐसा जानकर स्वामी जी महाराज से पूछा, कि वह **"मृतक श्राद्ध"** पर मैक्स मूलर द्वारा निर्णय वाला शास्त्रार्थ कहाँ प्राप्त हो सकेगा, कब छपा था ? यह सब बताओ !

स्वामी जी महाराज ने कहा—बेटे ! हमारे पास एक प्रति थी, उसको मैंने वर्षों तक संभाल कर रक्खा अब तुम पुस्तकालय में खोज करो, हो सकता है मिल जावे अन्य कोई जगह ऐसी नहीं है जहां से वह प्राप्त हो सके चाहे आप पैसा भी कितना ही खर्च करो । क्योंकि इतनी छोटी पुस्तक का इतने विशाल पुस्तकालय में मिलना आसान काम नहीं है मैंने मन में सोचा मिले या न मिले, मैं कोई जगह, कोई पुस्तक, ऐसी नहीं छोडूंगा जहां न देखूं, और बड़े दृढ़ विश्वास के साथ लग गया, ५ दिन जब बराबर ढूंढ़ते हुए हो गये तो मैं भी कुछ निराश सा होने लगा था । मगर छटे दिन पुस्तक मिलते ही मुझे जितनी खुशी हुई, मैं प्रकट नहीं कर सकता । और पुस्तकालय में से उछलता हुआ **"मेरी मेहनत सफल हो गयी"** कहता हुआ गुरुजी के पास आया । गुरु जी ने कहा ! बेटे यह तुम्हारा ही काम था, जो तुमने इस पुस्तक को खोज निकाला, अन्य कोई इतना परिश्रम न करता । मैंने उसे बड़े ध्यान से पढ़ा, देखा और मूल फोटो सहित इस पुस्तक में छपवा दिया, ताकि भविष्य में सभी सज्जन देख सकें की असलियत क्या है ? इस शास्त्रार्थ के देखने व पढ़ने से **"मृतकों का श्राद्ध"** करना चाहिए यह कदापि नहीं सिद्ध होता है, एवं न ऐसा कुछ मैक्समूलर का निर्णय ही है । इसी प्रकार जब कोई पौराणिक इस शास्त्रार्थ का हवाला देता था तो स्वामी जी महाराज चैलेन्ज करके कहते थे, कि ऐसा कुछ भी मैक्समूलर का निर्णय नहीं है, यह सब झूठ है । तो फिर आखिर उसने क्या निर्णय दिया ? यह आप अपनी आँखों से प्रस्तुत पुस्तक में देखिये तथा पढ़िये ! मूल पुस्तक के मुख पृष्ठ का फोटो भी साथ छपा हुआ है ।

निवेदक—**"लाजपत राय अग्रवाल"** (सम्पादक)

शास्त्रार्थ से पहले

वजीराबाद (पंजाब) में आर्य समाज का बहुत प्रचार था, वहां के प्रचार को देखकर सनातन-धर्मी भाइयों के पेट में दर्द होता था। परन्तु एक प्रसिद्ध कहावत है कि—**"जब गीदड़ की मौत आती है तो वह शहर की तरफ दौड़ता है"** इसी प्रकार सनातनी भाइयों ने सिर उठाना आरम्भ किया तो परिणामस्वरूप वहां पर शास्त्रार्थ नियत हो गया, शास्त्रार्थ का दिन, समय, तारीख, निश्चित कर दी गयी। ठीक दिन के चार बजे १९ मई सन् १८९५ ई० में स्थान हनुमान का कटरा शहर का मुख्य स्थान इस कार्य के लिए सुसज्जित किया गया।

दोनों ओर मेज और कुर्सियां लग गयी, वेद आदि पुस्तकों के ढेर के ढेर लग गये। और पुरवासी एकत्रित हो गये। इस समय शास्त्रार्थ के लिए बाबू **"श्री सिकन्दर लाल जी मजिस्ट्रेट"** शास्त्रार्थ के प्रधान नियुक्त किये गये। तथा उन्होंने सनातन धर्म का पक्ष लेकर निम्न लिखित नियम बनाये ! जिनको आजकल भी हमारे सतातन धर्मी दुराग्रह से रखने की चेष्टा करते हैं। इन नियमों से क्या-क्या हानियां हैं, इसी पुस्तक के आरम्भ में महात्मा अमर स्वामी जी महाराज का लेख "शास्त्रार्थ की सामान्य बातें" अर्थात् लेखक का निवेदन पढ़िये।

नियम जो निर्धारित किये गये :—

१ शास्त्रार्थ संस्कृत में होगा।

२. वेद (संहिता भाग) शतपथ ब्राह्मण, निरूक्त, मनुस्मृति आदि के अनुकूल शास्त्रार्थ होगा, इनसे भिन्न किसी ग्रन्थ का प्रमाण नहीं माना जायेगा।

३. दोनों अपने-अपने पक्षों को आधा-आधा घण्टे में समाप्त करेंगे।

४. शास्त्रार्थ लेखबद्ध होगा।

५. दोनों लेख किसी मध्यस्थ के पास भेज दिये जावेंगे और जैसा वह निर्णय दे वही दोनों पक्षों को मानना होगा।

६. किसी एक विषय के निश्चय हो जाने से बाकी के सब विषय उसी प्रकार के फैसले पर समझे जावेंगे।

नोट :—शास्त्रार्थ **"मृतक श्राद्ध"** पर नियत हुआ **था** !

(शास्त्रार्थ की मूल प्रति से उद्धृत किया गया)

"सम्पादक"

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित गणेश दत्त जी शास्त्री द्वारा लिखित—

॥ ॐ ॥

वजीराबाद नगरेऽद्यतनार्य्य सामाजिकैः सह मृतक श्राद्ध विषये मदीयः शास्त्रार्थः सम्वृत्तः। आर्य्यैः स्वीकृतं ऋग्वेदादिसंहितादयः स्वतः प्रमाणम्। तत्र सनातन सभातो मयोक्त विषयस्य प्रमाण-मधस्तनं दत्तम्। ऋग्वेद, १० मण्डले, १४ सूक्ते, परेयिवासं षोडशर्चं चतुर्दशं सूक्तं "परेयिवासं" प्रथम मंत्रः। तत्र यमोर्वणितः "यमः नः गातुं" द्वितीयमन्त्रे पितरः कथिताः। अग्रिमेष्वपि मन्त्रेषु मृतक श्राद्ध वर्णना स्फुटीकृता। आर्य्य सामाजिकैर्मनुस्मतिरपि परतः प्रामाण्येन स्वीक्रियते। तत्र पितृणाम्प्रथ-मोत्पत्तौ मनुस्मृतेः प्रथमाध्यायस्य सप्तत्रिंशः श्लोकः कथितः मनुस्मृति, अध्याय १ श्लोक ३७ पुनश्च तृतीयाध्याये ब्राह्मणादि वर्णानां पितरः पृथक् निर्दिष्टाः। मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १९४ आरभ्य २०० पर्यन्तं। पुनः मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक ८३, अस्मिन् मृतक सम्बन्धिनी अपवित्रता पातकत-योक्ता दिन संख्यापिकृता। पुनर्मनुः अध्याय १ श्लोक ६५ व ६६, अत्र पितृणां मानुषेभ्यः काल विभेदः प्रदर्शितः। गीतायामपि "पतन्ति पितरोह्येषां लुप्त पिण्डोदक क्रियाः" प्रथमाध्याये, पुर्नगीतायां अ० १० "पितृणामर्य्यमाचास्मि," अन्यत्रापि एवमादीनि प्रमाणानि सन्ति मृतक श्राद्ध विषये, परन्तु कृत विद्यानां भवतां निष्पक्षपातिनां सन्निधानेऽलमतिगहनावंगाहनेन।

इदानीं भवन्तो मध्यस्था अत्रत्यैर्विधीयन्ते। तस्मिन् सूक्ते मृतक श्राद्ध सिद्धिर्भवतिनवेति कृपया स्फुटं लेखनीयम्! शम्॥

"पण्डित गणेश दत्त शास्त्री"
(प्रोफेसर ओरियन्टल कालेज—लाहोर) वर्तमान-पाकिस्तान

"श्री पण्डित कृपा रामजी" (जो बाद में स्वामी दर्शनानन्द जी के नाम से विख्यात हुए एवं **"श्री राजा राम जी शास्त्री** (प्रोफेसर डी० ए० वी० कालेज—लाहोर) **द्वारा लिखित—**

॥ ओ३म् ॥

लक्षण प्रमाणाभ्यां वस्तुसिद्धिर्नतु प्रतिज्ञामात्रेण। वेदस्य यल्लक्षणं ऋषिभिः कृतं यद्विरूद्धो-योऽर्थो भवेत् नास्तितस्य प्रामाण्यम् (यथा) कणादेन स्वकीय वैशेषिक शास्त्रे प्रतिपादितं "बुद्धिपूर्वाक्-कृत्तिर्वेदे"। तथा च, तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्। अन्यच्च गौतमे नोक्तं तदप्रामाण्यमनृतव्याघात पुनरूक्त दोषेभ्यः। एभिः स्पष्टतया प्रतीयते वेदानांयोऽर्थः क्रियते तेनार्थेन यदि वेदेषु कश्चिद्दोषः आगच्छति नास्ति स वेदार्थः पिता पुत्र सम्बन्ध विचारावसरे एते प्रष्णाः प्रतिपद्यन्ते। पिता पुत्रावि सम्बन्धाः शरीरे वर्त्तन्ते तथा चात्मनि तथा विशिष्टे शरीरे चेर्त्तहि शरीर पितृवधस्य पातकी भवेत् आत्मनि चेतत्रापि वक्तुं न शक्यते, आत्मनो नित्यत्वात्।

विशिष्टे चिन्नास्ति मृतकानां पितृत्वं पितृत्वाभावात् नास्ति मृतक श्राद्धं तत्वज्ञानानुकूल्यम्। तत्वज्ञान विरूद्धत्वान्नास्ति वेदार्थः वेदेषु मृतक विशेषणाभावात् तथाचत्रियाणा पितृणामेव श्राद्धस्य

विहित्वात् जीवित पितृषु संघटते तथान्य कतस्यान्येस्मिन् फलाभावात् यदि अन्य कृतस्य अन्योभुक्ते र्तहि बद्धानां कृत कर्म्माणांमुक्तानामपि बंधस्यापत्तिः तथा च वेदेषु पितृणामावाहन प्रतिपादनात्। न तेनान्य देहे गतानामावाहनं संघटति यदि शरीरं विहाय आयाति र्तहि पितृहिंसा भवेत् यदि नायाति र्तहि वैदिक क्रियासु अनृत्वापत्तिः।

वेदेषु अनृताभावात् नास्ति मृतकानामावाहनं, एभिः प्रमाणैः स्पष्टतया प्रतीयते जीवितामेव श्राद्धं वेदानुकूल्यमस्ति।

"प० कृपाराम व पं० राजा राम"
(प्रोफेसर डी० ए० वी० कालेज लाहोर)

नोट :—इन दोनों लेखों का भावार्थ पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज ने किया है। जो नीचे दिया जाता है।

प्रथम लेख का भावार्थ :—

वजीराबाद नगर में आज आर्य समाजियों के साथ मृतक श्राद्ध विषय पर मेरा शास्त्रार्थ आरम्भ है। आर्य समाजिकों ने ऋग्वेद आदि सहिंताओं को स्वतः प्रमाण स्वीकार किया है वहां सनातन धर्म की ओर से मैंने उक्त विषय के यथा प्रमाण दिये हैं। **"ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त १४" मन्त्र-** १. **"परेयिवासं** ....यहां इसमें यम का वर्णन है २. **"यमोनोगातुं**....... इसी मण्डल व सूक्त के दूसरे मन्त्र में पितरों का वर्णन है। अर्थात् पितर कहे गये हैं। इससे अगले मन्त्र में भी मृतक श्राद्ध का वर्णन स्पष्ट रूप में है। आर्य समाजियों के द्वारा मनुस्मृति भी परतः प्रमाण रूप से स्वीकार की जाती है। वहां पितरों की प्रथमोत्तपत्ति में मनुस्मृति के अध्याय १ श्लोक ३७ में वर्णन है। फिर तीसरे अध्याय में ब्राह्मण आदि वर्णों के (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) पृथक्-पृथक पितर बताये गये हैं। मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १९४ से आरम्भ करके श्लोक २०० तक। फिर मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक ८३ में मृतक के सम्बन्ध में अपवित्रता (पातक) के दिनों की संख्या बताई है। फिर मनुस्मृति अध्याय १ श्लोक, ६५, ६६, में पितरों और मनुष्यों के काल का भेद बताया गया है। गीता में भी— **"पतन्ति पितरोह्येषां लुप्तपिडोदक क्रियाः"** गीता अध्याय १ श्लोक। ४२। फिर गीता अध्याय १० श्लोक।२९। **"पितृणामर्यमाचास्मि** ....और स्थानों में भी मृतक श्राद्ध विषय में, इसी प्रकार के प्रमाण हैं। परन्तु विद्या प्राप्त किये हुए पक्षपात रहित आप लोगों के सम्मुख अधिक खोज करने से बस समाप्त करता हूं अब आप मध्यस्थ निश्चय किये गए हैं। उस सूक्त में मृतक श्राद्ध सिद्धि होती है कि नहीं? कृपया स्पष्ट लिखिए!

"गणेशदत्त शास्त्री"
(प्रोफेसर-ओरियण्टल कालिज-लाहोर)

दूसरे लेख का भावार्थ :—

लक्षण और प्रमाणों (दोनों) से वस्तु की सिद्धि होती है प्रतिज्ञा मात्र से नहीं। वेद का जो लक्षण ऋषियों ने किया है उससे जो विरुद्ध हो, उसको प्रमाण मानना योग्य नहीं है। (जैसे) ऋषि कणाद ने अपने वैशेषिक शास्त्र में प्रतिपादन किया है। "वेद में बुद्धि पूर्वक वाक्य हैं" और भी उस परमेश्वर के वचन होने से वेदों की प्रामाणिकता है। और भी-ऋषि गौतम ने कहा है अनृत-मिथ्या, व्याघात-परस्पर विरूद्ध, पुनरुक्त-आवश्यकता के बिना बार-बार एक ही बात का कहना, इन दोषों युक्त ग्रन्थों की प्रामाणिकता नहीं हैं। इन वचनों से स्पष्टतया प्रतीत होता है कि वेदों का जो अर्थ किया जाता है, उस अर्थ से यदि वेदों में कुछ दोष आता है, तो वह वेदार्थ नहीं हैं। पिता-पुत्र सम्बन्ध विचार के अवसर पर इतने प्रश्न उत्पन्न होते हैं। --पिता-पुत्रादि सम्बन्ध शरीर में होते हैं या जीव में, या जीव और शरीर दोनों इक्ट्ठे रहने में ?

यदि शरीर में पिता-पुत्र सम्बन्ध हैं तो मरे हुए पिता के शरीर को भस्म करने पर पुत्र पितृघात का दोषी हो जायेगा। जीव में पिता-पुत्र सम्बन्ध माना जाये, जीव के नित्य होने से यह भी नहीं कहा जा सकता, (पिता-पुत्र सम्बंध नित्य नहीं अनित्य है, नित्य जीवात्मा के साथ पिता-पुत्रादि अनित्य सबम्न्ध रह नहीं सकते हैं, ।) यदि जीव और शरीर दोनों के संयोग में पिता-पुत्र सम्बंध हैं, तो मरने पर वह सम्बंध समाप्त हो गया, मृतक में पितृत्व पालन क्रिया का अभाव होने से (जीव और शरीर का संयोग होने में पिता-पुत्र सम्बन्ध था, वह संयोग रहा नहीं तो पिता-पुत्र सम्बन्ध भी नहीं रहा,) इसलिए मृतक श्राद्ध तत्त्वज्ञों ज्ञानियों के अनुकूल नहीं हैं। तत्वज्ञान के विरुद्ध होने से (मृतक-श्राद्ध बताने वाला अर्थ वेदार्थ नहीं हैं। पितर शब्द के साथ) मृतक विशेषण का अभाव होने से (अर्थात् वेदों में पितर शब्द के साथ मृतक विशेषण नहीं हैं। इसलिए "पितर" का अर्थ जीवित माता-पिता आदि ही हैं मरे हुए नहीं। क्योंकि पितर का अर्थ रक्षा करने वाले के हैं, रक्षा करने की सामर्थ्य जीवितों में ही होती है। मृतकों में नहीं) और तीन पितरों (पिता, पितामय, प्रपितामह,) का श्राद्ध ही विधान में होने से भी जीवितों का ही श्राद्ध होता है, क्योंकि इन तीनों का जीवित रहना अधिक सम्भव है।

ओर, अन्य के किये का फल अन्य को न मिलने से भी मृतक श्राद्ध असिद्ध हैं। यदि अन्य का किया अन्य भोग सकता है तो बद्ध जीवों के कर्मों से मुक्तों का बन्ध भी मानना पड़ेगा।

और भी वेदों में पितरो को बुलाने का विधान होने से भी (यही सिद्ध होता है कि श्राद्ध मृतकों का नहीं हो सकता है) क्योंकि न मृतकों को बुलाया जा सकता है, न मृतक बुलाने से आ सकते हैं। जो मर जाता है वह कहीं न कहीं जन्म ले लेता है। "**ध्रुवं जन्म मृतस्य च**" (गीता में कहा है) मरने वाले का जन्म अवश्य है।

उससे अन्य देह में गये हुओं का बुलाना हो नहीं सकता है। यदि वह पितर शरीर को छोड़कर आयेगा तो पितृ हिंसा हो जायेगी। यदि नहीं आयेगा तो वैदिक (कहलाने वाली) क्रिया झूठी हो जायेगी। वेदों में अनृत (झूठ) का अभाव है, इससे मृतकों का बुलाया जाना असम्भव है। इन प्रमाणों से स्पष्टतया यह सिद्ध होता है, कि जीवितों (माता-पिता आदि) का श्राद्ध (श्रद्धा से किया गया तर्पण) ही वेदों के अनुकूल हैं।

"पं० कृपा राम व पं० राजा राम शास्त्री"
(प्रोफेसर डी० ए० वी० कालेज लाहोर)

जर्मनी भेजने का निश्चय :—

उपरोक्त दोनों लेखों को जैसा निश्चय किया गया था, उसके अनुसार श्री बाबू सिकन्दर लाल जी मजिस्ट्रेट ने जो उस शास्त्रार्थ सभा के प्रधान भी थे, लेकर रजिस्ट्री से (मध्यस्थ श्री प्रौ० मैक्समूलर) के पास निर्णयार्थ जर्मनी भेज दिया था। वहां से जो निर्णय आया उसको मूल कापी सहित सनातन धर्म सभा ने प्रकाशित करा लिया था। जिसकी मूल कापी के मुख पृष्ठ की फोटो नीचे दी जाती है उस के दर्शन करें एवं उस निर्णय को भी अगले पृष्ठों में पढ़ें जो जर्मनी से आया था।

* श्रीः *

शास्त्रार्थ श्राद्ध।

आर्यसमाज वजीराबाद (पञ्जाब)

और

पण्डित गणेशदत्त शास्त्री,

प्रोफेसर संस्कृत और धर्मशास्त्र सनातनधर्म कालेज,
भूतपूर्व प्रोफेसर गवर्नमेंट कालेज और ओरियण्टल
कालेज, रिटायर्ड प्रोफेसर फोरमेन क्रिश्चियन
कालेज इत्यादि २।

डी० एल० टी० ओरियण्टल प्रोफेसर एफ़ मैक्सम्यूलर के पूज्य
महोदय की सम्मति सहित

सर्वाधिकाररक्षित।

द्वितीयबार — मूल्य ।)

नोट—जो निर्णय जर्मनी से प्रोफेसर मैक्समूलर जी ने भेजा था, उसको लेकर सनातन धर्म सभा ने सर्वाधिकार के साथ कई बार प्रकाशित किया। जिसकी द्वितीय बार प्रकाशित प्रति का फोटो ऊपर दिया गया है। आप इसे अच्छी तरह देख सकते हैं। अन्दर का निर्णय अगले पृष्ठों में पढ़िये।—"सम्पादक"

श्री प्रोफेसर मैक्समूलर द्वारा दिया गया निर्णय –

Oxford, 13th September 1896.

My friends,

My hair has long ago turned white and I have seen the children nay to enter the Asharama of Sanyasa. But though I long for rest and peace, I receive so many letters, not only from England, France, Germany, Italy, but from America, and particularly From India that I should literally have no time left to my self the whole day, if I were to attempt to answer them all. Still, when I received your first letter I read it carefully and even began to answer it but afterwards I could not find it again it had shown it must have carried it away. I confess however that I felt at the time what I feel even now, that you with your intimate knowledge of the shastras, are far better judges than I am as to the original purpose of the Sharaddha. You find some thing like your Sharaddha among other Aryan Nations also. In fact ancestor-worship is found among other nations also, who do not speak Aryan Languages. It arose simply from a very natural human feelling to give up some thing that is dear to us, to those who were dear to us and are no longer among us, just as the bow and sacrificial vessels were thrown on the funeral piles to be burnt with the body of the deceased. The question whether the departed would come back to take and eat the pindas was never asked it was enough to have given them and thus to have honoured the memory of our parents, grand parents, and great grand parents, as these offerings were made originally at times when the remaining members of a family were gathered at a meal, the living also part took of the meals offered. Or distributed them to worthy people. Hence the Shraddha was both for the departed and for the survivors. Very soon however, superstition came on and people persuaded themselves that the departed spirits returned in a bodily shape to earth, to partake of the offerings, and than the scoffers began to say that those Shraddhas were absured because the departed spirits were never seen to consume them or benefit by them. In this way superstition always creates the scepticism of the Nastiks.

You get a very good defination of Shraddha in the Nirnaya Sindhu. There Marichi says.

प्रेतं पितृंश्च निर्दिश्य भोज्यं यत्प्रियमात्मनः। श्रद्धया दीयते तत्र तच्छ्राद्धं परिकीर्तितम् ॥

In the same place it is stated that the Yejur Vedas looked upon the Shraddha as "Pind Danam" the Rig Vedas as Dvijarchan Sam Vedas as both.

"यजुषां पिण्डदानं तु बह्वृचानां द्विजार्चनम्। श्राद्ध शब्दाभिधेयं स्यादुभयं सामवेदिनाम् ॥"

I hold that in this case the Sama Vedas were right and that the Shraddha was meant both as an honourable offering to the "Mritas" and as an honour to the living, particularly of the Dwijas who came to assist at the Shraddha. These gifts should be bestowed on near relatives and friends and I myself, as having studied the Vedas, have frequently received such Shraddha gifts from India, though I was not born in "Arya Varta".

Now I must close my letter being very busy, and I remain your friend and very distant Saphinda.

(Sd.)—"Proff. MaxMuller"

उपरोक्त अंग्रेजी पत्र का हिन्दी अनुवाद–

ओक्सफोर्ड, १३ सितम्बर सन् १८९६,

मेरे दोस्तो !

मेरे बाल सफेद हुए जमाना बीत गया। और मेरे बच्चे सन्यास आश्रम में पदार्पण कर चुके। यूं तो मन आराम व शान्ति चाहता है, मगर मेरे पास इंगलैंड फ्राँस, जर्मनी, इटली बलिक अमेरीका व विशेष कर भारत से इतने पत्र आते हैं कि अगर मैं सभी का जवाब देना चाहूं तो खुद अपने लिए कुछ भी मेरे पास समय न रहेगा। खैर ! जब तुम्हारा पहला पत्र मिला मैंने उसे ध्यानपूर्वक पढ़ा, और उसका जवाब देना भी आरम्भ किया। मगर बाद में मुझे वह पत्र न मिल सका कहीं खो गया। मैं मानता हूं कि आप शास्त्रों का ज्ञान रखते हुए श्राद्ध के मूल कारण को मुझसे ज्यादा जानते हैं। श्राद्ध का रिवाज अन्य आर्य देशों में भी मिलता है। बल्कि अनार्य देशों में भी पूर्वजों की पूजा पाई जाती है। यह रिवाज एक बिलकुल स्वाभाविक मानव प्रवृत्ति से शुरू हुआ –अपने गुजरे हुए प्रियजनों को कोई प्रिय वस्तु अर्पण करने की भावना। जैसे कि जलती चिता पर मृत शरीर के साथ धनुष व अन्य चीजें जला देना। **क्या मरे हुए उन चीजों को लेने आते हैं ? यह जानना जरूरी नहीं था।** यही सन्तोष की बात हैं कि हमने उन्हें कुछ दिया। ज्यादातर ऐसा परिवार के अन्य सदस्यों की उपस्थिति में किया जाता था –जैसे कि भोजन के समय जबकि वे खुद भोजन ग्रहण करते थे। अथवा अन्य योग्य पुरुषों को भोजन कराते समय। इस लिए श्राद्ध मृत व जीवित दोनों के लिए था, लेकिन **जल्द ही यह अन्धविश्वास फैल गया कि मृत फिर शरीर धारण कर धरती पर लौटते हैं। उन अर्पण की हुई चीजों का भोग करने।** तभी से नास्तिक लोग श्राद्ध को अन्ध विश्वास बताने लगे। इस तरह अन्ध विश्वास से ही नास्तिकों में संशय पैदा हुआ।

"**निर्णय सिन्धु**" में श्राद्ध की बहुत अच्छी परिभाषा मिलती है। मरीचि कहता है—प्रेत और पितरों का निर्देश करके जो आत्मा को प्रिय है। उस भोजन का देना "श्राद्ध" कहलाता है। उसी जगह यह बताया गया है कि, यजुर्वेद श्राद्ध को "पिण्डदान" और ऋग्वेद "द्विजार्चन" मानते हैं और सामवेद दोनों को मानता हैं। "यजुर्वेद" के द्वारा "पिण्डदान" और बहुत सी ऋचाओं के द्वारा ब्राह्मणों का पूजन सामवेदियों में इन दोनों को श्राद्ध कहते हैं। मेरे ख्याल में सामवेद का मत ठीक है कि श्राद्ध मृत व जीवित दोनों के लिए एक दक्षिणा समान था। इसमें जीवितों का सम्मान था। खास कर द्विज जो श्राद्ध के समय उपस्थित रहते थे। **ये उपहार अपने नजदीकी रिश्तेदारों व दोस्तों पर अर्पण करने चाहियें। और मुझे खुद (वेद पढ़ने के नाते) ऐसे कई श्राद्ध उपहार भारत से उपलब्ध हुए हैं।** जब कि मैं आर्यावर्त्त में पैदा नहीं हुआ।

अब मैं पत्र समाप्त करता हूं। काम बहुत है मैं तुम्हारा दोस्त और दूर का सपिण्ड।

"मैक्समूलर"
(अँग्रेजी में हस्ताक्षर)

इस सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य बातें

—अमर स्वामी सरस्वती

१. श्री पं० गणेश दत्त शास्त्री के लेख में अन्तिम-वाक्य यह है—"**तस्मिन् सूक्ते मृतक श्राद्ध सिद्धिर्भवति न वेति**" इसका अर्थ यह है कि ऋग्वेद के जिस सूक्त से मैंने प्रमाण दिये हैं उस सूक्त से "मृतक श्राद्ध" की सिद्धि होती है या नहीं ? "**कृपया स्फुट लेखनीयम्**" कृपा करके यह स्पष्ट लिखिये ! मैक्समूलर साहिब ने सारे पत्र में यह कहीं भीं नहीं लिखा कि—ऋग्वेद से या ऋग्वेद के इस दशम मण्डल के बयालीसवें सूक्त से "मृतक श्राद्ध" की सिद्धि होती है ।

स्पष्ट है कि—इस सूक्त से मृतक श्राद्ध की सिद्धि नहीं होती है ।

१. मैं कहता हूं कि—**चारों वेदों से ही सिद्धि नहीं बल्कि**—"**मृतकश्राद्ध का खण्डन होता है**" । इसकी सिद्धि के लिए वेदों में एक मन्त्र भी नहीं हैं ।

२. मैक्समूलर का यह वाक्य—"**क्या मरे हुए उन चीजों को लेने आते हैं ? यह जानना आवश्यक नहीं था**" यह वाक्य ध्यान देने योग्य है । बिल्कुल स्पष्ट है कि मैक्समूलर के विचार में श्राद्ध पहुंचने की भावना से नहीं किया जाता था ।

३. मैक्समूलर का यह वाक्य भी ध्यान देने योग्य है—"**जल्द ही यह अन्ध विश्वास फैल गया कि उन अर्पण की हुई चीजों को भोग करने को मत पितर पुनः शरीर धारण कर धरती पर लौट आते हैं ।**" अर्थात् नहीं आते हैं । "**आते हैं यह अन्ध विश्वास है ।**"

४. "**इसमें जीवितों का सम्मान होता है" ये उपहार अपने नजदीकी रिस्तेदारों और दोस्तों पर अर्पण करने चाहियें और "मुझे वेद पढ़ने के नाते ऐसे कई उपहार भारत से उपलब्ध हुए हैं ।**"

५. मैक्समूलर जी के लेख में पांचवीं बात यह भी विशेष विचारणीय है कि—वेद का एक भी प्रमाण मृतक श्राद्ध के पक्ष में नहीं दिया है । "निर्णय सिन्धु" एक अनार्ष एवं पौराणिक ग्रन्थ है उसका एक श्लोक देकर यह लिखा है कि —"**उस ग्रन्थ में ऐसा माना गया है**" स्पष्ट है कि—मैक्समूलर जी ने उस शास्त्रार्थ पर कोई निर्णय नहीं दिया । और यह स्पष्ट लिख दिया कि—"मृतकों के पास पहुंचाने के लिये नहीं केवल उपहार रूप में ही वस्तुएं जीवितों को दी जाती थी" और दी जानी चाहियें ।

श्री पण्डित गणेशदत्त जी शास्त्री के पत्र पर विचार –

श्री शास्त्री जी ने ऋग्वेद के मण्डल १० सूक्त १४ के १-२ मन्त्रों की प्रतीकें दी हैं और मैक्समूलर जी से सम्मत्ति मांगी है कि इस सूक्त से मृतक श्राद्ध सिद्ध होता है या नहीं ? यह स्पष्ट लिखिए । मैक्समूलर जी ने इस सूक्त को छुआ भी नहीं । वास्तविकता यह है कि—उस सूक्त में मृतक श्राद्ध की गन्ध भी नहीं है इस सूक्त में १६ मन्त्र हैं इनमें एक बार "**पिता**" शब्द आया है और पांच बार "**पितर**" शब्द आया पर सारे सूत्र में—"**मृतक**" शब्द एक बार भी नहीं आया है । पौराणिक पण्डितों ने एक मिथ्या धारणा बना रक्खी है कि—"**पितर**" शब्द "**मृतक**" के अर्थ में रूढ़ है

वेद में रूढ़ि अर्थ में एक भी शब्द नहीं है और "पितर" शब्द **"मृतक"** के अर्थ में रूढ़ है यह उनकी धारणा सारे संस्कृत साहित्य के विरुद्ध है। एक प्रमाण यहाँ वेद का इसी विषय में देता हूं— यजुर्वेद अध्याय २५ मन्त्र २२ इस प्रकार है—**"शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्राजरसं तनूनाम। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तो॥** इस मन्त्र मेंयह प्रार्थना है कि— हे परमेश्वर ! हम बुढ़ापे तक जीवित रहें हम उस समय तक जीवित रहें जब हमारे पुत्र **"पितर"** हो जायें। यदि इस मन्त्र में **"पितर"** शब्द का अर्थ **"मृतक"** लिया जाये तो घोर अनर्थ हो जायेगा। क्या कोई पिता परमेश्वर से ऐसी प्रार्थना कभी भी कर सकता है कि—**मैं** उस समय तक जीवित रहूं जब मेरे पुत्र मर जायें ? स्पष्ट है कि—ऐसी प्रार्थना कोई भी कभी नहीं करेगा। इस मन्त्र में आये **"पितर"** शब्द का अर्थ महिधर और उव्वट ने यह किया है—**"अस्मत् पुत्रा पुत्रवन्तो भवन्ति अस्मत्पौत्रा भवन्तीर्थः।** इसका भावार्थ यह है कि—हम उस समय तक जीवित रहें जब हमारे पुत्र **"पितर"** अर्थात् पुत्रों वाले हो जायें अर्थात् हमारे पौत्र हो जायें। **"पितर"** का अर्थ है सन्तान वाले सन्तान का पालन करने वाले। क्योंकि—पितृ और पिता शब्द एक वचन है और यह शब्द **"पा"** धातु से बनता है जिसका अर्थ **"रक्षा"** है। रक्षा करने वाला **"पितृ"** या **"पिता"** ही हो सकता है निरुक्त में पिता का अर्थ किया है। **"पिता पाता पालयितावा"** पिता-पालन करने वाला और रक्षा करने वाला। "पितृ" और "पिता" शब्द का बहुवचन है **"पितर"** ! तो पितर का अर्थ हुआ "रक्षा करने वाले।" रक्षा तो जीवित ही कर सकता हैं मृतक तो अपनी भी रक्षा नहीं कर सका अन्यों की रक्षा कैसे करेगा ? अतः स्पष्ट है कि **"पितर"** का अर्थ—"मृतक" कभी नहीं हो सकता है। इस सारे सूक्त में एक मन्त्र में भी मृतक श्राद्ध नहीं है। पं० गणेशदत्त शास्त्री ने मनुस्मृति के अध्याय तीन में बताया है कि— वहाँ चारों वर्णों के पृथक्-पृथक् पितर बताये हैं। इस पर भी विचार कर लें—मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १९७ में कहा गया है कि—

सोमपानाम विप्राणां क्षत्रियाणां हविर्भुजः। वैश्यानां आज्यपानाम, शूद्राणां सुकालिनः॥

अर्थ—ब्राह्मणों के पितर "सोमपा" हैं क्षत्रियों के "हविर्भुंज" हैं। वैश्यों के पितर "आज्यपा" नाम वाले हैं और शूद्रों के पितरों का नाम "सुकालिन" है। ये हैं कौन ? इससे अगले श्लोक में बताया गया है कि—

"सोमपास्तुकवेः पुत्रा हविष्मन्तोङ्गिरः सुताः।
पुलस्त्यस्याज्यपाः पुत्रा वसिष्ठस्य सुकालिनः॥ (मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १९८,)

ब्राह्मणों के पितर सोमपा, कविउशना के पुत्र हैं, क्षत्रियों के पितर हविष्मन्त "हविर्भुंज" अंगिरा के पुत्र हैं, वैश्यों के पितर "आज्यपा" पुलस्त्य के पुत्र हैं, और शूद्रों के पितर "सुकालिन्" वसिष्ठ के पुत्र हैं।

इन श्लोकों में उस समय के जीवित लोगों को भिन्न-भिन्न वर्णों के पितर बताया गया है। ब्राह्मणों, क्षत्रियों वैश्यों और शूद्रों के मरे हुए पितर पितामह आदि का वर्णन यहां कहाँ है ? और ब्राह्मणों क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों के मरे हुए पितर, कवि, अंगिरा, पुलस्त्य और वसिष्ठ के पुत्र कैसे

हो जायेंगे ? स्पष्ट है कि यहाँ भी मृतक श्राद्ध नहीं है। रहा एक प्रमाण गीता का ! वह इस प्रकार है—

संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च। पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रिया ॥
(गीता अध्याय १ श्लोक ४१,)

इस श्लोक का पौराणिक लोग मृतक श्राद्ध सिद्ध करने वाले अर्थ यह लेते हैं कि—वर्णसंकर सन्तान के पितर पतित हो जायेंगे क्योंकि पिण्डोदक क्रिया बन्द हो जाएगी यहां पहिले मैं यह बतलाता हूं कि गीता में पितर शब्द जीवितों के लिए आया है देखिए प्रमाण—

तत्रापश्यत् स्थितान् पार्थः पितृनथ पिता महान। आचार्यान्मातुलान् भ्रातॄन् पुत्रान् पौत्रान् सखींतस्था ॥
(गीता अध्याय १ श्लोक २६)

वहाँ युद्धस्थल में अर्जुन ने देखा खड़े हुए आचार्यों को ! पितरों को ! पितामहो को ! मामाओं को ! भाइयों, पुत्रों, पौत्रों और मित्रों को !

कहिए यहाँ मरे हुए पितरों को युद्ध के लिए खड़े देखा था या जीवितों को ? निश्चय ही कहना पड़ेगा कि जीवितों को ही देखा था। दूसरा प्रमाण और देखिये गीता अध्याय १ श्लोक ३३-३४—

आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहा ॥ ३३ ॥
मातुलाः श्वसुराः पौत्राः श्याला सम्बन्धिनस्तथा।
एतान्न हन्तुमिच्छामि, घ्नतोऽपि मधुसूदन ॥ ३४ ॥

अर्जुन ने कहा कि—जिनके लिये मैं राज्य और सुख चाहता था वह सभी प्राणों और धनों का लोभ त्याग कर यहाँ युद्धस्थल में खड़े हैं। आचार्य, पितर, पुत्र और पितामह, मामा, श्वसुर, पौत्र, साले और अन्य संबंधी। यह मुझको मारें तो भी मैं इनको मारना नहीं चाहता हूं। यहाँ पितर शब्द जीवित के लिये ही आया है। कौन मान लेगा कि मरे हुए पितर लड़ने मरने को खड़े थे ? और उन मरे हुओं को कहता था कि मैं इनको नहीं मारना चाहता हूं ये मुझको मारे तो भी। बस ! वहां जो कहा है कि उनके पितर पतित हो जायेंगे सो मरे हुए कैसे पतित हो जायेंगे ? रोटी पानी न मिलेगा तो भूख के मारे जीवित पितर पतित हो जायेंगे। **"बुभुक्षितः किम्नकरोति पापम्।"** भूखा क्या पाप नहीं करता है ?

ये प्रमाण हैं श्री पं० गणेशदत्त जी शास्त्री के, जो मैक्समूलर के पास भेजे गये थे, इनकी यहीं धज्जियाँ उड़ गई। पाठकगण देख लें कि गणेशदत्त जी शास्त्री झूठी बातों पर भी मैक्समूलर जी से मृतक श्राद्ध के पक्ष में स्वीकृति की सम्मत्ति चाहते थे।

"अमर स्वामी सरस्वती"

वजीराबाद शास्त्रार्थ और मैक्समूलर की सम्मति पर

मेरे विचार

—अमर स्वामी सरस्वती

वह शास्त्रार्थ क्या था ? एक खेल था जो वजीराबाद के हठी सनातन धर्मियों के हठ और दुराग्रह पर वजीराबाद के आर्य समाजियों ने इसलिये इस पर स्वीकृति दे दी कि—झूठे को घर तक पहुंचाने के लिये यह ही सही । मैंने श्री पण्डित राजाराम जी से पूछा था कि—आपने यह पौराणिकों की अनुचित माँग मान क्यों ली थी ? उन्होंने बताया कि - वजीराबाद के आर्य समाजियों ने मुझसे और श्री पण्डित कृपाराम जी (स्वामी दर्शनानन्द जी) से पूछे बिना यह नियम स्वीकार कर लिये थे। हमने तो कहा था कि पौराणिकों की माँगें अनुचित हैं वजीराबाद आर्य समाज के अधिकारियों की बात रखने के लिये ही यह खेल खेला गया था । दोनों पक्षों से केवल १०—१२ पंक्तियों का एक-एक पत्र लिखा जाय, इसका नाम शास्त्रार्थ है । पक्ष प्रतिपक्ष की ओर से विस्तारपूर्वक ४-६ बार उत्तर प्रत्युत्तर लिखे जाते तो विषय का रूप कुछ समझ में भी आता । इस शास्त्रार्थ के खेल में दोनों पक्षों से ही अधूरा-अधूरा लिखा गया । मैक्समूलर के पास इसको निर्णयार्थ भेजे जाने में भी कुछ तुक नहीं थी, कोई भी आर्य समाजी विद्वान मैक्समूलर को महापण्डित मानने को तैयार नहीं हैं । मैक्समूलर के विषय में महर्षि दयानन्द जी महाराज की सम्मति यह है—"जो लोग कहते हैं कि जर्मनी देश में संस्कृत विद्या का बहुत प्रचार है और जितनी संस्कृत मैक्समूलर साहिब पढ़े हैं उतना कोई नहीं पढ़ा, यह बात कहने मात्र है क्योंकि—"**यस्मिन् देशे द्रुमोनास्ति तत्रैरण्डो द्रुमायते**" अर्थात् जिस देश में कोई वृक्ष नहीं होता, उस देश में एरण्ड ही को बड़ा वृक्ष मान लेते हैं वैसे ही योरोप देश में संस्कृत विद्या का प्रचार न होने से जर्मन लोगों और मैक्समूलर ने थोड़ा सा पढ़ा वह ही उनके लिये तो अधिक हैं । परन्तु आर्यावर्त्त देश की ओर देखें तो उनकी बहुत न्यून गणना है क्योंकि मैंने जर्मनी देश निवासी एक प्रिन्सिपल के पत्र से जाना कि जर्मनी देश में संस्कृत चिट्ठी का अर्थ करने वाले भी बहुत कम है । और मैक्समूलर के संस्कृत साहित्य और थोड़ी सी वेद की व्याख्या देख कर मुझको विदित होता है कि मैक्समूलर साहब ने इधर-उधर आर्यावर्त्तीय लोगों की, की हुई टीका को देखकर कुछ-कुछ यथा-तथा लिखा है जैसा कि—**युञ्जन्ति ब्रध्न मरुषंचरन्तं परितस्थुषः । रोचन्ते रोचनादिवि ॥** इस मन्त्र का अर्थ "**घोड़ा**" किया है ; इससे तो जो सायणाचार्य ने "**सूर्य**" अर्थ किया है सो अच्छा है परन्तु इसका ठीक अर्थ परमात्मा है सो मेरी बनाई "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" में देख लीजिये । उसमें इस मन्त्र का अर्थ यथार्थ किया है । इतने से जान लीजिये कि जर्मनी देश और मैक्समूलर साहब में संस्कृत विद्या का कितना पाण्डित्य है ?

"सत्यार्थ प्रकाश एकादश समुल्लास"

श्री मैक्समूलर न संस्कृत के बड़े विद्वान थे न वेदों के ज्ञाता थे । आर्य समाजी कोई विद्वान उनको इस योग्य नहीं मानता है कि वह हमारे शास्त्रार्थों पर निर्णय दे सकें ।

क्या मैक्समूलर ने शास्त्रार्थ का निर्णय दिया ?—

भारत से जो दो पर्चे शास्त्रार्थ के उनको भेजे गये वह उन से खो गये थे, उनसे बार-बार यहाँ के पौराणिकों ने प्रार्थना की कि "मृतक श्राद्ध" पर अपनी सम्मति भेज दीजिये. तब एक वर्ष बीतने के पश्चात् उन्होंने अपनी सम्मति शास्त्रार्थ पर नहीं "मृतक श्राद्ध" पर दी और "मृतक श्राद्ध" को वैदिक नहीं बताया वेद का एक भी मन्त्र उन्होंने मृतक श्राद्ध के पक्ष में नहीं दिया।

यह लिखा कि मृतक श्राद्ध तो मरे हुओं की स्मृति में किया जाता था और जो वस्तुएँ उन लोगों को प्यारी लगती थीं वह उनकी याद में लोगों को भेंट स्वरूप दी जाती थी मुझ को भी ऐसी अनेक वस्तुएँ भारत से अनेक बार भेंट में प्राप्त हुई हैं ? मैक्समूलर ने लिखा कि—"यह तो कभी प्रश्न ही नहीं उठता था कि—मृतको के नाम पर जो वस्तुएं दी जाती हैं वह उनको पहुंचती हैं या नहीं"। और जब यह कहा जाने लगा कि ये वस्तुएँ मृतकों को पहुंचती हैं तब से नास्तिक लोग इस पर शंकायें करने लगे। "**नास्तिक**" शब्द से उनका संकेत चार्वाकों की ओर है। जिन्होंने यह प्रश्न उठाये हैं—

(१) **मृतानामपि जन्तूनां श्राद्धं चेत्तृप्ति कारणम्।**
गच्छतामिह जन्तूनां, व्यर्थं पाथेय कल्पनम्॥

मरे हुये मनुष्यों के लिये श्राद्ध यदि तृप्ति करने वाला हो सकता है तो घर से दूर यात्रार्थ जाने वालों को मार्ग के लिए भोजनादि की व्यवस्था करनी व्यर्थ है। घर मैं ब्राह्मण को बुलाकर भोजन करा दें तो यात्रा में गये हुए लोगों को वहीं पहुंच जाया करेगा। साथ क्यों व्यर्थ बोझा उठाया जाय ? गरुड़ पुराण में भी ऐसा कहा गया है—

मतानापि जन्तूनां, श्राद्धमाप्यायनंयदि।
निर्वाणस्य प्रदीपस्य, तैलं सवर्द्धयेच्छिखाम्॥ ६॥

(गरुड़ पुराण प्रेत खण्ड धर्म काण्ड, अध्याय १० श्लोक ६ श्री वेङ्कटेश्वर प्रेस बम्बई पृष्ठ १७७)

"अर्थात् मरे हुए मनुष्यों के लिए यदि श्राद्ध तृप्ति कर सकता है तो तेल बुझे दीपक की शिखा को बढ़ा देवें।"

ये प्रश्न हैं जिनको मैक्मूलर के शब्दों में **"नास्तिकों के प्रश्न"** कह दिया जाये, पर इनका उत्तर न मैक्समूलर के पास था न **"मृतक श्राद्ध"** के मनाने वाले पौराणिकों के पास है - यह बात तो बीच में आ गई पर मेरे इस लेख का प्रयोजन यह है कि मैक्समूलर ने उस शास्त्रार्थ पर निर्णय नहीं दिया, **"मृतक श्राद्ध"** पर केवल अपनी सम्मति लिखी, जिसमें दो बातें स्पष्ट हैं—(१) श्राद्ध-मृतकों की स्मृति (यादगार) के रूप में ही होता था। (२) यह प्रश्न ही नहीं था कि मृतकों की याद में दिया सामान उनको पहुंचता है या नहीं। तीसरी बात यह मैक्समूलर के लेख से निकलती है कि जब से यह दावा किया जाने लगा कि—मृतकों के नाम पर दिया हुआ भोजन वस्त्रादि मृतकों को पहुंच जाता है तब से अनेकानेक प्रश्न उठने लगे।

"अमर स्वामी पारिव्राज"

चतुर्थ शास्त्रार्थ--

स्थान : "मियानी" जिला सरगोधा-पंजाब

(वर्तमान पाकिस्तान)
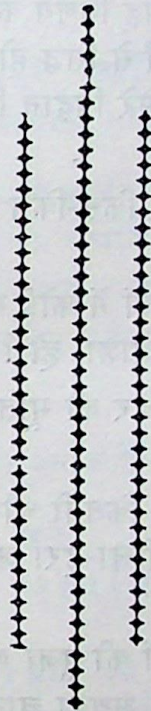
दिनाङ्क : ११, दिसम्बर सन् १९४० ई०

विषय : **क्या मूर्ति पूजा वेदानुकूल है ?**

प्रधान : **पण्डित श्री बुद्धदेव जी मीरपुरी**

शास्त्रार्थ कर्ता पौराणिकों की ओर से : **पौराणिक पण्डित श्रीकृष्ण शास्त्री**

शास्त्रार्थ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से : **श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी,**

नोट :—इस शास्त्रार्थ में पौराणिक पण्डित श्रीकृष्ण जी शास्त्री के सहायक पण्डित बाबा चमन लाल जी भजनोपदेशक थे, एवं श्री पण्डित अमर सिंह जी के साथ पण्डित मनसा राम जी वैदिक तोप थे।

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी –

ओ३म् शन्नो मित्रः शं वरुण, शनो भवत्वर्यमा । शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः, शन्नो विष्णुरूरूक्रमः ।। ओ३म् नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदष्यामि ऋतं वदिष्यामि ।। सत्यं वदिष्यामि, तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु अवतु मामवतुवक्तारम् ।।

धर्म के श्रद्धालु सज्जनों ! आज हम यह निर्णय करने के लिये इक्ट्ठे हुए हैं कि—परमेश्वर की मूर्ति बनाकर पूजना, वेदों, शास्त्रों और तर्कों से सिद्ध होता है वा नहीं ? मैं प्रारम्भ में कुछ प्रश्न इस विषय में रखता हूं और आशा करता हूं, कि मेरे विद्वान मित्र वेदों के प्रमाणों द्वारा मेरे प्रश्नों के उत्तर देने का कष्ट सहन करेंगे ।

१ प्रथम प्रश्न मेरा यह है कि वेद के किस-किस मन्त्र में परमेश्वर की मूर्ति बनाने की आज्ञा है ? बताइये ?

२ दूसरा प्रश्न यह है कि—चारों वेदों में कोई मन्त्र ऐसा बताइये अथवा दिखाइये ? जिसमें परमेश्वर की मूर्ति को बनाने और पूजने की आज्ञा हो ?

३ वेद मन्त्रों द्वारा बताइये कि—ईश्वर की मूर्ति-सोना-चांदी, पीतल, पत्थर, मिट्टी, लकड़ी आदि किस चीज की होनी चाहिये ?

४. ईश्वर की मूर्ति—कितनी लम्बी, कितनी चौड़ी एवं कितनी भारी बनाई जाये ? और उसकी आकृति कैसी हो ? उसका रंग लाल-पीला-हरा आदि कैसा हो ? ऐसा वेद के किन-किन मन्त्रों में बताया गया है ?

५. आजकल मन्दिरों में जिन मूर्तियों की पूजा की जाती है । उनमें से परमेश्वर की मूर्ति कौन सी है ? चार मुख –एक मुख दो भुजा अथवा चार भुजा या आठ भुजाओं वाली या रुण्ड-मुण्ड गोल-मटोल या अन्य कोई ? वेद मन्त्रों द्वारा परमेश्वर की मूर्ति की पहचान बताइये ? इनमें से कौन-सी वेदानुकूल एवं कौन-सी वेद विरुद्ध है ?

६. जितनी भी मूर्तियां यत्र-तत्र देखी जाती हैं, वह सब ही मनुष्यों तथा पशुओं आदि की हैं । राम-कृष्ण आदि मनुष्यों वृषभ, शूकर आदि पशुओं और मछली-कछुआ जलचरों की है । इसी प्रकार अन्य भी हैं । परमेश्वर की मूर्ति कोई भी नहीं है । अगर हैं तो बताइये कौन-सी हैं ?

अब मैं परमेश्वर अमूर्त्त अर्थात् निराकार हैं इस विषय के प्रमाण देता हूं, सुनिये, और खण्डन कर सकते हों तो करिये ?

१. सपर्यगाच्छूक्रमकायम्..........(यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ८,)

इस मन्त्र में परमेश्वर को, "अकायम्" अर्थात् शरीर रहित बतलाया गया है, जिसका शरीर ही नहीं उसकी मूर्ति कैसी ?

सर्वे निमेषा जज्ञिरे, विद्युतः पुरुषादधि ।
नैनमूर्ध्वं न तिर्य्यञ्चं न मध्ये परिजग्रभत् ।। २ ।। यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र २,

इस मन्त्र में बताया गया है कि—परमेश्वर को ऊपर, नीचे, टेढ़ा, तिरछा, मध्य में कहीं से भी नहीं पकड़ा जा सकता, इसका सीधा अर्थ यह कि—उसका कोई आकार नहीं है।

३. **हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे, भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।**
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ (यजुर्वेद अध्याय २५ मन्त्र १०,)

इस मन्त्र में परमेश्वर को हिरण्यगर्भ कहा है। और भूमि आदि सबका आधार बताया है। आपकी मूर्तियों को तो दूसरे आधारों की आवश्यकता पड़ती है। सर्वाधार की कोई मूर्ति नहीं है, अगर है तो बताइये।

४. **तदेजति तन्नैजति, तद्दूरे तद्वन्तिके।**
तदन्तरस्य सर्वस्य, तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥ (यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ५,)

इस मन्त्र में परमेश्वर को सब का चलाने वाला **"भ्रामयन् सर्व भूतानि"** गीता में कहा है, सब भूतों को चलाने वाला मन्त्र में उसको सबका चलाने वाला बताकर कहा है कि—**"तत् न एजति"** वह स्वयं नहीं चलता है। वह दूर से दूर है। और निकट से निकट है। वह सब जगत के भीतर है और सब के बाहर है, अर्थात् सर्वव्यापक है। सर्वव्यापक वही हो सकता है, जो निराकार (अमूर्त्त) हो उसकी मूर्ति नहीं।

गीता में इस मन्त्र से सर्वथा मिलता हुआ श्लोक है—

५. **बहिरन्तश्च भूतानां, अचरं चर मेव च।**
सूक्ष्मत्वादविज्ञेयम्, दूरस्थं चान्ति के च तत् ॥१५॥ (श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय १३ श्लोक १५,)

इस श्लोक का वही अर्थ है, जो अभी बोले गये वेद मन्त्र का है। अर्थात् :—वह परमेश्वर सबके बाहर भी है, और भीतर भी है, वह चर—चलने वाला भी है, और अचर, न चलने वाला भी, वह दूर भी है। तथा निकट भी है इतना इस श्लोक में विशेष कहा गया है कि परमेश्वर सूक्ष्म है, इस प्रकार बहुत से प्रमाण हैं, जिनसे सिद्ध है कि, ईश्वर निराकार है, अमूर्त्त है, न उसकी मूर्ति है, और न हो सकती है।

पण्डित श्रीकृष्ण जी शास्त्री—

सज्जनों ! श्री ठाकुर जी महाराज ने जो प्रश्न किये हैं, मैं उन सब के उत्तर देता हूं। आज आपको पता लगेगा कि, मूर्तिपूजा वेदों में भरी पड़ी है। श्री ठाकुर जी ने वेदों के प्रमाण माँगे हैं, मैं हर प्रश्न के उत्तर में वेदों के प्रमाण दूंगा, सुनिये—१. **रूपं-रूपं प्रति रूपो वभूव, तदस्य रूपं प्रति चक्षणाय।** इस मन्त्र में साफ कहा है, कि—परमात्मा के सैकड़ों रूप हैं, वह बहुत प्रकार के रूप वनाता है, उसकी बहुत प्रकार की मूर्तियाँ हैं। वेद से बता दिया कि उस परमात्मा की मूर्ति बनाओ अब मूर्तियों को पूजने की आज्ञा वेद मन्त्र द्वारा बताता हूं—२. **अर्चत प्रार्चत प्रिय मेधासो अर्चत ॥** इस मन्त्र में साफ कहा है कि उसकी मूर्ति को पूजो। ३—बाल्मीकीय रामायण में लिखा है कि, माता

कौशिल्या उस समय मूर्ति पूजा कर रही थी, जिस समय भगवान राम उनसे वन जाने की आज्ञा लेने को गये थे। मूर्ति काहे की बनानी चाहिये और कितनी बड़ी होनी चाहिये ? इस पर यजुर्वेद की माध्यन्दिनी शाखा के शतपथ का प्रमाण सुनिये शतपथ के बिना तो यजुर्वेद का अर्थ ही नहीं हो सकता है, उसका प्रमाण कान खोलकर सुनिये। शतपथ में महावीर की मूर्ति मिट्टी की बनानी लिखी है। और उसका मुख तीन अंगुल का बनाने की आज्ञा है। उसको पढ़िये और कुछ शर्म करिये।

नोट :—"शर्म करिये" इस वाक्य पर सनातन धर्म के प्रधान जी ने पण्डित जी को ऐसा कहने से रोका।

"अकायम्" का अर्थ यह है कि—भगवान का शरीर हमारे शरीर जैसा नहीं होता है। जो शरीर कर्म के फल से प्राप्त होता है, उसका नाम काया होता है। परमेश्वर का शरीर कर्मफल के बिना होता है। इसलिए उसको **"अकायम्"** कहा है। भगवान ने स्वयं गीता में कहा है कि— **"जन्म-कर्म में च मे दिव्यम्"** मेरे जन्म और कर्म दिव्य है। मेरा शरीर कर्म-फल से नहीं होता है। ठाकुर जी महाराज ! वेद मन्त्र में **"अकायम्"** के साथ **"अव्रण"** भी कहा है। अर्थात् भगवान के शरीर में छिद्र और जख्म नहीं हो सकता ऐसा उसका शरीर होता है।

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

श्री शास्त्री जी ने मेरे कुछ प्रश्नों का उत्तर देने का यत्न किया है, पर पूरा उत्तर नहीं हुआ, और न कभी होगा।

(१) **"रूपं-रूपं** ····"ऋग्वेद ६।४७।१८, इस मन्त्र में आपने ईश्वर की मूर्ति बनाने की, आज्ञा बताई है। इस मन्त्र में एक भी शब्द ऐसा नहीं है, जिसका यह अर्थ हो कि, "परमेश्वर की मूर्ति बनाओ" यदि ऐसे शब्द हैं, तो अब की बारी में अवश्य बताना। आपने यह जाना कि—इन्द्र बहुत रूपों में आता है। तो यहां इन्द्र के दो अर्थ हैं। एक जीवात्मा दूसरा सूर्य। जीव-पुरुष, स्त्री, पशु, पक्षी, कृमि, कीट, पतंग आदि के शरीरों में उसी के नाम ने पुकारा जाता है। यथा - **"त्वं स्त्री त्वं पुमान्"** (अथर्ववेद १०-८-२७) अर्थात् - तू स्त्री बनता है, तू पुरुष बनता है आदि-आदि। उपनिषद् में भी देखिये—

नैव स्त्री न पुमानेषः न चैवायं नपुंसकः। यद्यत शरीरमाधत्ते, तेन-तेन स युज्यते ॥१०॥

(श्वेताश्वेतर उपनिषद् अध्याय ५ वाक्य १०,)

न यह जीव स्त्री है, न पुरुष है और न यह नपुंसक है। जिस-जिस शरीर को यह धारण करता है, उस-उस से युक्त होता है। जीव स्त्री के शरीर में स्त्री, पुरुष के शरीर में पुरुष, और नपुंसक के शरीर में नपुंसक, कहा जाता है।

गीता में कहा है कि—

विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि। शुनि चैव श्वपाके च, पण्डिताः समदर्शिनः ॥१८॥

(गींता अध्याय ५ श्लोक १८,)

ब्राह्मण, गौ, हाथी, कुत्ता, चाण्डाल आदि में पण्डित लोग समान (बराबर) आत्मा देखते हैं। (बाह्य) रूप भिन्न-भिन्न बहुत होते हैं। सूर्य भी प्रातः, मध्यान्ह और सायंकाल को भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई देता है।

पौराणिक साहित्य में कहीं भी इन्द्र को परमात्मा नहीं माना गया है। पुराणों में तो ब्रह्मा, विष्णु, शिव और देवी इन्ही चार को जगतकर्त्ता जगदीश्वर कहा गया है। इन्द्र जो आपके यहाँ कहीं और कभी परमेश्वर नहीं माना गया, वह यदि अनेक रूप बनाकर आता है, तो आता रहे। इससे परमेश्वर की मूर्ति बनाना और उसको पूजना सिद्ध नहीं होता है।

(२) "**अर्चत प्रार्चत** ......" ऋग्वेद ८। ६९। ८, इस मन्त्र में भी मूर्ति शब्द तक नहीं है। परमेश्वर को स्तुति, प्रार्थना और उपासना होनी ही चाहिये वही इस मन्त्र में कहा गया। मूर्ति पूजा करना किन शब्दों का अर्थ है ? यह आप नहीं बता सके, न बता सकेंगे।

(३) श्री राम जी के वन गमन के समय माता कौशल्या मूर्ति पूजा कर रही थी, यह आपने खूब कही, सारी बालमीकीय रामायण में, एक भी श्लोक ऐसा नहीं है, जिसमें यह बात कही हो, जो आपने कह डाली। सुनिये माता कौशल्या उस समय क्या कर रही थीं, वहां लिखा है—

सा क्षौम वसना हृष्टा, नित्यं वृत्त परायणा। अग्निं जुहोतिस्मतदा, मंत्रवत् कृत मंगला ॥१५॥
(वाल्मिकीय रामायण अयोध्या कांड सर्ग २० श्लोक १५,)

"**अग्निं जुहोतिस्म**" अर्थात् अग्नि में आहुति डाल रही थी। अर्थात् महाराज जी ! वह मूर्ति पूजा नहीं बल्कि यज्ञ (हवन) कर रही थी। "**ददर्श मातरं तत्र हावयन्ती हुताशनम् ॥** अर्थात् माता कौशल्या को श्री राम जी ने "**हावयन्ती हुताशनम्**" हवन करती हुई को देखा, मूर्ति पूजा का वहां पर संकेत भी नहीं है।

(४) वेद के नाम से आपने ब्राह्मण ग्रन्थ का प्रमाण दिया, और उसमें से निकाला क्या—? "महावीर" अजी ! यह तो बताइये कौन सा महावीर ? एक तो महावीर जैनियों के एक तीर्थङ्कर का नाम है, और एक महावीर, हनुमान जी का नाम है। जिनको आप पूंछ वाला बन्दर मानते हैं। क्या उन्हीं की मूर्ति आप ब्राह्मण ग्रन्थ के प्रमाण से सिद्ध करना चाहते हैं ? आपने मुख तो महावीर का तीन अंगुल का बताया, पर यह नहीं बताया कि, सारा शरीर कितना लम्बा हो, और यह भी न बताया कि, पूंछ कितनी लम्बी बनायी जावे ? क्या बिना पूंछ का महावीर बनायेंगे ? यदि ऐसा है तो सनातन धर्मी लोग आपका बहिष्कार कर देंगे। एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि, मैं पूछ रहा हूं, परमेश्वर की मूर्ति ? और आप बता रहे हैं, महावीर की मूर्ति ! आप क्या महाबीर को ही परमेश्वर मानने लगे हैं ? या उनकी पूंछ को घिसा कर परमात्मा बनाना चाहते हैं। पण्डित जी महाराज ! कुछ सोच समझ कर प्रमाण दीजिये। शतपथ ब्राह्मण में महावीर एक यज्ञपात्र का नाम है। और वह मिट्टी से बनाया जाता है, और अग्नि में तपाया जाता है।

(५) "**अकायम्**" का अर्थ आपने किया—"कर्म फल रहित शरीर" पर आपके यहाँ जितने भी अवतार माने जाते हैं। उनमें से एक का भी शरीर बिना कर्म फल के नहीं है। आप किसी

अवतार का नाम लीजिये मैं सिद्ध करूँगा उसका जन्म भी कर्म फल भोगने के लिए ही हुआ था !

(६) **"अव्रण"** बिना छिद्र और बिना जख्म भी किसी का शरीर नहीं हुआ, श्रीकृष्ण जी की तो मृत्यु ही एक शिकारी के बाण से उनके पांव में जख्म होने से हुई थी। अब नये प्रश्न और सुनिये—पांच प्रश्न में पहले कर चुका हूं। जिनका कोई उत्तर आपसे नहीं बना।

छटा प्रश्न—शिव, विष्णु, राम, कृष्ण आदि कोई भी आपके ग्रन्थों से अपने रहन-सहन, चाल ढाल, व्यवहार से परमेश्वर सिद्ध नहीं होते हैं। फिर इनके नाम से बनी मूर्तियों को, परमेश्वर की मूर्ति क्यों बताते हो ? क्या इनको परमेश्वर सिद्ध करने की शक्ति आप में है ? मेरा दावा है कि आप इनको कदापि परमेश्वर सिद्ध नहीं कर सकते हैं। इस लिए इनकी मूर्ति परमेश्वर की मूर्ति नहीं है।

सातवां प्रश्न—चतुर्भुजी, अष्टभुजी, एक मुखी, चतुर्मुखी, पंचमुखी, सूंड़ वाली, या गोल-मटोल, रुण्ड-मुण्ड, इनमें से कौन सी मूर्ति परमेश्वर की है। यदि सारी ही परमेश्वर की हैं तो इनमें इतना भेद क्यों है ? अब ये सात प्रश्न हुए, अब नये प्रमाण भी लीजिये।

(१) **न तस्य प्रतिमास्ति यस्य नाम महद्यशः** (यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र ३,)

इस मन्त्र में कहा गया है कि, उस परमेश्वर की कोई मूर्ति नहीं है। अर्थात् प्रतिमा नहीं हैं। प्रतिमा=प्रतिकृति मूर्ति=मूर्तिमान की होती है, अमूर्त्त की नहीं। मेरे सब प्रश्न एवं सब प्रमाण वैसे के वैसे ही विद्यमान हैं, न तो आपसे अभी तक कोई उत्तर बन पड़ा और न आगे बन सकेगा।

पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री—

ठाकुर साहब ! माता कौशल्या हवन नहीं कर रही थी, मूर्ति पूजा कर रही थी। उनके पास हमारी तरह मूर्ति पूजा की सामग्री-मोदक-हवि-धान की खीले और खीर रखी हुई थी, और रामायण में स्पष्ट लिखा है—**"देव कार्य निमित्तं च"** देव कार्य के लिए यहां ग्यारह पतियों की लीला नहीं चल सकती है, जो आपके गुरु दयानन्द ने लिखी है।

नोट :—इस वाक्य पर तभी आर्य समाज की ओर के प्रधान जी ने सनातन धर्म की ओर के प्रधान जी को कहा—श्री प्रधान जी ! अपने पण्डित जी को विषयान्तर में जाने से रोकिये। सनातन धर्म के प्रधान जी ने पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री को कहा कि -**"वास्तव में ग्यारह पतियों वाली बात"** को कहना—विषयान्तर में जाना है। आपको ऐसा नहीं करना चाहिये।

इस पर पंडित श्री कृष्ण जी शास्त्री ने सनातन धर्म की ओर के प्रधान जी को कहा कि—आप मुझको नहीं रोक सकते। श्री प्रधान जी ने अपने पक्ष के दो प्रतिष्ठित सज्जनों को बुला कर कान में कुछ बात चीत की, और कार्यवाही आगे चल पड़ी। पण्डित जी बोले—

श्री ठाकुर साहब ! आप सोच समझकर प्रश्न करिये। मैं आपके सब प्रश्नों के उत्तर युक्ति और प्रमाणपूर्वक देता हूं और आप······। (इस वाक्य पर बीच में ही जनता में बड़े जोर की हँसी से सारा वातावरण गूंज गया)।

नोट –श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी ने लोगों को हँसने से रोका। आगे फिर पण्डित जी बोले—महावीर बनाने की विधि जब मैंने बताई तो श्री ठाकुर साहब इधर-उधर भागते हैं। और महावीर को यज्ञ पात्र कह कर ही टालते हैं। भगवान की मूर्ति यज्ञपात्र तो होती ही है। उन्हीं के लिये तो यज्ञ किया जाता है। भगवान ! अगर यज्ञ पात्र नहीं है तो क्या आप हैं ? महावीर को अग्नि में तपाना तो आपने भी माना, यह उनकी पूजा ही तो है।

आपने कर्म-फल रहित शरीर पूछा—सो सुनिये ! भगवान राम का शरीर कर्म फल रहित था, सब अवतारों के शरीर कर्मफल रहित ही होते है। उन्हीं के शरीर का नाम **"अकायम्"** हैं। भगवान श्री कृष्ण जी के पैर में बाण व्याध ने तब मारा था, जब वह शरीर त्याग चुके थे। जब शरीर त्याग दिया तो वह भगवान का शरीर रहा ही नहीं। उसमें चाहे जितने जख्म आते रहें। जब तक वह शरीर भगवान का रहा, तब तक उसमें एक भी जख्म कभी नहीं हुआ। पीछे उसमें व्रण हुवा तो क्या हुआ ? **"न तस्य प्रतिमास्ति"** इसमें प्रतिमा का अर्थ तोलने और नापने का साधन है। मूर्ति नहीं, इसलिए इसमें ईश्वर की मूर्ति का निषेध नहीं है बल्कि तोलने-मापने के साधन का है। भिन्न-भिन्न रूप की जो मूर्तियां हैं। वह सब ही परमात्मा की मूर्तियां है। हम सभी मूर्तियों को भगवान की मूर्तियां मानते हैं। रूपों का भेद अवस्था भेद से होता है। बाल्यकाल, युवावस्था तथा वृद्धावस्था में किसी का भी एक जैसा रूप नहीं रहता। आयु के अनुसार भी रूप भिन्न-भिन्न होते हैं। और कार्य के अनुसार भी भिन्न-भिन्न रूप और भेद होते हैं। मनुष्य, पुलिस या मिल्टरी में ड्यूटी पर वर्दी पहनता है। पर घर में सादे कपड़े बदल लेता है। विवाह-बारात आदि में और ही प्रकार के कपड़े पहनता है। **"वर"** तो सर्वथा भिन्न ही प्रकार का रूप धारण करता है। मैंने आपके सब प्रश्नों के उत्तर दे दिये। **"रूपं रूपं..."** मन्त्र से परमेश्वर की मूर्ति बनाना सिद्ध कर दिया। और **"अर्चत प्रार्चत"**……" मन्त्र से मूर्ति की पूजा सिद्ध कर दी।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी –

श्री पण्डित जी ने वेद तो छोड़ दिया, अब आपके शास्त्रार्थ का निर्भर रामायण पर है "डूबते को तिनके का सहारा" निश्चय समझिये यह सहारा आपको बचा नहीं सकेगा। लड्डु, खीर, खील, चावल, सब हवन का ही सामान है, वहां देव कार्य लिखा है, तो आपको इतना भी पता नहीं है कि अग्नि होत्र का दूसरा नाम **"देव यज्ञ"** है। कम से कम मनुस्मृति ही पढ़ ली होती, पण्डित जी महाराज ! मनुस्मृति में कहा गया है—**ऋषि यज्ञं देव यज्ञ पितृयज्ञं च सर्वदा। न यज्ञं-भूत यज्ञं च यथा शक्ति न हापयेत् ॥** (मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक २१,) भगवान मनु जी ने जो पांच महायज्ञ कहे हैं, उनमें दूसरा देव यज्ञ है, और श्री मनु जी ने ही देव यज्ञ का अर्थ मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक ७० में बताया है, **"होमोदेवः"** होम—अर्थात् हवन का नाम **"देव यज्ञ"** है, मैंने **"अग्निं जुहोतिस्म"** और **"हावयन्ती हुताशनम्"** वाक्य वहां लिखे बताये, आप तीन काल में भी सिद्ध नहीं कर सकेंगे, कि कौशल्या माता मूर्ति पूजा कर रही थी शास्त्रार्थ मूर्ति पूजा पर हो रहा है। पर आपको याद आ गयी ग्यारह पतियों की, असल में यह आपका दोष नहीं, यह कृपा तो भंग भवानी की है, जो आप प्रयोग करके आये हैं। धन्य हो महाराज ! **"बोलो भंग भवानी की जय"** ग्यारह पतियों से आपका क्या सम्बन्ध है ? आपके यहां द्रोपदी के पांच, जटिला के सात-वार्क्षी के दस और दिव्या देवी के इक्कीस पति लिखे हैं। पर पण्डित जी महाराज यह विषयान्तर हैं। आगे से ऐसी भूल मत करना। नहीं तो मुझको छेड़ कर पछताना पड़ेगा।

मैंने "महावीर" को यज्ञ पात्र कहा तो आपने पात्र का और अर्थ कर लिया, अब मैं यज्ञ में आहुति डालने का बर्तन कहता हूं। आप ग्रन्थों को पढ़ते तो हैं नहीं, सुनी सुनाई बातें कहते हैं। अब आप सुनिये ध्यान से कि महावीर क्या होता है ? शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि –

प्रश्न—तदाहुः । यद्वानस्पत्यैर्देवेभ्यो जुहत्यथ कस्मोदेतं ॥
मृन्मयेनैव जुहोतीति···तन्मृदश्चा पांऋ महावीराः कृता भवन्ति ॥ (शतपथ ब्राह्मण १४।२।२।५३।)

उत्तर—स यद्वानस्पत्यः स्यात् प्रदह्येत । यद्धिरण्यमयः स्यात् प्रलीयेत् । यल्लोह मयः स्यात् प्रसिच्येत । यदस्मयः स्यात् प्रदहेत् । परीशासावथैषऽएवं तस्माऽअतिष्ठत तस्मादेतं मृन्मयेनैव जुहोति ॥
(शतपथ ब्राह्मण, १४।२।२।५४।)

भावार्थ :—प्रश्न हुआ कि, जब लकड़ी के स्रुवा आदि से देवयज्ञ में आहुति दी जाती है तो यहां मिट्टी के पात्र "**महावीर**" से क्यों आहुति दी जाती है ? मिट्टी से महावीर बनाये जाते हैं। यह उत्तर दिया गया है कि, (विशेष बड़ा यज्ञ होने से) यदि लकड़ी का बर्तन हो तो जल जाये, यदि सोने का हो तो पिंघल जाये, यदि फौलाद का हो तो हाथ को जला देवे। यदि लोहे का हो तो चू जावे, इस लिये मिट्टी के बर्तन से ही आहुति दी जाती है। आग से तपाने को आप पूजन कहते हैं। धन्य हो ! पर यह आपको पता नहीं कि महावीर को किस चीज से तपाया जाता है। सुनिये ! और अच्छी तरह कानों को खोलकर सुनिये, मैं बिना प्रमाण के कोई बात नहीं कहता हूं।

"अश्वस्य त्वा वृष्णः शक्न धूपयामीति ।" (शतपथ ब्राह्मण, १४।१।२। २०,)
"अश्व शकृता धूपयतिअश्वस्य इति प्रतिमन्त्रम्" (कात्यायन श्रोत सूत्र २६।१।२३)

घोड़े की लीद से महावीरों को तपाया जाता है। और देखिये—**"अश्वस्य त्वा वृष्णः शक्राधूपयामि"** (यजुर्वेद अध्याय ३७ मन्त्र ९,) इस मन्त्र के भाष्य में आपके माननीय आचार्य महीधर जी भी यही कहते हैं कि—"महावीरों को घोड़े की लीद से आग में तपावें" वाह जी वाह ! बहुत अच्छी पूजा हुई !! पूजा के लिये पदार्थ भी बहुत बढ़िया निकाला। घोड़े की लीद (विष्ठा) यह धूप तो बहुत सस्ती है। क्यों पण्डित जी ? इस पवित्र धूप से अन्य देवों की, पूजा की जाया करेगी या अकेले महावीर में ही यह विशेषता है कि इस सर्वोत्तम प्राकृतिक धूप से उन्हें पूजा जावे ? यदि दूसरे देवों को भी इस धूप से पूजा जावे तो अच्छा नहीं क्या ? उनके लिए इसमें क्या बुराई है ? आप कहते हैं कि—श्री कृष्ण जी ने जब शरीर त्याग दिया था, तब उनके पैर में तीर से जख्म लगा था। यह सर्वथा झूठ है। दिखाइये ऐसा कहां लिखा है ? श्री शास्त्री जी ! इन सीधे-सादे सनातन धर्मियों पर दया करके कुछ पढ़ा करिये। सुनिये मैं आपको बताता हूं, महाभारत में लिखा है—आपके पास महाभारत की पुस्तक रक्खी है उठाओ और खोलकर देखो—

जराथतं देशमुपाजगाम लुब्धस्तवानीं मृगलिप्सुरूग्रः ।
सकेशवं योगयुक्तं शयानं, मृगासक्तो लुब्धकः सायकेन ॥२२॥

जराविध्यत पादतले त्वरावां, स्तं जिघ क्षुर्जगाम ।
अथापश्यत पुरुषं योगयुक्तं, पीताम्बरं लुब्धकोऽनेकबाहुम् ॥२३॥

मत्वात्मान तदपराद्धं स तस्य, पादौ जरा जगृहे शंकितात्मा।
आश्वासयस्तं महात्मा तदानीं, गच्छन्नूर्ध्वं रोदसी व्याप्य लक्ष्म्या ॥२४॥
(महाभारत मौसल पर्व अध्याय ४ श्लोक २२ से २४,)

भावार्थ—उसी समय जरा नामक एक भंयकर व्याध मृगों को मार ले जाने की इच्छा से उस स्थान पर आया। उस समय श्री कृष्ण जी योग युक्त होकर सो रहे थे। मृगों में आसक्त हुए उस व्याध ने श्री कृष्ण को भी मृग ही समझा और बड़ी उतावली के साथ बाण मार कर उनके पैर के तलवे में घाव कर दिया। फिर उस मृग को पकड़ने के लिए जब वह निकट आया "**तब योग में स्थित**"—"**पीताम्बर धारी भगवान श्री कृष्ण पर उसकी दृष्टि पड़ी**" तब तो जरा (व्याध) अपने को अपराधी मानकर मन ही मन बहुत डर गया। उसने भगवान श्री कृष्ण के दोनों पैर पकड़ लिये। तब महात्मा श्री कृष्ण ने उसको आश्वासन दिया और अपनी कान्ति से पृथ्वी एवं आकाश को व्याप्त करते हुए वे उर्ध्व लोक में अपने परम धाम को चले गये ॥२४॥

ग्रन्थों को आप हाथ नहीं लगाते हैं, जो मुंह में आता है उत्तर दे देते हैं। कहिये ? जीवित श्री कृष्ण जी के पाँव में जख्म लगा कि नही, यदि लगा तो उनका शरीर "**अव्रण**" कैसे हुआ ? "**न तस्य प्रतिमास्ति** " यह वेद मन्त्र है कि नहीं ? और इसमें ईश्वर की प्रतिमा मूर्ति का निषेध है कि नहीं ? इस प्रमाण का खण्डन आप कभी भी नहीं कर सकेंगे, भिन्न-भिन्न रूपों का उत्तर आपने खूब दिया। यह रूप भेद परमेश्वर की आयु के भेद से होते हैं। छोटी आयु में एक मुख फिर अनेक मुख, छोटी आयु में दो भुजा, और बड़ी आयु में चार, आदि-आदि। ये रुण्ड-मुण्ड, गोल-मटोल आदि किस अवस्था के हैं ? ये गर्भावस्था के होंगे, धन्य हो ! सनातन धर्मियों को भी, आप जैसा वकील कभी कोई नहीं मिला होगा, और न मिलेगा। आपने कहा है कि सब अवतारों के शरीर कर्म फल के बिना हुए हैं। और होते हैं। पर सुनिये पुराण क्या कहता है—

ब्रह्मायेन कुलाल वन्नियमितो, ब्रह्माण्ड भाण्डोदरे। विष्णुर्येन दशावतार गहने, क्षिप्तो महासंकटे॥
रूद्रो येन कपाल पाणि पुटके भिक्षाटनं कारितः। सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे॥
(गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय ११३ श्लोक १५ पृष्ठ ७३ वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई,)

बृह्मा, बिष्णु और शिव भी कर्म के वश में रहते हैं। विष्णु कर्म के वश में होकर दस अवतार धारण करके महासंकट में पड़े, आपने श्री राम का नाम लिया, "मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त" श्री राम जी कहते हैं कि, मेरे समान पाप कर्म करने वाला भूमण्डल में कोई नहीं है। मैं उन पाप कर्मों का फल भोग रहा हूं। मेरे पांच प्रश्न पहले और सात प्रश्न अब के वैसे के वैसे ही खड़े हैं। उनका उत्तर आपने न तो अब तक दिया, और न ही आपसे आगे दिया जा सकेगा। मूर्ति पूजा का विधान करने वाला कोई वेद मन्त्र न आप दिखा सके एवं न दिखा सकेंगे। नये प्रश्न और सुनिये—

यदि आप कहें कि, भक्तों की भावना से जैसा-जैसा रूप भक्तों के ध्यान में आया, भक्तों ने वैसी-वैसी मूर्तियां बना ली, मैं पूछता हूं कि भक्तों के ध्यान से मूर्तियां बनी, तो यह क्यों कहते हो कि मूर्ति से ध्यान होता है ? ध्यान से मूर्ति बनी तो मूर्ति से ध्यान कैसा ? यह अन्योन्याश्रय दोष है। इसका निवारण आप नहीं कर सकेंगे, तो मूर्ति पूजा कैसे सिद्ध हो जावेगी ? दूसरे आप यह बताइये कि मूर्ति

निराकार ब्रह्म की बनाई जाती है या साकार की ? यदि निराकार की बनाई जाती है, तो कैसे ? अमूर्त की मूर्ति कैसी ? यदि कहो कि साकार की बनाई जाती है तो ईश्वर की साकारता सिद्ध करिये ।

पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री --

माता कौशल्या मूर्ति पूजा कर रही थी यह साफ लिखा है । देखिये **"देव कार्य निमित्त च"** **देव** कार्य के लिए ! कहिये देव कार्य मूर्ति पूजा नहीं तो और क्या है ? महावीर की मूर्ति को घोड़े की लीद से तपाना बताया, यह आप झूठ बोलते हैं जब वह मूर्ति बन जाती है तब उसको तपाते हैं ।

तब तक उसका नाम महावीर नहीं होता है जब तक उसकी देवसंज्ञा नही हुई और महावीर नाम भी नहीं हुआ जब तक किसी से तपाया जाये। इसमें हमारे देव का अपमान क्या हुआ ? जब महावीर नाम हो गया, तब वही हमारा देव हो गया । उसके पीछे धूप, दीप, नैवेद्य आदि से पूजा होगी । उसके बाद लीद आदि से तपाना कौन कहता है ? दयानन्द की मूर्ति पर हैदराबाद में तड़ातड़ जूता पड़ा और...... ..

नोट—इस वाक्य पर शास्त्रार्थ के बीच में ही श्रोताओं में से "शर्म करो-शर्म करो" एवं मारो मारो की आवाजें आई, चारों तरफ कोलाहल पैदा हो गया । श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने खड़े होकर सबको बड़ी मुश्किल से शान्त करके बैठाया, और श्रोताओं को कहा गया कि आप नहीं जानते, ये पण्डित जी महाराज तो चाहते ही यही है कि किसी तरह पीछा छूटे। इसी लिए गड़बड़ बातें करते हैं । मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि आप सहयोग देंगे तो यह शास्त्रार्थ किसी निश्चय पर पहुंच सकेगा। मैं भी अब ऐसे उत्तर दूंगा कि जो पण्डित जी को छठी का दूध याद आ जाये । श्री सनातन धर्म के पण्डित जी को सनातन धर्म के प्रधान जी ने कहा कि (आपको ऐसे अपशब्द नहीं बोलने चाहियें) यह हमारे लिए लज्जा की बात हैं तब शास्त्री जी ने बोलना आरम्भ किया कि

"ब्रह्मायेन कुलावन्नियमितो..." (गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय ११३ श्लोक १५,) यह श्लोक का टुकड़ा किसी प्रामाणिक ग्रन्थ का नहीं है । यह आपने भर्तृहरि शतक का श्लोक बोल दिया ब्रह्मा विष्णु और शिव कर्मों का फल भोगते हैं ऐसा नहीं बल्कि इसमें तो यह कहा कि, वह तीनों सृष्टि रचना आदि करके अपने-अपने कर्मों को करते हैं इसमें फल की बात कहां ? आप व्यर्थ बातें करते तथा थोथे चैलेन्ज करते हैं । भगवान राम ने यह कहीं भी नहीं कहा, कि मैंने पाप कर्म किये थे उनका फल भोग रहा हूं । यह भी आप झूठ बोलते हो । भगवान ने तो यह बताया कि किसी की स्त्री खो जाये तो उसको ऐसा कहना तथा विलाप करना चाहिए । वे तो आदर्श बताने आये थे जैसे नाटक करने वाला नाटक में कहता और करता है । नाटककार को कोई दुःख नहीं होता, पर प्रदर्शन ऐसा ही करता है जैसे उसको महान दुःख हो रहा हो । वैसा ही भगवान ने बताया। उनमें पाप और दुःख कुछ भी नहीं था, **"रूपं-रूपं"** इस मन्त्र पर पण्डित सातवलेकर जी का अर्थ देखो, वेदामृत का प्रथम संस्करण जो आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने छपाया है जिसके मन्त्री महाशय कृष्ण जी प्रताप अखबार के मालिक हैं, पण्डित सातवलेकर जैसे विद्वानों का अर्थ नहीं मानोगे तो किसका अर्थ मानोगे ?

आप ठाकुर क्यों हैं ? आप तो वेदवेत्ता हैं। ब्राह्मण क्यों नही बने ? आर्य समाज की गुण-कर्म स्वभाव वाली वर्ण व्यवस्था का कहीं दिवाला तो नहीं निकल गया ? अगर ब्राह्मण बन गये हो तो दयानन्द जी की बात मानों, मेरे जैसे ब्राह्मण को अपना बाप बनाओ, मुझसे अच्छा विद्वान ब्राह्मण पिता बनने को और कौन मिलेगा ?

नोट—इस पर जनता में फिर पूर्व की भांति गड़बड़ हुई, परन्तु उस गड़बड़ी को जैसे-तैसे करके बड़ी मुश्किल से दबाया जा सका।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सज्जनों ! पण्डित श्री कृष्ण शास्त्री शास्त्रार्थ से पीछा छुड़ा कर इधर-उधर भागते हैं। परन्तु उनको यह नहीं पता कि आज पाला किससे पड़ा हुआ है। तो भी मैं गालियों का उत्तर गालियों में नहीं दूंगा। गालियों का शास्त्रार्थ तो पण्डित जी किसी भटियारिन से करें। जनता में हंसी……… मैं ठाकुर क्यों हूं ? ब्राह्मण क्यों नहीं बना ? यह यद्यपि विषयान्तर है, तथापि इसका उत्तर देता हूं। मुझको आर्य समाज ब्राह्मण मानता है। और ब्राह्मण वंश में पैदा हुए अनेकों युवक मेरे शिष्य हैं। मुझको गुरू मानते एवं मेरे पैर छूते हैं। ठाकुर भी कोई, वर्ण बोधक शब्द नहीं है, विश्व कवि श्री रविन्द्र जी ब्राह्मण कहलाने वाले वंश में उत्पन्न हुए, रवीन्द्र नाथ ठाकुर कहे जाते हैं। उनके स्वर्गीय पिताजी महर्षि देवेन्द्र नाथ जी "ठाकुर" कहलाते थे। भारत भर में विख्यात रागी, पण्डित ओंकार नाथ जी "ठाकुर" कहे जाते हैं। आपके पूर्वज सैकड़ों वर्षों से पीतल आदि के नकली ठाकुरों के चरण धो-धोकर उनका चरणामृत पीते आये हैं। इसलिए मैं भी अपने को कभी-कभी "ठाकुर" कहलवा लेता हूं क्यों कि जब मैं पूज्य हूं तो पुजारी क्यों बनूं ?

नोट—इस उत्तर पर श्री सनातन धर्म सभा की ओर के प्रधान एवं सारी जनता में बड़े जोर की हंसी हुई, तथा पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री का चेहरा एक दम फीका पड़ गया। सबने अपने भावों से प्रकट किया कि "**उत्तर बहुत बढ़िया मिला**" रही यह बात की मैं पण्डित श्री कृष्ण शास्त्री को अपना बाप मानूं इसका उत्तर भी दूंगा, परन्तु इस बार नहीं अगली बारी में (बीच में ही सनातन धर्म के प्रधान खड़े हो गये और कहने लगे माफ कर दीजिए। फिर सभी लोगों ने भी कहा कि ठाकुर साहब माफ कर दीजिए।)

श्री ठाकुर साहब—

ठीक है, आप लोग कहते हैं तो मैं अब शास्त्रार्थ आरम्भ करता हूं। पण्डित जी ने कहा है कि कौशल्या जी मूर्ति पूजा कर रही थी, प्रमाण क्या हैं ? कहते हैं कि वहां लिखा है, "**देव कार्य निमित्तं च**" वाह वा ! महाराज जी खूब समझे, श्री मान पण्डित जो किसी सनातन धर्मी विद्वान से ही पूछ लेते, अग्नि होत्र का नाम देव यज्ञ ही है। "देव यज्ञ" अग्नि होत्र की सामग्री कौशल्या जी के पास रक्खी थी। और श्री राम जी ने उनको देखा "**हावयन्ति हुताशनम्**" अग्नि में आहुति दे रही थी। और "**अग्निं जुहोतिस्म तदा**" ये वाक्य हैं। वहां पर मूर्ति पूजा आपने कहां से निकाल ली ? आप कहते हैं कि जब लीद से तपाते हैं तब तक उसका नाम महावीर नाम नहीं होता है। जब महावीर नाम हो

जाता है तब देव होता है। फिर उसकी पूजा अन्य वस्तुओं से होती है। आश्चर्य है कि आपने इस विषय में पढ़ा कुछ नहीं है और सुनी सुनाई बातें लेकर शास्त्रार्थ करने को आ गये। कुछ पढ़ लिया होता तो यह ऊट-पटांग न हांकते। परन्तु आपको तो भंग भवानी ही घोटने से फुरसत नहीं मिलती सुनिये वहां तो पाठ यह हैं—**"त्रीन महावीरान् अश्वस्य शक्ना धूपयेत्"** यहां पर **"त्रीन महावीरान्?** तीन महावीरों को अब आप कान खोलकर सुन लीजिये, फिर न कहना कि उस समय तक उसका नाम महावीर नहीं होता हैं। आप कहते हैं कि श्री राम जी ने कभी नहीं कहा कि-मैंने पाप कर्म किये हैं श्री शास्त्री जी आप बिना प्रसंगों को पढ़े कैसे शास्त्रार्थ करने आ गये ? और किस तरह जो मुंह में आता है बोल देते हैं ? मुझको आश्चर्य है। सुनिये श्री राम जी का वचन यह है—**न मद्विधो दुष्कृत कर्मकारी, मन्ये द्वितीयोऽस्ति वसुन्धरायाम्!** (बालमीकीय रामायण अरण्यकांड सर्ग ६३, श्लोक ३, अर्थात् मैं यह मानता हूं कि-मेरे बराबर पाप कर्म करने वाला इस पृथ्वी पर दूसरा कोई नहीं हैं। आगे और सुनिये —

"पूर्वं मयानूनमभीप्सितानि, पापानि कर्माण्य सत्कृत् कृतानि।
तत्रायमद्या पतितो वियाको, दुःखेन दुःखं यदहं विशामि ।।४।।

पूर्व जन्म में मैंने निश्चय ही पाप कर्म किये हैं। उनका विपाक (कर्म-फल) मैं अब भोग रहा हूं। जो एक दुःख से दूसरे दुःख में प्रविष्ठ होता हूं।

"ब्रह्मायेन कुलालवन्नियामितो........" इस श्लोक का यह अर्थ कदापि नहीं हैं, कि-ब्रह्मा आदि सृष्टि रचना आदि कर्मों को करते हैं। इसमें बिल्कुल स्पष्ट कहा गया है - **विष्णुर्येन दशावतार गहने क्षिप्तो महासंकटे ? तस्मै नमःकर्मणे।** अर्थात् विष्णु जिसके वश में होकर दश अवतार ग्रहण करके महासंकट में पड़ा उस कर्म को नमस्कार है। आपने इस श्लोक को भृर्तहरि शतक का बता दिया। भाईयों ये महाराज जी भी क्या करें इन्होंने पढ़ा ही भृर्तहरि शतक है, पुराण देखे ही नहीं। श्रीमान् जी ! यह श्लोक गरुड़ पुराण पूर्व खंड आचार काण्ड अध्याय ११ का पन्द्रहवां श्लोक है। जिसको धनी लोगों के मरने पर आपने बहुत बार बांचा होगा। और उनके घर वालों से बहुत सा धन ऐंठा होगा पर वह भी आपने पूरा नहीं पढ़ा, आपको जब केवल प्रेत खण्ड ही पढ़ने पर मुर्दों का माल मिल जाता है पूरा पढ़ने का कष्ट क्यों उठावें। श्री मान माननीय पण्डित जी महाराज ! पुराण हमने ही पढ़े हैं।

श्री राम जी को नाटक कार कह कर आपने उनका घोर अपराध किया है। नाटक कार तो सीता भी बनती है। तो सीता का सा प्रेम उसमें नहीं बनता है। यदि कोई राम बनता है तो राम का सा गुण उसमें एक भी नहीं दीखता सभी कुछ बनावट, सभी कुछ झूठ होता है। आप श्री राम जी को भी ऐसा ही बताते हैं। शोक ! महाशोक !!

"रूपं-रूपं·· ···" इस मन्त्र में जीवात्मा का वर्णन है। परमेश्वर का नहीं, आपके मत में इन्द्र को कभी परमेश्वर नहीं माना गया **"अर्चत-अर्चत** ·····" इस मन्त्र में मूर्ति पूजा की गन्ध भी नहीं है। इस मन्त्र में मूर्ति का कहीं जिक्र नहीं। फिर मूर्ति पूजा कहां ? यदि साहस है तो किसी भी मन्त्र में मूर्ति पूजा का विधान दिखाइये और मन्त्र अगर न आते हों तो जो दो मन्त्र आपने दिये हैं उन्हीं में मूर्ति पूजा दिखाइये। यदि परमात्मा साकार है, जिसकी आप मूर्ति बनाते हों, तो क्या वह पत्थर,

पर्वत, भूमि, बर्फ आदि की भांति साकार हैं ? यदि हां तो वह परमाणु से बना हुआ होगा। परमाणु जन्य नाशवान होता है। आप कोई उदाहरण दीजिए! जो साकार हो, और परमाणु जन्य (उत्पन्न होने वाला) न हो, या परमाणु जन्य तो हो, पर नाशवान न हो। मैं निश्चय पूर्वक कहता हूं कि आप कदापि ऐसा नहीं बता सकेंगे। फिर जो नाशवान है वह परमात्मा कैसा ? **चौबे जी गये छब्बे बनने पर दूबे भी न रहे**" आप परमेश्वर की मूर्ति सिद्ध करते-करते परमेश्वर को भी नाशवान् बना बैठे। धन्य हो देवता जी ! यदि परमात्मा शरीर धारी (साकार) है, जैसा कि जीवात्मा तो परमात्मा परिमित हुआ जैसे शरीर भी परिमित और जीवात्मा भी परिमित, आप कोई उदाहरण दें, जो शरीर धारी तो ह ।, पर-परिमित न हो। मैंने आपको पांच वेद मन्त्र पहले दिये थे, अब और लीजिए।

अनेजदेकं मनसो जवीयो नेनद्देवाः आप्नुवन पूर्व मर्षत् ।।
तद्धावतोन्यानत्येति तिष्ठत् तस्मिन्पो मातरिश्वा दधाति ।। (यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ४,)
स ओतःप्रोतश्च विभुः प्रजाषु स ऊ अल्प उदके नलीनः ।। (यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र ८,)

वह परमेश्वर चलता नहीं है फिर भी मन से अधिक वेगवान है। इन्द्रियां उसे प्राप्त नही कर सकेंगी, क्योंकि वह उनमें पहले से ही विद्यमान है। वह ठहरा हुआ भी सब दौड़ने वालों से आगे होता है। क्योंकि सर्व व्यापक है। और सर्वत्र है। वह सारी प्रजाओं में भीतर भी है तथा बाहर भी है। वह पानी की एक बूंद में भी व्यापक है। कहिये उस निराकार अमूर्त की मूर्ति कैसी ? पण्डित जी महाराज ! कुछ तो बोलो ? अरे ! और अब आप बोलेंगे भी क्या ? पहले अब आप अपने घर को टटोलिये वहां क्या-क्या तथा कितना स्पष्ट लिखा है।

यस्यात्म बुद्धि कुणपे त्रिधातुके, स्वधी कलत्रादिषु भौम इज्यधि।
यत्तीर्थ बुद्धि सलिलेन कर्हिचित्त, जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः ।।१३।।
(श्रीमद्भागवत् पुराण स्कन्ध-१०, अध्याय ८४, श्लोक १३,)

इस श्लोक में मूर्ति पूजा करने वालों को बैलों का चारा ढोने वाला "**गधा**" कहा है।

पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री —

आपको क्या पता श्री राम चन्द्र जी क्या कहते और क्यों कहते हैं ? कहीं-कहीं थोड़ा झूठ बोलना भी धर्म होता है। भगवान ने अपने चरित्र से बतलाया कि. जहां आवश्यकता हो, वहाँ झूठ भी बोलना चाहिये, जैसे आगे से गौवें जा रही हों, और कसाई उन्हे ढूढ़ता आ रहा हो, और जिसने देखी हों, उससे पूछे कि, इधर गौवें गई हैं ? देखने वाले का धर्म है कि, यह झूठ बोल कर कसाई को धोखे में डाल दे कि, जिधर गौवें गई हों, उधर न बताकर दूसरी ओर बता दे। ऐसा झूठ बोलना धर्म है। इसी प्रकार भगवान ने शूर्पणखां से कहा कि, यह मेरा भाई लक्ष्मण कुवांरा है। उसके पास जाओ। वह तुम्हारे साथ विवाह कर लेगा। शूर्पणखां लक्ष्मण जी के पास गई लक्ष्मण जी ने उसकी नाक काट ली। इसी प्रकार भगवान ने यह आदर्श बताया कि, अपनी पत्नी के वियोग में ऐसा सबको कहना चाहिये।

मूर्ति पूजा करने कराने वाले यदि गधे होते हैं, तो स्वामी दयानन्द और उनके बाप-दादे भी तो मूर्ति पूजा करते थे, वह क्या थे ? स्वामी दयानन्द जी ने मूर्ति-पूजा अपनी संस्कार विधि में बहुत

जगह लिखी है। पढ़ो और ध्यान से देखो. शीशे के महल में बैठकर दूसरों को पत्थर मारने का परिणाम क्या होता है ? यह ठाकुर साहब आप नही जानते। चल दिये दूसरों पर छींटा-कसी करने को ! कभी संस्कार विधि भी खोलकर देखी है ? वहाँ लिखा है कि, हे उस्तरे तुझको हमारा नमस्कार हो। इस बच्चे की हिंसा मत करना, मूसल, उलूखल की पूजा, पटेले को घी और शहद से पूजना, यह सब क्या मूर्ति पूजा नही है ? आर्य समाजी पण्डित तो वेद मन्त्र बोला नहीं करते, आपने कई बोल दिये, मैंने सब का उत्तर दे दिया। लीजिये वेद का एक अति प्रबल प्रमाण देता हूं। **"मुखाय ते पशुपते नमः चक्षुषि ते भव।"** (अथर्ववेद काण्ड ११ सूक्त २ मन्त्र ५,) इस मन्त्र में शिवजी की मूर्ति को पूजने का विधान है। शिव जी की मूर्ति के लिए कहा है, आपके मुख के लिए नमस्कार है। आपकी आंखों के लिए नमस्कार, इससे स्पष्ट और क्या चाहते हैं ?

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

धन्य हो ! सनातन धर्म को आप जैसा वकील मिला, तब तो अवश्य सनातन धर्म का कल्याण हो जावेगा। यह आपने नई खोज निकाली, और अवतारों की महिमा बहुत बढ़ा दी। कि अवतार, झूठ बोलना भी सिखाते हैं।

महाराज जी ! आपके अवतारों के आने से पहले भी दुनिया के लोग आपके माने हुए अवतारों से भी अधिक झूठ बोलते थे। और बहुत झूठ बोलना जानते थे. झूठ बोलना भी कोई सिखलाने के योग्य विद्या है ? खैर यह सब आपने समय काटने के लिए कहा, तो भी समय शेष रह गया तो विवश हो कर बैठ गये। मैं आप की तरह समय नष्ट नहीं करना चाहता, आगे चलिये और अपने प्रश्नों के उत्तर लीजिये।

स्वामी दयानन्द जी के बाप-दादे यदि मूर्ति पूजा करते थे, तो वह क्या थे ? यह क्या प्रश्न है? वही थे, जो आपके बाप-दादे थे। मैं यह पूछता हूं कि, श्रीमद्भागवत पुराण में यह श्लोक है कि नहीं ? और उसमें मूर्ति पूजकों को गधा बताया कि नहीं ? आपने कहा स्वामी जी ने संस्कार विधि में लिखा है कि **"हे उस्तरे तुझको हमारा नमस्कार हो"** मैं कहता हूं यह सर्वथा झूठ है। यदि संस्कार विधि में आप यह लिखा दिखला दें तो इसी पर और यहीं पर शास्त्रार्थ समाप्त, में ऐसा लेख देखकर आपकी विजय तथा अपनी पराजय मान लूंगा। संस्कार विधि को महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है, यदि आपके पास नही है, तो मेरे पास है यह लीजिये, और निकाल कर दिखलाइये या कहिये कि मैंने झूठ बोला।

नोट :—श्री ठाकुर अमरसिंह जी ने संस्कार विधि को सनातन धर्म की ओर से जो प्रधान नियत थे, उनके पास भेजी, और कहा कि इसमें से उस्तरे को नमस्ते या नमस्कार लिखा दिखलाइये ? श्री प्रधान जी ने संस्कार विधि और एक पुस्तक श्रीकृष्ण जी शास्त्री ने दी उन दोनों को देखने के लिए ले लिया। और श्री ठाकुर अमरसिंह जी से निवेदन किया कि, मैं इन दोनों पुस्तकों को देख लूं। इतना समय कृपा करके आप मुझे प्रदान कीजिये और मुझ पर विश्वास कीजिये, मैं जो भी कहूंगा सत्य ही कहूंगा, मेरी प्रार्थना है कि, आप शास्त्रार्थ जारी रखने की कृपा करें।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

मुझको श्री प्रधान जी पर पूरा भरोसा है मैं शास्त्रार्थ जारी करता हूं, सुनिये संस्कार विधि मुण्डन संस्कार की विधि में **"शिवो नामासि……"** इस मन्त्र द्वारा परमेश्वर को नमस्ते है, उस्तरे को कदापि नहीं। और जहां उस्तरे को नमस्ते की गई है, उस जगह को श्री प्रधान जी आपको बतायेंगे, तथा दिखायेंगे वह सच्चे पुरुष हैं। मैं उन पर पूर्ण विश्वास रखता हूं। "मूसल-उलूखल" की पूजा संस्कार विधि में कहीं नहीं लिखी है। पञ्चयज्ञों में एक **"बलिवैश्वदेव यज्ञ"** है। उसमें "मूसल-उलूखल" के नाम से कुछ अन्न का भाग भोजन से पूर्व इसलिये निकाल कर रखने का विधान है कि मूसल और ओखली से कई कृमि, कीट, आदि के अंग भंग हो जाते हैं और अनजाने में ही हो जाते हैं। उनका प्रायश्चित रूप यह कार्य है। जिससे उन दुःखी प्राणियों को कुछ उसी स्थान पर खाद्य-पदार्थ मिल जाये, वह मूसल और उलूखल के खाने के लिए नहीं, उनके द्वारा जो प्राणी पीड़ित हुए हों, उनके लिये अन्न भाग रक्खा जाना चाहिये। जैसे दान करते समय, लोग धर्मशाला, पाठशाला, स्कूल, गुरुकुल, आदि के नाम पर धन दान देते हैं ऐसे ही यह मूसल, उलूखल के खाने के लिए नहीं, उनके द्वारा जिन प्राणियों को पीड़ा पहुंची हो, उनके लिये वह भाग होता है देखिये मनुस्मृति के श्लोक ८८ और इसके भी आगे-पीछे देख सकते हैं।

दण्ड और जूते की पूजा दिखाइये कहां लिखी हैं? तथा यह भी बताइये कि दण्ड और जूता आपके कौन से देव तथा कौन से देवों की मूर्तियां हैं? हम भोजन करते समय **"ओ३म् अन्नपते अन्नस्य……"** आदि मन्त्र बोलते हैं। पुरानी परिपाटी है कि, वस्त्र पहिनें तो मन्त्र बोलें, ब्रह्मचारी दण्ड धारण करें तो मन्त्र बोले, समावर्तन के समय जूता पहनें तो मन्त्र बोलें, सामान्य व्यवहारों में बहुत मन्त्रों तथा उनके अर्थों का ज्ञान हो जाय, यह उन मन्त्रों के बोलने का प्रयोजन होता है इससे ईश्वर की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करना कैसे सिद्ध हो गया? पटेला भी कोई न आपका देव है, न वह ईश्वर की मूर्ति, ! महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है कि, खेतों में गन्दे पदार्थ न डाले जावें, अच्छा खाद डालने से अन्नादि पदार्थ अच्छे पैदा होते हैं। आपको अगर पता न हो तो किसी समझदार (अनुभवी) माली से ही पूछ लीजिये कि सोंठिया, सोफिया और दूधिया एवं आम, सोंठ, सोंफ आदि के अर्क और दूध आदि का बीजों और भूमि में सेचन करने से आम्रफल में उनका प्रभाव आता है। आपके प्रश्नों के उत्तर दे दिये, मेरे पहले प्रश्नों के उत्तर आप नहीं दे सके, नये और सुनिये तथा नोट कीजिये।

शैव तथा शैवों के ग्रन्थ कहते हैं कि—शिव ही परमेश्वर थे, उन्होंने ही ब्रह्मा, विष्णु तथा सृष्टि को बनाया। वैष्णव तथा उनके ग्रन्थ कहते हैं कि, विष्णु ही परमेश्वर हैं विष्णु ने ही सृष्टि तथा शिव और ब्रह्मा को बनाया। कोई पुराण कहता है, ब्रह्मा ने ही सबको बनाया। शाक्त कहते हैं कि शक्ति ने, ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा सृष्टि को बनाया, आप पहले यह निर्णय कीजिये कि इनमें से ईश्वर कौन है? और किसकी मूर्ति ईश्वर की मूर्ति मानी जावेगी? जब आपके ईश्वर का निश्चय ही नहीं तो मूर्ति किसकी? पुराणों में कहा है। **दुर्गाग्रे शिव सूर्यस्य, वैष्णवाख्यान मेव च। यः करोति विमूढ़ात्मा गार्दभीं योनिमाविशेत् ॥३१॥** भविष्य पुराण मध्य पर्व २, अध्याय ७ श्लोक ३१, इसमें कहा गया है कि दुर्गा के आगे शिव, सूर्य या विष्णु की स्तुति जो मनुष्य करता है, वह मूढ़ "गधे" की योनि में जाता है। हिरणाकुश और प्रह्लाद में यह मतभेद बताया गया है कि हिरणाकुश कहता था कि, विष्णु को छोड़

कर शिव जी की पूजा कर। प्रह्लाद कहता था कि मैं शिव की पूजा नहीं करूँगा, यह विरोध यहां तक बढ़ा बताया गया कि बाप-बेटे को जान से मारने को उद्यत हो गया। और उसने बेटे को मरवाने हेतु अनेकों उपाय किये। "**मुखायते पशुपते** ·····" इस मन्त्र का अर्थ आप बताते हैं। उसके अनुसार तो शिव जी के गुण की पूजा होनी चाहिये। पर आप लोग तो किसी अन्य अंग की ही पूजा करते हैं। जिसे गुप्तांग कहते हैं। मैं खुला नाम लेकर अपनी वाणी को गन्दी नहीं करना चाहता। वह पूजा तो वेद विरुद्ध ही हुई जो आप करते हैं। श्रीकृष्ण शास्त्री जी ने बैठे-बैठे ही पूछा कि आप इसका अर्थ क्या लेते हैं? श्री ठाकुर साहब जी ने कहा कि, मैं तो इसका अर्थ राजा परक लेता हूं। टन··टन...टन··· टन ···घंटी बजी और कहा गया कि ठाकुर साहब जी की बारी का समय समाप्त हो गया है।

पण्डित श्रीकृष्ण जी शास्त्री—

इसमें कुछ सन्देह नहीं कि, भगवान श्री रामचन्द्र जी ईश्वरावतार थे। और उन्होंने आवश्यकता पड़ने पर झूठ भी बोला और इसीलिये बोला कि, लोग समय पड़ने पर इसको धर्म समझ कर बोलें।

"**हे उस्तरे नमस्ते**... .." यह स्वामी जी ने भाषा में तो नहीं लिखा पर "**शिवोनामासि**··· " मन्त्र यह लिखा है। इसका अर्थ रामगोपाल विद्यालंकार का किया हुआ मेरे पास है आप चाहें तो मैं आपको दिखला सकता हूं। आप बड़े-बड़े विद्वानों का किया हुआ अर्थ नहीं मानते, जो मन्त्र मैंने दिये हैं, उनके अर्थ पण्डित विश्व बन्धु जी शास्त्री एम० ए० ने भी ऐसे ही किये हैं। आप कैसे इन्कार कर सकते हैं? आप लोग तो कहा करते हैं कि जूते की पूजा यही है कि, उसे पैर में पहनना, आज पूजा से साफ इन्कार करते हैं। आपने शैवों तथा वैष्णवों की बात कही, शैवों तथा वैष्णवों की पूजा मैं भेद है। जो जिस इष्ट देव की पूजा करता है, उसको उसी की करनी चाहिये दूसरे की कभी नहीं करनी चाहिये, हमारे बहुत से देव हैं, देवों के भी महकमे हैं। एक महकमा वाले अफसर दूसरे महकमे वालों से ताल्लुक नहीं रखते हैं। इसको समझने हेतु बड़ी बुद्धि की आवश्यकता है।

हिरण्यकश्यप नास्तिक था, वह कदापि शैव नहीं था, उसको कहीं भी शैव नहीं लिखा, यदि हिम्मत है तो दिखाओ? नहीं तो अपने झूठ पर शर्म खाओ। स्वामी दयानन्द जी ने "**भद्र काल्यै नमः**" लिखा हैं। यह तो मूर्ति पूजा हैं कि नहीं? बताओ! भद्र काली आपकी क्या लगती है? "**मुखायते पशुपते**" इस मन्त्र को आपने राजा परक बताया। पर बताइये इसमें आंखों के लिये "**चक्षूंसि**" यह बहुवचन है कि नहीं? इसका अर्थ है तीन आखें, राजा की तीन आंखें कहां होती हैं? तीन नेत्र कहने से तो "**त्रिलोचन**" भगवान शंकर की मूर्ति की ही पूजा माननी पड़ेगी। भगवान रामचन्द्र जी भी तो मूर्ति पूजा ही किया करते थे। आप रामायण पढ़कर देखें, मूर्ति पूजा का फल होता है, देखो महाभारत में लिखा है। "एकलव्य" ने गुरु द्रोणाचार्य की मूर्ति बनाकर पूजी। उसका फल यह हुआ कि, वह धनुर्विधा में बड़ा प्रवीण हो गया, लीजिये वेद का एक और प्रमाण देते हैं। "**अहं संगमनीं वसूनां**·····" यह वेद में भगवती दुर्गा का वचन है। लीजिये दुर्गा की पूजा भी वेद में दिखलादी। आप शिव जी और विष्णु जी के लिए पूछते हैं कि इनमें से परमेश्वर कौन सा है? आपको पता होना चाहिए कि, हम इन सबको एक ही मानते हैं। भावना में भेद है देखो भक्त शिरोमणि गोस्वामी तुलसी दास जी ने जब वृन्दावन में भगवान श्रीकृष्ण जी की मूर्ति देखी तो उसको नमस्कार नहीं किया, और कहा कि—

मोर मुकुट कटि काछनी भले बने हो नाथ। तुलसी मस्तक जब झुके धनुष बाण लो हाथ॥ अर्थात् वह अपना इष्ट श्री रामचन्द्र जी को मानते थे। आपके सब प्रश्नों के उत्तर हो गये। आप थोथे चैलेन्ज करते हैं।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

झूठ आदर्श स्थापित करने के लिए नहीं बोला जाता झूठ तो असमर्थ या स्वार्थी बोलता है। समर्थ को झूठ बोलने की कोई आवश्यकता नहीं है। और झूठ बोलना सिखाने के लिए परमेश्वर को जन्म लेना पड़े यह तो बहुत ही बेतुकी बात है। दुनिया में लाखों करोड़ों बेईमान हैं जो स्वयं भी झूठ बोलते हैं तथा औरों को भी बुलवाते हैं। "**शिवोनामासि**....." इस मन्त्र को स्वामी जी ने लिखा है। पर इस मन्त्र में तो उस्तरा या उस्तरे का वाचक कोई शब्द नहीं है। तथा यजुर्वेद भाष्य में इस मन्त्र का अर्थ भी लिखा है। वहां भी उस्तरे का नाम नहीं है। आप चाहें राम गोपाल से अर्थ करा लें, चाहे सातवलेकर जी या विश्वबन्धु जी से। इनके किये अर्थ ऋषि दयानन्द जी के गले नहीं मढ़े जा सकते। हम पर ऋषि दयानन्द जी के अर्थों का ही उत्तरदायित्व है। और किसी का नहीं, विश्वबन्धु जी का आप नाम लेते हैं। उनको हमारी वेदी से बोलने तथा खड़े होने का भी अधिकार नहीं हैं। पूजा का अर्थ उचित उपयोग मानने से हम अब भी कहां इन्कार करते हैं? शव पुराण में लिखा है कि गणेश जी ने विष्णु जी की लात से पूजा कर दी थी, यह भी तो पूजा ही है। मनुस्मृति में में कहा है, "**यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते**..." यहां नारियों की पूजा बताई है, तो क्या धूप-दीप-नैवेद्य आदि से घण्टी बजाकर और "**त्वमेव माता च पिता त्वमेव**." कह कर स्त्रियों की पूजा करते हैं क्या?

आपके देवों के महकमे भी खूब हैं। एक महकमा दूसरे महकमे को गाली देता है। एक महकमा कहता है कि, दुर्गा के आगे, शिव, विष्णु, आदि की स्तुति करने वाला गधे की योनि में जायेगा। और दूसरे महकमे वाला कहता है कि जो शिब और विष्णु को मानता है वह साठ हजार वर्ष तक "**विष्ठा**" में कीड़ा बन कर जन्म लेता है, देखिये—**सोर पुराण में "षष्टि वर्ष सहस्राणि विष्टायां जायते कृमि"** हिरण्यकश्यप नास्तिक था या शैव? मेरा प्रमाण सुन कर सब बुद्धिमान लोग निर्णय करेंगे, आप तो महाराज जी कुछ पढ़ते हैं नहीं, पद्म पुराण में देखिये हिरण्यकश्यप प्रहलाद को कहता है कि,—"**त्यज शत्रुं कैटभारिं पूजयस्व त्रिलोचनम्**" (पद्म पुराण उत्तरखण्ड अध्याय २३८ श्लोक ३२,) अर्थात् तू उस विष्णु शत्रु को त्याग कर त्रिलोचन शिव की पूजा कर। प्रहलाद का वचन भी सुनने योग्य है, हमारे पण्डित जी महाराज ने तो न कभी सुना और न कभी पढ़ा, परन्तु आज चलो उनको भी सुनने का मौका मिल जायेगा। देखिये और ध्यान से सुनिये। पण्डित जी आप भी कान खोल कर सुनिये!! "**कथं पाखण्डमाश्रित्य पूजयामि च शंङ्करम्**" (पद्म पुराण उत्तरखण्ड अध्याय २३८ श्लोक ४५,) अर्थात् प्रहलाद कहता है कि, मैं पाखण्ड का आश्रय लेकर शंकर की पूजा क्यों करूँ? मैं तो विष्णु की ही पूजा करूंगा। बाप अपने बेटे को मरवाने के अनेक प्रयास करता है। और केवल इस लिये कि शिव की पूजा न करके यह विष्णु की पूजा क्यों करता है?

नोट:—इस प्रमाण को एवं इसके अर्थ को सुनकर चारों ओर सन्नाटा छा गया, सब लोग ठाकुर साहब के चेहरे पर बड़ी आश्चर्य वाली दृष्टि से देखने लगे।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

और पण्डित जी महाराज आपके देवों के महकमों से तो वर्तमान सरकार के महकमे सो दर्जा अच्छे हैं, सिविल वाले पुलिस को बुरा नहीं कहते, और पुलिस वाले मिलिटरी वालों को और मिलिटरी वाले पुलिस वालों को एवं सिविल वालों को बुरा नहीं कहते। माल वाला महकमा फौजदारी वाले महकमे को और फौजदारी वाला महकमा, माल वाले महकमे को, कभी गालियाँ नहीं देता। बल्कि एक सरकारी महकमे वाले यदि दूसरे सरकारी महकमे वालों के कार्य में बाधा डालें, तो सख्त सजा पायें। आप पूछते हैं कि राजा के तीन नेत्र कहां होते हैं ? मैंने तो सोचा था, कि आज कुछ पढ़ा-लिखा कोई व्यक्ति शास्त्रार्थ करने सामने आयेगा, पर हाय रे तकदीर !

महाराज जी ! अगर शास्त्रार्थ करने का शौक है, तो कुछ पढ़ा करिये, क्यों इन सीधे-सादे बेचारे सनातन धर्मियों की नाक कटवाते हो, लो सुनो, कान खोलकर—"**चक्षुंषि**" का अर्थ तीन आँखें नहीं हैं। बहुत आंखें हैं। इसी सूक्त के एक और मन्त्र में रुद्र की सहस्रों आँखें बताई हैं। रूद्र, दुष्टों, पापियों, चोरों, बदमाशों को दण्ड देकर रुलाने वाले राजा का नाम है। राजा की सहस्रों आँखें होती हैं। तभी तो वनों, पहाड़ों, नगरों, ग्रामों गलियों, और घर-घर का उसको पता रहता हैं कि कहां क्या हो रहा है ? सहस्रों आंखों से देखने वाला राजा ही राज्य कर सकता है। और आपको अपने लिए आदर्श मिला वह भी कौन ? एकलव्य ! एक भील !! कोई ऋषि मुनि तो मूर्ति पूजा करने वाला मिला नहीं।

आपने मूर्ति पूजा के लिए गुरु बनाया, और वह भी एक भील को। धन्य हो महाराज ! आपकी ज्योति को !! पर श्री मान शास्त्री जी उसने भी द्रोणाचार्य की मूर्ति की कभी पूजा नहीं की, द्रोणाचार्य की मूर्ति से वह धनुर्विद्या में निपुण नहीं हुआ, वह तो अपनी मेहनत से हुआ "**करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान। रसरो आवत-जात ते शिल पर पड़त निशान ।।** मूर्ति पूजना तो दूर रहा, केवल बनाने का ही यह फल निकला कि, अपना अनूठा भेंट चढ़ाना पड़ा। आप भी अब तैयार हो जाइये ! (जनता में चारों ओर हँसी) द्रोणाचार्य तो मूर्तिमान् मनुष्य थे, मूर्तिमान् की मूर्ति बन सकती है। यदि वह एकलव्य ने बना ली तो, इससे निराकार परमेश्वर की मूर्ति कैसे सिद्ध हुई ? पर आपको तो कुछ न कुछ कहना है, चाहे तुक लगे, या न लगे, पुराने प्रश्न आपने सुने, और सुनकर कोई उत्तर नहीं दिया। और उनको श्राद्ध की खीर की तरह पी गये डकार तक भी नहीं ली। (जनता में हँसी) नये प्रश्न और सुनिये—मूर्ति बनाने वाला, मूर्तिमान को देख कर मूर्ति बनाता है, परन्तु आपके भगवानों की मूर्तियों को बनाने वाले, संग तराश होते हैं। कुछ अनपढ़ हिन्दू अधिकतर मुसलमान, क्या मैं पण्डित जी महाराज से पूछ सकता हूं, कि उन्होंने आपके भगवान को देखा है ? यदि इन मूर्खों, अनपढ़ों ने आपके भगवान के दर्शन किये हैं, जिसके आधार पर उस भगवान की मूर्ति की रचना करते हैं। तो आप जैसे, पण्डितों को उनकी बनाई मूर्तियों के द्वारा भगवान की पूजा, और प्राप्ति का यत्न करते हुए लज्जा आनी चाहिए ! बल्कि कहीं चुल्लु भर पानी में डूब कर मर जाना चाहिये। उन मूर्खों ने तो आपके भगवान को देख कर उसकी मूर्ति बना दी, और आप उनकी बनाई मूर्तियों को देख कर भी भगवान को नहीं पहचान सके। शिव पुराण में कहा है कि—

तीर्थानि तोय पूर्णानि, देवान् पाषाण मृन्मयान्। योगिनो न प्रपद्यन्ते स्वात्म प्रत्यय कारणात् ।।२६।।

(शिव पुराण वायु संहिता उत्तर भाग अध्याय ४० श्लोक २६,)

योगी जन न पानी के स्थानों को तीर्थ रूप मानते हैं। न पत्थर आदि की मूर्तियों को देव मानते हैं। मूर्ति पूजा व्यर्थ हुई। और देखिये—श्रीमदभागवत् पुराण में कहा है— **न ह्यम्यानि तीर्थानि न देवा मृच्छला मयाः ॥११॥** (श्रीमद्भागवत् पुराण स्कन्द १०, अध्याय ८४ श्लोक ११,) अर्थात् जल स्थान, नदियां, तथा तालाब आदि तीर्थ नहीं होते, न मिट्टी पत्थर आदि की मूर्तियां देव होती हैं।

"**अहं ं गमनी**" इस मन्त्र में क्या बल्कि सारे सूक्त में भी आप कहीं दुर्गा का नाम दिखा दें, तो मैं अपनी हार मान लूंगा, और अगर न दिखा सके तो आप अपनी हार मान लेना। दिखाइये मैं चैलेन्ज करता हूं।

पण्डित श्रीकृष्ण जी शास्त्री—

श्री पण्डित सातवलेकर जी आदि को आप आर्य समाज से निकालते जाइये, हम उनको सनातन धर्म में लेते जायेंगे, श्री पण्डित भीमसेन जी एवं श्री पण्डित अखिलानन्द जी को आर्य समाज ने निकाला, हमने अपना लिया। जब स्वामी दयानन्द जी ने मन्त्रों के अर्थ नहीं किये, तों कोई भी करे वह मानने ही पड़ेंगे। और दूसरी बात यह है कि, अपने इष्ट को ही पूजा करनी चाहिये, यह मैं पहले ही बता चुका हूं। भक्त शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास जी का उदाहरण इसमें प्रबल प्रमाण है। आपकी समझ में ना आये तो मैं क्या करूँ। हिरण्यकश्यप पूरा नास्तिक नहीं था, तो कुछ तो नास्तिक था ही, भगवान शंकर को परिमित मानता था, उसे आस्तिक कोन सिद्ध कर सकता है? परमात्मा अवतार लेता है, वह साकार होता है; तभी तो उसकी मूर्तियां बनाई जाती है, भक्त लोग इन मूर्तियों की पूजा करते हैं, आप लोग तो नास्तिक हैं, एकलव्य भील था, तो भगवान श्री रामचन्द्र जी तो श्रेष्ठ थे, आप उनको अवतार नहीं मानते, तो मर्यादा पुरुषोत्तम तो मानते ही हैं। वह भी मूर्ति पूजा करते थे। कम से कम उनका ही अनुकरण करो। निराकार परमात्मा ऐसे साकार होता है, और अवतार धारण करता है, जैसे बिजली निराकार हैं, और बटन दबाने से साक्षात् रूप मैं प्रकट होती है। यह भी नहीं कि, एक समय में, एक जगह ही प्रकट होती हो। एक ही समय मैं सैकड़ों स्थानों में प्रकट होती है। और भिन्न-भिन्न आकारों, और भिन्न-भिन्न रंगों के बलबों में, भिन्न-भिन्न आकृतियों और रंगों में दिखाई देती हैं। और सुनो ठाकुर साहब! अभी उस्तरे के नमस्कार से पीछा नहीं छूटेगा। नहीं तो संस्कार विधि के मन्त्रों का अर्थ स्वामी दयानन्द जी से करा लेते। अब तो जिसका भी अर्थ होगा, मानना ही पड़ेगा, दुर्गा की पूजा वेद में साफ लिखी है। "**रूपं रूपं**…" इस मन्त्र में मैंने सिद्ध कर दिया है कि, परमात्मा की तरह-तरह की मूर्तियां बनानी और पूजनी चाहिये। "**अर्चतप्रार्चत**…" इस मन्त्र से मैंने मूर्ति पूजा सिद्ध कर दी, ऊखल, मूसल की पूजा करते हो, और भगवान की मूर्ति बनाकर पूजने से पेट में दर्द होता है, आप बार-बार चैलेन्ज करते हैं, आपके चैलेन्जों की हम कुछ भी परवाह नहीं करते, सब लोग जान गये हैं, कि मूर्ति पूजा सिद्ध हो गयी हैं।

पंडित श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

महाराज! आर्य समाज में जितने भी विद्वान हैं, वह सभी प्रायः सनातन धर्म में से ही आये हैं। और स्वयं ही उस मत को मिथ्या मान कर छोड़ आये हैं, आर्य समाज से एक-दो जो आपके यहां गये हैं, वे आर्य समाज द्वारा निकाले हुए गये हैं। आप स्ययं भी कहते हैं कि, "आप निकालते जाइये

हम अपनाते जायेंगे।" हम जिनको बुरा समझकर निकालेंगे, उनको आप अपनायेंगे, स्वयं कोई भी आर्य समाज को छोड़कर आपके पास नहीं जायेगा। **जादू वह, जो शिर पै चढ़के बोले। क्या मजा जो गैर पर्दा खोले।।** उस्तरे को नमस्कार या नमस्ते, ऋषि दयानन्द जी के लेख में नहीं दिखा सके और तीन काल में भी नहीं दिखा सकेंगे। **शिवोनामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते**…" ।।६३।। (यजुर्वेद-अध्याय ३ मन्त्र ६३,)

अर्थात् इस पर ऋषि दयानन्द जी का भाष्य है, आपको तो पढ़ने लिखने से कोई मतलब है नहीं, जो मुंह में आया कह दिया। और फिर लिखें-पढ़ें तो तब ! जब भंग भवानी से पीछा छूटे। इस मन्त्र में उस्तरे का नामो निशान भी नहीं है। ऋषि दयानन्द जी का भाष्य इस पर भी है, आपने नहीं पढ़ा तथा नहीं देखा तो यह आपका दोष है। ऋषि के भाष्य में उस्तरे को नमस्ते लिखा हुआ दिखा दें तो मैं हार मान लूंगा। दिखाते क्यों नहीं ? जिस मन्त्र पर स्वामी दयानन्द जी का भाष्य विद्यमान है, उस पर आप क्यों "डूबते को तिनके का सहारा" राम गोपाल आदि के अर्थ ढूंढ़ते फिरते हो ? श्री गोस्वामी तुलसीदास जी ने श्री कृष्ण की मूर्ति को नमस्कार नहीं किया, तो मेरी मान्यता सिद्ध हुई, कि मूर्ति पूजा से साम्प्रदायिक फूट पैदा होती है। जैसे हिरण्यकश्यप और प्रहलाद में हुई उसी का नमूना तुलसीदास जी ने दिखाया। आपने मेरे प्रश्न का क्या खाक उत्तर दिया ? बल्कि मेरी ही बात को प्रमाणित कर दिया।

नोट :—"बीच में ही एक व्यक्ति ने खड़े होकर जोर से नारा लगाया" बोलो वैदिक धर्म की —जय। "तुरन्त श्री ठाकुर साहब ने उसे बिठा कर शान्ति स्थापित की" हिरण्यकश्यप के लिए अभी आप कह रहे थे, वह कदापि शैव नहीं था। जब उसके शैव होने के पुष्ट और अकाट्य प्रमाण दिये तो उसका नाम भी नहीं लिया, उन प्रमाणों को श्राद्ध की खीर की तरह पी गये। अब कहते हैं कि—वह शिवजी को परिमित मानता था इसलिए पूरा नहीं तो आधा नास्तिक अवश्य था।

महाराज जी ! इस प्रकार तो आधे नास्तिक आप भी हैं। आप शिव, ब्रह्मा, विष्णु, दुर्गा सभी को परिमित मानते हैं। मैं कहता हूं कि—आप शैवों को नास्तिक या आधा नास्तिक कहते हैं। तो ऐसी घोषणा करते हुए डरते क्यों हैं ? जैसा कि पद्म पुराण में प्रहलाद का वचन बताया गया है —"**कथं पाखन्डमाश्रित्य पूजयामि च शंकरम्?**" (पद्म पुराण उत्तरखण्ड अध्याय २३८, श्लोक ४५,) अर्थात् मैं क्यों पाखण्ड का सहारा लेकर शिव को पूजूं ? पद्म पुराण में अन्य भी अनेकों जगहों पर ऐसे वचन हैं, जिसमें शैवों को पाखण्डी कहा गया है, आप क्यों डरते हो ? उनको कहिये ना पाखण्डी और नास्तिक। आपने हमको तो नास्तिक कहा, जो परमेश्वर को सर्व व्यापक मानते हैं, आपकी दृष्टि में परमेश्वर को सर्व व्यापक मानने वाले पूरे नास्तिक हैं, और परमेश्वर को परिमित मानने वाले, आधे नास्तिक हैं, तो आस्तिक वही हैं, जो परमेश्वर को मानते ही नहीं। श्रोताओं में हँसी…… बस हो गयी सनातन धर्म की जय। आप कहते हैं, श्री राम चन्द्र जी ने मूर्ति पूजा की थी। मैं कहता हूं कदापि नहीं की बल्कि सन्ध्या करते थे, जैसा कि श्री विश्वामित्र जी का वचन है—**कौशिल्या सुप्रजा राम पूर्वा सन्ध्या प्रवर्तते। उत्तिष्ठ नर शार्दूल, कर्त्तव्य दैवमाह्निकम्** ।।२।। (बाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड सर्ग २३ श्लोक २,)

महर्षि बाल्मीकि जी कहते हैं कि—विश्वामित्र जी ने सुबह होते ही श्री रामचन्द्र जी को कहा ! हें कौशल्या के सुपुत्र राम उठो ! प्रातः सन्ध्या काल हो गया है। श्री बाल्मीकि जी आगे कहते हैं कि—

तस्यर्षेः परमोदारं वचः श्रुत्वा नरोत्तमो। स्नात्वा कृतोदकौ वीरौ जेपतुः परमं जपम् ।।३।।
(बाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड सर्ग २३ श्लोक ३,)

उस ऋषि के परम उदार वचन सुन कर राम-लक्ष्मण दोनों भाई, उठ खड़े हुए, और दोनों ने स्नान आदि करके परम् जप का जाप किया, अर्थात् सन्ध्या की, ओ३म् और गायत्री का जाप किया। जो ग्रन्थ आपके है, उनको भी आप नहीं पढ़ते, उन्हें भी हम ही पढ़ते हैं, देखिये गोस्वामी तुलसीदास जी भी कहते हैं कि **विगत दिवस मुनि आयसु पाई। सन्ध्या करन चले दोऊ भाई ।।** (राम चरित मानस बालकाण्ड,) अर्थात्—घण्टी हिलाने तो नहीं गये थे? सन्ध्या ही की थी ना। श्री राम जी को तो आप परमेश्वर कहते हो, फिर परमेश्वर जी किसकी मूर्ति पूजते थे ? अपनी या आपकी ? जनता में चारों और बड़े जोरों की हँसी ··· आपको तो महाराज जी ! कहते हुए भी लज्जा नहीं आती है। यदि श्री राम जी मूर्ति पूजा करते भी हों, तो हमको क्या ? जो कार्य वेद विरुद्ध है, वह तो वेद विरुद्ध ही है, चाहे उसे राम करे या श्याम करे, मूर्ति पूजा को आप वेद विहित न सिद्ध कर सके न कभी कर सकेंगे। बिजली का उदाहरण आपने खूब दिया, मान गये पण्डित जी महाराज आपको ! तुक लगे चाहे न लगे, समय तो कट ही जायेगा। श्रीमान् जी ! बिजली घटती-बढ़ती रहती है। दाखिल होती और खारिज होती है। क्या आपने बैटरियां भी नहीं देखीं, जिनमें से बिजली खारिज होती है। और खारिज होते-होते खत्म भी हो जाती है। परमेश्वर जो सर्व व्यापक एक रस है, उसके लिए बिजली का उदाहरण नहीं बनता, और जिस अंश में आपने यह उदाहरण दिया, उसमें सर्वथा विषम है। बिजली कितनी निकल गई , यह बताने के लिए मीटर लगे रहते हैं। क्या आपके मत में परमेश्वर भी इसी प्रकार घटता, बढ़ता, निकलता है ? तब तो पण्डित जी महाराज ! मन्दिरों में भी मीटर लगवाइये, जहाँ पता लगे कि, परमेश्वर कितना निकल गया, निकलते-निकलते खत्म भी हो जायेगा। ध्यान रखना फिर आपके परमेश्वर की भी बैटरी चार्ज करनी पड़ेगी। (जनता के नारों एवं तालियों की गड़गड़ाहट से आकाश गूंज उठा,) उसे शान्त कराकर श्री ठाकुर अमर सिंह जी बोले—महाराज जी। आप क्यों अपनी हँसी करवाते हो, तथा इन सीधे-सादे सनातन धर्मियों को लज्जित करवा रहे हो, साफ-साफ क्यों नहीं कह देते, कि वह परमेश्वर निराकार सर्वज्ञ, एवं सर्वशक्तिमान है, उसकी मूर्ति बनाना एवं उस मूर्ति की पूजा करना व्यर्थ हैं तथा वेद विरुद्ध है। अन्यथा कुछ सोच समझ कर बोलिये ! व्यर्थ में समय काहे को बरबाद करते हो पण्डित जी !

वैसे तो पण्डित जी आप अब समाप्त हो चुके हो आपके पास न अब कोई युक्ति है न प्रमाण हैं, इधर-उधर हाथ मार रहें हो। आपके चैलेन्ज तो देख लिये, अब हमारे चैलेन्ज देखिये—जिन पर हार-जीत की शर्त है।

(१) दिखाइये स्वामी दयानन्द जी ने उस्तरे को नमस्कार कहाँ लिखा है ? दण्ड, जूता मूसल, उलूखल, पटेला आदि इनकी पूजा आरती धूप-दीप नैवद्य आदि कहाँ लिखे हैं ? इनको ईश्वर या किस देव की मूर्ति लिखा हैं ? और कहाँ लिखा है ?

(२) **"रूपं रूपं……"** इस मन्त्र मैं जीव का वर्णन है, परमेश्वर का नहीं।

(३) **"अर्चत प्रार्चत ……"** इस मन्त्र में मूर्ति पूजा बताने वाले कौन से शब्द हैं ?

(४) **"अहं संगमनी……"** इस मन्त्र या सारे सूक्त में दुर्गा का नाम कहाँ है ! दिखाइये या अपना झूठ स्वीकार करिये।

(५) **"महावीर…… "** जिसको मैंने अग्निहोत्र में काम आने वाला मिट्टी का बर्तन सिद्ध कर दिया, उसको आपने परमेश्वर की मूर्ति किस आधार पर कहा ? और महावीर को हनुमान ही आप मानते हो तो हनुमान भी तो ईश्वर नहीं फिर हनुमान या महावीर की मूर्ति बनाने मात्र से परमेश्वर की मूर्ति और उसकी पूजा कैसे हुई ? हनुमान को परमेश्वर कौन मानता है ? मेरे पुराने प्रश्नों के उत्तर आप अब तक नहीं दे सके। और मैं अठारह प्रश्न अब तक आप पर कर चुका हूं, आप एक का भी उत्तर नहीं दे सके। नये प्रश्न और सुनिये, हर बार नये-नये प्रश्न आप पर जड़ता जाऊँगा लीजिये—

श्रीमद्‌भागवत् में लिखा है—

यो मां सर्वेषु भूतेषु सन्तमात्मानमीश्वरम्। हित्वार्चा भजते मौड्यात्भस्मन्येव जुहोति सः ॥२१॥
अहं सर्वेषु भूतेषु, भूतात्मा वस्थितः सदा। तमवज्ञाय मां मर्त्यः कुरुतेऽर्चा विडम्बनम् ॥२२॥

(श्रीमद्‌भागवत पुराण स्कन्द ३, अध्याय २९, श्लोक २१, २२)

इन श्लोकों का संक्षिप्त यह अर्थ है "जो मुझ सन्तों के आत्मा रूप परमेश्वर को छोड़कर मूर्खता से (मूर्ति) पूजा करता हैं, वह ऐसे हैं, जैसे कि भस्म (राख) में हवन करता है। मैं सारे प्राणियों और अप्राणियों में सदा स्थित रहता हूं। मेरी अवज्ञा करके जो पूजा करते हैं, वह पूजा नहीं विडम्बना है।" मैंने आपके सब प्रश्नों के उत्तर दे दिये, और बार-बार दिये। आपके सारे प्रमाणों को मैंने काट दिया। मेरे सारे प्रमाण तथा प्रश्न वैसे के वैसे स्थित हैं। आपने सनातन धर्म की कुछ सेवा नहीं की, व्यर्थ समय नष्ट किया, जिसके कारण सभी सनातन धर्मी दुःखी हो रहे हैं तथा अपने भाग्य को कोस रहे हैं।

पण्डित श्रीकृष्ण जी शास्त्री—

आप बार-बार वेद का प्रमाण मानते हैं। लीजिये अब की बार वेद का ऐसा प्रमाण देता हूं, जिसमें परमेश्वर को पत्थर की मूर्ति का स्पष्ट विधान है, यह अकाट्य प्रमाण हैं। इसका खण्डन करो तो जानूं, मन्त्र इस प्रकार है—**'एह्यश्मान मातिष्ट, अश्मा भवतु ते तनूः'** (अथर्ववेद, २।१३।४,) अर्थात् हे परमेश्वर ! आप पत्थर में स्थित होइये, यह पत्थर आपका शरीर होवे। मूर्ति में जब प्राण प्रतिष्ठा कराई जाती है, तब यह मन्त्र पढ़ा जाता है, इससे स्पष्ट और मन्त्र मूर्ति बनाने का हो ही नहीं सकता। आँखों तथा अक्ल के अन्धों को क्या-क्या दिखावें ? इस एक ही प्रमाण से मूर्ति पूजा सिद्ध हो गयी, और कोई प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है, इसी पर शास्त्रार्थ समाप्त हो जायेगा। (श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने बैठे-बैठे की कहा, कि कृपया मन्त्र पूरा पढ़ दीजिये)। श्रीकृष्ण शास्त्री ने

झल्लाते हुए बड़े जोर से कहा– मैंने जितना वेद मन्त्र पढ़ना था, पढ़ दिया, पूरा वेद मन्त्र पढ़ने की मुझको आवश्यकता नहीं हैं, अभी आप कहते हैं, पूरा वेद मन्त्र पढ़िये, फिर कहेंगे पूरा वेद ही पढ़ कर सुनाइये। (जनता में हँसी) उस्तरे को नमस्ते, स्पष्ट लिखा है, उससे पीछा नही छूटेगा, "उस्तरे को नमस्ते" वाला मन्त्र दयानन्द जी ने संस्कार विधि में स्वयं लिखा है। आप स्वामी दयानन्द जी के लेख से इन्कार करते हैं। और आप स्वयं भी स्वामी दयानन्द जी की मूर्ति पूजते हैं, अगर नहीं पूजते, तो लीजिये, यह रही स्वामी दयानन्द जी की तस्वीर मारिये इस पर जूता। बुद्धदेव विद्यालंकार ने हैदराबाद में इस पर जूता मार दिया था, आर्य समाज में उनकी भारी दुर्गति हुई थी आपकी भी वैसी ही होगी। सारा आर्य समाज दयानन्द जी के चित्र की पूजा करता है। आप भी करते हैं, नहीं करते हैं तो दिखाइये न हिम्मत ! जूता मारने की !! आप मुझसे हार गये, अब आप मुझे अपना पिता बना लीजिये।

नोट :—सनातन धर्म सभा की ओर के प्रधान जी श्री कृष्ण शास्त्री के इस वाक्य पर बहुत बिगड़े, और उनको ऐसे शब्द कहने से रोका। इस पर श्रीकृष्ण जी शास्त्री भी बिगड़ गये, कि आप कुछ नहीं जानते आप चुपचाप बैठ जाइये। प्रधान जी तभी कुर्सी छोड़कर चलने लगे। तब कई सज्जनों ने बहुत प्रार्थनाएं करके उनको कुर्सी पर पुनः बिठा दिया।

श्री पंडित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी -

श्रीमान पण्डित जी आपने आज मूर्ति पूजा का अच्छी तरह खण्डन करवा दिया, आर्य समाजियों को चाहिए कि आज आपको भर पेट मिठाई खिलावें सनातन धर्म के मन्तव्य पर मूर्ति पूजा की निर्मूलता जैसी आज आपने प्रकट करवाई, ऐसी आशा तो उन्हें स्वप्न में भी नहीं थी। आपने मूर्ति पूजा का विधान करने वाला बहुत बढ़िया मन्त्र निकाला, लगता है कि यह मन्त्रार्थ आपने कहीं किसी से सुन लिया है। न मन्त्र का भाष्य ही पढ़ा न पूरा मन्त्र ही बोला, पूरा मन्त्र आपको याद ही नहीं है तो बोलोगे कहाँ से ? लीजिये मैं पूरा मन्त्र बोलता हूं। और इसका अर्थ भी करता हूं, मन्त्र इस प्रकार है, और यह मन्त्र अथर्ववेद काण्ड २ सूक्त १३ का चौथा मन्त्र है, यकीन न हो तो अथर्ववेद में देख लीजिये। जो इस प्रकार है—

"एह्यश्मानमातिष्ठ, अश्मा भवतु ते तनूः। कृण्वन्तु विश्वेदेवाः आयुष्टे शरदः शतम् ॥४॥

(अथर्ववेद काण्ड २ सूक्त १३ मन्त्र ४,)

अर्थात् हे ब्रह्मचारी ! आ, इस पत्थर पर बैठ, तेरा शरीर पत्थर के सदृश सुदृढ़ होवे। सारे विद्वान तुझको आशीर्वाद देकर तेरी आयु सौ वर्ष की करें। आपने अपने गुरु श्री आचार्य सायण का भी भाष्य नही देखा जो इस प्रकार है। **"हे माणवक ! एहि, आगच्छ ॥ अश्मानम् आतिष्ठ, दक्षिणेन-पादेन आक्रम। ते तव तनूः शरीरम् अश्माभवतु, अश्मवद् रोगादि विनिर्युक्तं दृढ़ं भवतु ॥ विश्वेदेवाश्च ते तव शतसंवत्सर परिमिते आयुः कृण्वन्तु कुर्वन्तु"**। सायणाचार्य के इस संस्कृत भाष्य का हिन्दी भाषा में अर्थ भी सुनिये "सनातन धर्म पताका," मासिक पत्र मुरादाबाद के सम्पादक ऋषिकुमार श्री पण्डित रामचन्द्र जी शर्मा ने इस प्रकार किया है। हे बालक ! आ और दाहिने पैर से इस पत्थर पर चढ़, तेरा शरीर पत्थर के समान रोग रहित और दृढ़ हो। और विश्वेदेवा भी तेरी आयु सौ वर्ष की

करें। धन्य हो शास्त्री जी ! आपने परमेश्वर की आयु भी सौ वर्ष की कर दी, और वह भी सर्व देवों के आशीर्वाद के साथ।

सज्जनों ! सुनों "एक भिखारिन बुढ़िया को मेरठ कमिश्नर **"श्री मार्श"** ने दस रुपये दे दिये। बुढ़िया दस रुपये का नोट देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसने आशीर्वाद में कमिश्नर साहब को कहा कि—"परमात्मा करे, बेटा तू पटवारी हो जाये।" श्रोताओं में हँसी…… । आप उस बुढ़िया से भी आर्शीवाद देने में बहुत आगे बढ़ गये. आपने कभी भी न मरने वाले **परमेश्वर** को सौ वर्ष तक जीवित रहने का आर्शीवाद दे दिया। श्रीमान् जी इस मन्त्र में परमेश्वर की मूर्ति पत्थर की बनाने का विधान नहीं है। इसमें तो ब्रह्मचारी (विद्यार्थी) को आर्शीवाद है कि, तेरा शरीर पत्थर जैसा मजबूत हो जाय। कौशिक सूत्र में भी इस मन्त्र का विनियोग—विद्यार्थी को पत्थर पर बैठाकर आर्शीवाद देने में ही है। पर दिन-रात भंग भवानी की गोद में सोने वालों कों ग्रन्थ पढ़ने का अवकाश कहां ? रही चित्र पर जूता मारने की बात ! ये आपने खूब कही। श्रीमान जी ! चित्र इसलिए है कि चित्र वाले के चित्र को देखें और उसके चरित्र को याद करें। **"चित्र पर जूता मारना और फूल चढ़ाना दोनों ही मूर्खता हैं।"** श्रोताओं में हँसी…… मैं दोनों में से एक मूर्खता को भी नहीं करूँगा और यह कोई युक्ति भी नहीं है कि जिस वस्तु को अपना इष्ट देव न मानते हों, और जिसकी पूजा न करते हों तो उस पर जूता मारो, अगर आपकी दृष्टि में ऐसा ही है तो आपके सिर पर यह जो पगड़ी है, यह ब्रह्मा, विष्णु, शिव किसी भी आपके इष्टदेव की मूर्ति नहीं है, आप इसकी पूजा आदि भी नहीं करते हैं तो इसको मेज पर रखकर इसके ऊपर पांच जूते गिनकर मार दीजिये और अभी पाँच रुपये इनाम में लीजिये। आप अगर खुद न मार सकें तो अन्य किसी से लगवा दीजिये। और अभी तुरन्त इनाम प्राप्त करिये।

श्रोताओं में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ बेहद हँसी…… आपको मेरा पिता बनने की बहुत आवश्यकता हो रही है। इसमें कुछ गुप्त रहस्य तो नहीं है ? पत्नी का पिता भी पिता ही कहलाता है, जिसको उर्दू वाले **"कानूनी बाप"** और अंग्रेजी वाले **"फादर इन ला"** कहते हैं। संस्कृत में भी कहा जाता है। **"जनकश्चोपनेता च पत्नी तातस्तथैव च"** आप ऐसा ही पिता बनना चाहते हैं क्या ? जनता में अपार हँसी…… उस्तरे को नमस्ते, माननी ही पड़ेगी। क्योंकि स्वामी जी ने लिखी है। पण्डित जी आपसे एक बात पूछता हूं, ये जो हजारों लोग श्रोता के रूप में बैठे हैं, आप इनको बिल्कुल ही मूर्ख समझकर उत्तर दे रहे हैं जबकि इनमें, वकील, डाक्टर, शास्त्री, आचार्य एवं और भी अच्छे योग्य व्यक्ति उपस्थित हैं। मैं अब आपकी पोल अच्छी तरह खोलता हूं।

मैं सनातनधर्म पक्ष के श्री प्रधान जी से पूछता हूं और प्रार्थना करता हूं कि मैंने आपको ऋषि दयानन्द जी महाराज की लिखी संस्कार विधि दी है। और यजुर्वेद का भाष्य भी महर्षि दयानन्द जी का दिया है। उसमें **"शिवो नामासि"**—मन्त्र के भाष्य पर चिन्ह लगाकर दिया है, कृपा करके आप वताओ कि इसमें "उस्तरे को नमस्ते" है ? इन्होंने तो बताना है नहीं, ऐसे ही व्यर्थ में समय वरबाद करते रहेंगे।

नोट :—श्री प्रधान जी तभी तत्काल दोनों पुस्तकें हाथ में लेकर उठे और बोले—सज्जन पुरुषो ! आर्य समाज के महाविद्वान पण्डित जी ने मुझसे जो पूछा है उसके उत्तर में मैं निवेदन करता

हूं कि, ऋषि दयानन्द जी की संस्कार विधि में "**उस्तरे को नमस्ते**" कहीं नहीं है। इतना सुनते ही श्रोताओं के नारों से आकाश गूंज उठा ! बोलो वैदिक धर्म की, जय ! बोलो महर्षि दयानन्द की, जय ! श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी की, जय।

नोट : -श्रीकृष्ण जी शास्त्री श्री प्रधान जी पर बहुत बिगड़े और बोले, आप कुछ नहीं जानते हैं, आपने शास्त्रार्थ का नाश कर दिया। फिर प्रधान जी ने कहा—

श्री प्रधान जी —

मैं आर्य समाज के पण्डित जी की योग्यता और सभ्यता दोनों पर बहुत मुग्ध हूं। मेरा मत है कि, "**आपने सनातन धर्म के पक्ष को बिल्कुल हरा दिया**" श्री प्रधान जी कुर्सी छोड़कर यह कहते हुए चले गये कि—मैं अब प्रधान नहीं रहूंगा। यदि शास्त्रार्थ आगे चलाना है, तो प्रधान किसी और को बना लें। ऐसी घोषणा करके प्रधान जी तो सभा से ही चले गये। सभा में गड़बड़ और हलचल मच गयी श्री कृष्ण जी भी उठ कर चले गये। सभा भंग हो गयी। शास्त्रार्थ समाप्त हो गया। आर्य समाज की ओर से घोषणा की गई कि—"**कल का शास्त्रार्थ "मृतक श्राद्ध" विषय पर निश्चित है**" अतः वह यहीं इसी स्थान पर होगा। धन्यवाद !!

अगले दिन दिनांक १२-१२-१९४० ई० का विवरण

मियानी जिला सरगोधा (पंजाब) जो अब पाकिस्तान में है। वहां आर्य समाज और सनातन धर्म के मध्य तीन शास्त्रार्थ होने निश्चित हुए थे। १. क्या स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ वेदानुकूल है ? (१० दिसम्बर सन् १९४० ई०) २. क्या मूर्ति पूजा वेदानुकूल है ? (११ दिसम्बर सन् १९४० ई०) ३. क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है ? (१२ दिसम्बर सन् १९४० ई०)।

शास्त्रार्थ कर्त्ता—आर्य समाज की ओर से—

१. श्री पण्डित बुद्धदेव जी मीरपुरी, २. (मैं) अमरसिंह, आर्यपथिक, ३. श्री पण्डित मनसाराम जी वैदिक तोप।

शास्त्रार्थकर्ता सनातन धर्म की ओर से—

१ श्री पण्डित श्रीकृष्ण जी शास्त्री,

प्रथम दिन का शास्त्रार्थ —

क्या स्वामी दयानन्द जी कृत ग्रन्थ वेद विरुद्ध है ? इस विषय पर दिनांक दस दिसम्बर सन् **१९४० को दिन में दो बजे से ५ बजे** तक तीन घण्टे शास्त्रार्थ होना निश्चित हुआ था। **सनातन धर्म सभा**

की ओर से, प्रश्नकर्त्ता श्री पण्डित श्रीकृष्ण जी शास्त्री थे, और उत्तर दाता श्री पण्डित बुद्धदेव जी मीर पुरी थे। समय पर शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ, श्री पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री ने प्रश्न किये, श्री पण्डित बुद्ध देव जी मीर पुरी उत्तर देने लगे। सनातन धर्म सभा के मंच के आगे लगभग बीस लड़के सनातन धर्मियों ने बिठाये हुए थे, जिनको सिखला कर लाया गया था कि, श्री कृष्ण जी शास्त्री जब भी हाथ से संकेत करें। तभी वह सारे उठ कर बीच में नाचने और हल्ला करने लगे।

पण्डित श्री कृष्ण शास्त्री के प्रश्नकाल में वह टोली चुपचाप बैठी रहती थी, और श्री पण्डित बुद्ध देव जी मीर पुरी के उत्तर देने के समय में श्री कृष्ण शास्त्री जी का संकेत होते ही, वह टोली, नाचने और जोर-जोर से गीत गाने लगती, जिससे श्री पण्डित बुद्ध देव जी मीर पुरी की आवाज दब जाती थी, कुछ भी समझ में नहीं आता था, कि क्या कहा, क्या नहीं कहा, लगभग एक घण्टे तक इसी प्रकार की बड़बड़ होती रही। नगर के सभ्य सज्जनों ने सम्मति करके शास्त्रार्थ बन्द करा दिया। पश्चात कुछ समझदार लोगों की समिति बनी, उसमें विचार हुआ कि, अगले होने वाले, दो शास्त्रार्थ कराये जावें या वह भी बन्द करा दिये जावें, फिर अन्त में काफी विचार विमर्श होने के बाद यही निश्चय हुआ कि शास्त्रार्थ तो अवश्य कराये जावें, परन्तु इस गड़बड़ी का इलाज करके ही शास्त्रार्थ कराये जायें।

दूसरे दिन का शास्त्रार्थ—

उस समिति के तत्वावधान में यह दूसरा शास्त्रार्थ मेरे साथ ग्यारह दिसम्बर को दिन के ठीक दो बजे प्रारम्भ हुआ। और ढाई घण्टे से कुछ पाँच-सात मिनट आगे तक ही चल पाया था, कि, पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री का अपने ही पक्ष के श्री प्रधान जी से झगड़ा हो गया। श्री प्रधान जी अध्यक्ष पद की कुर्सी छोड़कर चले गये, और शास्त्रार्थ समाप्त कर दिया गया।

तीसरे दिन का शास्त्रार्थ—

"क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है ?" पूर्व निश्चयानुसार ठीक वहीं १२ दिसम्बर को प्रातः आठ बजे से ११ बजे तक पूरे तीन घण्टे होना निश्चय हुआ। जिसमें आर्य समाज की ओर से श्री पण्डित मनसाराम जी वैदिक तोप तथा सनातन धर्म की ओर से श्री पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री नियुक्त हुए।

तीसरे दिन के शास्त्रार्थ का अध्यक्ष—

(मैं) "अमर सिंह आर्य पथिक" नियत हुआ। प्रातः आठ बजे से पहले शास्त्रार्थ के लिए दोनों पक्षों के निमित्त आर्य समाज की ओर से दो मंच बना दिये गये। दोनों ओर तख्त बिछाए गए, दोनों ओर कुर्सियां व मेजें लगा दी गईं, आर्य समाज की ओर से, (मैं) ठाकुर अमर सिंह अध्यक्ष और शास्त्रार्थ कर्त्ता—श्री पण्डित मनसा राम जी वैदिक तोप तथा प्रमाण निकालने वाले, सहायक श्री बुद्ध देव जी मीरपुरी। हम लोग अपने मञ्च पर विराजमान हो गये, मनों पुस्तकों को नित्य की भांति चुन दिया गया, ठीक घड़ी ने आठ बजे की घण्टी दी। आठ बजे का अलार्म पहले ही भरकर रख दिया गया था।

शास्त्रार्थ आरम्भ करने का समय हो गया ! सनातन धर्म सभा की ओर से शास्त्रार्थ करने कोई नहीं आया। कुछ देर प्रतीक्षा करके, शास्त्रार्थ के अध्यक्ष की हैसियत से मैंने (अमरसिंह) ने घोषणा की कि, सनातन धर्म की ओर से, शास्त्रार्थ कर्त्ता कोई नहीं आये हैं। पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री उपस्थित नहीं है। समय व्यर्थ न जाये, और आये हुए उपस्थित श्रोताओं को कुछ लाभ पहुंचे इस दृष्टि से में श्री पण्डित मनसा राम जी वैदिक तोप से निवेदन करता हूं। कि वह शास्त्रार्थ के विषय "मृतक श्राद्ध" पर व्याख्यान आरम्भ करने की कृपा करें। जिससे सब समझ लें कि सनातन धर्म का पक्ष हार गया।

नोट :—मैंने जब हारने का नाम लिया, तो इतना सुनते ही एक ग्रेजुएट युवक सनातन धर्मी उठ खड़ा हुआ कि —आप व्याख्यान आरम्भ न करें। थोड़ी देर प्रतीक्षा कर लें। मैं स्वयं अभी जाकर अपने पण्डित जी को बुला कर लाता हूं। तब मैंने उस युवक को कहा —ठीक है बेटे। पर व्याख्यान तो अवश्य आरम्भ होगा और अभी होगा, मगर ज्यों ही आप अपने पण्डित जी को लेकर आयेंगे, मैं तुरन्त कह कर व्याख्यान बन्द करा दूंगा, ऐसी मेरी घोषणा है, आप तुरन्त बुला कर लाइये। वह नवयुवक पण्डित जी को बुलाने चला गया। इधर मैंने पण्डित श्री मनसाराम जी वैदिक तोप से प्रार्थना करके व्याख्यान आरम्भ करवा दिया। इधर व्याख्यान आरम्भ हो गया उधर वह नवयुवक उस मन्दिर में गया, जहां पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री ठहरे हुए थे। उस समय पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री अपने नित्य नियमानुसार अपने पीने के लिए बादाम व भंग भवानी को घोट रहे थे। उस युवक ने जाकर कहा —पण्डित जी ! जल्दी चलिये, वहां शास्त्रार्थ के क्षेत्र में हजारों व्यक्ति आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री ने गर्ज कर कहा – करने दो इन्तजार करते हैं तो, मैं नहीं जाता हूं। उस युवक ने कहा—वहां सनातन धर्म की बहुत हँसी उड़ रही हैं, और बड़ा भारी अपमान सनातन धर्म का उन लोगों के द्वारा हो रहा है। और आप यहां भंग घोट रहे हैं। पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री बोले—यह मैं आज थोड़े ही घोट रहा हूं। यह तो मैं नित्य ही घोटता हूं। किसी के बाप का क्या लेता हूं ? सनातन धर्म का अपमान होता है तो होने दो, जब कल मेरा अपमान भरी सभा में किया गया था, तब ये सनातन धर्मी लोग कहां गये थे ? क्यों मेरा अपमान करवाया था ? और तुमने ही कल उन्हें क्यों नहीं रोका था ? अब हँसी उड़ने दो ! होने दो अपमान !! मैं शास्त्रार्थ नहीं करूंगा !!! मैं किसी भी कीमत पर नहीं जाऊँगा। युवक ने कहा - ठीक है, चलता हूं, तुम्हारी असलियत का पता चल गया। उस युवक को आते देखकर मैंने श्री पण्डित मनसाराम जी वैदिक तोप को रुकने का इशारा किया। उन्होंने व्याख्यान बन्द कर दिया।

मैंने कहा— लो भाई शायद लगता है, पण्डित जी महाराज आ गये। बड़े ही हर्ष की बात है। अब शास्त्रार्थ आरम्भ होगा। सब श्रोता लोगों में सन्नाटा छा गया। वह नवयुवक अकेला ही आया, उसे जब पूछा गया कि भाई क्या बात है, पण्डित जी कहां हैं ? तो उस नवयुवक ने गुस्से में आकर जो वार्तालाप पण्डित जी से हुई थी कह डाली, जिसका वर्णन ऊपर किया गया हैं। सारी सभा में तालियों की गड़गड़ाहट ...... मैंने श्रोताओं को शान्त करके श्री पण्डित मनसाराम जी वैदिक तोप का व्याख्यान पुनः आरम्भ करा दिया। श्री पण्डित मनसाराम जी ने जो प्रबल खण्डन किया, कि मृतक श्राद्ध की धज्जियां उड़ा कर रख दी।

नोट :—"श्री पण्डित मनसाराम जी वैदिक तोप, पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा में उपदेशक थे, एवं मैं और श्री पण्डित बुद्धदेव जी मीरपुरी हम लोग आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा में थे, परन्तु जब कहीं शास्त्रार्थ होता था, तो हम तीनों एक साथ ही जाते थे। हमारा तीनों का निश्चय था कि हम में से एक शास्त्रार्थ करेगा, एक प्रमाण छांटेगा, तथा एक प्रधान (अध्यक्ष) बनेगा।"

यह शास्त्रार्थ और सारा विवरण मेरे पास उसी समय का सुरक्षित रखा हुआ था। वैसे इसके कागज काफी खस्ता हालत में हो गये थे। कहीं-कहीं यह गल भी गये थे, बड़ी कठिनाई से मैंने उसकी प्रतिलिपि करके **श्री लाजपतराय अग्रवाल** जी को दी। १२ दिसम्बर को श्री पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री तथा उनके साथी श्री बाबा चमन लाल जी भजनोपदेशक को किसी सनातन धर्मी ने भोजन तक भी नहीं कराया, दिन भर दोनों भूखे ही रहे, रात्रि को एक सिक्ख सज्जन ने बहुत ही श्रद्धा एवं आग्रह के साथ मुझे तथा श्री पण्डित बुद्ध देव जी मीरपुरी और श्री पण्डित मनसाराम जी वैदिक तोप, तीनों के लिए भोजन का प्रबन्ध अपने घर पर कराने का निश्चय किया, और हमसे आकर पूछा कि—पण्डित जी मेरी इच्छा है आपके साथ-साथ उन दोनों सनातन धर्मी पण्डितों को भी भोजन करवाऊँ। आप अगर आज्ञा दें तो उनको बुलवा लूं। हमने कहा अवश्य बुलवा लीजिये हमें एक साथ भोजन करके बड़ी प्रसन्नता होगी। आप उनको तुरन्त बुलवाइये। पांचों पण्डितों के लिए इकट्ठा भोजन का प्रबन्ध उसी घर में हुआ। पांचों पंडितों ने बड़े प्रेम से मिलकर भोजन किया। हमारी उदारता, सभ्यता एवं सद्भावना का उस सिक्ख परिवार के ऊपर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा। भोजनोपरान्त श्री पंडित श्री कृष्ण जी शास्त्री ने कहा—

ठाकुर साहब ! आपका अध्ययन बहुत है। मैंने कहा, सो तो है परन्तु मैं यह पूछता हूं कि आज आप शास्त्रार्थ करने क्यों नहीं आये ? पंडित जी ने कहा—

मूर्ति पूजा वाले शास्त्रार्थ में कल प्रधान जी ने मेरा घोर अपमान किया था। और सनातन धर्म के अन्य अधिकारियों ने भी मेरा पक्ष न लेकर आपका ही पक्ष लिया। और मेरा अपमान किया, हम तो इनके साध्य पक्षों को लेकर इनकी वकालत करते फिरते हैं, और इनका यह व्यवहार है। यही सोच कर मैं शास्त्रार्थ करने नहीं आया। और मैंने कह दिया कि, शास्त्रार्थ कराना हो तो कोई दूसरा पंडित ढूंढ़ लो। श्री बाबा चमन लाल जी कहने लगे कि, आज उन धूर्तों ने हमारे प्रातःराश और भोजन का भी प्रबन्ध नहीं किया था। इस प्रकार से हमारी वार्ता समाप्त हुई और हमने एक दूसरे से बिदाई ली।

"अमर स्वामी परिव्राजक"

नोट—इसी ग्रन्थ के द्वितीय व तृतीय भाग भी छप चुके हैं, आप अन्य विद्वानों के शास्त्रार्थों का स्वाध्याय करना चाहें तो शेष भाग भी मंगा कर अवश्य पढ़ें।

"प्रबन्धक"
(अमर स्वामी प्रकाशन विभाग)

पांचवां शास्त्रार्थ--

स्थान : होशियारपुर (पञ्जाब)
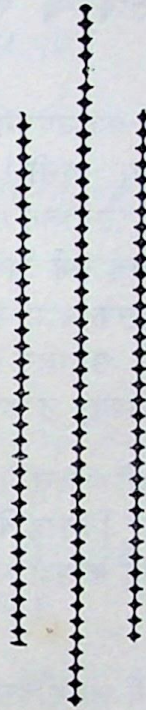
दिनाङ्क : २४ मार्च, सन् १६३५ ई० (दिन के चार बजे)
विषय : क्या विधवा विवाह सनातन धर्म शास्त्रों के अनुकूल है ?
प्रधान : श्री पण्डित मूलराज जी शर्मा
श्री सनातन धर्म विधवा विवाह सहायकसभा-होशियारपुर की ओर से शास्त्रार्थकर्त्ता : श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी
उपस्थित : श्री पण्डित गंगाशरण जी शर्मा
श्री पण्डित मलिक बेलीराम जी शास्त्री (एम० ए०, एम० ओ० एल०)
श्री सनातन धर्म होशियारपुर की ओर से शास्त्रार्थकर्ता : श्री पण्डित कालूराम जी शास्त्री
सहायक : श्री पण्डित अखिलानन्द जी "कविरत्न" (सनातन धर्मी)
श्री सनातन धर्म विधवा विवाह सहायक सभा के मन्त्री : श्री दौलतराम जी शर्मा बी०ए०, एल०एल०बी० (एडवोकेट) होशियारपुर
श्री सनातन धर्म सभा होशियारपुर के मन्त्री : प्रिंसिपल जगतराम जी (संस्कृत कालेज) होशियारपुर

होशियारपुर का अद्भुत शास्त्रार्थ
[सनातन धर्मियों का शास्त्रार्थ सनातन धर्मियों के साथ]

"होशियारपुर" पंजाब में उस प्रान्त का उपवन (गार्डन) कहलाता है। इस नगर में एक नई "सनातन धर्म विधवा विवाह सहायक सभा" बनी। श्री पंडित दौलतराम जी बी.ए. एल.एल.बी. (एडवोकेट) उसके संचालक थे। जब कि एक "सनातन धर्म सभा" इस नगर में पहले से ही विद्यमान थी। उस प्राचीन सनातन धर्म सभा ने "सनातन धर्म विधवा विवाह सहायक सभा" को लिखा कि— यह सभा केवल "विधवा विवाह सभा" रहे इसके नाम के साथ से "सनातन धर्म" नाम हटा दिया जाये। यदि न हटावें तो "विधवा विवाह को सनातन धर्म के अनुकूल सिद्ध करने के लिए शास्त्रार्थ करें"। उसने "सनातन धर्म" नाम हटाना स्वीकार न करके शास्त्रार्थ करना स्वीकार कर लिया।

श्री पंडित मौलिचन्द्र जी शर्मा और श्री पंडित नेकीराम जी शर्मा भिवानी वाले दोनों "नेता" और प्रभावशाली "वक्ता" थे दोनों ही विधवा विवाह के पक्ष में थे। इनसे जब शास्त्रार्थ करने की गई तो दोनों ने कहा व्याख्यान विधवा विवाह के पक्ष में तो हम दे सकते हैं परन्तु शास्त्रार्थ नहीं कर प्रार्थना की सकते।"

श्री पंडित केदारनाथ जी (श्री आचार्य लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित के पूज्य पिता जी) ने भी ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी को बुलाने का प्रस्ताव किया। श्री पंडित नेकीराम जी शर्मा ने भी समर्थन किया, श्री पंडित केदारनाथ जी ने श्री ठाकुर अमरसिंह जी को बुलवा लिया, ठाकुर साहिब तीन मन से भी अधिक पुस्तकें लेकर होशियारपुर पहुंच गये।

शास्त्रार्थ का विषय निश्चय हुआ—"**क्या विधवा विवाह सनातन धर्म ग्रन्थों के अनुकूल है ?**"

सनातन धर्म सभा की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता श्री पंडित कालूराम जी शास्त्री नियत हुए और उनके सहायक थे श्री पंडित अखिलानन्द जी कविरत्न।

पंडित कालूराम जी अपने नाम के साथ "युक्ति विशारद" लिखते लिखाते थे पर यहां शास्त्रार्थ के नियमों में उन्होंने निश्चय कराया कि—शास्त्रार्थ में युक्तियां नहीं दी जायें।

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी को सम्मुख आया देखकर पंडित अखिलानन्द जी ने उनको पहचान लिया। तो उन्होंने पण्डित कालूराम जी को शास्त्रार्थ से पहले उनके कान में यह बात बता दी, क्योंकि पण्डित कालूराम जी प्रज्ञाचक्षु थे। तब शास्त्रार्थ आरम्भ करने से पहले पण्डित कालूराम जी ने विशेष रूप से पूछा कि—आपका शुभ नाम क्या है ? श्री ठाकुर जी ने कहा मेरा नाम वही है जो श्री कविरत्न अखिलानन्द जी जानते है ! (सभा में हँसी) तो भी बताइये तो ! श्री ठाकुर जी

ने अपना नाम लिया ! पंडित अखिलानन्द जी ने कहा कि--आप तो आर्य समाजी हैं, श्री ठाकुर जी ने कहा—जी हां कट्टर ! पक्का !!

पूछा गया कि—फिर आप सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ करने कैसे आये हैं ?

श्री ठाकुर जी ने तत्काल उत्तर दिया कि—**"मैं इनका वकील हूं"** इस उत्तर पर बड़ी तालियां बजी और बड़ी प्रसन्नता प्रकट की गई।

कविरत्न जी ने कहा कि = फिर आप कहेंगे कि—मैं इन ग्रन्थों को नही मानता हूं।

श्री ठाकुर जी ने कहा—आज ऐसी आवश्यकता ही नहीं होगी।

आज मैं यह सिद्ध करूँगा कि—"विधवा विवाह" सनातन धर्म ग्रन्थों के अनुकूल है विरुद्ध नहीं। मैं उन सब ग्रन्थों के प्रमाण दूंगा जिनको मेरा मवक्किल (*Client*) मानता है और आप भी उन ग्रन्थों को मानते हैं।

मैं उन सब ग्रन्थों से आपके इस पक्ष को कि—**"विधवा विवाह सनातन धर्म ग्रन्थों के विरुद्ध है—कदापि सिद्ध नहीं होने दूंगा"।**

चारों ओर से अपार हर्षध्वनि हुई और बहुत तालियां बजी। करतल ध्वनि के साथ **शास्त्रार्थ के लिए श्री ठाकुर अमरसिंह जी खड़े हो गए।**

नोट :—यह पूरी वार्ता पूज्य अमर स्वामी जी महाराज से पूछ कर दी गयी है।

"लाजपतराय अग्रवाल"

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

धर्मानुरागी सज्जनों ! आज के शास्त्रार्थ में यह निर्णय होगा कि, "विधवा विवाह सनातन धर्म शास्त्रों के अनुकूल है या प्रतिकूल" ? या दूसरे शब्दों में यूं कहिए कि—"विधवा विवाह धर्म है, या अधर्म" ? धर्मज्ञ मनु जी महाराज कहते हैं कि—

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥१२॥

(मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक १२,)

धर्म के साक्षात् चार लक्षण कहे गए हैं। १. वेद, २. स्मृति (धर्म शास्त्र) ३. सदाचार (इतिहास) ४. जो आत्मा को प्रिय हो।

"वेदोऽखिलो धर्ममूलम्" (मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक ६,) वेद अखिल धर्म का मूल है। और देखिये—**"धर्म जिज्ञासमानानां प्रामाणं परमं श्रुतिः।"** (मनुस्मृति अध्याय २, श्लोक १३) अर्थात् धर्म जानने की इच्छा रखने वालों के लिए परम प्रमाण वेद ही है। इसलिए सर्वप्रथम मैं वेद में से ही प्रमाण देता हूं। देखिये अथर्ववेद में कहा है—

या पूर्वं पतिवित्वा अथान्यं विन्दते परम्। पञ्चौदनं च तावजं ददातो न वियोषितः ॥२७॥
समान लोको भवति पुनर्भुवा परः पतिः। योऽजं पञ्चौदनं दक्षिणा ज्योतिषं ददाति ॥२८॥
(अथर्ववेद काण्ड ६५ मन्त्र २७, २८)

जो स्त्री पहले पति को प्राप्त करके उसके मरने पर दूसरे पति को प्राप्त होती है, वह स्त्री और उसका वह दूसरा पति अजपंचोदन हवन करे। तो फिर वियोग को प्राप्त न हों। दूसरी बार विवाह करने वाली वह स्त्री और उसका पति दोनों पहले विवाह करने वाले के समान लोक (दर्जे) वाले ही होते हैं। उनसे इनमें कुछ भेद नहीं होता है। यह दो प्रमाण वेद के हुए, अब स्मृति (धर्म शास्त्र) के प्रमाण लीजिये।

सा चेदक्षतयोनिः स्याद्गतप्रत्यागताऽपि वा। पौनर्भवेन भर्त्रा सा पुनः संस्कारमर्हति ॥१७६॥
(मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक १७६,)

अक्षत योनि अर्थात् विधवा स्त्री का दूसरा विवाह हो जाना चाहिये। और सुनिये—

नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीवे च पतिते पतौ। पंचस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते ॥३०॥
(पाराशर स्मृति अध्याय ४ श्लोक ३०,)

पति के लापता होने या मरजाने अथवा सन्यासी हो जाने या नपुंसक (नामर्द) हो जाने और धर्म से पतित हो जाने रूप पांच आपत्तियों में स्त्री को दूसरे पति का विधान है। यह हुआ स्मृति का प्रमाण ! अब सदाचार सत्पुरुषों का आचार (इतिहास) पर भी नजर डालिये। यदुकुल कमल दिवाकर श्री कृष्ण चन्द्र जी महाराज योगीराज के परम सखा श्री अर्जुन का विवाह उलूपी नाम्नी विधवा के साथ हुआ। देखिये महाभारत में कहा गया है कि—

अर्जुनस्य सुतः श्रीमानिरावान्नाम वीर्य्यवान्। स्नुषायां नागराजस्य जातः पार्थेन धीमता ॥७॥
ऐरावतेन सा दत्ता अनपत्या महात्मना। पत्यौहते सुपर्णेन कृपणा दीनचेतना ॥८॥
भार्यार्थं तां च जग्राह पार्थः कामवशानुगाम्। एवमेष समुत्पन्नः परक्षेत्रेऽर्जुनात्मजः ॥९॥
(महाभारत भीष्म पर्व अध्याय, ९ श्लोक ७, ८, ९,)

उलूपी के पति के मरने पर ऐरावत ने यह सन्तानहीन स्त्री अर्जुन को दी, अर्जुन ने उसे अपनी स्त्री बनाया, और बुद्धिमान अर्जुन द्वारा, इरावान् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। श्री कृष्ण चन्द्र जी महाराज ने अर्जुन के इस कार्य को कभी बुरा नहीं कहा। ये हुई इतिहास की बात ! अब सुनिये चौथी आत्मप्रियता की बात। आत्मप्रियता के बारे में श्रीकृष्णचन्द्र जी गीता में कहते हैं कि—**"आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन"** (श्रीमद्भगवद् गीता अध्याय ६ श्लोक ३२) आत्मप्रियता

के बारे में महर्षि व्यास जी कहते हैं कि – **"आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत"** (महाभारत) अर्थात् जो कार्य अपनी आत्मा के विरुद्ध हों उन्हें दूसरे के विरुद्ध न करें। प्रत्येक मनुष्य अपने-अपने आत्मा से पूछे कि उसकी इच्छा विवाह करने की होती है या नहीं ? जब पुरुष एक स्त्री के मरने पर दूसरी, तीसरी, चौथी, पांचवीं, चाहे जितनी स्त्रियां विवाहता रहता है, और सत्तर-सत्तर वर्ष के बूढ़े भी विवाह करने की इच्छा रखते हैं तो किसी को क्या अधिकार है ? कि वह एक विधवायुवती से कहे कि तू विवाह न कर।

नोट :—इस पर सनातन धर्म सभा के प्रधान ने कहा कि "आप युक्ति न देवें केवल प्रमाण ही देने का कष्ट करें।" क्योंकि शास्त्रार्थ के नियमों में ऐसा ही निश्चय है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

प्रधान जी ! मैं तो मनु के प्रमाणों से धर्म के चारों लक्षणों के अनुकूल विधवा विवाह को सिद्ध कर रहा हूं, मैंने इन प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि—विधवा विवाह वेदानुकूल और शास्त्र सम्मत है, इतिहास कहता है कि, पूर्वजों ने भी किया है तथा आत्मा के अनुकूल भी है, पण्डित जी इसका निर्णय करें, और इसी प्रकार वेद आदि के प्रमाण विधवा विवाह के विरुद्ध देवें।

श्री पण्डित कालूराम जी शास्त्री –

सज्जनों ! ठाकुर साहब ने जो दो वेद मन्त्र बोले हैं, इनका विधवा विवाह "देवता" नहीं है निरुक्त में कहा गया हैं कि—"**या तेनोच्यते सा देवता**" जिस मन्त्र में जो विषय है, वही उसका देवता है। सो इन मन्त्रों का विधवा विवाह देवता ही नहीं, तो इनसे विधवा विवाह कैसे सिद्ध हो जायेगा ? दिखाने का कष्ट करें क्या विधवा विवाह इनका देवता है ? ये तो दोनों मन्त्र विवाह से पहिले जब सगाई हो गई हो और वह मर जाय जिसके साथ सगाई हुई, तब दूसरे पति के साथ विवाह करने की आज्ञा देते हैं। मन्त्र में कहा है—"**या पूर्वं पतिंत्त्वा अथान्यं विन्दते परम्**" (अथर्ववेद काण्ड ९ सूक्त ५, मन्त्र २७,) पहिले पति को (वित्वा) जान कर प्राप्त करके नहीं बल्कि उसके मरने पर दूसरे से विवाह करती है। जिसको अभी जाना ही है। सगाई हुई है, प्राप्त नहीं किया, विवाह नहीं हुआ। उसके मरने पर दूसरे का विधान है। आपने "**सा चेदक्षत योनि** ·····" यह मनुस्मृति का प्रमाण दिया है, इससे पहला श्लोक नहीं पढ़ा, जिसमें मनु जी कहते हैं—जो घर से भाग गई हो और बाहर से अक्षतयोनि होकर आयी हो, उससे जो सन्तान हो, उसके साथ विधवा का विवाह करे। भागी हुई का क्या जिक्र है ? विधवा का विवाह दिखाइये। "**नष्टे मृते** ···" यह पाराशर स्मृति का श्लोक आपने पढ़ा, इसमें भी सगाई के बाद का जिक्र है। विवाह के बाद का नहीं। फिर इससे आगे का श्लोक पढ़िये, जिनमें विधवा को दो ही आज्ञा दी गई हैं। (१) आजन्म ब्रह्मचारिणी रहने की (२) पति के साथ सती हो जाने की ! श्लोक यह है सुनिये—

मृते भर्तरि या नारी ब्रह्मचर्य्यव्रते स्थिता। सामृता लभते स्वर्गं यथा ते ब्रह्मचारिणः॥२६॥
तिस्रकोट्योऽर्द्ध कोटी च यानि लोमानि मानवे। तावत्कालं वसेत्स्वर्गे भर्तार यानुगच्छति॥२७॥

(कलकत्ते में प्रकाशित —पाराशर स्मृति अध्याय ४ श्लोक २६, २७,)

अर्थात्—जो विधवा ब्रह्मचारिणी रहती है, वह स्वर्ग में जाती हैं। जो सती हो जाती है, वह इतने स्वर्गों को जाती है, जितने उसके शरीर पर बाल हैं।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज ! विधवा विवाह-देवता वाली बात आपने खूब कही ! आप इतने विद्वान पुरुष हैं, आपको ऐसी नासमझी की बातें नहीं करनी चाहिए। आपने मुझसे विधवा विवाह-देवता पूछा है, सो कृपा करके नोट करिये –और अपनी बारी में सर्व प्रथम किसी मन्त्र का विधुर (रण्डुआ) विवाह देवता बताइये ?

कन्या विवाह देवता, और आपके किये अर्थ के अनुसार वाग्दत्ता विवाह (जिसकी-सगाई हो गयी है) देवता बताइये। अच्छा चलो, छोड़ो सब बातों को, आप वेद में कहीं किसी मन्त्र में विवाह देवता ही दिखा दें, आपकी विजय हो जायेगी और मेरी पराजय ! यदि न दिखा सके तो सारे विवाह कराने छोड़ दें क्योंकि किसी भी मन्त्र का विवाह देवता नहीं है। या तो अपनी बारी में, सर्व प्रथम ये देवता दिखा दीजिये, अन्यथा विधवा विवाह देवता वाला प्रश्न सदा के लिए छोड़ दीजिये। मन्त्रों का अर्थ आपने सगाई पर लगाया है, और इस आधार पर कि,-शब्द "वित्वा" का अर्थ है, "जान करके"। "प्राप्त करके नहीं" शोक ही नहीं महाशोक है आप विद्वान होकर ऐसी बात करते हैं।

पण्डित जी महाराज ! "**वित्वा**" विद्लृलाभे से बना है। जिसका अर्थ **'प्राप्त करके"** ही होता है। न कि "जान करके" विद ज्ञाने से बनता तो "**जान करके**" अर्थ होता, सो विद् ज्ञाने से "वित्वा" नहीं बनता "**विदित्वा**" बनता है, इसलिए ये दोनों मन्त्र स्पष्ट विधवाविवाह का विधान करते हैं। फिर दोनों मन्त्रों का अर्थ जो मैंने किया है, वही अर्थ (प्रसिद्ध सनातन धर्मी) पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न ने "वैधव्य विध्वंसन चम्पू" नामक पुस्तक में किया है। पूछ लीजिये आपके पास ही विराजे हुए हैं। आपने "**सा चेदक्षत योनि**"इससे पूर्व का श्लोक पूछा है। सो वह यह है, नोट करिये—

या पत्यावा परित्यक्ता विधवा वा स्वेच्छया। उत्पादयेत्पुनुर्भू त्वा स पौनर्भव उच्यते ॥

अर्थात् पहले पति ने जो त्याग दी हो, अथवा विधवा हो, वह स्वेच्छा से विवाह करके जिस सन्तान को उत्पन्न करती है, वह पौनर्भव होती है। वह पति से त्यागी हुई, अथवा विधवा अक्षत योनि स्त्री दूसरे पति से विवाह करने योग्य है। पण्डित जी महाराज ! हमारी समझ में आपका यह वाक्य नहीं आया कि—**"जो घर से भाग गई हो"** और **"बाहर से अक्षत योनि होकर आई हो"।** बाहर से अक्षत योनि होकर किस प्रकार आई ? यह आप ही समझाइये ! और भागी हुई नहीं महाराज, बल्कि पति से त्यागी हुई हो अथवा विधवा हो, **"नष्टे मृते प्रव्रजिते** ····" इसमें सगाई की गन्ध भी नहीं है। और यदि यह श्लोक सगाई के बाद का विधान करता है विवाह के बाद का नही, तो आप कहते हैं कि —इससे अगले श्लोक में, स्त्री को आयु पर्यन्त ब्रह्मचारिणी रहने का उपदेश है। और उससे अगले में, सती होने का, तो क्या विवाह से पहले सगाई वाला लड़का मर जाये तो वह कन्या जिसका अभी विवाह भी नहीं हुआ, वह आयु भर ब्रह्मचारिणी रहे, या सती हो जाये, "**कुँआरी सती**" वाह क्या खूब !! आप कहते हैं, ये दोनों आज्ञा विधवा को हैं, तो क्या विवाह से पहले ही वह विधवा हो गई ? या

यह श्लोक ही ऐसा है कि जब मैं इसे विधवा विवाह का बताऊँ, तो यह सगाई का हो जाये परन्तु आपको जब विधवा को ब्रह्मचर्य तथा सती होने का उपदेश देना हो तब यही मन्त्र विवाह के बाद का "**विधवा परक**" बन जाये, वाह ! वाह !! कमाल है आपके भी।

विधवा के लिए यहां दो आज्ञा नहीं है बल्कि तीन हैं प्रथम यह है कि—विवाह कर लेवे, "**पतिरन्यो विधीयते**" द्वितीय—विवाह न करे तो ब्रह्मचारिणी रहे, और तृतीय ब्रह्मचारिणी न रह सके तो सती हो जाये, ये बाद की दो आज्ञायें खूब हुई कि उसे विवाह तो करने न दिया जाय और बलात् ब्रह्मचारिणी रक्खा जाय या सती कराया जाय, यानी कि विधवा को दो सजा हैं।

१. उम्रकैद (काला पानी) २. फाँसी। ध्यान रहे आपने विधवा विवाह के निषेध में कोई प्रमाण नहीं दिया है। वेद और शास्त्र का कोई प्रमाण दीजिये।

सनातनधर्मी श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

यह जो आपने मेरी पुस्तक से पढ़ा है। यह पूर्व पक्ष है, इसका उत्तर पक्ष देखे बिना इस पर कुछ न कहिये।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी —

महाराज जी ! क्या आप कृपा करके बतला सकते हैं, कि वह उत्तर पक्ष कहां है ?

सनातनधर्मी श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न —

वह दूसरी पुस्तक छप रही है उसके अन्दर है। "श्रोताओं में हँसी……"।

श्री पण्डित कालू राम जी शास्त्री—

अपने सम्बन्ध में कविरत्न जो ने कह ही दिया है। इस पर मैं कुछ नहीं कहता हूं। लीजिये विधवा विवाह के विरुद्ध प्रमाण, गीता में कहा है—

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्मा, सनातनाः। धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोभिभवत्युत ॥४०॥
अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियाः। स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः ॥४१॥
संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च। पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रिया ॥४२॥

(श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय, १ श्लोक—४०, ४१, ४२,)

इन श्लोकों में विधवा विवाह का कैसा स्पष्ट निषेध है। साफ कहा है कि, स्त्रियां दूषित हो जावेंगी और वर्ण संकर सन्तान उत्पन्न होंगी। जो नर्क में जावेंगी। आप ब्रह्मचर्य को काले पानी की सजा कहते हैं, और पवित्र सती धर्म को फांसी, यह ठीक नहीं है। मनु ने स्वयं विधवा विवाह का निषेध किया है—उसमें विधवा विवाह का विधान कैसे हो सकता है ? "**भाग गई हो**" साफ लिखा है। "**गतप्रत्यागतापिवा**" तथा "**नष्टे मृते**…… यह सगाई का मन्त्र है। भट्टो जी दीक्षित ने लिखा है, "**चतुर्विंशतिमतसंग्रह**" में देखिए। सारे शास्त्रों मैं ब्रह्मचर्य की महिमा कही गयी है, और सती होना,

बड़ा पवित्र धर्म है। मैंने इतने प्रमाण विधवा विवाह के विरुद्ध दिये, आप और कोई प्रमाण विधवा विवाह के पक्ष में दीजिए। पाराशर स्मृति का प्रमाण मनु के विरुद्ध होने से अप्रामाणिक है।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित अखिलानन्द जी कहते हैं कि उस पुस्तक में पूर्व पक्ष है, और उत्तर पक्ष की पुस्तक छप रही है ! यह खूब रही। यह नया ढंग निकाला है कि, पूर्व पक्ष और पुस्तक में हो, और उत्तरपक्ष किसी और पुस्तक में, और फिर आश्चर्य की बात यह हैं कि—पूर्व पक्ष वाली पुस्तक को छपे लगभग २५ वर्ष हो गये, उत्तर पक्ष वाली पुस्तक की आज घोषणा की जा रही है, पर पण्डित जी को पुस्तक लिखे देर हो गयी है। इस लिए भूल गये मालूम होते हैं। उस पुस्तक में पूर्व पक्ष और उत्तर पक्ष दोनों हैं। पूर्व पक्ष किसी और की ओर से रखकर पण्डित जी स्वयं उत्तर दे रहे हैं, और उसी उत्तर में ये मन्त्र यही अर्थ तथा अन्य अनेक प्रमाण हैं। इसके अतिरिक्त दूसरी पुस्तक "अथर्ववेदालोचन" में भी यही दोनों मन्त्र तथा यही अर्थ है। आगे पण्डित जी की अपनी सम्मति है कि—"**हम अक्षत योनि कन्या के पुर्नलग्न से सहमत हैं**"। कहिये महाराज जी ! क्या यह भी पूर्व पक्ष है ? आशा है अब आगे न बोलेंगे। अब श्री पण्डित कालूराम जी शास्त्री सुनें—मनुस्मृति में कहीं भी विधवा विवाह का निषेध नहीं है। यदि हैं तो दिखाइये ? और मैं तो कहता हूं, कि आप सनातनधर्म के किसी भी प्रामाणिक ग्रन्थ से दिखाइये। मनु ने—"**या पत्या वा परित्यक्ता**......" और "**साचेदक्षत योनिस्यात्**... " दोनों में साफ विधवा विवाह का विधान किया है। आपने मेरे किये अर्थ का खण्डन नहीं किया, और मेरा चैलेन्ज है कि कभी खण्डन नहीं कर सकेंगे।

"**नष्टे मृते**..." श्लोक कदापि सगाई के बाद का नहीं हो सकता, उसमें कोई शब्द सगाई के सम्बन्ध में नहीं है। इस श्लोक में पति और नारी शब्द पड़े हुए हैं। सप्तपदी से पहिले वह पति ही नहीं हो सकता, यथा—"**पतित्वं सप्तमे पदे**" देखिये—

पाणिग्रहणिका मंत्रास्तु नियतदारलक्षणम्"। तेषांनिष्ठा तु विज्ञेया विद्वद्भिः सप्तमे पदे ॥

(मनुस्मृति—अध्याय ८ श्लोक २२७,) चतुर्विंशति मत संग्रह पृष्ठ ८८ पंक्ति १७,)

नोदकेन नवा वाचा कन्यया पतिरूच्यते। पाणिग्रहणसंस्कारात् "पतित्वं सप्तमे पदे" ॥

(यम स्मृति के नाम से) चतुर्विंशति मत संग्रह पृष्ठ ८९ पंक्ति ४ भट्टो जी दीक्षित द्वारा संकलित)

अर्थात्—कन्या, सप्तपदी तक कन्या ही रहती है, तब तक नारी नहीं बनती।

मण्डपो मधुपर्कश्चैव लाजा होमस्तथैव च। यावत्सप्तपदी नास्ति तावत् कन्या कुमारिका ॥

मण्डप छा जाये, मधुपर्क हो जाये, लाजा होम, अर्थात् खीलों की आहुतियां जो परिक्रमाओं के साथ होती हैं, हो जावें, अर्थात् परिक्रमा भी हो जाये जिस समय तक सप्तपदी न हो, तब तक कन्या कुंवारी रहती है। सप्तपदी जब तक न हो, तब तक न वह पति बनता है, और न वह पत्नी, आपने सगाई पर ही पति-पत्नी बना दिये, धन्य हो महाराज ! आपकी लीला को !!

मेरा दावा है इन दोनों प्रमाणों का कदापि अर्थ नहीं बदला जा सकता, जब तक मनुस्मृति से विधवा विवाह निषेध का कोई प्रमाण आप न दिखा दें, तब तक पाराशर स्मृति को उसके विरुद्ध कहना व्यर्थ है, मनु का प्रमाण इस समय तक नहीं दिखा सके, और कभी नहीं दिखा सकेंगे गीता के जो श्लोक आपने पढ़े हैं, उनमें विधवा विवाह का निषेध नहीं है ; प्रत्युत उनमें स्त्री को पति के बिना नहीं रहना चाहिए, यह ध्वनि निकलती है । इनका भावार्थ यह है कि—

युद्ध करने से कुल नष्ट हो जायेगा, (यानी कुल के पुरुष मारे जायेंगे) कुल पुरुषों के मारे जाने पर कुल के धर्म नष्ट हो जायेंगे, कुल-धर्म नष्ट होने पर स्त्रियां दूषित हो जायेंगी, दूषित स्त्रियों से वर्ण संकर उत्पन्न हो जायेंगे आदि । वर्ण संकर वह होते हैं, जो अन्य वर्ण की स्त्री में अन्य वर्ण के पुरुष द्वारा उत्पन्न हों, कुल के सारे पुरुष मारे जायेंगे, तो स्त्रियाँ दूसरे कुल=वर्ण से व्यभिचार द्वारा दूषित होंगी और दूसरे वर्ण से वर्णसंकर सन्तान उत्पन्न होगी, पति के मरने पर भी यदि कुल के अन्य पुरुष जीवित रहेंगे, तो विधवाएँ उनमें से किसी के साथ विवाह करके सन्तान उत्पन्न करेंगी । न इस प्रकार वे दूषित होंगी, और न सन्तान वर्ण संकर उत्पन्न होगी । स्पष्ट है कि- इन श्लोकों में वर्ण संकर सन्तान हो जायेंगी, यह भय दिखाया गया है । जो कि अन्य वर्ण की स्त्री में अन्य वर्ण के पुरुष द्वारा उत्पन्न हो । सो यदि इसमें निषेध है तो अन्य वर्णस्थ स्त्री पुरुषों के साथ व्यभिचार का निषेध है । अपने वर्ण के पुरुष के साथ विधवा के विवाह का इनमें कदापि निषेध नहीं है । यदि है तो दिखायें वे कौन से शब्द हैं ? इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान रहे और याद रहे कि ये श्लोक अर्जुन की ओर से कहे गये हैं न कि भगवान श्री कृष्ण की ओर से ! फिर इनका प्रामाण्य ही क्या ? अर्जुन तो स्वर्ग से गिराने वाला और अपयश कराने वाला, अनार्य्यों द्वारा सेवित कलमष में फंसा हुआ था । यदि विधवा विवाह का वह निषेध करें भी जैसा कि आप करते हैं तो मानता कौन है ? आप सनातन धर्म के माने हुए वेद शास्त्र पुराण, इतिहास, किसी भी ग्रन्थ से विधवा विवाह के विरुद्ध प्रमाण दिखाइये ! मेरा दावा हैं कि—आप कदापि न दिखा सकेंगे ।

श्री पण्डित कालूराम जी शास्त्री—

आप ब्रह्मचर्य को काले पानी की सजा कहते हैं और पवित्र सतीधर्म को फांसी की सजा कहते हैं । यह कौन सा धर्म है ? पति के मरने पर स्त्रियां पति के साथ सती हो जाती थी, प्राण त्याग देती थी । मैं इसको बहुत पवित्र धर्म मानता हूं । विधवा विवाह निषेध का आप बार-बार प्रमाण मांगते हैं, लीजिये और मनुस्मृति का प्रमाण विधवा विवाह को चकनाचूर करने वाला लीजिए—

नान्यस्मिन् विधवा नारी नियोक्तव्या द्विजातिभिः । अन्यस्मिन् हि नियुञ्जानाधर्मं हन्युः सनातनम् ॥६४॥

(मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक ६४,)

इस श्लोक में साफ कहा है कि—जो विधवा स्त्री विवाह कर लेती है वह सनातन धर्म को नष्ट करती है । इससे स्पष्ट और क्या प्रमाण होगा ? विधवा विवाह सनातन धर्म के सर्वथा विरुद्ध है । **"नष्टे मृते ....."** इस श्लोक पर मैंने "चतुर्विशंति मत संग्रह" का प्रमाण दिया कि—उसमें इसे सगाई के बाद का बताया है, विवाह के बाद का नहीं, और लीजिये "निर्णय सिन्धु" में भी इसे सगाई के बाद का बताया है ।

सकृदंशो निपतति सकृत् कन्या प्रदीयते । सकृद्दाह ददानीति त्रीण्येतानि सतां सकृत् ।४।७।।

(मनुस्मृति अध्याय ६ श्लोक ४७,)

इस श्लोक में कहा है कि कन्या का दान एक ही बार होता है । दूसरी बार कैसे हो सकता है ? विधवा विवाह के विरुद्ध और प्रमाण लीजिए—

अपत्य लोभात्तु या स्त्री भर्तारमति वर्तते । सेह निन्दामवाप्नोति पतिलोकाच्चहीयते ।।१६१।।

(मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक १६१,)

संतान के लोभ से जो स्त्री दूसरे पति को स्वीकार करती है, वह यहां निन्दा को प्राप्त होती है और पतिलोक से वंचित (महरूम) रह जाती है ।

पतिव्रता निराहारा शोष्यते प्रोषिते पतौ । मृतंभर्तारमादाय ब्राह्मणी वन्हिमाविशेत् ।।५२।।
जीवन्ती चेत्यक्त केशा तपसा शोधयेद्वपुः । सर्वावस्थासु नारीणां नयुक्तं स्यादरक्षणम् ।।५३।।

(व्यासस्मृति अध्याय २ श्लोक ५२, ५३,)

मृते भर्तरि या नारी समारोहेद् हुताशनम् । सा भवेत्तु शुभाचारास्वर्गे लोके महीयते ।।१९।।
व्यालग्राही, यथा व्यालं बलाद्बुद्धरते विलात् । तथा सा पतिमुद्धृत्य तेनैव सह मोदते ।।२०।।

(दक्षस्मृति अध्याय ४ श्लोक १९, २०,)

इन चारों श्लोकों में यह बताया गया है कि, जो स्त्री पति के साथ सती हो जाती है अर्थात् अग्नि में जलकर मर जाती है वह यहां कीर्ति पाती है और स्वर्ग में जाती है तथा अपने पति के साथ आनन्द मनाती है । देखिये विधवा विवाह के विरुद्ध कितने प्रमाण हैं । हम देखेंगे कि आप इनका किस प्रकार खण्डन करते हैं और अब आगे अपने पक्ष में कौन से प्रमाण देते हैं ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी--

पण्डित जी महाराज ने मेरे द्वारा दिये गये वेद मन्त्रों को तो छोड़ दिया बल्कि यों कहिये कि छोड़ क्या दिया, मान लिया इसलिए उन पर कुछ कहना शेष नहीं रहा है । अब अपने दिये हुए प्रमाणों की समालोचना सुनिये । आपके प्रमाण तिनकों की तरह उड़ते दिखाई देंगे ।

नान्यस्मिन् विधवा नारी, नियोक्तव्या द्विजातिभिः । अन्यस्मिन्हि नियुंजाना धर्मं हन्युः सनातनम् ।।६४।।

(मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक ६४,)

मनुस्मृति के इस श्लोक में, विधवा विवाह का जिक्र तक नहीं "विधवा" शब्द आ जाने से ही, आपने विधवा विवाह निषेध निकाल लिया । महाराज जी ! इसमें तो यह कहा गया है कि—विधवा स्त्री अन्य वर्ण के पुरुष से नियोग न करे । जो अन्य वर्ण के पुरुष से नियोग करती हैं वह सनातन धर्म का हनन करती हैं । इसमें तो अन्य वर्ण के पुरुष के साथ नियोग का निषेध है । विधवा-विवाह निषेध का तो इसमें नाम भी नहीं है । मनु जी महाराज का ही दूसरा श्लोक देखिये—

"**अपत्य लोभात्तु या स्त्री भर्तारमति वर्तते। सेह निन्दा मवाप्नोति पतिलोकाच्च हीयते ॥१६१॥**

(मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक १६१,)

यह श्लोक भी नियोग प्रकरण का है, और इसमें भी यह बताया गया है कि—सन्तान के लोभ से जो स्त्री पति की आज्ञा का उल्लंघन करती है, वह निन्दा को प्राप्त होती है। और पति लोक से वंचित रहती है। इसमें जो स्त्री पति की आज्ञा के विरुद्ध नियोग करती है, उसकी निन्दा है। विधवा तो पति के मरने पर ही होती है, क्यों पण्डित जी फिर उसकी आज्ञा का उल्लंघन क्या? **सकृदंशो निपतति सकृत्कन्या प्रदीयते** (मनु० ९/४७) इसमें आपने बताया है कि—कन्या का दान एक ही बार होता है। सो ठीक है, विवाह के बाद लड़की कन्या रहती ही नहीं, जैसे जलने के बाद शरीर नहीं रहता, विवाह के बाद पति के मरने पर स्त्री विधवा रहती है। उस "विधवा" के विवाह पर विचार है न कि कन्या के दूसरे विवाह पर! और मनु जी ने स्वयं कहा है कि—"**स्वेच्छया**" वह अपनी इच्छा से विवाह कर सकती है। उसके दान की आवश्यकता ही नहीं, निषेध यदि होता है तो इससे आपके वाग्दान के बाद पुनः वाग्दान का होता है। जिस पर आप विधवा विवाह के श्लोकों को भी लगाने का व्यर्थ यत्न करते रहते हैं। विधवा विवाह का निषेध नहीं है। चार श्लोक आपने सती होने के लिये दिये हैं, उनके विरुद्ध सुनिये -

मृतानुगमनं नास्ति ब्राह्मण्या ब्रह्म शासनात्। इतरेषां तु वर्णानां स्त्री धर्मोऽयं परं स्मृतः ॥

(पैठिनस स्मृति)

अन्य स्मृति में देखिये—

उपकारं यथा भर्तुर्जीवन्ती न तथा मृता। करोति ब्राह्मणी श्रेयो भर्तुः शोक करी चिरात् ॥

अनु वर्तेत जीवन्तं नानुयायान्मृतं पतिम्। जीव्य भर्तुर्हितं कुर्यात् मरणादात्म घातिनी ॥

अंगिरा स्मृति में देखिये—

यस्या ब्राह्मण जातीया मृतं पति मनुव्रजेत। सा स्वर्गमात्म घातेन नात्मानं न पतिं नयेत् ॥

(अंगिरा स्मृति)

ये चार श्लोक पाराशर स्मृति माधव व्याख्या पृष्ठ ५६ बम्बई में छपी सम्वत् १९९८ विक्रमी में दिये हुए हैं, इन चारों में ब्राह्मणी को सती होने से रोका गया है। और सती होने वाली स्त्री को आत्मघातिनी कहा है। और अन्तिम श्लोक में तो यह भी कहा है कि—न वह स्वर्ग को प्राप्त करती है न पति को, ब्राह्मणी को ही सती होने का इनमें निषेध है। स्मृति के वाक्यों में परस्पर विरोध हो तो वहां वेद के वाक्यों से निर्णय होगा। सो सुनिये वेद तो आत्मघात मात्र को भी पाप बताता है। यथा—

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृता। तांस्ते प्रेत्याऽपि-गच्छन्ति ये के चात्म हनोजनाः ॥३॥

(यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ३,)

......

जो भी आत्म हनन करते हैं, वह असुरों (पापियों) के लोकों को प्राप्त होते हैं, जो लोक, घोर

अन्धकार से ढके हुए हैं। **"नष्टे मृते···"** इस श्लोक पर "चतुर्विशंतिमत संग्रह" और "निर्णय सिन्धु" की सम्मति आपने बताई कि इन्होंने इस श्लोक को सगाई परक बताया है। सो सुनिये मैं कहता हूं, इन्होंने मूल के विरुद्ध इस अर्थ में लगाया है और आपने स्वयं कहा है कि जो अर्थ इस मूल के विरुद्ध होगा उसे हम कदापि नहीं मानेंगे चाहे किसी का भी हो। यही मैं भी कहता हूं कि इन दोनों ने मूल के विरुद्ध अर्थ लगाया है। इसलिए कदापि मानने योग्य नहीं हैं। मैंने इस श्लोक में आये हुए पति शब्द और नारी शब्द से सिद्ध कर दिया है कि, यह श्लोक विवाह के बाद का है। इससे पहले का कदापि नहीं, (सप्तपदी) से पहले न वह पति बनता है न वह पत्नी बनती है। इसका खंडन न हो सका, और न कभी हो सकेगा, अब आगे आप इस पर कुछ न कहेंगे। मनु के दो श्लोक आपने दिये, उनमें विधवा विवाह का निषेध नहीं है, दो श्लोक मैंने मनु के दिये, उनमें विधवा विवाह का स्पष्ट विधान है। लीजिये अब प्रमाणों की वर्षा होगी, पहले वेद का ही एक मन्त्र और लीजिये!

उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकमिता सुमेतमुपशेष एहि।
हस्त ग्राभस्य दिधिषो स्वमेतत्पत्युर्जनित्वमभि संबभूव ॥१४॥

(तैतिरीयारण्यक प्रपाठक ६ अनुवाक १ मन्त्र १४,)

"बंगाल एशियांटिक सोसाइटी कलकत्ता" से जो सन् १८७२ में प्रकाशित हुई तैतिरीयारण्यक पर सायणाचार्य जी का भाष्य देखिये, मैं पढ़ता हूं, ध्यान देकर सुनिये—**"हे नारी ! त्वं इतासु गत प्राणं एतं पति उपशेषे उपेत्य शयनं करोषि उदीर्ष्वअस्मात्पतिसमी पाद्दुत्तिष्ठजीव लोकमभि जीवन्तं प्राणी समूहमभि लक्ष्य एहि आगच्छ। त्वं हस्तग्राभस्य पाणि ग्राहषतः विधिषोः पुनर्विवाहेच्छोः पत्युः, एतत् जानित्वं जायत्वं अभि सम्बभूव आभि मुख्येन प्राप्नुहि ॥** अर्थात् "हे नारी ! तू इस मरे हुए पति के समीप सो रही है, इसके समीप से उठ, और इन जीवित पुरुषों को देख, इधर आ। जो इनमें पुनर्विवाह की इच्छा करने वाला हो, उसकी पत्नी बन। मरे हुए के पास सोने से उसके शयन स्थान में सोने का अभिप्राय है, अन्यथा मुर्दे के पास तो स्त्री कोई सोती ही नही। वेद के प्रमाण के आगे किसी अन्य प्रमाण की कोई शक्ति नहीं है। पर आपके पास तो कोई प्रमाण ही नहीं, न वेद का न शास्त्र का, मैंने जो प्रमाण स्मृतियों के दिये हैं, उनको आप बिना किसी आधार पर, सगाई के बाद के बताते रहे हैं, मैं पूछता हूं स्मृतियों में और पुराणों में **"नचप्राप्तातु मैथुनम्"** क्यों कहा गया है ? विवाह के पूर्व भी आपके मत में मैथुन होता है क्या ?

नोट :—शास्त्रार्थ के बीच में ही सनातन धर्म सभा के प्रधान ने खड़े होकर कहा—यह कहां लिखा है ? ठाकुर साहब इसका पता दीजिए।

ठाकुर साहब—आप थोड़ा-सा समय दीजिए, अभी अनेकों प्रमाण दिये देता हूं।

प्रधान जी—ठीक है, आप अगली बारी में अपने ही समय में दीजिए तब तक ढूंढ़ लीजिये।

ठाकुर साहब—बहुत अच्छा, मैं अपनी बारी······टन-टन-टन-टनऽऽ······

प्रधान जी—आपकी बोलने की बारी का समय समाप्त हो गया है।

श्री पण्डित कालूराम जी शास्त्री—

हम मनु को प्रामाणिक मानते है। पाराशर को मनु के विरुद्ध होने से प्रामाणिक नहीं मानते, मनु ने विधवा विवाह का स्पष्ट निषेध किया है। देखिए—

नान्यस्मिन् विधवा नारी निर्योक्तव्या द्विजातिभि। अन्यस्मिन्हि नियुंजाना धर्महन्युः सनातनम् ॥६४॥

(मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक ६४,)

अर्थात्—जो विधवा स्त्री अन्य पुरुष के साथ सम्बन्ध करती है, वह सनातन धर्म को नष्ट करती है।

या पत्यावा परित्यक्ता विधवा वा स्वेच्छाया। उत्पादयेत्पुनर्भूत्वा स पौनर्भव उच्यते ॥१७५॥
सा चेदक्षत योनिः स्याद्गत प्रत्याऽगतापिवा। पौनर्भवेन भर्त्रासा पुनः संस्कार मर्हति ॥१७६॥

(मनुस्मृति अध्याय ९ श्लोक १७५-१७६,)

इन श्लोकों में यदि विधवा विवाह की आज्ञा मनु ने दी है तो यह गलती मनु की है, मेरी नहीं! (श्रोताओं में हँसी व हल्की तालियों की गड़गड़ाहट……) यह क्या बेहूदगी है? हँस दिए, तालियां बजाना आरम्भ कर दिया, हम जो बात कहते हैं उसे ध्यान से सुनिए। हां! तो मैं कह रहा था, कि आप ब्रह्मचर्य को काले पानी की सजा कहते हैं। यह बड़े आश्चर्य की बात है। यह कौन-सा धर्म है? सर्व शास्त्रों में ब्रह्मचर्य की महिमा कही गई है, आप बताइये क्या आप नहीं मानते हैं? सती धर्म की बड़ी महिमा है। उसको आप फांसी की सजा कहते हैं।

उदीर्ष्व नार्य्यभिजीव लोकमिता सुमेतमुपशेष ऐहि।
हस्त ग्राभस्य दिधिषोस्तमेतत् पत्युर्जनित्वमभि सं बभूव ॥१४॥

(तैतिरियारण्यक प्रपाठक ६ अनुवाक १ मन्त्र १४,)

आपने यह वेद का मन्त्र कहा है परन्तु इस मन्त्र का तो अर्थ है कि मरे हुए पति की सन्तान को सँभाले "**दिधिषु**" का अर्थ मरा हुआ पति है। आपका यह अर्थ कौन स्वीकार करेगा कि मरे हुए पति के पास से उठकर जीवितों में से किसी के साथ विवाह कर ले? इसे कोई पसन्द नहीं करेगा।

नोट :—इतना कहकर श्री पण्डित कालूराम जी शास्त्री बैठ गए।

प्रधान जी—अभी आपका समय शेष है।

शास्त्री जी—ठाकुर साहब को दे दीजिए, ताकि वह मेरे प्रश्नों के उत्तर ठीक तरह से दे सकें।

ठाकुर साहब—मुझे उधार लेने व खाने की आदत नहीं है।

शास्त्री जी—साफ क्यों नहीं कहते कि और प्रमाण हैं ही नहीं, कुछ याद हो तो बोलें भी!

ठाकुर साहब—इसके लिए मुझे आपके समय में से समय लेने की कोई आवश्यकता नहीं है।

नोट—ज्योंहि शास्त्री जी बोलने के लिए खड़े हुए. टर्न-टर्न-टन-टन·····घंटी बजी, प्रधान जी बोले—अब समय समाप्त हो गया, बैठ जाइए।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

आप स्पष्ट कहें कि हम पाराशर स्मृति को प्रामाणिक नहीं मानते और अगर नहीं मानते थे तो उसके प्रमाण पर अब तक बहस क्यों करते रहे ? पहले भी तो आरम्भ में ही साफ इन्कार किया जा सकता था। परन्तु बात मानने या न मानने की नहीं है, महाराज जी ! असली बात तो यह है कि उस पर आपसे बहस चल नहीं सकी, तो यह कहने लगे, पर आप याद रक्खें आपका यह बहाना भी मैं चलने नहीं दूंगा। धन्य हो भगवान ही आपका भला करे। अरे महाराज ! तब तो जितने भी क्वांरी कन्याओं के विवाह होते हैं, ये भी आपके कथनानुसार विधवा विवाह ही हुए। यह विधवा विवाह का खण्डन हुआ या मण्डन ? पद्म पुराण के श्लोक मैंने पढ़े तथा इनके साथ मैंने न काशी के राजा का नाम लिया, न दिव्या देवी का ! आपने ऐसे ही कह दिया, मुझे यह बताइये कि, जो व्यवस्था पण्डितों ने दी है, वह विधवा विवाह की व्यवस्था है कि नहीं ? उसमें स्पष्ट शब्द हैं कि—"**पति मृत्युं प्रयात्यस्या नोचेत्संगं करोति च**"। विवाह से पहले वह पति कैसे हुआ ? पति तो सप्तपदी के बाद होता है। पहले मैंने प्रमाण दिये हैं। फिर इसमें शब्द भी तो हैं कि - "**नोचेत्संगं करोति च**" क्या सगं भी विवाह से पहले ही हो जाता है ? आपके सनातन धर्म में हो जाता होगा हमारे में तो होता नहीं। आपने दिव्या देवी का नाम ले दिया, जिसके एक के बाद एक २१ पति हुए। इसी व्यवस्था के अनुसार जिसमें "**उद्वाहिता**" शब्द डंके की चोट से कह रहा है कि—यह व्यवस्था विवाह के बाद की है। विवाह से पहले की नहीं। अन्य प्रमाण जो मैंने दिये, उनको तो आप मान गये प्रतीत होते हैं। उन पर अब कुछ नहीं कहते हैं। मैं तो प्रमाणों की वर्षा करता जाऊँगा ! और प्रमाण लीजिये—आज से ढाई हजार वर्ष का पुराना ग्रन्थ "कौटिल्य अर्थ शास्त्र" है, उसमें लिखा है कि—"**दीर्घ प्रवासिनः प्रव्रजितस्य प्रेतस्य वा भार्य्या सप्ततीर्थान्याकाक्षेंत ॥४३॥ संवत्सरं प्रजाता ॥४४॥ ततः पति सौंदर्यं गच्छेत् ॥४५॥ बहुषु प्रत्यासन्नं धार्मिकं भरणसमर्थं कनिष्ठमभार्यं वा ॥४६॥ तद्भावेऽप्यसौंदर्यं सपिण्ड तुल्यंवा ॥४७॥** ("कौटिल्यअर्थशास्त्र" द्वितीय भाग तृतीय अधिकरण अध्याय ४ वाक्य ४३ से ४७,)

अर्थ—जो पति बहुत देर से परदेश चला गया हो, या सन्यासी हो गया अथवा मर गया हो, उसकी पत्नी सात ऋतुकाल (सात महीने) प्रतीक्षा (इन्तजार) करे। यदि उसके सन्तान हो चुकी हो तो, एक साल इन्तजार कर ले, उसके बाद पति के सगे भाई (देवर) से विवाह कर ले, जो योग्य हो, भरण-पोषण का सामर्थ्य रखता हो। और स्त्री रहित हो, उसको प्राप्त होवे। यदि ऐसा न मिले तो उस खानदान का कोई और हो या उसके समान हो, उसको प्राप्त होवे। कहिये कैसा प्रमाण है ? और सुनिये—

अर्जुन ने उलूपी (विधवा) से विवाह कर लिया, आपसे उसका खण्डन न हो सका, अब दमयन्ती का सुनिये—महाभारत वनपर्व में लिखा है कि—

आस्थास्यति पुनर्भैमी दमयन्ती स्वयंवरम्। तत्र गच्छन्ति राजानो राज पुत्राश्चसर्वशः ॥२४॥
तथा च गणितः कालः श्वोभूतेसु भविष्यति। यदि सम्भावनीयंते गच्छ शीघ्रमरिन्दम ॥२५॥

सूर्योदये द्वितीयं सा भर्तारं वरयिष्यति । नहि स ज्ञायते वीरो नलो जीवति वा न वा ।।२६।।
(महाभारत वन पर्व अध्याय ७० श्लोक, २४, २५, २६)

अर्थात् स्वयम्वर का निमंत्रण देने वाले ब्राह्मण ने अयोध्या के महाराज ऋतु पर्ण से कहा कि भीम की पुत्री दमयन्ती फिर स्वयम्वर करेगी। स्वयम्वर का दिन कल है। आप चल सकें तो अवश्य चलें। सूर्योदय के समय वह दूसरे पति को वर लेगी। क्योंकि नल का पता नहीं है कि वह जीवित है या मर गया आदि। यदि उस समय दूसरा विवाह करना पाप माना जाता तो दमयन्ती ऐसा करने को किस प्रकार उद्यत होती और क्यों कोई स्वयम्वर में आता? सोम, गन्धर्व और अग्नि इन देवों द्वारा पुरुष को स्त्री दी गई है। इसलिए इसका एक ही पति हो सकता है। एक बात यह भी आपने खूब कही ! मैं तो जानकर इस प्रमाण को छोड़ रहा था। लीजिए इस पर भी सुनिये—वेद में है—

सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः । तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः ।।४०।।
सोमो ददद्गन्धर्वाय गन्धर्वोददग्नये । रयिं च पुत्रांश्चादा दग्निर्मह्यमथो इमाम् ।।४१।।
(ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त ८५ मन्त्र ४०-४१)

कन्या का पहला पति सोम देवता, दूसरा पति गन्धर्व देवता, तीसरा पति अग्नि देवता है। चौथा मनुष्य ! यह ऋग्वेद के मन्त्र का आपके अनुकूल अर्थ है और इसी प्रकार अथर्व वेद में है, कहिये तो वह भी प्रमाण दूं, जिस पर स्मृति कहती है कि—**पूर्वं स्त्रियः सुरैर्भुक्ता सोम गन्धर्व वान्हिभिः ।।१९१।।** (आत्रि स्मृति श्लोक १९१,) तथा—**रोमकाले तु सम्प्राप्ते सोमोभुंक्तेथ कन्यकाम् । रजोद्रष्ट्वातु गन्धर्वः कुचो दृष्ट्वा तु पावकः ।।६५।।** (सम्वर्त स्मृति अध्याय १२ श्लोक ६५,) वेद वाक्यों से अर्थ निकला है कि—एक के बाद दूसरा फिर तीसरा देव उसके पति बनते हैं। और स्मृति कहती है कि, केवल पति ही नहीं बनते, बल्कि भोगते भी हैं, कहिये एक देव की पत्नी दूसरे ने विवाह ली, और दो से विवाह होने के बाद तीसरे देव ने विवाह ली, विवाह ही नही बल्कि भोगी हुई के भी एक नहीं अनेक विवाह होते हैं। देवों में तो पुर्नविवाह भोगी हुई का भी हो जाये और आप ! मनुष्यों में अक्षत योनि का भी रोकते हैं, आपको क्या कहें ?

श्री पण्डित कालू राम जी शास्त्री—

"**उदीर्ष्व नारी** ....यह मन्त्र तो श्री मान जी नियोग का है। आपने नियोग का विधान करने वाले मन्त्र को विवाह में लगा दिया। इससे विधवा विवाह सिद्ध नहीं हो सकता, यह तो नियोग का मन्त्र है। दो मन्त्र जो आपने अथर्ववेद के कहे हैं। उन पर सायणाचार्य का भाष्य ही नहीं है। हमने सायणाचार्य के भाष्य से इंकार नहीं किया, न हम इंकार करते हैं। इन पर तो सायणाचार्य जी का भाष्य है ही नहीं। कोटिल्य के अर्थ शास्त्र का प्रमाण आपने क्यों दिया? वह हमारा धर्म शास्त्र नहीं है। विधवा विवाह बिल्कुल सनातन धर्म के विरुद्ध है, सारे शास्त्र अनेकों प्रमाणों से भरे पड़े हैं। मैंने अनेकों प्रमाण व्यभिचार के विरुद्ध और ब्रह्मचर्य की महिमा में दिये। और फिर आप जबर्दस्ती विषय को घसीट कर वहीं लाना चाहते हैं।

नोटः—पश्चात्त शास्त्री जी ने वही पुरानी बातें दोहराई और समय पूरा करके बैठ गये।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

"**उदीर्ष्व नारी**…." इस मन्त्र पर पण्डित जी ने कितनी पोजीशनें (स्थितियां) बदली हैं। पहले कहा कि इस अर्थ को कौन स्वीकार कर लेगा? जब इसके उत्तर में कहा गया कि—अर्थ तो हमारा नहीं है, आचार्य सायण जी का है, तब अर्थ के विरुद्ध तो कुछ न कह सके, पर यह कह दिया कि—यह दूसरे जन्म का वर्णन है, जब इसकी भी धज्जियां उड़ाई गयीं, तब इसको भी छोड़ दिया, अब कहते हैं कि यह मन्त्र तो नियोग का है। धन्य हो महाराज! "**समरथ को नहीं दोष गुसांई**"। ये बेचारे श्री सनातन धर्म विधवा विवाह सहायक सभा वाले यदि विधवा विवाह मानते हैं, तो आप उनके घोर विरोधी बने हुए हैं। पर आप नियोग का विधान वेद मन्त्र में बता रहे हैं। बधाई! आपसे ये आपकी सभा वाले पूछें या न पूछें पर मैंने यह आज नया सनातन धर्म सुना जिसमें नियोग मन्त्रोक्त माना जाता है। फिर भी विधवा विवाह का विरोध! "**गुड़ खायें गुलगुलों से परहेज करें**"। पण्डित जी महाराज! सायणाचार्य जी ने तो "**पुर्नाविवाहेच्छो**" शब्द देकर पुर्नाविवाह की इच्छा करने वाले पुरुष के साथ विवाह करने की आज्ञा इस मन्त्र में बताई है। अथर्व वेद के जो मन्त्र मैंने प्रारम्भ में दिये थे, उन पर पहले कहा, इनका विधवा विवाह देवता नहीं। जब इस प्रश्न की धज्जियाँ उड़ायी गई, तो इसे छोड़ दिया, "**वित्वा**" का अर्थ करते थे, "**जान कर**" जब मैंने "**प्राप्त करके**" अर्थ किया और "**वित्वा**" शब्द को "**विदलृलाभे**" धातु से बताया, तो वह भी छोड़ दिया, अब अन्त में आप कहते हैं कि, इन पर तो सायण का अर्थ ही नहीं है।

ठीक है! मैंने इन पर सायण का अर्थ बताया ही कब है? सायणाचार्य का अर्थ इन पर नहीं है। तभी तो सनातन धर्म के प्रसिद्ध पण्डित ओर जीते जागते आपके मित्र जो साक्षात् आपके पास बैठे हुए कविरत्न पण्डित अखिलानन्द जी का अर्थ पेश किया है। यदि यह आपको स्वीकार नहीं है तो, कहिये कि—पण्डित अखिलानन्द जी ने गलत अर्थ किया हैं। जान-बूझ कर गलत अर्थ किया है, या इनको अर्थ करना आता ही नहीं? कहिये! पर आप कदापि न कह सकेंगे।

अब तो पण्डित अखिलानन्द जी भी पूर्व पक्ष नहीं बताते हैं। क्योंकि बहुत पीछे की लिखी दूसरी पुस्तक अथर्ववेदालोचन में भी यही अर्थ लिखा हुआ है। कौटिल्य का अर्थ शास्त्र आपका धर्म शास्त्र तो नहीं है, ठीक है! पर आज से ढाई हजार साल की पुरानी सभ्यता का पता तो उससे लगता है, इसलिए इतिहास प्रमाण तो वह अवश्य हुआ। इसलिए प्रमाण दिया इससे तो इन्कार नहीं कर सकते हैं और जो इसमें कहा है, इसका मूल नारदीय मनुस्मृति में है, सुनिये—

अष्टौ वर्षाण्युदीक्षेते ब्राह्मणे प्रोषितं पतिम्। अप्रसूता तु चत्वारि परतोऽन्यं समाश्रयेत्॥१००॥
क्षत्रिया षट् समास्तिष्ठेदप्रसूता समात्रयम्। वैश्या प्रसूता चत्वारि द्वे समे अप्रजा वसेत्॥१०१॥
न शुद्राया स्मृतः कालो न च धर्म व्यक्तिक्रम॥१०२॥

(नारदीय मनुस्मृति श्लोक, १००, १०१, १०२,)

पति परदेश चला गया हो तो ब्राह्मणी आठ वर्ष, सन्तान न हुई हो तो चार वर्ष, क्षत्रिया छः वर्ष सन्तान न हुई हो तो तीन वर्ष, वैश्य की स्त्री चार वर्ष, सन्तान न हुई हो तो, दो वर्ष प्रतीक्षा करे। इसके बाद दूसरे पति को प्राप्त हो। शूद्र के लिए कोई समय नहीं है। यही कौटिल्य अर्थशास्त्र

में है। उस समय पति के मरने या सन्यासी हो जाने पर भी दूसरा विवाह हो जाये, यह कानून था। स्मृतियों के प्रमाण और लीजिये—शातातपस्मृति—

वरश्चेत् कुल शीलाभ्यां न युज्जेत् कथंचन। न मंत्रा कारणं तत्र न च कन्याऽनृतं भश्वेत ॥
समाच्छिद्यतु तां कन्यां बलादक्षतयोनिकाम्। पुनर्गुणवते दद्याविति शातातपोऽब्रवीत् ॥
हीनास्य कुल शीलाभ्यां हरन् कन्यां न दोष भाक्। न मंत्राकारणं तत्र न च कन्याऽनृतं भषेत् ॥

(कात्यायन स्मृति)

सतु यद्यन्य जातीयः पतितः क्लीव एव वा। विकर्मस्थः सगोत्रो वा दासो दीर्घामयोऽपिवा ॥
ऊढ़ाऽपि देया सान्यस्मै स हाभरण भूषणा इति ॥

(मनुस्मृति के नाम से)

पत्यौ प्रव्रजितेनष्टे क्लींबे च पतिते पतौ। पञ्चस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते ॥

(नारदीय मनुस्मृति, श्लोक, १००, १०१, १०२,)

ये सब प्रमाण पाराशर स्मृति की माधव व्याख्या में लिखे हैं। देखो पृष्ठ ६०-६१, छापा बम्बई १८९८ ई०।

इनमें स्पष्ट कहा है कि—वर, हीन जाति का हो, पतित हो, नपुंसक हो, विकर्मी हो, कन्या के गोत्र का हो, दास हो, लम्बी बीमारी में हो, लापता हो गया हो, अथवा मर गया हो, तो उसके साथ विवाही हुई स्त्री को भी दूसरा कोई योग्य वर देख कर, दूसरा विवाह कर देना चाहिये। मैंने चार प्रमाण वेद के दिये। आचार्य सायण और पण्डित अखिलानन्द जी के अर्थ दिये, तीन मनुस्मृति के, एक पाराशर स्मृति का एवं नारदीय मनुसंहिता के शातातपस्मृति के, कात्यायनस्मृति के, आपस्तम्ब स्मृति आदि के प्रमाण दिये हैं। पाराशरी पर आचार्य माधव की व्याख्या सुनाई। इतिहास में अग्नि पुराण, पद्म पुराण, भविष्य पुराण, महाभारत, ओर, कौटिल्य के अर्थ शास्त्र के प्रमाण दिये। जिनसे विधवा विवाह स्पष्ट सिद्ध हो गया। श्री पण्डित निबाहूराम जी की विवाह पद्धति का प्रमाण दिखाया। जिसमें विधवा का विवाह करने की, विधि लिखी है। सर्व प्रकार से विधवा विवाह सिद्ध कर दिया है, आपने मेरे एक भी प्रमाण का खण्डन नहीं किया, जो भी आपत्तियाँ आपने दी—मैंने सब का खण्डन कर दिया, आप उनमें से किसी भी आपत्ति को पुनः नहीं दे सके। मैंने बार-बार प्रमाण मांगे पर आप वेद का तो एक भी प्रमाण नहीं दे सके। स्मृतियों के प्रमाण आपने ब्रह्मचर्य की महिमा पर दिये, सती होने की आज्ञा पर दिये, व्यभिचार की निन्दा में दिये और दो प्रमाण जिन पर आपका बड़ा बल था, वे मनुस्मृति के इनमें अन्य वर्णस्थ के साथ नियोग का निषेध है। विधवा विवाह के विरुद्ध आप एक भी प्रमाण नहीं दे सके, मुझे समय और देवें तो मैं वेदों, स्मृतियों, तथा इतिहास के प्रमाणों की फिर झड़ी लगा सकता हूं। अगर शास्त्री जी महाराज उनको सुनना है तो मुझे और समय दिलवा दीजिये।

श्री पण्डित कालू राम जी शास्त्री—

यस्यामृयेत कन्यायाः वाचा सत्ये कृते पतिः। तामनेन विधानेन निजो विण्देत् देवरः ॥६९॥

(मनुस्मृति अध्याय ९, श्लोक ६९,)

इसमें लिखा है कि, वाग्दान (सगाई या कुड़माई) हो जाने पर यदि कन्या का पति मर जाय तो उस कन्या को किसी और को दे दे। सनातन धर्म, विधवा का विवाह नहीं मानता है। यहाँ पर तो पवित्र सती धर्म हैं उस सती धर्म को आप नष्ट न करें। सारे शास्त्रों में व्यभिचार की निन्दा लिखी हुई है। सारे शास्त्र इससे भरे हुए हैं। आप बार-बार प्रमाण मांगते हैं। शास्त्र उठा कर देख तो लीजिए सारे शास्त्रों में व्यभिचार की निन्दा ही मिलेगी। हमने गीता का प्रमाण दिया ही था, जिसमें कहा है कि, स्त्रियां दूषित हो जायेंगी, तो वर्ण संकर सन्तान उत्पन्न होगी, आप प्रमाण दिये जायें, और मांगे जायें ! परन्तु विधवा को विवाह नहीं करना चाहिए, मैं तो पति के संग जल जाने को पवित्र धर्म मानता हूं। आपने कहा कि, रण्डुआ क्यों विवाह करे, सो हम कहते हैं कि, जिस रण्डुए के एक भी सन्तान हो उसको विवाह नही करना चाहिए, आदि। इस प्रकार यह आज का शास्त्रार्थ समाप्त होता है सभी भाई धन्यवाद के पात्र हैं।

नोट : - श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने अन्त में सभा के प्रधान जी से २ मिनट लेकर कहा भाइयो ! वैसे तो मुझे अब बोलने का अधिकार नहीं है, परन्तु प्रधान जी का धन्यवाद है, उन्होंने मुझे कुछ समय दे दिया।

मेरी प्रार्थना है कि आपने शास्त्रार्थ तो यहां सुना ही है, आप पौराणिक पण्डित महामान्य श्री अखिलानन्द कविरत्न जी कृत पुस्तक "वैध्व्य विध्वंसन चम्पू" के पृष्ठ २७ की लाइन ११ से १६ तक तथा अन्य पृष्ठों को भी अवश्य देख लें। धन्यवाद !!

विशेषः—आगे जो अखिलानन्द जी ने अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है, उसका मूल भावार्थ सहित दिया जाता है। देखिये—

[कविरत्न पण्डित अखिलानन्द जी सनातनी के शब्दों में पढ़िये]

विधवा विवाह के विरोधी कौन-कौन हैं ?—

१. ग्रामों के स्वयं सिद्ध बोधिया पाधे। २. दवाओं के द्वारा गर्भ गिराने वाले वैद्य। ३. कथा बाँचने वाले (कथावाचक)। ४. कन्याओं के ऊपर द्रव्य लेने वाले दलाल। ५. मन्दिरों के पुजारी। ६. तीर्थों के पण्ड़े। ७. वैष्णव, साधु वैरागी। ८. व्यभिचारी। ९. छोटे-छोटे पण्डित। १०. विधवाओं से खाने वाले।

"**वैधव्य विध्वंसन चम्पू** (पृष्ठ २७ पंक्ति ११ से १६)"

विधवा विवाह विरोधियों की चीख पुकार—

नोट :—विष्णु मन्दिर का पुजारी (व्यभिचार दत्त) शोक से ऊँची आवाज करके कहता है—

भो भो सनातन मतानुगतायतध्वं, सर्वत्र विस्तृतिमयं समुपैति मार्गः।
संरोधने विकसने किल यस्य सर्वा, गुप्त क्रिया विलयमेष्यति पूजकानाम् ॥९६॥

भावार्थ—अय ! पौराणिकों ! उठो इसके रोकने का कुछ प्रयत्न करो। "यह विधवा विवाह का प्रचार सर्वत्र हुआ जाता है। यदि इसके रोकने का प्रयत्न नहीं करोगे तो मन्दिरों के पुजारियों का अब सारा भेद खुलता है"।

यासां समूह मधिगत्य वयं सुखेन। नाना रसानुग कटाक्ष निरीक्षणानि।।
विद्मो मिषेण तुलसी दल पाद वारां। नाशं समेति विधवानिचयः स सर्वः ।।९७।।

भावार्थ—जिन विधवाओं के बीच में तुलसी दल और चरणामृत के बहाने से जाकर आनन्द पूर्वक आंखें लड़ाया करते थे। आज वह विधवायें अपने-अपने घरों की होती हैं। अर्थात सबका विवाह होता जाता है।

शास्त्र प्रमाण निचयैर्विधवाजनानां, सिद्धे पुनः परिणये ग्रह कर्मरागात्।
का शैशवे गतधवा विधवा दिनान्ते, पूजा मिषेण सुलभास्ति परिक्रमासु ।।९८।।

भावार्थ—शास्त्रों के प्रमाण से जब विधवाओं का विवाह सिद्ध हो जायेगा, तो सब विधवायें अपने-अपने घरों के कामों में लग जायेंगी। सायंकाल के समय पूजा के बहाने से मन्दिरों की परिक्रमाओं में कोई न मिला करेगी।

नानोपवास नव पारण भोजनानामेकान्ततः प्रविलये विधवा विवाहेः।
शोषं गमिष्यति कथं न शरीरमेत्हा ! दैवमेक पद एव विरुद्धमद्य ।।९९।।

भावार्थ—व्रतों के बाद जो विधवाएं हमको तरह-तरह के माल खिलाकर आप खाया करती थी, आज वह सब विवाह होने पर व्रत छोड़ देंगी, तो हमारा शरीर भी माल न मिलने पर सूख जायेगा, हाय ! विधाता यह तूने क्या किया।

या मन्दिरोदर कथा श्रवणच्छलेन, गेहाद्गताऽऽशुपथि मे शयनं समेति।
सा नायकस्य चरणौ निशि पी यन्ती, नायास्यतीत्यहह खेदमुपति चेतः ।।१००।।

भावार्थ—जो विधवा मन्दिरों में होने वाली भागवत् आदि कथाओं के बहाने घर से चल कर रास्ते में आये हुए पुजारियों के घरों में आनन्द करतीं थी, आज विवाह होने पर वह पति के चरण दबाया करेंगी, यह सोच, मेरा जी जल रहा है।

नष्टं गतागतमनेक ग्रहांगनानां, भृष्टं समीहितमनेक विधं खलानाम्।
कष्टं विनष्टमखिलं विधवा जनानां हृष्टं न किंवयमहो विधिनाहताः स्मः ।।१०१।।

भावार्थ—अनेक घरों की कुलांगनाओं का आज आना-जाना बन्द हो गया। अनेक प्रकार के दुष्टों का मन चीता भ्रष्ट हो गया, विधवाओं का समस्त कष्ट नष्ट हो गया, कहाँ तक कहें सभी आनन्दित हुए, परन्तु हम लोग पत्थर से मारे गये।

(कविरत्न पण्डित अखिलानन्द जी कृत "**वैधव्यविध्वंसनचम्पू**")

छटा शास्त्रार्थ--

स्थान : "हरदुआगंज" जिला अलीगढ़, उत्तर प्रदेश
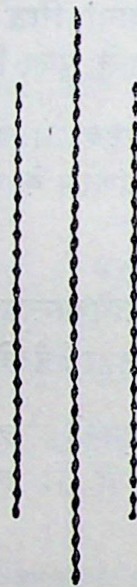
दिनांक : २७ फरवरी सन् १९५० ई०

विषय : क्या महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ वेदानुकूल हैं ?

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पौराणिकों की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

शास्त्रार्थ के प्रधान : श्री बाबू प्रीतम लाल जी एम०ए०, एल०एल०बी० (एडवोकेट)

सनातन धर्म सभा के मन्त्री : श्री भूदेव जी शास्त्री

शास्त्रार्थ से पहले

जिला आर्य महासम्मेलन उप प्रतिनिधि सभा (अलीगढ़) की ओर से २५, २६, २७ फरवरी सन् १९५० ई० को हरदुआगंज में होना निश्चित हुआ था। यह स्थान अलीगढ़ से १०-१५ किलोमीटर की दूरी पर है। इस सम्मेलन में आर्य समाज की ओर से पौराणिकों को शास्त्रार्थ के लिए खुला चैलेञ्ज भी दिया गया था। उसको स्वीकार करते हुए पौराणिकों ने दो मांगें पेश की। एक तो यह कि—शास्त्रार्थ का विषय। **"क्या स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ वेदानुकूल हैं ?"** होना चाहिए ! दूसरी शर्त यह रक्खी कि—**"शास्त्रार्थ का आयोजन सम्मेलन के अन्तिम दिन अर्थात् २७ फरवरी"** को हो। सम्मेलन के कार्यकर्ताओं ने दोनों मांगें स्वीकार कर लीं। नियत समय पर श्री पं० माधवाचार्य जी दल-बल सहित गले में पुष्पों का हार डाले हुवे, शंख-घड़ियाल आदि की ध्वनि से ध्वनित, जय-जयकार से गुञ्जायमान अपनी वेदी पर आ विराजे। शास्त्रार्थ के प्रधान श्री बाबू प्रीतम लाल जी एम० ए०, एल० एल० बी० (एडवोकेट) ने श्री पण्डित माधवाचार्य जी को कहा कि—मैंने घड़ी का समय मिला लिया है अब आप प्रश्न करके शास्त्रार्थ आरम्भ कीजिये। पण्डित माधवाचार्य जी ने कुछ देर तक तो इस बात पर झगड़ा किया कि प्रधान हमारी ओर से भी होना चाहिये। श्री पण्डित भूदेव जी पहले ही यह स्वीकार कर चुके थे कि "प्रधान" तो आर्य समाज की ही ओर से होगा। परन्तु माधवाचार्य जी अपनी अड़ंगा-युक्त नीति पर अड़े हुए थे। घड़ियों का टाइम से मिलान कर लिया गया। समय देखने के लिए विपक्ष वालों की ओर से भी व्यक्ति निश्चित कर दिया गया।

प्रधान जी ने फिर कहा कि—पं० माधवाचार्य जी महाराज ! आप शास्त्रार्थ आरम्भ क्यों नहीं करते ? समय बीता जा रहा है आप शीघ्र प्रश्न आरम्भ करिये। माधवाचार्य जी प्रश्न करने से भी घबराते थे। वह जानते थे कि सामने कोन व्यक्ति शास्त्रार्थ करने वाला बैठा हुआ है ? जो उत्तर देते हुए भी बिना रगड़े नहीं छोड़ेगा।

नोट :—पण्डित माधवाचार्य जी पहले भी कई बार श्री पण्डित अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी से परास्त हो चुके थे। इस लिए प्रश्न न करके इधर-उधर की बातों में समय नष्ट करने का यत्न अपने स्वभावानुसार करते रहे। और श्री प्रधान जी से पूछते थे कि क्या पहले शास्त्रार्थ निश्चय हुआ था ? प्रधान जी ने कहा—हमारी तरफ से तो शास्त्रार्थ का चैलेञ्ज किया गया था, तथा बाद में निश्चय भी शास्त्रार्थ का ही हुआ था परन्तु आश्चर्य है आप बिना किसी बात का पहले पता किये यहां आ विराजे। क्या आपको खुद भी नहीं पता कि आप किस लिए आये हैं ? "जनता में हंसी···"।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

अगर शास्त्रार्थ निश्चय किया गया है, तो फिर आपके विज्ञापन में शंका समाधान क्यों छपवाया गया है ? प्रधान जी ने कहा—यह प्रश्न सर्वथा अनुपयुक्त तथा अनावश्यक है। क्योंकि शंका समाधान इसलिए लिख दिया गया है कि विषय आपकी ओर से प्रश्नात्मक था। अर्थात् शंकायें एक

ओर (आपकी तरफ) से ही होनी थी। और समाधान आर्य समाज के पक्ष की ओर से होना था। यदि विषय यह होता कि—"स्वामी दयानन्द जी कृत ग्रन्थ वेदानुकूल हैं या पुराण" ? तो फिर दोनों ओर से प्रश्न होते और दोनों ओर से उत्तर दिये जाते। परन्तु इसमें प्रश्न एक ओर से ही होने थे तथा दूसरी ओर से उत्तर होने थे। इसी लिए शंका समाधान छपवाया गया था। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि यह शास्त्रार्थ नहीं। क्योंकि शास्त्रार्थ का विषय निश्चित होता है। अतः इसका विषय तो पहले से ही निश्चित है। एवं दूसरी बात यह है कि शास्त्रार्थ में समय का दृढ़ प्रतिबन्ध होता है। सो इसमें वह भी हैं शंका समाधान में न विषय कोई निश्चित होता है न समय की ही कोई पाबन्दी होती है। इसलिए यह शास्त्रार्थ ही था परन्तु उभय पक्ष में प्रश्नोत्तर न होकर एक ओर से प्रश्न तथा दूसरी ओर से उत्तर होने थे। इसलिए विज्ञापन में शंका समाधान लिखना भी अनुचित न था। अतः योग्य प्रधान जी ने स्पष्टीकरण कर दिया कि—"शास्त्रार्थ में समय का बड़ा बन्धन होता है"। सो इसमें भी है। शास्त्रार्थ का विषय निश्चित होता है। ऐसा इसमें भी है तीसरी बात शास्त्रार्थ में वक्ता उभय पक्ष के होते हैं। इसमें भी निश्चित हैं। इस हेतु यह शास्त्रार्थ ही है। हां ! प्रश्न आपकी ओर से होने हैं, और उत्तर आर्य समाज की ओर से इसलिए शंका समाधान लिखा गया है। अन्तर कुछ भी नहीं है। आप अपने प्रश्न आरम्भ करिये। इतने पर भी माधवाचार्य जी ने प्रश्न आरम्भ न किये, समय नष्ट करने के लिए एक उपद्रव और खड़ा कर दिया कि प्रश्न भी लिखित हों, और उत्तर भी लिखित ही दिये जावें यह बात बहुत ही हठ तथा दुराग्रह एवं मूर्खता पूर्ण थी। क्योंकि जो कुछ पांच मिनट में बोला जाता है। उसके लिखने में १०-१५ मिनट तक और जो १० मिनट में बोला जायेगा उसके लिखने में २०-३० मिनट तक लग जाते हैं। फिर उसको सुनाना भी होता है। इस प्रकार तीन गुणे से चार गुणे तक समय व्यर्थ लगाना हुआ। यह कौन सी बुद्धिमत्ता है ? फिर प्रश्नोत्तरों का लिखा होना या छपाना आवश्यक हो तो एक पक्ष अपने प्रश्नों की पुस्तक छपा दे दूसरा पक्ष उसका उत्तर छपा देगा। लोग अपने-अपने घर बैठकर पढ़ लेंगे जनता सुनने को आई हुई है। और दोनों पक्ष के पण्डित यहां लिखने बैठ जायें तथा जनता यहां बैठी हुई एक दूसरे के मुंह को ही ताकती रहे। **"टुक-टुक दीदम्। दम न कशीदम"** सर्वथा बेसमझी है। श्री पण्डित अमर सिंह जी ने कहा कि—पण्डित जी आज तो आपको छूट मिल गयी है कि इतने लम्बे विषय पर चाहे जो कुछ पूछें। आप अपने बहुमूल्य समय को व्यर्थ खो रहे हैं यदि मुझे प्रश्न करने का समय दे दिया जावे तो मैं एक मिनट भी व्यर्थ न जाने दूं। तत्काल प्रश्न आरम्भ कर दूं। उत्तर देना तो कठिन होता है आप प्रश्न करने में भी इतने घबरा रहे हैं। पण्डित माधवाचार्य जी ने बड़ी कठिनाई से प्रश्न आरम्भ किये और एक बार में ही सात प्रश्न कर दिये। इस पुस्तक में प्रश्नोत्तर लिखने का ढंग यह है कि—एक-एक प्रश्न और उसका उत्तर पृथक-पृथक लिखा गया है। और प्रश्न व उत्तर के सम्बन्ध में दोनों ओर से पहली-दूसरी आदि किसी भी बारी में जो कुछ अधिक कहा गया है। यह नहीं किया कि पृथक-पृथक लिखा जाये कि अमुक बारी में अमुक ने अमुक विषय में यह कहा, इससे व्यर्थ विस्तार होता है। दोनों वक्ता जिस-जिस क्रम और प्रकार से बोलते रहे उसी क्रम और प्रकार से लिखा जाये तो बहुत विस्तार हो जाय। पुस्तक का आकार तिगुना-चौगुना हो जाये। और लाभ कुछ भी नहीं। एक बात अनेक बार लिखनी पड़े। इसलिए एक-एक प्रश्न और उसका उत्तर तथा उनके साथ सम्बन्ध रखने वाली बातें जो कुछ कही गई हैं, वह उसके साथ लिख दी गई हैं। चाहे वह बात किसी भी बारी में कही गयी हो।

"मन्त्री" (आर्य समाज, हरदुआगंज)

नोट :—पण्डित माधवाचार्य जी ने अपनी पहली बारी में सात प्रश्न किये उत्तर के लिए समय १० मिनट था। प्रश्न तो पांच मिनट में पचास किये जा सकते हैं। परन्तु सात प्रश्नों का उत्तर १० मिनट में कैसे दिया जा सकता है? इसलिए एक बार में अनेक प्रश्नों का करना अनुचित था, पर उन्हें औचित्य-अनौचित्य से कोई प्रयोजन नहीं है। श्री पण्डित अमर सिंह जी ने अपने समय में से एक मिनट पण्डित माधवाचार्य जी को देकर यह पूछा कि १४-१५ फरवरी को अरनियाँ में मैंने प्रश्न किये थे। और आपने उत्तर दिये थे। उस समय आपने ही यह नियम बताये थे कि एक समय में एक ही प्रश्न किया जा सकता है। दूसरे यह कि उत्तर देने के लिए समय का कोई भी प्रतिबन्ध नहीं होता। जब उत्तर पूरा हो जायेगा तभी समाप्त हो जायेगा। चाहे जितना समय लग जाये। कहिये ये दोनों बातें आपने अरनियां में कहीं थी या नहीं? आपने पूछने का जो नया ढंग हमको बताया है उस ढंग से मैं पूछता हूं। आपके पास तो वेद होंगे नहीं। मेरे पास से वेद लीजिये और सिर पर रखकर कहिये कि आपने यह अरनियाँ (बुलन्दशहर) में कहा था या नहीं? माधवाचार्य जी ने इस पर स्पष्ट हां अथवा ना कुछ न कहके आंय-बाँय-शायं द्वारा ही टाल दिया। सारी जनता को पता लग गया कि वहाँ ऐसा अवश्य कहा होगा। श्री ठाकुर जी ने कहा कि, आपके नियम तो गिरगिट की तरह रंग बदलते है। चलिये में उत्तर देना आरम्भ करता हूं।

बीच में ही श्री माधवाचार्य जी ने कहा कि—ठीक है! मैं क्रम से प्रश्न आरम्भ करता हूं। आप उत्तर देंगे तो जानूंगा!

"**संकलनकर्त्ता**"

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

भाइयो! अब शान्ति से बैठो! शास्त्रार्थ आरम्भ हो रहा है, देखो स्वामी दयानन्द जी महाराज की प्रतिज्ञा है कि हमने जो कुछ भी लिखा है, वह सब वेदानुसार ही लिखा है। उनकी लिखी सन्ध्या जिसे आर्य समाजी करते हैं, वह भी वैदिक कहलाती है। पर उसमें, "ओ३म वाक् वाक्! ओ३म प्राण: प्राण:" आदि मन्त्र स्वामी जी के कपोल कल्पित हैं। यदि वह वैदिक हैं तो बताइये वह किस वेद में और कहां पर हैं?

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी —

सुनिये पण्डित जी महाराज! सन्ध्या के अन्दर जिस-जिस वेद का जो जो मन्त्र है, उस-उस के साथ उस-उस वेद का पता लिखा हुआ है। "ओ३म वाक् वाक्…" आदि वेद के मन्त्र नहीं हैं। हाँ वेदानुसार अवश्य हैं। आप अपनी सन्ध्या में भी देखिये उसमें भी है या नहीं? यदि हैं तो वहां किसके कपोल कल्पित हैं? और वहां वेदानुकूल हैं या वेद विरुद्ध? पण्डित जी महाराज! आपकी सन्ध्या में यह मन्त्र ज्यों के त्यों विद्यमान हैं। आपकी सन्ध्या में वही मन्त्र वेदानुकूल और वही मन्त्र हमारी सन्ध्या में वेद विरुद्ध? धन्य हो महाराज! यह कहां का न्याय है? इन मन्त्रों को कपोल कल्पित और वेद विरुद्ध कहना अपने अज्ञान को प्रकट करना है।

कृपा करके वह वेद मन्त्र बोलिये जिसके यह विरुद्ध हो, वह कौन-सा मन्त्र है ? और मैं इनके वेदानुकूल होने में वेद मन्त्र बोलता हूं सुनिये—

प्राणम्मे पाह्यपानम्मे पाहि व्यानंमे पाहि चक्षुर्म उर्व्या विभाहि श्रोत्रं मे-श्लोकय ।
अपः पिन्वौषधोर्जिन्व द्विपादव चतुष्पात्पाहि दिवो वृष्टिमेरय ॥८॥

(यजुर्वेद अध्याय १४ मन्त्र ८,)

इस मन्त्र में कहा गया है कि, हे प्रभु मेरे प्राणों की रक्षा करो, मेरे नेत्रों को प्रकाशयुक्त करो, मेरे कानों को शास्त्र श्रवण योग्य बनाओ ।

प्राणश्च मेऽपानश्च मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं च मऽआधीतं च मे ।
वाक् च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥२॥

(यजुर्वेद अध्याय १८ मन्त्र २,)

अर्थ—मेरी वाणी, मेरा मन, मेरी आँखें मेरे कान और मेरी चतुराई धर्म के अनुष्ठान से युक्त हों ।

वाङ्म आसन्नसोः प्राणश्चक्षुरक्षणोः श्रोत्रं कर्णयोः । अपलिताः केशा अशोणादन्ता बहु बाह्वोर्बलम् ॥१॥
ऊर्वोरोजो जंघयोर्जवः पादयोः प्रतिष्ठा । अरिष्टानि मे सर्वात्मनि भृष्टः ॥२॥

(अथर्ववेद काण्ड १९ सूक्त ६ मन्त्र १ व २,)

इसमें कहा गया है कि हे परमेश्वर ! मेरे मुख में वाणी, दोनों नथुनों में प्राण, दोनों आखों में दृष्टि, दोनों कानों में सुनने की शक्ति केश अनभूरे, दांत अचलायमान और दोनों भुजाओं में बल हो । और मेरे दोनों पैरी की जंघाओं में शक्ति हो और टाँगों में वेग हो । मेरे पैरों में दृढ़ता हो, मेरे सब अंग निर्दोष और आत्मा गिरा हुआ न होवे । अर्थात् मैं स्वस्थ प्रसन्न एवं आत्मशक्ति वाला बनूं ।

महाराज जी ! आपको अपनी संध्या भी याद नहीं, उसके मंत्रों का भी पता नहीं कि आपकी संध्या में कौन-कौन से मन्त्र आते हैं ? और फिर उनको देखने व याद करने की जरूरत भी क्या है ? जब केवल जल के छींटे मारने और घण्टी हिलाने से काम बन जावे । महाराज जी कुछ पढ़ा करिये, मेरे पास एक दो नहीं इनकी वैदिक अनुकूलता के लिए पचासों वेद मन्त्र हैं । और आप इनके वेद विरुद्ध होने के सम्बन्ध में एक भी मन्त्र नहीं दिखा सकते हैं ।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर साहब ! ऐसे चैलेन्ज हमने बड़े सुने हैं । जब वे मन्त्र दिखलाने पड़ेंगे तो पता लगेगा । कहना और कहकर श्रोताओं के ऊपर अपने पांडित्य का रोब डालना और बात है । आप पचास की बात करते हैं, दस-पाँच ही बोल कर दिखा दें तो हम जान लें, (आवेश में आकर) भाइयो ! पूछो !! इन आर्य समाजियों से, जिन ग्रन्थों को यह वेदानुकूल सिद्ध करने चले हैं । उनमें संस्कार विधि भी है स्वामी दयानन्द ने एक मन्त्र जो संस्कार विधि में लिखा है, वह वेद में कहां है, वह मन्त्र इस प्रकार है जिसे बोलकर ये यज्ञोपवीत धारण करते हैं देखिये—

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्रं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥१॥

इस मन्त्र को आर्य समाजी लोग जनेऊ धारण करने के लिए प्रयोग करते हैं। यदि ठाकुर साहब आप इसे वेद में दिखा दोगे तो मैं आपको १००) रुपये इनाम दूंगा।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

आपने पण्डित जी आज तक ऐसे चैलेन्ज सुने ही हैं, देखे नहीं, आज देख भी लीजिये—प्रथम तो आप अपने घरों में टटोलिये, आप इतना कष्ट नहीं करते हों तो ध्यान देकर सुनिये—काशी (वाराणसी) की छपी "**बृहत् यजुर्वेदीयसन्ध्योपासनम्**" नाम से आपकी सन्ध्या की पुस्तक है। उसके पृष्ठ ९ पर, वह मन्त्र इस प्रकार है। (१) **ॐ वाक् वाक्** (२) **ॐ प्राणः प्राणः** (३) **ॐ चक्षुः चक्षुः** (४) **ॐ श्रोत्रम् श्रोत्रम्** (५) **ॐ नाभिः** (६) **ॐ हृदयम्** (७) **ॐ बाहुभ्यांयशोबलम्** (८) **ॐ करतल कर पृष्ठे।** दूसरा इस प्रकार छपा है। (१) **ॐ भूः पुनातु (शिरसि)** (२) **ॐ भुवः पुनातु (नेत्रयोः)** (३) **ॐ स्वः पुनातु (कण्ठे)** (४) **ॐ महः पुनातु (हृदये)** (५) **ॐ जनः पुनातु (नाभ्यां)** (६) **ॐ तपः पुनातु (पादयोः)** (७) **ॐ सत्यं पुनातु पुनः (शिरसि)** (८) **ॐ खं ब्रह्म पुनातु (सर्वत्र)**। यही वाक्य इसी प्रकार कलकत्ते में छपी "**यजुर्वेदीय त्रिकाल संध्या**" के पृष्ठ ६-७ पर छपे हुए हैं। ये दोनों पुस्तकें मेरे पास हैं। आप अगर देखना चाहें तो देख सकते हैं। अब इनकी वेदानुकूलता के प्रणाण देखिये।

ओं वाक् वाक्—(१)—**जिह्वा में भद्रं वाङ् महः**…… (यजुर्वेद अध्याय २० मन्त्र ६,)। अर्थात् मेरी जीभ कल्याणकारी भोजन करने वाली और वेदों तथा शास्त्रों के ज्ञान का विस्तार करने वाली हो। (२)—**वाचो मे विश्व भेषजः**…… (यजुर्वेद अध्याय २० मन्त्र ३४,)। अर्थात् मेरी वाणी सारे विश्व के सारे रोगों और दोषों को नष्ट करने वाली सर्वोत्तम औषधि है, तथा हो। (३)—**वाचे स्वाहा**…… (यजुर्वेद अध्याय २२ मन्त्र २३,) अर्थात् (अच्छी सत्य बोलने वाली) वाणी के लिए स्वाहा। (४)—**वाचं मे तर्प्पयत**…… (यजुर्वेद अध्याय ६ मन्त्र ३१,) अर्थात् मेरी वाणी को तृप्त करिये। (५)—**वाचे में वर्चोदा वर्चसे पवस्व**…… (यजुर्वेद अध्याय ७ मन्त्र २७) अर्थात्मेरी वाणी में वर्चस, शक्ति, सामर्थ्य और पवित्रता दीजिये। (६)—**वाचं मे पिन्व**…… (यजुर्वेद अध्याय १४ मन्त्र १७,) अर्थात् मेरी वाणी को अच्छी शिक्षासे युक्त कीजिये। (७)—**वाक् च मे……यज्ञेन कल्पन्ताम्**॥२॥ (यजुर्वेद अध्याय १८ मन्त्र २,) अर्थात् मेरी वाणी को ज्ञान, गमन, प्राप्ति और दान से युक्त कीजिये। (८)—**वाक् यज्ञेन कल्पताम्**…… (यजुर्वेद अध्याय १८ मन्त्र २९,) अर्थात् मेरी वाणी यज्ञ कार्यों में समर्थ हो। (९)—**वाचं ते शुन्धामि**…… (यजुर्वेद अध्याय ६ मन्त्र १४,) अर्थात् मैं तेरी वाणी को शुद्ध करता हूं। (१०)—**वाक् त अप्यायताम्**…… (यजुर्वेद अध्याय ६ मन्त्र १५,) अर्थात् मैं तेरी वाणी को सब गुणों से युक्त करता हूं। मैंने पण्डित जी आपको इतने प्रमाण केवल "ॐ वाक् वाक्" पर दिये। आप कम से कम विरोध में एक ही मन्त्र बोल दीजिये। आपने एक मन्त्र संस्कार विधि में से पढ़कर चैलेञ्ज किया कि, अगर इस मन्त्र को वेद में दिखा दो तो १००) रु० इनाम दूंगा। आपको पण्डित जी महाराज! किसने बता दिया, कि यह मन्त्र वेद का है? महर्षि दयानन्द जी ने कहाँ लिखा है कि यह मन्त्र वेद का है? यदि आप इसके साथ यह लिखा दिखा दो कि, यह वेद का मन्त्र है, तो मैं आपको नकद ५००) रु० इनाम दूंगा। जब ऋषि

दयानन्द जी ने इसको वेद मन्त्र बताया ही नहीं, तब आपको इसे वेद में पूछने का क्या अधिकार है ?

आप यह कहिये कि यह मन्त्र वेद विरुद्ध है, तब जानें, महाराज जी आप भी तो इसी से यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहनते और पहनाते हैं। आपको यह भी नहीं पता कि यह मन्त्र कहाँ का है ? आप हम से जिज्ञासु बनकर पूछिए फिर हम बतायेंगे, आगे मैं समय मिलने पर और भी प्रमाण दूंगा।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

"इमं त उपस्थं मधुना संसृजामि प्रजापतेर्मुखमेतत् द्वितीयम्" । यह मन्त्र किस वेद का है ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज आप ऐसे-ऐसे प्रश्न करके क्यों समय बर्बाद करते हो, । अगर कुछ आता-जाता नहीं है तो क्यों शास्त्रार्थ करते हो ? यह मन्त्र किसी भी वेद का नहीं है, कौन कहता है, कि यह वेद का मन्त्र है, किस ग्रन्थ में इसके नीचे वेद का पता दिया है। न कहीं लिखा न कोई कहता है, तो फिर आप यह पूछिये कि यह कहाँ का हैं, जब आपको पता ही नहीं हैं। जब न हम कहते न ऋषि दयानन्द जी ने कहीं इस मन्त्र को वेद का लिखा, तो आप वेद में पूछने वाले कौन होते हैं ? जिज्ञासु बनकर पूछिये, आपको बता दिया जायगा । पर ठीक है, और प्रश्न आप कर भी क्या सकते हैं ? ऐसे-ऐसे प्रश्नों से ही प्रश्नों की सूची तैयार कर रक्खी है। इस सूची को बढ़ाना चाहो तो मनुस्मृति, दर्शन, ब्राह्मणग्रन्थ और उपनिषद आदि ग्रन्थों के प्रमाण सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों में ऋषि दयानन्द जी ने दिये हैं, एक-एक करके सभी को वेदों में पूछिये, समय भी पूरा हो जायेगा, आपको बुलाने वाले सज्जन भी खुश हो जायेंगे, कि पण्डित जी ने सैकड़ों प्रश्न कर दिये, धन्य हो आपकी बुद्धि को ! आपने यह क्यों समझ लिया कि, हम आर्य लोग वेद को ही प्रमाण रूप मानते हैं। दूसरे किसी ग्रन्थ को नहीं। ऐसा तो न हमने कभी कहा —न महर्षि दयानन्द जी ने कहीं ऐसा लिखा है। सत्यार्थ प्रकाश के मुख पृष्ठ पर ही देखिये वहाँ लिखा है कि—

"वेदादि विविध सच्छास्त्र प्रमाण समन्वितः" और संस्कार विधि के आरम्भ में ऋषि के बनाये अनेक श्लोकों में से यह भी है। **"वेदादि शास्त्र सिधान्तमाध्याय परमादरात्"** इनका अभिप्रायः स्पष्ट है कि, हम केवल वेद ही नहीं, बल्कि वेद और वेदानुकूल सर्व सत्य शास्त्रों को मानते हैं। ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति, धर्म सूत्र, ग्रह्य सूत्र, रामायण, महाभारत आदि ।

इन ग्रन्थों के यदि कहीं कोई भाग वेद विरुद्ध है, तो उसे छोड़कर वेदानुकूल को हम स्वीकार करते हैं। आपका भी दावा वेदानुकूल के ही मानने का है। **"इमं त उपस्थं मधुना संसृजामि·······-"** यह मन्त्र आपकी पद्धति में भी विद्यमान है, वेद विरुद्ध मानते हो तो क्यों नहीं निकाल फेंकते ? आपको अगर पता नहीं है तो हमसे जिज्ञासु भाव से पूछिये ।

नोटः— मैं अपने नये शास्त्रार्थियों के लिए इनके पते नीचे दिये देता हूं । देखें तथा शास्त्रार्थ की तैयारी किया करें। (१) **ओं प्राणः प्राणः तथा ओं वाक् वाक्** इनकी पूर्ण जानकारी हेतु मेरी पुस्तक **"सन्ध्या के दो मन्त्रों की व्याख्या"** जिसको **"अमर स्वामी प्रकाशन विभाग"**ने ही प्रकाशित किया

है, मंगाकर पढ़िये। (२) "**ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं**..................." तथा **इमँ त उपस्थं मधुना**............(पारस्कर ग्रह्य सूत्र, २।२।११,) तथा (मन्त्र ब्राह्मण १।१।३,)

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर साहब इस प्रकार अपनी बातों को वेदानुकूल सिद्ध करेंगे तो पांच वक्त की नमाज भी सिद्ध हो जावेगी। और हमारे वेद तो ग्यारह सो इकत्तीस हैं। हमारे सारे सिद्धान्त और सारे मन्त्र हमारे वेदों में निकल आवेंगे। आपके वेद तो केवल चार ही हैं, उनमें आप क्या-क्या निकालते फिरोगे ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पांच वक्त की नमाज वेदानुकूल आपके सम्मुख सिद्ध हो जावेगी, जो वेदों को कभी नहीं पढ़ते हो। हम तो वेदों को पढ़ते हैं। जहां कहा है कि—**उपत्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम्। नमो भरन्त एमसि ॥७॥** (ऋग्वेद मण्डल १, सूक्त १, मन्त्र ७) इस मन्त्र में स्पष्ट दो काल की सन्ध्या हैं। पांच वक्त की नमाज इसके विरुद्ध हैं, ११३१ वेदों की डींग आप बहुत मारते हैं। मैं कहता हूं कि ११०० तो रहने दीजिए वह तो माफ करता हूं। आप केवल ३१ वेद ही बतलाइये कि वह कहां तथा किस प्रैस में छपे हैं और कहां मिलते हैं ? या केवल डींग मारने को ही ११३१ बताते रहते हैं आपने कभी देखे-पढ़े और सुने भी हैं ? मेरा दावा है कि, आपने कभी इनके नाम भी नहीं सुने, आपके वह वेद नष्ट हो गये, उनके साथ, साथ आपका सम्प्रदाय भी नष्ट हो गया, आपको भी हमारे चारों वेदों की ही शरण लेनी पड़ती हैं।

यह आश्चर्य है कि, आपको यज्ञोपवीत वाला मन्त्र वेदों का है अथवा कहां का ? यह भी पता नहीं ! महाराज जी यह वचन न तो चारो वेदों का है, तथा न ११३१ वेदों में से हैं। यह तो पारस्कर ग्रह्यसूत्र का वचन है। और "**इमं ते उपस्थं**..." इत्यादि यह वचन मन्त्र ब्राह्मण का है, आपने व्यर्थ में इन्हें वेदों में पूछकर समय नष्ट किया "**ओं वाक् वाक्**" आदि का आधार मैंने बता ही दिया।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर साहब अगर आप इन सबको वेदानुकूल मानो तो सर्वत्र वेद वाक्य दिखाओ, और स्वामी दयानन्द जी को चाहिए था कि, सर्वत्र वेद वाक्यों को ही लिखते। अपने और अन्य ग्रन्थों के वाक्य लिखकर उन्हें वेदानुकूल कहने का क्या अर्थ है ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

वाह ! वाह !! पण्डित जी धन्य हो, अब तो भगवान ही कृपा करेंगे तो कल्याण होगा। पण्डित जी महाराज आप यह बताइये कि अगर वेद वाक्य ही लिखते तो उनको वेदानुकूल क्यों कहते ? वह तो वेद वाक्य ही होते, वेदानुकूल क्या ? वेदानुकूल कहने का अभिप्राय ही यह हैं कि वह वेद के वाक्य नहीं है वेद वाक्यों के आधार पर अन्य वेदानुकूल ग्रन्थों के वाक्य हैं। महाराज जी ! सोचकर तो कुछ

कहा करिये । यदि मनुस्मृति मैं मनु जी के वाक्य न होते, और उनकी जगह पर वेद वाक्य ही वेद वाक्य होते, तो वह वेदानुकूल मनुस्मृति क्यों होती ? वह वेद ही होता, और सत्यार्थ प्रकाश में यदि ऋषि के अपने और अन्य शास्त्रों के वाक्य न होते, और केवल वेद वाक्य ही होते तो उसका नाम सत्यार्थ प्रकाश क्यों होता ? वेद ही होता । वेद में बीज रूप मूल विधान होता है, और शास्त्र में तदनुकूल विस्तार से विधि और व्याख्या होती है । वह ऋषियों के अपने वाक्य होते हैं, वेदानुकूल तो है ही वह जो वेद वाक्य न हों पर वेद से अविरुद्ध हों ।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

सत्यार्थ प्रकाश में स्वामी जी ने चोटी कटाने का उपदेश देकर ईसाइयत का प्रचार किया है, दिखाइये चोटी कटाना किस वेद में लिखा है ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज आर्य समाज ने लाखों मुसलमानों को और सहस्रों ईसाइयों को शुद्ध करके उनके शिरों पर चोटियां रखवाई है । लाखों की ही नहीं बल्कि करोड़ों हिन्दुओं को मुसलमान बनने से रोक कर करोड़ों चोटियों की रक्षा की, ऋषि दयानन्द जी की कृपा से करोड़ों चोटियों की रक्षा हुई, उनको ईसाइयत का प्रचारक बताना और चोटी कटाने का उपदेश उन्होंने दिया, ऐसा कहना कृतघ्नता हैं और मिथ्या दोषारोपण हैं । किसी विशेष अवस्था में चोटी कटाना और बात है । संन्यासी चोटी भी कटा देता है, और यज्ञोपवीत भी उतार देते हैं । वह ईसाई अथवा मुसलमान नहीं कहलाते हैं ।

फोड़े, फुन्सी, खाज या चेचक की बहुतायत में यज्ञोपवीत भी उतार दिया जाता है । और शिर में फोड़े आदि होने पर चोटी भी कटवा दी जाती है । ऐसा करने से कोई भी ईसाई नहीं बन जाता । "केशान्त संस्कार" के प्रकरण में इस प्रकार है कि, अगर शीत प्रधान देश हो तो कामाचार हैं । चाहे जितने केश रक्खे । जो अति उष्णदेश हो तो, सब शिखा सहित छेदन करा देना चाहिए । साधारण उष्ण नहीं उष्ण देश भी नहीं, अति उष्ण देश हो तो, यहां देश विशेष का निर्देश है । काल और पात्र भी देखना चाहिये । यह देखना चाहिये कि शिखा रखने से उष्णता अधिक होगी और बुद्धि कम हो जाने का भय हो तो सब छेदन करा देना चाहिये । सीधी सी बात है, विशेष अवस्था हो तो कटानी चाहिये, वैसे ही नहीं । जैसे, फोड़े फुन्सी आदि जो उष्णता से होते हैं, होने सम्भव हों तो यह शर्त है, इसके लिये प्रमाण की क्या आवश्यकता है ? और प्रमाण अवश्य ही चाहिये तो लीजिये आपकी कात्यायन स्मृति में लिखा है कि—**स शिखं वयनं कार्यमास्नानांदृह्मचारिणा** ।।१४।। (कात्यायन स्मृति खण्ड २५, श्लोक १४,) अर्थात् शिखा सहित बालों को कटा देना चाहिये । और भी देखिये तथा नोट करते जाइये ।**"मुण्डोवा जटिलो वा स्पादथवास्याच्छिखा जटः"** ।।२१६।। (मनुस्मृति अध्याय २२ श्लोक २१६,) इस पर कुल्लूक भट्ट की टीका देखिये—**"मुण्डित मस्तक शिरा केशो जटावान्वा शिखैव वा जटा जाता यस्य"** अर्थात् या तो शिखा सहित बाल कटा कर मुण्डित मस्तक हो या जटायें रखा लें । या चोटी रखा लें, यह सब ब्रह्मचारी के लिए सुविधायें दी हैं । जिससे पढ़ने में कठिनाई न पड़े । वेद में भी अगर देखना चाहो तो लो मैं वेद का भी प्रमाण प्रस्तुत करता हूं । **"कुमारा विशिखा इव·····"** (यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र १८,) इस पर उव्वट का भाष्य सुनिये—**"विगत शिखा कर्त्त मुण्डा"** ।

अर्थात् शिखा सहित सर्व मुण्डित, आपके ही आचार्य महीधर का भाष्य देखिये—**"विशिखा शिखा सहिता मुण्डित मुण्डा"** अर्थात् शिखा सहित शिर मुंड़े हुए।

नोट—केशान्त संस्कार ब्राह्मण के बालक का १६ वें वर्ष में और क्षत्रिय के बालक का बाईसवें वर्ष में और वैश्य के बालक का चोबीसवें वर्ष में होता है।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर जी आप कहां तक वकालत करोगे ? महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में ही लिखा है कि प्रसूता स्त्री छः दिन दूध पिलाये, पश्चात धाई पिलाया करे। यह सत्यार्थ प्रकाश में वेद विरुद्ध लिखा है। जो बालक किसी दासी आदि का दूध पी लेता था, तो उसका शिर काट दिया करते थे।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सत्यार्थ प्रकाश में यह कहीं नहीं लिखा है कि, प्रसूता माता दूध पिलावेगी तो नरक में जावेगी, या पापिनी हो जायेगी, वहां तो यह लिखा है कि—प्रसूता का दूध छः दिन तक बच्चे को पिलावें। पश्चात् धाई पिलाया करे परन्तु धाई को उत्तम पदार्थों का खान-पान-माता-पिता करावें। जो कोई दरिद्र हो धाई न रख सके तो वे गाय वा बकरी के दूध में उत्तम औषधि जो कि बुद्धि, पराक्रम आरोग्य करने हारी हों, उनको शुद्ध जल में भिगो-औटा छानकर दूध के बराबर जल मिलाके बालक को पिलावें। और जहां धाई, व गाय, बकरी आदि का दूध न मिल सके वहां जैसा उचित समझें वैसा करें। प्रसूता क्यों न पिलावे ? इसका भी कारण लिखते है कि—

क्योंकि, प्रसूता स्त्री के शरीर के अंश से बालक का शरीर होता है। इसी लिए स्त्री प्रसव के समय निर्बल हो जाती है। इसलिए प्रसूता स्त्री दूध न पिलावे, कितनी सीधी, सच्ची बुद्धिमत्ता की बात है। इस पर भी आप आक्षेप करते हैं। बड़ा आश्चर्य है। यदि आप इसको वेद विरुद्ध कहते हैं, तो वेद का मन्त्र बोलिये, बतलाइये यह बात वेद के किस मन्त्र के विरुद्ध है ? इसके विरुद्ध वेद का कोन सा मन्त्र है ? आप तीन काल में भी नहीं बता सकेंगे। वेद का कोई भी मन्त्र इसके विरुद्ध नही है। इससे भी सिद्ध हो गया कि, यह वेदानुकूल अर्थात् वेद के अविरुद्ध है। यदि प्रमाण ही चाहिये तो सुनिये और नोट करिये—**"नक्तोषसा समनसा विरूपेधापयेते शिशुमेकं समीची"** ॥२॥ (यजुर्वेद अध्याय १२ मन्त्र २,) इस मन्त्र में कहा गया है, जैसे दो भिन्न-भिन्न रूप वाली स्त्रियां माता और धाई एक बालक को समान मन से दूध पिलाती हैं। वैसे ही रात्रि और उषा दिवस रूपी सन्तान को सुख रूप दूध पिला कर पालती है। यहाँ धाई का दूध पिलाना स्पष्ट लिखा है। और सुनिये आपके चौबीस अवतारों में से एव अवतार धन्वन्तरि जी ने अपने शिष्य सुश्रुत को कहा है, कि बालक को दूध पिलाने वाली धाइयें हों। जिनका दूध प्रसन्नता को देने वाला हो। **"ततो यथा वर्ण धात्रीमुपेयात्"** पश्चात् समान वर्ण वाली धाई नियुक्त करें। आगे यह भी बताया है कि—कैसी धायी का दूध न पिलाया जावे। देखो—

सुश्रुत शारीरिक स्थान अध्याय १० वचन ३८ व ३९ तथा चरक शारीरिक स्थान अध्याय ८ वाक्य १०७ व १०८, तथा **"अथ ब्रूयात् धात्री मानयतेति"** अर्थात् (कोई यह कहे कि धाई को

लाओ) । एवं **समानवर्णा यौवनस्थां.......जीविद्वत्सां पुं-वत्सां दोग्ध्रीम स्तनस्तन्यप दुपेतामिति ॥** अर्थात् समान वर्ण वाली युवती जिसका बालक जीता हो, और लड़के वाली हो, जिसके स्तनों में बहुत-सा दूध हो । और सुनिये आपके पांचवे वेद "गरुड़ पुराण" में भी कहा है—

विदारीकन्दस्वरसं मूलं, कार्पासजं तथा । धात्री स्तन्यविशुध्यर्थं मुंगयूषो रसाशिनी ॥१३॥
(गरुड पुराण आचार कांड अध्याय १७२ श्लोक १३,)

इसमें कहा है कि, विदारी के फूलों का रस, कपास की जड़ तथा मूंग का यूष (शूप) धायी के दूध को शुद्ध करने के लिए रसायन है । इसके साथ ही सत्यार्थ प्रकाश की भांति यह भी लिखा गया है कि, यदि धाई न मिले तो बकरी या गाय का दूध बालक पिये । "**स्तन्याभावे पयश्छाग गव्यं वातद्गुणं पिबेत् ॥१५॥** कहिये यह पुराण वेदानुकूल है, तथा महर्षि व्यास रचित हैं ? उनमें वही है जो सत्यार्थ प्रकाश में है, बाल्मीकीय रामायण में श्री रामचन्द्र जी की धाई का होना स्पष्ट ही लिखा हुआ है । बतलाइये इतिहास में धाई का दूध पीने वाले कोन-से बालक का सिर काटा गया ? चित्तौड़ के महाराणासांगा (संग्रामसिंह) के पुत्र उदयसिंह के लिए भी एक धाई थी, जो सारे इतिहास में "**पन्ना धाई**" के नाम से प्रसिद्ध है ।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर साहब स्वामी दयानन्द जी ने संस्कार विधि में लिखा है कि, गर्भाधान के समय स्त्री, पुरुष, नाक के सामने नाक, और मुख के सामने मुख करें । और प्रसूता (जच्चा) योनि संकोचन करें । यह स्वामी जी ने कैसे लिखा है ? यह वेद विरुद्ध है ।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी –

इस पर आपको क्यों शंका हुई ? यही उचित विधि है । आप क्या पीठ पीछे मुंह करना पसन्द करते हैं ? (श्रोताओं में हँसी......) स्वामी जी ने सर्व सद्ग्रन्थों में इस विषय में ऐसा ही लिखा देखा । और बुद्धि के अनुकूल देखकर आवश्यकतानुसार लिख दिया, वैसे तो प्रत्येक समझदार और भला आदमी इसी विधि को पसन्द करेगा । इसके लिए प्रमाण की आवश्यकता नहीं, फिर भी मैं झूठे को घर तक पहुंचाता हूं । लीजिये प्रमाण सुनिये -

न चन्युब्जां पार्श्वगतां वा संसेवेतन्युब्जाया वातों बलवान् स योनिं पीडयति । पार्श्वगतताया दक्षिणे पार्श्वे श्लेष्मा संच्युतोऽपि दधाति गर्भाशयं ॥ वामे पित्तं पार्श्वे तस्यां पीडितं विदहति रक्त शुक्रम् तस्मदुत्तान। सतो बीजं ग्रहणीयात् । तस्याहि यथा स्थानमेव तिष्ठन्ते दोषाः । पर्याप्ते चैनां शीतोदकेन परिषिञ्चेत् ॥
(चरक शारीरिक स्थान अध्याय ८ वाक्य ७,)

अर्थ—स्त्री ओंधे लेटकर या बायें अथवा दाहिने करवट लेकर सहवास न करे, क्योंकि ओंधी होने से बलवान वायु योनि को पीड़ित करता है। दाहिने करवट लेटकर गर्भाधान करने से कफ टपककर गर्भाशय को आच्छादित कर देता है । और बाईं करवट लेकर सहवास करने से पीड़ित हुआ

"चित्त" रज और वीर्य को दूषित कर देता है। इसलिए सीधी उतान (चित्त) लेटकर स्त्री, पुरुष के वीर्य को ग्रहण करे आदि। गर्भाधान पाप कर्म नहीं है। यह परम पवित्र और पुण्य कर्म तथा यज्ञ है, पापियों की दृष्टि में इसका वर्णन अश्लील है, और अपवित्र है, परन्तु शुद्ध अन्तः करण ऋषियों की दृष्टि में वह आवश्यक वर्णनीय विषय है। इसलिए ऋषियों ने इसका निःसंकोच वर्णन किया है। सुनिये—**अथ च यामिच्छेद्दधीतेति तस्यामर्थनिष्ठाय मुखेन मुखं संधापापन्याभि प्राण्याद् इन्द्रियेण ते रेत सारेत आद्यामिति गर्भिण्येव भवति ॥११॥** (बृहदारण्यक उपनिषद् अध्याय ६ ब्राह्मण ४ मन्त्र ११,) अर्थात् इसके बाद वह पुरुष जिस स्त्री के प्रति चाहे कि वह गर्भ को धारण करे। तो उस स्त्री की योनि में अपनी प्रजनन इन्द्रिय को रखकर मुख से मुख को मिलाकर प्रवेश कर उद्दीपन करे। और ऐसा कहे कि वीर्य दान देने वाली अपनी इन्द्रिय के साथ तेरे गर्भाशय में वीर्य को स्थापित् करता हूं। तब वह स्त्री अवश्य गर्भवती होती है? कहिये पण्डित जी महाराज अब और इससे स्पष्ट क्या प्रमाण चाहिये? आप पूछते हैं लिखा क्यों है? लिखा यों कि कामी पुरुष काम वासना के वश में होकर अनेक प्रकार की, कुचेष्टा और मैथुन में कुत्सित रीतियाँ बरतते हैं। धर्मात्मा पुरुष गर्भाधान के समय यह ध्यान रखें कि, हम काम वासना पूर्ण करने के लिए सहवास नहीं कर रहे हैं। प्रत्युत हमारा उद्देश्य उत्तम सन्तान पैदा करने का है। यदि इसके विपरीत करेंगे तो सन्तान कुरूप, बेढंगी उत्पन्न होगी। आपको याद नहीं कि आपके एक अवतार व्यास जी ने अम्बिका के साथ नियोग करते हुए समागम किया वह भय से उनके साथ आंख न मिला सकी, इस कारण अन्धा धृतराष्ट्र पैदा हुआ।

अतः आंख के सामने आंख होनी ही चाहिए, आपके पुराणों में बहुत में उलटे-पुलटे गर्भाधान मौजूद हैं, देखिये तथा नोट करिये—(१)—सूर्य ने संज्ञा की नाक में गर्भाधान कर दिया तो दो अश्विनी कुमार उत्पन्न हुए। (२)—शिवजी ने अग्नि के मुख में गर्भाधान कर दिया। (३)—अंजना के कान में गर्भाधान हो गया। (४)—युवनाश्व राजा (पुरुष) को गर्भाधान हो गया।

गर्भाधान कैसे तथा कहाँ से हुआ? यह पण्डित जी आप जाने या आपके धर्मशास्त्र! उसकी कोख फाड़कर मान्धाता को निकाला गया, इसीलिए ऋषियों ने विधि लिखी कि, कहीं लोग ऐसे-ऐसे गलत गर्भाधान न करने लग जायें, आपके अवतार धन्वन्तरि ने सुश्रुत में बताया है कि, सन्तान के नपुंसक (हिजड़ा अथवा हिजड़ी) उत्पन्न होने का कारण विपरीत ढंग से गर्भाधान करना है। यथा स्त्री को भांति पुरुष वा पुरुष की भाँति स्त्री क्रिया करके सम्भोग करें। तो सन्तान हिजड़ा या हिजड़ी पैदा होगी। हाँ! अब प्रसूता का योनि संकोचन शेष रहा सो सुनिये, प्रसूता स्त्रियों के लिए सारे संसार में अनेक प्रकार की चिकित्सा की जाती है। जिससे बालक उत्पन्न होने से विकृत हुई योनि ठीक हो जावे। घर-घर में सभी व्यक्ति शराब आदि में मुलायम वस्त्र या रुई आदि भिगो-भिगोकर योनि में रखते हैं। डाक्टर लोग प्रसूता को शराब के अन्दर बिठाते भी हैं। परन्तु आपको क्या प्रयोजन? आपको तो येन-केन प्रकारेण आर्य समाज की हँसी उड़ाना अभीष्ट है, सो भाँति-भांति की आकृतियों को बना कर कुछ कुचेष्टायें करके अपने भक्तों को प्रसन्न करना है। अर्थ हो चाहे अनर्थ। आपने योनि संकोचन का नुस्खा वेद में से पूछा है। मैं आपके घर में से ही दिखाये देता हूं। देखिये आपका पाँचवाँ वेद (पुराण) क्या कहता है?—

शंख पुष्पी, जटामासी, सौमराजीच फलुकम्। माहिषं नवनीतं च गुरो कारणमुत्तमम् ॥६॥

सनातनी च पक्षाणि क्षीरेणाज्येन पेषयेत् ।।७।। गुटिकाँ शोधितां कृत्वा स्त्री योन्यां प्रवेशयेत् । दशवार प्रसूतापि पुनः कन्या भविष्यति ।।८।। (गरुड़ पुराण, आचार काण्ड, अध्याय १८, श्लोक ६, ७, ८,)

कहिये कितना बढ़िया नुसखा है ? और बिना फीस के बतला रहा हूं । पण्डित जी महाराज !

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

मरे हुए पति की लाश पड़ी हुई है, और उसके पास बैठ के रोती हुई स्त्री के लिए स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं । "**हे स्त्री ! तू इस लाश के पास से उठ और इसका आश्रय छोड़कर इन खड़े हुओं में से किसी हट्टे-कट्टे को चुन ले । और उससे सन्तान उत्पन्न कर, इस लाश से कुछ न होगा,**" बताओ ठाकुर साहब ! बताओ... ये किस वेद में और कहां पर लिखा है ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

झूठ ! झूठ !! महाझूठ !!! सत्यार्थ प्रकाश में कहीं भी नहीं लिखा कि मरे हुए पति की लाश पड़ी हुई है, और उसके पास बैठी हुई स्त्री को कोई नियोग के लिए कहे । झूठ पर और झूठ । "इन खड़े हुओं में से किसी हट्टे-कट्टे को चुन ले" क्या यह सत्यार्थ प्रकाश का लेख है ? पण्डित जी महाराज ! कहते हुए भी कुछ लज्जा नहीं आई । पर ! आये किसको और कहाँ से आये, सत्यार्थ प्रकाश में वह मन्त्र दिया हुआ है, जो इस प्रकार से है—

उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं गता सुमेतमुपशेष एहि ।
हस्त ग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभिसंबभूव ।।८।।

(ऋग्वेद, १०।१८।८,)

इस मन्त्र का अर्थ वहाँ लिखा है, "**हे विधवे ! तू इस मरे हुए पति की आशा छोड़कर बाकी पुरुषों में से जीते हुए दूसरे पति को प्राप्त हो**" कहिये ! इसमें पति की लाश पड़ी हुई कहाँ है ? और हट्टे-कट्टे आदमी कहां हैं ? मैं पूछता हूं कि आपका प्रश्न नियोग को अनुचित और पाप समझते हुए हैं या पति की लाश पड़ी हुई होने पर नियोग की आज्ञा को अनुचित समझते हुए हैं ? या हट्टों-कट्टों के भय से है ? यदि हट्टों-कट्टों के भय से है तो निश्चिन्त रहिये, ऐसा कुछ होने वाला नहीं है । आप कालूराम जी आदि से सुनकर न कहिये, खुद सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ने का कष्ट करिये, और देखिये वहां हट्टों-कट्टों का नाम तक नहीं है । पर वैसे मैं पूछता हूं, कहीं पण्डित जी महाराज आपकी इच्छा दुर्बलों एवं नपुंसकों से तो नियोग कराने की नहीं है ? विवाह भी हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ पुरुषों के ही होते हैं, दुर्बल या हिजड़ों के नहीं । यदि नियोग मात्र को पाप समझते हुए आप प्रश्न करते हैं तो यह आपकी भूल है । प्रथम तो इसी मन्त्र में "**दिधिषु**" शब्द को देखिये ! और अपने अमर कोष को पढ़िये । जहां दिधिषु विधवा के दूसरे पति का नाम बताया गया है । आवश्यकता और समय होने पर अन्य मन्त्र भी दिये जा सकते हैं । मनुस्मृति और अन्य स्मृतियों में भी नियोग की स्पष्ट आज्ञा है । और महाभारत आदि पर्व में अनेकों नियोग लिखे हुए हैं । धृतराष्ट्र, पाण्डु, और विदुर नियोग से ही पैदा हुवे विचित्र वीर्य की विधवा पत्नियों, अम्बिका और अम्बालिका से महर्षि व्यास ने नियोग

किया। पांचों पाण्डव नियोग से हुए। बाल्मीकीय रामायण में हनुमान जी नियोग से हुए। नियोग का निषेध आप कैसे कर सकते हैं ?

यदि लाश के पड़ी होने पर नियोग की आज्ञा आपको अनुचित लगती है तो लाश का वहां कहीं नाम भी नही है। यदि "इस" शब्द के आने से आप भ्रम में पड़ गये हैं या आप लोगों को भ्रम में डालना चाहते हैं, तो यह आपकी भारी भूल है। "इस" शब्द तो प्रत्येक उपस्थित विषय का नामादि के लिए प्रयुक्त हो सकता है। चाहे वह विषय या नाम कितना ही पुराना क्यों न हो, जब उसका प्रसंग चल रहा हो, तब उसके लिए "इस" शब्द का प्रयोग सर्वदा उचित है। प्रसिद्ध सिद्धान्त है कि— **"वर्तमानसमीपे वर्तमानवद् वा"** अर्थात् वर्तमान के समीप के समय को वर्तमान की भांति ही कहा जा सकता है। फिर बहुत दुःख और आश्चर्य है कि मन्त्र पर आपने ध्यान ही नहीं दिया। क्या कहा जाये कि, आपको मन्त्रार्थ का ज्ञान नहीं या जान बूझकर धोखा दे रहे हैं ? मन्त्र में स्पष्ट शब्द है अर्थ जिसका **"एतम"** है इसको **"गतासुम्"** का अर्थ "मरे हुए को"। पूछिये किसी विद्वान् से यही अर्थ है या कुछ और ? **"लड़ने चलते हैं हाथ में हथियार भी नहीं"** शास्त्रार्थ करने का जब इतना ही शौक है तो पण्डित जी महाराज कुछ पढ़ा करिये, क्यों बेचारे इन सनातन धर्मियों की मिट्टी खराब कराते हो। जब **"एतम्"** का अर्थ "इसको ही" है तो फिर आप स्वामी (महर्षि दयानन्द) जी पर क्यों बरस पड़े ? यदि महाराज आपने इसी पर सायणाचार्य जी का भाष्य देखा होता तो ऐसा प्रश्न करने का साहस ही न होता। देखिये यही मन्त्र तैतरीय आरण्यक में है, और वहां पर आचार्य सायण जी का भाष्य इस प्रकार है—

"हे (नारी) त्वं (गतांसु) गतप्राणं (एत) पतिं (उपशेषः) उपेत्य शयनं करोषि (उदीर्ष्व) अस्मात् पति समीपात् उत्तिष्ठ। (जीवलोकमभि) जीवित प्राणिसमूहमभिलक्ष्य (एहि) आगच्छ त्वं (हस्तग्राभस्य) याणि ग्राहवतः (अभिसम्बभूव)। अभिमुख्येन सम्यक् प्राप्नुहि ॥

इसका भावार्थ यह है—हे स्त्री तू इस मरे हुए पति के साथ सो रही है। इस पति के पास से उठ, और जीते हुए पुरुषों के समूह को भली भांति देख ! हाथ के पकड़ने वाले पुनर्विवाह की इच्छा करने वाले पति के पतित्व को अच्छे प्रकार से प्राप्त कर अर्थात् विधवा के साथ दूसरा विवाह करने की जो पुरुष इच्छा करे, उसकी पत्नी बन जा। कहिये स्वामी जी के अर्थों पर उपहास करते और नियोग पर प्रश्न उठाते अब कुछ लज्जा, आयेगी या नहीं ?

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों ! आप सत्यार्थ प्रकाश मेरे पास ले आना, मैं कल चिन्ह लगा दूंगा फिर आप लोग आर्य समाजियों से प्रश्न करना।

नोट :—शास्त्रार्थ के बीच में ही······खड़े होकर ठाकुर अमर सिंह जी ने कहा—भाइयो ! आप उन लगाये गये चिन्हों को लेकर मेरे पास आना मैं सारे प्रश्नों की धज्जियां उड़ा दूंगा और पुराणों पर सैकड़ों ऐसे-ऐसे प्रश्न लिखा दूंगा, तथा सिखा दूंगा जिनका उत्तर विश्व भर का कोई भी पौराणिक नहीं दे सकेगा। माधवाचार्य जी की तो गिनती ही क्या है ? आप लोग शान्त हो जाइये।

आज का शास्त्रार्थ यहां समाप्त हुआ । कल फिर शास्त्रार्थ होना है जिसका विषय होगा—**"क्या मूर्ति-पूजा वेदानुकूल है ?"** अगर खेल देखना ही है तो कल देखना में पण्डित जी महाराज को कैसे नचाता हूं । अब शान्ति पाठ कीजिये—**ओ३म् द्यौ शान्ति, अन्तरिक्ष ँ शान्ति**…………

शास्त्रार्थ समाप्त होते ही शान्ति पाठ के बाद बड़ी भारी भीड़ को चीरते हुए श्री प्रोफेसर किशोरी लाल जी एम० ए० काव्यतीर्थ जी आकर श्री पण्डित अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी जी के गले से लिपट गये । और कहने लगे, आपकी विद्या अपार है परमात्मा करे आप सौ साल से अधिक जियें । मेरी प्रार्थना है ठाकुर साहब यह विद्या आप लेकर मत चले जाना, औरों को भी अवश्य दे जाना, यह विद्या केवल आप तक ही सीमित नहीं रहनी चाहिये । और पण्डित माधवाचार्य जी अपनी भक्त मण्डली को साथ लेकर चुपचाप निकल गये ।

अगले दिन वाले शास्त्रार्थ के विषय में—

अगले दिन मूर्ति पूजा पर शास्त्रार्थ होना था । तो रात्रि में पौराणिक भाइयों ने बीते दिन के बारे में कहा कि पण्डित जी ऐसे कैसे काम चलेगा ? उनका प्रभाव आपने भी देखा ही है । आपको कल मूर्ति पूजा पर शास्त्रार्थ करना है— कुछ ऐसा उपाय करो जिससे उनका प्रभाव समाप्त हो जावे पण्डित माधवाचार्य जी ने कहा— मैं किसी भी विषय पर शास्त्रार्थ नहीं करूंगा । बहुत कुछ कहने पर भी पण्डित जी नहीं माने और उन्होंने साफ मना कर दिया । इसके पश्चात् पौराणिक भाइयों को बड़ी भारी चिन्ता हुई । उन्होंने कहा पण्डित जी कुछ सोचो ! पण्डित जी ने कहा—मुझे कुछ नहीं सोचना है, तुम्हें मैं कह चुका हूं कि मैं शास्त्रार्थ नहीं करूंगा ।

पौराणिक भाइयों से निराश होकर अगले दिन सुबह ही कार भेज कर पण्डित जीवाराम जी ब्रह्मचारी पौराणिक पण्डित जो संस्कृत महाविद्यालय नरवर के संचालक थे उनको बुलाया । उन्होंने शास्त्रार्थ नहीं किया एक जबर्दस्त व्याख्यान दिया कि—हम लोगों को आर्य समाज के साथ शास्त्रार्थ नहीं करना चाहिये । आर्य समाज तो हमारा संरक्षक है । हिन्दुओं की चोटी व जनेऊ की रक्षा करता हैं । ये तो हमारे भाई हैं । भाई से भाई को नहीं लड़ना चाहिये आदि आदि……

नोट :—राजगुरु **"पण्डित धुरेन्द्र जी शास्त्री"** भी इस शास्त्रार्थ के समय विद्यमान थे !

"संकलनकर्त्ता"

सातवां शास्त्रार्थ--

स्थान : बद्दोमल्ली, जिला स्यालकोट
(वर्तमान पाकिस्तान)
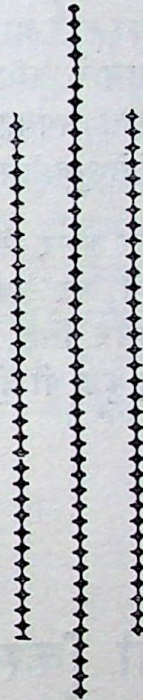
दिनाङ्क : दिसम्बर सन् १९३६ ई०

मज़मून (विषय) : रूह और माद्दे की क़दामत
(जीव और प्रकृति का अनादित्व)

प्रधान : पण्डित श्री भगवद्दत्त जी "रिसर्च स्कोलर"

शास्त्रार्थ कर्ता मुसलमानों की ओर से : मौलाना मौलवी सनाउल्ला साहिब "अमृतसरी"

शास्त्रार्थ कर्ता आर्य समाज की ओर से : श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

शास्त्रार्थ से पहले

आर्य समाज बद्दोमल्ली का वार्षिकोत्सव था, उस उत्सव में श्री पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी का, मौलाना-मौलवी श्री सनाउल्ला साहिब के साथ "**रूह और माद्दे की क़दामत**" अर्थात् जीव और प्रकृति का अनादित्व, विषय पर मुबाहिसा निश्चित था। मुबाहिसे के समय में केवल दो घण्टे ही शेष रहे थे कि श्री पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी का तार आ गया कि, मेरा गला खराब हो गया है मैं नहीं आ सकता हूं। यह तार मिलते ही आर्य समाज के अधिकारी लोग चिन्ता में पड़ गये। उस समय पर श्री पण्डित बुद्धदेव जी मीरपुरी और श्री पण्डित भगवद्दत्त जी रिसर्च स्कोलर दोनों ही विद्यमान थे। समाज के अधिकारियों ने इन दोनों पण्डितों से मुबाहिसा करने को कहा दोनों विद्वानों ने कहा—

"मौलवी सनाउल्ला की टक्कर ठाकुर अमर सिंह जी ही ले सकते हैं। हम लोग मदद तो कर सकते हैं। मगर मुबाहिसा हम उनसे नहीं कर सकते। तो उसके पश्चात् सभी आर्य समाज के अधिकारी एवं दोनों पण्डितों ने ठाकुर अमर सिंह जी पर ही यह दबाव डाला कि शास्त्रार्थ (मुबाहिसा) तो आप ही को करना है—चाहे कुछ भी हो। और वह तैयार हो गये"।

निवेदक—

"लाजपत राय अग्रवाल"

कुछ बद्दोमल्ली [कस्बे] के विषय में

यह एक छोटा सा कस्बा था, पर मुझको यह उपनगर बहुत ही प्यारा था, जो विचित्रता इस उपनगर में थी वह किसी दूसरे बड़े नगर में भी देखने में नहीं आई, इस छोटे से कस्बे में सात निम्न-लिखित संस्थाएं थीं।

१. आर्य समाज २. सनातन धर्म सभा ३. सिंह सभा (सिक्खों की) ४. क्रिश्चियन ऐशोशियेशन ५. अहले हदीस जमाअत।

नोट :—अहमदियों की दो जमाअतें थी—

(१)—कादियानी पार्टी (२)—लाहोरी पार्टी, इनमें से छः के उत्सवों पर शास्त्रार्थ और मुबाहिसे प्रायः प्रतिवर्ष होते थे। केवल—सिंह सभा का उत्सव इनसे खाली होता था। जब भी शास्त्रार्थ या मुबाहिसा होता था तब मुझको अवश्य जाना पड़ता था, क्योंकि मैं इन सभी के लिए सांझा था सभी के साथ टकराता था। सिंह सभा के उत्सव पर एक बार "सन्त इन्द्र सिंह जी निर्मला" आ गये, उन्होंने

अपने भाषण में यह कहा कि, **"वेदों में गौवध"** का विधान है, यह मैं वेदों के प्रमाणों से सिद्ध कर सकता हूं। मैं "अमर सिंह आर्य पथिक" नाम से वहां उपस्थित था। उस सभा में कई पौराणिक पण्डित सिंह सभा के मंच पर बैठे हुए थे। उनकी और संकेत करके कहा कि, इनको पूछ लीजिये, ऐसा है या नही? एक पण्डित ने सिर हिलाकर समर्थन भी किया। मैंने उनको शास्त्रार्थ का चैलेन्ज कर दिया कि— **"वेदों में गोवध का विधान नहीं है"** मैं यह सिद्ध करूंगा।

सन्त इन्द्र सिंह जी भी शास्त्रार्थ के लिए तैयार हो जायें। सभा में यह सुनते ही बड़ी खलबली मच गयी। सिंह सभा के कार्य कर्त्ता मेरे पास आये कि—हम इन्द्र सिंह जी को अपने मंच पर अब नहीं बोलने देंगे। आपको अब शास्त्रार्थ करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। सिंह सभा के अधिकारी कोई भी इन्द्र सिंह के मत से सहमत नहीं हैं। उसके पश्चात सिंह सभा के अधिकारियों ने सन्त इन्द्र सिंह जा को विदा कर दिया। और शास्त्रार्थ की आवश्यकता नहीं पड़ी बद्दोमल्ली आर्य समाज के प्रधान श्री जीवन दास जी सर्राफ़ ही रहते थे। मन्त्री श्री लाला गोपाल दास जी रहते थे। एवं कार्य कर्त्ता मन्त्री श्री मथुरा दास जी मदान रहा करते थे। भगवान की अपार दया से श्री मथुरा दास जी अभी विद्यमान है। और बहुत अच्छा प्रचार कार्य कर रहे हैं। श्री पण्डित गंगा राम जी पुरोहित थे, वह भी कादियां (पञ्जाब) में रहते हैं। विद्वान स्वाध्याय शील और कर्मठ हैं। एक विद्वान और स्वाध्याय शील सज्जन श्री प्रताप सिंह जी एम० ए० अमृतसर में रहते हैं। श्री जीवन दास जी सर्राफ (प्रधान) जी के पुत्र अमृतसर तथा तरनतारन (पञ्जाब) में रहते हैं। यह मैंने बद्दोमल्ली का अति संक्षिप्त वर्णन लिखा इसको लिखे बिना में रह नहीं सकता था।

वैदिक धर्म का—

"अमर स्वामी परिव्राजक"

शास्त्रार्थ आरम्भ

मौलाना सनाउल्ला साहिब—

पण्डित साहिब! मुबाहिसा शुरू करने से पहले क्या मैं आपसे एक-दो बातें पूछ सकता हूं?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

हां जी! आप पूछ सकते हैं, जरूर पूछिये।

मौलाना सनाउल्ला साहिब—

पण्डित जी! यह बताइये, जो शय क़दीम होती है, उसके औसाफ़ (गुण) भी क़दीम (नित्य) होते हैं न?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

जी हाँ ! क़दीम शय (नित्य वस्तु) के औसाफ़ (गुण) भी क़दीम (नित्य) ही होते हैं।

मौलाना सनाउल्ला साहिब—

आपके ख्याल में रूह क़दीम (नित्य) है और उसके औसाफ़ (गुण) भी क़दीम (नित्य) हैं ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

जी हां ! रूह क़दीम है। और उसके औसाफ़ भी क़दीम है।

मौलाना सनाउल्ला साहिब—

जिसके औसाफ़ क़दीम नहीं वह मौसूफ़ (रूह) भी क़दीम नहीं ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

जी हां जिसके औसाफ़ क़दीम नहीं वह मौसूफ़ (रूह) भी क़दीम नहीं।

मौलाना सनाउल्ला साहिब—

इल्म रूह की सिफ़त है ?

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

जी हां ! इल्म रूह की सिफ़त है। और वह क़दीम है।

मौलाना सनाउल्ला साहिब —

साहिबान ! मैं जब आर्य समाज के जलसे (उत्सव) में बोलता हूं तो मुझको ऐसा महसूस होता है कि, मैं एक युनिवर्सिटी (विश्व विद्यालय) में बोल रहा हूं। क्योंकि आर्य समाजी साहिबान्-बाइल्म और बाअक्ल होते हैं। **"मैं पुराना जरनैल हूं, और मेरे सामने पण्डित जी नये रंगरूट हैं"**। मैंने इनको बांध लिया है अब मैं इनको इधर उधर जाने नहीं दूंगा। आज फ़िलसफा ठाठें मारता दिखाई देगा आज आर्य समाज की दीवारें हिल जायेंगी, और आर्य समाजियों के दिल हिल जायेंगे। सुनिये साहिबान् ! अगर-इल्म रूह की क़दीम सिफ़त है तो इन्सान को इल्म हासिल करने के लिये स्कूल, कालिज, मदरसा-मकतब और गुरुकुल में क्यों जाना पड़ता है ? चूंकि इन्सान को कालिज-मकतब और गुरुकुल में इल्म हासिल करने को जाना पड़ता और इल्म को हासिल करना पड़ता है बस साबित है कि—इल्म-क़दीम सिफ़त नहीं है, और इल्म सिफ़त क़दीम नहीं है तो साबित हुआ कि—मौसूफ़ (रूह) भी क़दीम नहीं है।

ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

मालूम होता है कि—मौलाना साहिब ने या तो फ़िलसफ़ा पढ़ा ही नहीं है या पढ़ा है तो ये

पुराने जरनैल हैं जईफ़ी (बुढ़ापे) की वजह से "**फ़िलसफ़ा को भूल गये हैं**"। श्रोताओं में हँसी··· मैं नया रंगरूट हूं इसलिये मेरा इल्म फ़िलसफ़ा ताजा है (हँसी) मैं फ़िलसफ़ा बताता हूं। सुनिये जनाब ! इल्म दो तरह का होता है, एक ज़ाति (स्वाभाविक) दूसरा आर्ज़ी (नेमैत्तिक) ज़ाति इल्म क़दीम है उसको हासिल करने की जरूरत नहीं है आर्ज़ी इलम को हासिल करने के लिए कालिज वग़ैरा में जाना पड़ता है ज़ाति इल्म हमेशा साथ रहता है। (चारों ओर सन्नाटा छा गया)।

श्री मौलवी सनाउल्ला साहिब –

ठाकुर साहिब ! ज़ाति इल्म साथ रहता है इसका क्या सबूत है ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी —

आर्ज़ी इल्म का हासिल करना ही इसका सबूत है कि—ज़ाति इल्म क़दीम है और साथ ही रहता है।

श्री मौलवी सनाउल्ला साहिब—कैसे ?

श्री पण्डित ठाकुर साहिब—मौलवी साहिब ! आपने कभी पढ़ाने का काम किया है ?

श्री मौलवी साहिब —जरूर किया है सैकड़ों को पढ़ा दिया।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

मौलाना ! आपने पढ़ाकर कितनों ही को मौलवी कितनों को मौलवी आलिम और कितनों ही को मौलवी फ़ाजिल बना दिया। मौलाना साहब ! जिनके पास ज़ाति इल्म (स्वाभाविक ज्ञान) विद्यमान था वे सब आर्ज़ी इल्म (नेमित्तिक ज्ञान) हासिल करके चले गये और जिनके पास ज़ाति इल्म नहीं था वह—मेज, कुर्सी, किवाड़, दीवार सब बेहिसो हरकत यूं की यूंही बेइल्म रह गईं। मौलाना साहिब ! यह फ़िलसफ़ा है जिससे साबित हो गया कि—इल्म सिफ़्त क़दीम है और उसकी मौसूफ़ रूह भी क़दीम है। अबकी बारी में—मैं मौलाना साहिब को फ़िलसफ़े में ऐसा बांधूंगा जो किसी तरह भी निकल न सकेंगे।

नोट : -श्री ठाकुर साहब के इस जवाब का हजारों सुनने वालों पर इतना अच्छा असर पड़ा कि--चारों ओर से वाह-वाह की आवाजें आने लगीं। और इतने जोर की तालियां बजी कि—उनको बड़ी ही मुश्किल से रोका जा सका।

श्री मौलवी सनाउल्ला साहिब—

"रात थोड़ी है आरजू हैं बहुत सी लेकिन। सुबह होने को है किस तौर तमन्ना निकले"॥ अर्थात् मुबाहिसे का वक्त थोड़ा है बातें बहुत हैं—रूह को खुदा ने पैदा किया है अगर बक़ौल आर्यों के रूह माद्दा और खुदा तीनों क़दीम है तो तीनों हमउम्र हुए फिर खुदा इन पर हाक़िम कैसे हो सकता है ? साबित है कि—खुदा ने रूह और माद्दे को पैदा किया है इसीलिये उसको इन पर हुकूमत करने

का हक़ है। दूसरी कोई वजह हाकिम होने की नहीं है। अल्ला ताला ने मेरा वजूद मैंनूं दित्ता ऐ मेरा वजूद वाजिबुल् वजूद (स्वतन्त्र सत्ता) नहीं है मेरा वजूद बिलवास्ता (नैमित्तिक) हैं।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

क़दम सूए मरक़द नज़र सूए दुनियां। किधर जा रहे हो किधर देखते हो ?॥

मौलाना साहिब ! आपकी बातें कमाल की हैं। जिसकी उम्र बड़ी हो वही हाकिम होता है। यह भी आपका ठाठे मारने वाला फ़िलसफ़ा ही होगा। जनाब मौलाना साहिब ! फौक़ियत (महत्ता) उम्र से नहीं औसाफ़ (गुणों) से होती है। हज़रत मुहम्मद साहिब उम्र में उम्मुल मोमिनीन खुदीजा से बहुत छोटे थे फिर वह उनके मालिक (खाविन्द) कैसे थे ? बादशाह जार्ज पंजुम आपसे उम्र में छोटे हैं फिर आपके बादशाह क्यों हैं ? हाकिम और महकूम होने के लिये वजह उम्र नहीं है लियाक़त और ताक़त ही किसी को हाकिम और किसी को महकूम बनाती है। खुदा कादिरेमुतलक (सर्वशक्तिमान) है, और रूह इल्म और कुव्वत में महदूद है माद्दा बेइल्म है इसलिये हमउम्र होते हुए भी ला महदूद इल्म और ला महदूद ताकत वाला होने से खुदा हाकिम है। रही वजूद बिलवास्ता (नैमित्तिक अस्तित्व) की बात तो देखिये मेरा फ़िलसफ़ा ! वजूद आपको दिया गया तो मैं पूछता हूं कि जब वजूद आपको दिया गया तब आप मौजूद थे कि --नहीं ?

नोट :—(मौलाना नहीं बोले),

ठाकुर साहिब—

नहीं बोलते तो न बोलिये ! मैं कहता हूं अगर आप कहें कि --मैं उस वक़्त मौजूद था —तो मैं पूछता हूं कि बिना वजूद के आप कैसे मौजूद थे ? क्या आपके ठाठें मारने वाले फ़िलसफ़े में बिना वजूद के भी मौजूदगी होती है ? अगर आप कहें कि —जब वजूद दिया गया था तब मैं मौजूद नहीं था, तो फिर मैं पूछूंगा कि —जब आप मौजूद नहीं थे तो वजूद आपका किसको दिया गया था ? मौलाना साहब ! यह है नये रंगरूट का फ़िलसफ़ा। क्या इसका कोई जवाब हो सकता है ? मेरा दावा है कि— अब आप ऐसे फंसे हैं कि—अब निकल नहीं सकते। इसको कहते हैं कि—**"खुद आप अपने दाव में सय्याद फँस गया।"** मौलाना साहिब की भी ऐसी ही अजीब दशा हो गयी, **"मुसीबत में पड़ा है सीने वाला सीमे दामाँ का। जो यह टांका तो वह उधड़ा, जो वह टांका तो यह उधड़ा॥**

श्री मौलवी सनाउल्ला साहिब—

"शर्म तेरा हो बुरा दोनों का अर्मां रह गया" पण्डित जी साहिब ! आप मुझको बहुत प्यारे लगते हैं। मैं आपके ऊपर हथियार तो चला नही सकता। **आप नाजुक हैं मुझको डर लगता है कि— आपको कहीं चोट न लग जाय—**

तीर पर तीर चलाओ यह सर किसका है।
दिल यह किसका है ? मेरी जां यह ज़िगर किसका है !॥

एक सवाल और करता हूं और वह ऐसा है कि—उसका कोई जवाब नहीं। वह माद्दे के मुताबिक है—पण्डित जी साहिब ! माद्दे (प्रकृति) के अजज़ा (परमाणु) होते हैं आप यह मानते हैं कि—यह अजज़ा लातजज़ी (न टूटने वाले) होते हैं, पर जनाब ! आप सोचिये ! एक परमाणु के साथ दो परमाणु एक सीध में एक पंक्ति में रक्खे जावें। ००० इस तरह और तीन अजज़ा को मिलाकर रक्खें तो—पहिली सूरत में भी तीनों का एक-एक हिस्सा दूसरे से मिलेगा और दूसरी सूरत में भी तीनों के हिस्से तीनों के साथ मिलेंगे, बस वह अजज़ा टूटने वाले हो गये और जो टूटने वाले हैं वह क़दीम नहीं हो सकते ; जनाब पण्डित जी साहिब ! इसका कोई जवाब नहीं है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

बड़ा शोर सुनते थे पहलू में दिल का। जो चीरा तो एक कतरा खूं, न निकला ॥

मौलाना साहब ! शैर पर शैर भी सुनते जाइये ! मैं नाजुक हूं पर—

नाजुक कलाइयाँ मेरी तोड़ें उदू का सर। मैं वह बला हूं शीशे से पत्थर को तोड़ दूँ ॥

इस सवाल का जवाब—आपके पास नहीं है, मेरे पास तो है। सुनिये जनाब ! यह तक़सीम असली नहीं है खयाली है। जो अजज़ा लातजज़ी (जो परमाणु न टूटने वाले) हैं उनको खयाल से आपने मिलाकर रख लिया तो वह मुनक़सिम होने वाले (बंटने वाले) हो गये। यूं तो खुदा भी टुकड़े-टुकड़े होने वाला हो जायेगा। आपके खयाल में रूह पैदा शुदा है और खुदा क़ायमबिज्जात (स्वयं स्थित रहने वाला) है तो रूह और खुदा एक दूसरे से मिलते हैं तब खुदा के भी हिस्से हो जायेंगे। कुछ आपके साथ मिलेगा कुछ मेरे साथ मिलेगा कुछ इन सबके साथ मिलेगा उसके तो लाखों टुकड़े हो जायेंगे। दूसरी बात और है—

खुद ही फँस जाय न इस दामन में सय्याद कहीं। पैर तक बढ़ती हुई जुल्फें दो ता आती है ॥

मौलाना साहिब ! क़ुरान शरीफ में तो कहा गया है कि—जो दोज़खी हैं वह हमेशा दोज़ख में रहेंगे और जो बहिश्ती हैं वह हमेशा बहिश्त में रहेंगे दोज़ख और बहिश्त भी हमेशा रहेंगे तो कहिये दोज़ख की आग और, बहिश्त की नहरें, दूध, शहद, शराब, कपड़े, प्याले, लोण्ड़ों के पहनने के कंगन, दरख्त और मेवे, हूरें और ग़िलमान् यह उन्हीं अजज़ा से बने नहीं होंगे ? फिर वह अजज़ा टूटते-टूटते यह सब कैसे क़ायम रहेंगे ? अल्ला मियां का तख्त जो जल पर बिछा है वह तख्त कैसे कायम रहेगा ? क्यों जनाब ! हमारी मानी हुई इल्लत माद्दी (उपादान कारण) भी नेस्तोनाबूद (नष्ट होने वाली) हो जाय और आपका मालूल जो इल्लत से बना है वह मख़लूक़ जो खालिक ने बनाई है वह भी अबदी (नित्य) रहे यह कौनसा फ़िलसफ़ा है। अजज़ा तो मिटने वाले और अजज़ा से बनी दोज़ख और बहिश्त हमेशा दायम व क़ायम रहने वाली, दोज़ख और बहिश्ती और बहिश्त के सब सामान हमेशा रहने वाले हैं। वाह !! क्या खूब ! "**जो बात की खुदा की कसम लाजवाब की। पापोश में लगाई किरण आफताब की ॥** मौलाना साहिब ! ये भी आपका कमाल है कि—**जो तुम चाहो वह हो जाये यह है अल्लाह की कुदरत। जो मैं चाहूं तो फ़रमाओ कि—ऐसा हो नहीं सकता ॥** मौलाना साहब ! खुदा क़दीम मालिक है और सही माद्दा उसकी क़दीम मिल्कियत है खुदा हमेशा से है और

हमेशा रहेगा। उसकी मिल्कियत सही माद्दा भी क़दीम है जो हमेशा से है और हमेशा रहेंगे। बक़ौल आपके अगर रूह और माद्दा खुदा ने बनाये हैं बनाने से पहले यह नहीं थे तो फरमाइये कि—वह आपका खुदा इनके पैदा होने से पहिले क्या अपने सर का मालिक था। श्रोताओं में जोर की हँसी…। काहे का मालिक ? क्या अपने आपका ? मौलवी साहिब मालिक को क़दीम साबित करने के लिये मिल्कियत का क़दीम होना भी मानना जरूरी है मिल्कियत के क़दीम माने बिना मालिक का क़दीम साबित होना मन्तिक और फ़िलसफ़े की रूह से नामुमकिन है। रूह माद्दा और खुदा, तीनों क़दीम हैं अज़ली और अबदी (अनादि और अनन्त) है। इल्म, मालूम और आलिम तीनों का मानना जरूरी है। अगर इल्म नहीं तो कोई आलिम नहीं अगर मालूम (ज्ञेय) नहीं तो इल्म नहीं क्योंकि — इल्म किसी चीज का होगा अगर चीज ही नहीं है तो इल्म काहे का ? इल्म के बिना आलिम नहीं और मालूम के बिना इल्म नहीं मालूम और मालूम का इल्म और इल्म का आलिम यह तीनों लाज़िम और मलजूम (अनिवार्य) हैं। हमारी भाषा में इनको ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय कहते हैं ज्ञेय का ज्ञान जिसको होता है उसका नाम ज्ञाता है। मुबाहिसा खत्म हो गया।

नोट :—इस मुबाहिसे का इतना बढ़िया असर हुआ कि—सैकड़ों मुसलमान भी ठाकुर साहिब की बार-बार तारीफ करते और बार-बार वाह-वाह करते हुए यह कहते गये कि – **"मौलाना को ठाकुर साहिब ने मार दिया"**। मौलाना सनाउल्ला साहिब भी बड़ी मुहब्बत के साथ छाती मिला कर गले मिले।

आठवां शास्त्रार्थ--

स्थान : चुहड़पुर (विकास नगर) जिला देहरादून, उ० प्र०
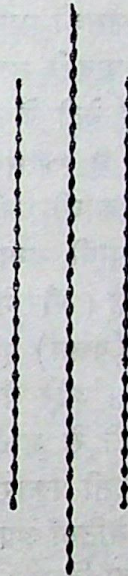
दिनांक : २८ अप्रैल सन् १९५४ ई० (दिन के आठ बजे)

विषय : क्या ईसाई मत की शिक्षा मानव मात्र के लिए हितकर है ?

शास्त्रार्थ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से : श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

शास्त्रार्थ कर्त्ता ईसाई मत की ओर से : श्री पादरी अब्दुल हक साहिब

आर्य समाज की ओर से प्रधान : श्री पण्डित अमरनाथ जी वैद्य वाचस्पति

ईसाई मत की ओर से प्रधान : श्री पादरी रफ़ी साहिब

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सत्यासत्य की खोज करने वाले सज्जन पुरुषों ! आज के शास्त्रार्थ से आपको पता लगेगा कि ईसाई मत की शिक्षा मनुष्य मात्र के लिए कल्याण का मार्ग दिखलाती है या मनुष्य मात्र को पथ भ्रष्ट करके उसका सर्वनाश करती है। आज ईसाई मत के मशहूर मुनाज़िर पादरी अब्दुल हक़ साहिब जी मेरे सामने हैं। मैं उनके सामने ईसाई मत और उसकी मानी हुई इलहामी किताब बाइबिल की शिक्षा के कुछ नमूने रखता हूं। आप लोग देखेंगे कि—पादरी साहब उनकी क्या व्याख्या करते हैं। १. बाइबिल की पहिली शिक्षा यह है कि, बाप अपनी बेटी के साथ शादी कर ले। देखिये—**बाइबिल में तोरेत की प्रथम पुस्तक उत्पत्ति पर्व २ वचन २१ से २४ तक।** अर्थात् परमेश्वर ने आदम को बड़ी नींद में डाल कर उसकी पसलियों में से एक पसली निकाली। और उसके स्थान में मांस भर दिया और उस पसली से एक नारी बनाई जिसे आदम की पत्नी बना दिया। **आयत (वचन) २३ में** आदम का वचन हैं—वह तो मेरी हड्डियों में की हड्डी है। और मेरे माँस में का मांस है। वह नारी कहलाने लगी क्योंकि—वह नर से निकाली गई। **आयत (वचन) २४ में** है इसलिए मनुष्य अपने माता-पिता को छोड़ेगा और अपनी पत्नी से मिला रहेगा। और वे मांस में के होंगे। यहाँ ईसाई मत से दो शिक्षायें मिलती हैं। एक यह कि बाप अपनी बेटी से शादी किया करें। और दूसरी यह कि अपने माता-पिता को छोड़ दिया करे। दूसरा प्रमाण इसी प्रकार इसी **"उत्पत्ति पुस्तक के पर्व १९ में आयत ३१ से ३८ तक यह है कि**—हज़रत लूत की दो बेटियाँ अपने बाप लूत से ही गर्भवती हुईं, बड़ी ने अपने बाप लूत से गर्भवती होकर एक लड़का पैदा किया। कहो ! ईसाइयो ! आपको ईसाई मत की तालीम पसन्द है ? अगर पसन्द हैं तो क्या आप लोग इस पर अमल करते हो या नहीं ? नहीं करते हो तो क्यों आपने इस अपने अधिकार को छोड़ दिया ? पादरी अब्दुल हक़ साहब बताने की कृपा करें कि वह इस शिक्षा का प्रचार ईसाइयों में करते हैं या नहीं, अगर नहीं करते तो क्यों नहीं करते ? यह साफ जाहिर है कि यह तालीम ऐसी है जिसको कोई भी भला और समझदार व शर्मदार इन्सान नहीं मानेगा। और किसी ईसाई ने भी इसको नहीं माना है। यह सही है कि—यह तालीम इन्सान को और उसके इख़लाक को तबाह और बर्बाद कर देने वाली है। फिर मैं पूछता हूं कि ऐसी तालीम देने वाली किताब बाइबिल और इस मज़हब को जो इस किताब को मानता है क्यों न छोड़ दिया जावे ? अर्था क्त्यों न मिटा दिया जावे ?

श्री पादरी अब्दुल हक़ साहिब—

साहिबान ! मैं आज कहाँ किसके सामने फँस गया ? मैं तो चाहता था कि कोई मन्तक और फिलसफे की बहस होगी और मजा आयेगा। अगर पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी होते तो मजा रहता। मुझको आज एक ऐसे शख्स से पाला पड़ गया है। जो न मन्तक जानता है न फिलसफा, ! मैं पूछता हूं

कि—मां हव्वा-हज़रत आदम की बेटी कैसे हुई ? उसको तो आदम ने नहीं पैदा किया था। खुदा ने उसको बनाया था। वह आदम की बेटी कैसे हुई ? क्या बहस करूँ ? न इस बहस में मन्तक है और न फिलसफा है बहस करने वाले साहिब को यह ही पता नहीं कि हव्वा आदम की बेटी नहीं थी। उससे क्या बहस होगी ? वह आदम और हव्वा की शादी खुदा के हुक्म से हुई थी। मेरे सामने ये सवाल कभी किसी ने नहीं किये।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पादरी अब्दुल हक़ साहिब मेरे सवालों का जवाब नहीं दे सके और कभी नहीं दे सकगे। मेरे सवालों से बच कर भागने के लिए मन्तक और फिलसफ़े का रोना रोने लगे। मैं दावे से कहता हूं कि—आपको न मन्तक आता है और न फिलसफा। और आप ईसाइयों का मन्तक और फिलसफे से कुछ ताल्लुक नहीं है। थोड़ी सी मुसलमानों की झूठन इकट्ठी कर ली। और दो चार इस्तलाहात मन्तक की याद कर ली, **"और बन गये मन्तकी"** ! एक हल्दी की गांठ हाथ आ गयी, तो पंसारी बन गये। मुझको मन्तक और फिलसफा आता है। मैंने बाकायदा पढ़ा है। आपको अगर कुछ आता है तो मन्तक और फिलसफे से ही मेरे सवालों के जवाब देने में उनकी मदद लीजिये। रोक किसने रखा हैं ? आप कहते हैं कि, मेरे सामने ये सवाल किसी ने नहीं किये थे।

इब्तदाये इश्क है, रोता है क्या ? । आगे-आगे देखना, होता है क्या ? ।।

अभी तो ऐसे ही और बहुत सवाल करूँगा। सुनिये नोट करिये और जवाब दीजिये। ईसाई मत की आगे तालीम यह हैं कि बहन भाई की भी शादी हुआ करे। **तोरेत उत्पत्ति की पुस्तक पर्व १२ आयत १० से १३ तक** में है कि—मिश्र देश में "अब्राहम" ने अपनी पत्नी "सारा" को अपनी बहिन बताया। और इसी **उत्पत्ति की पुस्तक पर्व २० की आयत** में है कि—देश ज़िरार में भी अब्राहम ने अपनी पत्नी सारा को अपनी बहिन बताया। **इसी पर्व २० की आयत १२** में उसने कहा कि "निश्चय (यह) मेरी बहिन ही है, वह मेरे पिता की पुत्री है परन्तु मेरी माता की पुत्री नहीं"। सो मेरी पत्नी हो गयी। इसी तरह अब्राहम के बेटे इसहाक ने भी अपनी पत्नी रिज़का को बहिन बताया। **उत्पत्ति पर्व २६ आयत ६-७।** ईसाई मत की अन्य यह तालीम है कि अपनी पत्नी को दूसरों के घर में रखकर फायदा उठा सकें तो खूब उठाया जावे। **उत्पत्ति पर्व १२ आयत १५-१६** में "फिरऊन के अध्यक्षों ने उसे (सारा को) देखा और फिरऊन के आगे उसकी सराहना किया सो उस स्त्री को फिरऊन के घर में ले गये। तब फिरऊन ने उसके कारण अब्राहम का उपकार किया और भेड़ बकरी और बैल गदहे और दास व दासियां और गदहियां और ऊँट उसको उस उपकार के बदले में मिले। **उत्पत्ति पर्व २० आयत—२।** "ज़िरार के राजा अबिमलक ने अपने नौकर भेज कर सारा को अपने घर में ले लिया"। मिश्र देश में राजा फिरऊन के घर में अब्राहम की स्त्री रही जो जिरार के राजा अबिमलक के घर में ले जाई गई। हव्वा आदम की बेटी नहीं थी। यह आपका कहना है। आप कहते हैं कि, उसको खुदा ने पैदा किया था। इसलिए आदम की बेटी नहीं थी। भाई पादरी साहिब ! पैदा तो आपको भी खुदा ने ही किया है। पर आप अपनी माँ के बेटे कहलाते हैं या कि खुदा के ? माँ के ही कहलाते हैं ना ! और हैं भी माँ-बाप के ही, क्योंकि उनके जिस्म से पैदा हुए हैं। हव्वा को मैं आदम की बेटी कहता हूं।—क्योंकि वह

आदम के जिस्म से पैदा हुई थी। वह स्त्री थी इसलिए मैंने उसे बेटी कहा। यदि वह पुरुष होता तो मैं उसे आदम का बेटा कहता। आदम ने खुद कहा है कि—**"वह तो मेरी हड्डियों में की हड्डी और मेरे मांस में का मांस है"**। (उत्पत्ति पर्व २ आयत २३,) जो जिसकी हड्डियों में की हड्डी और मांस में का मांस है वह उसकी बेटी नहीं तो और क्या है? लूत की बेटियाँ लूत से हामिला हुईं, इसका जवाब कुछ नहीं। उसको तो आप दाखरस की तरह पी गये **बाइबिल उत्पत्ति पर्व-१९-आयत ३२-३३-३४** में दाखरस "अंगूरी शराब" का नाम है। **"लूत ने अपनी दोनों बेटियाँ दुराचारियों को दुराचार के लिए पेश की"** (उत्पत्ति पर्व १९ आयत ८) आयत एक से पाँच तक है, कि, लूत के घर में दो पुरुष ठहरे। सदूम नगर के लोगों ने घर को चारो तरफ से घेर लिया। वह सब लोग उन दोनों के साथ बदफ़ेली करना चाहते थे। तब लूत ने कहा—हे भाइयो! ऐसी दुष्टता मत करना देखो मेरी दो बेटियाँ हैं जो पुरुष से अज्ञान हैं। कहो तो मैं उन्हें तुम्हारे पास बाहर लाऊं। और जो तुम्हारी दृष्टि में भला लगे सो उनसे करो। केवल उन मनुष्यों से कुछ मत करो। **"आयत ८" बाइबिल** की यह भी तालीम है कि **"अपनी नौकरानियों (दासियों) से सम्भोग करें।"** अब्राहम ने अपनी पत्नी सारा की लोंड़ी (लड़की) **"हाजिरा"** से सम्भोग किया ओर यह गर्भिणी हुई।" (उत्पत्ति पर्व १६ आयत ४) **उत्पत्ति पर्व ३० आयत ४-५** में याकूब ने अपनी दासी **"बिलहा"** और आयत ९ व १० में याकूब ने अपनी ही दासी **"जिलफा"** से औलाद पैदा की। आपने कहा कि, आदम और हव्वा की शादी खुदा के हुक्म से हुई थी। मतलब तो मेरा यही कहने का है कि—ईसाइयों का खुदा बाप को बेटी से शादी करने का हुक्म देता है। इस लिए ईसाई मजहब में बाप का बेटी के साथ शादी और औलाद पैदा करना जायज है।

नोट :—पादरी साहब ने पण्डित अमर सिंह जी को कुछ अपशब्द कहे तथा गुस्से से लाल हो गये। इस पर बहुत कोलाहल मचा तो ठाकुर साहब सबको बड़ी मुश्किल से शान्त करते हुए। बोले—

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जो शास्त्रार्थ केशरी—

पादरी साहब को गुस्सा बहुत आता है। सो कमजोर और हारे हुए को गुस्सा आया ही करता है। वैसे यह है कि, पादरी अब्दुल हक़ साहिब के गले से नीचे सारे जिस्म में इस्लाम है। गले से ऊपर-ऊपर ईसाइयत है। सो कभी-कभी बेचारी ईसायत नीचे दब जाती हैं और इस्लाम ऊपर आ जाता है। बस यही गुस्सा है और कुछ भी नहीं॥

श्री पादरी अब्दुल हक साहिब—

फ़ज़ूल भोंकने से क्या होता है? लूत ने जिस गांव में अपनी बेटियों से औलाद पैदा की थी, उस गाँव को खुदा ने गन्धक और आग बरसा कर जला दिया था।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

ठीक है सारे गाँव को जला दिया, ऐसा लिखा है, पर वह भी लिखा है कि—लूत, उसकी पत्नी, और लूत की उन दोनों लड़कियों को बचा लिया। क्योंकि खुदा खुद लूत को प्यार करता था। खुदा ने उन तीनों को नहीं मारा। साबित है कि खुदा बेटियों से औलाद पैदा करने को अच्छा मानता

था। तथा बाइबिल की एक तालीम और कि "नूह खेती बाड़ी करने लगा और उसने एक दाख की वाटिका लगाई। और उसने उसका रस (अंगूरी शराब) को पिया। और उसे अमल (नशा) हुआ और अपने तंबू में नंगा रहा, और कनआन के पिता हाम ने अपने पिता का नंगापन देखा। और बाहर अपने भाइयों को जनाया। तब सिम और याफत ने एक ओढ़ना लिया। और अपने दोनों कन्धों पर धरा। और पीठ के बल जाकर अपने पिता का नंगापन ढांपा। और उनके मुंह पीछे थे सो उन्होंने अपने पिता का नंगापन न देखा"। देखिए—(**उत्पत्ति पर्व ९, आयत २० से २३ तक**) तथा **उत्पत्ति पर्व ६ आयत ९** में है कि "नूह" अपने समय में धर्मी और सिद्ध पुरुष हुआ था" साफ साबित है कि—शराब पीना भी ईसाई मत की तालीम में शामिल है। लूत भी शराब पीता था! खुदा—शराब पीने वालों को प्यार करता था।

नोट :—पादरी साहब ने चिल्ला कर कहा—मैं ऐसे किसी सवाल का जवाब नहीं दूंगा, यह सब शरारत हो रही है। श्री पण्डित अमर सिंह जी की तरफ इशारा करके कहा कि—"यह महा शरारती है"। इस पर बड़ी अशान्ति हुई और चारों ओर से आवाजे आने लगी कि पादरी क्षमा माँगे।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी ने लोगों को समझाया कि—पादरी अब्दुल हक मेरे सवालों का जवाब देने में असमर्थ हैं। वह चाहते हैं गालियाँ देकर मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) खत्म करा दें। जिससे बाइबिल, ईसाई मत और पादरी तीनों के झूठों की पोल न खुले। पर मैं चाहता हूं कि गालियाँ देकर भी वह मुबाहिसा बन्द न करा सकें तथा पोल और भी खुले। वह मुवाफी मांगें या न मांगें परन्तु आप उनको मुआफ कर दीजिये। वह कहते हैं कि—ये सवाल मेरे सामने इससे पहले कभी नहीं आये थे। वह बेचारे यह ठीक कहते हैं। असलियत यही है कि, मन्तक और फिलसफे के नाम पर खेल खेले जाते रहे। मुबाहिसे का उन्होंने मुंह ही आज देखा है।

श्री पादरी अब्दुल हक साहिब—

ये ऐतराज पुराने अहदनामे पर किये जा रहे हैं। हमारा सीधा ताल्लुक पुराने अहदनामे से नहीं बल्कि नये अहदनामे से यानी इंजीलों से है। पुराने अहदनामें (OLD TESTAMENT) को यहूदी भी मानते हैं तथा मुसलमान भी मानते हैं। उनकी बातों को लेकर ईसाई मजहब को बदनाम करना शरारत ही है। अगर शरारत नहीं तो और क्या है?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पादरी जी ने मेरी बातों का जवाब देने की कोशिश की, बहुतेरे मुगालते दिये, पर—

मुसीबत में पड़ा है, सीने वाला सीमे दामां का। जो यह टांका तो वह उधड़ा, जो वह टांका तो यह उधड़ा॥

पादरी जी ने अपनी इज्जत बचाने के लिए कितना बड़ा झूठ बोल दिया कि—हमारा ताल्लुक नये अहदनामे यानी इन्जीलों ही से है। झूठ की हद हो गई, भाइयो! आपने कभी कहीं मुसलमानों की छपाई हुई बाइबिल देखी है? अथवा कभी सुनी है? मेरे पास ये तीन बाइबिलें हैं—एक अंग्रेजी

की—यह इसाईयों की अपनी बाइबिल सोसाइटी की छपी हुई है। यह दूसरी हिन्दी की है जो मिशन प्रेस बाइबिल सोसाइटी इलाहाबाद की छपी हुई है। तीसरी बाइबिल उर्दू की है, यह भी इसाईयों की बाइबिल सोसायटी की छपी है। इसी में ओल्ड टेस्टामेन्ट यानी पुराना अहदनामा है। और इसी में न्यूटेस्टामेन्ट यानी नया अहदनामा है। दोनों को मिलाकर इसका नाम बाइबिल है। पादरी अब्दुल हक साहिब चाहते हैं कि—एक मुर्गी को काटकर दो टुकड़े कर लें, आधी खाई जाये और आधी को अण्डे देने के लिए रख लें। मैं झूठे को घर तक पहुचाये बिना नहीं छोड़ूंगा। दुनियां का कोई भी ईसाई यह नहीं कहेगा कि "हमारा पुराने अहदनामे से कोई ताल्लुक नहीं है"। इन्होंने यह कहकर अपनी कमजोरी जाहिर की है। चलो ! मैं कहता हूं। यह लिखकर दे दो कि हम पुराने अहदनामे को नहीं मानते हैं। हमारा पुराने अहदनामे से कोई ताल्लुक नहीं है। करो हिम्मत ! जो कुछ कहते हो वह लिखकर दे दो। मैं फिर पुराने अहदनामे पर ऐतराज नहीं करूँगा। फिर नये की धज्जियां उखेड़ूंगा। (हँसी………) पादरी जी लिख दें अथवा प्रेजिडेन्ट साहब (प्रधान) जी लिख दें।

नोट :—बार-बार लिखने को कहा गया पर किसी ने वह लिखकर नहीं दिया। इस झगड़े में लगभग आधा घन्टा लग गया।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी —

सज्जनों ! अहदनामा पुराना या नया दोनों बाइबिल के हिस्से हैं। पादरी अब्दुल हक ने पुराने अहदनामे को माननें से इन्कार कर दिया, ईसाई मत की आधी हार तो हो गई। पादरी जी की तनख्वाह भी आधी हो जानी चाहिये ! (हंसी…………) लीजिये मैं अब नये अहदनामे को पकड़ता हूं। अब उसको पादरी साहब बचावें। **"करन्थियों को पत्र ?"** यहां भी वह बात लिखी है कि—**"बाप बेटी के साथ शादी कर ले"**—पता लिखिये पादरी साहब और नोट करिये। (**करन्थियों को पत्र पर्व ७ आयत ३६**) "परन्तु यदि कोई समझे कि मैं अपनी कन्या से अशुभ काम करता हूं, जो वह स्यानी हो और ऐसा होना अवश्य है तो वह जो चाहता है सो करे। उसे पाप नहीं है, वे विवाह करें"। देखिये—सन् १९७९ ई० की छपी होली बाइबिल इलाहाबाद बाइबिल सोसाइटी मिशन प्रैस। सन् १८७९ की छपी पृष्ठ ७५९ पंक्ति १४ से इसको १९३५ ई० की छपी बाइबिल (धर्मशास्त्र) ब्रिटिश एण्ड फारेन बाईबिल सोसायटी इलाहाबाद ने इस प्रकार बदला है। यथा—"और यदि कोई यह समझे कि—मैं अपनी उस कुआंरी का हक मार रहा हूं जिसकी जवानी ढल चली है और ये प्रयोजन भी होय तो जैसा चाहे वैसा करें। इसमें पाप नहीं वह **"उसका ब्याह होने दें"** ॥३॥ यहां पर नीचे टिप्पणी में **"वे ब्याहे जावें"** इसको बदल कर यह कर दिया गया है कि "**उसका ब्याह होने दें**। उर्दू बाईबिल-पंजाब बाईबिल सोसाइयटी अनारकली लाहौर सन् १८९५ सफ़ा ३२९ लाईन ६ से देखिये—"यदि कोई अपनी कुआंरी लड़की के हक में जवानी से ढल जाना मुनासिब जाने, और यही जरूर समझे तो जो चाहे सो कर ले क्योंकि—वह गुनाह नहीं करता, **"वे ब्याह करें"**। इन सब प्रमाणों से यह साफ है, कि "**बाप बेटी के साथ शादी कर ले**" इसमें कुछ गुनाह नहीं। दूसरी शिक्षा यह है कि अगर किसी कुआंरी लड़की को गर्भ रह जाये तो यह मान लेना चाहिये कि—यह हमल (गर्भ) खुदा की ओर से हुआ। कुआंरी से अगर बेटा पैदा हो जाये तो उसको खुदा का बेटा कहा जाये।

श्री पादरी अब्दुल हक साहिब—

(पादरी साहब ने गुस्से में भरकर कहा)—कि, आर्य समाज ने कैसे दुष्ट को बुला लिया हैं ? मैं इसकी किसी भी बात का जवाब नहीं दूंगा। और इसके साथ कभी भी मुबाहिसा नहीं करूंगा। मेरे साथ मुबाहिसा कराने के लिए श्री पण्डित रामचन्द्र देहलवी जैसे आदमी को बुलाया करें।

नोटः—आर्य समाज चूहड़पुर (विकास नगर) के प्रधान श्री बाबू आनन्दकुमार जी ने जोर के साथ गर्ज कर घोषणा की—"पादरी अब्दुल हक साहिब ! हमने तो इस मुबाहिसे को सुनकर यह निश्चय कर लिया है कि आगे जब भी मुबाहिसा होगा तब इन्हीं को बुलाया करेंगे। दूसरे किसी को कभी नहीं बुलायेंगे"।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सज्जन पुरुषों ! आपने आज देख लिया कि ईसाई मजहब और उसकी मानी हुई ईश्वरीय किताब बाइबिल की तालीम क्या है ? जिसको कोई भी समझदार इन्सान कभी भी मानने को तैयार नहीं होगा। इस मुबाहिसे से यह भी जाहिर हो गया कि पादरी अब्दुल हक भी इस तालीम को मानना तो दूर बल्कि सुनने को भी तैयार नहीं है। तनख्वाह बन्द होने के डर से इस तालीम को गन्दी और गलत नहीं कह सकते, पर इस तालीम पर होने वाले ऐतराज का जवाब उनसे दिया जाना नामुमकिन है। यह आप सब पर जाहिर हो गया। आगे इस मजमून पर यह भूलकर भी मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) नहीं करेंगे। यह मेरी भविष्य वाणी है।

श्री पण्डित अमरनाथ जी वैद्य वाचस्पति —

सज्जनों ! मुझको केवल समय देखने का अधिकार था, हार-जीत का निर्णय देने का अधिकार नहीं है। पर इस मुबाहिसे में हार-जीत का फैसला देने की कुछ भी आवश्यकता नहीं है। आप सबने तो सब कुछ समझ ही लिया। इसाईयों ने भी आज साफ-साफ समझ लिया। ऐसा साफ मुबाहिसा आज तक नहीं सुना था। मैं आप सबको धन्यवाद देता हुआ आज की सभा को समाप्त करता हूं। दूसरा मुबाहिसा मसलए तनासुख अर्थात आवागमन (पुर्नजन्म) पर होना था। परन्तु पादरी अब्दुल हक जी हमारे शास्त्रार्थ केशरी ठाकुर अमरसिंह जी से किसी भी प्रकार मुबाहिसा करने को तैयार नहीं है। इस कारण २९ अप्रैल को होने वाला मुबाहिसा न होने पर भी आर्य समाज की अद्‌भुत विजय का सब हिन्दू-मुसलमान तथा इसाईयों पर भी प्रभाव है। ईसाई लोग भी जिसमें उपस्थित हैं वे सब पादरी अब्दुल हक साहिब को हारा हुआ मानते हैं।

नोटः—यह शास्त्रार्थ विवरण उस समय का लिखा हुआ रखा था, जिसे प्रकाशनार्थ श्री लाजपतराय जी अग्रवाल के पास भेज रहा हूं। और उनसे प्रार्थना करता हूं कि इसमें जो भी त्रुटि रह गई हों उसे **"पूज्यपाद महात्मा अमर स्वामी जी महाराज"** से ठीक करा लें।

निवेदक
"आनन्द कुमार"
प्रधान—आर्य समाज (चुहूड़पुर) विकास नगर
देहरादून—२८-४-१९५४ ई०

नवां शास्त्रार्थ--

स्थान : **"राजधनवार" जिला हजारी बाग (बिहार)**
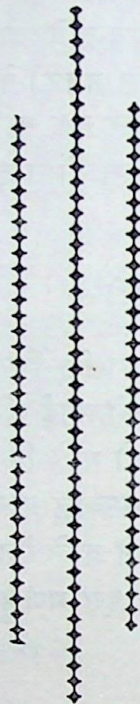
दिनाङ्क : **६ अप्रैल सन् १९५३ ई० (दिन सोमवार, सुबह आठ बजे)**

विषय : **क्या भागवतादि पुराण वेदानुकूल हैं ?**

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी**

पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : **शास्त्रार्थ महारथी श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री**

आर्य समाज की ओर से प्रधान : **श्री पण्डित महादेवशरण जी, अधिष्ठाता (गुरुकुल देवघर)**

पौराणिक पक्ष की ओर से प्रधान : **श्री पण्डित अखिलानन्द जी "कविरत्न"**

शास्त्रार्थ का आयोजन कराने वाले : **राजा महेश्वरी प्रसाद नारायण देव "राजधनवार" (बिहार)**

नोट: १. इस शास्त्रार्थ में उपस्थित विद्वान : १—स्वर्गीय स्वामी अभेदानन्द जी सरस्वती २—आचार्य श्री पण्डित रामानन्द जी शास्त्री ३—व्याकरणाचार्य श्री पण्डित गंगाधर जी शास्त्री, ४ अयोध्या प्रसाद जी रिसर्चस्कोलर कलकत्ते वाले।

नोट: –२. यह शास्त्रार्थ श्री राजा महेश्वरी प्रसाद नारायण देव जी के राजमहल (प्रांगण) में हुआ था।

शास्त्रार्थ से पहले

राज धनवार जिला हजारी बाग (बिहार) में **"सत्यमेव जयते नानृतम्"** वाला वाक्य अक्षरशः सत्य सिद्ध हुआ। जब शुद्ध वैशाख कृष्णा ७ सप्तमी सोमवार सं० २०१० विक्रमी अप्रैल मास की ६ तारीख सन् १९५३ ई० को आर्य समाज और सनातन धर्म के बीच दो शास्त्रार्थ एक ही दिन में हुए। जिनमें पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता पहले दिन श्री पं० माधवाचार्य जी दिल्ली वाले नियुक्त किये गये। एवं दूसरे दिन श्री पण्डित अखिलानन्द जी "कविरत्न" नियुक्त किये गये। मगर आर्य समाज की ओर से दोनों पण्डितों से एक ही पण्डित श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी ने शास्त्रार्थ किये। दोनों पण्डितों को पछाड़ कर "सत्य की ही विजय होती है झूठ की नहीं" वाली कहावत को सत्य करके दिखा दिया और दिखा दिया कि पुराणों को संसार का कोई भी पौराणिक पण्डित वेदानुकूल, सत्य और प्रामाणिक सिद्ध नहीं कर सकता है। साथ ही यह भी सिद्ध कर दिया कि महर्षि दयानन्द जी महाराज की पुस्तकों में अक्षर-अक्षर सत्य, वेदानुकूल और सर्व शास्त्र अनुमोदित और अखण्डनीय है संसार का कोई पौराणिक ही क्या कोई भी विधर्मी और विपक्षी ऋषि दयानन्द के बताये सिद्धान्तों और ग्रन्थों को वेद विरुद्ध सिद्ध नहीं कर सकता है। "राजधनवार" (बिहार) में शास्त्रार्थ क्यों हुआ ? यह भी एक प्रश्न पैदा होता है। आर्य समाज के साथ पौराणिक मत, जैन मत, ईसाई मत, मुहम्मदी मत और अहमदी मत, आदि अनेक सम्प्रदायों से असंख्य शास्त्रार्थ हो चुके और असंख्य होंगे। जब सिद्धान्तों में भेद होता है तो उभय पक्ष के प्रामाणिक ग्रन्थों के आधार पर खण्डन और मण्डन किया जाता है। दोनों पक्षों के पोषक दो पण्डित जब शास्त्रों के प्रमाणों का परस्पर आदान-प्रदान करते और शास्त्रों (प्रामाणिक ग्रन्थों) के प्रमाणों का अर्थ अपने-अपने ढंग से करते हैं इसी का नाम शास्त्रार्थ होता है। ऐसे शास्त्रार्थ असंख्य हुए और होते हैं और असंख्य ही होते रहेंगे। इसी लिए "राजधनवार" (बिहार) में भी हुआ। **आर्य समाज और सनातन धर्म में शास्त्रार्थ का विशेष कारण यह रहा कि** - दोनों के प्रामाणिक ग्रन्थ वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, दर्शन, स्मृति और इतिहास एक हैं जिनको आर्य समाज मानता है उनको सनातन धर्म भी मानता है बहुत से ग्रन्थ ऐसे भी है जिनको सनातन धर्म मानता है आर्य समाज नहीं मानता है ऐसा कोई ग्रन्थ नही है जिसको केवल आर्य समाज मानता हो और सनातन धर्म न मानता हो। जिन सिद्धान्तों को आर्य समाज मानता है प्रायः उन सब को सनातन धर्म भी मानता है कुछ ऐसे सिद्धान्त हैं जिनको सनातन धर्म ही मानता है आर्य समाज नहीं मानता है। जिन ग्रन्थों के सिद्धान्तों को आर्य समाज नहीं मानता है उनका खण्डन करता है इससे पौराणिकों को चिढ़ होती है एक यह कारण शास्त्रार्थ का हुआ तथा सर्वत्र होता है। इन शास्त्रार्थों के करने से पौराणिकों को आर्थिक हानी भी होती है—क्योंकि पौराणिक पक्ष आर्य समाज के विरुद्ध कितना ही खण्डन करे उससे आर्य समाजियों को आर्थिक हानि कुछ भी नहीं होती है पर आर्य समाज के प्रचार और उसकी वृद्धि से सनातन धर्मियों की अपार आय के साधनों, मूर्ति पूजा, तीर्थ, मृतक श्राद्ध और फलित ज्योतिष आदि का खण्डन होने से उसकी अपार आय की अपार हानि होती है यह शास्त्रार्थ का मुख्य कारण है इन्हीं कारणों से सर्वत्र शास्त्रार्थ होते हैं इन्हीं कारणों से राज धनवार में भी हुआ। पौराणिकों ने शास्त्रार्थ होने के अपने छपाये झूठे शास्त्रार्थ में जो कारण बताये

हैं वह जहां झूठे और मूर्खता पूर्ण है वहां उपहासास्पद भी है। (१) किसी अशिष्टता और असभ्यता करने वाले लड़के को आर्य समाज की सभा से निकाला जाना। (२) अपने दुर्गुणों के कारण आर्य समाज से निकाले हुए किसी उपदेश का आर्य समाज के विरुद्ध अनर्गल प्रलाप, यह कोई शास्त्रार्थ के कारण नहीं हैं न हो सकते हैं दो कारण उक्त झूंठे शास्त्रार्थ में यह लिखे हैं कि-- (क) स्कूलों के छात्रों ने **"नमस्ते"** का परित्याग कर दिया था। (ख) आर्य समाज का **"अस्तित्व"** खतरे में पड़ गया था। दोनों ही बातें मिथ्या हैं और मूर्खता पूर्ण हैं। सारे देश के स्कूलों और कालिजों के विद्यार्थी प्रायः परस्पर नमस्ते ही अधिक करते हैं पठित वर्ग में इस समय जितना "नमस्ते" का प्रयोग होता है उतना अभिवादन की जगह दूसरे किसी भी शब्द का नहीं होता है। आर्य समाजी तो सर्वत्र नमस्ते करते ही हैं अपने आप को आर्य समाजी न कहने वाले करोड़ों मनुष्य भी नमस्ते करते हैं। देश में आर्य समाजियों की संख्या प्रति दस वर्ष में शत प्रतिशत अर्थात् दो गुणी बढ़ जाती है यह हर जनगणना के समय पता लगता है। अगर आर्य समाज के सिद्धान्त सत्य न होते तो यह वृद्धि क्यों होती ? अतः अपनी आय को कायम रखने तथा व्यापार चलाने के लिए पौराणिक लोग शास्त्रार्थ का बहाना लेकर अपने पक्ष की लीपा पोती करते हैं। परन्तु उनको यह नहीं पता कि आजकल विज्ञान का युग है हर व्यक्ति झूंठ व सच को समझता तथा **"मछली पेड़ पर चढ़ गयी सत्य वचन महाराज"** वाला युग नहीं रहा। अब रही बात यह कि-**क्या राजा महेश्वरी प्रसाद नारायण देव जी शास्त्रार्थ के उभय पक्ष सम्मत प्रधान थे ?** पौराणिकों ने अपनी पोल और पराजय पर पर्दा डालने के लिये एक झूठा और अधूरा "शास्त्रार्थ राजधनवार" के नाम से छपवाया उसके अन्त में उपरोक्त नाम वाले स्थानीय जमीदार से अपने लिये विजय पत्र प्रकाशित किया है और उक्त रईस साहिब को दोनों पक्षों द्वारा माना गया शास्त्रार्थ का प्रधान बताया है जो सर्वथा असत्य है। उक्त सज्जन सनातन धर्म का उत्सव कराने वाले मुख्य थे उन्हीं के सामान से उन्हीं के मकान के सामने सनातन धर्म का पिण्डाल बना था। उन्हीं के मकान में पौराणिक पण्डित ठहरे हुए थे उन्होंने शास्त्रार्थ की बात करने को गये हुए पण्डित गंगाधर जी शास्त्री आदि के साथ अनुचित व्यवहार करते हुए आर्यों के लिए अपशब्द कहे थे जिस पर पण्डित गंगाधर जी शास्त्री तथा अन्य आर्य सज्जन अपना और समस्त आर्यों का अपमान समझते हुए उठकर चले आये थे। आर्य समाज उक्त सज्जन को प्रधान कैसे मान लेता ? आर्य समाज की ओर से दोनों शास्त्रार्थों में श्री पण्डित महादेवशरण जी अधिष्ठाता गुरुकुल देवधर ही थे उक्त सज्जन नहीं। पौराणिक पक्ष की ओर से भी वह प्रधान थे कि नहीं ? प्रत्यक्ष में प्रथम शास्त्रार्थ के प्रधान का कार्य पण्डित अखिलानन्द जी ने किया और दूसरे में पण्डित माँधवाचार्य जी ने। यदि उनसे मोटी दक्षिणा लेने के लिये उनके कान में कह दिया हो कि—आप प्रधान हैं महादेवादि की मूर्ति सदृश चुपचाप बैठे रहिये पुजारियों की भांति सारी क्रियायें उक्त दोनों पण्डित करेंगे तो पता नहीं, हां ! इतना पता अवश्य है कि—प्रत्यक्ष तो वह प्रधान थे नहीं। दूसरे पौराणिकों ने अपनी पोल और पराजय पर्दा डालने के लिये राजा महेश्वरी प्रसाद नारायणदेव जी के नाम से अपने लिये एक विजय पत्र छपवाया है। वह प्रधान नहीं थे यदि प्रधान होते तो भी हमारी विजय किसी के विजय पत्र के कारण नही। हमारी विजय तो हमारे सत्य सिद्धान्तों, पुष्ट प्रमाणों और अकाट्य युक्तियों के कारण हैं। अतः हमारे लिये ऐसे पत्रों का कुछ भी मूल्य नहीं पौराणिकों के लिये यह डूबते को तिनके का सहारा हो सकता हो तो हो। यही सब कुछ इस शास्त्रार्थ के विषय में लिखना अत्यावश्यक था। इस शास्त्रार्थ का क्या प्रभाव पड़ा? यह आप खुद ही इन शास्त्रार्थों के अन्त में पढ़िये ! धन्यवाद !!

—**"लाजपतराय अग्रवाल"**

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

धर्मानुरागी सज्जनों ! भगवान का धन्यवाद है कि आज हम भाई-भाई आपस में प्रेम पूर्वक कुछ विचार-विनिमय करने के लिए एकत्रित हुए हैं। यह विचार विनिमय प्रेम और शान्ति के साथ समाप्त हो यह मेरी हार्दिक कामना है। अपने देश और धर्म के गौरव को सुरक्षित रखने और उसको और भी ऊंचा करने के लिए अत्यन्त आवश्यक है, कि हमारे साहित्य में जो दोष आ गये हैं, उनका संशोधन करें। जिससे किसी विदेशी, विधर्मी, और विपक्षी को हमारे पूर्वजों और हम पर आक्षेप करने का अवसर न मिले। जब हम पुराणों को देखते हैं, तो उनमें ऐसी असत्य कथाऐं, लिखी मिलती हैं। जिनको देखकर विरोधी लोग हमारे पूर्वजों की निन्दा करते हैं, हम आर्य समाजियों का यह पूर्ण विश्वास है कि हमारे ऋषि, मुनि, राजे महाराजे ऐसे कदापि नहीं थे। और उन्होंने ऐसे धर्म विरुद्ध कार्य कभी नहीं किये थे, जैसे पुराणों में उन पर दोषारोपण किये गये हैं। आज देश के सम्मुख गोरक्षा अत्यावश्यक प्रश्न हैं। परन्तु गोरक्षा के मार्ग में एक बड़ी भारी रुकावट यह है कि, गोरक्षा विरोधी लोग पुराणों के आधार पर यह कहते तथा लिखते हैं कि गोवध सदा होता था, और भारत के राजे महाराजे तथा ऋषि महर्षि तक गौ मांस तक भक्षण करते थे। मैं कहता हूं कि हमारे देश में मुसलमानों से पूर्व गोवध कभी नहीं होता था। पुराणों में जो लिखा है वह वेद विरुद्ध हैं। सर्वथा मिलाया हुआ असत्य है। और हमारे विरोधियों ने हमारे पूर्वजों पर कलंक लगाकर अपना उल्लू सीधा करने के लिये लिखा है। परन्तु मेरे सनातन धर्मी भाई उसे अपने गले मढ़े बैठे हैं। उदाहरण के लिए मैं कुछ कथाऐं उपस्थित करता हूं—

"ब्राह्मणानां त्रिकोटीश्च, भोजयामाश नित्यशः ॥४८॥
पंच लक्ष गवां मांसैः सुपक्वे घृत संस्कृतैः ॥४९॥

ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड ३ अध्याय ५४ श्लोक ४८, ४९, (वेंकटेश्वर प्रेस द्वारा प्रकाशित)

स्वायम्भू मनु जो आदि आर्य सम्राट और मनुस्मृति जैसे धर्म शास्त्र के प्रणेता थे, उन्होंने गोमेध यज्ञ किये, और तीन करोड़ ब्राह्मणों को पांच लाख गौओं का माँस जो भली भाँति घी से छोंका गया था, खिलाया। कितना बड़ा अनर्थ है। कितना बड़ा लांछन है। क्या इस समय कोई पापी से पापी बादशाह भी ऐसा है, जिसके यहाँ लाखों क्या हजारों गौवें दावत के लिए मारी जाती हों ? क्या स्वायम्भु मनु ऐसा पाप करते होंगे ? मैं कहता हूं कदापि न करते होंगे। और भी देखिये :—

सत्य व्रतस्तु तद्‌भत्वया कृपया च प्रतिज्ञया। विश्वामित्र कलत्रं च पोषयामास वै तदा ॥१॥ हत्वा मृगान्वराहांश्च महिषांश्च वने चरान् ॥२॥ अविद्य माने मांसे तु वसिष्ठस्य महात्मनः ॥९॥ सर्व कामदुहां दोग्ध्रीं ददर्श च नृपात्मजः ॥१०॥ दाश धर्म गतो राजा, तां जघान् स वै मुने। सतं मासं स्वयं चैव विश्वामित्रस्यत्तात्मजम् ॥११॥ भोजयामासम् तच्छुत्वा वशिष्ठो ह्यस्य चुकुहो ॥१२॥
(शिव पुराण उमा संहिता अध्याय ३८ श्लोक १-२ तथा ९-१२ ॥ श्याम काशी प्रेस मथुरा से प्रकाशित)

अर्थात् मनु के वंशज चक्रवर्ती महाराजा मान्धाता के पौत्र सत्यव्रत ने ऋषि विश्वामित्र के परिवार का उस समय पालन किया, जिस समय ऋषि विश्वामित्र घोर तपस्या में लगे हुए थे। और उनकी पत्नी अपने पुत्र गालब को बेचने लगी थी। —उस समय उसने अनेक प्रकार के मांसों से उस परिवार का पालन किया, एक दिन वशिष्ठ ऋषि की कामधेनु गऊ को मारकर उसका मांस स्वयं भी खाया और विश्वामित्र के पुत्रों को भी खिलाया। और देखिये—

एवमेषा च गौ धर्म प्राप्स्यते नात्र संशयः। पितॄनभ्यर्च्य धर्मेण नाधर्मो नो भविष्यति ॥१८॥
एवमुक्ताश्च ते सर्वे प्रोक्षयित्वा च गां तदा। पितृभ्यः कल्पयित्वा तु ह्य ुपायुञ्जत भारत ॥१९॥
उपयुज्य च गां सर्वे गुरोस्तस्य न्यवेदयन्। शार्दूलेन हता धेनुर्वत्सा वै गृह्यतामिति ॥२०॥

(शिव पुराण उमा संहिता अध्याय ४१ श्लोक १८, १९, २० पृष्ठ, १२५७॥
(श्यामकाशी प्रेस मथुरा द्वारा प्रकाशित)

कौशिक (विश्वामित्र) के पुत्र गर्ग ऋषि के शिष्य बन गये। और उनकी गौ को मार कर उसके मांस से श्राद्ध करके उसके बछड़े को गर्ग ऋषि के पास ले गये और कह दिया कि—गौ तो शेर ने खा ली, बछड़ा आप ले लीजिये। सब ने यह विचार किया कि यदि इस गौ के मांस को वैसे ही खायेंगे तो पाप लगेगा यदि पितरो का श्राद्ध इसके द्वारा करके पीछे खायेंगे, तो हमको पाप नहीं लगेगा और गौ-धर्म कार्य में लग जायेगी। यह कहानी पुराणों में कई जगह तो बहुत स्पष्ट शब्दों में मिलती है। **'गवां लक्षच्छेदनं च हरिणानां द्विलक्षकम्"** ॥१६॥ और देखिये—

ब्रह्मवैवर्त पुराण श्री कृष्ण जन्म खण्ड अध्याय १०५। पृष्ठ १०८६, श्लोक ६० से ६३॥ (कलकत्ता मोर संस्करण द्वारा प्रकाशित) अर्थात् एक लाख गौ मारी जायें और दो लाख हरिण इसी प्रकार और भी लाखों जीव मारने की व्यवस्था थी। तथा रुकमणी के विवाह के लिये बहुत पशु मारे जाने का विचार किया गया था, जिसमें एक लाख गौ मारे जाने का निश्चय था। आगे देखिये :—
"पंच कोटि गवां मांसं सं-पूपं स्वान्नमेव च ॥९८॥ एतेषां च नदी राशी भुञ्जते ब्राह्मणः मुने ॥९९॥"
(ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड २ अध्याय ६१ श्लोक ९८, ९९, वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई द्वारा प्रकाशित)

चन्द्र के पौत्र और बुद्ध के पुत्र "चैत्र" के यहां पांच करोड़ गौओं का माँस ब्राह्मणों को खिलाया गया। **"कहिये पांच करोड़ गऊवें एक-एक दिन में ब्राह्मणों के भोजनार्थ मारी जायें"** कितने बड़े भंयकर पाप का एक क्षत्रिय राजा पर आरोप है? क्या इस समय गौ भक्षक ईसाई और मुसलमानों में भी कोई रईस नवाब एवं बादशाह ऐसा सुना है, जिसके यहां दावत के लिए हजार दो हजार गायों का वध किया जाता हो? इसके अतिरिक्त दूसरा आरोप पुराणों में हमारे पूर्वजों पर व्यभिचार अर्थात् पर स्त्री गमन का लगाया हुआ है। इसके उदाहरण भी देखिये। गीता में श्री कृष्णचन्द्र जी कहते हैं :—

"यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः। स यत् प्रमाणं कुरूते लोकस्तदनुवर्तते ॥२१॥"
(श्री मद्भगवतगीता अध्याय ३ श्लोक २१,)

अर्थात्—श्रेष्ठ पुरुष जैसा-जैसा आचरण करते हैं। छोटे मनुष्य भी वैसा-वैसा करने लगते हैं। अभिप्राय यह है कि श्रेष्ठ पुरुष को सदा श्रेष्ठ कार्य ही करने चाहिये जिसे देख-देखकर उनके अनुगामी

श्रेष्ठ कर्म ही करें। श्री कृष्ण जी महाराज युधिष्ठर जी से कहते हैं कि—हे पाण्डव ! मेरी १६ हजार स्त्रियां हैं। देखिये प्रमाण नोट करिये :—**"मम पत्नी सहस्राणि सन्ति पांडव षोडशः"** ।। (भविष्य पुराण उत्तर पर्व ४ अध्याय १११ श्लोक ३ पृष्ठ ४७२, वेंक्टेश्वर प्रेस बम्बई द्वारा प्रकाशित)

हमारा यह प्रश्न हैं कि, यदि ऐसा सत्य हैं तो श्री कृष्ण जी ने ऐसा क्यों किया ? क्या यह धर्म हैं ? क्या इस लिये किया कि मेरे अनुगामी ऐसा ही किया करें ? उनकी भी हजारों स्त्रियां हुआ करें ? एक नहीं आप जितने चाहो उतने प्रमाण लो—यथा :—

तं द्रष्ट्वा सुन्दरं साम्बं सर्वाश्चुक्षुभिरे स्त्रियः ।।२५।। स्वाभावतोल्प सत्वानां जघनानि विसुस्रुवुः ।।२७।। ब्रह्मचर्येऽपि वर्तन्त्याः साध्व्या ह्यपि च श्रूयते। हृद्यं हि पुरुषं दृष्टवा योनिः संक्लिद्यते स्त्रियाः ।।२८।। (भविष्य पुराण ब्राह्म पर्व अध्याय ७३ पृष्ठ ७७, श्लोक २५, २७, २८, वेंक्टेश्वर प्रेस बम्बई द्वारा प्रकाशित) अर्थात् श्री कृष्ण जी की वह पत्नियां श्री कृष्ण जी के ही पुत्र साम्ब पर काम के वश होकर आसक्त हो गयी यह देवर्षि श्री नारद जी तथा श्री कृष्ण चन्द्र जी दोनों ने देखी। और कहा है कि :—**"चौरेरपहृताः सर्वा वेश्यात्वं समवाप्स्यथ ।।१८।। एवं नारद शापेन मच्छापेन च साम्प्रतम् ।।१९।। वेश्याधर्मेण वर्तध्व मधुनां नृप मन्दिरे ।।२२।। न चैकस्मिन्यतिः कार्या पुरुषे धन वर्जिते ।।२५।। सुरूपो वा विरूपो वा द्रव्यं तत्र प्रयोजनम् ।।२६।।"** (भविष्य पुराण उत्तर पर्व अध्याय १११ पृष्ठ ४७३, वेंक्टेश्वर प्रैस बम्बई द्वारा प्रकाशित) अर्थात फिर दोनों ने शाप दिया कि तुम सब वेश्या हो जाओ वेश्या धर्म में तुम वर्तो, धन रहित मनुष्यों से तुम रति क्रिया मत करना मनुष्य सुरूप हो या कुरूप वहां धन से ही प्रयोजन है। तथा फिर उनके उद्धार के लिए उपाय यह बताया कि रविवार के दिन किसी वेदपारगामी ब्राह्मण को बुला कर उसके साथ बिना फीस समागम करें तो उद्धार हो जावेगा। पता नोट करिये तथा यह पुस्तक है देख लीजिये—**"भविष्य पुराण उत्तर पर्व अध्याय १११ श्लोक ३३, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६,"** ।। **"रविवार"** शब्द ३३ और ४६ नम्बर वाले श्लोकों में है अच्छी तरह से देख लीजिये ।।

जब श्री कृष्ण जी महाराज और उनके परिवार का यह चरित्र बताया गया तो उनके भक्तों का क्या हाल होगा ? और लीजिये :—**"विष्णु ने जालन्धर की पत्नी वृन्दा से व्यभिचार किया"** यह पदम पुराण में लिखा है। मैं बोलता हूं आप ध्यान से सुनिये और पता नोट करिये। पुराण मेरे पास रक्खा है जो भी सज्जन चाहें आकर देख सकता है—पता नोट करें—

पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १६ श्लोक ५३ से ७२ तक (आनन्द आश्रम प्रेस पूना तथा कलकत्ता मोर संस्करण द्वारा प्रकाशित) तथा पद्म पुराण में ही और देखिये **"पद्म पुराण, उत्तर खण्ड ६ अध्याय-१०५ श्लोक १ से ३०,"** तथा चन्द्र ने अपने गुरु बृहस्पति की पत्नी तारा को हरण करके उसके साथ व्यभिचार किया। मनु जी महाराज अपनी स्मृति में गुरु पत्नी गमन को महापातक बताते हैं।

विस्तृत जानकारी के लिए देवी भागवत पुराण स्कन्द १ का ग्यारहवां अध्याय तथा यही कहानी कुछ अन्तर से श्रीमद्भागवत पुराण के स्कन्द ९ अध्याय १४ में भी कही गयी है। **पण्डित जी महाराज यह थे पुराणों के पते** ! जिनमें गुरुपत्नी का हरण व उसके साथ व्यभिचार साफ लिखा है। और मनु जी महाराज भी अपनी स्मृति में गुरु पत्नी गमन को महापातक बताते हैं। और कहते हैं कि

—संसार में चार महापातक हैं। प्रथम तो ब्रह्महत्या (अर्थात् किसी विद्वान ब्राह्मण को मारना) दूसरे शराब पीना, तीसरे चोरी करना चोथे गुरुपत्नी से व्यभिचार करना, परन्तु एक पाँचवाँ महापाप है कि जो लोग इन लोगों के साथ मेलजोल (सम्पर्क) रखते हैं वह भी महापापी कहे गये है यथा :—

ब्रह्महत्या, सुरापानं, स्वेयं, गुरु वंगनागम्: । महान्ति पातिकाव्याहू संसर्गश्चापि तै सहः ।।५४।।
(मनुस्मृति अध्याय ११ श्लोक ५४)

चन्द्र से तारा गर्भवती हो गई, उससे बुद्ध नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। देवों ने तारा बृहस्पति को दिला दी और पुत्र-बुध-चन्द्र को आदि। इस प्रकार की पूर्वजों को कलंक लगाने वाली सहस्रों कथायें पुराणों में भरी हुई हैं। इसलिए आर्य समाज का यह अपने भाई सनातन धर्मियों को परामर्श है कि वह शीघ्र यह घोषणा करदें कि पुराण वेद विरुद्ध हैं और अप्रमाणिक तथा अमान्य हैं।

शास्त्रार्थ महारथी श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों ! महाशय जी ने जो प्रश्न किये हैं और जिन कथाओं को न समझने के कारण आपको भ्रम हुआ है। यदि वे सब बातें विधर्मियों की होती तो हम बिना किसी झिझक के उनको पुराणों से निकाल देते या पुराणों को छोड़ने की घोषणा कर देते। परन्तु आपने पुराणों से जो सुनाई हैं यह सब ज्यों की त्यों वेदों में भी विद्यमान है। महाशय जी जो आक्षेप आज पुराणों पर लगा रहे हैं वही सब आक्षेप बौद्ध काल में वेदों पर लगाये जाते थे। बौद्धों की वह डिमडिम घोषणा प्रसिद्ध है :—**"त्रयो वेदस्य कर्त्तारो भाण्ड़ धूर्त निशाचरा:"**। अर्थात् वेदों के बनाने वाले भाण्ड, धूर्त, निशाचर हो सकते हैं। क्यों कि उनमें अश्लील, धूर्तता पूर्ण और दुराचार की बातें लिखी हैं। ऐसी दशा में पुराणों को छोड़ने से काम न चलेगा। किन्तु वेदों तथा अन्यान्य सभी आर्ष ग्रन्थों को छोड़ कर विधर्मी ही बनना पड़ेगा। किसी अन्य धर्मावलम्बी ने ऐसी बातें मिला दी हों यह कल्पना निराधार और अविश्वसनीय हैं क्योंकि कन्या कुमारी से लेकर हिमालय तक उपलब्ध पुस्तकों में ताड़ पत्र पर लिखे हुए अधावधि सुरक्षित कई पुस्तकालयों में प्राप्त पुराण ग्रन्थों में सर्वत्र कोई मिलावट करने में समर्थ हो यह सर्वथा असम्भव है। इस लिए महाशय जी की भ्रान्ति का एक मात्र यही कारण है कि इन्होंने गुरुमुख से पुराणों का स्वाध्याय नहीं किया। जो व्यक्ति गुरु मुख से वेद व पुराणों को पढ़ेगा उसे भ्रम हो ही नहीं सकता। गौ माता सनातन धर्मियों की प्राण है हमारे अगणित पुरूखाओं ने गाय के लिये अपने प्राण न्यौछावर कर दिये हैं। आज भी एक सच्चा हिन्दू अवसर पड़ने पर गाय के लिए प्राण देने में आनाकानी नहीं करेगा। अभी इसी युग में श्री स्वामी करपात्री जी महाराज के साथ गौ रक्षा आन्दोलन में २५ हजार सनातनी जेल यात्रा कर चुके हैं। जिनमें एक यह सेवक भी था, तीन महात्मा जेल यातना से अपने प्राण भी दे चुके हैं। अब भी स्वामी करपात्री जी इसी आन्दोलन में जेल यातना भोग रहे हैं। यदि यह शास्त्रार्थ का आवश्यक पुरोगम न होता तो यह सेवक भी शायद जेल में होता। ऐसी दशा में सनातनियों के किसी ग्रन्थ में पूज्य गौ माता के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं हो सकता। शतपथ ब्राह्मण ३।३।३। में लिखा है कि, **"महास्त्वेव गोर्महिमा"** गाय का महत्व बहुत बडा है - अब अपने प्रश्नों के उत्तर सुनिये :—

(१)—स्वायम्भुव मनु ने अनेक गोमेध यज्ञ किये। "संगमे" धातु से "मेध" शब्द बनता है। जिसका अर्थ है, गाय का सत्कार किं वा पूजा। "**सर्वे देवास्थिता देहे**"। (**बृहत् पाराशरस्मृति**) **३।३।३।** प्रमाणानुसार गाय के शरीर में तेतीस कोटि देवताओं का निवास है। अतः जिस यज्ञ में गाय का विशेष रीति से पूजन सतकार हो ऐसे यज्ञ को "**गौ मेध**" कहते हैं। सो हमारे सभी पूर्वज गो भक्ति के अनेक अनुष्ठान किया करते थे क्योंकि हमारे ग्रन्थों में "**गावो विश्वस्य मातरः**" अर्थात् गाय विश्व की माता है ऐसी घोषणा की गई है। मांस शब्द का अर्थ केवल लोक प्रसिद्ध पशु आदि का रक्त के बाद बनने वाला—"**रसादरक्तं ततोमांसम्**" दूसरा धातु अर्थात् गोश्त ही नहीं है अपितु कन्दों और फलों का गूदा एवं दूध आदि तरल पदार्थों का सार-भाग-रबड़ी, खीर, खोआ आदि भी इसके अनेक अर्थ हैं। इस लिए भोजन प्रसंग में भी जहां "गो मांस" शब्द आया है। वहां गऊ से उत्पन्न होने वाले दुग्ध, दधि, मक्खनादि गव्य से अभिप्राय है या गव्य निर्मित सार भूत पायस, खीर, रबड़ी-खोआ आदि से मतलब है। संस्कृत साहित्य में वृक्ष फल आदि के ऊपरी भाग, मध्य भाग और कठिन भाग को क्रमशः त्वचा गूदे को मांस और गुट्ठल को अस्थि नाम से ही स्मरण किया जाता है। हरड़ के विषय में—**शालीग्राम निघण्टु पृष्ठ ११-५२॥** में लिखा है, कि—"**सूक्ष्मास्थिमांसला पथ्या**" अर्थात् जिसमें अस्थि गुट्ठल सूक्ष्म हो और मांस गूदा अधिक हो वह श्रेष्ठ होती है अतः स्वायम्भुव मनु नित्य गो पूजन करते थे। पाँच लाख दुधारू गऊओं के गव्य से निर्मित भोजन द्वारा ब्राह्मणों को तृप्त करते थे। मूल मैं गौ मांस शब्द के विशेषणों से भी हमारे अर्थ की पुष्टि होती हैं। जैसे कि "**सापूपं**" मालपूए साथ होते थे, तथा उस गव्य में अन्न चावलों को रान्धा जाता था, जिसका सीधा तात्पर्य है कि गो दुग्ध निर्मित खीर और मालपूओं से भोजन होता था। वेद में स्पष्ट लिखा है कि :—(**क**) **एतद्हवै देवानां परमं अन्नाद्यं यन्मासम्।** (शतपथ ब्राह्मण ११।७।) (**ख**) **परमन्नं तु पायसम्** (**अमर कोष**) अर्थात् देवताओं को दिये जाने वाले मांस को "**परमान्न**" कहते हैं। (ग)—खीर का अन्यतम नाम "परमान्न" है। आशा है कि महाशय जी अब केवल मांस शब्द देख कर भ्रम में न पड़ेंगे। आयुर्वेद में वर्णन आता है कि अमुक औषधि में "**प्रस्थं कुवारिका माँसम्**" अर्थात् एक सेर भर घी कुवारी का मांस (गुदा) डाला जाये। अब यदि कोई आप जैसा समझदार ! कुवारी लड़की का सेर भर मांस—गोश्त डालने की व्यावस्था करे तो अनर्थ हो जाय।

(२)—सत्यव्रत नामक जिस व्यक्ति की कथा कहकर यहां आक्षेप किया जा रहा है। वास्तव में वह वैसा ही दुराचारी था जो विकृतांग करके हिन्दु धर्म से सर्वथा बहिष्कृत कर दिया गया था। यह "**हरिवंश पुराण**" में स्पष्ट लिखा है। एक ही कश्यप ऋषि की सन्तान-कोई देवता तो कोई दानव। एक ही पुलस्त्य के नाती रावण और विभीषण। इसी प्रकार सत्यव्रत, ऋषि की सन्तान होते हुए भी दुर्भाग्यवश पथ भ्रष्ट "राक्षस" हो गया था। पुराण में देव, दानव, मानव, सभी के सुचरित और दुष्चरित वर्णित हैं जिसमें मनुष्य धर्म अधर्म का परिणाम जानकर पाप से पराङ्गमुख हो, अतः जैसे रावण के दुराचारी होने से राम भक्तों पर कोई आक्षेप नहीं हो सकता इसी प्रकार सत्यव्रत के दुराचार का उसको उग्र दण्ड देने वाले सनातन धर्मियों पर कोई आक्षेप करना व्यर्थ ही हैं। क्योंकि हम तो "**रामाद्विवतप्रवर्तिव्यं, न रावणादिवत्**" के अनुसार रामादि का अनुकरण करने वाले हैं रावण आदि का नहीं।

(३)—रुक्मणी के विवाह की तैयारी में गौ आदि पशुओं को वध करने के लिये जुटाने का

आक्षेप है। वह भी निर्मूल है क्योंकि प्रकृति प्रसंग यह है कि—ब्रह्मवैवर्त पुराण में लिखा है कि—कुडनपुर का राजा भीष्मक एक धार्मिक राजा था। परन्तु उसका कुपुत्र रुक्मीकंस शिशुपालादि की टोली का अन्यतम सदस्य था। एक बार सभा में रुक्मणी के विवाहार्थ जब परामर्श चला तो शतानन्द पुरोहित ने श्रीकृष्ण को रुक्मिणी के योग्य वर बतलाया, और माखन मिश्री आदि से अनेक सत्कार की बात कही। परन्तु दुष्ट रुक्मी ने पुरोहित, अपने पिता और श्रीकृष्ण, तीनों को अपशब्द कहते हुए अपनी बहन को शिशुपाल से विवाहने का अपना दृढ़ निश्चय व्यक्त किया और शिशुपालादि के लिए नाना विधि मद्य और अनेक जानवरों के मांसादि का प्रबन्ध करने की घोषणा की "तू-तू मैं-मैं" में सभा समाप्त हो गई। रुक्मिणी ने माता पिता की सम्मति से गुप्त रीति से भगवान कृष्ण के पास एक ब्राह्मण भेजकर अपने उद्धार की सब व्यवस्था ठीक कर ली। निश्चित समय पर शिशुपाल की बारात आई। परन्तु भगवान कृष्ण ने सबके देखते-देखते रुक्मिणी का हरण किया। घोर घमासान युद्ध हुआ। रुक्मी के सब साथी मारे गये। शिशुपाल ने भागकर जान बचाई, और स्वयं रुक्मिणी हस्ताक्षेप न करती तो श्री कृष्ण के हाथों मारा जाता। अन्त में शिर मूंड़ कर काला मुंह करके उसे अपमान पूर्वक छोड़ दिया गया, इस तरह रुक्मी के विचारानुसार न रुक्मिणी का विवाह शिशुपाल के साथ हो पाया और ना ही किसी जीव के मारने का अवसर आया। अतः रुक्मिणी के विवाह में गौ वध तो क्या मक्खी तक का भी वध नहीं हुआ। (ग्राम उच्च शरीफ़ वहावल पुर स्टेट) में समाज के भजनीक पण्डित सन्तराम द्वारा उपर्युक्त बात करने पर डेरा नवाब कोर्ट में मुकदमा चला। पाँच आर्य समाजियों के वारण्ट निकले, अन्त में लिखित क्षमा मांगने पर और कहे शब्द वापिस ले लेने पर पिण्ड छूट पाया। क्या महाशय अमर सिंह जी आप भी सफेद झूठ बोलकर हमें वैसी व्यवस्था करने के लिए बाध्य कर रहे हैं?

(४)—जैसे पौलस्त ऋषि के अगणित पुत्र पोत्रों के गौ भक्षक और नर भक्षक राक्षस हो जाने से सनातन धर्म पर कोई आक्षेप नहीं हो सकता इसी प्रकार विश्वामित्र के सात किं वा न्यूनाधिक पुत्रों के विधर्मी हो जाने से हम पर कोई आक्षेप नहीं हो सकता। आपने जो गौ वध का प्रसंग उठाया इससे ईसाई-मुसलमान व्यर्थ लाभ उठायेंगे। इसको आप न उठाते तो अच्छा था। मुसलमानों के, आने से पूर्व गौ वध नहीं होता था, यह सर्वथा असत्य है और एक सम्प्रदाय की व्यर्थ निन्दा है। किसी सम्प्रदाय का इस प्रकार अपमान उचित नहीं है।

नोट :—ऐसी-ऐसी बातें कहकर माधवाचार्य जी ने मुसलमानों को भड़काने का प्रयत्न किया परन्तु सफल न हुए। फिर आगे कहा—

(५)—पुराण साहित्य में दो कृष्णों का वर्णन आता हैं। एक कंस आदि दुष्टों का नाशक, गीता का उपदेष्टा सदाचारी, सनातन धर्मियों के गोपाल कृष्ण भगवान, दूसरा करुष देश का राजा पौण्ड्रिक जो यन्त्र संचालित नकली भुजाएँ लगाकर वैसा ही बहुरूप बनाकर कृष्ण के नाम से विख्यात होने की दुश्चेष्टा में प्रयत्न शील, दुराचारी, दम्भी, नकली, कृष्ण था।

जो अन्त में भगवान कृष्ण के ही हाथों मारा गया। महाशय जी आप जो दुश्चेष्टाये यहाँ प्रकट कर रहे हैं वह उसी नकली कृष्ण से सम्बन्धित है। इस ईर्ष्यालु दुष्ट ने वाहन स्वांग तो सब भगवान कृष्ण जैसा बना लिया था परन्तु सदाचार में तादृश घटनायें घटी। "**श्री मद् भागवत**

पुराण के दशम् स्कन्द" में और पुराणान्तर में भी इस नकली कृष्ण पौण्ड्रिक की ऐसी उपहासास्पद कथायें विद्यमान हैं।

(६)—श्री कृष्ण जी की १६ सहस्र स्त्रियाँ जो आपने बताईं वह शाम वेद की ऋचायें हैं। वही भगवान की पत्नियां हैं।

नोट :—इस पर बीच ही में ठाकुर अमर सिंह जी बोल उठे।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

श्री पण्डित माधवाचार्य जी महाराज! आपको बद्दोमल्ली जिला स्यालकोट (वर्तमान पाकिस्तान) के शास्त्रार्थ की बात याद होगी आपने इसी प्रश्न के उत्तर में कहा था कि—श्री कृष्ण जी को इतनी सामर्थ्य थी कि वह इतनी स्त्रियां विवाह सकें और साथ ही यह भी कहा था कि नरकासुर के यहाँ १६ हजार कन्यायें कैद थीं। उनका उद्धार इसी प्रकार हो सकता था। उसको मार कर उन्हें छीन लाये थे और अपने यहाँ आश्रय दिया था अब सामवेद की ऋचाएं बताते हो।

शास्त्रार्थ महारथी श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

नोट :—पण्डित जी ने उपरोक्त बात का कोई उत्तर न देते हुए कहा कि—

इन्होंने जालन्धर शब्द का अर्थ ही जल को धारण करने वाला मेघ है। मेघान्तरवर्ती विद्युत ही वृन्दा हैं जो एक पतिव्रता की भांति तदनुगामिनी बतलाई गई है। वायु रूप विष्णु जब तक विद्युत रूप वृन्दा से संयुक्त नहीं हो पाता तब तक वर्षा नहीं होती। यही वृष्टी विज्ञान इस कथा का वाच्यार्थ है जो हमने पुराण दिग्दर्शन ग्रन्थ में विस्तार पूर्वक लिखा है।

नोट :—बीच में ही ठाकुर साहब ने खड़े होकर कहा।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज! वृन्दा की कथा पर जिला स्यालकोट के शास्त्रार्थ में आपने कहा था, कि जालन्धर दुराचारी था, वह परस्त्रियों से दुराचार करता था। उसको यही दण्ड देना उचित था। दूसरे यह कहा था कि वृन्दा के पतिव्रता रहने से वह मर नहीं सकता था। इस लिए भी उसका पतिवृत धर्म नष्ट करना आवश्यक था। (ठाकुर साहब की इस बात का कोई उत्तर न देते हुए कहा) -आकाशस्थ बृहस्पति नामक ग्रह की कक्षा में परिभ्रमण करने वाला एक उपग्रह ही तारा नाम से विख्यात है वह एक बार चन्द्रमा के आकर्षण से चन्द्र कक्षा में चला गया तो आकर्षण विकर्षण का तारतम्य विश्रखंलित हो जाने पर सभी ग्रह नक्षत्रों में हल-चल मच गई अन्त में प्रजापति - सूर्य के विशिष्ट आकर्षण से वह तारा चन्द्र कक्षा को छोड़ कर पुनः बृहस्पति कक्षा में पूर्व-वत् सम्बद्ध हो गया। परन्तु इस खींचातानी में चन्द्रमा और तारा का भाग बहुत सा टूट कर एक अन्य स्वतन्त्र ग्रह का प्रादुर्भाव हो गया जिसे आज भी **"बुद्ध"** ही कहते हैं। यह बुध ग्रह की वैज्ञानिक उत्पत्ति की खगोलिक कथा है। मैंने ठाकुर साहिब के सब प्रश्नों का उत्तर दे दिया। अच्छा

तो यह था कि ठाकुर जी सामान्य विषय पुराण पर विचार करते। पुराण वेदोक्त हैं। क्योंकि अथर्व वेद ११।७।२४ में—"**ऋचः सामानि छदांसि पुराण यजुषा सह।**" आदि में पुराण नाम आता है। आप पुराण नाम को छोड़ कर पुराणों की कथाओं को ले बैठे। "**आप ठकुराई करते हैं या शास्त्रार्थ ?,**'

नोट :—इस पर जनता में हलचल मच गई तथा चारों तरफ से "**शब्द वापिस लो**" की आवाज गूंजने लगी।

तब श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी जी ने खड़े होकर जनता को शान्त किया, और कहा कि मेरे प्रति कहे गये शब्दों से आप लोगबुरा न मानिये, मैं कुछ भी बुरा नहीं मानता हूं। यह तो चाहते ही यह हैं कि किसी प्रकार आप रुष्ट हो जायें और शास्त्रार्थ से इनका पीछा छूटे। आप इनके भड़काने से बिल्कुल न भड़किये और शान्ति पूर्वक शास्त्रार्थ को चलने दीजिये। तदोपरान्त—

शास्त्रार्थ महारथी श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री ने कहा कि महाशय जी ने "**पुराणों का आपरेशन होना चाहिये**" तथा "**विष्णु जी ने वृन्दा से व्यभिचार किया**" ये कठोर शब्द बोले हैं।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सामान्य पुराण शब्द पर हमारा कुछ भी विवाद नहीं है। इस पर प्रमाण देना और उस और शास्त्रार्थ को खींचने का प्रयत्न करना, प्रस्तुत विषय से भागना है। "गौ" शब्द के अर्थ गौ पशु के अतिरिक्त और भी हैं और "**मांस**" शब्द आयुर्वेद में अर्थात आयुर्वेद के ग्रन्थों में "**गूदे**" के लिए भी आता है मैंने आयुर्वेद विधि पूर्वक़ गुरुमुख से पढ़ा है और मैं वैद्य भी हूं अतः "**प्रस्थम् कुमारिका मांसम्**" का अर्थ मेरे जैसा तो "**लड़की का एक सेर मांस**" कहीं करेगा, परन्तु आप जैसा समझदार किसी वैद्य से सुन कर कि कुवारी "घी कुवार को कहते हैं" सर्वत्र कुवारी का अर्थ घीकुवार ही करेगा या थोड़े व्याकरण के अभिमान में आयुर्वेद में आई "कन्टकारी" औषधि का अर्थ, कांटे की शत्रु जूती करेगी तो अवश्य हास्यास्पद बनेगा, जैसा कि गौमांस का अर्थ आप घी, दूध, मक्खन, रबड़ी, घी और खोया करके विद्वानों में हास्यास्पद बन रहे हैं। क्या आप ऐसा किसी कोष या किसी प्रामाणिक ग्रन्थ का प्रमाण दे सकते हैं ? कि—गौ मांस या मांस का अर्थ खोया आदि होता हो ? कदापि न दे सकेंगे। "**मांस**" का अर्थ "**गूदा**" होता है जहां आम का मांस—केले, अमरूद, अंगूर या सेब का मांस लिखा हो, और जहाँ गाय-बकरी भेड़ हिरन-खरहा आदि का मांस लिखा हो वहां आम का गूदा या केले का गूदा अर्थ नहीं होगा। कुछ सोचिये वहाँ मांस तो क्या यदि गूदा भी लिखा होगा तो उसका अर्थ मांस ही होगा, जैसे हिरण का गूदा, खरहे का गूदा, बकरे का गूदा यहाँ गूदा का अर्थ भी मांस ही होगा। गौ मांस का अर्थ "**गाय का खोया**" है तो हिरण मांस का अर्थ "**हिरण का खोवा**" कच्छप मांस का अर्थ "**कच्छुवे का खोवा**" होगा ? जनता में हँसी……।" सुनिये गौ का अर्थ भूमि, वाणी, सूर्य किरण आदि होता है और मांस का अर्थ गूदा। इन सुनी सुनाई बातों से यहां काम नहीं चलेगा। और सैकड़ों प्रमाण भी आप दे दें तो भी कुछ नहीं बनेगा, प्रश्न तो यह है कि जो कथाएँ मैंने उपस्थित की है उनमें उन शब्दों का अर्थ यह घटता भी है कि नहीं ? मेरी कही किसी भी कथा में गौ मांस

अर्थ गूदा लगा कर बताइये, अभी परीक्षा हुई जाती है। पर आप कदापि न लगा सकेंगे। पुराणों को छोड़े बिना कदापि काम न चलेगा देखिये मैंने गौ मांस पर पुराणों की पाँच कथाएं उपस्थित की हैं। उनमें से चार में आप भी गौ माँस का अर्थ रक्त से बना मांस धातु ही करते हैं।

१—राजा सत्यव्रत ने गौ मांस खाया और विश्वामित्र की पत्नी और उसके पुत्र को खिलाया। यहां गोमांस का अर्थ आप खोवा नहीं करते। "**मांस रक्तोद्भव**" ही मानते हैं।

२—विश्वामित्र ऋषि के सात पुत्रों ने गर्ग ऋषि की कपिला गाय मारकर अपने पितरों की तृप्ति के लिए श्राद्ध करके ब्राह्मणों को मांस खिलाया तथा ब्राह्मणों ने खाया। यहाँ भी आप खोआ आदि अर्थ नहीं करते रक्तजमाँस ही मानते हैं।

३—चन्द्र के वंशज चैत्र ने गौ माँस ब्राह्मणों को खिलाया वहाँ भी आप खोआ अर्थ नहीं करते।

४—रुकमणी के विवाह में भी आप मानते हैं कि रुक्मिणी के भाई रुकमी का प्रस्ताव एक लाख गायें मारने का था। इस प्रस्ताव में भी आप खोआ अर्थ नहीं करते। गायें मारने का प्रस्ताव मानते हैं। "एक मक्खी भी नहीं मारी गई" यह आपने बिना प्रमाण ही बोल दिया। आप ही कहते हैं कि—शतानन्द पुरोहित का प्रस्ताव-कृष्ण वर और भोजन, मक्खन आदि का था और रुकमी का प्रस्ताव शिशुपाल वर और भोजन—गो माँस आदि का था। आप ही कहते हैं कि—बारात शिशुपाल की ही आई। रुक्मिणी ने गुप्त पत्र से श्री कृष्ण जी को बुलाया। स्पष्ट है कि—रुक्मी का प्रस्ताव पास हुआ। शतानन्द पुरोहित का नहीं, फिर भी आप कहते हैं कि—"जीव एक भी नहीं मारा गया" एक मक्खी भी नहीं मारी गई, मारने का अवसर ही नहीं आया। कैसा उपहास जनक आपका कथन है? यह किसकी समझ में आ जायेगा कि जिस बारात के लिए एक लाख गायें मारी जानी थी और लाखों पशु कटने थे वह बारात बुलाई हुई आ गई, और बुलाने वालों ने उनके भोजन का कुछ भी प्रबन्ध नहीं किया। यह आपके सिवा किसी की समझ में नहीं आयेगा। बारात वह आई जो रुकमी चाहता था तो भोजन भी वही बना होगा जो वह चाहता था। पाँच प्रकरणों में से केवल एक प्रकरण में आप "गौ माँस" का अर्थ खीर, खोआ आदि करते हैं अन्य चार में क्यों नहीं करते? वहाँ गौ के साथ अन्य हिरण, मेंढे खरहे, कछुवे आदि के भी नाम हैं। इसलिए वहां गौ मांस का अर्थ गूदा अर्थात् खोआ नहीं। गो का माँस ही रहा। हाँ! खिलाने वालों को पापी और दुराचारी कह दिया पर मनु के प्रसंग में अन्य पशुओं के नाम नहीं वहाँ केवल "गौ माँस" है। अतः वहाँ मनमाना अर्थ—"गाय का खोआ" कर लिया। बस हो गयी शास्त्रार्थ में विजय! श्रीमान जी वहाँ :—"**पंच लक्ष गवां मासैः सुपक्वैः घृत संस्कृतैः**"॥ ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड २ अध्याय ५४ श्लोक ४६, (वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई द्वारा प्रकाशित) ऐसा पाठ है। जिसका अर्थ है। "**घी से छौंके हुए पांच लाख गौओं के भली प्रकार रांधे पकाये हुए माँस से ब्राह्मणों को भोजन कराया**" पुराणों में गौवध और गौमाँस भक्षण इतना स्पष्ट है कि—उस पर किसी प्रकार की लीपापोती नहीं हो सकती, वेदों में जिस प्रकार यौगिक शैली से अर्थ किये जाते हैं। यदि इसी प्रकार पुराणों और इतिहासों में भी किये जायें तो सारा इतिहास ही नष्ट हो जाए। न राम ही रहे न दशरथ न युधिष्ठिरादि ही रहे, न कृष्ण, "**पुराणों के रहते गौवध और मांस भक्षण का कलंक नहीं छूट सकता**"। "**हठ योग प्रदीपिका**" का आपने प्रमाण

दिया। हमारे लिए वह कुछ भी मान्य नहीं **"जैसे उदई वैसे भान, उनके चोटी न उनके कान"** हमारे लिये जैसे पुराण अप्रामाणिक वैसे ही हठ योग प्रदीपिका। पर आपका भी इसमें क्या दोष है प्रमाण लायें कहाँ से? यह आपने कमाल की बात कही कि—आपकी बात से ईसाई-मुसलमान लाभ उठायेंगे। वाह! वाह!! मैं कहता हूं कि—गौवध और गौमाँस भक्षण भारत में मुसलमानों से पहले कभी भी नहीं होता था। मेरी बात से कैसे लाभ उठायेंगे? वह तो आपकी बात से लाभ उठायेंगे। क्योंकि आप कहते हैं कि—**"गौवध और गौमांस भक्षण सदा होता था"**। मैं फिर कहता हूं कि—मुसलमानों से पहले गौवध कभी नहीं होता था। आप मुसलमानों को चाहे कितना भी भड़कायें मैं इससे नही घबराता न उसमें मुसलमानों का कुछ अपमान ही है। श्री कृष्ण जी की सोलह सहस्त्र स्त्रियाँ सामवेद की ऋचायें हैं, यह आपने खूब कहा। किसी वेद पढ़ने वाले से ही पूछ लिया होता कि—सामवेद में सोलह सहस्त्र ऋचायें हैं भी कि नहीं? सामवेद में तो पूरी दो सहस्त्र ऋचायें भी नहीं हैं फिर सामवेद की ऋचाएं वेश्या कैसे बन गईं? पण्डित जी महाराज! "नकली कृष्ण कोई था कि नहीं? इस पर मुझको कुछ नहीं कहना है"। आगे सुनिये! स्त्रियाँ साम्ब (कृष्ण जी का पुत्र) पर मोहित हो गईं और वे शाप वश वेश्याएं बनीं, जिनके उद्धार का उपाय रविवार के दिन ब्राह्मण के साथ बिना फीस सम्भोग बताया यह कथा नकली कृष्ण के घर की है। यह आप तीन काल में भी सिद्ध नहीं कर सकते हैं कृष्ण जी स्वयं ही महाराजा युधिष्ठिर को अपने घर का हाल सुना रहे हैं। वहीं उन्होंने सोलह सहस्त्र पत्नियां बताई हैं तथा वहीं आगे उनके विषय में स्वयं कहा है कि—"वे सब साम्ब (कृष्ण जी का पुत्र) पर मोहित हुईं इस पर मैंने और नारद जी ने उनको वेश्या बनने का शाप दिया, वेश्या बनीं और रविवार को ब्राह्मणों के साथ बिना फीस **"सनातन धर्म"** (व्यभिचार) करने से उनका उद्धार बतलाया। यह कथा नकली कृष्ण की कदापि नहीं है मैंने यह कहा कि—**"विष्णु ने वृन्दा से व्यभिचार किया"** इस पर आप चिढ़ गये और कहा कि—यह कठोर शब्द हैं। सुनिये मेरे शब्द कठोर हैं या वृन्दा ने जो वचन कहे वो कठोर हैं? वृन्दा कहती है—**ओ! मायावी तपस्वी! परदार लम्पट, तुझको धिक्कार है।**

जालन्धर बादल है तथा वृन्दा बिजली है आदि आपका विज्ञान पुराणों में नहीं चलेगा वहाँ स्पष्ट है कि—वृन्दा ने शाप भी दिया आदि। बृहस्पति, तारा, चन्द्र, बुद्ध, ये ग्रह नक्षत्र है, ऐसा कहना भी आपका पुराणों के विरुद्ध है। देवी भागवत में स्पष्ट लिखा हैं कि—चन्द्र राजर्षि अत्रि का पुत्र था। बृहस्पति देवों का और चन्द्र का भी गुरु था। चन्द्र ने गुरुपत्नि से जो पुत्र उत्पन्न किया, उसका नाम बुद्ध है। उसका मनु को पुत्री इला के साथ विवाह हुआ और उससे चैत्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। यह चन्द्र आकाश का चन्द्र नही क्षत्रियों के चन्द्रवंश का आदि पुरुष अत्रि-पुत्र चन्द्र है। आप पुराणों को कभी पढ़ते नहीं हैं, यह मुसीबत तो हमारे गले ही पड़ी हुई है। श्रोताओं में हंसी?… …मैं निश्चय पूर्वक कहता हूं कि—यदि आप पुराणों को पढ़ लेंगे तो अवश्य ही आर्य समाजी हो जावेंगे। (तालियों की गड़गड़ाहट के साथ जबर्दस्त हंसी……?) तथा फिर उन्होंने एक सोने का रत्न जटित कंकण उसको दिखाया उसने उसे पसन्द किया तो सौदागर रूपी शिव ने कहा—**"मौल्यमस्य ददासि किम्"**? अर्थात् तू इसका मूल्य क्या देगी? वेश्या ने अपना काम बताया। शपथें उठाने के पश्चात तीन रात्री के लिए वेश्या से सौदागर की पत्नी बनने का निश्चय (सौदा) हो गया। और दोनों मिलकर नरम तकियों और गद्दों पर सो गये। कहिये! शिवजी महाराज पर वेश्या गमन का

कैसा घृणित लांछन है ? मैं निश्चय ही और भी कथा पुराणों में से सुनाता हूं, सुनिये और उत्तर दीजिये ! शिव पुराण में है कि—**"एक बार शिवजी सौदागर का रूप बनाकर महानन्दा वेश्या के घर गये"** । देखिये और पता नोट करिये, (शिव पुराण शतरुद्र संहिता अध्याय २६ श्लोक १३ से ३० तक पृष्ठ ८९५-८९६—श्याम काशी प्रेस मथुरा विक्रमी १९९७) यहाँ पर शिव और महानन्दा वैश्या की पूरी कथा विद्यमान है ।

शास्त्रार्थ महारथी श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री –

(सर्वप्रथम पण्डित जी ने एक-एक पुस्तक हाथ में लेकर—आयुर्वेद के प्रमाणों को दुहराया, जिसमें छाल को त्वचा गुठली को अस्थि, मीग को मज्जा, गुदे को मांस बताया । इसी में बड़ा समय लगाया और बड़ा बल इसी बात पर दिया कि "**गौमांस**" शब्द का अर्थ **"मांस"** नहीं करना चाहिये । और बलपूर्वक कहा कि-गौवध सदा होता था और गौ मांस भक्षण सदा किया जाता था । यह कहना असत्य है कि—मुसलमानों से पहले गौवध नहीं होता था । होता अवश्य था किन्तु पापी सौर दुराचारी ही करते थे । वह चाहे राजा था या राजपुत्र या ऋषि तथा ऋषि पुत्र, कोई भी हो, दुराचारी सभी में हो सकते हैं)—अब सुनिये मैं अपने मूल विषय पर आता हूं –पुलस्त्य और विश्वश्रवा की सन्तान रावण दुराचारी हो गया जो राक्षस कहलाया । इससे सनातन धर्म पर कुछ भी दोष नहीं आता । कंस, जरासंध, दुर्योधनादि बहुतेरे पापी हुए । धर्मात्मा राजा और ऋषि सदा से गौ रक्षा और गौ पूजनादि करते आए हैं । हमारे धर्म में गौ रक्षकों की महिमा है । गौ भक्षकों तथा गौ घातकों की निन्दा है । इतिहास का काम बुरों की बुराई और भलों की भलाई प्रकट करना दोनों है । वृन्दा ने शाप दिया और विष्णु शालिग्राम बने, वृन्दा तुलसी बनी, गण्डकी नदी का सुवर्ण घटित पाषाण और त्रिदोष नाशक दिव्य शक्ति सम्पन्न तुलसी क्षुप की पत्ती वर्तमान अनुसंधान करने वालों की दृष्टि में जल मिश्रित करके पान करने पर "**मकर ध्वज**" औषध से भी अधिक गुणकारी माने गये हैं । इसमें **"चरणामृत"** विज्ञान को प्रकट किया गया है । आप कहते हैं कि –महाराज युधिष्ठिर से श्रीकृष्ण की बातें हो रही थी उसमें उन्होंने अपने घर की बात बतलाई आप उसको असली मानते हैं तो माने, हम तो नकली ही मानगें, वह नकली कृष्ण युधिष्ठिर के पास गया होगा, वह तो श्रीकृष्ण जी के घर तक भी गया था, देश की अनेक जटिल समस्याओं में वेश्याओं की भी एक समस्या है । उसका यही समाधान हो सकता है कि वेश्यायें अपने नारकीय जीवन को समाप्त करके प्रायश्चितार्थं रविवार को व्रतोपवास द्वारा तपस्विनी बनकर शेष जीवन बितायें । कोई भी तपस्वी जितेन्द्रिय उदार पण्डित उनको पुत्री की भांति आश्रय प्रदान करे । शिवजी और महानन्दा की कथा का समाधान हमने "पुराणदिग्दर्शन" नाम की पुस्तक में किया है । महानन्दा व्यभिचारिणी नहीं थी । उसकी परीक्षा लेने शिवजी गये थे वह शिव की भक्ति करती थी शिवजी उसके घर में सोये थे तभी उसके घर में आग लग गई थी । (गौ मांस के सम्बन्ध में इतना नया कहा कि)—हठ योग प्रदीपिका में कहा है कि—**"गोमांसंभक्षयेन्नित्यम्"** परन्तु वहां **"गो शब्देनोदिताजिह्वा तत्प्रवेशस्तु तालुनि"** गौ शब्द का अर्थ जिह्वा है । यह गौ मांस नित्य खाना चाहिये । योगी लोग खेचरी आदि मुद्रा करते हैं । जीभ को तालु में चढ़ाते है इसलिए उनको नित्य गौ माँस भक्षण के लिए कहा हैं ।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

जब तक आप पुराणों की एक भी कथा में मांस का अर्थ फलों का गूदा या खोया घटा कर न दिखायेंगे, तब तक आयुर्वेद के इन प्रमाणों का यहां कुछ भी मूल्य नहीं है, मांस का अर्थ "खोया" है इसका कोई प्रमाण न दे सके ओर ना ही दे सकेंगे। पुराणों में सामान्य बोलचाल की संस्कृत है अगर उसका वेदों की भांति योगिक ही अर्थ करेंगे, तो वह अर्थ नहीं अनर्थ हो जावेगा ओर इतिहास नष्ट हो जायेगा। पुराणों का अर्थ पुराणों और इतिहासों की भांति ही किया जायेगा और किया जाता है। लीजिये मैं प्रसिद्ध सनातन धर्मी शास्त्रार्थ महारथी विद्या वारिधि पण्डित ज्वाला प्रसाद जी मिश्र मुरादाबादी की टीका सुनाता हूं, उन्होंने सर्वत्र "गौ मांस" का यही अर्थ "गौ का मांस" किया है खोया नहीं किया। श्रोताओं में हंसी........(श्री ठाकुर साहब जी ने पं० ज्वाला प्रसाद जी की टीका पुराण पर पढ़कर सुनाई। सुनकर पण्डित माधवाचार्य जी और कविरत्न अखिलानन्द जी सन्न रह गये। दोनों के मुख मण्डल मुरझा गये) सुनिये ! श्री रामस्वरूप जी ऋषि कुमार प्रसिद्ध पण्डित भीमसेन जी इटावा वाले सभी मांस का अर्थ मांस और पशु वध मानते हैं और आप दूर क्यों जाते हो ! अपने बराबर में बैठे पण्डित श्री अखिलानन्द जी से ही पूछिये, इन्होंने अपने ग्रन्थों में जो लिखा है वह बोलता हूं, वह सत्य है कि नहीं ? श्री पण्डित अखिलानन्द जी अपनी पुस्तकों में "मांस" का अर्थ "खोआ" नहीं करते "मांस" करते हैं ओर यज्ञ में पशु वध भी मानते हैं। इनकी पुस्तक "**वेदत्रयी समालोचन**" में स्पष्ट है तथा इनकी ही पुस्तक "**अथर्ववेदालोचन**" में ब्रह्मगवी सूक्त का अर्थ दिया है वहां गौ का अर्थ गाय ही किया है और लिखा है—"**हे राजन ब्राह्मण की गौ को मत खा**" अर्थापत्ति प्रमाण से सीधा अर्थ है कि अन्य वर्णों की गौ खाई जा सकती है और इन पुस्तकों के रचयिता सामने मंच पर आपके पास विद्यमान है आप इनसे पूछ सकते हैं। (यह सुनकर दोनों के चेहरे फ़क हो गये, इस पर सारी जनता ने पण्डित माधवाचार्य जी और पण्डित अखिलानन्द जी दोनों की विवशता स्पष्ट देखी) अर्थात् आप जो कहते हैं कि— गोवध करने वालों को पुराणों में पापी महापापी और दुष्ट दुराचारी बतलाया है, यह कहना आपका पुराणों के नितांत विरुद्ध है। देखिये —"**पंचलक्षगवां माँसैः सुपक्वैः घृतसंस्कृतैः**" ब्रह्मवैवर्त पुराण अध्याय प्रकृति खण्ड २ अध्याय ५४ श्लोक ४६७ में पांचलक्ष गायों के मांस को घी में छोंक और भली भांति पकवा कर ब्राह्मणों को खिलाने वाले स्वायम्भुव मनु की आपके "**ब्रह्मवैवर्त पुराण**" में उसी स्थल पर प्रशंसा लिखी है। यथा—"**धर्मिष्ठानां वरिष्ठश्चगरिष्ठो मनुषुप्रभुः ॥४५॥ स्वायम्भुवः शम्भुशिष्योविष्णु व्रत परायणः ॥ जीवन् मुक्तो महाज्ञानी भवतः प्रपितामहः ॥४६॥** ब्रह्मवैवंत पुराण प्रकृति खण्ड २ अध्याय ५४ श्लोक ४५, ४६,) धर्मात्माओं में श्रेष्ठ मनुष्यों में प्रमुख, शम्भु शिष्य, विष्णु व्रतपरायण जीवन मुक्त और महाज्ञानी बताया है। कहां महापापी कहा है ? चैत्र ने पांच करोड़ गौओं का मांस ब्राह्मणों को खिलाया, उनको कहां पापी कहा है ? न खाने वालों को कहीं पापी कहा गया है, न खिलाने वालों को। मनु के यज्ञ में तीन करोड़ ब्राह्मणों ने गौ मांस खाया, कहां उनको पापी लिखा है ? "**ब्राह्मणानां त्रिकोटीश्च**" ॥४८॥ (ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृति खण्ड अध्याय ५४ श्लोक ४८,) विश्वामित्र के सात पुत्रों ने गौ मार कर श्राद्ध किया अर्थात् ब्राह्मणों को उनके मांस का भोजन कराया, गौ मांस खाने को ब्राह्मण आये कि नहीं आये ? नहीं आये तो श्राद्ध कैसे हुआ ? वहां स्पष्ट लिखा है कि—विधिवत् श्राद्ध कैसे हुआ ? वहां स्पष्ट लिखा है कि—विधिवत् श्राद्ध किया उन गौ मांस खाने वाले ब्राह्मणों को राक्षस पापी कहां कहा है ? विश्वामित्र के पुत्र भी पुराणों के अनुसार पापी नहीं कहे जा सकते थे, क्योंकि उन्होंने पौराणिक धर्म के अनुकूल कार्य किया, जैसा कि कहा है—शास्त्र की

विधि से हिंसा होती है वह तो अहिंसा ही कही जाती है और भी सुनिये भविष्य पुराण में कहा है—**प्राणात्यये प्रोक्षितं च श्राद्धे च द्विजकाम्यया। पितॄन् देवाञ्चार्पयित्वा भुंजन् मांसं न दोषभाक् ॥२९॥** (भविष्य पुराण ब्रह्म पर्व अध्याय १८६ श्लोक २९ पृष्ठ १६५, वेंकटेश्वर प्रेस—बम्बई द्वारा प्रकाशित,) प्राण संकट में हो, यज्ञ में, श्राद्ध में और ब्राह्मणों की इच्छा से पितरों और देवों को अर्पण करके मांस खाने वाला दोष का भागी नहीं होता है। और सुनिये महाभारत के वन पर्व में कहा गया है—**अत्रापि विधिरुक्तश्च मुनिभिर्मांस-भक्षणे ॥१३॥ देवतानां च पितॄणां च भुङ्क्ते दत्वापि यः सदा। यथाविधि यथा च श्राद्धं न प्रदुष्यति भक्षणात् ॥१४॥** (महाभारत वन पर्व अध्याय २०७ श्लोक १३, १४,) यहां भी मुनियों द्वारा मांस भक्षण की विधि कही गई है। देवों और पितरों को देकर जो खाता है, और जो विधि से श्राद्ध आदि में खिला कर खाता है, वह मांस खाने से दूषित नहीं होता हैं।

महाभारत में राजा रन्तिदेव का वृतांत देखिये—महाभारत शान्ति पर्व में है कि रन्ति देव के घर जिस दिन अतिथि बसे उस दिन बीस लाख गौएं मारी गई, फिर भी कुन्डल पहिने हुए रसोइये चिल्लाते थे कि दाल बहुत है दाल खाओ, मांस पहले के बराबर नहीं है। देखिये—

सांकृते रन्तिदेवस्य यां रात्रिमवसन् गृहे। आलभ्यन्त शतं गावः सहस्राणि च विंशति ॥१२७॥
तत्रस्थ सूदाः क्रोशन्ति सुमृष्टमणि कुण्डलाः। सूपं भूयिष्ठमश्नीध्वं नाद्यमांसं यथापुरा ॥१२८॥
(महाभारत शान्ति पर्व अध्याय २९ श्लोक १२७, १२८,)

इसी अध्याय में है रन्ति देव के यहां इतने पशु मारे जाते थे कि उनके रुधिरादि के बहने से एक नदी बन गई जो चर्मण्वती नाम से विख्यात हुई। टीकाकार ने लिखा है कि **"चम्बल इति "प्रसिद्धा"** जो चम्बल नाम से प्रसिद्ध है। महाभारत के इसी पर्व में लिखा है कि—

महानदी चर्मराशेरुत्कलेदात्सुस्रुवे यतः। ततश्चर्मण्वतीत्येवं विख्याता सा महानदी ॥१२३॥
("महाभारत शान्ति पर्व अध्याय २९ श्लोक १२३,)

महाभारत के वन पर्व में ही उपरोक्त श्लोकों में इसी रन्ति देव के लिए कहा गया है कि दो हजार गौ उसके भोजनालय के लिए नित्य मारी जाती थी यथा—

राज्ञो महानसेपूर्वं रन्तिदेवस्य वै द्विज। द्वे सहस्रे तु वध्येते पशूनामन्वहं तदा ॥८॥
अहन्यहनि वध्येते द्वे सहस्रे गवां तदा। समांसं ददतोह्यन्नं रन्तिदेवस्य नित्यशः ॥९॥
अतुला कीर्तिरभवन्नृपस्य द्विज सत्तम। चातुर्मास्ये च पशवो वध्यन्तइति नित्यशः ॥१०॥
(महाभारत वन पर्व अध्याय २०७, कलकत्ता संस्करण श्लोक ८, ९, १०)

इतनी गौ हत्या जिस रन्ति देव के होती थी उसको महाभारत में क्या पापी दुराचारी राक्षस कहा है? कदापि नहीं बल्कि इसके विरुद्ध उसको यह कहा है कि "उसकी अतुल कीर्ति हुई" तथा उसको "महात्मा" और "यशस्वी" कहा है। देखिये—

रन्तिदेवं च सांकृत्यं मृतं शुश्रुम संजय। सम्यगाराध्य यः शक्राद्वरं लेभे महातपाः ॥१२०॥
उपातिष्ठन्त पशवः स्वयं तं संशितव्रतम्। ग्राम्यारण्या महात्मानं रन्तिदेवं यशस्विनम् ॥१२२॥

महानदी चर्मराशेरुत्क्लेदात् सुस्त्रुवेयत । ततश्चर्मण्वतीत्येवं, विख्याता सा महानदी ।।१२३।।
साकृते रन्ति देवस्य याँ रात्रिमवसन् गृहे । आलभ्यन्त शतं गावः, सहस्राणि च विंशतिः ।।१२७।।
तत्रस्थ सूदाः क्रोशन्ति सुमृष्टमणिकुण्डलाः । सूपं भूयिष्ठमश्नीध्वं नाद्य मासं यथा पुरा ।।१२८।।
(महाभारत शान्ति पर्व अध्याय २९ श्लोक १२०, १२२, १२३, १२७, १२८,)

यह आपका कथन सर्वथा मिथ्या है कि गौ हत्या करने वाले पापी और राक्षस थे या कहलाते थे ?

(क) नकली कृष्ण के घर का यह हाल है जो भविष्य पुराण में है, इसे आप तीन काल में भी सिद्ध नहीं कर सकेंगे। महाराजा युधिष्ठिर बड़ी श्रद्धा से श्री कृष्ण महाराज को पूछ रहे हैं—"**पण्य-स्त्रीणां समाचारंश्रोतुमिच्छामि तत्वतः**" में वेश्याओं के विषय में कुछ तत्व की बातें सुनना चाहता हूं। श्री कृष्ण जी उत्तर में अपनी १६००० (सोलह हजार) स्त्रियां बताते है आगे उन्ही के वेश्या बनने और उनके उद्धार का वर्णन करते हैं। कितना अन्धेर है कि आप आधी बात तो असली कृष्ण की मानते हैं और आधी नकली की। महाराजा युधिष्ठिर असली कृष्ण से बातें कर रहे हैं। आधी बात में वही असली रहते हैं और आधी में वही असली से नकली बन जाते हैं और युधिष्ठिर जी को इस असली-नकली का पता ही नहीं लगा। पता आज माधवाचार्य जी को लग रहा है कि वह नकली था। **"किमाश्चर्यः मतः परम् ।"**

"उपातिष्ठन्त पशवः स्वयंतं संशितव्रतम् । ग्राम्यारण्या महात्मानं रन्तिदेवंयशस्विनम् ।।१२२।।"

(ख) वृन्दा की कथा को वर्षा विज्ञान कहना सर्वथा पुराण विरुद्ध है। तुलसी के पत्तों का मकरध्वज आपके ही यहां माना जाता है। मैंने बार-बार निवेदन किया है, कि आप पुराणों को पढ़ लीजिये। आप सारे ही उत्तर-पुराणों के बिना पढ़े, अटकलपच्चू से देते हैं आगे पीछे के प्रसंग को भी नहीं देखते हैं। अपनी पुस्तक 'पुराण दिग्दर्शन' का विज्ञापन हर बार करते रहिये ऐसा ही समाधान उसमें किया होगा जैसा यहां कह रहें हैं शाप का नाम सुनते ही तुलसी और शालिग्राम तथा चरणा-मृत ले बैठे। समय टालना है, जैसे भी टले। शाप यह है महाराज जी जो वृन्दा ने दिया था—

अहं मोहं यथा नीता त्वया माया तपस्विना । तथा तव वधूं माया तपस्वी कोऽपि नेष्यति ।।५५।।
(पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १६ श्लोक ५५,)

अर्थात् जैसे तुझ मायावी तपस्वी ने मुझको छला है, ऐसे ही कोई कपट मुनि तेरी स्त्री को ले जायेगा। वृन्दा के इस शाप से विष्णु को रामावतार धारण करना पड़ा। और इसी शाप से सीता का रावण ने हरण किया। आप वर्षा विज्ञान लेकर बैठ गये तो अवतारवाद का गढ़ ढह जायेगा। निश्चय है कि इस पर आप कुछ भी कहने योग्य नही रहेंगे।

(ग) बृहस्पति की पत्नी चन्द्र द्वारा हरणादि भी अब आकाश में नहीं उड़ाया जा सकेगा।

(घ) महानन्दा व्यभिचारिणी नहीं थी, यह आपका कहना है परन्तु वह कहती है कि मैं व्यभि-चारिणी हूं "**मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त**" सुनिये—

वयं हि स्वैरचारिण्यो वेश्यास्तु न पतिव्रताः । अस्मत् कुलोचितो धर्मो व्यभिचारो न संशयः ।।२१।।
(शिव पुराण शतरुद्र संहिता अध्याय २६ श्लोक २१,)

अर्थात् हम व्यभिचारिणी वेश्या हैं, पतिव्रता नहीं, हमारे कुल का धर्म ही व्यभिचार है ! आपने कहा कि—वेश्या के घर में आग लग गई तो इससे शिव का लांछन कैसे दूर हो गया ? आग लग गई होगी ! व्यभिचार से पहले लगी कि पीछे ? यह तो आपने देखा होगा, पर शिव पुराण में यह स्पष्ट लिखा है कि व्यभिचार का सौदा कंकण के बदले हो गया था और व्यभिचार के लिये दोनों नर्म तकियों और गद्दों पर सोये । लाख लीपा-पोती करिये **"पुराण वेद विरुद्ध"** सिद्ध हुए रखे हैं ।

शास्त्रार्थ महारथी श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

पण्डित जी ने केवल कुछ पुरानी बातों को दोहराया और एक भी नई बात नहीं कही यही उनके अपने छपाये हुए शास्त्रार्थ से स्पष्ट है । नई बात केवल यही कही है –वेदों में जिन पुराणों का नाम आता है, वह पुराण कौन से हैं ? वह हमारे यही अठारह पुराण हैं इन्हीं को मान लीजिये ।)

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

वेद में पुराण "विद्या विशेष" का नाम है। वह ब्राह्मण ग्रन्थों में है तथा अन्य ग्रन्थों में भी हैं। उनमें से कुछ ग्रन्थ है, कुछ लुप्त हो गये, बहुत से इतिहास लुप्त ही हो गये । भागवतादि अठारह पुराण तो इनके अपने कथानुसार भी महाभारत के पीछे बने हैं इनका प्रमाण वेदों में ढूंढ़ना या दिखलाना आप जैसे बुद्धिमानों का ही काम है । पुराणविद्या जिन २ ग्रन्थों में हो, वे ग्रन्थ वेदों के ही अनुकूल होने चाहिये। जिन ग्रन्थों को आप पुराण मान रहे हैं वे सर्वथा वेद विरुद्ध सिद्ध हो रहे हैं। इनके कारण आपको भी नित्य शास्त्रार्थ का संकट सहना पड़ता है । पीछा छुड़ाना कठिन हो जाता है । इन भागवतादि को पुराण कहना ऐसा ही है । जैसे "अन्धे का नाम नैनसुख" । (वेश्याओं के उद्धार के लिये रविवार का व्रतादि जो माधवाचार्य जी ने बतलाया उस पर आचार्य अमर सिंह जी ने कहा कि)—मुझको बड़ा भारी आश्चर्य होता है कि आप पुराणों पर होने वाले प्रश्नों का ऐसा अद्भुत उत्तर देते हैं। वह श्रोताओं को प्यारा तो अवश्य लगता है पर उसमें सत्य का अंश नाम को भी नहीं होता है, मैं यह कहूं कि आप असत्य बोलते हैं तो मेरा हृदय ऐसा कहते हुए दुःख मानता है अतः मैं यही कहकर संतोष करता हूं कि—आपने पुराण पढ़े नहीं हैं। न गुरु मुख से न स्वयं इस लिए आपको किसी कथा के आगे पीछे के प्रसंग का कुछ पता नहीं है । न वहां वेश्याओं को नारकीय जीवन के त्याग का उपदेश है न किसी ब्राह्मण को यह उपदेश है कि वेश्याओं को पुत्री के समान समझे प्रत्युत्तर इसके विपरीत यह है कि—जिस प्रकार का नारकीय जीवन वेश्या बिताती हैं वैसा रविवार के दिन ब्राह्मण के लिए दिन रक्खे, और "उस ब्राह्मण को मैथुन के लिए कामदेव' ही जाने—

यथेष्टाहारभुक्तं च तमेव द्विज सत्तमम् । रत्यर्थ कामदेवोऽयमिति चित्तेऽवधार्य च ॥४४॥

यद्यदिच्छति विप्रेन्द्रस्तत्तत्कुर्याद्विलासिनी । सर्वभावेन चात्मानमर्पयेत्स्मितभाषिणी ॥४५॥

(भविष्य पुराण उत्तर पर्व ४। अध्याय १११ श्लोक ४४, ४५,)

आप बड़ा बल देते हैं कि—**'बिना फीस कहीं नहीं लिखा है'** सो भी यही सिद्ध करता है कि आपने पुराण देखे ही नहीं हैं, वहां फीस क्या यह लिखा है कि—ब्राह्मण को चावल घृतादि देवे और **"यथेष्टाहारभुक्तम्"** इच्छानुकूल भोजन किये हुए को कामदेव समान समझे अर्थात् यथेष्ट भोजन भी दे तथा दान भी दे । **"बिस्तर सहित पलंग भी दे"** भला यहाँ फीस का क्या काम –? श्रोताओं में हंसी··· मैं फिर कहता हूं कि—पुराणों को पढ़ते ही आप उनको तिलांजली दे देंगे और आर्य समाजी बन जावेंगे। श्रोताओं में चारों तरफ तालियों की गड़गड़ाहट में वातावरण गूंज गया··········बोलो वैदिक धर्म की जय, वैदिक धर्म की=जय, महर्षि दयानन्द की=जय, ठाकुर अमर सिंह शास्त्रार्थ महारथी की=जय, आर्य समाज=अमर रहे, वेद की ज्योति=जलती रहे ॥

दसवां शास्त्रार्थ--

स्थान : "राजधनवार" (बिहार) (प्राङ्गण-आर्य समाज)
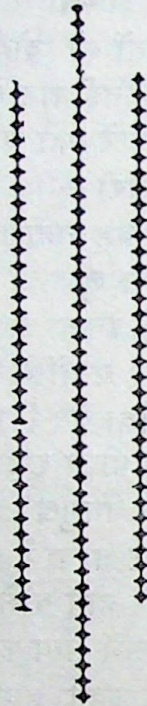
दिनाङ्क : ६ अप्रैल सन् १९५३ ई० (दिन सोमवार सायं-२ बजे)

विषय : क्या महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ वेद विरुद्ध हैं ?

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : श्री पण्डित अखिलानन्द जी "कविरत्न"

आर्य समाज की ओर से प्रधान : श्री पण्डित महादेवशरण जी, अधिष्ठाता गुरुकुल देवघर।

पौराणिक पक्ष की ओर से प्रधान : श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्रार्थ महारथी

शास्त्रार्थ में उपस्थित मुख्य विद्वान : १. श्री स्वामी अभेदानन्द जी सरस्वती
२. आचार्य श्री पण्डित रामानन्द जी शास्त्री
३. श्री पण्डित गंगाधर जी शास्त्री व्याकरणाचार्य
४. श्री पण्डित अयोध्या प्रसाद जी रिसर्च स्कोलर (कलकत्ते वाले)

नोट :—इस शास्त्रार्थ का आयोजन—श्री राजा महेश्वरी प्रसाद नारायण देव "राजधनवार" (बिहार) द्वारा आर्य समाज के प्रांगण में ही किया गया।

शास्त्रार्थ से पहले

प्रथम शास्त्रार्थ पौराणिकों के पिण्डाल (राजमहल) में हुआ था, पौराणिकों की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता पण्डित माधवाचार्य जी थे, और आर्य समाज की ओर से आचार्य ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी थे। इस शास्त्रार्थ में पौराणिकों ने अपने शास्त्रार्थ कर्त्ता को बदल दिया परन्तु आर्य समाज की ओर से वही रहे। यह इसलिए हुआ था कि यह सर्वविदित हो चुका था कि पौराणिक पण्डित हार गया तो उन्होंने यह चाल चली और माधवाचार्य को हटा कर उनकी जगह पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न से शास्त्रार्थ कराना उपयुक्त समझा परन्तु आर्य समाज की ओर ऐसा पण्डित था, जो ऐसे-२ दस-२ विद्वानों को पानी पिला दे। जिसके केवल नाम मात्र से ही विपक्षी शास्त्रार्थ करते हुए घबराते तथा थर्राते थे। **"क्या स्वामी दयानन्द कृत ग्रंथ वेद विरुद्ध हैं?" जिसके पूर्व पक्ष में पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न तथा उत्तर पक्ष में ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी थे।** पहले शास्त्रार्थ का यह प्रभाव पड़ा कि श्री राजा साहिब ने स्वयं पौराणिक पण्डितों को झाड़ा कि—आप लोग चार पण्डित हैं, (दो बिहार प्रान्त के थे) आर्य समाज का एक पण्डित है और वह धड़ाधड़ प्रमाण पर प्रमाण दिये जाता है, और आप चार मिलकर भी प्रमाण नहीं निकाल पाते हो अगर यही स्थिति थी तो शास्त्रार्थ क्यों स्वीकार किया था? **"क्यों हमारी मट्टी प्लीद करवाई?"** आर्य विद्वान की वाक शैली तथा प्रमाणों की झड़ी का सभी श्रोताओं पर प्रभाव पड़ा हुआ है। यह आप भी प्रत्यक्ष देख रहे होंगे। दूसरे दिन के शास्त्रार्थ में आर्य समाज की ओर से वही विजयी शास्त्रार्थ केशरी ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ कर्त्ता रहे। और अगले शास्त्रार्थ में पौराणिकों की क्या गत बनी? पढ़िये इसी निम्न शास्त्रार्थ में।

"सम्पादक"

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

सज्जनों! आर्य समाज वेदों का नाम लेता है। पर दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश को वेदों से अधिक मानता है। दयानन्द ने सर्वथा वेदों का असत्य अर्थ किया है प्रत्येक वेद मन्त्र के चार चरण होते हैं परन्तु दयानन्द ने प्रायः अपनी पुस्तकों में एक-एक चरण लिख दिया तीन-तीन चरण की चोरी की है। वेद की चोरी पाप है। मनु भगवान कहते हैं कि जिसने वाणी की चोरी की उसने सर्व प्रकार की चोरी की। देखिए ऋग्वेद का एक मन्त्र है—

अधाता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामयः कृण्वन्नजामि । उपबर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छास्वसुभगे पतिमत् ॥१०॥

(ऋग्वेद यम-यमी सूक्त मण्डल १० सूक्त १० मन्त्र १०,)

यम भाई था, यमी बहिन थी, दोनों जुड़वाँ पैदा हुए थे। यमी कहती थी कि—तुम मेरे पति बन जाओ और यम ने इस मन्त्र में कहा था कि—आगे चल कर ऐसे युग आवेंगे "जब बहिन और भाई अनुचित कर्म करेंगे" पर बहिन ! तू मेरे सिवा दूसरे पति की इच्छा कर दयानन्द ने इस मन्त्र के तीन चरणों को चुरा लिया और चौथा पद लिख दिया—सुनिये **"अन्यमिच्छस्व सुभगे पतिमत्"** अर्थ बदलकर बहिन...भाई के सम्वाद को पति पत्नी का सम्वाद बना डाला, दयानन्द के किये अर्थ में पति अपनी पत्नी से कहता है कि—"तू मेरे सिवा किसी दूसरे पति की इच्छा कर"। कैसा अनर्थ है ? यह अर्थ वेद विरुद्ध हैं तथा देवता विरुद्ध है एवं इतिहास विरुद्ध हैं और लोक विरुद्ध भी है।

सत्यार्थ प्रकाश में अनेकों ऐसे ही अनर्थ भरे पड़े हैं, (**उदीर्ष्व नारि**···) पति मर गया है। उसकी लाश पड़ी हुई है। उठाने वाले खड़े हैं, और दयानन्द कहते हैं कि "हे स्त्री ! तू इस मरे हुए पति की आशा छोड़कर इन जीवितों में से किसी को पकड़ ले, उसकी स्त्री बन जा। उससे सन्तान उत्पन्न कर ले। कैसे दुख की बात है ?

प्रसूता (जच्चा) अपने बच्चे को दूध न पिलाये, धायी दूध पिलाये तो प्रसूता स्त्री फिर शीघ्र युवती हो जायेगी भाइयो ! दयानन्द बाल ब्रह्मचारी को यह अनुभव कैसे हुआ ? ऐसा वेद का प्रमाण दीजिये नहीं तो यह वेद विरुद्ध है। धाई से दूध पिलवाना यह अंग्रेजों की प्रथा है। दयानन्द भी वेदों का नाम लेकर हिन्दुओं को ईसाई बनाना चाहते थे। (क) धनवान तो अपने बच्चे धायी को दे देंगे, धाई किसको देगी ? (ख) धायी का दूध दो बच्चों को कैसे उतरेगा (ग) दूध की कमी से बच्चे भूखे मर जावेंगे और धाई भी टी० बी० की मरीज बन जावेगी।

स्वामी जी का यह लेख सर्वथा वेद विरुद्ध हैं। सत्यार्थ प्रकाश चतुर्थ समुल्लास में लिखा है कि गर्भाधान के समय मुख के सामने मुख करे आदि।

हमारा प्रश्न है कि यह अश्लील वर्णन स्वामी जी ने किसी वेद मन्त्र के आधार पर लिखा है या कि अपने अनुभव के आधार पर ? कि "स्त्री सम्भोग के समय कितनी नीची रहे तथा कितनी-कितनी ऊपर" एवं········· आदि आदि !!

नोट—जनता में चारों ओर कोलाहल व क्षोभपूर्ण वातावरण के साथ, शर्म करो शर्म करो तथा मारो-मारो एवं पण्डित के मुंह में मिट्टी आदि की आवाजें आयी। इस पर ठाकुर साहब ने खड़े होकर बड़ी मुश्किल से शान्ति का वातावरण बनाया। यह प्रश्न बहुत गन्दे ढंग पर किया गया था, और बहुत घृणित चेष्टायें की तथा हावभाव बड़े ही गन्दी तरह के किये थे जो हम यहाँ उद्धृत नहीं कर सकते। फिर कहा—

सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि –स्तन के छिद्र पर ऐसी औषधि का लेप कर दे जिससे दूध स्रवित न हो तथा स्त्री योनि संकोचन करे। स्वामी दयानन्द ने यह सब अपने ही अनुभव से लिखा है, दयानन्द ने कोई बदमाशी की बात बाकी नहीं छोड़ी।

नोट—पूर्व की भाँति इस पर भी जनता में घोर कोलाहल और क्षोभ हुआ, चारों ओर से मारो, मारो की आवाजें सुनाई दी ! बड़ी कठिनाई से शान्ति का वातावरण फिर से बनाया जा सका !

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सज्जनों ! मैं तो आशा करता था कि पण्डित अखिलानन्द जी शास्त्रीय ढंग पर गम्भीर और आवश्यक प्रश्न उठायेंगे जिससे सिद्धान्तों पर विद्वत्तापूर्ण विचार चलेगा क्योंकि—पण्डित जी वयोवृद्ध विद्वान हैं। परन्तु आपने तो वही पुरानी सौ-सौ बार की रटी रटाई बातें कहीं, जिनके सैकड़ों बार युक्ति युक्त प्रमाण पूर्वक उत्तर दिये जा चुके हैं। प्रश्न पण्डित जी ने इस आपत्तिजनक ढंग पर किये हैं जो किसी भी विद्वान को कभी भी शोभा नहीं देता है। आर्य समाज को अपने वैदिक सिद्धान्तों पर आज भी गर्व हैं और सदा रहेगा पण्डित जी स्वयं "**दयानन्द दिग्विजय**" आदि पुस्तकें लिख कर आर्य समाज और ऋषि दयानन्द के गुण-गान कर चुके हैं। पण्डित जी कहते हैं कि—वेद मन्त्र के चार चरण होते हैं। यह आपके अज्ञान का नहीं घबराहट और रटी हुई बातों का नमूना है अन्यथा आपको भी पता है कि—गायत्री मन्त्र के तीन चरण और अन्यों के पाँच या छः भी होते हैं।

(१) मन्त्र का एक चरण लिखना यदि चोरी है और पाप है तो पण्डित अखिलानन्द जी ने अपनी पुस्तक अथर्ववेदालोचन के पृष्ठ ८ पर इस चोरी और पाप की भरमार कर रखी है। सुनिये और पण्डित जी महाराज आप नोट भी करिये (१)—**मर्त्योऽयममृतत्वमेति** (अथर्व वेद काण्ड १८, सूक्त ४, मन्त्र ३७,) (२)—**मृताः पितृषु संभवन्तुः** (अथर्व वेद काण्ड १८, सूक्त ४, मन्त्र ३६,) (३)—**यमराज्ञः पितृन् गच्छ** (अथर्व वेद काण्ड १८, सूक्त २, मन्त्र ४६,) (४)—**अपरे पितरश्च ये** (अथर्व वेद काण्ड १८, सूक्त ३, मन्त्र ७२,)(५)—**सांगाः स्वर्गे पितरो मादयध्वम्** (अथर्व वेद काण्ड १८, सूक्त ४, मन्त्र ६४,) इसमें नम्बर २—"**मृताः पितृषु सम्भवन्तुः**" में तो और भी कमाल आपने कर रक्खा है। "**अमृताः**" का अकार उड़ाकर "**अमृताः**" को "**मृताः**" ही बना रखा है। इसको चोरी कहें, डाका कहें, ब्रह्म हत्या-वेद हत्या क्या कहें जो भी कहें ? यह है महापाप। ऐसे अनेकों उदाहरण आपकी "**अथर्ववेदालोचन**" और "**वेदत्रयी समालोचन**" आदि पुस्तकों में हैं। इस लिए आप चोरी और पाप के भागी हुए पर बात यह है कि—न यह चोरी है, न पाप, आपको तो प्रश्नों की संख्या बढ़ाना है तो यह भी एक प्रश्न कर दिया, लेखक को मन्त्र या जितने मन्त्रांश की अपने लेख में आवश्यकता होती है उतने ही को वह लिखता है, और उतना ही उसको लिखना चाहिये। परन्तु आपको वास्तविकता से क्या प्रयोजन है ? प्रश्न करना था सो कर दिया।

(२) "**अन्यमिच्छस्व सुभगे पतिमत्**" यह यम-यमी सूक्त (१०।१०।१०) के मन्त्र का ही चतुर्थ भाग है। इसका जो अर्थ स्वामी जी ने किया है वही वेदानुकूल है वही शास्त्र और लोक के अनुकूल है वही देवतानुकूल है। वेद में तो इतिहास है नहीं बल्कि जो हमारा इतिहास है, उसके भी यही अर्थ अनुकूल है। बहिन-भाई का ऐसा सम्वाद सर्वथा अयुक्त है। क्या यह वेद शास्त्र, स्मृति, इतिहास और लोक के अनुकूल है कि बहिन भाई से कहे कि—तुम मेरे पति बन जाओ ? नहीं ! नहीं!! कदापि नहीं!!! बहिन अपने भाई से ऐसा कहती है तो ऐसा कहना अनर्थ ही नहीं घोर अनर्थ है। वैदिक धर्म में ऐसा युग न कभी आया न कभी आयेगा हां मुसलमानो में चचेरी, ममेरी, फुफेरी, बहिनों से

विवाह जरूर हो जाता है किन्तु सगी बहिन तो उनके यहाँ भी बचाई जाती है और आप वेद तथा अपने मन्तव्यानुसार वैदिक इतिहास में यह बताते हैं कि बहिन-भाई से कहे कि—तुम मेरे पति बन जाओ और भाई कहे कि—आगे ऐसे युग आयेंगे जब बहिन भाइयों की पत्नियाँ बना करेंगी, वेद में ऐसा भयंकर अनर्थ भरी भविष्य वाणी हो कि —**"ऐसा समय आयेगा जब ऐसा हुआ करेगा"** ऐसा वाक्य वेद का जानने और मानने वाला कभी नहीं कह सकता। आप लोगों के द्वारा वेदों पर ऐसे लांछन लगाये जाने के कारण ही असंख्य मनुष्य आजकल नास्तिक होते जा रहे हैं। कम्युनिस्ट और घोर नास्तिक भी ऐसी बातें नहीं कहते हैं और आप वेद में यह बताते हैं —**"किमाश्चर्यमतः परम्"** तथा **"अन्यमिच्छ-स्वसुभगे पतिमत्"** —इस मन्त्रांश में स्पष्ट है कि "हे सुभगे ! तू मेरे सिवा अन्य पति की इच्छा कर" इसमें "अन्य" अर्थात् दूसरा पति यह शब्द विचारणीय है। जब वह स्वयं पति नहीं है अर्थात् पहिला ही पति नहीं है तो दूसरा पति किस प्रकार कहा जा सकता है ? जो मनुष्य अपने आपको पति मानता है वही यह कह सकता है कि—मेरे सिवाय दूसरे पति की इच्छा कर जब पहिला ही पति नहीं हुआ तो दूसरा पति कैसा ? एक डाक्टर या वैद्य कह सकता है, मेरे सिवा दूसरा डाक्टर या वैद्य या एक वकील ही यह कह सकता है, मेरे सिवा दूसरा वकील ले लो। भाई कह सकता है मेरे सिवा दूसरा भाई और पति कह सकता है, कि "मेरे सिवा दूसरा पति"। यम की स्त्री यमी, नर की नारी, पति की पत्नी ब्राह्मण की ब्राह्मणी, पण्डित की पण्डितानी, क्षत्रिय की क्षत्राणी, ठाकुर की ठकुरानी की भाँति यम की पत्नी भी यमी ही ठीक हो सकती है। यम की बहिन यमी नहीं बल्कि स्वामी जी ने पति-पत्नी ठीक ही लिखा है।

वेद में पत्यन्तर विधान (दूसरे पति की आज्ञा) वाले अनेकों मन्त्र हैं। यथा—(क) **"या पूर्वं पतिं वित्वा अथान्यं विन्दते परम्..."** (अथर्व वेद) पहले पति के प्राप्त होने पर (**पूर्वं पतिं वित्वा**) **अन्यं पतिं विन्दते**,—दूसरे पति को प्राप्त होती है। इसमें पुनर्विवाह-विधवा विवाह स्पष्ट है। आपने स्वयं यह मन्त्र अपने ग्रन्थ **"अथर्ववेदालोचन"** में इसी अर्थ में दिया है और नीचे अपनी सम्मति लिखी है कि —अक्षत योनि विधवा के पुनर्लग्न से तो हम भी सहमत हैं। **"वैधव्यविध्वंसनचम्पू"** तो इस विषय पर आपकी प्रसिद्ध पुस्तक है ही स्मृति और इतिहास में भी देखिये, यथा—**पंचस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते ।।** (पाराशर स्मृति) अर्थात् पाँच आपत्तियों में स्त्री को दूसरे पति की आज्ञा है। यथा—**"अधाता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामयः कृण्वन्नजामि । उपबर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छा-वसुभने पतिमत् ।।१०।।** (ऋग्वेद) तथा महाभारत में देखिये —**"उत्तमाद् वरात्पंसः कांक्षन्ते पुत्रमापदि"** (महाभारत आदि पर्व अध्याय १२० श्लोक ३४,) अर्थात्—पति अभाव में स्त्री देवर को पति बना लेती है। **"पुनः संस्कारमर्हति:"** (मनुस्मृति) दूसरा विवाह करना योग्य है आदि असंख्य प्रमाण है। **"दूसरे पति की इच्छाकर"** ऐसा स्मृतियों ने कहा भी हैं तथा ऐसा ही इतिहास से भी सिद्ध है यथा—महाराजा पाण्डु अपनी पत्नी कुन्ती से कहते हैं—

"भर्ता भार्या राजपुत्रि ! धर्म्यं वाधर्म्यमेववा । यद्ब्रूयात्तथा कार्यमिति वेदविदोविदुः ।।२७।।
विशेषतः पुत्रगृद्धी हीनः प्रजननात्स्वयम् । यथाहमनवद्यांगि पुत्रदर्शनलालसः ।।२८।।
(महाभारत आदि पर्व अध्याय १२२ श्लोक २७, २८,)

वेद जानने वाले महात्मा कहते हैं कि—हे राजपुत्री ! अपना पति चाहे धर्म की बात कहे चाहे अधर्म की ! स्त्रियों को वैसा ही करना चाहिये। उसमें भी यदि विशेष कर पुत्र की इच्छा वाला होय

और अपने आप पुत्र उत्पन्न करने की शक्ति से हीन हो गया हो, तब तो उसका वचन अवश्य ही मानना चाहिए। हे सुन्दरागि ! मैं भी वैसा ही हूं ! और पुत्र का मुख देखने जी मुझे बड़ी लालसा है। जैसा कि महाभारत आदि पर्व में लिखा है—

"**मन्नियोगात् सकेशान्ते द्विजातेस्तपसाधिकात् । पुत्रान् गुण समायुक्तान्नुत्पादयितुमर्हसि ॥३०॥**
(महाभारत आदि पर्व अध्याय १२२ श्लोक ३०,)

हे सुन्दर केशों वाली, मेरी आज्ञा से अधिक तप वाले ब्राह्मण का संग करके तुझे गुणवान पुत्र उत्पन्न करने चाहिये इसी प्रसंग में पाण्डु ने यह भी कहा है कि यदि स्त्री पति की आज्ञा न माने और इस प्रकार दूसरे पुरुष से पुत्र उत्पन्न न करे तो गर्भ हत्या के समान पाप उस स्त्री को लगता है। साथ ही महाराजा ने यह भी बतलाया कि सौदास राजा की पत्नी मदयन्ती ने वसिष्ठ से सन्तान उत्पन्न की थी। कलमाषपाद की स्त्री ने भी अपने पति के प्रिय के लिए नियोग से सन्तान उत्पन्न की थी, और कुरुवंश की वृद्धि के लिए व्यास मुनि से हमारा भी जन्म इसी प्रकार हुआ है। अब लीजिये— "**उदीर्ष्व नारि**" मन्त्र को, कि —"मरे हुए की लाश पड़ी हुई है और लाश उठाने वाले खड़े हुए हैं"। ऐसा सत्यार्थ प्रकाश में कहीं भी नहीं लिखा है आपने यह असत्य कहा है। यदि कुछ साहस और लज्जा है तो सत्यार्थ प्रकाश में ऐसा लिखा दिखाइये।

हाँ ! पति मरा हुआ पड़ा है और उसी समय स्त्री को दूसरे पति की आज्ञा इसी मन्त्र के भाष्य में सायणाचार्य जी देते हैं सुनिये :—"हे **नारी ! त्वं इतासुँ गत प्राणं एतं पतिं उपशेषे उपेत्य शयनं करोषि । उदीर्ष्व अस्मात् पति समीपात् उत्तिष्ठ जीवलोकमभि जीवन्तम् प्राणि समूहमभिलक्ष्य एहि आगच्छ । त्वं हस्त ग्राभस्य शणिग्राह्यतः दिधिषोः पुर्नविवाहेच्छोः पत्युः ऐतत् जनित्वं जाया त्वं अभि सम्बभूव अभि मुख्येन् प्राप्नुहि ॥** (तैत्तीरियारण्यक सायण भाष्य)

अर्थात् —हे नारि ! तू इस गत प्राण (मरे हुए) पति को लिपट कर सो रही है तू इस पति के पास से उठ और जीवितों को देखकर पुर्नविवाह की इच्छा वाले पति की पत्नी बन जा। इस अर्थ में मरे हुए पति की लाश भी पड़ी है और जीवितों में से किसी को कर लेने की भी आज्ञा है। सत्यार्थ प्रकाश में न लाश पड़ी हुई लिखी है न उठाने वाले लिखे हैं। इतना स्पष्ट झूठ भी आप ही बोल सकते हैं।

"धायी का दूध पिलाना ईसाईपन है" यह आपके ज्ञान का नमूना है। आपको भी सर्वत्र ईसाई-पन ही दिखाई देता है या इस्लाम्। वैदिक धर्म तो सूझता नहीं, सूझे भी कैसे? न इसके ग्रन्थों को आप पढ़ते हैं, न विचारते हैं। स्वामी जी ने न तो कहीं यह लिखा कि—माता यदि बच्चे को दूध पिलायगी तो उसको ब्रह्महत्या का पाप लगेगा और घोर नरक में जावेगी। न कहीं यह लिखा है कि—धायी दूध न पिलायेगी तो उसकी मुक्ति न होगी तथा उसकी दुर्बलता शीघ्र दूर हो जायेगी। घोड़ा आदि पशुओं का पालन करने वाले भी इस सामान्य नियम को जानते है और घोड़ी के बच्चे को गाय या बकरी का दूध पिलाते हैं इसमें वेद के प्रमाण की क्या बात ! स्वयं कहते हैं कि—दो बच्चों को दूध पिलायेगी तो टी० बी० हो जायेगी अर्थात् आपने यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया कि दूध पिलाने से स्त्री को दुर्बलता अवश्य आयेगी। दो को पिलाने से अधिक दुर्बलता आयेगी, एक को पिलाने से उसकी आधी आयेगी पर

आवेगी अवश्य ! यदि सर्वथा न पिलायेगी तो दुर्बलता दूर होकर प्रसूता फिर शीघ्र स्वस्थ हो जायेगी, इसमें संदेह ही क्या हैं ? आपके प्रश्न कैसे भोलेपन के हैं कि धनवान तो अपना बच्चा धायी को दे देंगे पर धायी किस को देगी ? यह प्रश्न भी किसी ने किया है कि धनवान तो अपना काम निर्धनों से करावेंगे फिर निर्धन अपने काम किससे करावेंगे ? धायी अपना बच्चा आपको दे देगी, आप उसको अपना दूध पिलाया करना जैसे इन्द्र ने मान्धाता को पिलाया आपके पुराणों में लिखा है, कि महाराजा मान्धाता के पिता को ही गर्भ रह गया था, इसलिए मान्धाता अपनी माता के गर्भ से नहीं पिता के पेट से जन्मे थे, फिर इन्द्र ने उनको अपनी अगुंली में से अपना दूध पिलाया था। यह विष्णु पुराण की कथा है।

पण्डित जी का एक प्रश्न यह भी है कि—धायी को इतना दूध कहां से उतरेगा ? कि दो बच्चों को पिला सके ? महाराज जी ! उतरेगा तो वहीं से जहां से उतरा करता है पर कैसे उतरेगा ? यह तो आप किसी भी वैद्य या समझदार आदमी से पूछ लेते तो वह आपको बता देता कि दूध बढ़ाया भी जा सकता है, या नहीं ? आयुर्वेद के ग्रन्थों में जहां यह लिखा है कि धायी दूध पिलाये वहीं यह भी लिखा है कि पुत्र वाला धनवान् धायी को कैसा भोजन कराये। जब एक निर्धन स्त्री सारा दिन मजदूरी आदि करके रूखी-सूखी रोटी खाकर अपने बच्चे का पेट अपने दूध से भरती है तब यदि धनवान व्यक्ति उसको उत्तम स्वास्थ्यप्रद और अधिक दूध उतरने के लिए उत्तमोत्तम भोजन अपने पुत्र के हित से देगा तो दूध निस्सन्देह इतना उतरेगा कि दोनों बच्चे पेट भर कर पिया करें। और अधिक आवश्यकता हो तो आप जैसे बूढ़े को भी पिलाया जा सके। जनता में हंसी.............. धनवान के बच्चे को दूध पिलाने के कारण निर्धन स्त्री को उत्तम से उत्तम भोजन मिलेगा तो उससे उसका शरीर भी पुष्ट होगा और दूध भी उत्तम गुणों से युक्त उतरेगा उसी में से उसके अपने बच्चे को भी प्राप्त होगा अतः उसको भी वैसा ही लाभ पहुंचेगा, इसके अतिरिक्त जो वेतन मिलेगा, उससे धायी के निर्धन परिवार का पालन होगा। निर्धनों और बेकारों के लिए एक अच्छा काम मिल जावेगा, निर्धनों का पालन होगा। स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में भी लिखा है **"धायी दूध पिलाया करे परन्तु धायी को उत्तम पदार्थों का खान-पान बच्चे के माता पिता कराया करें।"** आपका कर्त्तव्य है कि आप जिस भी बात को वेद विरुद्ध सिद्ध करना चाहें उसके विरुद्ध वेद का प्रमाण दें। फिर कहें अमुक विषय वेद के अमुक मन्त्र के विरुद्ध है। आपकी प्रतिज्ञा है कि स्वामी जी कृत ग्रन्थ वेद विरुद्ध हैं। वेद विरुद्ध का लक्षण क्या है ? जिसका पोषक प्रमाण वेद में न दिखाया जा सके क्या वह वेद विरुद्ध होता है ? कदापि नहीं बल्कि वेद विरुद्ध वह होता है जिसके विरुद्ध वेद का प्रमाण दिखाया जा सके। जिस विषय के विरुद्ध वेद का प्रमाण न मिले, यदि उसके पक्ष में भी न मिले तो भी वह वेद अनुकूल ही है। यह ही वेद विरुद्ध और वेदानुकूल का लक्षण आपने अपनी **"वेदत्रयी समालोचन"** पुस्तक में किया है तथा जैमिनी ऋषि के मीमांसा दर्शन का सूत्र देखिये जिस पर यही बात वेदानुमत है—

"विरोधे त्वनपेक्ष्यं स्यादसतिह्यनुमानम्" ॥ (वेदत्रयीसमालोचन पृष्ठ ७२ पंक्ति १५ व १६)

उपरोक्त वाक्य देकर आपने स्वयं लिखा है। विरोध में प्रमाण बिना दिखाये किसी बात को वेद विरुद्ध कहते लज्जा आनी चाहिए। हमारा काम झूठे को घर तक पहुंचाना है, इसलिए लीजिये प्रमाण भी देते हैं—**"नक्तोषासा समनसा विरूपे धापयेते शिशुमेकं समीची।"** (यजुर्वेद अध्याय १२ मन्त्र २,) उषा और रात्री के उदाहरण से मन्त्र में कैसा सुन्दर कहा है कि—एक मन से दो रूपों वाली दो स्त्रीयां एक बालक को दूध पिलाती है। **"धापयेते"** द्विवचन दो स्त्रीयों के दूध पिलाने का स्पष्ट विधान

है। और "**शिशुमेकं**" एक बालक को यह स्पष्ट है। दो स्त्रीयां माता और धायी ही है और कोई नहीं। चरक में "**धात्री परीक्षामुप वक्ष्यामः**" धायी की परीक्षा का वर्णन करते हैं। "**धात्री मानयेती**" धायी को लाओ आदि इसी प्रकार "**सुश्रुत**" में भी है। दोनों ग्रन्थों में जहां धायी का विधान और परीक्षा हैं कि धायी कैसी हो ? और कैसे गुण कर्म स्वभाव वाली होनी चाहिए ? वहीं आगे यह लिखा है कि धायी को क्या खिलाया जावे ? जो लोग धायी न रख सकें उनके लिए स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में वहीं लिखा है कि—"**जो कोई दरिद्र हो धायी को न रख सकें तो वे गाय या बकरी के दूध में उत्तम औषध डालकर पिलायें।** **(सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास-२)**

वेद शास्त्र तो आप पढ़ते ही नहीं यदि पुराणों को भी पढ़ लिया करें तो भी ऋषि दयानन्द जी के लेखों पर संदेह या शंका करने का साहस न हो, देखो गरुड़ पुराण में लिखा है—

"विदारी कन्द स्वरसं मूलं कार्पासजं तथा। धात्री स्तन्य विशुध्यर्थं मुद्र युष्वरसाशिनी ॥१३॥
स्तन्याभावे पयश्छाग गव्यंवा तद्गुणं पिबेत ॥१५॥
(गरुड पुराण पूर्व खण्ड, आचार काण्ड अध्याय १७२ श्लोक १३, १५,)

अर्थात् धायी का दूध शुद्ध (रोग रहित करने के लिए विदारी कन्द का स्वरस और कपास की जड़) आदि १५, औषधियां हैं और कहा है कि- धायी के स्तन का दूध निर्धनता आदि के कारण न प्राप्त किया जा सके तो गाय वा बकरी का दूध (बालक) पिये। देखिये आपके पुराण ऋषि दयानन्द जी के लिखे एक-एक अक्षर की साक्षी दे रहे हैं। बालमीकीय रामायण में श्री राम जी की धायी का वर्णन है। एक दो ही नहीं बल्कि सैकड़ों प्रमाण हैं।

गर्भाधान की विधि पर आपने बहुत गन्दे ढंग से प्रश्न किया है। ऐसा न किसी विद्वान के लिए उचित है न किसी सभ्य और शिष्ठ पुरुष को ! इससे न कुछ सत्यार्थ प्रकाश का गौरव घटता है न ऋषि दयानन्द जी का बल्कि आपका अपना ओछापन ही प्रकट होता है। कैसे आश्चर्य की बात है कि— गर्भाधान के समय मुख के सामने मुख करने पर भी आपको शंका है यदि मुख के सामने मुख करना आपको पसन्द नहीं तो क्या पीठ की ओर मुख करके आप गर्भाधान करना व कराना पसन्द करते हैं ? (जनता में हंसी) मैं तो समझता हूं सत्यार्थ प्रकाश में लिखी विधि को ही संसार भर के मनुष्य पसन्द करेंगे और इसी प्रकार मनुष्य मात्र गर्भाधान करता है पशु अवश्य इसके विपरीत अर्थात् पीठ की ओर मुख करके करते हैं। आपको वह पसंद है तो आप वही करिये, और उसी का प्रचार करिये। आपका ऐसा ही अनुभव होगा पर मनुष्य तो सब सत्यार्थ प्रकाश की ही विधि को स्वीकार करते हैं। (जनता में तालियों की गडगडाहट के साथ हंसी में वातावरण गूंज गया ·· ······) आप ऋषि दयानन्द जी के अनुभव का नाम ले-लेकर उनका अपमान करना चाहते हैं। सिद्धांत पर शंका नहीं बनती है तो ऋषि के व्यक्तित्व की ओर दुलत्ती झाड़ते हैं पर ध्यान रहे सूर्य की ओर थूका हुआ आपके मुंह पर ही गिरेगा। क्या सब कुछ अनुभव करके ही लिखा जाता है ? विष (जहर) में मनुष्य को मारने की शक्ति है अमुक-अमुक विष खाने से मनुष्य मर जाता है क्या ऋषियों ने आयुर्वेद के ग्रन्थों में सब विष खा-खाकर और मर-मर कर ही लिखा है ? या मनुष्यों को विष खिला-खिला कर और मार-मार कर अनुभव करके

लिखा है ? क्या दण्ड विधान लिखने वाले अपराध कर-कर के और दण्ड भोग-भोग कर दण्ड विधान लिखते हैं ? क्या ऋषि वात्स्यायन ने कामसूत्र व्यभिचार कर-कर के लिखा है ? वाह री बुद्धि ! महाराज जी ऋषिगण निर्लेप रहते हुए योगाभ्यास-स्वाध्याय, विचार और लोकाचार देख-देख कर सर्व वर्णों और सर्व आश्रमों को उन-उन के कर्त्तव्य कर्मों का उन-उन को उपदेश देते हैं। इनमें निज अनुभव का क्या प्रश्न है ? प्रमाण मांगते हो तो लीजिये—

(अ) **मुखं सदस्य शिर इत**.......... (यजुर्वेद अध्याय १९ मन्त्र ८८) (आ) **तानः पूषा शिवतमामैरयसा न उरु उशती विहर। यस्यामुशन्तः प्रहराम शेफं यस्यामुकामा बहवो निविष्ठयैः॥** (ऋग्वेद १०।८५।४) (इ) **विष्णुर्योनिं कल्पयतु**... । (ऋग्वेद १०।१८४) (ई) **रेतो मूत्रं विजहाति योनिं प्रविशदीन्द्रियम्।**

क्या इन वेद मन्त्रों में गर्भाधान की विधि नहीं हैं ? यदि है तो क्या परमेश्वर ने गर्भाधान कर-कर के अनुभव के बाद बताई है ? उपनिषद मे कहा है कि—**अथ यामिच्छेद्दधीलेति तस्यामर्थम् निष्ठाय, मुखेन मुखं संधायापान्याभि प्राण्यादिन्द्रियेणं। तेरेतसा आदधामीति गर्भिण्येव भवति॥** (बृहदारण्यक उपनिषद १४।६।४।१०) अर्थात्—पुरुष यदि चाहे कि स्त्री को गर्भ रहे, तो उस स्त्री में अपनी प्रजननेन्द्रिय को रखकर मुख से मुख को मिलाकर मैथुन करे तो उसको अवश्य गर्भ रहेगा।

नोट—इसके साथ का वाक्य आपने वेदत्रयीसमालोचन के पृष्ठ १२५ पर लिखा है उसमें भी **"मुखेन मुखं संधाय"** यह पाठ है। आप इस पर शंका किस मुंह से करते हो ? अब कहिए उपनिषद में यह गर्भाधान की विधि है कि नहीं ? और ठीक वही है कि नहीं ? जो सत्यार्थ प्रकाश में स्वामी जी ने लिखी है उपनिषदों का प्रवचन ब्रह्मवेत्ता ऋषियों ने किया है कि नहीं ? उन ऋषियों को ब्रह्मज्ञान और योगाभ्यास की विधियों के साथ-साथ गर्भाधान की विधि बताने की आवश्यकता हुई कि नहीं ? और अन्य ग्रन्थ में नहीं बल्कि उसी उपनिषद में बताई कि नहीं ? पण्डित जी ! गर्भाधान परम पवित्र और परमावश्यक कर्म (यज्ञ) है उसकी विधि वेद शास्त्र और पवित्रात्मा ऋषि नहीं बतायेंगे, तो क्या विषयासक्त लम्पट पापी और दुराचारी बतायेंगे ? मैं आपके प्रश्न को सुनकर बड़ा आश्चर्य करता हूं कि आप जैसे सज्जन भी होते हैं जिन्होंने स्वयं भी वही लिखा है जिस पर प्रश्न कर रहे है वेदत्रयीसमालोचन में आपने ही लिखा है। **"मुखेन मुखं, संधाय अभिप्राण्य अपान्यात्"** (शतपथ ब्राह्मण १४।६।४।१०) अर्थात् शतपथ के पते से लिखा है। क्या यह मैथुन की विधि नहीं है कुछ और है ? लिखकर भूल भी गये कि गर्भाधान के समय मुख के सामने मुख करना है या पीठ के पीछे ? पुस्तक लिखने के बाद विपरीत रति या उल्टे गर्भाधान की रीति का अनुभव आपको हुआ होगा पर आपने यह अनुभव लिखा नहीं। आपके पुराणों में किसी की नाक में गर्भाधान किसी का मुख में किसी का कहीं और किसी का कहीं करना लिखा है और आप जैसे उस विधि को लिखकर भी भूल जाने वाले कहीं इधर-उधर और उल्टा-पुल्टा न करने लग जावे और जगन्नाथपुरी के मन्दिर पर मैथुन करने के आसनों के जो चित्र बने हुए हैं उनसे बचाने के लिए सर्व हितैषी ऋषिमहर्षियों की ठीक विधि लिखी देखकर दुःखी होना आपका स्वाभाविक ही हैं।

"स्त्री योनि संकोचन करे" इस पर आपने **"बदमाशी"** का असभ्यता युक्त शब्द प्रयोग किया। आप चाहते हैं कि आपके अपशब्दों को सुनकर आर्यजन क्रोध में आ जायें, तो झगड़ा हो जाये और शास्त्रार्थ बन्द हो जाये, और आपकी पोल खुलने से रह जाये पर हमको शास्त्रार्थ करना और

आपकी पोल खोलनी अवश्य है इसलिए आपकी इस (हंसी) "**बदमाशी**" शब्द को भी हम सहन करते हैं। आपको तो लज्जा आई नहीं। योनि संकोचन की चिन्ता ऋषि दयानन्द को नहीं बल्कि आपके दादा गुरु, '"पुराण कर्त्ता" को हुई थी, जिसने महर्षि वेद व्यास का पवित्र नाम उन पुराणों पर लिखकर उनके प्रति उज्जवल यश और गुण-गौरव को कलंक लगाने का कलुषित प्रयत्न किया देखिये गरुड़ **पुराण** में क्या लिखा है? "**शंख-पुष्पी**…" आदि की गोली बनाकर स्त्री की योनि के भीतर रख दे तो जिसको दश बार भी बच्चे हो चुके हों वह भी फिर से कन्या हो जाती है (बीच में ही सभा में शोरोगुल) चारों तरफ कोलाहल (पण्डित अखिलानन्द जी ने कहा--यह झूठ है ऐसा कहीं नहीं लिखा है।) भाइयो! सुनो झूठे को घर तक पहुंचाने के लिए गरुड पुराण के यह प्रमाण भी सुनो जिनमें इस अभूतपूर्व नुस्खे का पूर्ण वर्णन है, देखिये—

शंख पुष्पी जटामासी सोमराज्ञी च फलगुकम्। माहिष नवनीतं च त्वेकी कृत्य भिषग्वरः ॥६॥ गुटिकां शोधितां कृत्वा नारी योन्यां प्रवेशयेत्। दशवार प्रसूतापि पुनः कन्या भविष्यति ॥७॥ समुलानि स पत्राणि क्षीरेणाज्येनपेषयेत ॥८॥ (गरुड पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय १७९ श्लोक ६, ७, ८,) कहिये इनमें योनि को संकुचित करने की कैसी अद्भुत और अनुपम औषधि आपके गुरु "**पुराण कर्त्ता**" ने ढूंढ़ निकाली। और भी सुनियेः—"**कर्पूर मदनफल मधुकैः पूरितः शिवः। योनिः शुभास्यात् वृद्धायाः युवत्याः किं पुनर्हर ॥१६॥** (गरुड पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय २०२ श्लोक १६,) अर्थात—कपूर और मदनफल शहद के साथ योनि में भर दो तो बूढ़ी स्त्री की भी योनि अच्छी हो जाय फिर युवती की तो बात ही क्या है? हे शिव। इससे तो आप जैसे बूढ़े भी अपना-अपना सुधार कर लेंगे। कहिये! कुछ लज्जा आती हैं कि—नहीं? जनता में अपार हंसी--कांच के घर में बैठ कर फौलादी किले पर गोली चलाना अत्यन्त मंहगा सौदा है। आपके सारे प्रश्नों के उत्तर मैंने युक्ति व प्रमाण पूर्वक दे दिये। आगे जो भो प्रश्न आप करेंगे उनके भी उत्तर इसी प्रकार दिये जायेंगे। और उत्तर देते समय में इस नीति का भी ध्यान रखूंगा कि—"**यस्मिन् यथा वर्तते यो मनुष्यस्तस्मिन् तथा वर्तितव्यं सधर्मः ॥७॥** (विदुर नीति अध्याय ५ श्लोक ७,) पण्डित माधवाचार्य जी के साथ जैसी सभ्यता और शिष्टता से शास्त्रार्थ हो गया, वैसा आपने अपने स्वभाव से न होने दिया। अब जैसी कहिये वैसो सुनते चलिये।

नोट—पण्डित अखिलानन्द जी ने नया प्रश्न एक भी न करके अपने सारे प्रश्नों को फिर से दौहरा दिया और पुनः प्रश्नों को इस प्रकार दोहराया जैसे उत्तर इन्होने सर्वथा सुने ही नहीं हों बल्कि अपने प्रश्नों को याद करने में ही लगे रहे हों। विशेष यह कहा—

(१) मैं आर्य समाज में रहकर मैथुन की विधियों का ही अनुभव करता रहा।

(२) मैंने बार-बार गर्भाधान किया मेरे १२ सन्तान हैं। जनता में हंसी… · ……

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

(१) आर्य समाज जैसी पवित्र संस्था में रहकर भी आपने कोई भली बात न सीखी और बुराइयां ही सीखते रहे। यह आपका दुर्भाग्य ही रहा। "**रुधिर पिये पय ना पिये लगी पयोधर जोक**" भले **गुण** सीखते और बुराईयां न करते तो समाज से क्यो निकाले जाते? श्रोताओं में हंसी…………

(२) "**बारह सन्तान है**" आपके सभी काम वेद विरुद्ध हैं। वेद में आज्ञा हैं अधिक से अधिक दश सन्तान की "**दशास्यां पुत्रानांधेहि**" आपके बारह हैं। आपको काम ही क्या है ? वेद पढ़ने न शास्त्रों का स्वाध्याय करना न योगाभ्यास, बस ! रात और दिन पैदा किये गये सन्तान पर सन्तान। श्रोताओं में फिर हंसी··· ध्यान रहे वेद में कहा गया है। "**बहुप्रजा निऋतिमाविवेश**" बहुत सन्तान वाला दरिद्रता को प्राप्त होता है। उसे धन कमाने के लिए अनेक रूप बनाने पड़ते हैं लाखों झूठ बोलने और असंख्य पाप करने पड़ते हैं। "**बुभुक्षितः किम् न करोति पापम्**" ? (अर्थात् भूखा क्या पाप नहीं कर लेता !)

नोटः—शेष सभी प्रश्नोत्तरों को प्रथम-प्रथम बारी में न लिखकर एक-एक प्रश्न और उसका उत्तर साथ-साथ लिख दिया है जिससे पढ़ने वालों को समझने में सुविधा हो सके। (बीच में ही पण्डित अखिलानन्द जी ने कहा कि—मेरा काम आर्य समाज की छीछालेदर करना है) तब ठाकुर साहब बोले—पर आर्य समाज की छिछालेदर न होकर छीछालेदर उलटी हो रही है आपकी ! क्योंकि जो सूर्य पर थूकने का यत्न करता है, उसके अपने ही मुंह पर पड़ता है। नर की स्त्री नारी की भांति यम की पत्नी यमी बनाओगे तो पुत्र की स्त्री "पुत्री" बन जायेगी।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

भला नर नारी के सदृश यम की पत्नी यमी अर्थ करने में पुत्र-पुत्री शब्द किस प्रकार बाधक है ? क्या आपकी सामर्थ्य है ? जो आप यह सिद्ध कर सकें ? नर और नारी अपने-अपने एक दूसरे के सम्बन्ध से नर-नारी कहलाते हैं। नर के सम्बन्ध से नारी और नारी के सम्बन्ध से नर परन्तु पुत्र और पुत्री दोनों अपने एक दूसरे के सम्बन्ध से पुत्र-पुत्री नहीं हैं प्रत्युत दोनों ही माता-पिता के सम्बन्ध से पुत्र-पुत्री हैं जैसे नर की पत्नी नारी होनी है और नारी का पति नर होता है ऐसे पुत्र की पत्नी पुत्री नहीं है। और पुत्री का पति पुत्र नहीं है। यह ठीक है पर थोड़ा नशे से ऊपर उठकर यह भी सोचिये कि पुत्री, पुत्र की पुत्री होने से नहीं बल्कि माता-पिता की पुत्री होने से पुत्री कहलाती है। इसी प्रकार पुत्र, पुत्री का पुत्र नहीं है, मात पिता का पुत्र है। आपने सर्वथा विषम दृष्टान्त दिया है जो थोड़ा सा भी यहां नहीं घटता है। अव्याप्ति दोष से दूषित और हेतू न बन कर हेत्वाभास बन रहा है। आपने न्याय पढ़ा होता तो मैं आपको बताता कि आप किस प्रकार निग्रह स्थान में आ पड़े हैं ? पुत्र जैसे किसी और का पुत्र है पुत्री का नहीं और पुत्री किसी और की पुत्री है पुत्र की नहीं ऐसे ही यम किसी और के सम्बन्ध से यम है और यमी किसी और के सम्बन्ध से यमी है ऐसा कोई प्रमाण आपके पास है ? यदि है तो दीजिये पर तीन काल में ऐसा प्रमाण आप नहीं दे सकेंगे। जैसे पुत्र-पुत्री परस्पर बहिन भाई होते हैं ऐसे ही यम-यमी भी बहिन-भाई हैं इसका नियामक प्रमाण क्या है ? और जैसे पुत्र पुत्री के अनुसार यम-यमी का अर्थ बहिन भाई लगते हों। ऐसे नर-नारी पति-पत्नि, ब्राह्मण-ब्राह्मणी, पण्डित-पण्डितानी, क्षत्रिय-क्षत्राणी और ठाकुर-ठकुरानी सब परस्पर बहिन भाई न हो जायेंगे क्या ? इनको किस नियम से रोकोगे ? अनर्थ न करिये ! यम-यमी, नर-नारी की भांति ही पति-पत्नी हैं। बहन भाई नहीं।

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

यम के मन्त्र में "**जामयः कृण्वन्नजामि**" शब्द पड़े हैं। जिनका अर्थ यही होता है कि—'**बहिनें अबहिनों के काम करेंगी**' जामि का अर्थ स्त्री कैसे करोगे ?

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

"**जामयः कृण्वन्नजामि**" में जामि का अर्थ मैं पत्नी करता हूं। आपके पास मेरे अर्थ को अशुद्ध सिद्ध करने का कोई प्रमाण नहीं हैं। –भगवान मनु जी नारी के अर्थ में ही "**जामि**" शब्द का प्रयोग करते हैं। देखिये—"**शोचन्ति जामयो यत्र विनस्यत्याशु तत्कुलम् ॥५७॥** (मनुस्मृति अध्याय ३, श्लोक ५७,) अर्थात्—जिस घर में स्त्रियां शोक करती हैं, वह कुल शीघ्र नष्ट हो जाता है। यहां यह अर्थ नहीं है, कि जिस घर में बहिनें शोक करती हैं। और देखिये—

जामयो योनि गेहानि शपन्त्यप्रति पूजिताः। तानी कृत्या हतानीव विनश्यंति समन्ततः ॥५८॥
(मनुस्मृति अध्याय ३, श्लोक ५८,)

अर्थात् नारियां जिस घर में अपूजित अपमानित होकर शाप देती हैं। वह घर नष्ट हो जाता है। "**जाया**" और "**जामि**" एकार्थ वाचक है, ऐसा भाव सिद्ध नहीं कर सकते हैं। देखिये - निरुक्त में भी "**जामि**" शब्द का अर्थ पत्नी नहीं हैं।

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

मेरे प्रत्येक प्रश्न के उत्तर में वेद मन्त्र का ही प्रमाण देना चाहिये। पुराण आदि का नहीं। वेद से भिन्न शास्त्र उपनिषदादि का भी नहीं, मैं वेद का प्रमाण मांगता हूं। आर्य समाज केवल वेद को ही प्रमाण मानता है। वेद के प्रमाण बिना सब वेद विरुद्ध हैं।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

(क) आप वेद ही का प्रमाण क्यों मांगते हैं ? क्या आप पुराणादि को नहीं मानते हैं ? यदि नहीं मानते तो आप लिखकर दीजिये, कि "**में इन-इन पुस्तकों को नहीं मानता हूं**" मैं उन-उनके प्रमाण कदापि नहीं दूंगा। जिन-जिन ग्रन्थों को आप प्रमाण मानते हैं उन-उन का प्रमाण आपके लिए देने का मैं अधिकार रखता हूं। अतः दे सकता हूं और अवश्य दूंगा। आप चाहे जितने घबराइये, इनसे पीछा तभी छूटेगा, जब हमारी भांति साहस करके कह देंगे कि मैं इन पुराण आदि को नहीं मानता हूं मैं फिर उनके प्रमाण न दूंगा।

(ख) वेद में आपकी श्रद्धा ही नहीं, आप वेद का प्रमाण क्यों मांगते हैं ? आपने अपनी पुस्तकों में वेदों का उपहास किया है, देखिये—"**वेदत्रयी समालोचन पृष्ठ १५ में पंक्ति १२ व १३, यजुर्वेद अध्याय ३२ मन्त्र ३** के लिए लिखा है। "**मन्त्र क्या है भानमती का कुनबा है**"। प्रसिद्ध लोकोक्ति है कि —**कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा, भानमती ने कुनबा जोड़ा ॥** इस प्रकार आप वेद और वेद मन्त्रों को कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा की भांति भानमती का कुनबा कहकर अपमानित करते हैं। इसी पुस्तक के

पृष्ठ १ पंक्ति ८, ९, में देखिये यजुर्वेद अध्याय ३२, मन्त्र ४७, के लिए लिखा है। **"मन्त्र क्या है पूरा तमाशा है।"** इसी के लिए पृष्ठ १७ में लिखा है। **"असली वेद का पता लगाना बड़ा कठिन पड़ेगा"** यदि इनको ही असली मान लिया जावे तो प्रत्यक्ष में विरोध पड़ता है। जो मनुष्य वेद को **"भानमती का कुनबा कहे"** उसको **"पूरा तमाशा बतावे"** और वर्तमान वेदों को असली न माने, वह वेद का प्रमाण मांगे यह वास्तव में **"पूरा तमाशा"** है।

(ग) वेदानुकूल और वेद विरुद्ध का लक्षण --ध्यान करते हुए आप कहते हैं कि—जिसके लिए वेद का प्रमाण नही है वह वेद विरुद्ध ही है और **"वेदत्रयी समालोचन"** पृष्ठ ७२ पंक्ति १४, १५ १६ में आपने लिखा है कि—वेद में इसका विरोध नहीं है इसलिए—**"विरोधेत्वेन पेक्षस्यादसति ह्यनुमानम्"** (महर्षि जैमिनी कृत मिमांसा दर्शन सूत्र) इस जैमिनी सूत्र में यह बात वेदानुकूल है। फिर इसी प्रकार इसी पुस्तक के पृष्ठ १११ पंक्ति ७, ८, पर देखिये -**"वेद में भी इसका विरोध नहीं है इसलिए वेदानुकूल है।"** आपके लेख में स्पष्ट है कि—वेद ने जिस बात का स्पष्ट निषेध और विरोध किया है वह वेद विरुद्ध है। जिसका वेद में विरोध न हो उसकी आज्ञा चाहे हो चाहे न हो वह वेद विरुद्ध नहीं बल्कि वेदानुमत अर्थात् वेदानुकूल ही है। सत्य भी यही है, जैसा कि ऋषि कृत मीमांसा के इस सूत्र का भी यही अभिप्राय है। तमाशा यह है कि—आज पौराणिकों को प्रसन्न करने के लिए आप कह रहे हैं कि, "जिसके लिए वेद का प्रमाण न हो वह भी वेद विरुद्ध ही है"। जिस विषय को वेद विरुद्ध सिद्ध करना हो उसके विरुद्ध वेद का प्रमाण न होने पर उसको वेदानुकूल ही मानना चाहिए।

आपके पास ऐसा प्रमाण एक भी है नहीं, जिससे ऋषि दयानन्द जी के किसी भी लेख को वेद विरुद्ध सिद्ध कर सकें इसलिए अपनी दुर्बलता अपने भक्तों से छुपाने के लिए अपने असत्य अनर्थ युक्त और अपने मन्तव्य तथा शास्त्र के विरुद्ध यह कहना प्रारम्भ कर दिया कि- **"जिसके लिए वेद का प्रमाण नहीं है वह वेद विरुद्ध है।"** यदि आप में सत्य है और साहस है तो ऋषि दयानन्द जी के किसी भी लेख के विरुद्ध कोई वेद का प्रमाण दीजिए, अन्यथा उससे वेद विरुद्ध कहने का दृढ़, दुराग्रह और बहुरूपियापन छोड़िये।

(घ) यह भी आपने अपनी मनमानी ही कह डाली कि **"आर्य समाज केवल वेद को ही प्रमाण मानता है"**। आपको यह किसने कहा है? सत्यार्थ प्रकाश के मुख पृष्ठ पर ही लिखा हुआ है— **"वेदादि विविध सच्छास्त्र प्रमाण समन्वितः"** वेद और अन्य सत्य शास्त्रों के प्रमाणों से युक्त हैं, (सत्यार्थ प्रकाश) किसने कहा कि केवल वेद ही प्रमाण है? संस्कार विधि के आरम्भ में ही ऋषि दयानन्द जी कृत श्लोक है, उसमें देखिये—**"वेदादि शास्त्र सिधान्तमाध्याय परमादरात्। आर्य्यैतिह्यं पुरस्कृत्य शरीरात्म विशुद्धये ॥३॥** (संस्कार विधि) अर्थात् ऋषि दयानन्द जी तो वेद और वेदानुकूल सर्व शास्त्रों और इतिहासों तक को प्रमाण मानते हैं। ऐसा ही आर्य समाज मानता है। आपका यह कहना है कि—"आर्य समाज केवल वेद ही को प्रमाण मानता है" अज्ञाता है या जान मान कर कहा हुआ झूठ! आप जिन-जिन ग्रन्थों को प्रमाण मानते हैं, उन सबके प्रमाण आपके लिए **"उष्ट्रलष्टिका"** नाम से दिए जाते हैं और दिये जायेंगे वेद के प्रमाण भी बराबर दिये जायेंगे।

नोट—"उष्ट्रलष्टिका" न्याय यह है कि—"एक ऊंट पर बहुत सी लाठियां लदी जा रही थी। हांकने वाले ने उनमें से एक लाठी निकाल कर ऊंट को मारी, फिर उसी के ऊपर रख दी" ऐसे ही

आपके ग्रन्थों के प्रमाणों का प्रहार आप पर किया फिर आप पर लदे ग्रन्थों ही में आप पर उनको छोड़ दिया इसलिए वेद के प्रमाण भी बराबर दिए जाते हैं।

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

आप बार-बार पूछते हैं कि "**लाश पड़ी है**" ऐसा कहां लिखा है ? लीजिये "**गतासुमेतम्**" शब्द मन्त्र में ही विद्यमान है। जिसका अर्थ है "**प्राण निकले हुए को**" यह है लाश पड़ी हुई।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

प्रश्न करते हुए आपने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा बताया था कि—"**लाश पड़ी हुई है, उठाने वाले खड़े हुए हैं**" और दूसरा पति करने की आज्ञा दी गई है। मैंने आपके असत्य को जानकर आपसे बार-बार पूछा कि—बताओ और दिखाओ कि—सत्यार्थ प्रकाश में यह कहां लिखा है ? आप नहीं बता सके और न बता सकते हैं। अब आप कहते हैं कि "**वेद मन्त्र में है**" बलिहारी जाऊं ! श्रीमान जी की बुद्धि पर !! सत्यार्थ प्रकाश में लिखा होता तो उसका उत्तरदायित्व हमारे ऊपर था। आप प्रश्न करते हम उत्तर देते, पर यदि वेद में हैं तो वेद हमको और आपको दोनों को प्रमाण है। उसका उत्तर-दायित्व दोनों पर समान हैं। "**लाश पड़ी है**" चाहे जल रही हो यदि आप कहें कि—हम वेद को नहीं मानते तो हम आपको इसका उत्तर देंगे। सत्यार्थ प्रकाश में जो बताते थे सो आप न दिखा सके यह आपकी पराजय है।

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

वेदों में गर्भाधानादि के मन्त्र हैं तो क्या वेद में कर्म-उपासना ज्ञान छोड़कर ऐसी अश्लील बातें ही भरी पड़ी हैं ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

यह प्रश्न आपका बहुत ही विलक्षण हैं, हम से पूछिये तो ऋषि दयानन्द जी के निर्माण किये हुए जो नियम हैं उनमें "**वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है**" वेद में ज्ञान-कर्म उपासना और विज्ञान भरे हुए हैं और अश्लीलता की गन्ध भी नहीं है, गर्भाधान एक परम पवित्र (पुत्रेष्टि) यज्ञ है इसमें जिसे अश्लीलता दीखती है, उसको अपने मस्तिष्क की चिकित्सा करानी चाहिए और हां यह तो बताइए कि आपको वेद में ज्ञान-कर्म उपासना कब से दीखने लगी? आपने वेद में क्या-क्या बताया है? सो याद नहीं रहा तो सुनिये। "**वेदत्रयी समालोचन पृष्ठ ४० पंक्ति १९**" कोई स्त्री अपने पास आये तो उसकी रमणेच्छा पूरी कर दे" आगे देखिये —"**वेदत्रयी समालोचन पृष्ठ ५१ पंक्ति ९ से १२ तक**" इत्यादि मन्त्रों के दृष्टांत देकर पुरुष का अन्य स्त्री के पास जाना दिखाया गया है। वृषभ (बैल) अपनी गौवों में शब्द करता है और दूसरे झुंड की गौओं में जाकर वीर्य देता है। यह लोक में प्रत्यक्ष है और देखिये— "**अथर्व वेदालोचन में पृष्ठ १६१ पंक्ति १०**" अर्थात् हे वैद्यराज आज इसका······धनुष जैसा तान दे।

"**पारस्वत्**" हस्ती, खर और अश्व का जितना होता है, उतना ही····· आपका बढ़े। "**उसी में पृष्ठ १६२ पंक्ति १४**" जिससे तेरा······बढ़े और उससे स्त्रियों को परास्त कर। तथा "**पृष्ठ १६५**

पंक्ति ४ में लिखा है"—हे कुमारी ! तेरे किरण अर्थात् दोनों स्तन प्रकट हो गये हैं। पुरुष इनका पेषण करता है।

"फिर **इसी पृष्ठ पर पंक्ति १० में**"—हे कुमारि ! बिना पुरुष योग के ही तेरी माता के दौनों किरण (स्तन) गिर गये थे।

·· ···बुढ़ापे में तेरी माता का उपभोग हुआ है। ······कन्ये ! क्या तू अपने दो कान खिचवाकर इस कार्य में प्रवृत्त होगी ? यदि तेरी इच्छा हो तो, उत्तान अथवा शयनावस्था में या फिर बैठे हुए ही इस कार्य में प्रवृत्त हो।

नोट :—"**इस कार्य**" इसके स्थान पर ठाकुर अमरसिंह शास्त्रार्थ केशरी जी ने "**सनातन धर्म**" शब्द कहा, अखिलानन्द जी के सहायक पण्डित माधवाचार्य जी ने कहा "**सनातन धर्म**" नहीं "**आर्य समाज**"। दोनों ओर की सुनने वाली जनता में बड़े जोरों से अट्टहास हुआ।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

महाराज जी ! मैं अपनी तरफ से नहीं कह रहा हूं, आप ही के पांचवे वेद "**महाभारत**" में व्यभिचार को "**सनातन धर्म**" कहा गया है, इसलिए मैंने "**सनातन धर्म**" कहा है। जनता में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ हंसी······**पृष्ठ १६५ पंक्ति २० में**—उसी में **पृष्ठ १६२ पंक्ति ४ व ५** में देखिये —एक नंगी स्त्री ओखली के पास जाकर कहती है कि—"जिस प्रकार वनस्पति उत्पन्न मुशल तेरे लिए है इसी प्रकार मेरे लिए भी······है।

"**वेदत्रयी समालोचन पृष्ठ १६६ पंक्ति ७**" एक नंगी स्त्री नंगे भागते हुए पुरुष को पकड़ कर कहती है कि —"मेरे साथ गमन (सनातन धर्म) कर, और ओदन (भात) खा यह ज्ञान-कर्म उपासना आपको वेदों में मिली, धन्य हो ! धन्य हो !! वेद पाठी जी आपको धन्य हो !!!

महर्षि दयानन्द जी को वेदों में यह विद्याएं नहीं मिली थी, यह आपकी ही खोज है इस खोज पर तो आपको (नोबिल प्राइज) गवर्मेन्ट से पुरस्कार मिलना चाहिए था। श्रोताओं में जबर्दस्त हंसी········

नोट :—अखिलानन्द जी की जो पंक्तियां ऊपर लिखी हैं यह सब वेद मन्त्रों के अर्थों में उन्होंने लिखी है। ऐसा वेदमन्त्रों में हैं, यह उन्होंने प्रकट किया है। वेदों में शारीरिक, आत्मिक, ऐहिक और पारलौकिक सर्व प्रकार की उन्नतियों के उपाय हैं देखने के लिए आँखें चाहियें।

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

अन्य कोई बात न कहकर "धृतराष्ट्र और पाण्डु आदि नियोग से नहीं व्यास जी के वरदान से उत्पन्न हुए"।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

(६) धृतराष्ट्र-पाण्डु और विदुर जी की उत्पत्ति व्यास जी के वरदान से नहीं हुई बल्कि नियोग से ही हुई महाभारत को पढ़ने का कष्ट करिये सत्यवती ने भीष्म जी से कहा था कि अपनी भाभियों से सन्तान उत्पन्न करो वह दोनों "विधवा" सन्तान रहित हैं इस पर भीष्म जी नेयह कहकर इन्कार कर दिया कि मरणपर्यन्त ब्रह्मचारी रहने का प्रण कर चुका हूं अब उसको नहीं तोड़ सकता हूं। चाहे सूर्य पश्चिम से उगने लगे, यहां यह प्रश्न उठता है कि सत्यवती ने भीष्म को वरदान द्वारा सन्तान उत्पन्न करने को कहा था, या गर्भाधान और मैथुन द्वारा ? यदि कहो कि वरदान द्वारा उत्पन्न करने को कहा था, तो प्रश्न होगा कि वरदान से भीष्म जी का ब्रह्मचर्य भला कैसे टूटता और छूटता था ? पता लगता है कि निश्चिय ही नियोग के लिए कहा था वरदान के लिए नहीं, साथ ही भीष्म जी ने अनेक उदाहरण देकर नियोग की ही पुष्टि की, और वेद का भी प्रमाण देकर नियोग को वेदानुकूल बताया, देखिये—"**पाणिग्राहस्य तनयः इति वेदेषु निश्चितम्**" ॥६॥ (महाभारत आदि पर्व अध्याय, १०४, श्लोक ६,) महाभारत में ही सत्यवती ने अपनी पुत्र वधू से भी कहा कि—"**कोशल्ये देवरस्तेऽस्ति निशीथे ह्यागमिष्यति**" ॥२॥ (महाभारत आदि पर्व अध्याय १०६, श्लोक २,) अर्थात् "**तेरा देवर (व्यास) आधी रात को आवेगा**" कहिये आधी रात को वरदान देने का कौन सा समय हैं ? आप कहीं आधी रात को किसी के घर में वरदान देने के लिए जाकर देखिये ? कैसी पूजा हो। श्रोताओं में हंसी········गर्भाधान नियोग के लिए तो आधी रात को जाना ही उचित था, क्योंकि दिन में गर्भाधान निषिद्ध है और उसका समय अर्ध रात्री ही सर्वोत्तम हैं। आधी रात्री में जाना नियोग ही सिद्ध करता है न कि वरदान ! दूसरे व्यास जी को अम्बालिका और अम्बिका का देवर बताना भी नियोग ही सिद्ध करता है क्योंकि देवर का निर्वचन प्रसिद्ध है । देखिये —"**देवरः कस्माद्द्वितियो वर उच्यते**" (निरुक्त नैघण्टुक काण्ड अध्याय ३, पाद ३ खण्ड १५,) अर्थात् देवर दूसरे पति को कहते हैं। अम्बिका के लिये लिखा है "**शयनाशयने शुभे**" अर्थात् "शुभ शैया पर सोती हुई" वरदान लेने के लिए शैय्या पर सोना आप ही की शुभ समझ में आ सकती है पं० रामस्वरूप जी ऋषि कुमार सम्पादक सनातन धर्म पता का महाभारत की टीका में लिखते हैं। "**व्यास जी ने अम्बिका के साथ समागम किया**" धृतराष्ट्र और पाण्डु के जन्मोपरान्त तीसरा नियोग बड़ी विधवा से ही होना था, पर वह स्वयं नहीं आई, और शृंगार कराके अपनी दासी को भेज दिया। "**कामोपभोगेन रहस्तस्यां तुष्टिमगादृषि :**" उसके साथ कामोपभोग से ऋषि व्यास बहुत संतुष्ट हुए। उससे विदुर जी उत्पन्न हुए। कहिये कामोपभोग नियोग का नाम है कि नहीं ? इसके अतिरिक्त देवी भागवत में स्पष्ट ही हैं—"**व्यास वीर्यात्तु संजातो धृतराष्ट्रो अन्ध ऐव चः** ॥२॥ (देवी भागवत स्कन्द २, अध्याय ६ श्लोक २,) अर्थात् व्यास के वीर्य से धृतराष्ट्र अन्धे उत्पन्न हुए ? आपके कोष में वीर्य का अर्थ वरदान ही है क्या ?

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

"**उदीर्ष्व नारी**······" का यह मन्त्र है आप भाष्य सायनाचार्य जी का सुना रहे थे। तैत्तिरीयारण्यक में से कैसा तलाशा है ? प्रमाण रामायण का अर्थ महाभारत का ! अर्थात् प्रमाण जाब्ता फौजदारी का अर्थ दीवानी की पुस्तक में यह कैसे माना जा सकता है ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

"**उदीर्ष्व नारी**..." यह मन्त्र ऋग्वेद का है और भाष्य तैतिरीयारण्यक में दिखा रहा हूं। ठीक है पर अर्थ उसी मन्त्र का हैं या नहीं? यदि यह अर्थ जो मैं सुना रहा हूं उसी मन्त्र का न हो किसी और मन्त्र का हो, या आचार्य सायण का किया हुआ न हो तो आप कहिये जब वही मन्त्र और उसी का भाष्य श्री सायण का ही किया हुआ है तो फिर आपको इसमें आपत्ति क्या है? श्लोक रामायण या मनुस्मृति का ही हो और अर्थ महाभारत में उसी का हो तो इसमें अनर्थ क्या हो गया? वेद का मन्त्र यदि ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक या उपनिषदादि में उद्धृत होगा तो वह मन्त्र ही न रहेगा? और न उसका अन्यत्र किया हुआ भाष्य-भाष्य ही रहेगा! यह दोषापत्ति आपकी सर्वथा अनूठी और अछूती है, ऐसी सूझ आपके सिवाय किसको सूझ सकती है।

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

यम-यमी सूक्त में बहिन-भाई का सम्वाद ही है सब भाष्यकारों ने ऐसा ही माना है, पति-पत्नी का सम्वाद तो सिवाय दयानन्द के किसी ने भी नहीं माना।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

निरुक्त के प्रसिद्ध और प्राचीन भाष्यकार श्री स्कन्द स्वामी यम-यमी सूक्त में पति-पत्नी का ही सम्वाद मानते हैं। यम पति है और यमी पत्नी। स्कन्द स्वामी लिखते हैं कि—"**काचिद् ब्राह्मणी पत्यौप्रव्रजिते कार्मात्ता प्रब्रवीति**"॥ अर्थात कोई ब्राह्मणी अपने पति के सन्यास लेते समय काम के वश में होकर कहती है। इस प्रकार कैसी सुन्दर संगति लगती है कि—"यमी—ब्राह्मणी अपने सन्यास लेने वाले पति "यम" को कहती है कि तुम मेरे साथ समागम करो। कामार्त्ता हो या पुत्र चाहने वाली हो, उसको विरक्त हुआ पति कहता हैं कि—क्या ऐसे युग भी कभी आयेंगे जब पत्नियां-अपत्नियों के से कार्य करेंगी? अर्थात् पति की अत्यावश्यक आज्ञाओं का भी उलंघन किया करेगी! हे देवी! तुम मेरी आज्ञा मानो, और "**अन्यमिच्छस्वसुभगेपतिमत्**" मुझ पति से भिन्न अन्य दूसरे पति की इच्छा, करो, जो नियोग द्वारा तुमको पुत्र प्रदान कर सके।

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

"**उदीर्ष्व नारी**"...इस मन्त्र में नियोग और पुर्नविवाह का नाम भी नहीं है। इस मन्त्र को किसी ने भी पत्यन्तर (नियोग या विधवा विवाह) विधान का नहीं माना है न वेद में दूसरे पति का विधान है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

(क) "**उदीर्ष्व नारी**......" इस मन्त्र में नियोग और विधवा विवाह दोनों हैं और बड़े-बड़े विद्वान् ऐसा ही मानते हैं। आपने ग्रन्थ नहीं पढ़े तो यह आपका दोष है। प्रसिद्ध वेदज्ञ, विद्वान्

मन्त्र विनियोग कर्त्ता "**महर्षि शौनक**" अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ "**ऋग्विधान**" में इस मन्त्र का विनियोग-नियोग में करते हैं। देखिये—

भ्रातुर्भार्यामपुत्रस्य सन्तानार्थं मृते पतौ। देवरोऽन्वारूरूक्षन्तींमुदीर्ष्वेति निवर्त्तयते ॥
ऋतुकाले तु सम्प्राप्ते घृताभ्यक्तोऽथवाग्यतः। एक मुत्पादयेत् पुत्रं न द्वितीयं कथंचन ॥
("ऋग्विधान"—मोतीलाल बनारसी दास द्वारा लाहोर से प्रकाशित)

अर्थात्—भाई की सन्तानहीन पत्नी को पति के मर जाने पर देवर अपनी भाभी को रोने से "उदीर्ष्व नारी…" इस मन्त्र को बोल कर रोके और उससे एक पुत्र उत्पन्न करे। अन्य कोई दूसरा न करे।

(ख)—(**शास्त्रीय-नियोग-विध्यवनुरोधेन) पाणिगृहीष्वेति। उदीर्ष्व नारि… (गृह्णवेति)**
("वैदिक साहित्य चरित्रम्" मद्रास में प्रकाशित)

मद्रास के छपे प्रसिद्ध ग्रन्थ वैदिक साहित्य चरित्रम् का ही यह वचन है इसमें भी इस मन्त्र का विनियोग पति की चिता जलते समय सती होने से रोक कर नियोग की सम्मति देने ही में है। अर्थात्—शास्त्र की नियोग विधि के अनुरोध से "देवर या पुरोहित विधवा को कहता हैं कि रोओ मत दूसरे पति से सन्तान उत्पन्न कर लो "**उदीर्ष्व नारी…**" इसके द्वारा पति की सम्मति देता है।

(ग) भीष्म पितामह नियोग को सनातनधर्म स्वीकार करते हुए इसी मन्त्र की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि—"**पाणिग्राहस्य तनयः इति वेदेषु निश्चितम्**" ॥६॥ (महाभारत आदि पर्व अध्याय १०४, श्लोक ६,) तथा "**उदीर्ष्व नारीं…**" इस मन्त्र में "**हस्तग्राभ्यस्य**" पाठ हैं। उसी को भीष्म जी ने "**पाणिग्राहस्य**" कह कर नियोग का वेद में प्रमाण माना है।

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

"**उदीर्ष्व नारी…**" इस मन्त्र में वह कौन से शब्द हैं? जिनसे पुनर्विवाह की इच्छा करने वाला वा "**नियोग करने वाला**" ऐसा अर्थ निकलता है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

इस मन्त्र में वह शब्द "**दिधिषु**" हैं जिसका अर्थ नियोग या विधवा विवाह करने वाला पति है।

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

"**दिधिष**" का यह अर्थ किसने किया या माना है?

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

आचार्य सायण जी ने "**उदीर्ष्वनारी**" इसी मन्त्र में आये "**दिधिषु**" शब्द का अर्थ पुनर्विवाह की इच्छा करने वाला किया है। "**दिधिष पुनर्विवाहेच्छोः**" (पुनर्विवाह की इच्छा करने वालों का)

अब मनुस्मृति में देखिये **भ्रातुर्मृतस्य भार्यायांपाडेनुरज्येत कामतः। धर्मेणापि नियुक्तायां स ज्ञेयो-दिधिषुः पतिः ।।१७३।।** (मनुस्मृति अध्याय ३, श्लोक १७३,) अर्थात्—मरे हुए भाई की पत्नी के साथ काम के वश या धर्मानुकूल नियोग से भी जो रति करता है वह "**दिधिषु**" पति जानना चाहिये। मनु जी ने स्त्री के दूसरे पति का नाम "**दिधिषु**" बताया है। चाहे नियोग से चाहे पुनर्विवाह से, धर्म से चाहे अधर्म से स्त्री के दूसरे पति का नाम "**दिधिषु**" है। और देखिये अमर कोष में कहा है। "**पुनर्भूः दिधिषुः रूढ़ा द्विस्तथा "दिधिषु पतिः" ।।२३।।** (अमरकोष काण्ड २, मनुष्य वर्ग श्लोक २३) इस पर अमर विवेक टीका भी देखने योग्य है। वहाँ पर और भी स्पष्ट किया गया है। देखिये—

श्री पण्डित अखिलानन्द जी कविरत्न—

नोट—पण्डित जी ने आर्य समाज की वेदी की ओर हाथ करके कहा "**इस घर में आग लग गई**" अपनी ओर हाथ का संकेत करते हुए बोले "**इस घर के चिराग से**"।

अपने आपको आर्य समाज के घर का चिराग बताया, जिससे आर्य समाज को आग लग गई।

"**इस घर को आग लग गई इस घर के चिराग से।**" इसके उत्तर में श्री ठाकुर साहब जी ने कहा—

पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

यह सर्वथा सत्य है यह मिट्टी के तेल का चिराग (पण्डित अखिलानन्द जी की तरफ इशारा करते हुए) हमारे घर में जलता था, हमारे घर की दीवारें काली करता था, हमारे घर में दुर्गन्ध फैलाता था, हमारे घर में इससे आग लग जाने की भी सम्भावना थी।

हमने यह सब अनुभव किया, और इस चिराग को बुझा दिया और घर से बाहर निकालकर फेंक दिया। हमारे घर में इसकी जगह (वहाँ उपस्थित श्री पण्डित रामानन्द जी शास्त्री तथा श्री पण्डित गंगाधर शास्त्री जी की ओर हाथ करते हुए) यह गैस, लैम्प और बिजली के बलब जगमगाते हैं। जिनके घर में घुप अँधेरा था उन्होंने इस चिराग को अपने घर में जला लिया। अब यह उसी घुप्प अन्धेरे वाले घर में बैठा टिमटिमा रहा है। जनता में बढ़े जोर की हँसी चारों ओर तालियों की गड़गड़ाहट से आकाश गूँज उठा··· "आर्य समाज की छीछालेदर करने वाले की अपनी छीछालेदर हो रही है सूर्य पर थूकने की कुचेष्टा करने वाले के अपने मुँह पर अपना थूक गिर रहा है।" इस प्रकार यह शास्त्रार्थ समाप्त हुआ ।।

ग्यारहवां शास्त्रार्थ--

स्थान : **फर्रुखाबाद (उत्तर प्रदेश)**

दिनाङ्क : **१० व ११ जौलाई सन् १९५५ ई०**

विषय : **क्या महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ "सत्यार्थ प्रकाश" वेद विरुद्ध हैं ?**

शास्त्रार्थ कर्ता पौराणिकों की ओर से : **श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री**

सहायक : **श्री पण्डित अखिलानन्द जी "कविरत्न"**

शास्त्रार्थ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से : **श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी**

सहायक : **श्री पण्डित बिहारीलाल जी "काव्यतीर्थ" (बरेली)**

नोट : –श्री पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार और श्री पण्डित लोकनाथ जी शास्त्री (तर्क वाचस्पति) भी इस शास्त्रार्थ के समय विद्यमान थे। **"सम्पादक"**

शास्त्रार्थ से पहले

आर्य कुमार सभा और सनातन धर्म मण्डल के सदस्यों के बीच १० व ११ जौलाई सन् १९५५ को फर्रुखाबाद में दो शास्त्रार्थ हुए। कुछ दिनों पूर्व पौराणिक पण्डित माधवाचार्य जी ने आर्य समाज के विरुद्ध बहुत भद्दा प्रचार किया। उसको सुनकर सभ्यता भी लजाती थी। आर्य लोग उनको सुनते और सहन करते रहे। पर असभ्यता और अशिष्टता का आर्यों ने कुछ उत्तर न देना चाहा। आर्यों की इस सहनशीलता का पौराणिकों ने अनुचित लाभ उठाया तथा आर्य समाजियों को शास्त्रार्थ से डरा हुआ बताना आरम्भ कर दिया। महात्मा विदुर जी ने कहा हैं कि—**एकः क्षमावतां दोषो द्वितियो नोपपद्यते। यदेनं क्षमया युक्तं अशक्तं मन्यते जनः॥** (विदुर नीति) अर्थात् क्षमा शीलों में एक ही दोष हैं, दूसरा नहीं। वह दोष यह हैं कि, क्षमा करने वाले को लोग अशक्त अर्थात् दुर्बल मानने लगते हैं। आर्यों की सहन शीलता का लाभ उठाकर पौराणकों ने एक के पीछे एक इस प्रकार दो चैलेञ्ज आर्य समाज के विरुद्ध शास्त्रार्थ के लिए छपवाकर बंटवा दिए। तब आर्य वीर (शेर) भी तैयार हो गये। और आर्य कुमार सभा फर्रुखाबाद ने चैलेञ्ज स्वीकार कर लिया आर्य कुमार सभा ने शास्त्रार्थ के लिए यह विषय बताये। १. ईश्वर साकार हैं या निराकार? २. ईश्वर जन्म लेता है या नहीं? ३. मूर्ति पूजा वैदिक है या अवैदिक? ४. श्राद्ध मृतकों का होना चाहिये या जीवितों का? ५. वर्ण व्यवस्था जन्म से है या गुण, कर्म, स्वभाव से? ६. नियोग तथा विधवा विवाह वैदिक हैं या अवैदिक? पौराणिक मण्डल इनमें से एक विषय पर भी शास्त्रार्थ करने को तैयार नहीं हुआ। उन्होंने केवल एक ही विषय पर शास्त्रार्थ करना स्वीकार किया कि—**"सत्यार्थ प्रकाश वैदिक है या अवैदिक"**? तथा आर्य समाज को विषय दिया गया कि—**"पद्म पुराण वैदिक है या अवैदिक"**? पौराणिकों ने इन मौलिक विवादास्पद विषयों पर शास्त्रार्थ करना सर्वथा त्याग दिया है। इसका कारण यह है कि, इन विषयों पर पौराणिकपक्ष सर्वथा अयुक्ति युक्त तथा प्रमाण शून्य है। हृदय से तो उन्होंने पराजय स्वीकार कर ली है पर मुख से स्वीकार करने में घबराते हैं। दूसरा कारण यह भी है कि, पौराणिकों में एक भी ऐसा पण्डित नहीं है जो दो चार घण्टे लगातार किसी भी विषय पर विचार विनिमय कर सके वे केवल कपि कौतुक में ही प्रवीण हैं। यथा—**शाखा मृग को यही प्रभुताई। शाखा ते शाखा पर जाई॥** जैसे (कपि) बन्दर एक डाली पर स्थित न रहकर क्षण-क्षण में भिन्न-भिन्न डालियों पर कूदता तथा भागता रहता है' इसी प्रकार पौराणिक पण्डितों का पांडित्य अब यही है कि वे शास्त्रार्थ का विषय—**"स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ वेद विरुद्ध हैं"** यही सदा सर्वत्र रखते हैं और उन्हीं ग्रन्थ में से कुछ सामान्य बातें लेकर ६-७ प्रश्न भिन्न भिन्न प्रकार के कर देते हैं। उन्हीं को उलट-पलट कर दो तीन घण्टे शास्त्रार्थ के नाम पर समाप्त कर देते हैं। आर्य समाज की ओर से भी इसके मुकाबिले में "क्या पुराण वेदानुकूल हैं"? यह विषय रख दिया जाता है। फर्रुखाबाद में इतना भेद किया गया कि पौराणिकों ने अपने लिए विषय निश्चय किया कि,—**"सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध है"** और आर्य समाज को विषय दिया कि -**"क्या पद्म पुराण**

वेद विरुद्ध है ?" शेष वह उन्हीं बातों से बाधाएं डालने लगे जो कि पुस्तक के आरम्भ में **"लेखक की ओर से"** शीर्षक वाले लेख में दिये गये हैं। जैसे शास्त्रार्थ में मध्यस्थ का होना, शास्त्रार्थ लेख बद्ध तथा संस्कृत में होना चाहिए आदि-आदि।

नोट :—एक बात इस दिन विशेष यह हुई कि श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री आदि ने यह निश्चय किया कि, आज का यह शास्त्रार्थ श्री ठाकुर अमर सिंह जी करेंगे। श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने सारे फर्रुखाबाद शहर में यह घौषणा लाउडस्पीकर द्वारा करा दी कि,—**"आज तीन से छः बजे तक शास्त्रार्थ "नियोग" विषय पर होगा"**। निश्चित समय पर पौराणिक पण्डित आये ही नहीं, तब उसके बाद आर्य समाज की ओर से घोषणा की गई कि सनातन धर्मी पण्डित शास्त्रार्थ के लिए नहीं आये हैं इस लिए उनकी हार मानी जाये, वह इस घोषणा को सुनकर ४ बजे शास्त्रार्थ मण्डप में आ गये पर **"नियोग"** विषय पर शास्त्रार्थ करने को तैयार नहीं हुए। सत्यार्थ प्रकाश पर ही अड़े रहे। श्री ठाकुर पण्डित अमर सिंह जी ने कहा कि– देखिये पण्डित माधवाचार्य जी आप नियोग विषय पर शास्त्रार्थ नहीं कर रहे हैं पर आप चोर द्वार से नियोग पर अवश्य आयेंगे। यह आप निश्चय समझ लीजिये यदि आपने नियोग पर प्रश्न किया तो मैं ऐसे उत्तर दूंगा कि आप उनको सुनकर रो पड़ेंगे।

इस प्रकार इसी वाद विवाद में काफी समय बर्बाद करने के पश्चात् पौराणिक पण्डित शास्त्रार्थ करने को उद्यत हुए और हुए तब जब श्री ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी ने कह दिया कि— यदि आप नियोग विषय पर शास्त्रार्थ नहीं कर सकते हैं तो जिस पर भी आप बोल सकते हैं बोलिये। तब सत्यार्थ प्रकाश पर ही शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ।

"सम्पादक"

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

भाइयों और बहनों ! स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में चोटी कटा देने का आदेश और उपदेश किया है यह ईसाई मत की शिक्षा का प्रचार है। जिस चोटी की रक्षा के लिए हिन्दू लोग शिर कटा देते हैं उस प्यारी चोटी को काटने का उपदेश स्वामी दयानन्द जी ने दिया है। यह कितना घोर अनर्थ है। यह वेद विरुद्ध उपदेश है। दिखाइये वेद के किस मन्त्र में चोटी कटाने की आज्ञा है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

महर्षि दयानन्द जी ने संस्कार विधि के मुण्डन संस्कार में चोटी रखाने की आज्ञा दी है। नित्य प्रातः और सायं सन्ध्या करते समय गायत्री मन्त्र बोलते हुए चोटी में गांठ लगाने का आदेश और उपदेश प्रत्येक ब्रह्मचारी, गृहस्थ और वानप्रस्थ को दिया है। संन्यास ग्रहण करते समय चोटी और जनेऊ दोनों

को जल में छोड़ने का विधान है । स्पष्ट हैं कि स्वामी जी महाराज मुण्डन संस्कार से लेकर संन्यास ग्रहण करने तक चोटी रखने और उसमें नित्य दो बार गाँठ लगाने का आदेश देते हैं । सत्यार्थ प्रकाश में कहीं भी यह नहीं लिखा कि चोटी सबको कटानी चाहिये और अवश्य कटानी चाहिए । यदि ऐसा आदेश आप सत्यार्थ प्रकाश में लिखा दिखला दें तो मैं इसी समय सनातन धर्मी बनने की घोषणा करता हूं और अगर न दिखा सके तो आप आर्य समाजी बनने की घोषणा करिये । दिखाइये ! सत्यार्थ प्रकाश में ऐसा कहां लिखा है ? (इस पर सभा में सन्नाटा छा गया । लोग स्तब्ध रह गये, माधवाचार्य जी का मुंह फक पड़ गया ।) सुनिये ! मैं बताता हूं वहां क्या है—आप लोग कुछ पढ़ते-लिखते तो हैं नहीं । देखिये मनुस्मृति में एक केशान्त संस्कार बताया गया है । जिसमें लिखा है—

केशान्तः षोडशे वर्षे ब्राह्मणस्य विधीयते । राजन्य बन्धो द्वाविंशे वैशस्यद्वयधिके ततः ।।६५।।

(मनुस्मृति अध्याय २, श्लोक ६५,)

अर्थात ब्राह्मण के पुत्र का केशान्त संस्कार सोलह वर्ष की आयु में, क्षत्रिय का २२ वर्ष में तथा वैश्य के पुत्र का २४ वर्ष की आयु में होवे । इस संस्कार का नाम ही केशान्त है । जब केशान्त ही हो गया तो चोटी कहां रही? जब शरीरान्त ही हो जाए तो मुख आदि कहां रह गया? और आंख कहां रह गयी ? मनुजी का दिया हुआ ही तो नाम **"केशान्त"** है । स्वामी जी ने तो उसमें चोटी की रक्षा की है और लिखा है कि—इस विधि के पश्चात् **"केवल शिखा रखके"** अन्य केश कटावे और आगे कहा है, **"अति उष्ण देश हो तो सब शिखा सहित छेदन करा देना चाहिए ।"** यहां **"अति उष्ण देश हो तो"** यह शर्त है न कि यह नित्य कर्म और और नित्य धर्म है । समय विशेष और देश-विशेष के लिए कार्य विशेष है । स्वामी जी ने तो "उष्ण" भी नहीं "अति उष्ण" देश कहा है इसके लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता है । अनेक रोगों में सिर के सारे बाल कटा दिये जाते हैं । और यदि प्रमाण ही चाहियें तो लीजिये—"हम तो झूठे को घर तक पहुचा कर ही छोड़ते हैं" देखिये तथा ध्यान से सुनिये और नोट करिये ! एक प्रमाण तो केशान्त संस्कार के लिए मैंने पहले मनुस्मृति का दिया है दूसरा चोटी कटाने का सुनिये—**मुण्डोवा जटिलो वा अथवा स्याच्छिखाजटः ।।२१९।।** (मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक २१९,) ब्रह्मचारी के लिए इस श्लोक में तीन विकल्प है मुण्डित शिर सर्वथा घोटमघोट रहे, या जटा रक्खें या शिखा जट अर्थात् चोटी रक्खें । यहाँ **"मुण्ड"** का अर्थ चोटी रहित घोटमघोट नहीं है तो क्या है ?

और भी देखिये—आप जितने चाहें प्रमाण लेते जाइये । दो मनुस्मृति के प्रमाण मैं पहले दे चुका हूं आगे और सुनिये—

(३)—**"स शिखं वपनं कार्य्यं त्रिसंध्यमवगाहनम्"** ।।३८।। (पाराशर स्मृति अध्याय ८,)
(४)—**"स शिखं वपनं कार्य्यं प्राजापत्यत्रयं चरेत्** ।।६।। (पाराशर स्मृति अध्याय १०,)
(५)—**"स शिखं वपनं कृत्वा भुञ्जीयाद्यावकोदनम्** ।।२०।। (पाराशर स्मृति अध्याय १०,)
(६)—**"स शिखं वपनं कृत्वा प्राजापत्य त्रयाचरेत्"** ।।७।। (पाराशर स्मृति अध्याय १२,)
(७)—**"सशिखं वपनं कार्यमास्नाद्ब्रह्मचारिणा"** ।।१४।। (कात्यायन स्मृति खण्ड २५,)

ये स्मृतियों के सात प्रमाण हुए इनमें **"स शिखं वपनं कार्यम्"** शिखा अर्थात् चोटी सहित बाल कटाने का स्पष्ट आदेश है। भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के लिए ऐसे आदेश स्मृतियों में हैं। महापुरुषों ने कहा है—**"धर्मार्थ काम मोक्षणामारोग्यं मूलमुत्तमम्"** ॥ अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनका उत्तम मूल आरोग्यता ही हैं। आगे कहा है—**"शरीरं धर्म सर्वस्वं रक्षणीयं प्रयत्नतः। शरीरात् सूयते धर्मः पर्वतात् सलिलं यथा ॥"** अर्थात् शरीर धर्म का सर्वस्व है इसकी प्रयत्न पूर्वक रक्षा करनी चाहिये।

गृह्यसूत्रों में केशान्त और गोदान—

(१)—**"एव गोदानमन्यस्मिन्नपि नक्षत्रे षोडशे वर्षे ॥१२॥** (आपस्तम्ब गृह्यसूत्र छटे पटल का १६वां खण्ड,) इसमें कहा हैं कि रोहिणी आदि नक्षत्र में तथा सोलहवें वर्ष में केशान्त संस्कार भी कर्त्तव्य है ॥१२॥ (२)—**"एतावन्नाना सर्वान्केशान्वापयते"** ॥१५॥ (आपस्तम्ब गृह्यसूत्र छटे पटल का सोलहवां खण्ड,) इस गोदान (केशान्त) कर्म में चूड़ाकर्म (मुण्डन संस्कार) से इतना भेद है कि चौल कर्म (मुण्डन संस्कार) में शिखा छेकी जाती है और गोदान (केशान्त) में शिखा सहित सब केश मुंड़ाये जाते हैं ॥१५॥ (भाषा-टीका श्री पं० भीमसेन जी **"ब्राह्मण सर्वस्व"** मासिक-पत्र के सम्पादक) (३)—**सलोमं वापयेत स्पष्टम् ॥२॥** (खादिर गृह्यसूत्र पटल २ खण्ड ५ रूद्रस्कन्दीय वृत्तिसहितम्,) ब्रह्मचारी जब केशों को कटवावे उस समय कक्ष, वक्ष, उपस्थ और शिखा तक के रोमों को कटवाये ॥२॥ (भाषा-टीका उदय नारायण सिंह जी) (४)—**षोडशे वर्षे गोदानम् ॥१॥** तथा **चूड़ा करणेन् केशान्तकरणं व्याख्यातम् ॥२॥** एवं **ब्रह्मचारी केशान्तान् कारयते सर्वाण्यङ्ग लोमानीं सँकारयते ॥३-४॥** इन पर **संस्कृत टीका** देखिये **ब्रह्मचारी ब्रह्मवेदः तद् ग्रहणाचारविशिष्ठिः आद्याश्रमी यदैव केशान्तान् कारयते, तदैव सर्वाणि अङ्ग लोमानि संहारयते "कक्ष वक्षोपस्थ शिखा" केशानपि बापये दित्यर्थ ॥३-४॥ भाषा-टीका**—ब्रह्मचारी अर्थात् वेदाध्ययनाचार युक्त आद्याश्रमी जिस समय केश कटावे उस समय कक्ष (बगल) वक्ष (छाती) उपस्थ (लिङ्ग) और शिखा पर्यन्त के लोम (बाल) कटावे ॥३-४॥ (श्री पं० सत्यव्रत सामश्रमी द्वारा संस्कृत व्याख्या तथा भाषा टीका श्री उदय नारायण सिंह जी की) यह सातप्रमाण स्मृतियों के ३ ग्रह्यसूत्रों के और १ वेद का ये ग्यारह प्रमाण चोटी कटाने के अकाट्य हैं। आश्चर्य और दुःख यह हैं कि आप पढ़ते तो कुछ हैं नहीं और शास्त्रार्थ करने खड़े हो जाते हैं। पण्डित जी महाराज! धन्यवाद दीजिये इन बेचारे सनातन धर्मियों को आपके परास्त हो जाने पर भी आपको भरपूर दक्षिणा दे देते हैं। सुनिये—**"शरीर धर्म का सर्वस्व है, इसकी प्रयत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिये"**—यह मैंने कहा है। और शरीर से धर्म ऐसे उत्पन्न होता है जैसे पर्वत से पानी।

देश भङ्गे प्रवासे च व्याधिषु व्यसनेष्वपि। रक्षेद्देव स्वदेहादि पश्चाद्धर्मं समाचरेत् ॥

देश के उपद्रवों में, परदेश में, रोग में और व्यसनों में मनुष्य अपने शरीर आदि की रक्षा कर ले पश्चात् देश-काल और स्थिति ठीक होने पर पुनः धर्माचरण करने लगे। केशान्त संस्कार की विधि है और अति उष्ण देश होना विशेष कारण है। सरसाम (पागलपन) आदि रोग भी विशेष कारण चोटी सहित बाल कटाने के कभी हो सकते हैं। बाल तो परमेश्वर की उगाई खेती है फिर आ जायेंगे। वेद का प्रमाण तो पण्डित जी महाराज आपको देना चाहिये, कि अमुक मन्त्र में कहा गया है कि कभी किसी दशा में भी चोटी नहीं कटानी चाहिये। जब तक ऐसा मन्त्र न दिखायें तब तक वेद

विरुद्ध बताने का साहस दुस्साहस मात्र है। आप तो वेद मन्त्र के प्रमाण नहीं दे सकते। मैं दे सकता हूं, लीजिये वेदमन्त्र भी लीजिये—"**यत्र बाणा सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव**" (यजुर्वेद अध्याय ३७ मन्त्र ४८,) "**विशिखा**" का अर्थ आपके आचार्य उव्वट ने किया है, "**विगत शिखा सर्वमुण्डा**" चोटी सहित सारा मुंडा हुआ। और आपके आचार्य महीधर जी इसी मन्त्र में आये "**विशिखा**" शब्द का अर्थ करते हैं—"**कुमारा विशिखा इव विगता शिखा येषां ते विशिखाः शिखारहिता मुण्डित मुण्डा**" अर्थात्—जिसकी चोटी कटी है, जो शिखा रहित है, मुण्डा हुआ शिर! चोटी कटाने के ये ग्यारह प्रमाण हुए। बारहवां और लीजिये देवी भागवत पुराण में कहा गया है कि—श्री कृष्ण जी शिर घुटाकर मुण्डी दण्डी हो गये पुत्र की कामना से उग्र तप किया तथा फलाहार पर ही रहे। देखिये—

जग्राह पुत्र कामस्तु मुण्डी दण्डी बभूव ह। उग्र तत्र तपस्तेपे मासमेकं फलाशनः ॥३१॥
(देवी भागवत् पुराण स्कन्द ४ अध्याय २५ श्लोक ३१,)

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों! श्री ठाकुर जी ने यह जो मनुस्मृति का प्रमाण दिया है, "**मुण्डोवा जटिलोवा**··· आदि यह संन्यासी के लिए है। संन्यासी को चोटी कटाने का यहां विधान है अन्य स्मृतियों में मुण्डन संस्कार के समय एक बार शिखा सहित बाल कटाकर फिर दूसरी बार चोटी रखावे तथा चोटी कटाने के जितने भी स्मृतियों के प्रमाण दिये हैं यह सब मुण्डन संस्कार के हैं। और हां! अरे! स्त्रियों के बालों का क्या होगा?

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज! ऐसा घोर अनर्थ मत कीजिये! कुछ इन भोले-भोले सनातन धर्मियों के लिए पढ़ लिया करिये! मनुस्मृति में बिल्कुल साफ लिखा है—अगर आपको नहीं पता तो बराबर में बैठे अपने साथी श्री पण्डित अखिलानन्द कविरत्न जी से पूछ लो, पता लग जावेगा, वहां कहा है कि "**मुण्डोवा जटिलो वा अथवा स्यात् शिखाजटः ॥२१९॥** (मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक २१९,) अर्थात् सारा शिर मुंडाना, जटायें रखना, या चोटी रखना ये तीन विकल्प हैं। दूसरे अध्याय में प्रकरण ब्रह्मचर्य का हैं संन्यास का नहीं। मनुस्मृति नहीं पढ़ी तो "**शिखा जट**" शब्द तो अभी सुना है मुण्डित और जटाजूट संन्यासी तो चाहे मिल भी जाये, "**शिखजट**" चोटी वाले संन्यासी कौन से और कहां रहते हैं? धन्य हो महाराज आपकी बुद्धि को। स्त्रियों के बालों की आपको बहुत चिन्ता है पर आपको ध्यान होना चाहिए कि अनेक रोगों में डाक्टर और वैद्य स्त्रियों के भी बालों को काट और कटवा देते हैं। यह तो देश, काल, पात्र और कारण या अवस्था विशेष की व्यवस्था है। स्वामी जी चोटी को आवश्यक मानते हैं। स्वामी जी के लेख को समझने की कोशिश करिये!

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

सत्यार्थ प्रकाश में स्वामी जी ने लिखा है कि बच्चे को छः दिन तक माता दूध पिलाये, पश्चात् धायी ही दूध पिलाया करे। स्वामी जी का यह लेख वेद विरुद्ध है और ईसाई मत का प्रचार है। दिखाइये वेद में कहां है कि—धायी ही दूध पिलाया करे और माता छः दिन ही दूध पिलावे?

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सज्जनों ! पण्डित जी सत्यार्थ प्रकाश के वेद विरुद्ध सिद्ध करने के लिए बड़े-बड़े भारी प्रश्न ढूंढ़कर लाये हैं। बस आपने प्रश्न कर दिया कि धायी दूध पिलाये यह किस वेद में है ? वाह ! वाह ! पण्डित जी आप समझते हैं कि इस प्रश्न के करने से ही सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध सिद्ध हो गया। क्या खूब ! अजी !! देवता जी, कोई वेद का मन्त्र तो बोलिये जिसके यह विरुद्ध हो। यदि आप वेद विरुद्ध मन्त्र नहीं दिखला सकते हैं तो यह वेद विरुद्ध नहीं बल्कि वेदानुकूल ही है। अच्छा ! भला यह तो बताइये कि —स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में कहां लिखा है कि, जो माता छैः दिन के बाद भी दूध पिलायगी वह घोर नरक में जायेगी और जो पिता धायी का प्रबन्ध नहीं करेंगे तो—"**शूद्रवत् बहिष्कार्यः सर्वस्मात् द्विज कर्मणः**" उनको शूद्र की भांति सर्व ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों के कार्यों से निकाल देना चाहिए यह कहां लिखा है दिखाइये, ये तो साधारण स्वास्थ्य के नियम हैं स्त्री बच्चे को दूध पिलायेगी तो दुर्बल रहेगी, नहीं पिलायेगी तो शीघ्र स्वस्थ हो जायेगी, यह तो प्रत्यक्ष है तथा बुद्धि के अनुकूल है। अगर आप इसमें भी प्रमाण की आवश्यकता समझते हैं तो फिर लीजिये, मेरे पास तो प्रमाणों का भण्डार है प्रमाण पर प्रमाण लेते जाइये और पण्डित जी महाराज नोट करते जाइये—चरक संहिता के शारीरिक स्थान में लिखा है कि – **अतो धात्री परीक्षा मुपदेक्ष्यामः ॥१०६॥ अथ ब्रूयाद्धात्रीमानयेति, समान वर्णां यौवनस्थाँ निभृताम् नातुरामव्यङ्गामव्यसनामविरूपा अजुगुप्सितां देश जातीयामक्षुद्रकर्मिणीं कुले जातां वत्सलामरोग जीवद्वत्सां पुंवत्सां द्रोग्ध्रीमप्रमत्ता मशायिनीमनुच्चारशायिनीमनन्ता शायिनी कुशलोपचारां शचिमशुचिद्वेषिणीं स्तन्य सम्पद येतामिति ॥१०७॥** (चरक संहिता शारीरिक स्थान अध्याय ८ वाक्य १०६, १०७,) इसका अर्थ भी सुनिये—

जिससे यह भोली जनता जो बैठी हुई है यह भी अच्छी तरह समझ ले कि हां ! सच्चाई क्या है ? और आप भी ध्यान दीजिए पण्डित जी महाराज ! "अब धात्री की परीक्षा का वर्णन करते हैं ॥१०६॥ "इसके अन्नतर एक मनुष्य को कहे कि धात्री (धायी) को लाओ, वह धात्री अपने समान वर्ण की हो, युवा हो, अयोग्य न हो, रोग रहित हो। सर्वाङ्ग सम्पन्न हो कुरुप और कुचरित्र न हो। निन्दनीय न हो, अपने देश की हो, नीच न हो उत्तम कर्म वाली हो, अच्छे कुल की और बालक को प्यार करने वाली हो, जिसके अपने बच्चे जीते हों अर्थात् (**मृत वत्सा**) न हो, और लड़के वाली हो जिसके स्तनों में बहुत सा दूध हो, असावधान न हो, बहुत सोने वाली न हो, तथा बिना कहे कहीं एकान्त में सोने वाली न हो, जाति से पतित न हो, चतुर उत्तम आचार वाली हो, पवित्र हो, अपवित्रता से द्वेष करने वाली हो। जिसका दूध उत्तम हो, ऐसे गुणों वाली धात्री (धायी) उत्तम होती है ॥१०७॥ (यह टीका:—श्री वैद्य पंचानन वैद्यराज पण्डित रामप्रसाद जी वैद्योपाध्याय आयुर्वेदोद्धारक पटियाला स्टेट। छापाखाना वेंक्टेश्वर प्रैस बम्बई)

आगे आप वाक्य १०८ तथा ११४ में देखिये कि—"धायी के स्तन कैसे हों तथा उसके खान-पान के बारे में पूर्ण विवरण सहित दिया गया है। **इसी प्रकार सुश्रुत शारीर स्थान अध्याय १० वाक्य ४० से ४६ तक** देखिये। तथा—

"ततो यथा वर्णां धात्रीमुपेयान्मध्यप्रमाणां मध्यम् वयसमरोगां शीलवतीमचपर्नलमलोलुपाम-कृशामस्थूलां प्रसन्न श्री रामलम्बौण्ड्री मलम्बोस्तनी मव्यंगा मव्यसनिनीं जावद्वत्सां दोग्ध्रीं वत्सलामक्षुद्र

कर्मिणी कुले जातामतो भूयिष्ठैष्य गुणैरन्विंतां श्यामा आरोग्य बल वृद्धये बालस्य ॥३८॥ ततोर्ध्वस्तनी करालं कुर्यात लम्बस्तनी नासिका मुखं छादयित्वा मरणमापादयेत् ॥३९॥ टीका:—आरोग्य सुधाकर सम्पादक फ़र्रूखनगर निवासी पण्डित मुरलीधर शर्मा राजवैद्य कृत, छापाखाना, वैंक्टेश्वर प्रैस, बम्बई संवत् १९६८,)

यह तो दो प्रमाण हुए आयुर्वेद के, पण्डित जी महाराज ! अब आप अपना भी घर देखिये— **"शालि तण्डुल चूर्ण तु सदुग्धं दुग्धं कृद्भवेत् ॥१२॥ विदारी कन्द स्वरसं मूलं कार्पासजं तथा धात्री स्तन्य विशुध्यर्थं मुद्गयूष रसायनो ॥१३॥ स्तन्याभावेपयश्छागं गव्यं वा तद्गुण पिबेत् ॥१५॥** (गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय १७२, श्लोक १२, १३, १५, "वैंक्टेश्वर प्रैस बम्बई पृष्ठ ११२ संवत १९६३")

अर्थ—शालि चावलों का चूर्ण (आटा) दूध के साथ पीने से दूध बढ़ाने वाला होता है ॥१२॥ विदारीकन्द का स्वरस और कपास की जड़ तथा मूंग का यूष यह धायी के दूध को शुद्ध करने के लिए ॥१३॥ धायी का दूध न मिलने पर बकरी या गाय का दूध उसी गुण वाला पिये ॥१५॥ इसके साथ सत्यार्थ प्रकाश का लेख पढ़िये—

"प्रसूता का दूध छः दिन तक बालक को पिलावे पश्चात धायी पिलाया करे, परन्तु धायी को उत्तम पदार्थों का खान- पान मात-पिता करावें, जो कोई दरिद्र हो, धायी को न रख सके तो वे गाय या बकरी के दूध में उत्तम औषधि जो कि बुद्धि, पराक्रम, आरोग्य करने हारी हो, उनको शुद्ध जल में भिजो, औटा छान के दूध में समान जल मिला के बालक को पिलावें"……और जहां धायी गाय बकरी आदि का दूध न मिल सके वहां जैसा उचित समझे वैसा करे। क्योंकि प्रसूता स्त्री के शरीर के अंश से बालक का शरीर होता है इसी से स्त्री प्रसव समय निर्बल हो जाती है इसलिये प्रसूता स्त्री दूध न पिलावे।

"सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास-२"

हर बात के लिए वेद का प्रमाण मांगना अपने विषयक अज्ञान का परिचय देना है। वेद में मूल विधान होता है, न कि वेद में जीवन भर क्या-क्या, कब-कब खाना क्या-क्या पहनना सर्व दैनिक व्यवहार होते हैं। बड़ा आश्चर्य है कि आप शास्त्रार्थ तो इस विषय पर करते हैं कि—क्या-क्या वेद विरुद्ध हैं ? पर यह बिल्कुल नहीं जानते हैं कि वेद विरुद्ध और वेदानुकुल का लक्षण क्या है ? वेदानुकूल किसे कहते हैं ? तथा वेद विरुद्ध किसे कहते हैं ? महाराज जी ! भगवान जैमिनि जी मीमांसा दर्शन में कहते हैं कि—**"विरोधे त्वनपेक्ष्यं स्यादसति ह्यनुमानम्"** जिसका वेद में विरोध (निषेध) हैं, वह तो अनपेक्ष्य वेद विरुद्ध है, वेद में विरोधी वचन न होने पर वेदानुकूल है। मैं पूछता हूं कि क्या वेद में आप ऐसा वचन बता सकते हैं कि, धायी दूध न पिलावे या माता ही सदा दूध पिलाया करे, ऐसा कहा गया हो। मेरा दावा है आप कभी ऐसा वचन नहीं दिखा सकते। फिर धाया के दूध पिलाने को वेद विरुद्ध कहने का साहस आप किस प्रकार करते हैं ? हम यदि प्रमाण भी वेद का इस विषय पर न बता सकें तो भी यह इसलिए वेदानुकूल है कि इसके विरुद्ध वेद में एक भी वचन नहीं है। इसी अवस्था में यह वेद के अविरुद्ध है न कि विरुद्ध ! यह और भी महत्व की बात है कि वेद में भी पोषक प्रमाण हैं। सुनिये—**नक्तोषासा स मनसा विरुपे धापयेते शिशुमेकं समीची ॥२॥** यजुर्वेद अध्याय १२ मन्त्र २,)इस मन्त्र में उपमालंकार द्वारा बतलाया गया है कि दो भिन्न-भिन्न रूपों वाली, मन से एक बालक को अच्छे प्रकार दूध पिलाती

हैं, दो दूध पिलाने वाली कौन है ? माता और धाया ! इसी प्रकार यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ७० और ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त ९६ मन्त्र ५, तथा अथर्व वेद में भी है। एवं वाल्मीकीय रामायण में भी है कि श्री रामचन्द्र जी की धाया थी। देखिये—

साहर्षोत्फुल्ल नयनां पांडुर—क्षौम वासिनीम्। अविदूरे स्थितां द्रष्ट्वा धात्री प्रप्रच्छ मन्थरा ॥७॥
विदीर्यमाना हर्षेण धात्री तु परया मुद्रा। आचचक्षेऽय कुब्जायै भूयसी राघवे श्रियम् ॥१०॥
(बाल्मीकीय रामायण अयोध्या कांड, श्लोक ७ व १०,)

अर्थात् मन्थरा ने पास में खड़ी हर्ष से फूले नयनों वाली श्वेत रेशमी वस्त्र पहने हुए धायी को देखकर पूछा ॥७॥ एवं हर्ष से विदीर्यमान धायी ने बड़े प्रसन्नता से कुबड़ी को राम के राज्याभिषेक का प्रस्ताव बताया ॥१०॥ राजा सृंजय का पुत्र धायी के साथ गंगा के तीर पर खेलता था। देखो महाभारत—

ततो भागीरथी तीरे कदाचिन्निर्जने वने। धात्री द्वितोयो बाल स क्रीड़ार्थ पर्यधावत ॥३१॥
(महाभारत शान्ति पर्व अध्याय ३१ श्लोक ३१)

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री —

अरे ! ठाकुर साहब, माता छः दिन ही दूध पिलाये, और छः दिन के पीछे धायी दूध पिलावे इसका प्रमाण दीजिये ? बस ! और कुछ मत बखानिये !!

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

हर्ष है कि आपने धायी का दूध पिलाना तो स्वीकार कर लिया। अब प्रश्न केवल आपका यह शेष है कि—छः दिन माता दूध पिलावे, इसके पीछे धायी इसका प्रमाण दिया जावे। मैं कहता हूं आपकी क्या राय है ? धायी कब से दूध पिलावे एक दिन के पीछे या १०-१५-२० कितने दिन पीछे ? जो सीमा आप बाधेंगे उस पर भी वही प्रश्न होगा, कि इतने दिन क्यों ? पण्डित जी महाराज लोक व्यवहार में भी छः दिन ही माता दूध पिलावे यह परम्परा बहुत पुराने काल से क्या सदा से चली आयी प्रतीत होती है। तभी तो बातों बातों में सदा कहा जाता है कि तुमको छटी का दूध याद आ जायेगा। छटी के दूध का विशेष महत्व यही है कि, माता का यह अन्तिम दूध है। इसके पीछे माता का दूध नहीं मिलता। हां ! निर्धन के लिए यह व्यवस्था है कि, गाय या बकरी का दूध पिलावे, अगर यह भी न हो सके तो जैसा हो सके वैसा करे अर्थात् माता ही पिलाये ! ये सामान्य व्यवहार की बातें हैं। जो लाभदायक और युक्ति-युक्त हैं, ये कोई सिद्धान्त नहीं है। जैसे सन्ध्या न करने से शूद्र हो जाता है। वेदों को न पढ़ने से द्विज बनने पर भी शूद्र हो जाता है। ऐसा नियम यहां तो नहीं है कि, जो धायी का दूध न पियेगा, शूद्र हो जायेगा या जो माता-पिता धायी का प्रबन्ध न करेंगे, तो वे शूद्र हो जावेंगे, या नरक में जावेंगे। आप सिद्धान्तों पर तो प्रश्न कर नहीं सकते, छोटी-छोटी बातें पूछते हैं, बाल उखाड़ने से शरीर हल्का नहीं हो जाता ! पण्डित जी महाराज !!

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री —

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि कोई पुरुष मर जाय तो उसकी पत्नी पहिले नियोग कर ले, पीछे उसी लाश जलावे। वहां स्पष्ट है कि, लाश पड़ी है। इस मरे हुए पति की लाश को छोड़कर हे स्त्री तू हम जीवितों में से किसी को छांट कर उससे नियोग करले, उधर मरे हुए के पास उसके घर के सारे लोग रो-पीट रहे हैं, और स्वामी जी इधर नियोग की आज्ञा दे रहे हैं। इस पर कोई वेद का प्रमाण दीजिये।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सज्जनों! हद हो गयी, असत्य की कोई सीमा नहीं रही, पण्डित जी महाराज! यह लीजिये सत्यार्थ प्रकाश, दिखलाइये इसमें कहां लिखा है, कि लाश पड़ी हुई है, इसको छोड़कर नियोग कर लें लाश पीछे जलायी जावे, इतना सफेद झूठ! देखो महाराज जी! यदि आप यह सत्यार्थ प्रकाश में लिखा दिखला दें कि "**लाश पड़ी हुई है**" तो मैं यहीं सनातन धर्मी होने को तैयार हूं। अगर न दिखा सके तो आप आर्य समाजी बनने की घोषणा कर दें। वैसे हम आपको आर्य बनाने को तैयार नहीं हैं। हम चाहते हैं कि आप जो कुछ हैं वहीं रहे आवें, ताकि हमको आपके द्वारा आर्य सिद्धान्तों के प्रचार का शुभ अवसर मिलता रहे। पण्डित जी आपको शास्त्रार्थ से पहले मैं बार बार चैलेन्ज कर रहा था, कि आप नियोग पर ही शास्त्रार्थ कर लीजिये, क्योंकि नियोग पर आप प्रश्न करेंगे अवश्य ही। इस लिए सीधे आज उसी पर निपट लें, नियोग पर शास्त्रार्थ करने का आपका साहस न हुआ, अब और प्रश्नों की आड़ में नियोग पर ईंटे फेंक रहे हैं। आप आये तो वहीं पर हां! आये चोर द्वार से। आपके प्रश्न से पता चलता है, कि नियोग पर आपको कोई एतराज नहीं है। एतराज आपको यह है कि लाश पड़ी हुई के सामने नियोग नही करना चाहिये। क्योंकि पौराणिक मत में मरा हुआ आ जा भी सकता है, खा भी सकता है। आपके विचार में उसके देखते-देखते नियोग नहीं करना चाहिये। पीछे तो होना चाहिए। इस पर आपको कोई आपत्ति नहीं है। जो आपत्ति आप उठा रहे हैं वह उठ नहीं सकती। क्योंकि-सत्यार्थ प्रकाश में ऐसा लेख है ही नहीं, हां लाश पड़ी हुई होने पर नियोग या पुर्नविवाह की आज्ञा श्री सायणाचार्य जी ने इस मन्त्र के भाष्य में दी है। वह आपके माननीय अचार्य तथा गुरु हैं। उनका भाष्य यह है सुनिये और ध्यान दीजिये—

हे नारि! त्वं इतासुंगत प्राणं एतं पतिं उपशेषे उपेत्य शयनं करोषि उदीर्ष्व अस्मात् पति समीपादुदुतिष्ठ जीवलोकमभि जीवन्तं प्राणि समूहमभि लक्ष्य एहि आगच्छ त्वं हस्त ग्राभस्य पाणि-ग्राहवतः दिधिषो पुर्नविवाहेच्छोः पत्युः एतत् जनित्वं जायात्वं अभि सम्बभूब आभि मुख्येन प्राप्नुहि॥

पण्डित जी! **उदीर्ष्व नारी**...... आदि मन्त्र का ही यह सायण भाष्य है। इसी मन्त्र पर स्वामी दयानन्द जी ने लिखा है। देखिये सायण लिखते हैं कि—हे नारी! तू इस मरे हुए पति के समीप सो रही है। इसके पास से उठ और इन जीवित पुरुषों को देखकर आ जो इनमें, पुर्नविवाह की इच्छा करने वाला हो, उसकी पत्नी बन! कहिए लाश पड़ी हुई सायण जी ने लिखी है या स्वामी दयानन्द जी ने? तथा बताइये स्वामी जी ने "**लाश पड़ी हुई**" कहां लिखा है?

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

"एतम्" शब्द है उसका यही अर्थ है,' **'इस"** इससे यही पता लगता है कि, लाश वहीं पड़ी हुई है।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

"एतम्" शब्द तो वेद का है स्वामी दयानन्द जी का नहीं, यह तो वैसा ही आपके लिए भी प्रमाणिक है जैसा हमारे लिए है। फिर ऋषि दयानन्द जी के लेख पर प्रश्न न होकर यह आपका प्रश्न वेद पर हुआ। यदि **"एतम्"** का अर्थ यही है। इस मरे हुए पति की लाश, तो यह आज्ञा वेद की हुई। स्वामी दयानन्द जी की नहीं। कहिये वेद को भी तिलाञ्जली दे दी ? सत्यार्थ प्रकाश छोड़कर अब वेद पर ऐतराज करने लगे, तो लीजिये इसका उत्तर यह है कि—बहुत पुराना भी कोई प्रसंग उपस्थित हो तो, उसके लिए भी "**इस**" शब्द में **"एतम्"** का प्रयोग होता है। वहां यह वाक्य होगा कि—जिस मरे हुए के लिए तू वर्षों से रो रही है, इसकी आशा छोड़। यह है वेद के **"एतम्"** शब्द पर जो आपने प्रश्न उठाया है उसका उत्तर। आप वेद पर भी चाहे जितने प्रश्न करिये, मैं उत्तर दूंगा। नियोग पर तो आप शास्त्रार्थ करने से डरते हैं। परदे में आ-आकर उस पर प्रश्न करते हैं। देखिये इस **"उदीर्ष्वनारि……"** मन्त्र का विनियोग शौनक ऋषि के ऋग्विधान में नियोग के लिये ही है। इस मन्त्र पर मैं और भी अनेक प्रमाण दे सकता हूं कि—यह मन्त्र नियोग का ही विधान करता है। पर आप तो नियोग के विरुद्ध कुछ कहते ही नहीं। आपको तो एतराज सिर्फ इस पर है कि—नियोग लाश के पड़े रहते नहीं करना चाहिये। उसको भस्म करने के पश्चात् करना चाहिए। ऐसी भी जल्दी क्या ? इसमें मैं भी आपसे सहमत हूं। तथा दयानन्द जी भी।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

गर्भिणी स्त्री से न रहा जाये तो नियोग कर ले, स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि—जिस समय स्त्री गर्भवती हो उस समय उसके पति से न रहा जाये तो वह किसी और स्त्री से नियोग करके सन्तान उत्पन्न कर दे। यह कैसी गन्दी शिक्षा है ? क्या यह वेद के अनुकूल हो सकती है ? और कोई इसे मान सकता है ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

प्रत्येक प्रश्न पर यह पता लगता है कि—श्री पण्डित माधवाचार्य जी को नियोग पर कुछ ऐतराज नहीं है। नियोग को तो वह वेदादि सत्य शास्त्रों के सर्वथा अनुकूल मानते हैं। आपका अभिप्राय स्पष्ट है कि—नियोग तो हो, पर व्यास जी जैसे पुरुष करें। जिनकी पत्नी न हों, व्यास जी ने चित्राङ्गद और विचित्र वीर्य की पत्नियों अम्बिका और अम्बालिका से सत्यवती और भीष्म जी की इच्छानुसार नियोग करके धृतराष्ट्र और पाण्डु को उत्पन्न किया ऐसे तो नियोग अवश्य हो उन्होंने दासी से नियोग करके विदुर जी को उत्पन्न किया, पर गर्भिणी स्त्री का पति नियोग क्यों करे ? यह पण्डित जी का प्रश्न है, मेरा निवेदन यह है कि, स्वामी जी महाराज का भी यही अभिप्राय वहां नियोग को सिद्ध

करना नहीं है महाराज का अभिप्राय यह है कि गर्भिणी स्त्री के साथ कभी किसी अवस्था में भी किसी पुरुष को मैथुन नहीं करना चाहिए। गर्भिणी स्त्री के साथ मैथुन करने से गर्भ गिर जाने का भय होता है तथा बालक के व्यभिचारी होने की पूरी सम्भावना है कि—उत्पन्न होकर और बड़ा होकर दुराचारी हो। गर्भिणी स्त्री के साथ किसी को कभी भी मैथुन नहीं करना चाहिए। जब गर्भिणी स्त्री के साथ समागम का निषेध हो गया, तो स्वाभाविक रूप में प्रश्न उत्पन्न हुआ कि "गर्भवती स्त्री के साथ समागम न करे" पर न रहा जाये तो क्या करे? श्री भर्तृहरि जी ने कहा है कि—

मत्तेभ कुम्भ दलने भुवि सन्ति शूराः, केचित् प्रचण्ड मृगराज बधेऽपि दक्षाः।
किन्तु ब्रवीमि बलिनां पुरतः प्रसह्यः, कन्दर्प-दर्प दलने विरलो मनुष्यः ॥५८॥

(भर्तृहरि शृंगार शतक श्लोक ५८,)

मस्त हाथियों के माथे फोड़ने वाले भी भूमि पर शूर हैं। कोई भंयकर शेरों को भी मारने में होशियार हैं, परन्तु काम को वश में करने वाले मनुष्य दुर्लभ हैं। आगे उन्हीं का वचन है कि—

विश्वामित्र पाराशर प्रभृतयो वाताम्बु पर्णाशना,स्तेऽपि स्त्री मुख पंङ्कजं सुललितं दृष्टै व मोहं गताः।
शाल्यन्नं सघृतं पयोदधियुतं भुञ्जन्ति ये मानवा, स्तेषामिन्द्रियनिग्रहो यदि भवेद्विन्ध्यस्तरेत्सागरम् ॥

(भर्तृहरि शृंगार शतक श्लोक ६५,)

विश्वामित्र और पाराशर जैसे ऋषि जो वायु, पानी, और पत्ते खाते थे वे भी स्त्री के मुख कमल को देखकर मोहित हो गये। विश्वामित्र ने मेनका से प्यार किया तो शकुन्तला उत्पन्न हुई। और पाराशर ने कुआंरी सत्यवती से व्यभिचार किया तो व्यास जी उत्पन्न हुए। जो लोग चावल, घी दूध, दही, शहद खाते हैं, उनकी इन्द्रियों का निग्रह यदि हो जाये तो विन्ध्याचल पहाड़ समुद्र को तर जाए, भर्तृहरि जी कहते हैं, कि विन्ध्याचल या किसी भी पहाड़ का समुद्र को तरना जैसा असम्भव है ऐसा ही सामान्य रूप से मनुष्य का "**काम**" को वश में करना असम्भव है। योगियों की बात और है। स्वाभाविक रूप से प्रश्न उठता है कि—गर्भवती स्त्री के पति से न रहा जाए तो वह क्या करे? स्वामी जी का मत यह है कि—गर्भवती से समागम कदापि न करे। वेश्यागमन भी न करे। अड़ोस-पड़ोस की किसी बहु-बेटी को भी भ्रष्ट करने का पाप न करे। किसी सन्तानहीन विधवा को ढूंढ़ें, और पंचों की अनुमती से उसके साथ नियोग करके सन्तान उत्पन्न कर दें। गर्भ की रक्षा भी हो गई, और वह पुरुष भी व्यभिचार से बच गया। तथा एक सन्तानहीन और चाहने वाली को सन्तान मिल गई। इसमें आपको क्या आपत्ति है? आप ही बताइए कि—जो पुरुष ब्रह्मचारी रह जाएं वह तो धन्य है। पर जिससे न रहा जाय जैसा तुम्हारे ऋषियों से न रहा गया तो, फिर वह क्या करे? आपकी राय क्या है? गर्भिणी से ही मैथुन करे। गर्भ की कुछ परवाह न करे या वेश्यागमन करे, या अड़ोस-पड़ोस की बहू-बेटियों को भ्रष्ट करे? कहिये क्या करे? वेदों शास्त्रों और इतिहासों में जिस नियोग की स्पष्ट आज्ञा है, उसे न करेगा, तों उसको वही पाप करने पड़ेंगे। आपके पांचवे वेद महाभारत में तो बहुत ही भंयकर बात लिखी है। सो सुनिये—उतथ्य की पत्नी ममता और देवों के गुरु बृहस्पति की कथा—

अथोतथ्य इति स्यात आसोद्धी मानुषिःपुरा। ममता नाम तस्यासीद्भार्या परम सम्मता ॥६॥
उतथ्यस्य यवीयांस्तु पुरोधास्त्रि दिवौकसाम्। बृहस्पतिर्बृहत्तेजा ममतामन्वपद्यत ॥१०॥
उवाच ममता तन्तु देवरं वदतां वरम्। अन्तर्वत्नि त्वहं भ्राता ज्येष्ठो नारम्यतामिति ॥११॥
अयंच मे महा भाग कुक्षावेव बृहस्पतेः। औतथ्यो वेद मात्रापि षड्ंगंम प्रत्यधीयत ॥१२॥
अमोघ रेतास्त्वं चापि द्वयो नस्त्यित्र सम्भवः। तस्मादेवं गते त्वद्य उपारमितु महर्षि ॥१३॥
एव मुक्तस्तदा सम्यगबृहस्पति रूधारधीः। कातमात्मानं तदात्मानम् शशाक नियच्छितुम् ॥१४॥

(महाभारत आदिपर्व अध्याय श्लोक ६ से १४)

अर्थ :—पहिले उतथ्य नाम वाले एक महाबुद्धिमान और प्रसिद्ध ऋषि हुए थे। उनकी ममता नाम वाली स्त्री थी, उस स्त्री के साथ उनका बड़ा प्रेम था ॥६॥ एक दिन उतथ्य ऋषि का महातेजस्वी छोटा भाई बृहस्पति जो देवताओं का गुरु कहलाता है। उसको काम की अभिलाषा हुई, इस कारण वह अपनी भाभी ममता के पास गया ॥१०॥ उस बोलने वालों में श्रेष्ठ अपने देवर बृहस्पति से ममता कहने लगी, कि—हे बृहस्पति! तुम्हारे बड़े भाई से मुझे गर्भ रह गया है। इस कारण तुम दूर रहो ॥११॥

नोट :—इससे पता चलता है कि—वह पहले भी उसके पास जाता होगा। और वह उसको कभी इन्कार नहीं करती होगी। और हे महाभाग बृहस्पति! मेरे गर्भ में औतथ्य नाम का पुत्र है। वह गर्भ में ही वेदों को पढ़ा हुआ है ॥१२॥ और हे बृहस्पति! तुम अमोघ वीर्य वाले हो इस कारण यह एक गर्भ और दूसरे गर्भ को मैं धारण नहीं कर सकूंगी। इस कारण आपको यह काम बन्द रखना चाहिए ॥१३॥ अपनी भाभी के ऐसे उत्तम वचन सुनकर उदार बुद्धि वाले बृहस्पति जी अपने कामातुर मन को वश में नहीं रख सके ॥१४॥ आगे क्या हुआ देखिये :—

स बभूव ततः कामी तया सार्द्ध मकामया। उत्सृजन्तन्तु तं रेतः सगर्भस्थोऽभ्य भाषत ॥१५॥
भोस्तात मागमः कामं द्वयोर्न्नास्तीह संभवः। अल्पावकाशो भगवन् पूर्व महमिहागतः ॥१६॥
अमोघ रेताश्च भवान्न पीड़ां कर्त्तु महंसि। अश्रुत्वैव तुतद्वाक्यं गर्भस्थस्य बृहस्पतिः ॥१७॥
जगाम मैथुनायैव ममतां चारु लोचनाम। शुक्रोत्सर्ग ततो बुद्धवा तस्या गर्भगतो मुनिः ॥१८॥
पद्भ्यामरो धयन्मार्ग शुक्रस्य च बृहस्पतेः। स्थानमप्राप्तमथ तच्छुकं प्रतिहितं तदा पपात सहसा भूमौ ततः क्रुद्धो बृहस्पतिः ॥१९॥

(महाभारत आदि पर्व अध्याय १०४, श्लोक १५ से १९)

(टीकाकार श्री पण्डित रामस्वरूप ऋषिकुमार, सनातन धर्म पताका प्रेस मुरादाबाद)

और उस स्त्री की इच्छा नहीं थी, तो भी वह उसके साथ समागम करने में तत्पर हुए। और वीर्यपात करने लगे, उस समय गर्भ में का बालक उनसे कहने लगा, कि ॥१५॥ हे तात बृहस्पति जी! तुम काम व्यापार को त्याग दो, हे भगवन्! इस गर्भ स्थान में मैं पहले से ही आया हुआ हूं, इस कारण अवकाश भी थोड़ा ही है ॥१६॥ और आपका वीर्य अमोघ है। तथा जिसमें मुझको पीड़ा हो ऐसा काम करना आपको उचित नहीं है। गर्भ में से बालक की इन बातों को कुछ भी न सुनकर बृहस्पति जी ॥१७॥ अपनी सुन्दर नेत्रों वाली भाभी ममता के साथ गमन करने लगे, और वीर्यपात होना ही चाहता हैं। यह जानकर गर्भ में बैठे मुनि ने अपने दोनों पैरों से बृहस्पति का वीर्य गिरने के मार्ग

को रोके रक्खा, इस प्रकार वीर्य का मार्ग रुक जाने से बृहस्पति का वीर्य गर्भस्थान में न जाकर पृथ्वी पर जा गिरा। बृहस्पति अपने वीर्य को भूमि पर गिरा हुआ देखकर क्रोध में भर गये ॥१६॥ उस गर्भस्थ बालक को बृहस्पति ने शाप दे दिया कि तू अन्धा उत्पन्न होगा। फलतः वह बालक अन्धा ही जन्मा और उसका नाम दीर्घतमा हुआ जो बाद में एक ऋषि के नाम से विख्यात हुआ।

नोट : - उपरोक्त प्रमाण को जब श्री पण्डित अमर सिंह जी महाभारत को हाथ में लेकर पढ़ते हुए सुना रहे थे तब श्री माधवाचार्य जी ने शोर मचाया कि – देखिये यह क्या कर रहे हैं ?

श्री पण्डित जी ने गर्जकर कहा —क्यों ऐसा प्रश्न आपने उठाया था ? अब मैं उत्तर देता हूं तो क्यों चिल्लाते हो ? मैं क्या कर रहा हूं ? आपकी पुस्तक पढ़कर सुना रहा हूं। अभी तो आगे देखना क्या-क्या सुनाऊंगा।

देखो पण्डित जी! इसीलिए ऋषि दयानन्द जी महाराज ने गर्भिणी गमन का निषेध किया है। अब बताइये आपके देवों के गुरु बृहस्पति का ममता गर्भिणी के साथ सनातन धर्म (व्यभिचार) करना ठीक रहा या महर्षि व्यास की भांति किसी सन्तानहीन अर्थात् सन्तान चाहने वाली के साथ नियोग करना अच्छा होता ? सुनिये महाराजा धृतराष्ट्र ने ऐसा किया भी, यथा—

गांधार्यां क्लिश्यमानायामुदरेण च विवर्धता। धृतराष्ट्रं महाराजं वैश्या पर्यचरत् किल ॥३६॥
तस्मिन् संवत्सरे राजन् धृतराष्ट्रान्महायशाः। जज्ञे धीमांस्ततस्तस्यां युयुत्सुः करणो नृपः ॥४०॥

(महाभारत आदि पर्व अध्याय ११५ श्लोक ३६, ४०,)

अर्थ :—गान्धारी कलेश में थी, गर्भ से पेट बहुत बढ़ बड़ा गया था तब तक वैश्या (वैश्य की स्त्री) धृतराष्ट्र की सेवा करती थी ॥३६॥ उसी वर्ष में हे राजन् महा यशस्वी धृतराष्ट्र से उस वैश्या में युयुत्सु नामक धृतराष्ट्र का पुत्र पैदा हुआ ॥४०॥

अब धर्म से कहिए पण्डित जी ! कि बृहस्पति का काम ठीक है या धृतराष्ट्र का ? यदि पक्षपात छोड़कर सोचेंगे तो अवश्य ही कहना पड़ेगा कि बृहस्पति का गर्भिणी भाभी से सनातन धर्म करना बहुत ही बुरा था। और धृतराष्ट्र अपनी स्त्री गान्धारी को गर्भिणी देखकर वैश्य की पत्नी से नियोग कर लिया। यह उससे लाख गुणा अच्छा है। इसलिए आपको सदा ऋषि दयानन्द जी की बात को ही मानना चाहिए।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

पति परदेश गया हो तो पत्नी नियोग करले, सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि पति परदेश गया हो तो पत्नी पीछे किसी पुरुष से नियोग कर ले। देखो स्वामी जी ने कितने अनर्थ की बात लिख दी है। अब बेचारा घर से बाहर गया और पत्नी ने नियोग कर लिया, अब बताइये यदि पति लौट कर आ जाए तो वह पत्नी किसकी रहे ? और नियोग से सन्तान उत्पन्न हो जाये वह फिर किसकी हो ? श्री ठाकुर जी महाराज तो यहां शास्त्रार्थ करने आये हैं। पीछे का डर लग रहा होगा कि ठकुरानी जी नियोग न कर लें...।

नोट :—(यह ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ महारथी के लिए कहा गया था) इस पर जनता में बड़ी खलबली मची तथा माधवाचार्य को लोग गाली देने लगे, मारो जूते, पीटो, मारो ! मारो !! मारो !!! (कई आदमी पण्डित जी पर जा चढ़े, जिनको बड़ी मुश्किल से रोका गया और बड़ी मुश्किल से शान्ति स्थापित की गई ।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी नियोग पर सीधे प्रश्न या सीधा शास्त्रार्थ नहीं करते हैं । डर है कहीं पोल न खुल जाये पौराणिक ग्रन्थों में नियोग के सैकड़ों प्रमाण भरे पड़े हैं । इसलिए नियोग पर सीधा शास्त्रार्थ न करके अगल-बगल से छुपी-छुपी चोटें करते हैं । आपने पूछा है कि—परदेश गये हुए पति की पत्नी नियोग कर लेगी तो जब पति परदेश से आ जायेगा तो वह पत्नी किसकी होगी ? और सन्तान किसकी रहेगी ? इस प्रश्न से पता चलता है कि, पण्डित जी को यह भी पता नहीं है कि नियोग है क्या ? इसलिए पहले मैं बताता हूं कि नियोग क्या है ?

देवराद्वा सपिण्ड़ाद्वा स्त्री सम्यङ्निनयुक्तया । प्रवेप्सिताधि गन्तव्या सन्तानस्यः परिक्षये ।।५९।।
विद्यवायां नियुक्तस्तु धृताक्तो वाग्यतो निशि । एक मुत्पादयेत्पुत्रां न द्वितीयं कथंचन ।।६०।।
द्वितीयमेके प्रजननं मन्यन्ते स्त्रीषुतद्विदः । अनिर्वृतं नियोगार्थं पश्यन्तो धर्मतस्तयोः ।।६१।।
विद्यवायां नियोगार्थे निर्वृतेतु यथा विधि । गुरु वच्च स्नुषा वच्च वर्त्तेयातां परस्परम् ।।६२।।
(मनुस्मृति अध्याय ९, श्लोक ५९ से ६२)

इन्ही श्लोकों पर कुलूक भट्ट की टीका देखने योग्य है—

देवरादिति ।। सन्तानाभावे स्त्रिया पत्यादि गुरु नियुक्तया देवरादन्यास्मद्वा सपिण्डाद्वक्ष्यमाण घृताक्तादि नियम वत्पुरुष गमनेनेष्ठाः प्रजा उत्पाद पितव्याः । ईप्सितेत्यभिधानमर्थात्कार्याक्षम पुत्रोत्पत्तौ पुनर्गमनार्थम् ।।५९।। विधवामिति ।। धिधवामित्य पत्यादि गुरु नियुक्तो घृताक्त सर्वगात्रो मौनी रात्रावेक पुत्रं जनयेत्र कथचि द्वितीयम् ।।६०।। द्वितीयमिति ।। अन्ये पुनराचार्या नियोगात्पुत्रो-त्पादन विधिज्ञा अपुत्रा एक पुत्रा इति शिष्ट प्रवादाद निष्पन्न नियोग प्रयोजनं मन्यमानाः स्त्रीषु पुत्रोत्पदानं द्वितीयं धर्मतो मन्यन्ते ।।६१।। विधवामिति विधवादिकायां नियोग प्रयोजने गर्भधारणे यथा शास्त्रं सम्पन्ने सति ज्येष्ठो भ्राता कनिष्ठ भ्रातृ भार्या च परस्परं गुरुवत्स्नुपावच्च व्यवहारेताम ।।६२।।

अर्थ :—सन्तान के अभाव में जो पति और गुरु आदि द्वारा नियुक्त की गई है वह देवर से या अन्य (सपिंड) परिवारिक जन से कहे हुए घृत लिप्त शरीर के नियम सहित पुरुष गमन द्वारा इच्छित सन्तान उत्पन्न करनी चाहिये ।।५९।। विधवा में बड़ों की आज्ञानुसार शरीर में घृत लगा कर मौन रह कर रात्रि में एक पुत्र उत्पन्न करे दूसरा नहीं ।।६०।। कुछ आचार्य जो नियोग द्वारा पुत्र उत्पन्न करने की विधि को जानते हैं वह एक पुत्र को अपुत्र जानते हुए, दूसरा पुत्र उत्पन्न करना भी धर्म मानते हैं ।।६१।। विधवादि में (विधवा आदि से प्रयोजन यह है कि—विधवा हो चाहे सधवा नियोग दोनों में हो सकता है)नियोग प्रयोजन गर्भ धारण यथा शास्त्राज्ञा पूरी हो जाने पर बड़ा भाई और छोटेभाई

की स्त्री दोनों परस्पर "**गुरुं वत् स्नुषावत् वर्ते**"। अर्थात् छोटे भाई की स्त्री पति के बड़े भाई को गुरु समान समझें, और बड़ा भाई छोटे भाई की पत्नी को पुत्रवधु के समान समझे ।।६२।।

मनुप्रोक्त इस नियोग विधि से नियोग सन्तान के लिए किया जाता है और गर्भाधान तक ही वह सम्बन्ध रहता है। गर्भाधान के पश्चात् वह सम्बन्ध रहता ही नहीं, फिर यह पूछना कि, परदेश से पति के आ जाने पर वह पत्नी किस की रहेगी ? यह प्रकट करता है कि—पण्डित माधवाचार्य जी ग्रंथों को पढ़ते कभी नहीं हैं। "**येन केन प्रकारेण कुर्यात् सर्वस्य खण्डनम्**" ही आपका प्रयोजन है। "ठाकुर जी शास्त्रार्थ करने आये हैं। ठकुरानी जी पीछे नियोग न कर लें," यह यद्यपि व्यक्तिगत है। तथापि यह वचन भी उनका यही सिद्ध करता कि, पढ़ते-लिखते कुछ भी नहीं हैं। यह भी कि—सत्यार्थ प्रकाश में यह लिखा है। किसी से सुना है, पढ़ा नहीं। यदि पढ़ा होता तो शास्त्रार्थ को जाने के पीछे नियोग करने की बात आप कदापि नहीं कहते। वहां सत्यार्थ प्रकाश में मनुस्मृति अध्याय-९ श्लोक ७६ का यह प्रमाण दिया है देखिये—

प्रोषितो धर्म कार्यार्थं प्रतीक्ष्योऽष्टौनरः सभाः। विद्यार्थ षट यशोऽर्थ वा कामार्थ त्रीस्तु वत्सरान् ।।७६।।

(मनुस्मृति अध्याय ९, श्लोक ७६,)

इस पर यह लिखा है कि पति धर्मकार्य के लिए गया हो तो पत्नी उसकी प्रतीक्षा ८ वर्ष तक करे विद्या वा यश के लिए परदेश गया हो तो छः वर्ष और अगर धन कमाने के लिए परदेश गया हो तो, तीन वर्ष प्रतीक्षा करे। पश्चात नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कर ले, कहिए कोई ठाकुर या ब्राह्मण शास्त्रार्थ करने गया हो तो, ठकुरानी या पण्डितानी नियोग कर ले, यह किन शब्दों से निकलता है ? यहां तो धर्म कार्यार्थि गये हुए की पत्नी को आठ वर्ष तक प्रतीक्षा करने की आज्ञा है। हां आपको भय हो सकता है। कहीं—पण्डितानी नियोग न कर लें क्योंकि भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व ३ अध्याय ३३ में देखे। वहां एक त्रिपाठी ब्राह्मण की कथा लिखी है जो केवल दुर्गा सप्तशती का पाठ करने गया था, और उसकी पत्नी ने उसके पीछे एक लकड़ी ढोने वाले निषाद को पांच रुपया देकर उससे सनातन धर्म करवा लिया वह गर्भवती हो गई देखिये वहां पर लेख इस प्रकार है, सुनिये—

विक्रमादित्य राज्ये तु द्विजः कश्चिदभूदवि। व्याध कर्मेति विख्यातो ब्राह्मणायां शुद्राणेऽभवत् ।।३।।
त्रिपाठिनो द्विजस्येव भार्या नाम्नाहि कामिनी। मैथुनेच्छावती नित्यं मदाघूर्णित लोचना ।।४।।
द्विज स्सप्तशतो पाठे वृत्यर्थी कर्हिचिद्रतः। ग्रामे देवलके रम्ये बहु वैश्य निषेविते ।।५।।
तत्र मासो गतः कालो नापसौ सस्वमन्दिरम्। तदातु कामिनी दुष्टा रूप यौवन संयुता ।।६।।
दृष्ट्वा निषादं सबलं काष्ट भारोपजिविनम्। तस्मै तत्वा पंचमुद्रा बुभुजे काम पीडिता ।।७।।
तदा गर्भं दधौसाच व्याध वीर्येण संचितम्। पुत्रोऽभूदृश मासान्ते जात कर्म पिता करोत् ।।८।।

(भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व ३, अध्याय ३३, वाक्य ३ से ८,)

अर्थ :—विक्रमादित्य के राज्य में एक ब्राह्मण व्याध कर्मा नाम का हुआ जो ब्राह्मणी में शुद्र से उत्पन्न हुआ था ।।३।। त्रिपाठी ब्राह्मण की पत्नी नित्य मैथुन की इच्छा रखने वाली थी ।।४।। ब्राह्मण किसी ग्राम के सुन्दर मन्दिर में दुर्गा सप्तदशी का पाठ करके कुछ धन कमाने के लिए ऐसे ग्राम में गया हुआ था, जिसमें बहुत धनवान वैश्य रहते थे ।।५।। एक मास तक वह अपने घर नहीं आया

उस समय उसकी पत्नी जो रूप यौवन सम्पन्ना थी ।।६।। उसने एक निषाद को देख कर जो बलवान था और लकड़ी ढोकर गुजारा करता था उसको पांच रुपया देकर काम पीड़िता ने उससे भोग कराया ।।७।। उस समय उसको गर्भ रह गया, जो व्याध के वीर्य से था । दश मास के अन्त में पुत्र हुआ, पिता ने उसका जात कर्म संस्कार किया ।।८।। यही लड़का बड़ा होकर महाराजा विक्रमादित्य के एक यज्ञ में आचार्य बना था, यही डर पण्डित जी को है ।

नोट :—(इस कथा पर पौराणिक दल बहुत बिलबिलाया) इस पर पण्डित माधवाचार्य जी ने भी शोर मचाया और कहा—देखिये यह क्या कर रहे हैं । श्री पण्डित अमर सिंह जी ने कहा—मैं कुछ नहीं कर रहा केवल आपकी पुस्तक पढ़कर सुना रहा हूं । पौराणिक दल में से आवाज आई "शास्त्रार्थ बन्द कराइये ।"

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर जी महाराज मेरा प्रश्न यह हैं कि यह कहां लिखा है कि, आठ वर्ष, छह वर्ष और तीन वर्ष प्रतीक्षा करके फिर नियोग कर ले, श्लोक में तो यही है कि—इतनी देर प्रतीक्षा करे । इसके पीछे पति के पास चली जाये ।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज ! श्लोक में न यह है कि—पति के पास चली जाए, न यह है कि—नियोग कर ले । फिर प्रतीक्षा के पीछे क्या करे ? यह प्रश्न अवश्य उठता है । आठ वर्ष की लम्बी प्रतीक्षा नियोग के लिए तो जंचती हैं । पर पति के पास जाने के लिए किसी अवधि विशेष का नियम आपकी ही समझ में आ सकता है । प्रतीक्षा किसी और की नहीं, पति के पास आठ वर्ष तक न जाए, आठ वर्ष के पीछे जाए, यह सर्वथा अयुक्ति युक्त है । प्रतीक्षा के बाद नियोग करले इसके बहुत प्रमाण हैं । यथा नारदीय मनु संहिता—

पत्यौ प्रव्रजिते नष्टे क्लीवेऽथ पतितेमृते । पांचस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते ।।९९।।
अष्टौवर्षाण्युदीक्षेत ब्राह्मणं प्रोषितं पतिम् । अप्रसूता तु चत्वारि परतोऽन्यं समाश्रयेत् ।।१००।।
क्षत्रिया षट् समस्तिवेदप्रसूता समात्रयम् । वैश्या प्रसूता चत्वारि द्वे समे अप्रजा वसेत् ।।१०१।।
नचशूद्रायाः स्मृतः कालो नचधर्म व्यतिक्रमः। विशेषतोऽप्रसूतायाः संवत्सर परा स्थितिः ।।१०२।।

अर्थ :—पति के संन्यासी होने, पता न लगने, नपुंसक होने पतित होने वा मर जाने इन पांच आपत्तियों में स्त्री को दूसरे पति का विधान है ।।९९।। ब्राह्मणी परदेश गये पति की आठ वर्ष तक प्रतीक्षा करे । यदि सन्तान उत्पन्न न हुई हो तो चार वर्ष की प्रतीक्षा करे बाद में अन्यथा नियोग का सहारा ले ले ।।१००।। क्षत्रिय की स्त्री छैः वर्ष प्रतीक्षा करे सन्तान न हुई हो तो तीन वर्ष की प्रतीक्षा करे । वैश्य की पत्नी चार वर्ष प्रतीक्षा करे सन्तान न हुई हो तो दो वर्ष प्रतीक्षा करे ।।१०१।। शूद्र की स्त्री के लिए कोई समय नियम नहीं है न धर्म की हानि है । विशेष करके जिसके सन्तान न हुई हो अधिक से अधिक समय उसके लिए एक वर्ष है । इससे अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए । और नियोग कर

लेना चाहिए ॥१०२॥ इसी प्रकार वशिष्ठ स्मृति अध्याय १७ के श्लोकों में कहा गया है देखिये और ध्यान से सुनिये—

प्रोषित पत्नी पंचवर्षा प्रवसेत् यदि अकामा यथा प्रेतस्य एवं च वर्तितव्यं स्यात् ॥६८॥ एवं पंच ब्राह्मणी प्रजाता चत्वारि राजन्या प्रजाता त्रीणी वैश्या प्रजाताद्वे शूद्रा प्रजाता। अतः ऊर्ध्व समानोदक पिंड जन्मर्षिगोत्राणां पूर्वः पूर्वोगरीयान्। न खलु कुलीने विद्यमाने पर गामिनी स्यात् ॥

(वशिष्ठ स्मृति अध्याय १७ पृष्ठ ४७६ श्री वेङ्कटेश्वर प्रैस (गुटका) सं० १९६५,)

अर्थ :—जिसका पति परदेश गया हो वह स्त्री यदि इच्छा को रोक सके तो पांच वर्ष तक प्रतीक्षा करके जैसा मरे पति की स्त्री बर्ताव करती है वैसा बर्ताव करे। इसी प्रकार पांच वर्ष ब्राह्मणी सन्तान वाली, चार वर्ष क्षत्राणी सन्तान वाली, तीन वर्ष वैश्य सन्तान वाली और दो वर्ष शूद्रा सन्तान वाली, (प्रतीक्षा में रहे) इसके पीछे अपने निकट सम्बन्धी सपिण्ड, सगोत्र, सजातीय में से पहिला पहिला अच्छा है। (उससे नियोग कर ले) निश्चय ही कुलीन के विद्यमान होते हुए पराये जाति गोत्र और कुल वाले के साथ नियोग (गमन) न करे॥ वशिष्ठ स्मृति गुरु ग्रन्थ माला कलकत्ता संवत २००९ की छपी में इस प्रकार है। सुनिये—

एवं ब्राह्मणी पंच प्रजाता अप्रजाता चत्वारि, राजन्या प्रजाता पंच अप्रजाता त्रीणि। वैश्या प्रजाता चत्वारि अप्रजाता द्वे, शूद्रा प्रजातात्रीणि अप्रजातैकम् ॥६९॥ अतः ऊर्ध्व समानोदकपिण्ड जन्मर्षिगोत्राणां पूर्वः पूर्वो गरीयान् ॥७०॥ न तु खलु कुलीने विद्यमाने पर गामिनी स्यात् ॥७१॥

(वशिष्ठ स्मृति अध्याय १७ पृष्ठ १५१५ स्मृति संदर्भ भाग ३)

अर्थ :—इस प्रकार सन्तान जिसके हो चुकी वह ब्राह्मणी पांच, जिसके नहीं हुई वह चार वर्ष, क्षत्राणी सन्तान हुई पांच, बिना सन्तान तीन, वैश्य की सन्तान हुई चार, बिना हुई दो, शूद्रा सन्तान हुई तीन, बिना सन्तान एक वर्ष (पति के परदेश जाने पर प्रतीक्षा में रहे)। उसके बाद पति के कुल, गोत्र या जाति वाले से नियोग कर ले। पराये कुल, गोत्र और जाति वाले से गमन कदापि न करें। इसी प्रकार—कौटिल्य अर्थ शास्त्र में देखिये—

ब्राह्मणमधीयानं दश वर्षाणि अप्रजाता द्वादश प्रजाता राजपुरुष मायुः क्षयादा कांक्षेता ॥३०॥

अर्थात् पढ़ने के लिए बाहर गये हुए ब्राह्मणों की स्त्रियां दस वर्ष और सन्तान वाली बारह वर्ष तक पति की प्रतीक्षा करें। तथा अगले वाक्य में कहा गया है कि—यदि कोई व्यक्ति राजा के किसी कार्य के लिए बाहर गया हो तो उसकी स्त्री आयु पर्यन्त उसकी प्रतीक्षा करे देखिये—"**सर्वणतश्च प्रजाता नायवादम् लभेत ॥३१॥** अर्थात यदि किसी समानवर्ण (ब्राह्मणादि) पुरुष से किसी स्त्री के बालक उत्पन्न हो जाए तो निन्दा को प्राप्त न हो। अर्थात् अपने पति की अनुपस्थिति में दूर देश में गये हुए की पत्नी पति के सवर्ण के साथ नियोग करके सन्तान उत्पन्न कर ले तो वह स्त्री और बालक भी निन्दा और अपमान को प्राप्त न हो ॥३१॥ आगे देखिये—"**कुटुम्भाधिलोपे वा सुखातस्थैर्विमुक्तायथेष्टं विन्देत जीवितार्थम् ॥३२॥** अर्थात् कुटुम्ब की सम्पत्ति का नाश होंने पर (या कुटुम्ब की वृदि रुक जाने पर अर्थात् कोई बच्चा आदि न रहने पर) अथवा समृद्ध बन्धु बान्धवों से छोड़े जाने पर कोई स्त्री जीवन

निर्वाह के लिये अपनी इच्छा के अनुसार अन्य विवाह कर सकती है ॥३२॥ एक दो नहीं अनेकों प्रमाण हैं आगे देखिये—

"तीर्थोपरोधो हि धर्मवध इति कौटिल्यः ॥४२॥ दीर्घप्रवासिनः प्रव्रजितस्य प्रेतस्य वा भार्या सप्ततीर्थान्या कांक्षेत ॥४३॥ संवत्सरं प्रजाता ॥४४॥ ततः पतिसोदर्यं गच्छेत् ॥४५॥ बहुषु प्रत्यासन्नं धार्मिक भर्मसमर्थ कनिष्ठंमार्ग वा ॥४६॥ तद्भावेऽप्यसोन्दर्यं सपिण्ड कुल्यं वासन्नस् ॥४७॥

अर्थ—ऋतु काल का उपरोध होना (ऋतुकाल में पुरुष संगम न होना) धर्म के नाश हो जाने के बराबर है यह आचार्य कौटल्य का मत है ॥४२॥ जो पुरुष सदा के लिये स्त्री से वियुक्त हो गया हो, अर्थात् सन्यासी हो गया हो, या मर गया हो तो उसकी पत्नी सात मासिक धर्मों तक रुके ॥४३॥ (अर्थात् इतने समय तक नियोग या पुर्नविवाह न करे)। यदि सन्तान हो तो एक वर्ष तक रुके ॥४४॥ उसके पश्चात् पति के सगे भाई के साथ नियोग या पुर्नविवाह कर ले ॥४५॥ यदि पति के सगे भाई न हो तो उनमें से जो अधिक निकट छोटा भाई हो। (अर्थात् पति के और उसके बीच में और कोई भाई न हो) तथा वह धार्मिक और भरण पोषणादि करने में समर्थ हो उसके साथ नियोग या पुर्नविवाह सम्बन्ध कर लेवे। अथवा पति के जिस भाई के पत्नी न हो उसके साथ नियोग या पुर्नविवाह सम्बन्ध कर लेवे ॥४६॥ यदि पति का सगा भाई कोई न हो, तो समान गोत्र वाले उसी के किसी पारिवारिक भाई के साथ नियोग या पुर्नविवाह कर ले ॥४७॥

प्रयोजन यह है कि—पति के जो समीप से समीप सम्बन्ध का भाई हो उसके साथ नियोग या पुर्नविवाह करना ठीक है।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि—स्त्री योनि संकोचन करे यह स्वामी जी का अपना अनुभव था क्या ? यह वेदों में कहाँ लिखा है ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

योनि संकोचन का अनुभव तो आपको होगा, स्वामी जी को क्यों होता ? वह कोई स्त्री थे ? (इस पर हँसी हुई) पण्डित जी महाराज वैद्य और डाक्टर सारी औषधियां स्वयं खा-खाकर देखते हैं क्या ? तपेदिक (राजयक्ष्मा) उपदंश (आतशक) आदि रोग पहिले वैद्यों को होते होंगे तब वैद्य उनकी औषधियों का अनुभव करके लिखते होंगे ? वाह वाह पण्डित जी आपका भी जवाब नही। महाराज जी ! जैसे परमेश्वर बिना अनुभव किये ज्ञान मात्र से सब गुप्त और प्रकट कार्यों का उपदेश देते हैं। परमेश्वर के भक्त ऋषि-महर्षि भी अपने विशाल ज्ञान से हुआ, हो रहा, और होने वाले (भूत-भविष्यत तथा वर्तमान) का विचार करके शास्त्रों में उल्लेख करते हैं। आप अपने ग्रन्थों को भी कभी देखते नहीं, दुःख तो इस बात का है। देखो पुराण में क्या लिखा है—

"शंख पुष्पी जटा मांसी सोम राज्ञी च फाल्गुकम् ॥६॥ माहिषं नवनीतं च त्वेकी कृत्य-

भिषग्वरः । समूलानि स पत्राणि क्षीरेणाज्येन पेषयेत् ॥७॥ गुटिकां शोधितां कृत्वा नारी योन्यां प्रवेषयेते । दशवारं प्रसूतापि पुनः कन्या भविष्यति ॥८॥

(गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड, आचार काण्ड अध्याय १८० पृष्ठ ११७ श्री वैंक्टेश्वर प्रैस बम्बई सं० १९६३)

ये पुराणों में कही गयी औषधियों की गोलियों का प्रयोग किया जावे तो दस बार प्रसूता नारी भी फिर से यौवन को प्राप्त हो जाती है, तो ये दोनों बेचारी एक-एक बार ही प्रसूता हुई हैं, गोलियां रामबाण हैं, आप पण्डित जी अगर इन गोलियों को बनाकर बेचने लगें तो आपको भारी आय हो। जनता में हंसी.........पण्डित जी महाराज! योनि संकोचन सारे संसार में किया जाता है। बालक उत्पन्न होने के पीछे योरोप में स्त्रियां शराब में बिठाई जाती है अपने देश में सब प्रसूता स्त्रीयां कितने ही दिनों तक शराब में रूई भिगो-भिगो कर योनि में रखती है। आप पण्डितानी जी से पूछकर देख लीजियेगा। वह अवश्य ही मेरी साक्षी देंगी। जनता में हंसी........आपको यदि योनि संकोचन से विरोध ही है तो आप योनि विकास का उपदेश दीजिये, और योनि विकास के उपाय भी अपने अनुभव से बताइये। और "योनि विकास के उपाय" नाम का ग्रन्थ भी लिखकर अपने धर्म प्रैस में छपवाइये, उस पुस्तक को कोई और न लेगा तो सनातन धर्मी तो अवश्य ही लेंगे। सनातन धर्मी भी चाहे आपके लिहाज से आपकी पुस्तक ले ही लें पर योनि संकोचन के विरुद्ध आपकी बात कोई भी मानेगा नहीं, यह निश्चय ही जानिये।

नोट :—शास्त्रार्थ कराने वाले पौराणिक वैश्य अधिक थे उस समय के सिटी मजिस्ट्रेट भी एक वैश्य थे। किसी धनी ने अपनी मोटरकार भेजकर सिटी मजिस्ट्रेट साहिब को शास्त्रार्थ के पण्डाल में बुला लिया मजिस्ट्रेट साहिब ने सीधा आकर आर्य समाज के मंच पर श्री पण्डित अमर सिंह जी से कहा कि—मैं सिटी मजिस्ट्रेट हूं मैं हुक्म देता हूं कि आप शास्त्रार्थ बन्द कर दीजिये।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सनातन धर्मियों ने प्रश्न किये हैं और मैं उनके उत्तर दे रहा हूं वह आगे प्रश्न न करेंगे तो मैं उत्तर नहीं दूंगा, अब तो उनके उत्तर दूंगा ही।

सिटी मजिस्ट्रेट साहिब—

मैं उन पण्डितों को अभी कहे देता हूं कि—आगे वह प्रश्न न करें। पण्डित माधवाचार्य जी आप शास्त्रार्थ बन्द कर दीजिये आगे प्रश्न न करिये।

नोट :—बस! फिर क्या था? **"जान बची और लाखों पाये"** वह तो यह चाहते ही थे। अभी श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी उत्तर दे ही रहे थे कि—उसी समय वह पोथियां पत्रे उठाकर भाग गये।

बारहवां शास्त्रार्थ--

स्थान : दीनानगर (जिला गुरदासपुर) पंजाब

दिनाङ्क : ६ अप्रैल सन् १९४४ ई०

विषय : क्या कुरआन इलहामी किताब है ?

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

मुसलमानों की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : मौलवी श्री मौहम्मद अली साहिब

उपस्थित : १. श्री लाला बक्षीस राम जी, २. श्री लाला देवस्व जी बजाज, ३. श्री लाला देवराज जी, ४. श्री सत्यपाल जी भिक्ष ।

शास्त्रार्थ से पहले

दीना नगर जिला गुरदासपुर में एक मौलवी "**मुहम्मद अली**" का एक लेक्चर हुआ उसका विषय यह घोषित किया गया—"**मैंने हिन्दू धर्म क्यों छोड़ा !**" दीना नगर में मुसलमानों ने इस लेक्चर के लिए बड़े जोर-शोर को मुनादी करायी। दीना नगर में श्री लाल बक्षीसराम जी बहुत स्वाध्याय शील और बहुत बुद्धिमान आर्य सज्जन थे जो उर्दू और फारसी के विद्वान् थे और सिद्धान्तों के भी मर्मज्ञ थे। उन्होंने वह मुनादी सुनी उनको पता था कि श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी आर्य पथिक अमृतसर में आये हुए हैं। वह मुनादी सुनते ही अमृतसर चले आये और श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी को दीना नगर लिवा ले गये। श्री लाला जी माननीय श्री ठाकुर जी का बहुत ही सम्मान करते थे। रात्रि में मौलवी मुहम्मद अली साहिब का लेक्चर हुआ। जिसमें उन्होंने हिन्दू धर्म की भर पेट निन्दा की, आर्य समाज का नाम भी नहीं लिया। आर्य समाजी युवक टोली बनाकर उस लेक्चर को सुनने गये। रात्रि को लेक्चर बारह बजे समाप्त हुआ। और उसी समय ढोल लेकर आर्य समाजी युवकों ने बड़े जोर की मनादी स्वयं सारे नगर में कर दी। युवक कहते थे—"**कल प्रातः-काल आठ बजे आर्य समाज मन्दिर में मौलवी साहिब के ऐतराजों का दन्दा शिकन (दांत तोड़) जवाब दिया जायेगा।**" परिणाम स्वरूप सवेरा होते ही आर्य समाज का सहन (प्रांगण) श्रोताओं से खचाखच भर गया। श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी आर्य पथिक का व्याख्यान हुआ, मौलवी मुहम्मद अली के ऐतराजों की धज्जियां उड़ा दी गई बड़ा ही प्रभावशाली भाषण हुआ। साथ ही मौलवी साहब को चैलेञ्ज कर दिया कि आज ही सायंकाल चार बजे से छह बजे तक मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) करें। वह जो चाहें ऐतराज करें और हमारे द्वारा किये जाने वाले ऐतराजों का जवाब दें। दिन में कई बार मनादी की गयी। सायंकाल चार बजे से पहले-पहले एक बड़े मैदान में -दोनों पक्षों के लिए दो स्टेज बना दिये गये, बड़ी भारी भीड़ हुई, सारा मैदान हजारों की संख्या में स्त्री-पुरुष एवं बच्चों से खचाखच भर गया था। मौलवी साहब को आर्य समाज की ओर से कहा गया कि—आपके जो भी मन में आवे

नोट—यह मुबाहिसा श्री महाशय सत्यपाल जी भिक्षु के हाथ का लिखा हुआ गुरु जी की पुरानी फाइलों में पड़ा हुआ था, इसकी कापी करने में बड़ी कठिनाई हुई, पंक्ति-पंक्ति पर गुरु जी से पूछना पड़ा, यह मुबाहिसा है बड़े काम का। इस मुबाहिसे की कापी इतनी खस्ता हालत में मिली कि कुछ कहा नहीं जा सकता। अक्षर-अक्षर जोड़ने पड़े, तब कहीं जाकर इस मुबाहिसे को लिखा गया। यह मुबाहिसा इतना आवश्यक एवं दिलचस्प था कि इसका देना आवश्यक हो गया था। वह मौलवी मुहम्मद अली जन्म का हिन्दू था - जिसके साथ ठाकुर साहिब जी का शास्त्रार्थ हुआ था।

"संकलन कर्त्ता"

वह ऐतराज करिये आर्य समाज की ओर से श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी जवाब देंगे। मौलवी साहब ने साफ कह दिया कि मैं ऐतराज नहीं करूंगा।

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी ने कहा कि, ठीक है, अच्छा अब मैं सवाल करता हूं। आप उत्तर देने के लिए तैयार हो जाइये।

निवेदक—

"सत्यपाल भिक्षु"

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

मौलवी साहिब, और मेरे मुसलमान भाइयो! हम और आप पहिले एक ही वैदिक धर्मी बुजुर्गों की औलाद थे, भाई-भाई थे। हमको कुरआन ने जुदा-जुदा कर दिया, इसलिए मैं कुरआन पर ही कुछ सवाल करता हूं। आप गौर से सुनें और मौलवी साहिब जवाब दें। कुरआन में चार चीजें हराम की गयी हैं। यानी उनके खाने को मना किया गया है। देखिये—

"इन्नम हर्रम अलयकुमुल मय्तत वद्दम वल्हमल् खिन्जीर व मा उहिल्लबिहि लिगय्रिल्लाहि"
(कुरआन सूरत बकर २ आयत १७३ रूकुअ २१ आयत ६,)

(**इन्नम**) निश्चय (**हर्रम**) हराम किया (**अलयकुम**) ऊपर तुम्हारे **१**—(**मय्तत**) मुरदार को, २—(**वद्दम**) खून को (व) और **३**—(**लहम्ल खिन्जीर**) गोश्त सूअर के को ४—(**व मा उहिल्लबिहि-लिग्यिरल्लाहि**) और जिसके ऊपर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो।

अर्थात्—१. खून २. मुरदार ३. सूअर का गोश्त ४. जिस पर अल्ला का नाम न लिया गया हो यानी जिस जानवर को काटते वक्त "**बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम्**" न बोला गया हो। मैं यह पूछता हूं कि, खून से गोश्त बनता है। जैसे गन्ने के रस से गुड़। कोई हकीम सेहत के लिए फायदा नुकसान के खयाल से किसी को कह सकता है कि—तुम रस मत पीना वह तुमको सर्दी करेगा, हां गुड़ खा सकते हो। किसी को कह सकता है कि तुम गुड़ मत खाना, हाँ! रस पीना तुमको मुफीद रहेगा रस ही पीना। भाईयो! मजहब में "रस को हराम कहना और गुड़ को खाना" जायज बताने में क्या अक्ल-मन्दी है? खून से ही गोश्त बनता है। खून को हराम—ना जायज कहना और गोश्त को जायज रखना—ख़ारिज अज अक्ल (बुद्धि विरुद्ध) है जवाब दीजिए इसमें क्या अक्लमन्दी है?

दूसरा सवाल यह है कि मुर्दार को हराम बताया गया है जबकि हर एक गोश्त खाने वाला मुसलमान मुर्दार को ही खाता है। जिन्दा को कोई नहीं खाता, जिन्दा जानवर को खाते हैं शेर चीते और भेड़िये। मुसलमान ऐसा कभी कोई देखा कि वह जिन्दा जानवर को खाता हो उसके खाते-खाते भेड़ भैं-भैं और बकरी मैं-मैं करती हो। या कुकड़ू कू करता हुआ मुर्गा और "गुटरगूं" करता हुआ

कबूतर कभी किसी ने खाया हो तो बताओ ? श्रोताओं में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ हंसी···सब मुर्दा को ही खाते हैं फिर मुर्दार हराम क्यों ? तीसरा सवाल यह है कि पहले कहीं गयी आयत में कहा गया है "जिस पर अल्लाह का नाम न लिया गया हो वह हराम है यह बताइये कि—जिस पर अल्लाह का नाम नहीं लिया वह नापाक कैसे ? और जिस पर अल्लाह का नाम लिया गया वह पाक कैसे ? जो अल्लाह का नाम लेने से नापाक चीज भी पाक हो जाती है, तो कई नापाक चींजें बताई जा सकती हैं, उनको अल्लाह के नाम से पाक करके क्यों नहीं खाते हो ?

नोट :—श्री ठाकुर साहिब के मुद्दल्लिल और जोरदार सवालों को सुनकर मौलवी साहिब के होश उड़ गये, उनको उठकर खड़ा होना मुश्किल हो गया। मुश्किल से खड़े हुए तथा फिर कुछ सोचते रहे। काफी सोच-विचार के बाद बोले।

मौलवी श्री मुहम्मद अली साहिब—

ओ ! तुम क्या जानो ? हमारा मुसलमानों का जानवरों को जिबह करने (काटने) का तरीका सारी दुनियां को पसन्द है। अंग्रेज लोग दुनियां में सबसे ज्यादा अक्ल रखते हैं, और सबसे ज्यादा इल्म उनके पास है, उनको भी हमारा ज़िबह करने का तरीका इतना पसन्द है कि वे जानवरों को मुसलमानों के हाथों से ही ज़िबह करवाते (मरवाते) हैं।

श्री ठाकुर पण्डित अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

अंग्रेजों के पास उनके घरों में हिन्दू तो नोकर होते नहीं हैं, अगर कोई होते भी हैं तो वे भंगी होते हैं, अन्यथा मुसलमान ही उनके पास नौकरी करते हैं। वह ही कोठी में झाड़ू लगाते हैं। उनसे ही बूटों (जूतों) पर पालिश करवा ली जाती है, उनसे ही मुर्गा कटवा लिया जाता है, इसमें आपके ज़िबह करने के ढंग की क्या खूबी हैं ? श्रोताओं में जोर की हंसी······मौलवी साहब क्या आप बताएंगे कि अंग्रेज लोग तो सूअर का गोश्त खाते हैं, क्या वह भी आपके हाथ से ही ज़िबह कराया जाता है ? श्रोताओं में जोर की हंसी·····साहिबान ! मेरे सवालों का जवाब मौलवी साहिब से नहीं दिया जा सका, और कभी नहीं दिया सकेगा। सुना है रात में कल मौलवी साहिब हिन्दू मजहब के खिलाफ बोलते हुए बहुत उछल रहे थे। अब वह जोश कहां गया ? अब होश क्यों गुम हो रहे हैं ? अब बीमार की तरह क्यों बोलते हैं ?

नोट :—श्री ठाकुर साहिब जी की बातों पर मुसलमान भी झूम उठे, और चारों तरफ वाह ! वाह !! करते दिखाई दिये। तब ठाकुर साहिब जी बोले—

मेरे मुसलमान भाइयो ! एवं अन्य उपस्थित साहिबान् !! अब आप लोग मेरा चौथा सवाल सुनिये। गाय, भेड़, बकरी क्यों हलाल है और सुअर क्यों हराम है ? सुअर में चरबी सब जानवरों से ज्यादा होती है, यहां तक कि, सारी खाई नहीं जाती, वह अलहदा बेची जाती है, उसका गोश्त भी दूसरे जानवरों से ज्यादा अच्छा होता है। बताइये वह क्यों हराम है ?

मौलवी श्री मोहम्मद अली साहिब—

वह गन्दगी खाता है।

श्री ठाकुर पण्डित अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

और भेड़ क्या जलेबी खाती हैं ? श्रोताओं में हंसी……

मौलवी श्री मोहम्मद अली साहिब—

सूअर का गोश्त बीमारियां पैदा करता है। जिससे कौम कमजोर हो सकती है, इसलिए हराम है।

श्री ठाकुर पण्डित अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सुनिये साहिबान ! सुनिये !! सूअर का गोश्त बीमारियाँ और कमजोरियां पैदा करता है, यह कैसा मजहका खेज (हास्यास्पद) कौल (कथन) है। सूअर का गोश्त राजपूत लोग खाते हैं गोरखे खाते हैं।

नोट :—वहाँ सिख बहुत सुन रहे थे, उनकी ओर हाथ करके कहा था "सिक्ख खाते हैं मिल्टरी और पुलिस इन्हीं लोगों से भरी हुई है। सारे वीर हैं बहादुर हैं, बलवान हैं, तन्दुरुस्त हैं। जरा इन सामने वाले वीर सिक्खों के चेहरे शेर के से देखिये और इन मौलवी साहिब के चेहरे की ओर भी देखिये ! श्रोताओं में बड़े जोर की हँसी…… ।

मौलवी श्री मोहम्मद अली साहिब—

सूअर का गोश्त बेहयाई पैदा करता है, इससे वह हराम है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

बेहयाई क्यों पैदा करताहै ? इसलिए कि वह नंगा रहता है, अगर कहो हां ! तो मैं पूछता हूं कि—भेड़ क्या बुरका पहनती है ? श्रोताओं में हँसी ··· और सुनिये ! बेहयायी की बात ! रण्डियाँ (वेश्याएँ) सारी कलमा पढ़ने वाली मुसलमानियां हैं, इनमें से एक भी सूअर का गोश्त नही खाती हैं पर इनसे ज्यादा बेहया बेशर्म दुनियां में कोई नहीं है। चारों ओर हँसी……ये सूअर का गोश्त खाने वाली सभी बेगैरत बेशर्म और बेहया हैं। (इस प्रकार चारों ओर करतल ध्वनि के साथ यह शास्त्रार्थ समाप्त हुआ)। वैदिक धर्म की—जय, महर्षि दयानन्द की—जय, आर्य समाज—अमर रहे, वेद की ज्योति—जलती रहे के नारों से आकाश गूंज उठा।

नोट :—मुसलमान लोग मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) बन्द करके उठकर चले गये और अपने मौलवी को वहाँ से ही डांटते-फटकारते और शर्मिन्दा करते हुए ले गये, हर एक मुसलमान यह कहता था, कि जब तुम में मुबाहिसा करने की लियाकत और ताकत नहीं थी जो तुमने मुबाहिसा करना मंजूर क्यों किया ?

मौलवी श्री मोहम्मद अली साहिब—

इन सवालों का जवाब है हीं नहीं। अगर इनका जवाब है तो तुमने क्यों नहीं दिया ? जाओ अब किसी और मौलवी को पकड़ कर उन सवालों के जवाब तुम्हीं दिलवा दो।

नोट : मुसलमानों ने मौलवी को उसी रात विदा कर दिया और सदा के लिए उसका दीनानगर आना बन्द कर दिया। श्री लाला बक्षीसराम जी बुजुर्ग थे उन्होंने श्री ठाकुर साहब को छाती से लगा लिया और ऊपर को उठा लिया। बड़ी इज्जत की, सारे नगर के हिन्दुओं का भी तांता बँध गया, ठाकुर साहिब के दर्शन करने को सारा नगर आया, तथा दूसरे दिन भी भीड़ आती रही एवं भेंट चढ़ती रही। दीना नगर के श्री लाला बक्षीसराम जी, श्री लाला देवस्व जी बजाज और लाला देवराज जी आदि ठाकुर साहिब के बड़े प्रशंसक रहे। मैं तो उनको अपना पूज्य गुरु मानता हूं। और उनका चरण सेवक रहता हूं। और सदा ही "**शेर दिल श्री ठाकुर अमर सिंह जी की जय**" बोलता हूं।

निवेदक—"**सत्यपाल भिक्षु**"

तेरहवां शास्त्रार्थ--

स्थान : बांकनेर (जिला अलीगढ़ उत्तर प्रदेश)
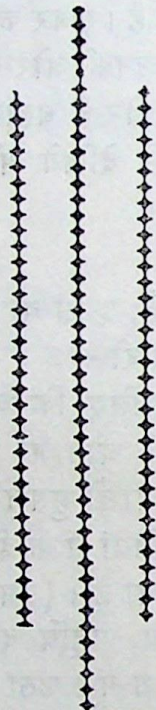
दिनाङ्क : चार जून सन् १९६० ई०

विषय : क्या सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध है ?

प्रधान : श्री स्वामी मुनिश्वरानन्द जी (वर्तमान निवासी-गाजियाबाद)

शास्त्रार्थ कर्ता पौराणिकों की ओर से : श्री पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर

शास्त्रार्थ कर्त्ता आर्य समाज की ओर से : श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी

उपस्थित : पौराणिक पण्डित श्री विमलदेव जी संन्यासी तथा श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी सरस्वती (वैदिक धर्मी) भी इस शास्त्रार्थ में विद्यमान थे।

शास्त्रार्थ से पहले

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री "**बाँकनेर**" जिला अलीगढ़ में आये अपने स्वभाव के अनुसार उन्होंने आर्य समाज को शास्त्रार्थ के लिए चलेञ्ज किया और कहा कि अब मुझे जब भी बुलाया जायेगा तभी मैं आ जाऊँगा और कहा कि शास्त्रार्थ के समय उस्तरा मंगाकर रख लिया जायेगा। जो पराजित हो जायेगा, उसकी नाक काट ली जायगी। शास्त्रार्थ के लिए तिथियाँ भी निश्चित कर दी गयी। उन दिनों श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी कलकत्ते में रहते थे। श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी महाराज ने कलकत्ते से शास्त्रार्थ के लिए श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी को बुलाया। ठाकुर साहब के आगमन का पता लगते ही बांकनेर के सनातन धर्मियों ने पण्डित माधवाचार्य जीं के पास ठाकुर साहब के आगमन की सूचना देते हुए शास्त्रार्थ हुतु आमन्त्रण पत्र दिल्लीको भेज दिया।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी को ठाकुर साहब के आने का पता लगते ही उन्होंने बांकनेर के सनातन धर्मियों को ऐसा पत्र लिख दिया जिसमें मोटा धन अग्रिम (पेशगी) मांगा था। जितना धन श्री पण्डित माधवाचार्य जी ने मांगा था। उतना धन बांकनेर की सनातन धर्म सभा भेज नहीं सकती थी और न भेज सकी।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी कलकत्ते से आ गये थे। श्री माधवाचार्य जी दिल्ली से नहीं आये, तब सनातन धर्मियों को अत्याधिक चिन्ता हुई। बांकनेर से एक व्यक्ति को दिल्ली भेजा गया वहाँ श्री पण्डित भीमसेन जी, जो अपने को प्रति-वादी भयंकर कहते थे। उनको ही बांकनेर लाया गया। जिन्होंने आते ही श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी से प्रार्थना की कि में अत्याधिक कमजोर हूं अभी बीमारी से उठा हूं, अतः एक घण्टे का ही शास्त्रार्थ किया गया।

निवेदक—

"रविकान्त शास्त्री एम० ए०"

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भंयकर—

कोई भी आर्य समाजी स्वामी दयानन्द जी की माता का नाम नहीं जानता है, यदि जानते हों तो बतायें ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

यदि कोई आर्य समाजी स्वामी दयानन्द जी की माता का नाम नहीं जानता है, तो क्या इससे सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध सिद्ध हो जावेगा ? **"मारे घोटू फूटे आंख"** इस प्रश्न का सत्यार्थ प्रकाश या आज के शास्त्रार्थ के विषय से क्या सम्बन्ध है ? महाराज जी ! वैसे श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने बड़ी खोज से यह सिद्ध कर दिया था, कि स्वामी दयानन्द जी की माता का नाम **"यशोदा बाई"** था। परन्तु पण्डित जी महाराज ! क्या आप ब्रह्मा, विष्णु शिव, वशिष्ठ, कणाद, पतञ्जलि आदि की माताओं के नाम बता सकते हैं ? यदि नहीं बतला सकते तो क्या पुराणों को वेद विरुद्ध मानने को तैयार हैं ?

श्री पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भंयकर—

सत्यार्थ प्रकाश में सिक्खों की सुखमनी का नाम लेकर लिखा है कि, **"वेद पढ़त ब्रह्मा मरे"** यह ग्रन्थ साहब में कहीं नहीं है। स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में झूठ लिखा है। क्या ठाकुर जी इसका कोई उत्तर है आपके पास ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

वाह ! वाह !! धन्य हो !!! आज लगता है आप भंग पीकर आये हैं। आपको शास्त्रार्थ के विषय की याद है अथवा नहीं, अगर नशे में भूल गये हों तो दोबारा बता दिया जावे। जनता में हंसी··· महाराज जी जरा बताओ तो सही, इस प्रश्न का प्रस्तुत विषय के साथ क्या सम्बन्ध है ? सम्बन्ध हो चाहे न हो, आपको तो केवल प्रश्नों की संख्या बढ़ानी है। **"मान न मान मैं तेरा मेहमान"** सिक्खों ने तो आपको अपना वकील बनाया नहीं है। इसको पूछने वाले आप कौन हैं ? इस प्रश्न को जब सिक्ख करेंगे तब इसका उत्तर दिया जावेगा आप जिन पौराणिकों के वकील बनकर आये हैं उनकी ओर से कुछ पूछिये परन्तु आप या कहीं श्रोतागण यह न समझ बैठें कि मैं इसके बारे में कुछ जानता हीं नहीं, तथा मैं ऐसा बहाना करके आपके इस अमूल्य प्रश्न को समाप्त करना चाहता हूं। इसलिए आप इसका भी उत्तर अवश्य सुनिये ! पर आगे कृपया विषय का ध्यान रखकर ही प्रश्न करिये। सिक्खों के ग्रन्थ साहब में वाक्य है। **"वेद पढ़े-पढ़ ब्रह्मो जन्म गंवाया"** और **"चारों वेद इत्फरा पाई। मन दा भरम् न जाई"** ।। पहले वाक्य का भाव स्वामी जी ने लिखा है, **"वेद पढ़त ब्रह्मा मरे"** और दूसरे का भाव लिखा है **"चारों वेद कहानी"** क्योंकि इत्फरा का अर्थ कहानी ही होता है।

श्री पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भंयकर—

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में चोटी कटाने की आज्ञा दी है। यह ईसाई मत का प्रचार है।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में यह कहीं भी नहीं लिखा कि चोटी सबको कटानी चाहिये अथवा अवश्य कटानी चाहिये, या सदा कटाये रखनी चाहिये, स्वामी जी ने तो संध्या के समय नित्य ही

चोटी में गांठ लगाने की आज्ञा दी है। उन्होंने पुराने सारे ऋषियों की आज्ञाओं के अनुसार केशान्त संस्कार का वर्णन किया है। जिसका वर्णन प्रायः सारी स्मृतियों और सारे गृह्य सूत्रों में है। वहां चोटी सहित सब बाल कटाने का विधान है। कहीं-कहीं मुण्डन संस्कार में चोटी छोड़ करअन्य बाल कटाने का विकल्प है परन्तु केशान्त संस्कार में शिखा सहित केश श्मश्रु, कक्ष, वक्ष, उपस्थ के सब बाल काटने का विधान है। दुःख यह है कि आपने इन ग्रन्थों को पढ़ा ही नहीं, वेद का नाम तो ले दिया पर पढ़ा वेद को भी कभी नहीं है। लीजिये प्रमाण भी सुन लीजिये। "**यत्र बाणा सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव**" (यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ४८,) आपके आचार्य उव्वट और महीधर दोनों ने विशिखा का अर्थ "**शिखा रहिता मुण्डित मस्तकाः**" किया है। अर्थात् शिखा रहित और मुंडे हुए शिर वाले—

नोट :—बीच ही में पौराणिक पण्डित भीमसेन जी गर्ज कर बोल उठे, यह सन्यासियों के लिए है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

परन्तु देवता जी यहां पर तो "**कुमारा**" अर्थात् कुमार शब्द है। वेद मन्त्र में जो मैंने ऊपर यजुर्वेद का प्रमाण दिया है। वहां पर तो सन्यासी का जिक्र भी नहीं। कुमार सन्यासी ! वाह !! वाह !!!

श्री पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भंयकर—

सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है बच्चे को माता छः दिन दूध पिलावे, पीछे धायी। यह वेद विरुद्ध है।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ,केशरी—

बोलिये किस वेद मन्त्र के विरुद्ध है ? सत्यार्थ प्रकाश में यह कहीं भी नहीं लिखा कि जिस घर में धायी दूध न पिलावेगी, उस घर के सब लोग नरक में चले जावेंगे, सीधी साधी बात यह लिखी है, कि यदि माता का दूध छुड़ा कर बच्चे को धायी का दूध पिलाया जावे तो माता शीघ्र स्वस्थ और बलवती हो जावेगी। जो धायी का प्रबन्ध न कर सकें वो गाय या बकरी का दूध पिलावें जो गाय या बकरी का भी प्रबन्ध न कर सकें वह जैसा सम्भव हो वैसा करें अभिप्राय यह है कि वह माता का ही दूध पिलावें। धायी दूध पिलावे, यह सुश्रुत के शारीरिक स्थान में और चरक शारीरिक स्थान में भी है नोट करिये और प्रमाण लीजिये—मैं कोई भी बात बिना प्रमाण के नहीं कहता हूं।

अतो धात्री परीक्षा मुपदेक्ष्यामः अद्य ब्रूयात् धात्रीं आनयत इति।
वत्सलाम् जीवद्धत्साम् पुवत्साम् दोग्ध्रीम अप्रमत्ताम-आवि ।।५३।।

(चरक संहिता शारीरिक स्थान अध्याय ८ वाक्य ५३,)

अभिप्राय यह है कि लड़के वाली धायी हो, जिसका लड़का जीवित हो, और जिसको पर्याप्त

मात्रा में दूध उतरता हो, श्री रामचन्द्र जी की भी धायी थी, धायी का जैसा वर्णन सत्यार्थ प्रकाश में है वैसा ही आपके मान्य ग्रन्थ गरुड़ पुराण में भी है लीजिये प्रमाण—

विदारी कन्द स्वरसं मूलं कार्पासजं तथा। धात्री स्तन्य विशुध्यर्थम् मुदगयूषर साशिनी॥ स्तन्याभावे पयश्छाग गव्यं वा यद्गुणं पिबेत्॥

(गरुड़ पुराण)

गरुड़ पुराण में इसका अर्थ यह है कि, विदारी कन्द का स्वरस कपास की जड़ और मूंग का यूष इनसे धायी का दूध शुद्ध किया जाये। धायी न मिले तो बकरी या गाय का दूध पिलावे। आप हर बात को वेद विरुद्ध कह देते हैं, पर वेद मन्त्र एक भी नहीं बोलते, जिससे यह पता लगे कि यह बात अमुक वेद मन्त्र के विरुद्ध है। आपके पास तो वेद मन्त्र हैं नहीं। पर मैं इसके लिए भी वेद मन्त्र देता हूं। देखिये तथा तथा ध्यान से सुनिये—"**नक्तोषासा समनसा विरूपे धापयेते शिशुमेकं समीची**" (यजुर्वेद अध्याय १२ मन्त्र २,) और देखना हो तो आप "**यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ७०**" को देखिये जिसमें कहा गया है कि दो स्त्रियां एक बालक को एक मन से दूध पिलाती है। दो स्त्रियां माता और धायी ही है। और कोई नहीं है।

श्री पण्डित भीमसेन, जी प्रतिवादी भंयकर—

सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि—"**विविधानि च रत्नानि विवेक्तेषूपपादयेत्**" यह श्लोक मनुस्मृति के नाम से लिखा है। और अर्थ बताया गया है कि सन्यासियों को धन दिया जाना चाहिए। यह श्लोक मनुस्मृति में कहीं भी नहीं है, सत्यार्थ प्रकाश में यह श्लोक मनुस्मृति के नाम से झूंठ लिख दिया गया है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

आप महाराज जी ग्रन्थों को पढ़ा करिये, देखिये मनुस्मृति में पूरा श्लोक इस प्रकार है—

धनानि तु यथाशक्तिः विप्रेषु प्रति पादयेत्। वेद वित्षु विविक्तेषु प्रेत्य स्वर्ग समश्नुते॥६॥

(मनुस्मृति अध्याय ११ श्लोक ६,)

अर्थ यह है कि वेद के जानने वाले विरक्त ब्राह्मण अर्थात् संन्यासी को यथाशक्ति धन देना चाहिए। यहां थोड़ा पाठ का भेद है अर्थ का कुछ भी भेद नहीं है। ऐसा ही अर्थ आपके आचार्य कुल्लूक भट्ट ने भी किया है देखिये और ध्यान दीजिये—"**विविक्तेषु पुत्र कलत्रादिष्वसक्तेषु**" अर्थात् पुत्र कलत्र आदि से विरक्त ब्राह्मणों को धन दें। वहीं संन्यासी है। वैसे भी "**वि**" उपसर्ग पूर्वक "**विचिर**" पृथग् भावे धातु से "**विविक्त**" शब्द बना है, इसका अर्थ संन्यासी ही है। यह मनुस्मृति में अब भी विद्यमान है।

श्री पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भयंकर—

सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि "**ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा से वेद पढ़े** यह थे"

वेद विरुद्ध है। क्योंकि अथर्व वेद में कहा गया है कि "**ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव**" अर्थात् ब्रह्मा देवों में सबसे पहले प्रकट हुआ। जब वह सबसे पहले प्रकट हुआ था, तो उसने अग्नि आदि से वेद कैसे पढ़े ? अग्नि आदि पर चारों वेद आये, इसका कोई प्रमाण नहीं।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

श्री मान जी ! मैं फिर कहता हूं कि आप कुछ पढ़ा करिये, तब आपको पता लगेगा कि जिसने अग्नि, वायु आदि से चारों वेद पढ़े वह ब्रह्मा ऋषि थे, क्योंकि "**चतुर्वेद विद् ब्रह्मा भवति**" चारों वेदों का जानने वाला ब्रह्मा ही होता है। यह जो आपने अथर्ववेद के नाम से प्रमाण दिया है यह अथर्ववेद का क्या किसी भी वेद का नहीं है, आपने समझा कि बांकनेर के सनातन धर्मियों पर यह प्रभाव पड़ जायेगा कि प्रतिवादी भंयकर जो कोरे घटा टोपो भंयकर जैसा है। वेद भी पढ़ें हैं। पर यह पता नहीं था कि, सामने कौन है ? यह सारी पोल खोल देगा। श्री मान जी ! यह वेद मन्त्र नहीं, उपनिषद, का वचन है पता लिखिये "**मुण्डक उपनिषद मुण्डक १ बचन १**" और पूरा पाठ इस प्रकार है। नोट कीजिये—

ब्रह्मा देवानां प्रथमः संबभूवः विश्वस्यकर्त्ता भुवनस्य गोप्ता।
स ब्रह्म विद्यां सर्व विद्या प्रतिष्ठां, अथर्वाय ज्येष्ठ पुत्राय प्रार॥
(मुण्डक उपनिषद् १ वचन १,)

इसका अर्थ यह है—ब्रह्मा देवों में मुख्य हुआ, प्रथम का अर्थ "**सबसे पहले हुआ**" यह नही है। जैसे नचिकेता ने कहा है। "**बहूना प्रथमः बहूनायेमि मध्यमः**" अर्थात् मैं बहुतों में मुख्य हूं। और बहुतों में मध्यम हूं।

सबसे पहले आदम हुआ, यह आपने ईसाइयों से सीखा है। वेद में तो यह कहा है कि—**साध्याः ऋषयश्च ये**" (यजुर्वेद) सृष्टि के आरम्भ में बहुत मनुष्य साध्य और ऋषि सिद्ध उत्पन्न हुए एक नही हुआ। इनमें ब्रह्मा मुख्य हुए क्योंकि उन्होंने चारों वेद पढ़ लिये। अग्नि आदि एक-एक वेद का ग्रहण करने वाले थे ब्रह्मा जी ने इन्हीं चारों ऋषियों से चारों वेद पढ़ लिये इसके खंडन में आपने क्या प्रमाण दिया ? वास्तविकता यह है कि आपने न वेद पढ़े हैं न उपनिषद। ये सब स्वाध्याय से मिलते हैं ऐसे ही छापा तिलक लगाने से थोड़े ही। अग्नि आदि पर वेद आये इसका प्रमाण आपको नहीं मिला पढ़ने वालों को मिलता है, मुझसे सुनिये और लिखिये नोट कीजिये —**अग्नि वायु रविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्। दुदोह यज्ञ सिध्यर्थं ऋग्यजुस्साम लक्षणम्॥२३॥** (मनुस्मृति अध्याय १ श्लोक २३,)।

अर्थात् अग्नि, वायु, अंगिरा आदि ने परमेश्वर रूप धेनु से ऋग् आदि वेदों को यज्ञ की सिद्धि के लिए दुहा। और प्रमाण लीजिये —"**अग्निः ऋग्वेदः वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः**" (शतपथ ब्राह्मण ११, ५, ८, ३) अग्नि से ऋग्वेद वायु से यजुर्वेद तथा सूर्य से सामवेद प्रकट हुआ। इस प्रमाण को आपके सायणाचार्य जी ने ऋग्वेद भाष्य की भूमिका में उद्धृत किया है। और पूछिये पण्डित जी महाराज ?

श्री पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भंयकर—

अंगिरा का चौथा नाम सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है। उसका कोई प्रमाण नहीं है और अग्नि, वायु, आदित्य आदि ऋषि नहीं हैं। जड़ पदार्थ है। उन पर वेद किस प्रकार प्रकट हो सकते थे ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

चौथे अंगिरा का नाम चौथे वेद अथर्ववेद में अथर्व नाम के साथ ही है। देखिये—

यस्मादृचोअपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्। सामानियस्य लोमानि अथर्वाङ्गिरसो मुखम् ॥२०॥
(अथर्ववेद १०, ७,२०,)

जिस परमेश्वर से ऋग्वेद प्रकट हुआ जिससे यजुर्वेद प्रकट हुआ और सामवेद जिसके लोमों के समान है। अंगिरा पर उतरने वाला अथर्ववेद मुख के समान है। इस मन्त्र में जहां चारों वेदों के नाम हैं, वहां अथर्व के साथ चौथे ऋषि अंगिरा का भी नाम है। अग्नि, वायु, और आदित्य को आप ऋषि न मानकर जड़ पदार्थ मानते हैं, परन्तु आपके गुरु आचार्य सायण ऋग्वेद भाष्य की भूमिका में अग्नि आदि को शतपथ ब्राह्मण के प्रमाण में बतलाकर उनको "**जीव विशेष**" विशेष जीव अर्थात् ऋषि कहते हैं। दुख यह है कि आप अपने ग्रन्थों को भी नहीं पढ़ते तथा शास्त्रार्थ करने सामने आ खड़े होते हो। स्वाध्याय कुछ भी नहीं।

नोट :—पण्डित भीमसेन जी ने खीझकर ठाकुर अमर सिंह जी से कहा कि—

श्री पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भंयकर —

आप तो लाहौर में "**दिलरुबा**" और "**सारंगी**" बजाया करते थे। दूसरों को बार-बार कहते हो कि पढ़ते नहीं, स्वाध्याय नहीं करते हो, अपनी ओर भी तो देखो। जनता में हंसी ....

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

यदि मैं सारंगी और दिलरुबा बजाया करता था, तो इससे मेरे अन्दर क्या दोष आ गया है ? संगीत बजाने से सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध सिद्ध हो गया ? धन्य हो महाराज आपकी ज्योति को ! "**मारे घौंटू फूटे आंख**" पर इसमें आपका भी क्या कसूर है, इन बेचारे सनातन धर्मियों को खुश करने के लिए प्रश्नों की संख्या तो बढ़ानी ही है। चाहे उन प्रश्नों का सम्बन्ध शास्त्रार्थ से हो या न हो। स्वाध्याय व विद्वता से तो आपका दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। प्रश्न तो आपने किया है, इसलिए प्रश्न के विषयान्तर होते हुए भी मैं उत्तर दिये बगैर नहीं छोडूंगा। क्योंकि मैंने अपने जीवन में उधार रखना नहीं सीखा। इसलिए सुनिये आपके देवता लोग श्री कृष्ण जी बांसुरी, नारद जी वीणा शिव जी डमरू बजाते थे। तो मैं भी आपके देवताओं में मिल गया, इससे मुझमें क्या दोष आ गया ? मैं भी आपके देवताओं में शामिल हो गया। जनता में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ हंसी......

नोट—अन्त में श्री पण्डित भीमसेन जी ने अपने सारे प्रश्नों को दोहराया और मैं (अमर सिंह) ने अपने उत्तरों को दोहराया। और मैंने यह घोषणा की, कि श्री पण्डित भीमसेन जी

सत्यार्थ प्रकाश को वेद विरुद्ध सिद्ध न कर सके। और कोई भी व्यक्ति उसको वेद विरुद्ध सिद्ध कभी भी नहीं कर सकता। इस प्रकार शास्त्रार्थ शान्तिपूर्वक समाप्त हुआ और आर्य समाज की ओर से घोषणा की गयी कि कल को किसी दूसरे विषय पर शास्त्रार्थ होगा। जिसकी सूचना उभय पक्ष के निर्णय से दे दी जावेगी, इस पर सनातन धर्म की ओर से एक युवक खड़ा हो गया। और कहने लगा कि चाहे शास्त्रार्थ एक दिन हो या दस दिन हो या महीना भर हो, हम केवल सत्यार्थ प्रकाश पर ही शास्त्रार्थ करेंगे। और किसी विषय पर कभी शास्त्रार्थ नहीं होने देंगे। न यहां भजन होने देंगे न व्याख्यान इस पिण्डाल को भी उखाड़कर फेंक देंगे, मैं इसमें आग लगा दूंगा।

अनुत्तर दायित्वपूर्ण बहुत सी बातें उसने ऐसी कही कि—आर्य समाजी युवक उसे सुनकर आवेश में आ सकते थे। और झगड़ा अति उग्र रूप धारण कर सकता था। परन्तु आर्य समाजियों ने बहुत ही गंभीरता से काम लिया और कहा कि रात्री के ग्यारह बजे तक इसी विषय पर शास्त्रार्थ करने के लिए आर्य समाज तैयार है। अभी शास्त्रार्थ आरम्भ कर दीजिये, परन्तु कल किसी दूसरे विषय पर शास्त्रार्थ होगा। और अवश्य होगा, जिनका निश्चय पहले हो चुका है वह विषय यह थे। (१) **ईश्वर जन्म लेता है या नहीं ? (२) मूर्ति पूजा होनी चाहिये या नहीं ? (३) श्राद्ध मृतकों का हो सकता है या जीवितों का ? (४) क्या भागवत आदि पुराण वेदानुकूल हैं ?** पौराणिक पण्डित भीमसेन जी के आने से पहले पत्र व्यवहार द्वारा दोनों पक्षों से इन विषयों पर शास्त्रार्थ करना निश्चय हो गया था केवल यह बताना शेष था कि किस दिन किस विषय पर शास्त्रार्थ होगा। पण्डित भीमसेन जी ने आते ही इस बात पर बल देना आरम्भ किया कि किसी भी विषय पर शास्त्रार्थ नहीं होगा, अगर होगा तो इसी विषय पर होगा कि—"**क्या सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध है ?**" सो वह वहां पर श्रोताओं ने सुन लिया कि सत्यार्थ प्रकाश कैसा वेद विरुद्ध सिद्ध हुआ ? तथा पाठक यहां पढ़ लें तथा एवं देख लें कि किसकी हार हुई और किसकी जीत हुई। सभी श्रोताओं को स्पष्टतः पता लग गया कि भीमसेन जी अब शास्त्रार्थ नहीं करेंगे। क्योंकि वह बहुत बुरी तरह से पराजित हो चुके थे फलतः "**दूसरा शास्त्रार्थ हुआ ही नहीं।**" और शान्ति पाठ के पश्चात् सभा समाप्त हो गयी।

विशेष निवेदन—

उस सनातन धर्मी युवक की उदण्डता से अनुत्तरदायित्व युक्त कथन पर श्री पण्डित ओमप्रकाश जी शास्त्री (खतौली निवासी) ने उस युवक को फटकारा और ललकारा कि वह शामयाना जलाने को आगे आये और देखे कि हम उसके साथ क्या करते हैं ? पुलिस ने भी उस युवक को फटकारा, शास्त्रार्थ का प्रभाव आर्य समाज के पक्ष में बहुत ही अच्छा रहा इस शास्त्रार्थ की योजना महाविद्वान श्री मुनीश्वरानन्द जी सरस्वती (वर्तमान गाजियाबाद निवासी) जी ने बनाई थी। और उन्होंने श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी को बाँकनेर में शास्त्रार्थ के लिए कलकत्ते से बुलाया था शास्त्रार्थ श्री पण्डित माधवाचार्य जी के चैलेन्ज पर होना निश्चित हुआ था. और श्री पण्डित माधवाचार्य जी के साथ ही होना था पर शास्त्रार्थ के दिन से २ दिन पहले श्री पण्डित माधवाचार्य जी की इतने धन की मांग आ गयी जिसको देने की सामर्थ्य बांकनेर जिला अलीगढ़ के सनातन धर्मियों में नहीं थी अतः श्री पण्डित माधवाचार्य जी को न बुलाकर श्री पण्डित भीमसेन जी प्रतिवादी भंयकर को दिल्ली से बुलाना पड़ा। वास्तव में श्री पण्डित माधवाचार्य जी पण्डित हैं, श्री भीमसेन जी पण्डित नहीं थे। "**पण्डित सोई जो गाल बजावा**" शास्त्रार्थ के समय पौराणिक सन्यासी "**श्री स्वामी विमल देव जी**" जो पौराणिकों के मंच पर विद्यमान थे।

वैदिक धर्म का—"**अमर स्वामी सरस्वती**"

चौदहवां शास्त्रार्थ--

स्थान : बद्दोमल्ली (जिला स्यालकोट,) (वर्तमान पाकिस्तान)
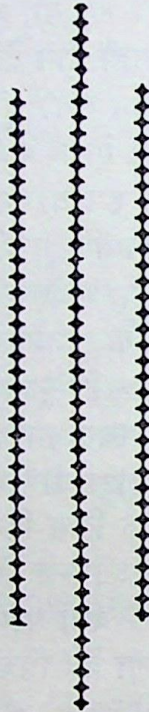
दिनाङ्क : १८ मई १९४१ ई० (दिन के दो बजे)
विषय : क्या पुराण वेदानुकूल है ?
पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री
सहायक : १. श्री पण्डित दिवाकर दत्त जी शास्त्री
२. श्री पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री
३. श्री पण्डित कुञ्जलाल जी शास्त्री
आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थकर्त्ता : श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी
सहायक : श्री पण्डित वाचस्पति जी एम० ए०
आर्य समाज की ओर से प्रधान : श्री जीवन दास जी सर्राफ
,, ,, मन्त्री : श्री मथुरा दास जी मदान
पौराणिकों की ओर से प्रधान : स्टेशन मास्टर श्री बाबू लेखराज जी
,, ,, मन्त्री : श्री लाला कर्म चन्द जी
अन्य उपस्थित विद्वान् : १. एक मुसलमान चौधरी श्री फजल अहमद साहिब
२. ईसाई पादरी श्री यूहन्ना साहिब

शास्त्रार्थ से पहले

बद्दोमल्ली जिला स्यालकोट में एक बड़ा ही अद्भुत एवं छोटा सा कस्बा था वहां सनातन धर्म और आर्य समाज के मध्य शास्त्रार्थ आठ दिन निरन्तर चलना निश्चय हुआ। और निश्चय हुआ कि एक दिन आर्य समाज की ओर से प्रश्न और सनातन धर्म की ओर से उत्तर हुआ करेंगे। दूसरे दिन सनातन धर्म की ओर से प्रश्न और आर्य समाज की ओर से उत्तर हुआ करेंगे। १-३-५-७ वें दिन आर्य समाज प्रश्न करेगा और सनातन धर्म उत्तर देगा। २-४-६-८ वें दिन सनातन धर्म प्रश्न करेगा तथा आर्य समाज उत्तर देगा। प्रतिज्ञा पत्र की दो प्रतियां बनाई गयी। दोनों पर आर्य समाज के प्रधान श्री जीवन दास जी सर्राफ और मन्त्री श्री मथुरा दास जी मदान के हस्ताक्षर हुए तथा सनातन धर्म के प्रधान श्री लेखराज स्टेशन मास्टर तथा मन्त्री श्री लाला कर्मचन्द जी के हस्ताक्षर हुए थे। आर्य समाज की ओर से प्रश्न कर्त्ता मैं (ठाकुर अमर सिंह) एवं सनातन धर्म की ओर से उत्तर देने वाले श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री दिल्ली वाले, नियत हुए। जिस दिन शास्त्रार्थ आरम्भ होना था, उससे एक दिन पहिले श्री पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री तथा श्री पण्डित दिवाकर दत्त जी शास्त्री और श्री पण्डित कुञ्जलाल जी शास्त्री को साथ लेकर आर्य समाज मन्दिर में दिन के दो बजे आ पहुंचे और कहने लगे कि हम शास्त्रार्थ करने को आये हैं।

उनके पीछे-पीछे ही सनातन धर्म के अधिकारी लोग दौड़े-दौड़े चले आये, और अपने ही विद्वानों से कहने लगे कि हमने शास्त्रार्थ आप लोगों से नहीं कराना है। हमारी ओर से शास्त्रार्थ श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री करेंगे। **''हम लोग श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी के सम्मुख खड़ा होने योग्य तुम तीनों पण्डितों को नहीं मानते हैं।''**

श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी का बहुत प्रभाव है। (उस नगर में माननीय ठाकुर जी की विद्वता की धाक थी) पहिले दिन शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ, दिन के दो बजे थे। आर्य समाज की ओर से प्रश्नकर्त्ता—मैं (अमर सिंह) था। प्रमाण निकालने में मेरे सहायक श्री पण्डित वाचस्पति जी एम० ए० साथ बैठे। सनानन धर्म की ओर से उत्तर दाता श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री थे, उनके साथ प्रमाण निकालने वाले सहायक श्री पण्डित दिवाकर दत्त जी शास्त्री श्री पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री तथा श्री पण्डित कुंञ्ज लाल जी शास्त्री बैठे थे। शास्त्रार्थ का विषय नियत किया गया कि **''क्या पुराण वेदानुकूल हैं ?**

वैदिक धर्म का—

''अमर स्वामी परिव्राजक''

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी आप पुराणों के वकील हैं, पुराण १८ कहे और माने जाते हैं। सुनिये—"**अष्टादश पुराणानां कर्त्ता सत्यवती सुतः**" मेरा दावा है कि आप जिन पुराणों के वकील हैं, उन अट्ठारह पुराणों के नाम आप नहीं बता सकते हैं। यदि बता सकते हों, तो बताइये। यह पहली परीक्षा है मैं निश्चय पूर्वक कहता हूं कि शास्त्रार्थ के अन्त तक मेरे इस प्रश्न का उत्तर आप नही दे सकेंगे। अट्ठारह पुराणों के नाम क्या-क्या हैं?

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

वाह! वाह!! "**प्रथमे ग्रासे भक्षिका पातः**" बहुत बड़ा आपने प्रश्न किया। हमको सैकड़ों ग्रन्थों के नाम याद है। क्या हम अट्ठारह पुराणों के नाम याद नहीं रख सकते हैं? अठारह नाम तो बच्चा भी सुना देगा। मैं समझता था, कोई बड़ा भारी प्रश्न मेरे सामने आयेगा, प्रश्न निकला तो यह निकला कि अट्ठारह पुराणों के नाम क्या हैं? मैं बताता हूं। सुनिये—

मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं व चतुष्टयम्। अनाप लिंग कूस्कानि, पुराणानि प्रथक् प्रथक्॥

अर्थात् "**म**" से दो (मत्स्य और मार्कण्डेय) "**भ**" से दो (भागवत और भविष्य) "**ब्र**" से तीन (ब्रह्म, ब्रह्माण्ड और ब्रह्मवैवर्त्त) "**व**" से चार (वाराह, वायु, वामन, और विष्णु) इस प्रकार यह ग्यारह पुराण हुए, शेष सात पुराणों के आद्यक्षर इस प्रकार हैं, "**अ**" से अग्नि "**न**" से नारद "**प**" से पद्म "**लिं**" लिङ्ग "**ग**" से गरुड़ "**कू**" से कूर्म "**स्कं**" से स्कन्द यह अठारह नाम पुराणों के इस श्लोक में लिए। उसमें शिव पुराण का नाम नहीं है, और भागवत तीन है, जिनमें से केवल एक का ही नाम इसमें है। आप अठारह पुराणों के नाम बताइये? हमने तो बता दिए।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी! अठारह नामों के याद करने का प्रश्न नहीं है। मेरे प्रश्न में रहस्य है वह यह है कि पुराण अठारह नहीं है, आश्चर्य यह है कि—आप पुराणों के ठेकेदार होते हुए यह नहीं बता सकते कि—अठारह पुराण कौन-कौन से हैं? उनके नाम क्या-क्या हैं? उस रहस्य को मैं जानता हूं। आप नहीं जानते हैं जिसके कारण आप १८ पुराणों के नाम नहीं बता सकेंगे। सुनिये एक रहस्य यह है कि—जहां-जहां अठारह पुराणों के नाम गिनाये हैं, वहां-वहां नामों में भिन्नता है, कहीं शिव पुराण को अठारह में गिना गया है, वायु पुराण को नहीं। कहीं वायु पुराण को अठारह में गिना गया है, शिव पुराण को नहीं। शिव पुराण और वायु पुराण दोनों को पुराण माना जाये तो पुराण १८ नहीं उन्नीस हो जायेंगे।

बताइये आप १८ के वकील हैं या १९ के ? और सुनिये शिव पुराण में क्या कहा गया है ?— "**षड्विंशति पुराणानां, मध्येत्स्येकं श्रृणोति यः**" यहां छब्बीस पुराणों का उल्लेख है, कहिये ! आप किस-किस पुराण के और कितने पुराणों के ठेकेदार हैं ? आप मुझे अठारह पुराणों के नाम पूछते हैं, मैं तो उनमें से एक को भी नहीं मानता हूं, और न यह मानता हूं कि पुराण अठारह हैं। मुझको तो आपके पुराणों का खण्डन करना है, वह एक हो चाहे एक सो, या वह अठारह हों, चाहे अठारह सो।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी—

ठाकुर साहिब पता लग गया कि आप पुराणों के नाम नहीं जानते हैं। आपको यह भी पता नहीं कि पुराण १९ नहीं १८ ही हैं। आपने कहीं पुराणों की सूची में "**शिव-पुराण**" का नाम पढ़ लिया और कहीं शिव पुराण का नहीं तो "**वायु पुराण**" का नाम पढ़ लिया, तो आपने १९ पुराण समझ लिए। ठाकुर साहिब पुराण तो आप हमसे पढ़िये, और हमसे समझिये, सुनिये ! "**शिव पुराण की वायवीय संहिता का नाम ही वायु पुराण है**"। "वायु पुराण" कोई पृथक् ग्रन्थ नहीं है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पता लग गया कि आप पुराणों के बारे में कुछ नहीं जानते हैं। पुराण आपने पढ़े-देखे कभी नहीं। लीजिये, मैं आपके पुराण ज्ञान की पोल अभी खोल देता हूं। मेरे पास **शिव पुराण** भी है और **वायु पुराण** भी लीजिये और देखिये शिव पुराण की "**वायवीय संहिता**" का नाम वायु पुराण नहीं। यह वायु पुराण सर्वथा स्वतन्त्र ग्रन्थ है। पुराणों को वास्तव में हमने ही पढ़ा है। आपने तो कहीं से सुन लिया है। लीजिये, एक और रहस्य की बात बताता हूं। अठारह पुराणों की गणना में भागवत एक पुराण गिना गया है पर भागवत तीन हैं, श्री मद्भागवत दूसरी देवी भागवत्, शिव पुराण में देवी भागवत् को ही "**भागवत**" गिना गया है। इस प्रकार पुराण अठारह नहीं २१ हो गये। आपकी जान को और बवाल बढ़ गया। अभी क्या है ? आज आपको पता लगेगा कि किससे पाला पड़ा है ? पुराण तो मैंने ही पढ़े हैं। लीजिये, एक भागवत और सुनाता हूं। इसमें लिखा है कि—"**श्री कृष्ण जी पार्वती के अवतार थे।**" आप तो उनको अब तक विष्णु का अवतार ही मानते रहे हैं। अब मुझ से सुनिये ! शिव जी पार्वती से कहते हैं—"**यदि त्वं मे प्रसन्नासि, तदा पुंस्त्वमवाप्नुहि। कदाचित् पृथिवी पृष्ठे, यास्येऽहं स्त्री स्वरूपताम् ॥१६॥ यथाहं ते प्रियो भर्ता त्वं वै प्राण समाङ्गना। एतदेव गनो अभीष्टं विद्यते प्रार्थ्य मुक्मम् ॥१७॥ देव्युवाच भविष्येऽहं त्वश्प्रियार्थं निश्चित्तं पृथिवी तले ॥१८॥ पुँरुपेण महादेव वसुदेव गृहे प्रभो। कृष्णोऽहं मत्प्रियार्थं स्त्री भव त्वं हि त्रिलोचन ॥१९॥ वृषभानोः सुता राधा स्वरुपाहं स्वयं शिवे ॥२०॥ तां राधामुपसंयेमे कोऽपि गोपो महामुने। क्लीवत्वं सहसा प्राय शंभोरिच्छा नुसारतः ॥२१॥**

अर्थात् हे पार्वती जी ! यदि तुम मुझ से प्रसन्न हो तो तुम पुरुष बनो मैं पृथ्वी पर कहीं स्त्री बन जाऊंगा। जैसे मैं तुम्हारा प्यारा भर्ता हूं। ऐसे ही तुम मेरे पति बनो यह मेरी कामना है। देवी बोली—मैं तुम्हारे प्रिय के लिये निश्चय वसुदेव के घर में जन्म लेकर कृष्ण बनूं। शिव जी ने कहा—मैं वृषभान के घर में उसकी पुत्री राधा बनूंगा ? उस राधा को किसी गोप ने विवाह लिया वह शिव की इच्छानुसार नपुंसक हो गया।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

श्री मान ठाकुर साहिब आप यह कौन सी पुस्तक पढ़कर सुना रहे हैं ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

(हंसते हुए···)श्री मान पण्डित जी महाराज ! यह वही तीसरी भागवत है। इसका नाम है **"महाभागवत महापुराण"**।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर साहिब कृपया यह पुस्तक आप मुझको दिखाइये यह पुस्तक मैंने भी नहीं देखी।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

क्यों नहीं, वाह ! आपने यह भली बात कही। लीजिये आप अवश्य दर्शन करिये।

नोट :—उस पुस्तक को श्री पण्डित माधवाचार्य जी ने कभी न देखा था न सुना ही था। पुस्तक देखकर सन्न रह गये। सारी सभा में सन्नाटा छा गया।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर साहिब यह पुस्तक आज मेरे ही पास रहने दीजिये मैं आज इसको देखूंगा और कल को इसका उत्तर दूंगा।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज ! कृपा करके मेरी पुस्तक तुरन्त अभी लौटा दीजिये उत्तर तो इसका आपसे तीन जन्म में भी नहीं हो सकेगा। और इसके पृष्ठ फाडकर कह दोगे कि इस पुस्तक में यह पाठ कहीं है ही नहीं। आप जल्दी पुस्तक वापिस कीजिये।

नोट :—पुस्तक वापिस आ गयी। मगर सारी सभा आश्चर्य में पड़ गयी। चारों तरफ सन्नाटा छा गया ! आर्य समाजी युवक उछल-उछल कर नारे लगाने लगे। चारों तरफ से आवाज आने लगी। वैदिक धर्म की—जय। आर्य समाज—अमर रहे। वेद की ज्योति—जलती रहे।

नोट : -अन्त में ठाकुर सहिब ने इशारे से उन युवकों को बिठा दिया तथा शान्त करके नारे लगाने को मना कर दिया। तथा शास्त्रार्थ आरम्भ किया—

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पुराणों की संख्या २१ हो गयी ! कहिये !! आप किस-किस पुराण के और कितनों पुराणों के बकील हैं ? एक और रहस्य भी है, वो यह है कि इन पुराणों में से छः से अधिक तामस पुराण हैं। जो

पढ़ने वालों को नरक में ले जाने वाले हैं। कहिये, उनको भी आप वेदानुकूल सिद्ध करेंगे ? पण्डित जी यह तो पता लग गया कि आपको नामों आदि का भी पता नहीं, अब पुराणों की अन्दरूनी पोल भी सुनिये। १. शिवजी ने महानन्दा वैश्या से सनातन धर्म (व्यभिचार) किया। २. आपके विष्णु भगवान ने जालन्धर की पत्नी वृन्दा से जालन्धर का रूप बनाकर छल से सनातन धर्म (व्यभिचार किया)। ३. चन्द्र ने अपनी गुरु पत्नी (देवों के गुरु बृहस्पति की पत्नी तारा) से **"सनातन धर्म"** (व्यभिचार) किया।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर साहिब आप इसको "**सनातन धर्म**" क्यों कहते है ? आपको लज्जा आनी चाहिये।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज लज्जा की बात तो आप अपने ऋषि उद्दालक को पूछिये इस बारे में अगर आपको नहीं पता तो सुनिये महाभारत में कहा गया है कि—उद्दालक का पुत्र श्वेत केतु था। उद्दालक की पत्नी को पकड़ कर एक ब्राह्मण एकांत जंगल में ले जाने लगा तो श्वेत केतु ने उस पर क्रोध किया। उद्दालक ने श्वेत केतु को कहा कि, "**मा तात कोपं कार्षीक्षत्वं एषः धर्मः सनातनः ॥**" अर्थात्—बेटा कोप मत करो, यह तो "**सनातन धर्म**" है पण्डित जी महाराज ! मैं तो आपके ग्रन्थों के आधार पर इसे "**सनातन धर्म**" कहता हूं। अपनी ओर से थोड़े ही। जनता में तालियों की गडगडाहट के साथ बेहद हंसी.........
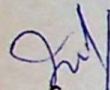
श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

पण्डित जी पुराण नाम तो वेद में भी है। देख लीजिये—और महाराज ! हे मेरे ठाकुर जी !! महानन्दा व्यभिचारिणी नही थी, वह तो वेद मन्त्र गाती थी, भगवान शिव जी उसकी भक्ति की परीक्षा लेने को उसके घर गये थे। व्यभिचार करने को नहीं गये थे। व्यभिचार की शिक्षा तो आर्य समाज ही देता है। सनातन धर्म नही मैं कल बताऊंगा कि व्यभिचार की शिक्षा आर्य समाज किस प्रकार देता है ? फिर उस घर में शिव जी की महिमा से ही आग लग गयी थी, व्यभिचार की बात तो वहां आप ही को सूझती है। वृन्दा पतिव्रता थी। उसका पति जालन्धर दुष्ट था। भगवान उसको मारना चाहते थे। वह वृन्दा के पतिव्रत धर्म के कारण मर नही सकता था। इसलिए उसके पतिव्रत धर्म को भङ्ग किया कि जालन्धर को मारा जा सके। आपको सब जगह व्यभिचार ही व्यभिचार दीखता है। वह चन्द्रमा कोई पृथिवी का मनुष्य नहीं था। वह चन्द्रमा यही है जो रात्रि को आकाश में दिखाई देता है बृहस्पति भी नक्षत्र है तारा भी नक्षत्र का ही नाम है। ज्योतिष तो आप लोगों को आती नहीं है यह विषय बिना ज्योतिष पढ़े समझ में नहीं आ सकता है। आकर्षण-विकर्षण से तारा के चन्द्र कक्ष में आ जाने से चन्द्रमा के द्वारा उससे एक ग्रह और उत्पन्न हो गया। उसका नाम "**बुद्ध**" है, ज्योतिष पहले पढ़िये, ठाकुर साहब ! अगर इसे समझना हैं

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सज्जनों ! पण्डित जी कहते हैं कि —महानन्दा व्यभिचारिणी स्त्री नही थी, वह तो वेद मन्त्र गाती थी। उसका गाना सुनने को पण्डित जी भी गये होंगे। हमको इससे मतलब नहीं कि वह क्या गाती थी ? पर वह व्यभिचारिणी स्त्री नही थी, यह पण्डित जी ने उसकी सफाई में वैसे ही कह दिया। पण्डित जी ! जिसकी आप वकालत कर रहे हैं, उससे पूछ तो लेते कि वह व्यभिचारणी है या ब्रह्मचारिणी ? महाराज जी ! वह स्वयं कह रही है—

वयं हि स्वैरिचारिण्यो, वेश्यास्तु न पतिव्रता। अस्मत् कुलोचितो धर्मो, व्यभिचारो न संशयः ॥

अर्थात् वह कहती है कि, हम व्यभिचारिणी हैं, पतिव्रता नहीं हैं। हमारे कुल का धर्म ही व्यभिचार है, इसमें कुछ संशय नहीं। और पण्डित जी कहते हैं कि—शिव जी उसकी भक्ति की परीक्षा लेने को गये थे। ठीक है। आप भी कई वैश्याओं के यहां उनकी भक्ति की परीक्षा के लिए जाते होंगे। जनता में हंसी········ उस वेश्या के घर में आग लग गयी होगी, पर आपके शिव जी नर्म तकिये व गद्दे लगाकर पलंग पर सोये तो सही। आग सनातन धर्म करने के बाद लगी या पहिले ही लग गई ? यह तो आप ही बताइये। परीक्षा पूरी हो गई या अधूरी ही रह गयी ? श्रोताओं में फिर हंसी ·····। वृन्दा-पतिव्रता थी, पर आपके विष्णु जी ने उसके साथ व्यभिचार किया। यह तो आप भी मान गये। मारना था एक दुष्ट को एक पतिव्रता के धर्म को नष्ट क्यों किया ? इसके लिए उस पतिव्रता के धर्म को भ्रष्ट किया और अपना भी धर्म भ्रष्ट किया। यह अनौखा सनातन धर्म है। धन्य हैं आपके विष्णु जी को पर पण्डित जी इस पाप का फल भी आपके विष्णु जी को भोगना पड़ा। आपके विष्णु जी की पत्नी को भी कोई मायावी, छली, कपटी हरण करके ले गया। वह पतिव्रता—अपने पति को तो मरने से नहीं बचा सकी पर विष्णु जी की पत्नी को तो हरण करवा ही दिया। इस सारी लीला को वेदों से सिद्ध करिये कि पतिव्रता का व्रत भङ्ग करना, धोखा देकर पतिव्रता से व्यभिचार करना, यह सब वेदानुकूल सिद्ध करिये तभी तो पुराण वेदानुकूल सिद्ध होंगे। चन्द्र का गुरु पत्नी गमन आकाश के चन्द्रमा के मत्थे नहीं मढ़ा जा सकता। वह चन्द्रमा आकाश का नहीं भूमि का था, ऐसा पुराण से सिद्ध हो रहा है। इसके लिए ज्योतिष पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। आप पुराण को पढ़िये। वह चन्द्रमा अत्रि का पुत्र बताया गया है और बृहस्पति नक्षत्र नहीं, वह आपके देवों के गुरु बताये गये हैं। उनकी पत्नी तारा से व्यभिचार करके जो पुत्र उत्पन्न कियां, उसका नाम "बुध" बताया गया है। वह बुध आकाश का ग्रह नहीं था उसका विवाह मनु की पुत्री "इला" के साथ हुआ लिखा है। आगे उससे वंश चला। मनुस्मृति में गुरु पत्नी गमन को महापातक, महापाप बताया गया है, सुनिये और नोट कीजिये।

ब्रह्म हत्या सुरापानं स्तेयं गुरू वंङ्गनाङ्गमः। महान्ति पातकान्याहु, संसर्गश्चापि तैः सहः ॥

(मनुस्मृति)

पुराणों को आप जन्म जन्मान्तर में भी वेदानुकूल सिद्ध नहीं कर सकेंगे। सुनिये और सुनाता हूं—शिव जी ने बहुतों को भोजन कराया—पीछे शिव दूती शिव जी के पास गयी कि हमको भोजन दीजिये।

आपके शिवजी ने उसको कहा—मेरी नाभि के नीचे दो अण्डकोष हैं, इनको तुम खा लो।

कहिये पण्डित जी महाराज ! यह "कैलासी सेब" कभी आपने भी देखे और बर्ते कि नहीं ? श्रोताओं में हँसी ही हँसी...... ।

राक्षस ब्रह्मा जी से मैथुन करने दौड़े, ऋषि लोग राम से मैथुन करना चाहते थे । कृष्ण ने अर्जुन को अर्जुनी बनाकर और नारद को नारदी बनाकर मैथुन कर दिया । महाराज जी ! आप क्या-क्या वेदानुकूल सिद्ध करेंगे । एक दो हो तो कहूं, यहाँ तो पूरे कुएँ में भङ्ग पड़ी हुई है ।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

ठाकुर जी ! आपको सब जगह व्यभिचार और मैथुन ही दिखायी देता है । शिव जी के पास शिव दूती अर्थात् मृत्यु आई और उसने भोजन मांगा । शिव जी ने कहा ब्रह्माण्ड को खा लो, सो मृत्यु ब्रह्माण्ड को खाती है । दूसरी बातें जो आपने बताई हैं, उसमें मैथुन का अर्थ है मेल राक्षस भी ब्रह्मा जी से मेल करना चाहते थे, तो क्या बुराई ? ऋषि लोग भक्ति करके भगवान राम की उपासना करना चाहते थे । भगवान कृष्ण ने अर्जुन और नारद की भक्ति को स्वीकार किया । आपको सर्वत्र बुराई ही बुराई दीखती हैं । पुराणों को कभी गुरु मुख से पढ़ते, तो उनके गौरव को समझते । उर्दू के एक शायर ने कहा हैं—

यार को खाना खिलाया, मैंने अपने दस्त से । उसके पीने के लिए, पेशाब मैंने कर दिया ।।

गन्दा आदमी यहाँ "दस्त" का अर्थ विष्टा, (पाखाना) और पेशाब का अर्थ मूत्र ही समझेगा, पर उस शायर ने दस्त "हाथ" को कहा है, मैंने अपने मित्र को अपने हाथ से भोजन कराया और उसके पीने के लिए आब (पानी) पेश (उपस्थित) कर दिया । उसके आगे पानी रख दिया । ऐसे ही पुराणों में कविता है । उसका सत्य अर्थ और है, इनको तो गन्दा ही अर्थ लेना है, सो लेते हैं । जिन्होंने गुरु मुख से पुराणों को पढ़ा है वह उनके वास्तविक अर्थों को जानते हैं, और पुराणों में श्रद्धा रखते हैं ।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सज्जनो ! मेरे प्रश्नों के जो उत्तर श्री पण्डित जी ने दिये उनको आपने सुन लिया, अब इन उत्तरों की पोल भी सुनिये ।

शिवदूती मृत्यु है, वह शिव जी के पास अपनी भूख मिटाने के लिए भोजन माँगने को आई । शिव जी ने उसको कहा कि, ब्रह्माण्ड को खाओ, सो मृत्यु ब्रह्माण्ड को खाती है, इसकी भी पोल सुनिये—**आस्वादितं न चान्येन भक्ष्यार्थे च ददाम्यहम ।।२५।। अधो भागे च मे नाभेर्वतुलौ फल सन्निभौ । भक्ष्यध्वं हि सहिता लम्बौ में वृषणाविमौ ।।२६।।** (पद्म पुराण सृष्टि खण्ड १ अध्याय ३१ श्लोक २५, २६,) । अर्थात्—जो किसी ने कभी नहीं खाया, वह खाने के लिए देता हूं । मेरी नाभि के नीचे गोल-गोल दो, फलों की तरह हैं । सब मिलकर खाओ, यह लटकते हुए लम्बे-लम्बे मेरे दो अण्ड-कोष (वृष्ण) हैं । इन श्लोकों में मेरी नाभि के नीचे दो अण्डकोष गोल-गोल फल की भाँति हैं । इनको खा लो, यह कहा है । नाभि के नीचे कौन सा ब्रह्माण्ड है ? आपको ब्रह्माण्ड सूझ रहा है, जो एक है ।

पर शिव जी कहते हैं एक नहीं वह दो हैं दो। वहाँ द्विवचन है, **"वर्त्तुलौ"** दो गोल **"फल सन्निभौ"** फलों की भाँति !

ब्रह्माण्ड के लिए या तो एक वचन होता या बहुवचन होता यहाँ तो द्विवचन है, और ब्रह्माण्ड नहीं श्री मान जी बिल्कुल स्पष्ट है **"वृष्णाविमौ"** यह दो वृष्ण अर्थात् दो अण्ड कोष हैं' यह कहा है।

आपने गन्दा शैर बोला और पुराणों के महाकाव्य को उसके सदृश बताया, **"यार को खना खिलाया"** आदि-आदि यह किसी अच्छे कवि=शायर का शैर नहीं गन्दे तुक्कड़ "चिरकीन" जैसे किसी जाहिल शायर की कविता के तुल्य बताकर आपने स्वयं पुराणों की मिट्टी पलीद कर दी। **"जादू वह जो शिर चढ़ कर बोले, क्या मजा जो गैर परदा खोले।।"** पुराणों में व्यभिचार मैथुन, साफ-साफ लिखा हुआ है। देखिये—राम जी के साथ मैथुन के इच्छुक—

पुरामहर्षयः सर्वे दण्ड कारण्य वासिनः। दृष्ट्वा रामं हरिं तत्र भोक्तुमिच्छत्सु (मैच्छन्सु) विग्रहम् ।।१६६।।
ते सर्वे स्त्रीत्वमापन्नाः समुदभुतास्तु गोकुले। हरिं संप्राप्य कामेंन ततो मुक्ताः भवार्णवात् ।।१६७।।
(पद्म पुराण उत्तर खण्ड ६ अध्याय २७२ पृष्ठ १८७ श्लोक १६६, १६७,)

श्री राम जी से मैथुन के इच्छुक हुए वह सब ऋषि इसी कारण स्त्रीत्व को प्राप्त हुए अर्थात् द्वापर में सब स्त्री बन गये और और श्री कृष्ण जी ने उनके साथ सनातन धर्म करके उनकी उस समय की इच्छा को पूर्ण किया। अब आप अर्जुन अर्जुनी के बारे में सुनिये—

श्री कृष्ण जी ने अर्जुन को अर्जुनी बनाकर उसके साथ सनातन धर्म (व्यभिचार) किया। प्रमाण देखना है तो देख लीजिए—**"पद्म पुराण ५ पाताल खण्ड अध्याय ७४ श्लोक १९१, १९२,"** आगे नारद-नारदी के बारे में सुनिये—नारद को नारदी बनकर श्री कृष्ण जी के पास पहुंच गये, और श्री कृष्ण जी नारदी के साथ एक वर्ष तक सनातन धर्म करते रहे। प्रमाण देखना है तो देख लीजिए—**"पद्म पुराण ५ पाताल खण्ड अध्याय ७५ श्लोक ३१**, ३२, ३३, ४०, ४१, ४२," यह है महाराज जी! आपके पुराणों की शिक्षा, इन पुराणों को आप जन्म जन्मान्तर में भी वेदानुकूल सिद्ध नहीं कर सकेंगे, यह मेरा दावा है।

नोट :—श्री पण्डित माधवाचार्य जी ने अपने पहिले दिये हुए सभी उत्तर दोहराये, सारा समय उनके दोहराने में व्यतीत हो गया। कैलासी सेव जो शिव जी ने शिवदूती को खाने के लिए जो अपने **"वृष्ण"** अण्डकोष बताये तथा अर्जुन को अर्जुनी बनाकर तथा नारद के नारदी बनने पर जो कृष्ण के मैथुन की बात कही गई, उस पर श्री पण्डित माधवाचार्य जी ने कुछ भी न कहा। महानन्दा वेश्या और शिव समागम तथा वृन्दा के साथ व्यभिचार का भी कुछ उत्तर नहीं दिया।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

क्यों पण्डित जी! करदी ना वही लीपा पोती, अरे! मेरे तो सारे प्रश्नों को ऐसे ही पी गये जैसे श्राद्ध की खीर! जनता में हँसी······! इसके सिवाय और आप कर भी क्या सकते थे? उत्तर

उन प्रश्नों का आप क्या देते ? कोई भी नहीं दे सकता ! भला इन बातों से कोई मना कर सकता है, ? जो स्पष्ट पुराणों में ·····शास्त्रार्थ के बीच में ही······

नोट :—सनातन धर्म सभा के प्रधान **श्री बाबू लेखराज जी** (स्टेशन मास्टर) सभा के बीच में खड़े होकर दोनों हाथ ऊपर खड़े करके जोर-जोर से कहने लगे—

"सज्जनो ! अगर सनातन धर्म यही है, और पुराणों की यही वास्तविकता है, तो "मैं आज से सनातन धर्मी नहीं रहा । मैं तो आज से वैदिक धर्मी (आर्य समाजी) बनने की घोषणा करता हूं ।

बस ! मास्टर साहब का इतना कहना था कि चारों तरफ खलबली मच गयी सारा वातावरण "वैदिक धर्म की—जय, आर्य समाज—अमर रहे, महर्षि दयानन्द की—जय ठाकुर अमर सिंह शास्त्रार्थ केशरी -जिन्दाबाद, पुराण—वेद विरुद्ध हैं। सभी श्रोतागण सनातन धर्म की निन्दा करते हुए चले गये, श्री ठाकुर साहब एवं मास्टर जी को लोगों ने पुष्प मालाओं से लाद दिया। और लोगों ने ठाकुर साहिब को कहा—ठाकुर साहब ! **"जब तक आप जैसे विद्वान, योग्य वकील आर्य समाज में उपस्थित हैं। तब तक झूठ पैरों नहीं चल सकेगा। आज आपने जो विषय की वास्तविकता उपस्थित की ऐसी न कभी सुनी न देखी थी आपसे एक ही प्रार्थना है, आप यह विद्या अपने साथ ही लेकर मत चले जाइयेगा।"**

वर्तमान आर्य भाइयों से–

भाइयों ! शास्त्रार्थों से वैदिक धर्म के प्रचार में बड़ी मदद मिलती थी, उपरोक्त शास्त्रार्थ इस बात का जीता-जागता प्रमाण है मुझे यह बात सैकड़ों व्यक्तियों ने कही कि **"स्वामी जी महाराज शास्त्रार्थ तो अब होते नहीं, आप यह प्राचीन शास्त्रार्थों के विवरण अगर छपा जावें तो समाज पर आपका बड़ा भारी उपकार होगा"** मैं भी स्वयं इस बात को अनुभव करता था, कि यह कार्य अब वर्तमान समय में मेरे बिना कोई कर नहीं सकता, क्योंकि पुराने शास्त्रार्थ कर्त्ता, सभी एक-एक करके भगवान को प्यारे हो गये, इस लिए मैंने यह संग्रह प्रकाशित कराया है। वैसे मैं भी टिकट लिए बैठा हूं, न जाने कब गाड़ी आवे और ले जावे।

वैदिक धर्म का—

"अमर स्वामी सरस्वती"

पन्द्रहवां शास्त्रार्थ--

स्थान : बद्दोमल्ली (जिला स्यालकोट,) (वर्तमान पाकिस्तान)
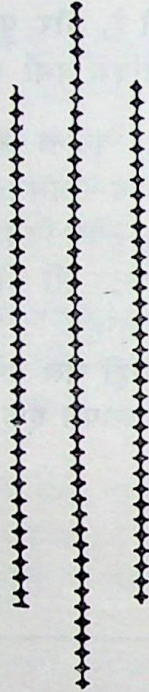
दिनाङ्क : १६ मई सन् १६४१ (द्वितीय दिवस)
विषय : क्या सत्यार्थ प्रकाश वेद विरुद्ध है ?
पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री
सहायक : १. श्री पण्डित दिवाकर दत्त जी शास्त्री
२. श्री पण्डित श्री कृष्ण जी शास्त्री
३. श्री पण्डित कुञ्जलाल जी शास्त्री
आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थकर्त्ता : श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी
सहायक : श्री पण्डित वाचस्पति जी एम० ए०
आर्य समाज की ओर से प्रधान : श्री जीवन दास जी सर्राफ
,, ,, मन्त्री : श्री मथुरा दास जी मदान
पौराणिकों की ओर से प्रधान : स्टेशन मास्टर श्री बाबू लेखराज जी
,, ,, मन्त्री : श्री लाला कर्म चन्द जी
अन्य उपस्थित विद्वान् : १. एक मुसलमान चौधरी श्री फजल अहमद साहिब
२. ईसाई पादरी श्री यूहन्ना साहिब

शास्त्रार्थ से पहले

श्री मथुरा दास जी मदान—

सज्जनों ! आज प्रश्न सनातन धर्म की ओर से श्री पण्डित माधवाचार्य जी को करने निश्चित थे, और आर्य समाज की ओर से उत्तर दाता "श्री पण्डित भगवद्दत्त जी रिसर्चस्कोलर" निश्चित थे। परन्तु पण्डित भगवद्दत्त जी का तार आ गया कि, मैं बीमार हो गया हूं, आ नहीं सकता हूं। इस कारण आज उत्तर देने का कार्य भी "श्री अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी" ही करेंगे।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

जो नियमानुसार निश्चित था, उसी के अनुसार कार्य चलना चाहिये यह तार वाली बात झूठ है। अपनी ओर से बनाई गयी है, श्री पण्डित भगवद्दत्त जी को ही बुलाओ तभी शास्त्रार्थ होगा।

नोट :—

मदान साहब ने तार दिखला दिया, तो पण्डित जी लज्जित होकर चुप हो गये।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी आप घबराते क्यों हैं ? आप अपनी ओर से किसी अन्य बड़े से बड़े विद्वान को लाना चाहो तो ला सकते हो, शास्त्रार्थ आपका और पण्डित भगवद्दत्त जी का नहीं है, शास्त्रार्थ तो आर्य समाज और सनातन धर्म का है, आपकी ओर से कोई भी आये, तथा आर्य समाज की ओर से चाहे जो भी शास्त्रार्थ करे इसमें आपको क्या आपत्ति है ?

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों ! स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा हैं कि १. शिर के बालों के साथ चोटी भी कटा देवे। सज्जनों हमारे सनातन धर्मी वीरों ने अपनी चोटी की रक्षा के लिए अपने शिर भी कटवा दिये, पर महादुःख की बात है कि, स्वामी दयानन्द जी ने चोटी कटाने का भी आदेश दे डाला। यह ईसाइयत का प्रचार है। २. हमारे देश के वीर लोग अपनी माता का दूध पीकर ही वीर बनते थे,

स्वामी दयानन्द जी ने बच्चों को माता का दूध पिलाना बन्द करके धाया का दूध पिलाना सत्यार्थ प्रकाश में लिख दिया, यह भी ईसाई मत का ही प्रचार है और वेद विरुद्ध है ३. सत्यार्थ प्रकाश में स्वामी दयानन्द जी ने दशवें समुल्लास में मनुष्य का मांस खाने में कोई दोष नहीं, यह लिख दिया ४. गर्भाधान के समय स्त्री-पुरुष दोनों के नाक के सामने नाक और आंख के सामने आंख लिखा यह भी वेद विरुद्ध है सिद्ध करो कि यह वेदानुकूल है ? आज मैं आर्य समाज की पोल खोल कर रख दूंगा। यदि स्त्री लम्बाई में छोटी हो और पुरुष लम्बा हो तो आंख के सामने आंख और नाक के सामने नाक कैसे होगी ? बताओ ठाकुर जी ? आज सब कुछ वेदानुकूल सिद्ध करना पड़ेगा । आर्य समाज की पोल तो आज ही खुलेगी। ५. एक प्रश्न वज्र के समान और करता हुं, वह यह है कि, सत्यार्थ प्रकाश में नियोग लिखकर व्यभिचार का द्वार खोल दिया है, बताइये नियोग का विधान वेद में कहां है ? और आर्य समाज में अब तक कितने नियोग हुए हैं, और किस-किसने किये हैं ? यह मेरे पांच प्रबल प्रश्न हैं, इनके उत्तर देकर आर्य समाज को बचाइये । आज शास्त्रार्थ में पता लगेगा कि आर्य समाज के सारे सिद्धान्त वेद विरुद्ध हैं इनको आज ठाकुर साहब वेद मन्त्रों से वेदानुकूल कैसे सिद्ध करते हैं ? यह मैं देखूंगा ।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

भाइयो सुनो !

बड़ा शोर सुनते थे, पहलू में दिल का । जो चीरा तो एक कतरा खूं , न निकला ।।

पण्डित जी बार-बार कहते थे कि, आज मैं आर्य समाज की पोल खोलकर रख दूंगा । आज आर्य समाज की पोल खुलकर ही रहेगी आदि-आदि । एक बारी में ही पांच प्रश्न कर दिये ५-१० मिनट में ५० प्रश्न भी किये जा सकते हैं, मुझको प्रश्न करने के लिए समय दे दीजिए मैं ५ मिनट में २०-२५ प्रश्न अभी कर दूंगा । परीक्षा में भी प्रश्न पत्र के उत्तर के लिए तीन घण्टे का समय दिया जाता है, पर यहां शास्त्रार्थ में एकदम पांच प्रश्न कर दिये उनके पास इतने ही थे, और गोले चला दिये । मैं एक-एक बारी में एक-एक प्रश्न का उत्तर दूंगा और प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दूंगा और ऐसा उत्तर दूंगा कि पण्डित जी को छठी का दूध याद आ जायेगा ।

नोट :—

इस पर पण्डित माधवाचार्य जी बहुत बिगड़े, और कहने लगे मैंने अपने समय में प्रश्न किये हैं, जितना समय था उतना मैंने लेना ही था । आप उत्तर दीजिये । काफी संघर्ष के बाद निश्चय हुआ कि, एक समय में एक ही प्रश्न एवं एक समय में ही उसका एक ही उत्तर दिया जावेगा, तो अपने पहले प्रश्न को ही श्री पण्डित माधवाचार्य जी ने दोबारा दोहराया पश्चात ठाकुर साहब जी ने निम्न प्रकार से उत्तर देना आरम्भ किया—

सज्जनों ! शिखा छेदन (चोटी कटाना) इस विषय का पाठ सत्यार्थ प्रकाश में इस प्रकार है । ब्राह्मण के सोलहवें, क्षत्रिय के बाईसवें और वैश्य के चौबीसवें वर्ष में **केशान्त** कर्म क्षौर मुण्डन हो जाना चाहिये । अर्थात् विधि के पश्चात **केवल शिखा को रख के** अन्य दाढ़ी-मूंछ और सिर के बाल सदा मंडवाते रहना चाहिये अर्थात् पुनः कभी न रखना और जो शीत प्रधान देश हो तो—कामचार है, चाहे

जितने केश रक्खे और जो **"अति उष्णदेश हो तो सब शिखा सहित कटा देना चाहिये"** यहां स्वामी जी ने **"अति उष्ण देश हो तो"** यह विशेष बताया है। विशेष कारण—संन्यास भी है तब क्या शिखा कटाने से संन्यासी ईसाई बन जाता है ? शिर का कोई रोग हो तो और चिकित्सा की सुविधा के लिए शिखा सहित बाल कटाने से रोगी मनुष्य ईसाई हो जायेगा ? अपने भी ग्रन्थ आपने-पढे देखे नहीं प्रमाण मुझसे सुनिये—देखिये केशान्त संस्कार के लिए मनुस्मृति में क्या लिखा है—

केशान्तः षोडशे वर्षे ब्राह्मणस्य विधियते। राजन्य बन्धोद्वाँविशे, वैशस्यधधिके तथा॥

(मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक ६५,)

ब्राह्मण के बालक का केशान्त संस्कार सोलहवें, क्षत्रिय का बाईसवें और वैश्य का चौबीसवें वर्ष में होता है। श्री मान जी ! इस संस्कार का नाम है, केशान्त और भगवान मनु ने इसका नाम **"केशान्त"** ही बताया है, जब केशान्त बताया ही हो गया तो "**शिखा**" कहां रहेगी ? "**मुण्ड़ोवा जटिलो वा अथवा स्वाच्छिखाजटः**" ॥२१९॥ (मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक २१९,) अर्थात् ब्रह्मचारी के लिए यहां तीन विकल्प हैं, १. शिर मुण्डवा दें, अर्थात् घोटमघोट हो जाये २. जटा रख ले ३. शिखा जट रहे। यहां घोटमघोट "**मुण्ड**" बिना चोटी ही हुआ। "**शशिखं वपनं कार्य्यं मास्नादबृह्मचारिणा**"॥३८॥ (पाराशर स्मृति अध्याय ८ श्लोक ३८,) यहां शिखा सहित केश कटाने का उपदेश ब्रह्मचारी के लिए है। मेरे पास ग्रह्यसुत्रों के भी अनेक प्रमाण हें पर एक प्रमाण हैं वह एक प्रमाण वेद का देता हूं। सुनिये—लिखिये और वेद में देखिये—"**यत्र बाणा सम्पतन्ति कुमारा विशाखा इव ॥४८॥**" (यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ४८,) अर्थ इसका यह है जहां बाण अच्छे प्रकार गिरते हैं, चोरी रहि त **शिखा** कुमारों की तरह। इस मन्त्र के भाष्य में आपके आचार्य उव्वट ने लिखा है—"**विगत शिखा सर्व मुण्डा**" विगत शिखा का अर्थ है सारा शिर मुण्डा हुआ (शिखा भी नहीं) आपके ही आचार्य महीधर जी ने इसके भाष्य में लिखा है—"**विगता शिखा येषां तं विशिखा, शिखारहिता, मुण्डित मुण्डा**" अर्थात् जिनकी चोटी नहीं रही वह विशिखा, (शिखा रहित) मुण्डे हुए शिर वाले। यहां भी चोटी कटी हुई है। ग्रह्य सूत्रों में तो कहा गया है कि—मुण्डन संस्कार में और केशान्त संस्कार में यह भेद है कि—मुण्डन में चोटी रख कर शेष बाल कटाये जाते हैं। और केशान्त संस्कार में "**कक्ष**" (बगल) वक्ष (छाती) उपस्थ (गुप्तेन्द्रिय) और शिखा सहित सब बाल कटाये जाते हैं।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि—माता बच्चे को छै दिन दूध पिलाये पश्चात् धायी ही दूध पिलाया करे। यह भी ईसाइयों के मत का प्रचार है, तथा वेद के सर्वथा विरुद्ध है। ठाकुर साहब ! इसे सिद्ध करके दिखाओं वेदों के अनुकूल कहां से करोगे ? आपको पता होना चाहिए माताका दूध ही बच्चे को शूरवीर और विद्वान बना सकता है।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

वाह ! वाह !! आपको और कुछ न सूझे तो ईसाइयों का नाम तो लेना आता ही है, सो लेकर कह दिया कि यह ईसाइयों का प्रचार है। श्री राम चन्द्र जी के लिए महाराज़ा दशरथ और कौशल्या

जी ने धायी रक्खी हुई थी। क्यों पण्डित जी क्या वह ईसाई थे ? श्री कृष्ण जी ने माता का दूध कभी पिया ही नहीं वह बिना माता का दूध पिये महान शूरवीर और महान विद्वान हुए कि नहीं ? यदि हुए तो फिर आपका यह कहना कि—"माता का दूध ही बच्चे को शूरवीर और विद्वान बनाता है" झूठ हुआ कि नहीं ? मान्धाता तो माता से उत्पन्न ही नहीं हुआ था। पिता के पेट से ही हुआ, माता का दूध एक दिन भी नहीं पिया और चक्रवर्ती महाराजा हुआ, भोज का वचन है कि—**"मान्धाता च-महीपति क्षितितलेऽलंकार भूतो गतः"** मान्धाता सारी भूमि का चक्रवर्ती सम्राट भूमि का अलंकार होकर मरा। कहिये– माता के दूध के बिना चक्रवर्ती सम्राट हुआ कि नहीं ? शिवजी के वीर्य से छै ऋषि पत्नियां गर्भवती हुई छैओं ने गर्भ गिरा दिये छै ओं लोथड़े (गर्भ) मिलकर एक हो गये उनका शरीर एक हो गया। और छं मुंह हो गये छै, कहिये उन छैओं ऋषि पत्नियों में से किस का दूध उस छै मुख वाले षडानन ने पिया था ? जब छैओं में से किसी का दूध उसने नहीं पिया फिर सब देवों का सेनापति स्कन्द नाम से हुआ कि—नहीं ? चित्तौड़ के राणा संग्राम सिंह के पुत्र उदय सिंह के पन्ना धायी प्रसिद्ध है कि नहीं ? जिसने राजकुमार उदय सिंह के प्राणों की रक्षा के लिए अपने पुत्र को बलिदान कर दिया जिस राणा उदय सिंह के नाम पर **"उदयपुर"** नामक प्रसिद्ध नगर राजस्थान में स्थित है फिर धाया का दूध पिलाना किस वेद मन्त्र के विरुद्ध है ? वह वेद मन्त्र क्यों नहीं बोला ? चरक और सुश्रुत के शारीरिक स्थानों में बच्चों को दूध पिलाने के लिए धायी रखने का उल्लेख स्पष्ट है। कभी आपने पण्डित जी महाराज पढ़ा भी है ? वहां उन आयुर्वेद के दोनों ग्रन्थों में सब लिखा है धायी कैसी हो तथा उसके स्तन कैसे हो ? उसको कैसा भोजन दिया जाए ? आदि-आदि। आपके गरुड पुराण में औषधि लिखी है जिससे धायी के अशुद्ध हुए दूध को कैसे शुद्ध किया जावे ? देखिये—**यजुर्वेद अध्याय १७ मन्त्र ७० तथा ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त ९६ मन्त्र ५ एवं अथर्ववेद में भी कहा गया है।** कहिये पण्डित जी महाराज ! क्या यह सब ईसाईपन है। अब भी कुछ लज्जा आई कि नहीं ?

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में नियोग लिखकर खुले व्यभिचार का प्रचार किया है नियोग को कभी भी आप वेदानुकूल सिद्ध नहीं कर सकेंगे। कर सकते हों तो करके दिखाओ ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

"रुधिर पिये पय ना पिये लगी पयोधर जोक" भाइयों ! गऊ के स्तन में जोंक लग जाये तो वह गौ के स्तन का दूध नहीं पीती हैं। वहां से भी वह रुधिर ही पीती है।

सत्यार्थ प्रकाश में एक से एक सुन्दर शिक्षा प्रद लेख हैं, पर आपको ईसायत और व्यभिचार के सिवाह कुछ नहीं मिला। कहिये ! व्यास जी ने अम्बिका से धृतराष्ट्र को, अम्बालिका से पाण्डु और अम्बिका की दासी से नियोग करके क्या विदुर जी को उत्पन्न नहीं किया ?

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

वह नियोग से नहीं, ठाकुर साहब ! वह वरदान से पैदा हुए थे।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज ! देवी भागवत में बिल्कुल स्पष्ट लिखा है कि **"व्यास वीर्यात्तु संजातो धृतराष्ट्रोऽन्ध एव सः"** (देवी भागवत पुराण) अर्थात् व्यास के वीर्य से ही अन्धा धृतराष्ट्र उत्पन्न हुआ था, सत्यवती ने अपनी पुत्रवधू अम्बिका को कहा था कि—**"कौशल्ये देवरस्तेऽस्ति निशीथे ह्यागमष्यिति"** अर्थात् हे वधू ! तेरा देवर (व्यास) आधी रात में तेरे पास आवेगा । क्यों जी ! क्या वरदान भी आधी रात में दिया जाता है ? दिन में नहीं । श्रोताओं में हंसी·······फिर लिखा है कि—दासी के साथ **"कामोपभोग"** से ऋषि व्यास तृप्त और प्रसन्न हो गये । वह श्लोक भी सुभाषितरत्न-भाण्डागार का आपको याद है कि नहीं ? देखिये—

पौराणिकानां व्यभिचार दोषो, न शंकनीयः कृतिभिः कदाचित् ।
पुराणकर्त्ता व्यभिचार जातस्त स्यापि पुत्रो व्यभिचार जातः ।।

(सुभाषित रत्न भाण्डागार)

अर्थ भी सुनिये—पौराणिकों में व्यभिचार दोष है पुराण कर्त्ता व्यास व्यभिचार से उत्पन्न हुआ (पाराशर ने सत्यवती के साथ नाव में ही सनातन धर्म (व्यभिचार) कर दिया जिससे व्यास उत्पन्न हुए) और व्यास ने सनातन धर्म कर-कर के, धृतराष्ट्र-पाण्डु और विदुर ही नहीं अपने निज पुत्र **"शुकदेव"** को भी शुकी (तोती) से सनातन धर्म (व्यभिचार) करके उत्पन्न किया ।

एक बात पण्डित जी महाराज ! वह सुनाता हूं जो आपने कभी नही सुनी हो । "केशरी की पत्नी अंजनी से पवन ने सनातन धर्म करके हनुमान को उत्पन्न किया"—देखो बाल्मीकीय रामायण, में जाम्वन्त का हनुमान को यह कहना कि—**"स त्वं केसरिणः पुत्रः क्षेत्रजो भीम विक्रमः ।।"** (बाल्मीकीय रामायण) अर्थात् हे हनुमान तुम केशरी के "क्षेत्रज पुत्र" महा बलवान तथा बड़े पराक्रमी हो । कहिये ! पण्डित जी महाराज ! क्षेत्रज वह ही होता है न ? जो किसी की स्त्री में किसी दूसरे के वीर्य से उत्पन्न हुआ हो ? पुराणों में से मैं आज असंख्य प्रमाण दूंगा । जिससे पण्डित जी महाराज इस विषय पर आज के बाद शास्त्रार्थ करना तो दूर की बात ! इस विषय को छुएंगे भी नहीं ।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री —

आप केवल वेद के प्रमाण दीजिये, आप तो वेदों को ही मानते हैं, पुराणों को जब आप मानते ही नहीं तो पुराणों के प्रमाण आप क्यों देते हैं ? पुराणों पर शास्त्रार्थ तो कल था ।

नोट :—

ठाकुर साहब के उपरोक्त उत्तरों को सुनकर जो दशा पण्डित माधवाचार्य जी की हो रही थी, वह दर्शनीय थी, जैसे बिना जल के मछली तड़फती है, वैसे हो पण्डित जी बिलबिला रहे थे ।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पुराणों के प्रमाणों से घबराने लगे, हिम्मत है तो कहिये कि, पुराणों में नियोग नहीं है या

कहिये कि मैं पुराणों को नहीं मानता हूं। सनातन धर्मियों से डरते क्यों हैं ? आज खुली घोषणा करिये कि पुराणों को मैं नहीं मानता हूं। मैं फिर पुराणों का एक भी प्रमाण नही दूँगा। आप पुराणों को जब तक मानते रहेंगे तब तक हम पुराणों के प्रमाण देते रहेंगे। कल पुराणों को वेद विरुद्ध सिद्ध करने के लिए पुराणों के प्रमाणों की झड़ी लगा दी थी। आज जो कुछ आप सत्यार्थ प्रकाश में से पूछते हैं वही मैं पुराणों में दिखाता हूं। हम पुराणों को प्रमाण मानते नहीं हैं तो भी आपके लिए आपके मान्य ग्रन्थों के प्रमाण देते हैं तथा देते रहेंगे। यह "**उष्ट्रलष्टिकान्याय**" है, नहीं जानते तो सुनिये—"एक ऊंट पर बहुत सी लाठियां लाद कर ले जाई जा रही थी, ऊंट चलता नहीं था, शरारत करता था, मालिक को भी धमकाता था। उसने ऊंट की कमर पर लदी हुई लाठियों में से एक लाठी निकाल कर जोर-जोर से ऊंट की टांगों में मारी, फिर कमर पर लदी लाठियों में ही उसको रख दिया।" बस ! जब आप गड़बड़ करेंगे तब आपकी कमर पर लदी पुराणों की लाठियों में से एक-एक लेकर आपको जमाता जाऊंगा, और जमाने के बाद आपकी कमर पर ही रखता जाऊंगा। श्रोताओं में भारी हंसी....आप वेद का नाम बहुत देर से चिल्ला रहे हैं, तो लो वेद का भी प्रमाण नियोग पर लो—"**उदीर्ष्व नार्यभि जीव लोकम्**...." (ऋग्वेद) इस मन्त्र का शौनक के ऋग्विधान में भी नियोग में ही विनियोग है, उसमें कहा गया है कि विधवा का देवर इस मन्त्र को पढ़कर शरीर में घृत मलकर अपनी भाभी से एक पुत्र उत्पन्न करे। साथ ही लिखा है कि—कई विद्वानों के मत से दो सन्तान भी भाभी से उत्पन्न की जा सकती हैं। इस मन्त्र में "**हस्त ग्राभस्य**" ऐसा पाठ है इसी को लक्ष्य करके भीष्म जी ने नियोग को वेदानुकूल बताया है। और कहा है कि –"**पाणिग्राहस्य तनय, इति वेदेषु निश्चितम्**" नियोग से उत्पन्न हुई सन्तान उस मरे हुए पति की मानी जायेगी जिसने इस स्त्री के साथ "**पाणिग्रहण**" किया था। ऐसा वेदों में निश्चय किया है तथा ऐसा ही भीष्म जी ने कहा हैं। आपने पूछा है कि—आर्य समाजियों ने कितने नियोग किये ? तथा आर्य समाजियों ने कितने कराये ! इसका उत्तर यह है कि—यह अनिवार्य कर्त्तव्य तो है नहीं यह आपद्धर्म है परमात्मा आर्यों पर ऐसी आपत्ति कभी न लाये। जिन पर आपत्ति आई थी उन्होंने नियोग कराये थे। आपके पुराणों में और महाभारत में सब लिखे हुए हैं १. सुदेष्णा से, २. दमयन्ती से, ३. अम्बिका से, ४. अम्बालिका से, ५. अंजनी से, ६. कुन्ती से, ७. माद्री से। जहां आवश्यकता हुई वहां नियोग हुए। आपके यहां और आवश्यकता हो तो आप कराइये, आर्य समाजी लोग कर सकते हैं। आपके ग्रन्थों में बहुत से नियोग दिखाये जा सकते हैं। ऐसे बीसियों नियोग सधवाओं और विधवाओं से हुए जैसे कुंवारी सत्यवती से पाराशर जी ने किया तथा जो कुंवारी कुन्ती से सूर्य ने किया वह नियोग तो नहीं पर सनातन धर्म (व्यभिचार) तो है ही।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों ! सत्यार्थ प्रकाश में बहुत गन्दी बातें लिखी हुई हैं, उसमें लिखा है कि मनुष्य गर्भाधान के समय स्त्री-पुरुष दोनों मुंह के सामने मुंह, आँखों के सामने आंख और नाक के सामने नाक रक्खे।

नोट :—

इस प्रश्न को पण्डित माधवाचार्य जी ने बहुत ही गन्दे ढंग से किया, जैसे हाथों के इशारे करके कहा कि स्त्री कितनी ऊंची उठे, कितनी नीची सरके अगर ज्यादा लम्बी हो तो कैसे करे ? अधिक छोटे कद की हो तो खुद ही बैंक करे, इस प्रकार कैसे नाक के सामने नाक और आंख के

सामने आंख आयेगी ? और फिर यह सब अनुभव बाल ब्रह्मचारी श्री माननीय महर्षि दयानन्द जी ने कैसे जाना ? भाइयो सुनो ! यह सब बिना अनुभव के कैसे हो सकता है ? क्या ब्रह्मचारी जी को सबसे अधिक चिन्ता इसी विषय की थी ? उनको और कोई काम नहीं था ? रात-दिन यहीं अनुभव करते रहे कि कहीं·········मारो साले को, यह पण्डित बदमाश है, चारों तरफ हल्ला मच गया। सारी सभा में कोलाहल मच गया। सनातन धर्मियों ने भी पण्डित जी को लज्जित किया कि आप शास्त्रार्थ ढंग से क्यों नहीं करते ? ऐसे उपद्रव क्यों उठाते हो ? यही प्रश्न अगर करना है तो यह बिना गन्दे इशारों के किये भी हो सकता है। बड़ी कठिनाई से शान्ति बनाई जा सकी। और पण्डित माधवाचार्य जी को पिटने से बचाया जा सका।

श्री पण्डित ठाकुर अमरसिंह जी शास्त्रार्थ केसरी—

सज्जनो आप शान्त हो जाओ यह पण्डित जी का दोष नहीं है। यह इनका स्वाभाविक गुण है जब कुछ और न सूझे तो इसी प्रकार की गड़बड़ करके यह शास्त्रार्थ समाप्त करा देते हैं। पर आप शान्त रहिये, मैंने भी आज अगर नहले पर दहला नहीं मारा तो पण्डित जी भी क्या याद रक्खेंगे।

पण्डित जी ! आंख के सामने आंख और नाक के आगे नाक व मुंह के सामने मुंह आदि-आदि के लिए शतपथ ब्राह्मण बृहदारण्यक उपनिषद् के अनेकों बार अनेकों प्रमाण आपको दिये हैं। वेद के भी अनेकों प्रमाण हैं। परन्तु आप उन्हें जानते हुए भी जानबूझकर इस प्रकार की गन्दी हरकतें कर-कर के झगड़ा कराना चाहते हैं। ये सभी अनुभव पहले आप कम से कम पण्डितानी जी से पूछकर तो आये होते ?······(पौराणिक दल में खलबली)।

नोट :—

उस गन्दे प्रश्न का उत्तर ठाकुर साहब ने ऐसा दिया कि पण्डित जी तिलमिला उठे ! उसे यहां नहीं दिया गया। ठाकुर साहब ने कहा—"**यस्मिन् यथा वर्त्तते यो मनुष्यतस्मिन् तथा तदावर्त्तितव्यं स धर्मः**"।

उर्दू के कवि ने कहा है—

बद न बोले जेरेगर्दू, गर कोई मेरी सुने। यह हैं गुम्बद की सदा, जैसी कहे वैसी सुने॥

पण्डित जी सभ्यता से प्रश्न करिये, तो उसका सभ्यता से उत्तर सुनिये। आपको यह सब शोभा नहीं देता। पर आप अपनी आदत से मजबूर हैं।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

अब जो ठाकुर साहब ने बात कही है, यह क्या सभ्यता के अन्तर्गत है ? तो फिर हमें कहने वाले आप कौन हैं ? चलो हम प्रश्न करते हैं। उत्तर तो इनसे बनता नहीं है। यह तो हम जानते हैं। स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि, स्त्री यौनि संकोचन करे, क्यों ठाकुर साहब लिखा है कि नहीं ? अब फिर कह दो कि प्रश्न गन्दा है, बोलते क्यों नहीं ? जब जैसी बात लिखी है वैसी ही पूछनी

पड़ेगी ना ·· ·· ! अगर सत्यार्थ प्रकाश में अच्छी सभ्यता की बात होती तो हम वही पूछते, जब उसमें हैं ही सारी गन्दी बातें तो और क्या हम अन्य ग्रन्थों में से प्रश्न करेंगे ? अब कोई ठाकुर साहब से पूछे कि यह ब्रह्मचारी जी ने अपने अनुभव पर लिखा है या वेद के आधार पर ?

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

पण्डित जी महाराज ! अनुभव तो आपको ही हो सकता है, पर आपके गरुड़ पुराण में यौनि संकोचन के लिए महौषधि लिखी है—

शंख पुष्पी जटा मासी, सोमराज्ञी च फालगूकम् ।।६।। माहिषं नवनीतं च, त्वेकी कृत्य भिषग्वरः । स मूलानि च पत्राणि क्षोरेणाज्येन पेषयेत् ।।७।। गुटिकां शोधितां कृत्वा, नारी योन्यां प्रवेशयेत् । दशवारं प्रसूतापि पुनः कन्या भविष्यति ।।८।। (गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड अध्याय १८ श्लोक ६, ७, ८,) कहिये पण्डित जी ! यह दवाई पुराण कर्त्ता ने किसके अनुभव से लिखी है ? क्या पाराशर जी ने कुंआरी सत्यवती से व्यास जी को जन्माकर सत्यवती को इसी नुस्खे से पुनरपि कन्या बनाया था ? क्या आपके किसी सूर्य ने कुंआरी कुन्ती से मैथुन करके "**कर्ण**" को उत्पन्न करके इसी औषधि से कन्या बनाया था ? क्या द्रोपदी भी पांच बार इसी औषधि से कन्या बनी थी ? बोलो ना पण्डित जी ! बोलो अब क्या आपके मुंह में जुबान नहीं रही, अब क्यों बुखार सा चढ़ रहा है ? "**इब्त-दाए इश्क में रोता है क्या । आगे-आगे देखना होता है क्या ।।**" मजे की बात यह है कि आपके पुराण कर्त्ता ने यह लिखा है कि वैद्य इस दवाई की गोलियां बनाकर स्वयं स्त्री की योनि में प्रविष्ट करे । कहिये पण्डित जी क्या आप भी कभी ऐसे वैद्य बने हैं, या ऐसे ही कोरे रह गये ? जनता में चारों ओर तालियों को गड़गड़ाहट के साथ हंसी और सभा शान्ति पाठ "**ओ३म् द्यौ शान्ति**·········"के साथ ही विसर्जन हो गयी ।

इन दोनों शास्त्रार्थों का प्रभाव

नोट :—

सुनातन धर्म सभा बद्दोमल्ली के प्रधान उस समय श्री बाबू लेखराज जी (स्टेशन मास्टर) थे । उन्होंने यह घोषणा········· "**मैं आज से सनातन धर्मी नहीं रहा ।**" पहले ही दिन के शास्त्रार्थ को सुनकर कर दी थी, पश्चात् वह सारी आयु भर आर्य समाजी ही रहे ।

तीसरे दिन का शास्त्रार्थ एवं इसमें अनुपम दृष्य

नोट :—

तीसरे दिन निश्चित नियमों के अनुसार आर्य समाज की ओर से श्री पण्डित ठाकुर

अमरसिंह जी को पुराणों पर प्रश्न करने थे, ठीक समय पर दोनों ओर के मंच तैयार कर दिये गये, और दोनों ओर शास्त्रार्थ कर्त्ता एवं अधिकारीगण जमकर बैठ गये। दोनों ओर पुस्तकों को ढंग से जमा कर दिया गया आर्य समाज के मंच पर श्री ठाकुर जी के परम मित्र श्री वाचस्पति जी एम० ए० बैठे थे तथा सनातन धर्म के मंचपर श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री के साथ पण्डित श्रीकृष्ण शास्त्री तथा श्री पण्डित दिवाकरदत्त जी शास्त्री तथा श्री पण्डित कुञ्जलाल जी शास्त्री विराजमान हो गये। शास्त्रार्थ का समय हो गया। टन-टन-टन............घंटी बजी,

प्रधान जी—

शास्त्रार्थ का समय हो गया है मैं श्री माननीय ठाकुर जी से प्रार्थना करता हूं कि वह नियमानुसार प्रश्न आरम्भ करें। जिससे शास्त्रार्थ आरम्भ हो सके और प्रार्थना करूंगा कि दोनों ही पक्ष सभ्यता व शिष्टाचार से प्रश्न करें और उत्तर दें, जिससे कोई किसी प्रकार की ग़ड़बड़ पैदा न हो, और शास्त्रार्थ शांतिपूर्ण ढंग से समाप्त हो सके।

श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी—

सज्जनों ! आज पुराणों पर मुझे......(बीच में ही पुलिस ने आकर कहा)......ठहरिये अभी शास्त्रार्थ आरम्भ मत करिये ! तनिक रुकिये।

शास्त्रार्थ मण्डप में पुलिस का आगमन

नगर कोतवाल साहब—

माननीय पण्डित जी तथा ठाकुर साहब ! एवं अन्य साहिबान् सुनिये। सुपरिटेंण्डेंट साहिब पुलिस विभाग स्यालकोट तथा डिप्टी कमिश्नर साहिब स्यालकोट के पास "**सनातन धर्म सभा बद्दोमल्ली**" के मन्त्री लाला मोहनलाल जी ने यह दरख्वास्त दी है कि, हम (सनातन धर्म सभा के) लोग शास्त्रार्थ नही करना चाहते हैं। हमारे साथ आर्य समाज के लोग जबर्दस्ती करते हैं, हमको उनसे अपनी जान का भी खतरा है। इसलिए यह शास्त्रार्थ बन्द कराया जाये इसे बन्द कराने वास्ते मैं ऐलान करता हूं कि साहिब ने जो चार कांस्टेबिल (सिपाही) एवं यह हथकड़ी भी साथ भिजवाई है। जो हमारी बात नहीं मानेगा हमें मजबूरन बतौर कानूनन् हथकड़ी लगाकर गिरफ्तार करके ले जाना पड़ेगा।

नोट :—

यह ऐलान सुनते ही पौराणिक पण्डित लज्जा के मारे ऊपर को आंख न उठा सके मुंह लटकाये चुपचाप उठकर चले गये, पीछे-पीछे पुलिस चली गयी.........उसके पीछे कुछ युवकों ने नारे लगाये—

पौराणिक पण्डित······गिरफ्तार हो गये, सनातन धर्म······हार गया। तब पुलिस ने उन युवकों को डांटा तथा नारे लगाने से मना किया।

उसके पश्चात् शास्त्रार्थ के पण्डाल में—

शास्त्रार्थ तो बन्द हो ही गया था। और चारों तरफ नारों से आकाश गूंज उठा············ बोलो ऋषि दयानन्द की···—···जय, जो बोले सो अभय············वैदिक धर्म की जय············ आर्य समाज······अमर रहे, वेद की ज्यति······जलती रहे, ठाकुर अमर सिंह······अमर रहे।

नोट :—

और इसी प्रकार नारे लगाते हुए ओ३म् का ध्वज ऊंचा किये झूमते हुए सभी आर्य सज्जन अपनी-अपनी जगहों पर चले गये। पश्चात् कभी उस कस्बे में सनातन धर्मियों की हिम्मत नहीं हुई कि शास्त्रार्थ की चर्चा भी कर सकें।

"सम्पादक"

अत्यावश्यक दृष्टव्य

सज्जनों !

इस बड्डोमल्ली के शास्त्रार्थ के साथ-साथ (प्रथम भाग) निर्णय के तट पर जो प्रथम संस्करण छपा था, उसकी पूर्ण छपी हुई सामग्री समाप्त होती है, पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज के सुझाव पर प्रथम संस्करण में जो चित्र आदि थे उनको निकाल दिया गया है, तथा व्यर्थ में जो मैटर को फैलाया गया था, उस सबको ठीक कर दिया गया है। जिसका परिणाम यह हुआ कि—"**३०० पेज की सामग्री मात्र २०० पेज में ही आ गयी**" अब जो शास्त्रार्थ स्वामी जी महाराज के शेष रक्खे हैं उनमें से कुछ यहां दिये जाते हैं, इस खण्ड के ४०० पेजों में जितने भी शास्त्रार्थों का समावेश हो सकेगा वह किया जावेगा।

जिन सज्जनों के पास प्रथम भाग पहले से मौजूद है अर्थात् प्रथम संस्करण हैं उनके लिए यह नया छपा मैटर अलग हिस्से में भी बाइडिंग करा दिया गया है। वह इस हिस्से को मंगाकर उसे पूरा कर सकते हैं। उन्हें द्वितीय संस्करण को मंगाने की आवश्यकता नहीं।

इस सामग्री के बढ़ाने से शास्त्रार्थों का क्रम भी बदल गया, तब हमने यही निश्चय किया कि इसको लगातार नम्बर पर ही रक्खें जब कभी आगे के खण्ड पुनः छपेंगे तो उनमें भी शास्त्रार्थों का नं० बदल कर क्रम ठीक से कर लिया जावेगा। अतः अब पन्द्रह नं० से यह शास्त्रार्थ का नं० डबल हो गया है। क्योंकि द्वितीय भाग में भी पन्द्रह नं० से ही आरम्भ किया गया है। इसे ध्यान में रख कर ही पढ़ें। "**शास्त्रार्थ की नवीन सामग्री जिसको सम्मिलत किया गया है वह सोलहवें शास्त्रार्थ से आरम्भ है।**"

हमने इस ग्रन्थ को व्यापारिक दृष्टिकोण से तो छपाना नहीं था, हम चाहते थे कि अधिक से अधिक सामग्री इसमें आ जावे, जिससे हमारे पाठकों को अधिक से अधिक लाभ हो। आगे के खण्डों में भी इस बात का विशेष ध्यान रक्खा गया है। पाठकों से इस कष्ट के लिए क्षमा चाहते हैं।

विदुषामनुचरः —

"लाजपत राय अग्रवाल"

"यह नवीन सामग्री जिसका समावेश इस द्वितीय संस्करण में आगे किया जा रहा है। प्रथम संस्करण में यह सामग्री नहीं है।"

❋ आवश्यक सूचना ❋

यह नवीन सामग्री अलग से भी प्राप्त हो जायेगी, जिन सज्जनों के पास निर्णय के तट पर ग्रन्थ का "प्रथम भाग" का प्रथम संस्करण है वह इसे अलग से मंगाकर अपने ग्रन्थ को पूरा कर सकते हैं। प्रकाशन से पत्र व्यवहार करें।

निवेदक—

"लाजपतराय अग्रवाल"

सोलहवां शास्त्रार्थ--

स्थान : आर्यपुरा (सब्जी मण्डी) दिल्ली
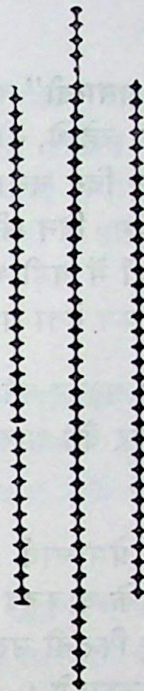
दिनाङ्क : २१ सितम्बर सन् १९७५ ई०

विषय : **क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है ?**

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **श्री अमर स्वामी सरस्वती (भूतपूर्व पण्डित ठाकुर-अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी)**

सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : **श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री**

सहायक : **श्री पण्डित रामेश्वराचार्य जी शास्त्री (बनारस)**

सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ के प्रधान : **श्री पण्डित बाल कृष्ण जी धर्मालंकार**

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ के प्रधान : **श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती (भूतपूर्व आचार्य भगवान देव जी, गुरुकुल झज्जर)**

अन्य उपस्थित विद्वान : **श्री ओम प्रकाश जी शास्त्री विद्याभास्कर, श्री पण्डित राजवीर जी शास्त्री (सम्पादक-दयानन्द-सन्देश) एवं अनेकों विद्वान ।**

शास्त्रार्थ से पहले

इस समय आर्य समाज की "**स्थापना शताब्दी**" का दौर चल रहा था। सारे देश में जगह-जगह पर शास्त्रार्थों के लिए चैलेञ्ज किये जा रहे थे, तो श्री दीपचन्द जी आर्य (कर्मठ कार्यकर्त्ता) ने भी शास्त्रार्थों का आयोजन रक्खा। यह क्रम ३ दिन चला तीनों दिन में दो दिन पूज्य "**महात्मा अमर स्वामी जी महाराज**" ने शास्त्रार्थ किया, प्रथम दिन श्री ओम प्रकाश जी शास्त्री, विद्याभास्कर (खतौली निवासी) ने किया था। इन शास्त्रार्थों में बड़ी भारी भीड़ एकत्रित हुई थी, मैं इन शास्त्रार्थों में स्वामी जी के साथ ग्रन्थों से प्रमाण ढूंढ़-ढूंढ़ कर देता था।

सारा वातावरण देखते ही एक अजीब प्रकार की उत्सुकता मन में जागती थी कि—देखें क्या होता है ? हर श्रोता की नजर दोनों मंचों पर बैठे शास्त्रार्थ कर्त्ताओं पर ही थी। हर व्यक्ति निर्णय के जानने का उत्सुक था।

स्वामी जी महाराज ने सर्व प्रथम श्री प्रेमाचार्य जी को शास्त्रार्थ आरम्भ करने का निर्देश सभापति जी द्वारा दिलाया। इतनी भीड होने के बावजूद भी कहीं कोई शोर नहीं था। जिससे साफ पता चलता था कि जनता धर्म निर्णय के लिए कितनी उत्सुक है ? इन शास्त्रार्थों में क्या निर्णय हुआ ? आप स्वयं आगे शास्त्रार्थ में पढ़िये और लाभ उठाइये।

विदुषामनुचर :

"**लाजपत राय अग्रवाल**"

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

आदरणीय विद्वत्गण, महान पूज्य माताओ, बहनों और सज्जनों। अब शास्त्रार्थ प्रारम्भ होना है, मैं आदरणीय अध्यक्ष महोदय से प्रार्थना करता हूं कि अभी तीन मिनट बाकी हैं पौने आठ बजने में। अतः पौने आठ बजने तक आप मेरी बात सुनें। पौने आठ बज जायें तो उस समय शास्त्रार्थ आरम्भ करेंगे।

सभा अध्यक्ष महोदय ! विद्वत्गण !! कल मूर्ति पूजा पर शास्त्रार्थ हुआ जो बहुत ही सरलता

और प्रसन्नता के साथ सम्पन्न हो गया। थोड़ा सा शोर हुआ था उसमें कुछ तालियां भी बजी। वो विद्वत् जन के आदेश थे आशा है आज उतना भी विघ्न नहीं होगा और सब शान्ति के साथ सुनेंगें। आशा है आप न कोई ताली बजायेंगे न कोई विघ्न करेंगे हमारे अध्यक्ष महोदय……टर्न टन टन……

श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती—

मैं निवेदन करूंगा क्योंकि समय हो गया है शास्त्रार्थ करने का ! श्री प्रेमाचार्य जी शास्त्री आज इस विषय पर शास्त्रार्थ कर रहे है कि श्राद्ध जीवित का होता है या मृतक का ? इनका विषय होगा **"श्राद्ध मृतक का होता है जीवित का नहीं"** आर्य समाज की ओर से प्रश्न होगा कि **"श्राद्ध जीवित का होता है मृतक का नहीं"** मैं प्रेमाचार्य जी शास्त्री से प्रार्थना करता हूं कि शास्त्रार्थ आरम्भ करें।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

हरि ओ३म् ! दयौ दर्शनं निद्वहानाम्बिशिबिदिश स्प्रह सा बिद्मर्जिवाह्याबाह्यारन्धकारक्षत जगदगंदकारथोम्नाम् स्वधाम्नाम। दो कर जोर दूर गर्जत् विपुथरवधकुण्ठकेल्व कल्पात्ज्वाला ताज्वल्यमानाविकर सततं विप्रया बिप्रतानि॥ मूकं करोति वाचालं पंगूम् लंघ्यते गिरिम्। यत् कृपा तम्हम् बन्दे परमानन्द माधवम्॥

माननीय सभापति युगल, वन्दनीय विद्वत् मण्डली, धर्मानुरागी सज्जनों ! एवम् देवियों !! अभी-अभी जैसा आप सुन चुके हैं आज के शास्त्रार्थ का विषय **"श्राद्ध"** है। मैं पहले आपसे निवेदन कर देना चाहता हूं कि आर्य समाज और सनातन धर्म ये दोनों ही श्राद्ध के मानने वाले हैं। आर्य समाज श्राद्ध को न मानता हो, सो ऐसी बात नहीं है। आज विवाद केवल इस बात का है कि आर्य समाजी सज्जनों का कहना है कि श्राद्ध जीवितों का होना चाहिए। हमारे जो बाप दादा मर गये, वे मर खप गये। उनके साथ हमारा कोई वास्ता नहीं झगड़ा खत्म हुआ। इसलिए जीते जी जो बने सो कर दो। मरने के बाद उनसे कोई हमारा सम्बन्ध नहीं। परन्तु सनातन धर्म का पक्ष तो यह है कि जब तक तुम्हारे माता-पिता जीवित हैं तो जीवित माता-पिता की सेवा करो, उनकी आज्ञा मानों जैसा वे कहें करो, करने की चेष्टा करो परन्तु जब वे मर जायें अर्थात् समय आने पर मृत्यु को प्राप्त हो जायं तो मर जाने के बाद भी हमारा उनके प्रति कर्त्तव्य समाप्त नहीं हो जाता। मरने के बाद भी हमारे ऊपर कुछ भार रह जाता है। कि हम उनके लिए कुछ करें। शास्त्र कहता है कि पुत्र कौन है ? किसको पुत्र बोलते हैं ? शास्त्रकार बोलता है—

जीवितो वाक्य कर्णात्, मृताहे भूरि भूजनात। गयायाम् पिण्डदानाच्च, त्रिविद् पुत्रस्य पुत्रता॥

जो तीन काम करता है वह पुत्र है। कौन से तीन काम ? जब तक माता-पिता जीवित हैं उनकी आज्ञा माने उनकी सेवा करे। जब वे मर जायें उनके लिए पिण्डदान, तर्पण, श्राद्ध करे। और तीसरा काम यह है कि **"गया"** तीर्थ पर जाकर संभव हो सके तो प्रयत्न करें, पिण्डदान करे। ये तीन काम करने वाला है पुत्र ! क्षमा करें, आज का विषय वेदादि शास्त्रों के द्वारा हमें प्रमाणित करना है। देखो आप सभी इस बात को जानते हैं कि जो भी ईश्वरवादी भगवान को मानने वाले संसार में जितने भी लोग हैं वे किसी

न किसी रूप में अपने मृतक के प्रति जो मर गया, हमसे बिछुड़ कर चला गया उनके प्रति अपना कोई न कोई सम्बन्ध बनाकर रखते हैं और किसी न किसी रूप में श्राद्ध करते हैं। देखो अगर कोई मान लीजिए कोई महापुरुष या नेता लीडर प्लीडर, कोई मर जाता है तो और कुछ भी न सही तो दो मिनट के लिए पार्लियामैंट में या और किसी हाल में मरे हुए की आत्मा की शान्ति के लिए दो मिनट का मौन रखा जाता है। दो मिनट तो शान्ति रखते हैं सदस्य लोग खड़े होकर। तो यह भी मरने वाले के प्रति हमने कुछ किया, हम शान्त रहें, शान्ति पाठ किया। मौन रहे। यह हमने अपना उसके प्रति कर्त्तव्य निभाया। इस प्रकार हमारे मुसलमान भाई वो भी कबर के ऊपर जाकर फूल बताशे चढ़ाना, यह काम करते हैं। इसी प्रकार ईसाई सज्जन भी कब्रों पर जाकर मोमबत्ती जलाना जिससे उसकी राह रोशन हो जाये, मरने वाले की आत्मा, इस भावना से मोमबत्ती जलाते हैं, तो कहने का तात्पर्य यह है कि सारे संसार में हमारे सिक्ख सज्जन अपने मृतक के लिए एक विशेष प्रसाद दरगाह में बनवाते हैं तथा उसे बंटवाते हैं। और जब वह प्रसाद बंटता है गुरुद्वारों में, तब दरगाह के बीच, यह कहा जाता है—अमुख सिंह ने अमुख आदमी के लिए ए भेंट कित्ती, सौ कबूल फरमाई जावे। तो कहने का तात्पर्य यह है कि मृतक के प्रति कुछ न कुछ करने की भावना हम संसार के सभी ईश्वरवादी मत-मतान्तर वादियों के बीच में देखते हैं। परन्तु सनातन धर्म क्योंकि वेदोक्त धर्म है, वेद—हमें क्या करना चाहिए, कैसे करें कौन-कौन से काम करें ? हमें अंधेरे में नहीं रखता। बल्कि वे हमें एक सुस्पष्ट मार्ग हमारे सामने रखता है। मैं आपको वेद मन्त्र बताकर इस बात की स्थापना करूंगा कि शास्त्रों में हमें किस प्रकार श्राद्ध करना मृतकों का हमें वेद बताता है। देखो सज्जनों ! और कोई चाहे विषय संक्षेप में या थोड़े मन्त्रों में वर्णित किये गये हों, ऐसा हो सकता है, परन्तु श्राद्ध एक ऐसा विषय है जिसको वेदों में एक-दो मन्त्रों में नहीं बल्कि हजारों मन्त्रों में उसका वर्णन किया गया। और बड़ी प्रसन्नता की बात है, उन वेद मन्त्रों को जिनको आज हम आपके सामने उपस्थित करने वाले हैं वे वेद मन्त्र आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के द्वारा दो विद्वान् नियत किये गये उनमें से एक पण्डित तडितकान्त विद्यालंकार और दूसरे पण्डित श्री दामोदर सातवलेकर जी, जो दयानन्द जन्म शताब्दी समारोह मथुरा, जैसा शताब्दी समारोह अब मनाने की तैयारियां हो रही हैं, ऐसे ही स्वामी दयानन्द का जन्म शताब्दी समारोह मनाया गया मथुरा में। उसके जो सभापति बने सुप्रसिद्ध वेद विद्वान् श्री पण्डित दामोदर सातवलेकर ! श्री पाद दामोदर सातवलेकर !! इनका वेद भाष्य सभी जानते हैं, सभी सुपरिचित हैं, उन्होंने प्रतिनिधि सभा की आज्ञा से वेद मन्त्रों का अनुसंधान किया और वेद मन्त्रों का अनुसंधान करके लगभग दो हजार मन्त्र, एक दो नहीं दो हजार ! सज्जनों दो हजा···र मन्त्र वेदों से निकाले। जिनमें मृतक के प्रति श्राद्ध करने का वर्णन विद्यमान है। इसी प्रकार यम और पितर नाम की पुस्तक मंगलदेव तडितकान्त विद्यालंकार जी ने लिखी। जो श्री पाद दामोदर सातवलेकर जी के प्रैस में छपी, वो पुस्तक चूंकि केवल सदस्यों के लिए थी, बिक्री के लिए नहीं थी, हमारे प्रेमी किसी आर्य समाजी सदस्य ने प्रेमपूर्वक वह पुस्तक हमें भेंट की, उसे हम अपने साथ लाये हैं, उस पुस्तक में ये मन्त्र संग्रहीत किये गये, और मृतक श्राद्ध के मन्त्र इक्ट्ठा करने के कार्य से प्रसन्न होकर प्रतिनिधि सभा पंजाब ने श्री पाद दामोदर जी महाराज सातवलेकर जी का धन्यवाद किया धन्यवाद के शब्द मैं आपको बांच कर सुनाता हूं। ये श्री पाद दामोदर सातवलेकर जी का ग्रन्थ वेदामृत नाम से है, सज्जनों ! **"वेदामृत"** !! आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, लाहौर ! उसका सर्टिफिकेट है जो इसके ऊपर छपा है, इसमें लिखा है—**"सभा पण्डित जी को हार्दिक धन्यवाद देती है, कि उन्होंने ऐसे परम पुनीत**

ग्रन्थ को प्रकाशित किया और ऐसे मन्त्रों का संग्रह किया।" इस लिए वेद के मन्त्रों का संग्रह स्वयं आर्य समाजी विद्वानों के द्वारा जो मृतक श्राद्ध का मण्डन करने वाले हैं एक दो मन्त्र नहीं बल्कि ढाई हजार मन्त्र हैं। उन मन्त्रों में से एक दो नमूना आपके सामने उपस्थित करेंगे, क्योंकि समय सीमित है, जैसे-जैसे और टर्न पड़ेगी हम आपको और भी मन्त्र सुनावेंगे, सबसे पहली बात तो यह है कि शास्त्रकार बोलते हैं कि श्राद्ध किसको कहते हैं? श्राद्ध का मतलब क्या है? श्राद्ध शब्द का? इसके ऊपर श्राद्ध कल्प का प्रमाण हम आपको सुनाते हैं। देखिये और ध्यान से सुनिये—

प्रेतान पितृ्ंश्च निर्दिश्य भोज्यं यत् प्रियमात्मनः। श्रद्धया दीयते यस्मात्, तस्मात् श्राद्ध इति स्मृतः॥

अपने मरे हुवे पितरों के नाम पर जो भोजन जो भोज्य पदार्थ हम श्रद्धा पूर्वक समर्पित करते हैं इस क्रिया का नाम श्राद्ध हैं। आपको स्मरण होगा कि यह श्राद्ध पर शास्त्रार्थ आज ही नहीं हो रहा है पहली बार! कई बार हो चुका, पहले भी कई बार हुआ, और जैसे आर्य सन्यासी आपके सामने विराजमान हैं, ऐसे ही सुप्रसिद्ध आर्य सन्यासी श्री स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज थे उनका शास्त्रार्थ श्री पण्डित गणेश दत्त महामहोपाध्याय सनातन धर्म के विद्वान् महोदय के साथ हुआ था, और उस शास्त्रार्थ को लिखित रूप में भेजा गया **"जर्मनी"** प्रोफेसर मैक्समूलर के पास फैसला करने के लिए, प्रोफेसर मैक्समूलर ने दोनों पक्षों को पढ़ कर अपना फैसला भेजा*। वह उनका ओरिजनल फैसला हमारे साथ है। हम अगली टर्न में आपको पढ़ कर सुनायेंगे। और प्रोफेसर मैक्समूलर ने यह फैसला दिया कि हम दोनों पक्षों को देखकर यह निर्णय करते हैं कि **"हिन्दुओं में जो श्राद्ध की परम्परा चली आ रही है, मृतकों के प्रति श्राद्ध करने की, यह वेद शास्त्र से अनुमोदित है"** और जो श्लोक मैंने आपको सुनाया श्राद्ध-कल्प का प्रोफेसर मैक्समूलर ने भी वही उद्धृत किया। तो श्राद्ध बोलते हैं मरे हुए पितरों के नाम पर जो किया जाए कार्य विशेष! उसका नाम **"श्राद्ध"** है। पहली बात तो यह है कि श्राद्ध का तात्पर्य यह है। अच्छा अब पितर शब्द कई बार सुनोगे। पितर जो आप आगे सुनोगे वह पहले ही हम बता रहे हैं, पितर—पितर शब्द कई बार सुनोगे, और आप जवाब में सुनोगे **"पितर"** माने **"पितौ"** अर्थात मां! बाप!! पर ऐसा नहीं है यह **"पितृ"** शब्द है पितर शब्द है टैक्नीकल एक शास्त्रीय शब्द है विशेष। इसका नाम है पितर, वेद मन्त्र सुनाता हूं ध्यान देना—**"अधामृतां पितृषु सम्भवन्तु"** अर्थात् यह बडी सीधी संस्कृत है अर्थात् जो अधामृतः जो मर जाते हैं, मर गये वे **पितृषु सम्भवन्तु"** उनकी पितरों में गणना होती है। तो कहने का तात्पर्य मृतक का नाम पितर होता है। किसी जीवित के अर्थ में पितर शब्द अर्थ नहीं होता। अब मैं आपके सामने वेद मन्त्र सुनाने चला हूं और आशा करूंगा हमारे श्री अमर स्वामी जी इस पर विचार करेंगे। और वेद से कोई ऐसा मन्त्र ढूंढ़ कर बतायेंगे जिसमें मृतक का श्राद्ध करना न लिखा हो और जीवित का श्राद्ध करने का विधान बताया हो, हां बायें दायें की बात नहीं चलेगी, वेद मन्त्र मांग रहा हूं, मैं पहले ही कह रहा हूं। वेद का मन्त्र उपस्थित करें। कि जीवित का श्राद्ध हो केवल, मृतक का श्राद्ध न हो। हम आपको सुना रहे हैं हजारों मन्त्रों में से, समय थोड़ा रह गया दो-तीन नमूना सुना रहे हैं, हमारे यहां जब पितरों का आह्वान किया जाता है श्राद्ध के समय

टिप्पणी—

*इस शास्त्रार्थ का सम्पूर्ण विवरण मैक्समूलर की सम्मति सहित **"निर्णय के तट पर प्रथम-भाग"** में छपा हुआ है। उसमें देखें। **"सम्पादक"**

तब ये मन्त्र बोलते हैं, क्या बोलते हैं ? सुनो—

ये निखाता ये परोक्ता ये दग्धा ये चोद्धृता, सर्वान्स्तान् आवह पितेृन हविषे अत्तवे ।।

इसमें अग्नि से प्रार्थना की गई है—हे अग्निदेव ये निखाता हिन्दू धर्म में मृतक का संस्कार होता है चार प्रकार का—भाइयो! जो बिना दांत का बालक मर जाये तो उसको जमीन में गाड़ा जाता है। अजात दन्त बालक को जमीन में गाड़ा जाता है। आम लोगों को फूंका जाता है शमशान में। और जो कुष्ठि हो, रोगी हो, ऐसा कोई व्यक्ति हो उसके शव को पानी में बहाने की परम्परा है, और जो कुटीचक सन्यासी है उनके शव को शमशान में छोड़ देना, खुले में रख देना, ये परम्परा चार प्रकार से चली तो इस मन्त्र में उन चारों प्रकारों की गणना की गई। ये निखाता, ये परोक्ता, ये दग्धा, ये चौदधृता, तो इन चारों उन सभी प्रकार के पितरों को हविश अत्तवे, हवि खाने के लिए हे अग्नि देव ! मैं तुमसे प्रार्थना करता हूं। तुम उनको लेकर पधारो ये पहला मन्त्र है, ध्यान देना। दूसरा मन्त्र **"ये अग्नि दग्धा"** ध्यान देना मन्त्र पर कहां का मन्त्र है ? अथर्ववेद अट्ठारहवां काण्ड के चौथे सूक्त का अड़तालीसवां मन्त्र, संख्या खोलकर देख लो--

यद् वो अग्नि रजहादेक मगम, पितृलोकं गमयञ्जातवेदाः ।
तद् व एतत् पुनराप्यापयामि, साङ्गा स्वर्गे पितरो मादयध्वम् ।।

इसमें कहा गया है मन्त्र में, अर्थ का समय नहीं रहा भाइयो ! अगले टर्न में आपको हम अर्थ भी बता देंगे, संक्षेप में सुनो! इस मन्त्र में कहा गया है कि—हे पितरो! जब आपने मेरे शरीर का परित्याग किया तो अग्नि ने आपके शरीर को भस्म कर दिया। तो इस पिण्डदानादि के द्वारा मैं आपको पुनः सांग बनाता हूं और इस श्राद्ध में आपको आमन्त्रित करता हूं। इसी प्रकार **"ये अग्नि दग्धा, ये अनग्निदग्धामध्ये दिवस स्वधया माधयन्ते"** इसमें भी जो आग में जलाये हैं अथवा जो आग में जलाकर जिनका संस्कार नहीं किया गया उन सब प्रकार के पितरों को यहां पर बुलाया गया है। ये जो मन्त्र हमने आपको सुनाया अभी इस मन्त्र की हिन्दी सुन लो फिर शायद हमारी टर्न खत्म हो जाए। टर्न टन टन ऽऽ······अच्छा अगली बार सुनायेंगे।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

ओ३म् शन्नो मित्रः शं वरुणः शनो भवतवर्यमा । शन्नः इन्द्रो बृहस्पति शन्नो विष्णु रूरूक्रमः ।। ओ३म् नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मवदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि, तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु अवतुमामवतु वक्तारम् ।।

माननीय दोनों अध्यक्ष सज्जन पुरुषों ! बहनों और भाइयो !! आज बड़ी प्रसन्नता की बात है, हमारे परम् मित्र श्री माधवाचार्य जी महाराज के सपुत्र श्री प्रेमाचार्य जी मेरे सामने उपस्थित हैं, मुझे उनसे बड़ा प्रेम है और वे तो हमारे साथ बहुत ही स्नेह रखते हैं, श्री धर्मालंकार पण्डित बालकृष्ण जी बड़े सज्जन पुरुष हैं, उनका भी आज सम्पर्क मुझे प्राप्त है। श्री रामेश्वराचार्य जी भी बड़े प्रिय लगते हैं बड़े प्रेम से बात-चीत होनी आरम्भ हुई यह अच्छी बात है। आरम्भ में ही थोड़ी सी गड़बड़ की बात आ गई **"प्रथमे ग्रासे मिक्षिका पातः"** हमारे पण्डित प्रिय श्री प्रेमाचार्य जी ने यह कहा कि—आर्य

प्रतिनिधि सभा ने दो पण्डितों को पुस्तक लिखने के लिए नियुक्त किया, एक श्री मंगलदेव तडितकान्त जी विद्यालंकार और दूसरे श्री पण्डित सातवलेकर जी, और उनको कुछ दिया भी वह भी सुनिये। ये बात आचार्य जी ने मेरे सामने कही ! किसी नये शास्त्रार्थ कर्त्ता के सामने कह देते तो शायद चल जाती, सज्जनों सुनो, ध्यान पूर्वक इसका रहस्य सुनों !!

नोट :—

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी स्वामी जी की इस बात को सुन कर मन ही मन मुस्कुरा रहे थे, जिससे उनके वाक् छल का साफ पता चल रहा था।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

ये प्रथम बात जो है यही गड़बड़ की हो गई। दो पुस्तकों को मिलाकर के एक बात कह दी। पुस्तकें दो हैं, एक पुस्तक "**यम और पितर**" तथा दूसरी "**वेदामृत**" दो पृथक-पृथक पुस्तकें हैं, आर्य प्रतिनिधि सभा ने जो पुस्तक लिखवाई वह वेदामृत है। जिसके लिए धन्यवाद किया आर्य प्रतिनिधि सभा ने, वह "वेदामृत"है। और जो "यम और पितर" नाम की पुस्तक है न वह समाज या सभाने लिखवाई और न उसके लिए सभा ने कोई धन्यवाद किया, वो न आर्य समाजियों के लिए हुई गुपचुप छपती रही और गुपचुप बटती रही, या आचार्य जी को पहुंच गई, और हमको नहीं पहुंची, और अब मांगने पर भी हमको नहीं दिखा रहे हो,आपको मिल गई। सुनों प्रेमाचार्य जी आर्य समाज ने इसके लिए क्या किया? इसके लिए आर्य समाज ने उसके विरुद्ध एक पुस्तक लिखवाई, उसका खण्डन लिखवाया, उसका नाम है, "**यम पितृ परिचय**"श्री स्वामी ब्रह्ममुनी जी महाराज उस समय प्रियरत्न जी आर्ष उनका नाम था,उन्होंने वह पुस्तक खण्डन में लिखी, तो आपने ये दोनों बातें मिला कर कह दी, दोनों बातें एक नहीं हैं, वे अलग-अलग हैं, आर्य प्रतिनिधि सभा का जिससे सम्बन्ध है, वह पण्डित जी का "वेदामृत" है, उसी के लिए धन्यवाद किया गया है, इसके लिए कोई धन्यवाद नहीं किया गया जिसके लिए आप कह रहे हैं, इन दोनों बातों को मिलाने की क्या बात है ? लोग भ्रम में क्यों पड़े ? उसकी गाथा भी सुनिये—जो श्री सातवलेकर जी ने पुस्तक लिखी और उसके लिए प्रतिनिधि सभा ने धन्यवाद किया, प्रिय शास्त्री जी आपको पता होना चाहिये कि प्रतिनिधि सभा ने ही उसके लिए फिर पश्चात्ताप किया और पश्चात्ताप करके उस वेदामृत वाली पुस्तक को दोबारा श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ से लिखवाया, उसको बन्द किया, और बन्द करवा कर स्वामी वेदानन्द जी से पुस्तक लिखवाई उसमें मृतक श्राद्ध की बात नहीं, मृतक श्राद्ध की बात जिसमें है वह तो अलग पुस्तक थी, उसका हमसे कोई सम्बन्ध नहीं,और श्री सातवलेकर जी को या किसी को भी आर्य प्रतिनिधि सभा ने इसके लिए नियुक्त नहीं किया, तो ऐसी बात कहने का कोई लाभ नहीं है। वेद मन्त्र बहुतेरे हैं, बोलिये आप जो कुछ भी बोल सकते हैं, और आपने कहा हजारों वेद मन्त्र हैं, वह भी बात आगे आ जायेगी, चिन्ता क्यों करते हो ? आपने श्राद्ध का लक्षण किया—श्राद्ध की परिभाषा की, और प्रमाण दिया "श्राद्धकल्पतरु" का, उसका आपने दिया प्रमाण ! हमसे इसका क्या सम्बन्ध है ? कोई ऐसा प्रमाण दीजिये जिसको हम भी मानते हों। प्रमाण तो वो ही देना चाहिये, जिसको उभय पक्ष भी मानता हो और जिसे केवल आपका ही पक्ष मानता हो उसको देने से कोई लाभ नहीं है। आपने एक बात और भी कही कि—मृतक श्राद्ध तो ईसाई भी करते हैं, और मुसलमान भी करते हैं, ईसाई भी करें, मुसलमान भी करें, हमको इससे क्या?

ईसाई और मुसलमान तो और भी बहुतेरे काम करते हैं, (जनता में हंसी........) बहुतेरे गड़बड़ हैं, गऊ हत्या करते हैं और भी बहुतेरे पाप करते हैं तो क्या हम भी उन सब कामों को इसलिए करें कि इन्हें ईसाई भी करते हैं तथा मुसलमान भी ? यह तो कोई बात नहीं बनी यह तो शास्त्री जी केवल तिनकों का सहारा लेने की बात है । इधर से इसे पकड़ लें सहारा मिल जाये उधर से उसे पकड़ लें आप पण्डित हैं, विद्वान् हैं । वेद मन्त्र कहिये फिर उन मन्त्रों पर विचार होगा वे सब कहे जायेंगे । एक बात आपने और कही कि—स्वामी दर्शनानन्द जी और पण्डित गणेशदत्त जी का शास्त्रार्थ हुआ और उसे निर्णयार्थ मैक्समूलर के पास जर्मन भेजा गया तो मैक्समूलर ने उस पर यह फैसला दिया कि **"यह जो मृतक श्राद्ध है, यह वैदिक है?"** वह हमने पढ़ा है आचार्य जी उसको हमने भी पढ़ा है **"उस पुस्तक में कहीं पर भी नहीं लिखा कि ये वेदानुकूल है"** आप दिखाइये ! (जनता में शोरोगुल मांगने व आग्रह करने पर भी न पुस्तक दिखाई न लिखा हुआ दिखा सके (आर्य श्रोताओं में हर्ष का वातावरण........) उन्होंने तो शास्त्री जी ये कहा, उसमें लिखा है कि वह यहां पर भेजा गया । और सज्जनों सुनों ! शास्त्रार्थ भी किनका था **"पण्डित कृपा राम"** जी नाम था उनका **"स्वामी दर्शनानन्द"** जी नही वह तो बहुत पीछे स्वामी दर्शनानन्द जी बने कृपाराम जी उनका नाम था और तब वह शास्त्रार्थ वजीराबाद में हुआ और मैं उस शास्त्रार्थ को लेने के लिए लाहौर में गया तो एक पण्डित के पास गया वे दुर्गा सप्तशती का पाठ करते थे । उनके पास मैं पहुंचा कि शास्त्रार्थ की प्रति मुझे दी जाये तो मैं उसे ले आया फिर मैंने उसको देखा उस पुस्तक में यह कहीं नहीं लिखा मैक्समूलर जी ने कि यह मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है । उन्होंने यह लिखा कि—वह शास्त्रार्थ मेरे पास भेजा गया था मैंने उसे देखा मैंने अपने मित्रों को दिखाया अब मुझे बार-बार यह कहा जा रहा है कि—**"आप उस पर निर्णय दो, परन्तु वह अब मेरे पास रहा ही नहीं, पता ही नही वह मेरी पुस्तकों में खो गया या कोई मेरा मित्र ले गया"** एक वर्ष बाद उन्होंने यह लिखा कि—**"यह तो प्रश्न ही कभी नही उठता था कि ब्राह्मणों को खिलाया-पिलाया हुआ मुर्दों को पहुंचता है कि नही पहुंचता है इसलिए नहीं वह तो यादगार के रूप में मनाया जाता था और अब भी जो लोग मनाते हैं जो वस्तु मरे हुओं को प्रिय होती है वह तो मेरे पास भी भेजी जाती हैं अब भी"** उन्होंने यह निर्णय भेजा था न कि ऐसा जैसा कि शास्त्री जी कहते हैं कि उन्होंने निर्णय दे दिया कि -**"श्राद्ध वेदानुकूल है ?"** तो यह बात आपने कही अब शास्त्री जी आप इसी बात के सम्बन्ध में ध्यान से सुनो ! श्रोता लोग भी ध्यान से सुनें । जिस मैक्समूलर वाली बात को पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री जी ने बड़े गर्व के साथ प्रस्तुत किया था, वो यह है कि—(पुस्तक को हाथ में लेकर दिखाते हुए) **"इसका नाम निर्णय के तट पर (शास्त्रार्थ संग्रह) भाग प्रथम है इसे मेरे प्रिय शिष्य लाजपतराय जी ने जो यहां विद्यमान हैं छपवाया, इसमें ओरिजनल व उसकी भाषा तथा फोटो तक छपा है, आप इसे पढ़ लें एवं शास्त्री जी ने तो मांगने पर भी पुस्तक नही दी थी, आप लोग देखें इनके कथन में कितनी सच्चाई है ?** (पण्डित प्रेमाचार्य जी व पौराणिक श्रोताओं में सन्नाटा छा गया) मैं शास्त्री जी से कहूंगा कि अब वह भविष्य में ध्यान रक्खें, इस प्रकार की गलत बातें न कहें । परन्तु सज्जनों बात तो यह है कि—मैक्समूलर जी कुछ कह जो गये, यह इनके लिए प्रमाण हो गया, हमारे लिए तो कोई प्रमाण है नहीं, हमारे पास तो वे चिट्ठीयां हैं मैक्समूलर की, कि वेद का भाष्य भी मैक्समूलर ने क्यों लिखा अंग्रेजी में ? उनकी पत्नी ने उनको पूछा और उसके उत्तर में उन्होंने अपनी पत्नी को लिखा कि—**"मैंने वेद का ट्रान्सलेशन (अनुवाद) अंग्रेजी में इसलिए किया है कि लोगों की श्रद्धा वेदों से मिट जाए और ईसाई मत की ओर उनका झुकाव हो**

जाए, मैं ईसाई मत का प्रचारक हूं" ये चिट्ठियां छपी और सारे लोक में प्रसिद्ध हुई। मैक्समूलर हमारे लिए कोई प्रमाण नहीं, आप चाहे प्रमाण मानें, वह भी बात गई, आपने एक प्रमाण और दिया वेद का कि –"**अथांमृता-पितृषु सम्भन्तु**" ये जो मन्त्र बोलकर कहा कि तुम जलाये जा रहे हो, तुम भस्म किये जा रहे हो, तुम्हारा यह हो जाये, तुम्हारा वह हो जाये, उसका पता बताया "१८वां काण्ड, ४ सूक्त, ४८वां मन्त्र" यह पता बताया, और यह पता है काहे का, पता है—"**अथांमृता पितृषु सम्भवन्तु**" इसका पता है, ठीक है पता तो वही है, जो आपने बोला है, दूसरे का नहीं है, उसी का है, पर ! यह क्या है कि —"**अथांमृता पितृषु सम्भवन्तु**" आपने कहा कि जो मर जायें वो पितरों में शामिल हो जायें, यह अर्थ किया इसका और यह वाक्य क्या है ? "**अथाम्मृता**" "**पितृषु सम्भन्तु**" यहां **मृता**" नहीं है अर्थात् यहां मरे हुए नहीं है, यहां तो "**अमृता**" है—"**अथअमृतः**" अर्थात् जो लोग अमर होना चाहते हैं वे लोग पितरों में गिन लिये जायें, तो मन्त्र का अर्थ यह है यहां, ये "**मृता**" कहां से निकाल लिया ?" "**मृतः**" कहां से आ गया ? यह तो "**अमृता**" है। इसलिए "**पितृ**" से काम बनेगा नहीं एक बात बड़ी बढ़िया कही, आपने एक मन्त्र बोला हजारों मन्त्रों में से ! परन्तु भाइयों हैं ये एक दो ही आपने रोब डालने के लिए कहा हजारों मन्त्र हैं या हो सकता है मुझे भयभीत करने के लिए कह दिया हो (जनता में हंसी तथा स्वयं प्रेमाचार्य जी का भी मुस्कुराना……) पर वे सब हजारों लोप हो गये उन हजारों में से ये एक-दो टुकड़े निकले एक यह निकला है कि—"**ये निखाता ये परोक्ता ये दग्धा ये च उद्धृता**" ये निकला है और इसमें बात क्या निकली ? सनातन धर्म के सिद्धान्त के विरुद्ध ! वैदिक धर्म के सिद्धान्त के विरुद्ध !! बात यह निकली कि जो जमीन में गाड़े गये सबसे पहले श्राद्ध उनका होना चाहिये जो जमीन में गाड़े गये। अर्थात् सबसे पहले श्राद्ध उनका होना चाहिये जो जमीन में गाड़े गये हैं। वैदिक धर्मियों में केवल सनातन धर्मी ही नहीं बल्कि आर्य समाजी और सनातन धर्मी दोनों मिलकर वैदिक धर्मी हैं। दोनों में यही प्रथा है कि मुर्दे जलाये जावें। अब आपने कह दिया कि बालक गाड़े जाते हैं तो क्या बालक भी "पितर" होते हैं ? बालकों के बेटे कौन होते हैं ? दाढ़ी वाले बूढ़े और वे बेटे-पोते उन बच्चों के ? वे श्राद्ध करते हैं। पण्डित जी बात सोच विचार कर कहिये (जनता में बेहद हंसी…… व तालियां) कोई कहीं की बात कहीं जोड़ने से काम नहीं चलेगा, प्रमाण दीजिए, इस प्रकार कोई "**ये निखाता**" वाक्य की बात कही, बच्चों के गाड़ने की बात कही, वैदिक धर्म में गाड़ने की प्रथा नहीं है। और आपने सबसे पहले गाड़ने वालों का ही जिक्र किया, जलाये हुओं का पीछे किया। पर जलाने वाले की बात भी नहीं हैं, जलाया भी कौन जाता है ? जब तक शरीर में जीवात्मा रहता है तब तक नहीं जलाया जाता। वे बेटे अपने बाप को अपनी माता को उस समय तक नहीं जलाते जिस समय तक उनके बीच में जीवात्मा रहता है तब तक नहीं जलाया जाता, जब जीवात्मा निकल गया अर्थात् चला गया तो अब उस "**मृतक**" शरीर को जला दिया तो उसके ऊपर क्या मोहर लगी थी जो चला गया निकल करके कि वह जलाया गया था। वह कब जलाया गया था ? वह तो जलने से पहले ही निकल गया था। और जीवात्मा जलता है ही नहीं। देखिये गीता में कहा है—

नेनं छिन्दति शस्त्राणि नेनं दहति पावकः। न चैनं क्लेदयन्तयापो न शोषयति मारूतः॥

जीवात्मा जलता नहीं है, वह "**अच्छेद्य**"— "**अदाह्य**"— "**अक्लेद्य**"—"**अशोषयतः**" है। वह जल नहीं सकता तो जलाया कहा गया जीवात्मा ? जलाया गया शरीर। तो पिता जो है जिसको

आप कह रहे हैं पिता कौन है ? पिता वह है जो शरीर में से जीवात्मा निकल कर चला गया या वो है जो शरीर रह गया ? कौन है पिता ? यदि वह है पिता तो पितृघात का पाप लगेगा, जलाने वाले को ? और अगर वह निकल गया तो वह वो है ही नहीं । देखिये—

"नैव स्त्री न पुमानेवः न चैवायं नपुँसकः । यद्यतेः शरीर माधन्ते तेन त्वेन स युज्यते ।।

अर्थात् जीव न स्त्री है, न पुरुष है, न किसी की माता है, न पिता है, वह जीवात्मा सिर्फ जीवात्मा है । वह चला गया तो चला गया, अब उसके साथ क्या सम्बन्ध ? सम्बन्ध किसके साथ था? जीव और शरीर दोनों इक्ट्ठे थे, तब तक उनका सम्बन्ध था । जब सम्बन्ध विच्छेद हो गया, तब न कोई किसी का पुत्र रहा न किसी का पिता रहा, आपने कहा कि पुत्र वह है जो पिता के लिए यह करे। वह करे ।। और "**गया**" में जाकर पिण्ड देवे, यह किसी प्रमाणित ग्रन्थ का प्रमाण नहीं है न तो आपने इसका पता बताया, और न ही यह वेद का प्रमाण है । जिसको हम भी मानते हों । तो इस प्रकार की बातें कहने का क्या लाभ है ? आप अपने ग्रन्थों को पढ़ते रहिये, और उनमें से अपने मतलब की बातें उन्हें आप कहते रहिये । हमारे ऊपर उनका कोई प्रभाव नहीं होता । हमारे लिए उसका कोई उत्तरदायित्व नहीं होता । पुत्र तो "**पुन्नाम्न नरकाः त्रायते इति पुत्रः**" जो दुखों के नरक से पिता को बचाने का प्रयास करता है, वह पुत्र है । तो ऐसा यत्न तो हो गया, यह बात तो ठीक है कि ऐसा काम होना चाहिये । अब मेरी बात सुनिये -ये बातें जो आपने कहीं इनका मैंने थोड़ा-थोड़ा संकेत किया, तथा उत्तर दिया, मैं पूछता हूं कि कृपा करके यह बतलाइये कि—"**पितृ**" **शब्द किस धातु से बना है** ? यदि कहो कि "**पा-रक्षणे**" धातु से बना है तो "**पितृ**" का अर्थ हुआ रक्षा करने वाला यहां यास्काचार्य जी कहते हैं कि—"**पिता-पाता पालयितावा**" पिता कौन होता है, जो पालन करने वाला हो, "**पा रक्षणे**" से "**पिता**" शब्द बना, "**पितृ**" शब्द बना उसी का बहुवचन "**पितर**" है । तो जो रक्षा करने की सामर्थ्य रखते हैं वह हैं जीवित मरे हुए नहीं । वह जीवित ही हो सकते हैं मरे हुए कदापि नहीं हो सकते ।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों ! श्री अमर स्वामी जी महाराज आर्य समाज के पुराने प्रचारक और शास्त्रार्थी तथा विद्वान हैं । बहुत दिनों बाद इनसे शास्त्रार्थ का अवसर मिला एक तो बात यह है कि एक दो बार जरूर सामना-सामना हुआ, किन्तु इस तरह व्यक्तिगत रूप से नहीं हुआ था । हम आशा करते थे कि—स्वामी जी महाराज बालकों जैसी बातें करके हमारे ठोस प्रमाणों को अवहेलित करने की कोशिश नहीं करेंगे। वही बात कल वाली फिर शुरू हो गई कि-हम नहीं मानते साहब ! यह जाली पुस्तक है साहब !! मेरे को नहीं मिली "**यम-पितर**" तो आचार्य जी को कैसे मिली ? अरे भाई हम कहते हैं । आप सो रहे होंगे तब ! आपको नहीं मिली तब !! हम इसकी गारन्टी क्या लें? आप लेते, ढूंढ़ते, पता लगाते, पुस्तक हमारे पास मौजूद है "यम और पितर" जो श्री पाद दामोदर सातवलेकर जी के प्रेस में छपी और मंगलदेव तडित कान्त विद्यालंकार जी ने लिखी तथा संग्रह किया और ये साहब कहते हैं कि हमें नही मिली, हम नहीं जानते इसलिए इन सब बातों से बात नहीं बनेगी । और कहते हैं साहब वह जो पुस्तक लिखी जिसके लिए प्रतिनिधि सभा पंजाब ने धन्यवाद दिया, सभा ने पुस्तक लिखवाई श्री पाद दामोदर सातवलेकर जी से और धन्यवाद दिया कि—आपने ऐसे मन्त्र इकट्ठे किये, कहते हैं कि सभा ने फिर

इस बात पर पछतावा किया कि हमने क्यों धन्यवाद दिया ? प्रकाशक ने पहले उन्हें धन्यवाद देकर पीछे पश्चात्ताप किया, वह पश्चात्ताप इसलिए नहीं किया कि उन्होंने पुस्तक क्यों लिखवा ली, बल्कि सज्जनों वह क्या बात थी ? हम बताते हैं कि क्या कारण है पश्चात्ताप का ? अगर था भी तो ! श्री पाद दामोदर सातवलेकर जी आर्य समाज के मूर्धन्य वेद पण्डित और निष्पक्ष विद्वान् थे उन्होंने चूंकि अपनी पुस्तक में वह मन्त्र इकट्ठे किये जिन मन्त्रों से मृतक श्राद्ध की सिद्धि होती थी और मृतक श्राद्ध की सिद्धि हो जाने के कारण आर्य समाज का स्वामी दयानन्द के द्वारा लिखा हुआ जो सिद्धान्त था, जो मान्यता थी, वह डगमगाती थी, इसलिए स्वामी दयानन्द की मान्यता के ऊपर अपने मूर्धन्य पण्डित श्री पाद दामोदर सातवलेकर जी को कुर्बान करने के लिए उन्होंने पश्चाताप प्रकट कर दिया होगा। तो सज्जनों क्या होता है पश्चात्ताप प्रकट करने से ? पुस्तक तो मौजूद है। पुस्तक में वह मन्त्र मौजूद हैं इसलिए यह बात न बनेगी। स्वामी जी ने एक बात और कही कि वेद के प्रमाण दो। भला इससे बढ़कर और अच्छी बात क्या होगी ? हमने पहले ही कहा था कि आप वेद मन्त्रों पर विचार करके एक भी ऐसा वेद प्रमाण उपस्थित करते जिससे मृतकों का श्राद्ध न किया जावे, जीवितों का किया जावे। वह मन्त्र दिया होता। परन्तु आपने ऐसा कोई मन्त्र पेश किया नहीं, हमारे भी मन्त्रों पर विचार नहीं किया और क्या कहा --**"ये निखाता ये परोक्ता"** यह अथर्ववेद का मन्त्र है जो चुटकियों में उड़ने वाला नहीं है स्वामी जी महाराज ! सुनों "यम—पितर" पर इसका किया हुआ अर्थ बताता हूं ओर यह कहना कि हमारे यहाँ तो ऐसा होता नहीं साहब ! हमारे यहां तो मुर्दों को जलाते ही है फिर हमारा उसके साथ क्या वास्ता रह गया ? यह सब कुछ नहीं, सुनिये यम और पितर में मंगलदेव विद्यालंकार जी इस मन्त्र का क्या अर्थ करते हैं ? स्वामी जी जरा ध्यान पूर्वक सुनना—

"ये निखाता ये परोक्ता ये दग्धा ये च उद्धृता सर्वान्तान् अग्न आ वह पितॄन् हविष अत्तवे"।

अर्थ लिखते हैं कि —हे अग्नि ! **"ये निखाता"** जो पितर जमीन में गाड़े गये **"ये परोक्ता"** जो पितर दूर बहा दिये गये हैं। **"ये दग्धा"** जो पितर अग्नि से जलाये गये हैं, और जो पितर **"उद्धृता"** जमीन के ऊपर रखे गये हैं, **"तान सर्वान्"** उन सब पितरो को हे अग्नि तू—**"हविष-अत्तवे"** हवि भक्षण करने के लिए **"आवह"** लेकर आ। ये तो किया मन्त्र का अर्थ ! अब टिप्पणी सुनों !! जो लिखते हैं मंगलदेव जी, कहते हैं कि– इस मन्त्र में यह बताया गया है कि चार प्रकार का अन्त्येष्टि संस्कार होता है। ध्यान देना सज्जनों शब्दों पर—इस मन्त्र में यह बताया गया है कि चार प्रकार का अन्त्येष्टि संस्कार होता है गाड़ना, बहाना, जलाना, हवा में खुला छोड़ना। यहां पर मायने इस मन्त्र में इन चारों संस्कारों से संस्कृत पितरों को हवि खाने के लिये अग्नि को बुला लाने के लिए कहा गया है। इसलिए यह अर्थ किसका किया हुआ है ? हमारे पण्डितों का नहीं, हमारे पण्डितों का हो सकता है आप कह दें कि हम नहीं मानते, जब आप अपनी पुस्तक मानने को तैयार नहीं पुस्तक को जाली बता देते हैं चूंकि इसलिए जाली है कि आपको मिली नहीं, हमें कहां से मिल गई ? इसलिए ये सब बहाने बाजियां हैं आर्य समाज के विद्वान् द्वारा किया हुआ अर्थ हमने सुनाया इसी प्रकार प्रोफेसर राजाराम जो दयानन्द एग्लों इण्डियन कालेज लाहौर के प्रोफेसर ! कल जिनके वेद भाष्य की चर्चा हम कर रहे थे उन्हीं के द्वारा किया हुआ वेद भाष्य का अर्थ भी ये मन्त्र जो हम तुमको बता रहे हैं, सुनो ! स्वामी जी से हमें ऐसी आशा नहीं थी, स्वामी जी कहते हैं **"अधामृता:"** में ध्यान देना,

"**मृता**" यह मरा हुआ अर्थ नहीं है, बल्कि "**अमृता**" ठीक है, अमृता अर्थात् जो नहीं मरे हैं या "**अमृत स्वरूप**" हैं, धन्य हैं। हमें तो बड़ा आश्चर्य होता है कि—वेद के मन्त्र में भी ये घुसपेठ करना। अरे! वेद मन्त्रों में घुसपेठ की गुंजाईश है ही नहीं। ये कहते हैं कि मरा हुआ है ही नहीं, और प्रोफेसर राजाराम जी क्या कह रहे हैं?—सज्जनों इसी मन्त्र पर इन्हीं के विद्वान् डी० ए० वी० कालेज के प्रोफेसर लाहौर के सुनों, क्या कह रहे हैं इस मन्त्र पर! यह मन्त्र है नोट कर लीजिये—नम्बर नोट करा रहा हूं और नम्बर-वम्बर की क्या बात है? एक मन्त्र आगे पीछे हो भी गया तो क्या हुआ? है तो वेद मन्त्र ही। इसलिए मन्त्रों के नम्बरों की चर्चा में मत रहो, अरे मन्त्र को देखो, कह रहे हैं अब मन्त्र भी सुनों, पक्का नम्बर बता रहे हैं। अथर्ववेद सहिंता अठारहवां काण्ड, चौथे सूक्त का ४८ वां मन्त्र हैं, यह क्या कहते हैं? पूरा मन्त्र इस प्रकार है—

प्रथ्वेत्वा प्रथिव्यामविषयामि देवोनो थाथा मृत्युराज।
आयु परा परावैता वसुवतिवो असस्वधमृता पितृषु सम्भवन्तु॥

इसके ऊपर प्रोफेसर राजाराम लिखते हैं, यह अर्थ कि—पद मरे हुए पितर, मरे हुए पितर—पितरों में हों। अर्थात् जो मर गये हैं वे और पितरों में जाकर शामिल हो जायें और उनका भी पितर नाम हो जाये। तो "**मृता**" का अर्थ प्रोफेसर राजाराम कर रहे हैं "मरे हुए" और ये कहते है बीच में "अ" और जोड़ लो, अरे! वेद में भी कहीं घुसा है? या जो मर्जी अपने मन से घुसा लो। जो मर्जी छेद कर लो वेद के अर्थ, वेद का शब्द निश्चित है। और इसी प्रकार हमारे यहां अष्टावक्र कृति चलती है। वेद पाठ करने के आठ प्रकार के तरीके, वेद में किसी प्रकार की बात की समावेश की गुंजाईश नहीं। यह तो हुई वेद मन्त्रों की बात! वे मन्त्र हमने सुनाये चार, दो पर विचार किया। कहते हैं हजारों में से दो ही मिले। महाराज! स्वामी जी मिनट हैं पन्द्रह! एक मिनट में एक-एक भी सुना पाऊँ तो पन्द्रह ही सुना पाऊंगा, आप एक हफ्ता शास्त्रार्थ रक्खो "श्राद्ध" पर! अगर दो हजार से कम सुना पाऊं तो जो कहो देनदार हूं। इनमें दो क्यों मिले? हमने चार सुनाये थे, और एक आप भूल गये कि—"**ये अग्नि दग्धा**" ये मन्त्र हमने सुनाया, इसके ऊपर आपने विचार नहीं किया, कुछ व्याख्या करके नहीं बतलाई, और कहते हैं साहब कि हम नहीं मानते मैक्समूलर को। जब स्वामी दर्शनानन्द जी जिनका पहला नाम कृपाराम था, उनका शास्त्रार्थ हुआ, उस समय तो मैक्समूलर साहब को शास्त्रार्थ का फैसला करने के लिए मध्यस्थ मान लिया, पर चूंकि फैसला उन्होंने इनके खिलाफ दे दिया, तो बोले हम नहीं मानते उनको। अरे साहब तुम न मानों, पर प्रोफेसर मैक्समूलर वेद भाष्यकार, जर्मनी में रहने वाले प्रत्यक्ष विद्वान, उन्होंने सत्य आपके सामने प्रकट करके रख दिया, वह आप नहीं मानों तो इसका हमारे पास कोई उपाय नहीं, कोई अपने बाप को बाप न माने, अपने बाप को कोई जाली कह दे कि मेरा बाप जाली है। हमारे ऊपर इसका कोई दायित्व या जिम्मेदारी नहीं। इसलिए ग्रन्थों को जाली कह कर·· ······हमने चौथा मन्त्र दिया था, टनं टन टन ऽ ऽ ऽ·········और मन्त्र आगे सुनायेंगे।

अध्यक्ष महोदय—

आपने कहा था पहले बता दो, तब शास्त्रार्थ चलेगा (इससे विघ्न होता रहा काफी देर बाद शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ)।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

सुनों ! सज्जनों सुनों !! आरम्भ हो गई शाास्त्रार्थ की सभ्यता ! (जनता में हंसी……) श्री आचार्य जी ने आरम्भ कर ही दी। श्री प्रेमाचार्य जी ने एक बात कह दी कि—स्वामी जी बालकपन की बात करते हैं। मैंने अभी आचार्य जी को बालक नहीं कहा, हैं मेरे सामने हैं बालक ही ! पर उन्होंने मुझे बालक कह दिया, यह सभ्यता है ! ये शिष्टाचार है !! शास्त्रार्थ का !!! दूसरी बात मैंने कही थी, जिसे अब लिखने की नौबत आ जायेगी। "**यम-पितर**" जो है तडितकान्त जी ने लिखा। सातवलेकर जी आर्य समाजी क्या थे ? सातवलेकर जी वे हैं कि जब मेरठ में एक बड़ी भारी विद्वत सभा हो रही थी तो सारे पण्डितों ने उनके सभापतित्व पर उनका घोर अपमान किया, कोई आर्य समाजी नहीं मानता उनको। सज्जनों ! राजाराम जी !! सातवलेकर जी !!! ये तो डूबते को तिनके का सहारा हैं। प्रमाण कोई है नहीं। अब रही अर्थ की बात ! मैं इनका अर्थ—जिसको हम बिल्कुल नहीं मानते, उसको एक बार नहीं लाख बार सुनाओ, ओर कोई प्रमाण है नहीं, इसलिए राजाराम का सुना दें, या तडितकान्त का सुना दें, "**इस पुस्तक के लिए मैं दावे से कहता हूं कि प्रतिनिधि सभा ने नहीं लिखवाई ये पुस्तक**" अगर लिखवाई है तो अभी बताना होगा, शास्त्रार्थ तब आगे चलेगा, यदि बता देंगे कि "**यम और पितर**" यह पुस्तक आर्य प्रतिनिधि सभा ने लिखवाई है और उस पर धन्यवाद किया है……श्रोताओं में भारी शोरोगुल……वक्ताओं में झगड़ा……हां ! हां !! पण्डित प्रेमाचार्य जी पहले ये बात बतानी होगी, शास्त्रार्थ तभी चलेगा, यह पुस्तक देनी होगी तथा इस पर "प्रतिनिधि सभा ने धन्यवाद किया" दिखाना होगा। यह बात बतानी होगी। (बीच में प्रेमाचार्य जी शोर मचाने लगे)……बड़ा भारी विघ्न …सज्जनों श्री राजाराम जी…) आप क्यों बोलते हो बीच में ? यही अभ्यास आपका प्रेमाचार्य जी कल था, और यही अब है, परन्तु जब तक ये बातें नहीं बताओगे तो शास्त्रार्थ आगे चलेगा नहीं, और अब पता लगेगा ना कि आपने कहा कि इनका अर्थ यह है, बल्कि इनका अर्थ ये है सुनो !……प्रेमाचार्य जी द्वारा फिर बीच में बोलना …. देखिये फिर बोलते हैं ……प्रधान जी इनकी ये गड़बड़ चलती रहेगी शास्त्रार्थ होने नहीं देंगे। क्योंकि अब इनके झूठ पकड़े जा रहे हैं………फिर प्रेमाचार्य जी ने बीच में शोर मचाया……आप फिर बीच में क्यों बोलते हैं ?

श्री प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

स्वामी जी महाराज ने कहा कि पहले आप लिखा हुआ दिखा दीजिये बाद में शास्त्रार्थ चलेगा ……विघ्न……अच्छा-अच्छा हम दिखाते हैं।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

हां बिल्कुल पहले लिखा हुआ दिखाइये !

श्री प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

प्रधान जी मैं आपसे पूछता हूं जैसा कि स्वामी जी ने कहा है कि—शास्त्रार्थ तभी चलेगा पहले आप उस बात को लिखा हुआ दिखा दीजिये ! तो यह बात सही है क्या ?

श्री ओमानन्द जी सरस्वती (प्रधान)—

हां ये बात बिल्कुल ठीक है।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

ठीक है तो अभी दिखाते हैं मैंने पहली बात तो यह की, कि आपने फरमाया कि हमने आपको बालक कहा, मेरे बालक कहने से आप बालक नहीं बन जाते, आप वयोवृद्ध हैं, साधु सन्यासी हैं, मैंने कहा था आपने बालकों जैसी बातें कही, दूसरी बात आप कहते हैं कि—प्रोफेसर राजाराम शास्त्री ·········विघ्न······

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

सज्जनों ! क्या यह वो बातें कही जा रही हैं जो मैंने पूछी हैं ? (जनता में हंसी···············) आचार्य जी मैंने यह पूछा है कि "**यम और पितर**" पुस्तक आर्य "प्रतिनिधि सभा ने लिखवाई और इसके लिए सभा ने धन्यवाद किया" यह लिखा हुआ दिखाइये कहां है ?····· ये फालतु की बातें छोड़िये।

श्री प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

प्रो० राजाराम······

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

हम नहीं सुनेंगे ! यह बातें नहीं सुनेंगे, मेरी बातों का जवाब दीजिये।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

प्रधान जी ! आप इन्हें समझाइये ये चुप रहें।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

आपको इस बात के लिए समय नहीं दिया गया है कि इधर-उधर की बात करें जो पूछा गया है उसका जवाब दो ! वो लिखा हुआ दिखाओ ?

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

हां हम दिखायेंगे ! और बतायेंगे·········

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

नहीं ! पहले वह दिखाइये आप, कि—"यम और पितर पुस्तक आर्य प्रतिनिधि सभा ने लिखवाई और उसके लिए धन्यवाद किया"।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

(क्रोध में……आप अपनी जिह्वा पर लगाम रखेंगे या नहीं ?

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

देखो आप अपने मुंह को लगाम लगाओ ।……(गर्ज कर पुनः…लगाम लगाइये अपने मुंह को) यह असभ्यता की बातें आप बोलते जायेंगे, और इसलिए शास्त्रार्थ बिगड़ेगा, और ये बिगाड़ेंगे, ये कर ही नहीं सकते शास्त्रार्थ ! इसलिए मैं आपके सामने कहता हूं ……प्रेमाचार्य जी का बीच में बोलना ……स्वामी जी ने गर्ज कर कहा—लगाम घोड़ों को लगाई जाती है, मैं कहता हूं अब आप अपने मुंह को लगाम लगाइये……जनता में चारों तरफ हंसी व तालियों की गड़गड़ाहट……व तनाव-पूर्ण वातावरण……प्रेमाचार्य जी आज छटी का दूध याद न आया तो मजा क्या रहा ?

श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती—

देखिये प्रधान के नाते मेरी प्रार्थना है कि—आप थोड़ा सभ्यता से बोलो, आपको बुरे वचन स्वामी जी के लिए नहीं बोलने चाहिये ।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

ये मानेंगे नहीं ।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

सुनों ! सज्जनों सुनों !!

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

मैं यह पूछता हूं कि किस सभा ने छपवाया है इसे ? प्रधान जो ! मेरी बात का जवाब दिल-वाइये, फिजूल का लैक्चर देने की आवश्यकता नहीं, मैं अब इन्हें इधर से उधर हिलने नहीं दूंगा । जो मैंने प्रश्न किया है, उसका उत्तर दिलवाइये, ये गड़बड़ नहीं चलेगी । इसमें यह दिखाइये कि "प्रतिनिधि सभा ने इसे लिखवाया, और प्रतिनिधि सभा ने इस पर धन्यवाद किया" ।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

पुस्तक हाथ में लेकर……"वेदामृत" यही है स्वामी जी महाराज !

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

हां ! तो फिर क्यों झूठ बोला आपने ? जो आप दिखा रहे हैं वह यह नहीं है, मेरा दावा है कि यह बिलकुल नहीं है ।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

बिल्कुल झूठ नहीं बोला।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

मेरे पास है वह भी……चिन्ता मत करो।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

दिखाओ !आप ही दिखाओ !! सज्जनो शान्त हो जाओ, शान्त हो जाओ, अगर शास्त्रार्थ का फैसला सुनना हो तो शान्त हो जाओ, पहली बात तो यह है कि स्वामी जी ने फरमाया कि मंगलदेव यम-पितर लिखने वाले जो मंगलदेव विद्यालंकार हैं वह आर्य समाज के पण्डित नहीं, मैं यह पुस्तक से बांच कर सुना रहा हूं ! पुस्तक तो मैं दूंगा नहीं, क्योंकि इनको तो मिली नहीं, हमें ही हमें मिली है, बांच कर सुनाता हूं ! बांच कर सुनाता हूं, अभी बांचता हूं……बीच में……

श्री अमर स्वामी जी महाराज —

देखिये जब तक ये नहीं दिखायेंगे, आगे नहीं चलने दूंगा मैं, दिखाइये "प्रतिनिधिसभा ने इसे लिखवाया है, और धन्यवाद किया है"।………फिर विघ्न………यह बिल्कुल झूठ बोला है, इसको वापिस लीजिये, तब आगे बात चलेगी। देखिये प्रधान जी ! ये शास्त्रार्थ चलेगा नहीं, और न ही निर्णय होगा, और………बीच में………

अध्यक्ष—

दोनों वक्ता अपनी-अपनी पुस्तकों को दिखायें।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

ये गुरुकुल कांगड़ी के सनातक हैं तो आर्य समाजी हुए कि नहीं ? अरे कांगड़ी का गुरुकुल हमारा है कि इनका ? ये गुरुकुल कांगड़ी के प्रोफेसर जिन्होंने लिखा। आओ पढ़ो वेदामृत पर…… बीच में……फिर विघ्न……शान्ति ! शान्ति !!……

श्री बाल कृष्ण जी (प्रधान)—

देखिये इस प्रकार से शास्त्रार्थ चल नहीं सकेगा, और मैं यह निवेदन करूँगा कि दोनों वक्ता अपनी-अपनी जिम्मेदारियों को पूरी-पूरी निभायें, बीच-बीच में यह विघ्न न करें, हमें दिखाइये एक बार ! दूसरी बात यह है कि - पण्डित जी की ओर से "यम और पितर" के लिए यह नहीं कहा गया कि आर्य प्रतिनिधि सभा ने छपवाई, वेदामृत के लिए कहा गया, यह मैं कहता हूं, और वेदामृत के लिए ही धन्यवाद किया गया था, उसके लिए नहीं, यह स्वामी जी महाराज का कथन सत्य है। (श्रोताओं में तालियाँ……) इसलिए अब आगे शास्त्रार्थ की बारी चलाइये।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

समय मेरा था बोलने का, और आपने उनको समय दे दिया बीच में बोलने का, मैं कह रहा था कि यह आप दिखा दीजिये कि—"प्रतिनिधि सभा ने यम और पितर पुस्तक लिखवाई और छपाई और धन्यवाद दिया" वो मान लिया इन्होंने, बात खतम हुई। वो मान लिया...कि "प्रतिनिधि सभा ने नहीं छपाई और ना ही प्रतिनिधि सभा ने उसके लिए कोई धन्यवाद किया" बात खतम हुई,···जनता में हँसी का वातावरण·····अब दूसरी बात यह रही "**अधामृता पितृषु सम्भवन्तु**" इस पर इन्होंने कहा कि हमने "**मृता**" में "**अ**" अपने आप ठोक लिया, अतःइससे यह पता लगता है कि—ये अपनी पुस्तकों को पढ़ते नहीं हैं, शास्त्रार्थ करने के लिए तो तैयार हो गये, लेकिन पुस्तकों को नहीं पढ़ते। यह सायणाचार्य का भाष्य है, सायणाचार्य जी ने यहां—"**अमृताः अमरण धर्माणः सन्तः**"—"**अमृता**" पाठ माना है "**मृता**" नहीं, इसलिए ये "**मृता**" नहीं बल्कि "**अमृता**" है। सायणाचार्य जी का भाष्य है जिसमें वे कहते हैं—"**पितृषु पितृत्वं प्राप्तेषु पुरातनेषु स्वपूर्वजेष अमृताः**" लीजिये कान खोल कर के सुनिये—"**अमृताः अमरण धर्माणः सन्तः सं भवन्तु सं प्राप्ता संयुक्ता भवन्तु**" यहां "**मृता**" नहीं बल्कि "**अमृता**" है और यह सायणाचार्य जी का भाष्य है। सज्जनों ! ये राजाराम जी का भाष्य ले आयें या किसी और का भाष्य ले आयें, जिनको हमने कल ही कहा था कि—राजाराम जी का भाष्य कौन आर्य समाजी मानता है ? किसी ने नहीं माना, ये उन भाष्यों को ढूंढ़ते फिरते हैं, जिनका आर्य समाजियों ने बहिष्कार कर दिया, यह सायणाचार्य जी का भाष्य है, इसमें "**मृता**" नहीं है बल्कि "**अमृता**" पाठ है। और अमरणधर्मा इसके अर्थ हैं, इसलिए जो लोग अमरणधर्मा हैं, अर्थात् जो सन्यासी हैं या वानप्रस्थ इस प्रकार के योग्य हैं, वे पितरों में गिने जायें अर्थात् उनकी गणना पितरों में हो, यह है सायणाचार्य जी का पाठ, अमृता को आप भूलते हैं, अमृता को आप छिपा रहे हैं, अमृता को हजम किये जाते हैं बे मतलब ! इसलिए यह बात मैंने कही। अब चलिये इसके बाद और बात कहता हूं कि जीवितों के श्राद्ध के बारे में कोई प्रमाण बताइये ? लो सुनों—जीवितों पर जो मन्त्र मैं बोलता हूं उसे सुनिये --

उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु।
त आगमन्तु त इह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु ते अवन्त्वस्मान्॥ (यजुर्वेद अध्याय १९ मन्त्र ५७)
आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः।
अस्मिन् यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तु ते अवन्त्वस्मान्॥ (यजुर्वेद अध्याय १९ मन्त्र ५८)

ये मन्त्र हैं, और इन मन्त्रों में यह कहा गया है कि—पितर आवें, और आकर हमारे सामने बोलें, हमको उपदेश देवें, हमारी बातें सुनें - सुनों ! "**अस्मदयामि वचांसि**" हमारे वचनों को सुनें और वे बोलें, और हमारी रक्षा करें। तो ये जीवित हुए या मरे हुए ? जो रक्षा करें, बोलें, सुनें ? मरा हुआ पड़ा है, घर वाले रो रहे हैं कि हमारी सुनों—वह सुनता ही नहीं, हमें कुछ कह जाओ, वह कहता ही नहीं, मर गया, शरीर जल गया, और अब जलने के बाद वह कह भी देगा तथा सुन भी लेगा ?··· जनता में जबर्दस्त हँसी······सुनों !—

ये समानाः समनसः पितरो यम राज्ये॥ (यजुर्वेद अध्याय १९ मन्त्र ४५)

ये समाना समनसो जीवा जीवेषु मामकाः॥ (यजुर्वेद अध्याय १९ मन्त्र ४६)

ये मन्त्र हैं, सुना है पण्डित जी ! ये उन्नीसवें अध्याय के यजुर्वेद के मन्त्र हैं—जिनमें कहा है कि जो समान आयु वाले हैं, जो समान उमर वाले हैं वे पितर आवें, और हमारे यहाँ आकर के भोजन करें, वे जीवित हुए। जिनकी आयु समान, जिनके मन समान ये मरे हुए हैं ? मरे हुओं की क्या कोई आयु भी होती है ? मैं ऐसे-ऐसे मन्त्र बताऊँगा कि बिल्कुल ऐसे कि जिन्हें सुन कर हैरान रह, जाओ वे भी मन्त्र आगे आवेंगे, "**ये निखाता**" का अर्थ ग़लत है, जो आप कर रहे हैं, मृतकों के जमीन में गाड़े हुए की हमारी कोई प्रथा नहीं है, और जमीन में गाड़े हुए, उसमें तो यह कहा गया है कि वे खनन विद्या के जानने वाले, जो आकाश विद्या के जानने वाले, जो अग्नि विद्या के जानने वाले वो लोग हैं, उनको भोजन करने के लिए बुलाओ, इस मन्त्र में यह बात कही है, ये गाड़े गये उनको बुलाओ, फिर तो मुसलमानों को बुलाओ, ईसाइयों के पितर जो हैं श्राद्ध उनका होगा, अर्थात्......
टर्न टन टन टन...... ।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों ! यह दूसरी बार की टर्न भी खतम हो रही है, और यों ही धीरे-धीरे सारा शास्त्रार्थ खतम हो जायेगा, और बात वहीं की वहीं रह जायेगी। हमारी एक भी बात को स्वामी जी महाराज ने स्पर्श करने की कृपा नही की हम फिर कह रहे हैं, सुनों ! स्वामी जी महाराज ने कहा—अभी तो एक मन्त्र सुनाया हमें। पहली बात कही थी, वह बोलते-बोलते रह गयी, कहते हैं साहब कि हम नहीं मानते कि श्राद्ध और किसी ग्रन्थ में लिखा हो न लिखा हो हमें वेद में लिखा हुआ दिखाओ, वेद में श्राद्ध शब्द लिखा दिखा दो तो मान लेंगे। तुम्हारी स्मृति में लिखा हो, और कहीं लिखा हो तो हम मान लेंगे, यह इन्होंने कही एक बात ! हम कहते हैं मान लो एक मिनट के लिए, मैं प्रमाण दूंगा। श्राद्ध है वेद में !! परन्तु मान लो एक मिनट को कि—श्राद्ध शब्द वेद में नहीं है तो क्या श्राद्ध ही खतम हो गया ? न जीवित का रहा न मृतक का रहा। तुम्हीं कैसे करोगे श्राद्ध ? इसलिए अगर यह जिद्द ठानोगे कि वेद से श्राद्ध शब्द दिखाओ, तो इस माने फिर तो तुम्हारे जीवित श्राद्ध पर भी पर्दा फिर जाता है, इसलिए ऐसे आग्रह करने की जरूरत नहीं थी, पर तो भी हम स्वामी जी की तसल्ली के लिए वह मन्त्र प्रस्तुत करते हैं, जिससे भाइयो आपको मालूम हो सके, वेद में कहां कैसे आया ? सुनो ! यह यजुर्वेद का मन्त्र है—

सत्यं च में श्रद्धा च में यज्ञेन कलपन्ताम् । व्रत सत्यम् दधाति इति श्रद्धा ।।

अर्थात् "**श्रद्धया यद् क्रियते इति श्राद्धम्**" श्रद्धा पूर्वक जो काम किया जाये उसका नाम "**श्राद्ध**" और "**श्राद्धम्**" वा श्राद्ध का दूसरा पर्यायवाची है "**पितृयज्ञ**"। तो सज्जनो ! श्राद्ध शब्द की बात थी तो शब्द हमने दिखा दिया। हमने पूछा था कोई ऐसा मन्त्र बताओ जिसमें जीवितों की सेवा करनी लिखी हो। मृतकों का श्राद्ध करना न लिखा हो। स्वामी जी ने एक मन्त्र पेश किया, और हम चाह रहे थे कि—एक मन्त्र पेश कर दें, क्योंकि ये सारी बात तो एक रेत की नीव पर रेत की दीवार है, अभी हम उस शब्द को ढूंढ़ निकालते हैं उस मन्त्र में से, तभी रेत की दीवार धम्म से गिर पड़ेगी। सुनो इन्होंने जो मन्त्र उपस्थित किया, इन्होंने मन्त्र उपस्थित किया है "**आयन्तु न पितरः सोम्यासः**" अभी यह मन्त्र पेश किया, पर सज्जनों इस मन्त्र के अन्दर एक शब्द आता है "**अग्निष्वात्ता**" यह शब्द

जो मन्त्र में है इनकी सारी मान्यता खतम कर देता है। **"अग्निष्वात्ता"** का क्या अर्थ है ? यजुर्वेद की शतपथ शाखा अग्निष्वाता का अर्थ करती है—**"यान् अग्निरेवदहति स्वदयति ते पितरः अग्निष्वात्ता"** अर्थात् जिनको संस्कार करते समय अग्नि जिनके शरीर का रसास्वादन करती है, आग जिनके शरीर का स्वाद लेती है चिता में उनका नाम है **"अग्निष्वात्ता"** अर्थात् जो मरने के बाद अग्नि में जला दिए गये उनसे कहा है कि वे पितर हमारे यहां आवें। ऐं ? यहां जिन्दा की तो बात ही नहीं है। जीवित का तो मतलब ही नहीं है, अग्निष्वात्ता का तो मतलब है कि—अग्निष्वात्ता शब्द है यह अर्थ है कि नहीं, सुनो शतपथ वेद सुना रहे हैं वेद ! बड़ी वेद की बात कह रहे हैं। बड़ा अच्छा हुआ बायें-दायें नहीं जाते वेद ही सुनो क्या कहता है अग्निष्वात्ता पर वेद ? यजुर्वेद का शतपथ—**"शाँखायान् अग्निरेदहात् स्वदहति ते पितरः अग्नि स्वाप्ता"** और शतपथ के इस उद्धरण को आर्य समाज के मूर्धन्य शिरोमणी पण्डित भगवदत्त जी, भई आप अपने पण्डितों को न मानों, तिरस्कार करो उनका, उनकी उपेक्षा करो, पर ऐसा नहीं विद्वान सर्वत्र समादरणीय है, हम सच बात कहने वाले आर्य समाज के पण्डितों का भी उतना ही आदर करते हैं जितना अपने विद्वानों का ! आपका कहना है कि ये पुस्तक उसने नही लिखी, यह पुस्तक उसने नहीं लिखी, उसका दिखा दो, इसका दिखा दो। इसी में टाईम पास कर दें। आप हमारी बात को नहीं छूते हैं। कहते हैं यम और पितर आर्य समाजी पण्डित ने नहीं लिखा। क्यों नहीं लिखा ? गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक हैं मंगलदेव तडितकान्त विद्यालंकार ! गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक हैं गुरुकुल कांगड़ी आर्य समाज की संस्था है हमारी संस्था नहीं है। इसलिए एक तो इन्होंने जो मन्त्र पेश किया जीवित पितरों के बारे में, मैंने उसका समाधान पेश किया है कि—अग्निष्वात्ता शब्द का अर्थ यह है कि वे पितर जिनके शरीर को अग्नि ने चिता में जला कर भस्म कर दिया वे अग्निष्वात्ता कहलाते हैं जो जीवित हैं वे कभी नहीं हो सकते मैं ज्यादा वेद मन्त्र इसलिए भी नहीं दे रहा क्योंकि स्वामी जी महाराज बूढ़े हैं कहीं उन पर ज्यादा बोझ न पड़ जाये ! (जनता में हंसी·····) मेरे पहले के ही दो मन्त्र जो अभी इन्होंने छुए ही नही। **"ये अग्नि दग्धा, ये अनग्निदग्धा"** कहते हैं भइया हमारे यहां तो गाढ़ने का रिवाज नहीं है। अरे भाई जिनके यहां रिवाज है मान लो तुम्हारे यहां नहीं है एक मिनट को, पर जिनके यहां है, ईसाइयों के यहां है, मुसलमानों के यहां हैं और गैर मजहब वालों के यहां है, अगर उनके दिमाग में यह बात आ जाये कि हम अपने पितरों का उद्धार करें, हम अपने पितरों का किसी तरह कल्याण करें, उनका उद्धार करें। उनकी सेवा करें सनातन धर्मानुकूल श्राद्ध करने का विचार तो, वेद तो एक सार्वभौम सत्य बोलता है, चार प्रकार के संस्कार करने का रिवाज संसार भर में हो सकता है। चारों प्रकार से हम पितरों को बुलाते हैं। ये तो सार्वभौम सच्चाई प्रकट की है वेद ने, इसमें, हमारे यहां ऐसा नहीं, जल गया शरीर तो जल गया ? वे पितर आयेंगे कैसे ? वो हमसे बोलेंगे कैसे ? आपको दिखलायें स्वामी दयानन्द को बोलता हुआ ओरों की तो छोड़ो मैं स्वामी दयानन्द को दिखाऊं बोलता हुआ। वे बोले—और आर्य समाज —के सुनों भाइयों ये पुस्तक पुस्तक नही है बल्कि एटमबम है। ये बार-बार कहते थे हम नही मानते साहब ! हम नही मानते साहब !! ये हैं श्रीमद्दयानन्द प्रकाश—इसके लिखने वाले हैं श्री सत्यानन्द, ये पांचवां एडिसन जो हमारे हाथ में है यह सम्वत् १९६४ में छपा इसमें स्वामी दयानन्द जी का जीवन इतिहास लिखा है तो इसमें जो लिखा है उसे पढ़कर सुना रहे हैं हम - सुनों ! ध्यान देना - कैसे मरने वाला कैसे दीखता है? इसमें लिखा है कि जब स्वामी जी की मृत्यु का समय निकट था उस समय का वर्णन किया जा रहा है कि—महर्षि की मृत्यु की अवस्था देखकर श्री गुरुदत्त जैसे धुरन्धर उनके कोई सेवक रहे जो वहां उपस्थित थे हृदय

की उपजाऊ भूमि में आखिरी जीवन की जड़ें लग गई उन्होंने क्या देखा ? गुरुदत्त जी ने, सत्यानन्द जी लिख रहे हैं उन्होंने क्या देखा ? कि—"एक ओर तो परमधाम को पधारने के लिए प्रभु परमहंस पलंग पर बैठे प्रार्थना कर रहे हैं और दूसरी ओर व्याख्यान देने की वेशभूषा में सुसज्जित उसी कमरे की छत के साथ लगे बैठे हैं" एक तो बैठे पलंग पर स्वामी जी, दूसरे वे छत के साथ लगे कैसे थे ? भई, ये कह देंगे कि उनकी नजर का दोष था। इसको छत पर दयानन्द जी दीख रहे थे तो उनकी नजर का दोष था, अच्छा सुनिये और भाई एक तो आर्य समाजी उनका जगह-जगह प्रचारकर्त्ता, घूमता ब्रह्मचारी कृष्णदत्त हैं। आप लोगों ने बहुत सों ने आर्य समाज में प्रचार कराया, जगह-जगह उनका प्रदर्शन भी करता है, कि ब्रह्मचारी कृष्णदत्त में श्रृंगी ऋषि की आत्मा आती हैं। श्रृंगी ऋषि की आत्मा उसके शरीर में आती है, वह ब्रह्मचारी हमारा नहीं है। कि उसको जहां-तहां लिटाकर ये आर्य समाजी उसके प्रश्नोत्तर कराते हैं, इसलिए मरने के बाद कोई आता है या नहीं ? आज के विज्ञान के युग में ऐसा कहना दुस्साहस है। टर्न टन टन ऽ ऽ ऽ…

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

भाइयों ! यह बात समाप्त हुई कि आर्य प्रतिनिधि सभा ने पुस्तक लिखवाई थी तो फिर क्या थी ? वह बात समाप्त हो गई, इसलिए मैं इसको नहीं कहता, अब आगे की बात रही, इन्होंने अपने आप प्रश्न बना लिया, यह किसने पूछा है कि वेद में श्राद्ध शब्द लिखा है ? मैंने न कभी पूछा और न ही कहा। तो अपने आप ही कहना है, अपने आप ही उत्तर देना है। समय को नष्ट करना है, इसलिए अपने आप ही प्रश्न बना लिया, अपने आप ही उत्तर देना आरम्भ कर दिया, और उस पर भी **"श्राद्ध"** शब्द दिखाया कि **"श्रद्धा"** ? अर्थ आपने यह किया कि **"श्रद्धयायद् क्रियते इति श्राद्धम्"** ये तो हम भी कहते हैं, ये तो हमारा किया हुआ अर्थ है। वो बताते जो कहते हैं कि **"गया"** में जाकर श्राद्ध करे, गया में जाकर पिण्ड देवे रहा श्राद्ध का—श्रद्धा से जो भी काम किया जाये वह श्राद्ध है किसी का आदर सत्कार किया जावे वह श्राद्ध है। यह तो हमारे लक्षण हैं, तो क्या हुआ ? यह आपने पढ़ कर सुना दिया कि वेद में **"श्राद्ध"** है और दिखा दी **"श्रद्धा"** इसलिए श्राद्ध सिद्ध हो गया। ये हैं अपने अज्ञेय पितरदर्शी बड़ा सहारा मिला कृष्णदत्त ब्रह्मचारी का इस सभा में घोषणा की गई है कि कोई आर्य समाजी इसको न बुलावे अरे कहते हैं आर्य समाजी। हमारे पण्डित ओमप्रकाश जी शास्त्री बैठे हैं। आर्य समाज की घोषणा है कि—आर्य समाज से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है। आर्य समाजी इनको कोई प्रोत्साहन न देवें। क्या मतलब ? इसका मतलब है कि—डूबते को तिनके का सहारा। प्रमाण कोई मिलता नहीं, कहीं तो कृष्णदत्त की शरण में जायेंगे, कभी किसी और मुसलमान की शरण में जायेंगे, कभी ईसाइयों की शरण में जायेंगे, प्रमाण मिलता कोई नहीं। भाइयो क्या इन्होंने दयानन्द प्रकाश में दिखाया कि-स्वामी दयानन्द जी बोले ? यह दिखलाया नहीं। क्या ये कि उन्होंने देखा गुरुदत्त जी ने कि दयानन्द जी एक तो ये बैठे हैं चारपाई पर और एक छत पर दिखाई देते हैं, और उत्तर भी अपने आप दे दिया कि उनकी दृष्टि का दोष कहोगे। हम कहेंगे कि यह दृष्टि का दोष नहीं तो और क्या है ? और कोई कहेगा भी क्या इसे? दृष्टि का दोष नहीं कहेगा तो और क्या कहेगा? बोलो? बोले कहां से? ये शास्त्रार्थ हो रहा है ! वेद मन्त्रों की झड़ी लग रही है !! ये भी वेद मन्त्र है-कृष्णदत्त ब्रह्मचारी का, वह भी वेद मन्त्र था पण्डित तडितकान्त का, जिसके लिए दावा किया था कि प्रतिनिधि सभा ने उसके लिए लिखवाया, और मानना पड़ा कि प्रतिनिधि सभा ने लिखवाया ही नहीं। और प्रतिनिधि

सभा ने उसके लिए धन्यवाद किया, ये भी झूठ निकला। यों तो दुनियां में प्रतिनिधि सभा में हजारों पुस्तकें लिखी जाती हैं, हम ठेकेदार हैं सारी पुस्तकों के? जो भी पुस्तक इधर-उधर से मिलेगी, उसे लेकर के आवेंगे हमारे मत्थे मढ़ेंगे उसे। हमारे लिए वह प्रमाण लाओ जिसे हम मानते हैं, नहीं तो यहां पर बड़े-बड़े विद्वान बैठे हैं उनसे पूछ लीजिये, उनसे सहारा लीजिये, और पढ़िये, तब बात आगे चलेगी। महाविद्वान पण्डित रामेश्वराचार्य जी आपके पास बैठे हैं। अब मन्त्र और बोलता हूं पहले एक मन्त्र सुनिये—"**अद्यामसृता पितृषु सम्भवन्तु**"······पौराणिकों द्वारा शोर मचाना······अब ये सुनेंगे नहीं क्यों कि सायणाचार्य का मैंने भाष्य जो दिखा दिया, "**असृता**" है इसमें "**मृता**" नहीं है। "**अमृता**" है "**असृता**"!! झूठी बात मत कहो, एक मन्त्र बोलता हूं—

शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्राजरसं तनूनाम्।
पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति, मा नो मध्या रीरिष्तायुर्गन्तोः॥ (यजुर्वेद अ० २५ मन्त्र २२)

यजुर्वेद के पच्चीसवें अध्याय का ये मन्त्र है, इसमें क्या कहा गया है? कि—माता-पिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं कि हे परमेश्वर हम तब तक जीवित रहें जब तक कि हमारे पुत्र पितर हो जायें। अब ये पितर का अर्थ मरा हुआ होता है? कहिये! कोई सनातन धर्म में होता होगा, आर्य समाज में तो है नहीं, जनता में हंसी····· यहां कोई होगा जो कहता हो कि हमारे पुत्र मर जायें, जब तक हम जीवित रहें, हमारे यहां तो कोई ऐसा नहीं जो यह कह सके कि हमारे पुत्र मर जाये जब तक हम जीवित रहें। माता पिता कहते हैं कि "**पुत्राशोयद्पितरो भवन्ति**" जब तक हमारे पुत्र पितर हो जायें, पितर होने का क्या अर्थ है? "**पुत्रवन्तो भवन्ति**" पुत्रवान हो जायें अर्थात् ये जो मैं अर्थ बोल रहा हूं ये महीधर का अर्थ है, ये जो अर्थ है आपके आचार्य का अर्थ है, कोई इसका उत्तर नहीं दे सकता, कोई इसका खण्डन नहीं कर सकता है, इसमें जीवित लोगों को अर्थात् जीवितों को पितर कहा है। हमारे पुत्र जो है पितर हो जायें, जब तक हम जीवित ही रहें। और में दावे से कहता हूं कि अन्त तक इसका उत्तर नहीं आवेगा, अब मैं दो-चार प्रश्न भी कर जाता हूं, उत्तर तो जैसा ये देंगे आप सुन लेना, इनके पास इन प्रश्नों का उत्तर कभी नहीं बनेगा, ये हमारा दावा है। अब प्रश्न सुनो! मैं प्रथम तो ये पूछता हूं कि "पितर जीव को कहते हैं या शरीर को"? दूसरे "जो मृतक श्राद्ध किया जाता है तो मरे हुवे यहां खाने आते हैं या भोजन उनके लिए वहीं पहुंचता है"? अगर यहां खाने के लिए आते हैं तो—

वांसासि जीर्णानि यथा विहाय नवानिगृहणाति नरोपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णानि अन्यानिग्रहणाति नवानि देही॥ (भगवतगीता)

उन्होंने आगे जाकर कहीं जन्म ले लिया, और आपने उन्हें यहां बुला लिया कि आओ हमारे यहां भोजन करो, तो वे शरीर छोड़ करके आवेंगे या शरीर साथ लेकर के आयेंगे? अगर वे शरीर साथ लेकर आयेंगे तो पण्डित जी के साथ में एक और आ गया, न्योता अकेले पण्डित जी को और साथ आ गया एक और! तो श्राद्ध करने वाले कहेंगे कि ये किसे ले आये? पण्डित कहे कि तुम्हारे बाप को! वह कहेगा बाप होगा तेरा, हमारा बाप काहे को है? हमारा बाप तो मर गया, तो ये किसे ले आये? अभी लड़ाई झगड़ा होने लगेगा। कौन आवेगा? अगर शरीर छोड़कर आवेगा तो वह मर जायेगा,

जीवात्मा उसमें से निकल कर आवेगा, उसके घर में रोना-पीटना पड़ जावेगा, फिर उसे भस्म कर देंगे। तो मृतक श्राद्ध का परिणाम यह निकलेगा! इसलिए किसी प्रकार से कोई भी मृतक श्राद्ध को युक्ति से सिद्ध नहीं कर सकता है, और न वेदों से सिद्ध कर सकता है। अब यह कह दिया "**अग्निष्वात्ता**" का अर्थ मैं बताता हूं और अर्थ भी किनका किया हुआ? सायणाचार्य जी का! सुनो!! और हां उव्वट का भी सुनों, महीधर का भी सुनों। सायण भाष्य में कहा गया है—"**अकृत सोमयागास्तु अग्निष्वात्त संज्ञकाः**" जो लोग सोम याग (सोमयज्ञ) नहीं करते उनका नाम "**अग्निष्वात्त**" है और ये कहते हैं कि जो अग्नि में अलाये गये हैं उनका नाम "अग्निष्वात्ता" है। और स्वयं सायणाचार्य जी क्या कहते हैं? ये भी आपने सुना! अब मनुस्मृति में मनु जी क्या कहते हैं? सुनों—"**अग्निष्वात्तश्च देवानां मारीचालोक विश्रुताः**" अर्थात् ऋषि के पुत्रों को "**अग्निष्वात्त**" कहते हैं जले हुओं का नाम "**अग्निष्वात्त**" नहीं है मरीचिकों का जो भी पुत्र होता है उसे आग में जला दे। जो बेटा मरीची के वंश में हो उसे आग में जलाओ तो "**अग्निष्वात्त**" बने अग्निष्वात्त का अर्थ यह नहीं है बल्कि इसका अर्थ वही है जो सायणाचार्य जी ने किया है—" **अकृत सोमयाग**" यह सायणाचार्य जी का अर्थ है। और इसी प्रकार महीधर जी का! उनके किये हुए अर्थ हैं, मेरे पास इस वक्त ये ग्रन्थ मौजूद हैं, और जो भी देखना हो देखें, ये देखो महीधर जी का भाष्य मेरे पास है। इसके भी इस समय दो भाष्य विद्यमान हैं। सज्जनों ये तो ढूंढ़ते फिरते हैं उनको, जिन्हें आर्य समाज से निकाल दिया, हम उन्हें पेश करते हैं जिनको आचार्य माना जाता है। सब पौराणिक लोग उनको सिर झुका कर मानते हैं। आपने देखा इन्होंने कैसे मेघ की तरह वेद मन्त्र बरसाये थे? और बहाना भी क्या बढ़िया निकाला था कि ज्यादा वेद मन्त्र मैं इसलिए नहीं बोलता कि बूढ़े सन्यासी पर बोझ न पड़ जाये! सज्जनों, ये मुझ पर बोझ न पड़ जाये इसलिए वेद मन्त्र नहीं बोलते! जनता में हंसी······पहले ही इन्होंने इतने वेद मन्त्र सुनाये कि मैं बोझ से दबा जा रहा हूं, ये हजारों वेद मन्त्र सुना चुके हैं।······जनता में पुनः हंसी का वातावरण······इन्होंने दो-तीन वेद मन्त्र बोले थे, उन सबका उत्तर मैंने दे दिया, अर्थ भी बतला दिया, इनका अर्थ नहीं है, अब इनको वो "सैन्धव याद आ गया, और अब यहां पर जहां कहीं पर भी पितर शब्द आवेगा, आपका वहां मुर्दा ही अर्थ होगा, और वह नहीं बदलेगा। सैंधव का अर्थ कहीं पर घोड़ा होता है, कहीं पर नमक होता है, यहां पितर का अर्थ मरा हुआ ही होगा चाहे नाम-करण संस्कार हो रहा हो चाहे समावर्तन संस्कार हो रहा हो। हम पूछते हैं कि कहां लिखा है कि दयानन्द जी ने मरे हुए पितर को? एक और बढ़िया बात घढ़ कर सुनाई लोगों को हंसाने के लिए कम से कम सनातन धर्मी तो प्रसन्न हो ही जायेंगे कि हमारे पण्डित ने बड़ा भारी उत्साह दिखाया पिता प्यासा बैठा हुआ है वह प्यासा मर रहा है और उधर पूरब को मुंह करके और उधर दक्षिण को मुंह करके पानी दे दिया कहां लिखा है?" पिता प्यासा बैठा हुआ है वह आपके घर में बैठा हुआ होगा। न कहीं प्यासा बैठा हुआ है न कोई बात! "पितर" अर्थात् माता-पिता की खूब सेवा करनी चाहिए, हम कहते हैं जो जीवित है सबकी खूब सेवा करनी चाहिए वहां जो "**पितरः शुन्धध्वम्**" कहा है पितरों शुद्ध हो और शुद्ध करो। ये संस्कारों के काम है। और उसमें कई बातें ऐसी आती हैं वह की जाती है। शिक्षायें होती हैं उनमें कोई किसी बात की शिक्षा होती है तो कोई किसी बात की! व सिर्फ मुर्दों के लिए जहां कहीं नामकरण में आ गया पितर वह मरों के लिए हो गया जहां कहीं श्राद्ध में आ गया वह मरों के लिए हो गया आप बताइये कहां लिखा है, मरों के लिए? बाप प्यासा बैठा हुआ है, और कहां बैठी हुई है मां प्यासी? इस तरह इन बातों में समय नष्ट करने की बात है प्रमाण कोई है

नहीं। और वही ढूंढ़ कर कल वाली बात फिर ले आये बार-बार कहा है कि स्वामी जी ने "पञ्च-महायज्ञ विधि" सन् १६३२ ई० में लिखी थी पहले तो वह ३२ में छपी वह भी हमारे पास है इसके बाद दूसरा संस्करण सन् १६३४ में छपा वह भी हमारे पास है आप सन् ३६ का ले आये झूठा बना करके। और उस पर प्रमाण करते हैं कि "स्वामी जी ने कहा था" सज्जनों! सन् १६३२ ई० वाले में मृतक श्राद्ध नहीं है, मूर्ति पूजा नहीं है, न सन् १६३४ ई० वाले संस्करण में है, तो सन् १६३६ ई० वाले में कहां से आ गई ? इनको कोई सहारा मिल नहीं रहा। न इनके पास प्रमाण हैं बस लोट-पोट के इन्हीं बातों को कहते रहेंगे। कभी राजाराम की शरण में जाओ कभी कृष्णदत्त की या कभी तडित-कान्त की! जो आर्य समाजी नहीं रहे उनकी शरण में जाओ वेद मन्त्र कोई इनके पास है नहीं। अब मैंने वेद मन्त्र दिया कि—"**पितर का अर्थ जीबित होता है**" मरा हुआ नहीं होता, और मैंने इस बात पर पुस्तक लिखी जिसमें एक सौ चौबीस प्रमाण मैंने इस पुस्तक में दिये मेरी पुस्तक है, "**जीवित-पितर**" उसके अन्दर १२४ प्रमाण हैं वेद के कि —"पितर का अर्थ जीवित ही होता है मरा हुआ नहीं होता" मैंने पूछा था कि मरे हुए का नाम है पितर, तो पितर नाम मरे हुए शरीर का हुआ या जीवात्मा का ? किसका नाम है पितर ? क्या आपके पास इसका कोई उत्तर है ? आ गया उत्तर इसका! प्रेमाचार्य जी किसी की भी शरण में जाओ पूछ आओ इसका क्या उत्तर है ? मैंने पूछा है कि ज़ो श्राद्ध में आप बुलाते हैं वे पितर शरीर सहित आते हैं या शरीर रहित ? कैसे और किस रूप में आते हैं वो पितर ? आपने कोई उत्तर नहीं दिया मैं बताता हूं आप तो क्या बतायेंगे ? सुनों सज्जनों! गरुड़ पुराण में लिखा है कि— वे आते हैं और कहां आते हैं ? सुनों "**उदरस्थः पिता तस्य वाम-पार्श्वे पितामहः**" जिस ब्राह्मण को न्योता दिया जाता है बाप उसके पेट में आकर बैठ जाता है और उसका पितामह उसकी बाईं कोख में आकर बैठ जाता है तथा प्रपितामह दाहिनी कोख में! सज्जनों वो पेट हैं ब्राह्मण का कि कोई मुसाफिर खाना ? श्रोताओं में जबर्दस्त हंसी ···जिसके अन्दर इतने बैठ जाते हैं अर्थात् सब जमा हो जाते हैं इक्ट्ठे होकर के। और उसी पेट में खीर भी खाई जाती है हलुआ भी खाया जाता है। सबको खा जाता है और पितर आकर बैठ जाते हैं उसके पेट में······ तालियों की गड़गड़ाहट ······पौराणिकों द्वारा शोर मचाना·····अभी से ये लोग छटपटाने लगे अभी तो शुरूआत है आगे-आगे देखो कैसी-कैसी मार्के की बातें कहूंगा। एक बात और बता देता हूं कि मृतक श्राद्ध में मांस खाना आवश्यक है। पण्डित जी आप खाने को तैयार हो ? मैं प्रमाण दूंगा। जो मृतक का श्राद्ध करेगा उसके निमन्त्रण पर जो ब्राह्मण आवेगा उसको मांस खाना आवश्यक होगा अगर मांस नहीं खायेगा तो नर्क में जायेगा तथा साथ में पितर को भी ले जावेगा। प्रमाण सुनों······ चारों तरफ शोरोगुल ·····पौराणिक मण्डल में दबर्दस्त खलबली······बीच में पण्डित बालकृष्ण जी (प्रधान) बोले······ "स्वामी जी महाराज प्रश्न है कि श्राद्ध जीवित का है या मरे हुए का ?" इसके पश्चात् आप जो ये कहते हो यह "विषयान्तर" है।······स्वामी जी महाराज ने कहा—प्रधान जी—यह विषय से हरगिज अलग नहीं हैं मरे हुए पितरों के लिए विषय है और भिन्न विषय की बात नहीं है। वे सारी बातें व्यर्थ कहते हैं उनको तो आप रोकते नहीं। मैं विषय के अन्दर बात कह रहा हूं तथा बिल्कुल सीधी बात कह रहा हूं। कूर्म पुराण में लिखा है कि—मरे हुए का श्राद्ध किया जाये और श्राद्ध में ब्राह्मण आकर के न्योता खावे तो उसे मांस अवश्य खाना होगा। मूल पाठ सुनिये—"**यो नाश्नाति द्विजो मांसम् नियुक्तः पितृ कर्मणि। स प्रेत्य पशुतां याति सम्भवा नेक विंशतिम् आमन्त्रिस्तु यः श्राद्धे देंबे वा मांस मुत्सृजेत्। पाबन्ति पशुरोमाणि तावतो नरकान् बृजेत्**"॥ अर्थात् जो ब्राह्मण मृतक श्राद्ध

पितृ कर्म में निमन्त्रण मान करके मांस नहीं खायेगा वह मरने के बाद २१ बार पशु बनेगा। अर्थात् मर जायेगा फिर पशु बनेगा, फिर मर जायेगा। फिर पशु बनेगा। इस प्रकार जब तक २१ बार पशु नही बन लेगा तब तक उसका पीछा नहीं छूटेगा। इसलिये अब आप आगे तैयारी कर लो कि हर घर में मांस खाना पड़ेगा। नहीं खाओगे तो उसकी भी तैयारी कर लो। २१ बार पशु बनना पड़ेगा...... जनता में हर्ष ध्वनि व तालियों की गड़गड़ाहट..... इसलिए मृतक श्राद्ध की बात तो किसी भी प्रकार से सिद्ध नहीं हो सकती। मैंने जो बात कही है उसे फिर याद रखिये कि—"पितर शरीर रहित आता है या शरीर सहित"? कैसे आता है? और वह ब्राह्मण से पहले खाता है या ब्राह्मण उससे पहले खाता है? अगर ब्राह्मण पहले खाता है तो पितर उसका झूठा खाते हैं और अगर पितर पहले खाते हैं तो ब्राह्मण उनका झूठा खाता है, किसी का झूठा खाना पाप है और वह खाया हुआ कहां पहुंचता है यह भी दावे से बताइये? वहां पहुंचता है तो इसकी भी पोल खोलूंगा। बात यह भी सिद्ध होगी नहीं। इस वास्ते पण्डित जी महाराज! घबराने की बात नहीं। **"मृतक श्राद्ध तो कोई भी सिद्ध नहीं कर सकता"**।।

आज आप फंसे हैं पण्डित जी महाराज! क्या ही अच्छा होता अगर यहां आने से पहले अपने पिताजी श्री पण्डित माधवाचार्य जी से पूछ लेते कि मेरा पाला आज किससे पड़ने वाला है?...... ... जनता में जबर्दस्त हंसी .....मैं तो धन्यवाद देता हूं श्री पण्डित बाल किशन जी को, बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूं कि वे सज्जन पुरुष हैं, इन्होंने यह शास्त्रार्थ की परम्परा डाल दी नहीं तो आप कहां शास्त्रार्थ करने वाले थे? ......तब तक हम जीवित रहें उसके लिए मैंने अर्थ सुना दिया कि— **"पुत्रवत्त"** हो जाये, पितृ, पुत्रवान हो जाये। और हम लोग जो हैं पितृवान हो जायें तब तक जीवित रहें इसलिए **"पितर" का अर्थ जीवित है मरा हुआ नहीं"** अग्निष्वात्ता का मैंने अर्थ बताया, यज्ञ न करने वाले। ये सायणाचार्य ने अर्थ किया अग्निष्वात्ता का जो मैंने अर्थ बताया। महर्षि मरीचि जो पुत्र हैं सब अग्निष्वात्ता हैं। यह नहीं है कि उनको सबको जला दिया जाये ये उनका प्रमाण दिया, मेरे पास यह सब प्रमाण है। मैंने कहा था कि समान आयु व समान मन वाले **"ये समान समनसो जीवा जीवेषु मामकाः"** एक मन वाले हैं और एक आयु वाले हैं तथा उनके लिए प्रार्थना की गई कि— **"आच्याजानु दक्षितो निषद्य..."** ये मन्त्र हैं ऋग्वेद में, तथा यजुर्वेद में १९-६२ व अथर्ववेद में, कि— पितर आवें और बायां घुटना टेक कर दक्षिण की ओर बैठें क्यों आचार्य जी क्या मरे हुओं के घुटने भी होते हैं? मरे हुए का शरीर जल गया तो फिर वह घुटने कैसे टेकेगा? **"आसिनासो अरुणीनामुपस्थे..."** यजुर्वेद १९-६३ में कहा गया है कि—"पितर आकर के लाल ऊन के आसनों पर बैठे" ये जीवित बैठेंगे कि मरे हुए बैठेंगे? ये जो सारे मन्त्र पितर सम्बन्धी हैं। पितर का अर्थ जीवित ही होता है मरा हुआ नहीं होता। एक भी मन्त्र नहीं बोला जिसमें मरे हुए का जिकर किया गया हो।......विघ्न..... पण्डित प्रेमाचार्य जी द्वारा बीच में बोलकर विघ्न डालना... मैंने यह बात मानी है कि आपको बड़ी भारी पीड़ा हो रही है कि मैंने ब्राह्मण की खीर खानी बन्द कर दी है। मैंने इतनी देर में एक बार भी नहीं कहा कि—ब्राह्मणों को खीर मत खिलाओ। अरे भाई खूब खिलाओ और आज से मैं आपसे अपील करता हूं कि और किसी को खिलाओ या मत खिलाओ परन्तु प्रेमाचार्य जी को इतनी खीर खिलाओ कि इनकी नाक तक भर दो। मैं कभी नहीं कहूंगा कि ब्राह्मण को खीर मत खिलाओ। न मैंने पहले कभी कहा और न आगे कहूंगा .....जनता में हंसी...... इन्हें तो अपने आप बना-बना कर बे मतलब की बातें कहनी हैं क्योंकि समय निकालना है। नष्ट करना है। अपने आप बातें बना लेनी और अपने

आप उसका उतर दे देना और हां इतना पता है आपको मैंने बोला गरुड़ पुराण का श्लोक जिसमें कहा गया है **"उदरस्थः पिता तस्य वाम पार्श्वे पितामहः"** आप कह रहे हैं। आपने वेद मन्त्र बोला वेद मन्त्र का अपने आप खण्डन कर लिया। खण्डन क्या कर लिया **"आसीनासो अरुणीनामुपस्थे"** कि वे तो लाल ऊन के आसन पर बैठते हैं, खण्डन क्या कर लिया? गरुड़ पुराण का खण्डन हुआ, वेद मन्त्र का क्या खण्डन हुआ? गरुड़ पुराण में जो लिखा है उसका खण्डन हो हजार बार! उससे हमें क्या मतलब? मैंने आपके लिए कहा है कि ब्राह्मण के पेट में आकर बैठते हैं, पितर लोग, और आपने यह कह दिया कि ब्राह्मण बैठता है लाल ऊन के आसन पर! बिल्कुल गलत, "ब्राह्मण नहीं—पितर बैठें" इस मन्त्र में कहा है कि "पितर बैठें" देखिये मन्त्र पर ध्यान दीजिये—**"आसीनासो अरुणीनामुपस्थे"** इस मन्त्र में पितर शब्द है ब्राह्मण शब्द नहीं है। पितर आ करके बैठे, ऐसे व्यर्थ समय टालने से क्या मतलब? इधर की कह दी, उधर की कह दी, न वेद मन्त्र बोलना न उसको छूना! मैंने जितने वेद मन्त्र बोले हैं उनमें से किसी का कोई हवन कर लो। वह पितर जो हैं दक्षिण दिशा में क्या करें यह प्रश्न किया हैं? बे मतलब की बात। बात तो यह है कि एक होता है देवकाल और एक होता हैं पितृकाल! देव जो महान विद्वान वेद के ज्ञाता हैं तथा रक्षा करने वाले ये माता पिता आदि जो हैं ये सब पितर हैं। रक्षा करने वाले सब पितर तथा शिक्षा देने वाले विद्वान ये सब हैं तब वेदों का काल शुक्ल पक्ष कहा जाता है और पितरों का काल कृष्ण पक्ष कहा जाता है। दक्षिण में पितरों का काल कहा जाता है। क्योंकि रक्षा करने की आवश्यकता दक्षिणायन में अधिक पड़ती है क्योंकि पितरों का काल कृष्ण पक्ष जो दक्षिणायन में होता है अंधेरे में रक्षा की अधिक आवश्यकता पड़ती है। ये सब बातें पढ़ने की हैं परन्तु "पढ़ना-लिखना ब्राह्मण का काम"! इसे करिये आप, तब आपको पता लगेगा कि दक्षिण दिशा में क्यों होता हैं? वेद मन्त्र—पिता —"पितर" कहां रहते हैं अनेक मन्त्र बोल दिये कहां रहते हैं, पितर शब्द का क्या अर्थ है? मैंने कहा जीवित है मरा हुआ नही है। और मैंने १२४ प्रमाण बताये जो मेरी पुस्तक में लिखे हुए हैं, वह पुस्तक है **"जीवित पितर"** ब्राह्मण ग्रन्थों में पितर शब्द के अनेक अर्थ दिये हुए हैं।

रही खीर की बात! आपने कहा कि स्वामी जी के पेट में दर्द होता है खीर कोई खाता है, खिलाता कोई और है स्वामी जो के पेट में बेमतलब दर्द होता है। मैं कहता हूं खूब खिलाओ खीर और ऐसी खिलाओ कि नाक तक भर जाये। बल्कि हमारे यहां तो ब्रज में ऐसा भी कहा जाता है कि ब्राह्मण खाता-खाता मर जाये तो यजमान को बड़ा पुण्य होता है। इतनो खीर खिलाओ कि खाते-खाते ····· बस! स्वर्गलोक को सीधे चले जायें ····· जनता में बेहद हंसी······ मैं कब कहता हूं कि खीर मत खिलाओ? वहां तो कहा जाता है कि दो-तीन लड्डू और खा लेओ, चार और खाओ मथुरा और वृन्दावन में! ओर रुपये भो लो, तथा दक्षिणा भो लो। बस उनका कहना है कि खा लो। वो कहते हैं कि बस किसी तरह मर जायें हमारे घर में तो और भो अच्छा हो। मैंने कहा ब्राह्मण को मांस खिलाना कहा है। कोई उत्तर है इसका? मैंने कहा कि पितर यहां आते हैं या भोजन वहां पहुंचता है? कोई उत्तर है इसका? शरोर छोड़कर आते हैं या शरोर सहित आते हैं! कोई उत्तर है इसका? जो मैंने पूछा था कि शरीर का नाम पितर है या जोवात्मा का नाम पितर है? है कोई उत्तर इसका? जो भी मैंने प्रश्न किये, कोई उत्तर नहीं, जो इन्होंने प्रश्न किये उन सबके उत्तर मैं बराबर दे रहा हूं। जो मन्त्र इन्होंने बोले उन सबके अर्थ व उतर मैं बता रहा हूं। जो मन्त्र मैंने बोले उनका

उत्तर नहीं, मैंने कहा **"अग्निष्वात्ता"** का अर्थ इन्होंने किया जला हुआ परन्तु मनु जी कहते हैं कि **"अग्निष्वात्त"** मरीचि के पुत्रों का नाम है। और मैंने बताया कि जो यज्ञ नहीं करता उसका नाम **"अग्निष्वात्त"** है। मैं सारी बातों के प्रमाण दे रहा हूं। और इन्हीं के सायणाचार्य जी व महीधर जी के दे रहा हूं। मैं इनको तरह कृष्णदत्त जी के पीछे नहीं फिरता, कि सिर हिला-हिला कर इन्हें कौन पढ़ाता है ? उसकी शरण में आप जाओ, मैं तो बड़े-बड़े महान विद्वानों के प्रमाण ढूंढ़ता हूं। और उनके प्रमाण लाकर देता हूं। और इसलिए कहता हूं आपको कि आप उस पर विचार करिये। और कहा कि जितेन्द्रिय हों पितर ! पितरों को जितेन्द्रिय कहा है। और इसमें "गऊ के दूहने वाले" को पितर कहा है। (ऋ० १-१२१-५) ये कहा है सदाचारी हों, सत्याचारी हों, सजातियों में यशस्वी हों। पितर आयु वाले हों। (ऋ० ६-७५-६ व ८८ तथा ३-३६-४) तथा उम्र के धारण करने वाले हों **"शक्तिवन्तो गम्भीराः"** शक्ति वाले हों तथा गम्भीर हों ये मरे हुए हैं या सब जीवित हैं ? जीवितों के लिए ही सब कहा गया है। और एक-दो नहीं हैं, युद्ध करने वाले पितर हों।" **अस्माकं पितरः योद्धाः"** हमारे पितर ऐसे हों जो युद्ध करने वाले हों, वीर हों, शूरवीर हों। इस प्रकार के पितर हों कि—**"येना नः पूर्वे पितरः पदज्ञाः ·····ऋग्वेद १-६२-२"** व्याकरण के जानने वाले पितर हों, तरल पदार्थ के जानने वाले पितर हों, वे पितर होने चाहिये। और **"युवा पितर होवें"** इस प्रकार से, और हां दक्षिणा में रक्षा करने वाले पितर हों एक ही मन्त्र है हमारे पास क्या ? ढेर मन्त्र ही मन्त्र हैं, जिनमें जीवित पितर और माता-पिता की खूब सेवा करनी चाहिये, हमारा सिद्धान्त तो यह है कि जीवित माता पिता की खूब सेवा करनी चाहिये। इनका एक प्रश्न और रहा जाता है वह भी सुनों, कहते हैं कि—ब्रह्मचारी हो गया अब आपने प्रश्न किया कि ४८ वर्ष तक कौन ब्रह्मचारी कौन सा आर्य समाजी रह सकता है ? नहीं करता ब्याह आपको क्या चिन्ता हो गई ? मत करो ब्याह। सारी उम्र न करे कोई ब्याह तो आपको क्या ? बोलो करे या न करे ? प्रश्न आपका यह है कि जब तक उसके बेटे पोते होंगे तब तक वह वानप्रस्थ में चला जायेगा उसके बाद वह सन्यास में चला जायेगा मैं कहता हूं कि अगर सन्यास में चला जायेगा तो फिर क्या वह पितर न रहेगा ? और अगर वानप्रस्थ में चला गया तो क्या पितर न रहेगा ?

और पितरपना कहाँ उसका चला गया ? वह होगा और पुत्रों का कर्त्तव्य है जहां भी कोई वानप्रस्थी हो अपने भी हों तथा पराये भी हों उन सबकी सेवा करें। जो सन्यासी हों उनकी सेवा करें। विद्वान हों उनकी सेवा करें। श्री पण्डित माधवाचार्य जैसे बड़े विद्वान होवें उनकी खूब सेवा करें। कौन कहता है सेवा न करें ? उनकी खूब सेवा करें, खूब खीर खिलावें। यह सब करें, चाहे वानप्रस्थ हो जाये, चाहे सन्यासी हो जाये। चाहे कोई भी हो जाये, निषेध नहीं है उनकी सेवा करने का। खूब सेवा करें उनकी। तो ये बड़ा भारी प्रश्न निकाल कर ले आये कि वह वहां चला जायेगा तो वह उसकी सेवा कब करेगा ? और फिर सबके लिए कब कहा है कि सब ही वानप्रस्थ हो जाये, और सभी सन्यासी हो जायें ? जो वानप्रस्थ होना चाहते हैं, जिनकी अवधि है, जिनको योग्यता है, वो करें तपस्या का काम है बड़ा भारी। और सन्यासी कौन हो जाये ? जिसको वैराग्य हो जाये अथाव हर एक सन्यासी हो जाये यह किसने कहा है कि सब सन्यासी हो जायें ! सब वानप्रस्थी हो जायें ? जब जो होगा तो वह हो जायेगा। इस वास्ते मैंने ये बातें आपके सामने कही कि ये सब जो हैं और देव—विद्वान—देव कहा आपने हां एक बात रही जो आपने कही कि—वो चौदह भाग ये सौलह भाग ये पितरों के लिए रखें,

और हमारे प्रधान श्री पण्डित बालकृष्ण जी हैं तो बड़े सज्जन, पर कभी-कभी पक्षपात कर जाते हैं, ब्राह्मण की बात है ना भाई इसलिए कर जाते हैं बिचारे ! ···जनता में हंसी·····मैं कोई बात कहता हूं तो हमें तो कहते हैं कि विषयान्तर हो गये, और ये विषयान्तर नहीं हैं जो प्रमाण ये दे रहे हैं जो पितृयज्ञ का नहीं है, बलिवैश्वदेवयज्ञ का है। ये विषयान्तर नहीं हैं ? वेद का प्रमाण है, चौदह भाग रखे हैं, यह करें, वह करें और आप इसे कह रहे हैं, श्राद्ध में ! पितृयज्ञ में !! सुनों—

"शूनां च पतितानां, श्वपचां पाप रोगिणाम् । वापसानां कृमीणां च, शनकै निर्विपेद भुवि" ॥

मनुस्मृति के इस वचन में मनु जी महाराज कहते हैं कि, कुत्तों के लिए, कौवों के लिए, कोढ़ियों के लिए, रोगियों के लिए, कीड़ों के लिए, उनके लिए वे सब भाग रखे जाते हैं, उनमें कोई कैसे भी हों। मरे हुए तो नहीं हैं, वे जीवित हैं। जीवितों के लिए या मरे हुए कुत्तों के लिए ? मरे हुए सांपों के लिए, मरे हुए कौवों के लिए, भोजन कहां लिखा है यह ? वह भी जीवित ही हैं, उन सब जीवितों के लिए और ये पितर, वे भी पितर हैं किसी के। वो अपने मां-बाप-बच्चों के पितर वो भी हैं। उनके लिए कोई देव हैं, और ये इनके लिए पितर—देवता होते हैं, आप ही बताइये ?

मैंने पूछा कि आपके निमन्त्रण पर जो आते हैं पितर, वे शरीर सहित आते हैं, या शरीर रहित आते है ? इसका उत्तर यह है कि मनीआर्डर जाता है। ये इसका उत्तर है कि मनीआर्डर में आप नोट भेजो, रुपया भेजो, वहां पर डालर हो जायेंगे, इसमें भी मुसीबत पड़ जायेगी। ये भी बात बनेगी नहीं अगर ये होगा तो मैं कहूंगा, वैसे आपने मेरा मन प्रसन्न कर दिया। यह बात कह कर और आपने—अपने साथियों को प्रसन्न कर लिया। मैं तो कहता हूं कि—मरे हुओं के नाम पर क्यों खाते हो ? जीवितों के नाम पर खाओ। परमात्मा करे आप जीवित रहें। ये सब लोग समझेंगे कि, जीवितों को खिला रहे हैं, मरे हुओं को नहीं खिला रहे। आप मुर्दा बन कर क्यों खाते हो ? क्यों कहते हो कि मुर्दों के नाम पर खिलाओ। जीवितों के नाम पर मिलता है हम तो मना कर देते हैं फिर भी खीर बहुतेरी बन जाती है, तो अब आप इतने लालायित खीर के लिए हो रहे हैं, जीवितों के नाम पर, न खाकर मुर्दों के नाम पर, कुत्तों के नाम पर, बिल्लयों के नाम पर, ये बैल बने हुए हैं कि कुत्तों या बिल्लयों के लिए ? बार-बार लौट कर आते हैं, ये होना चाहिए, वो होना चाहिए। अरे भाई ये ! पितृयज्ञ नहीं है, ये बलिवैश्वदेवयज्ञ है। कुत्तों के लिए, कौवों के लिए, उनके लिए है, ये नहीं है कि—जानवरों से यज्ञ किया जावे, आप खा जाओ उनका, कौवों को और कुत्तों को किसने मना किया है ? सैकड़ों बार कहा है उनके लिए यज्ञ है। यह तो बलिवैश्वदेवयज्ञ है। विषयान्तर की बात करते हैं ? आपने कह दिया कि मांसखोर मांस खाते हैं, कोई कुछ खाते हैं। प्रश्न यह नहीं है कि, कोई कुछ खाते हैं, और वह जो सर्वांगी कहलाते हैं, वह तो और कुछ भी खाते हैं। उनका भी विधान हो जायेगा, और श्राद्ध में वह भी खिलाया जावे। खाते हैं और खाते रहें। शास्त्र क्या कहता है ? प्रश्न तो यह है आपके शास्त्र में कहा है कि मांस खिलाया करो। प्रश्न यह है, और यहां आपने कह दिया कि वहां पर यह लिखा है, जो मांस खाने वाले हैं उनको ही मांस खिलायें, यहाँ पर कहा है कि मांस का निषेध न करें। **"यो नाश्नाति द्विजो मांसं नियुक्ताः पितृ कर्माणि"** न्योता मान करके जिनको पितृ कर्म में जिनको आप पितृ कर्म कहते हैं, श्राद्ध वह जो उसमें मांस न खायेगा, इन्कार कर देगा वह मर करके २१ जन्म तक पशु बनेगा। ये कह रहें हैं कि जो मांस खाते हैं उनको

खिलाओ। शास्त्र मांस खाना अनिवार्य कहता है। इसलिए **"जो खाते हैं का क्या मतलब ?"** जो भी श्राद्ध में जायेगा उसको ही खाना पड़ेगा। आपको भी मांस खाना पड़ेगा। आपको भी इन्कार नहीं करना होगा, और अगर मना करोगे तो शास्त्र की आज्ञानुसार २१ जन्म तक पशु बनना पड़ेगा। जो खाते हैं उनका कोई जिकर ही नहीं है। ये मांस वाली बात उनके लिए नहीं है। यह तब कही है कि जो कोई ब्राह्मण जाये न्योता मान करके उसके लिए कहा है। अब रही बात ! की उसके लिए डालर में परिवर्तित हो जायेगा। अगर यह बात ठीक है तो, ठीक है—अन्न बहुत मंहगा हो गया है, कोई बुला करके कहे कि **"अजी घास ही खा लो,"** क्योंकि उसको क्या फिकर है ? वह घास तो बदल ही जायेगी, वहां बदलना तो है ही, जब खीर-पूड़ी वहां जाकर अमृत बन सकती है तो क्या घास की खीर नहीं बन सकती ? जनता में अपार हंसी.........सज्जनों सुनों ! इनकी बात ध्यान दो जब डालरों के नोट बन जायेंगे, नोटों के रुपये बन जायेंगे, यह तो बदला है मनीआर्डर का, तो मनीआर्डर कहां है ? मैं सब जानता हूं, और जो जानता हूं वहीं कहूंगा। और कुछ नहीं कहूंगा। हां ! एक बात और है, पहले के मेरे दो प्रश्न खड़े हैं, **"जीव"** पितर है या शरीर ? इन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। मैंने कहा था कि यह बताइये कि जीव अकेला आता है या शरीर सहित आता है ? कोई उत्तर नहीं। पितर ब्राह्मण के पेट में आकर बैठते हैं यह ठीक है कि नहीं ? कोई उत्तर नहीं।

दक्षिण दिशा में पानी दो तो मरे हुए पितर हो गये, जनेऊ कन्धे पर यूं कर लिया तो मरे हुए पितर हो गये। मरे हुए पितर हैं, कहां हैं ? कहां लिखा है ? मरे हुए पितर हैं, कोई प्रमाण दिया नहीं। आपने पूछा यम कौन है ? यम तो परमात्मा का नाम है **"यम-महापरिश्यामि माहू"** यम परमेश्वर का नाम है, यम कौन है ? यम हमारा सबका स्वामी है। न्याय नियन्ता **"यम"** है एक प्रश्न है कि मृतक श्राद्ध किया जायेगा तो जिसने श्राद्ध किया खीर-पूड़ी खिलाई, अपनी कमाई में से खर्च किया हवन भी किया, ये सब कुछ किया, और इसलिए किया कि मरे हुए पितर को मिले। जिसने किया है उसको मिलेगा नहीं तो **"कृतहानि"** दोष होगा। न्याय के अनुसार जिसने पुण्य किया उसको फल नहीं मिला तो कृतहानि दोष है। और जिसने नहीं किया और उसको मिले तो **"आकृताभ्यागम्"** दोष हो गया। करिये निराकरण पण्डित जी ! क्या इसका समाधान कुछ है आपके पास ? दोनों पाप में जायेंगे। उसको जिसने किया उसको न मिला और जिसने न किया उसको मिला। और उसका भेजा उसको मिला और उसको बिना किये मिला। उसने कुछ किया ही नहीं।

"न पितुः कर्मणः पुत्रः पिता वा पुत्र कर्मणा। स्वयं कृतेन गच्छन्तिः स्वयं बद्धाः स्व कर्मणा" ॥

पिता का दिया पिता को, पुत्र का दिया पुत्र को मिलेगा इसका किया हुआ उसको, उसका किया हुआ इसको, यह तो परमात्मा के न्याय में नहीं है, यह तो लोक में बात है,—वहाँ अन्याय नहीं चलता, मैंने कहा पितर जीवित ही हैं, और ये भी प्रार्थना की गई है कि वे आयु वाले हों, वे व्याकरण जानने वाले हों, गऊत्रों का दूध दूहने वाले हों। युद्ध करने वाले हों। इस प्रकार के सारे विशेषण मैंने बतलाये, वह जीवित पितरों में ही हों सकते हैं, मरे हुओं में नहीं। अभी भी वेद मन्त्र बोला कि, ऊन के आसन पर बैठें। ब्राह्मण कहां बैठे ? पितर बैठें। **"पितर बैठें"** यह लिखा है, उस मन्त्र में **"पितर"** लिखा है। **"ब्राह्मण"** नहीं लिखा है। बार-बार लौट पोट कर आते हैं कि **"ब्राह्मण को खीर खिलाई जावे"** मैं कब मना करता हूं ? अवश्य खिलाई जाये ब्राह्मण को खूब खीर खिलाई जावे, खूब

माल-पूड़े खिलावे जावें, पर मरे हुओं के नाम पर न खिलाया जावे। जीवितों के नाम पर खिलाया जावे, मरे के नाम पर मत खाओ, जीवित के नाम पर खाओ और परमात्मा करे आपको खूब खीर मिले। पर आप ये क्यों करते हैं कि ये धनवान मरे आपको खूब खीर मिलेगी। ये धनवान मरे इसके यहां से खीर मिलेगी जीवितों के नाम पर खूब खाओ। खीर से जीवितों का ही श्राद्ध होता है, मरों का नहीं। और मैंने कहा था—

"अधामृता पितृषु संभवन्तु" इसको अब तक नहीं छुआ, और मैंने कहा, मुर्दे गाढ़ने की परिपाटी हमारे यहां नही है, और ये गढ़ने-गढ़ाने की कोई बात नहीं है। ये कहीं से कुछ ले आयें, वे वेद मन्त्र हो गये, ये कहते हैं कि डर लगता है बोझ न पड़ जाये वेद मन्त्रों का। इस वास्ते यह हमारे यहां है ही नहीं, वेद मन्त्र याद हो उनका पता हो। है ही नहीं वेद मन्त्र ! जिसमें यह कहा गया हो कि मुर्दों के नाम पर यह खिलाना चाहिये ब्राह्मणों को। मुर्दों के नाम पर हवन करना चाहिये। मुर्दो के नाम पर कपड़े देने चाहिए। हां एक और बात शास्त्री जी ने कह दी, पुराण हमारे लिए हैं, पुराणों का प्रमाण आप क्यों देते हैं ? मैं कहता हूं आपने भागवत का प्रमाण हमारे लिए दे दिया शास्त्रार्थ का नियम यह है कि—जो पक्ष जिन प्रमाणों को मानता है उसको वे ही प्रमाण देने हैं। श्रीमद्भागवत से हमारा क्या सम्बन्ध है ? उसका प्रमाण हमारे लिए क्या मूल्य रखता है ? गरुड़ पुराण आपका ग्रन्थ है। इसलिए हम उसका प्रमाण आपको देते हैं। जो ग्रन्थ आपके लिए है उसे हम आपके लिए देंगे, और जो हमारे लिए है उसे आप हमारे लिए दीजिये, जो हमारे लिए नहीं है, तो आप उनके प्रमाण देकर क्यों समय नष्ट करते हैं ? जिन ग्रन्थों को हम मानते हैं, उनके प्रमाण दीजिए। उन ग्रन्थों के प्रमाण आपके पास हैं नही, वेदों के प्रमाण हैं नहीं। शास्त्रों के प्रमाण आपके पास हैं नहीं **"अग्नि स्वाप्ता"** की कही बात ! आपने कहा—**"अग्नि स्वाप्ता"** जले हुए का नाम होता है। मैंने पूछा था कि शरीर जलता है या जीवात्मा ? इसका है कोई उत्तर ? कोई उत्तर नहीं दिया महाराज जी ! इसका अर्थ **"जो आग में जलाया जाये"** नहीं है बल्कि **"जो अग्निहोत्र न करे"** यह सायणाचार्य का प्रमाण मैंने आपको दिया था जिसका यह अर्थ था, वह नहीं है जो आप कह रहे हैं।

प्यारे भाइयों मैंने आपके सामने बहुत सी बातें कहीं और ये सब बातें कह करके मैंने यह कहा कि ये जो है ये मृतक श्राद्ध वाली बात वेद से सिद्ध नहीं होती ! युक्तियों से सिद्ध नहीं होती प्रमाणों से सिद्ध नहीं होती !! किसी से भी किसी भी प्रकार से सिद्ध नहीं होती तो मेंने यह पूछा था कि—ब्राह्मण पहले खाते हैं कि पितर पहले खाते हैं ? इसका कोई उत्तर नहीं दिया बल्कि कह दिया कि वे तो देव होते हैं। देवों में झूठन-वूठन की कोई बात नहीं होती, कोई किसी का झूठा खाये और, टन टन ऽऽऽ······

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों ! स्वामी जी बार-बार हम पर दोषारोपण करके बरी होना चाहते हैं, कि हम कोई वेद मन्त्र उपस्थित नहीं कर रहे हैं, और मैं वेद मन्त्र शुरू से ही उपस्थित कर रहा हूं। उन सारे वेद मन्त्रों पर इन्होंने अभी तक भी नजर नहीं डाली है। मैं इनके ऊपर और लाद दूं। और वजन बढ़ा दूं। मैं ऐसा नहीं चाहता। पहले पुराना उधार चूकता हो जाये, तो आगे शुरूआत करूं। और सुनों ये बालको को बहलाने वाली बातें नहीं हैं ? क्या कह रहे हैं ? कि—स्वामी जी ने फरमाया

"**अग्निष्वात्ता**" का अर्थ जो यह है कि जिन्होंने वो क्या नाम अग्निहोत्र या अमुख काम नहीं किया, उनका नाम है, देखो भाई स्वयं आचार्य का अभिप्राय बताया, परन्तु प्रसंग तो यह चल रहा है कि जो मन्त्र महाराज आपने उपस्थित किया उस मन्त्र में आये "**अग्निष्वात्ता**" का क्या अर्थ लगेगा ? यों तो शब्दों के प्रसंगानुसार भिन्न-भिन्न अर्थ होते हैं।

संस्कृत में एक शब्द है "**सैन्धव**"इस सैन्धव के दो अर्थ हैं,सैन्धव मायने "**नमक**" और सैन्धव मायने ही "**घोड़ा**" पर अगर कोई रसोई में बैठा हुआ कहे कि सैंधव लाओ और अगर कोई घोड़ा ले आवे, और रसोई में लेजाकर घोड़ा खड़ा कर दे तो मुर्खता होगी, इसी प्रकार शब्दों के प्रसंगानुसार व प्रकरणानुसार अर्थ देखे जाते हैं, जो आपने "**आयन्तु पितरः सोम्यास्तु**" कहा उसमें जो "**अग्निष्वात्ता**" अर्थ आया है, उस शब्द का शतपथ शाखा में जो अर्थ किया है वह हमने आपको सुनाया। और आपने उस पर विचार न करके और जहां तहां का अर्थ सुना कर वह दूर करने की कोशिश की, अच्छा भाइयो ये औरों को नहीं मानते, स्वामी दयानन्द जी को तो मानते हैं स्वामी दयानन्द जी महाराज ने अपने सत्यार्थ प्रकाश व संस्कार विधि ग्रन्थों में, और भाइयो कल वाली वही हमारी जानी-पहचानी-जिस पर गोल-गपाड़ा मचाने लगे थे, सन्ध्योपासनादि पंचमहायज्ञाविधि में मृतक का श्राद्ध करना लिखा है। मृतक का श्राद्ध किया जाये यह स्वामी जी ने अपने ग्रन्थों में लिखा है। और सुनों ये बार-बार जीवितों की सेवा की बात कर रहे हैं। जीवितों की सेवा करें साहब जीवितों की सेवा करें। मैं कहता हूं कि अपने मरे हुए बाप-दादाओं को तीन चुल्लू पानी देने में कितनी आनाकानी कर रहे हैं ? कि कहीं अपने मृतक बाप दादा को तीन चुल्लू पानी न देना पड़ जाये। सो बहाने बना रहे हैं। ऐ ! सुनो ऐसा नहीं होगा। अगर जीवितों का ही श्राद्ध होगा, ध्यान देना हमारे शब्दों पर—तो कोई भी आर्य समाजी सज्जन जीवन भर स्वामी दयानन्द की मान्यता के अनुसार अपने मां-बाप की सेवा करने का मौका ही न पा सकेगा मां-बाप टापते रह जायेंगे। और जिस बेटे को पढ़ाया-लिखाया, इतना बड़ा किया, और जब सेवा करने का मौका आयेगा, तो वह सेवा न कर पायेगा, क्यों ? सुनों ? क्यों— "क्योंकि" इसलिए कि स्वामी दयानन्द जी महाराज कहते हैं कि जब बालक वर्णानुसार आठ-ग्यारह या बारह वर्षीय अवस्था का हो तब तो उसे आचार्य कुल में या गुरुकुल में पढ़ने को भेज दो, वहां ब्रह्मचर्य का पालन करे। ब्रह्मचर्य स्वामी जी बताते हैं कि, कितने प्रकार का उत्तम ब्रह्मचर्य ? ब्रह्मचर्य के प्रकार—स्वामी जी कहते हैं २४ वर्ष पर्यन्त, ४४ वर्ष पर्यन्त और ४८ वर्ष पर्यन्त तक का ब्रह्मचर्य है। इसलिए स्वामी जी विवाह भी ४८ वर्ष की आयु में ही मानते हैं, है कोई आर्य समाजी जो ४८ वर्ष तक कुआंरा बैठा रहे ? या कोई बैठा है आज तक ? सुनो भाई इसलिए सुनो बात होने दो पूरी, बात पूरी होने दो सुनों -- तो स्वामी जी कहते हैं, २४ वर्ष और ४८ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करो इस प्रकार ४८ वर्ष तक तो ब्रह्मचारी रहा। फिर जब घर आया तब उसका विवाह हुआ और स्वामी जी महाराज कहते हैं कि जब बेटे के बेटा हो जाये तो बाप को चाहिये कि वानप्रस्थी हो जाये। जब आगे पुत्र को भी पुत्र हो गया तो वानप्रस्थी अर्थात् बन में जाकर रहो। तो ज्यों ही घर में पोता आया तो "बाबा का बाईकाट" बाबा चले गये जंगल में। तो जब बेटे का पढ़-लिख करके मां-बाप की सेवा करने का मौका आया था तो अब तो मां-बाप ही बेचारे वानप्रस्थी हो गये तो जीवित श्राद्ध किसका करोगे ? जीवित श्राद्ध मानोगे तो जिन्दा मां-बाप की सेवा करने का मौका तो जीवन भर मिलेगा नहीं, इसलिए जीवितों का श्राद्ध नहीं, जीवितों की तो सेवा की जाती है। अर्थात् सेवा करो जीवितों की, और

श्राद्ध करो मृतकों का। सुनों स्वामी जी महाराज ! वो पितरों को तर्पण करना पितरों को किस प्रकार क्या नाम भोजनादि देना कैसे उनका सम्मान करना ? ये सब स्वामी जी महाराज लिखते हैं। देखों भाइयो समावर्तन संस्कारों की बात बता रहे हैं ? जो ब्रह्मचारी जूता पहनता है, मन्त्र बोल कर, कल आपने सुना था, रही ब्रह्मचारी क्या करे ? तो स्वामी जी लिखते हैं **"ओ३म् प्राणापानोमेतर्पय"** इत्यादि इस मन्त्र से स्पर्श करके हाथ में जल लेवे और जनेऊ को कर लेवे अपसव्य अर्थात् बायें कन्धें से दायें कन्धे पर ले आये, और तब **"ओ३म् पितरः शुन्धध्वम्"** ये वाक्य बोल कर उस जल को भूमि पर डाल दे। क्यों भाई ये जिन्दा मां-बाप को सेवा हुई ? कि या तुम्हारा बाप तुम्हारे सामने बैठा हो मारे प्यास के गला सूख रहा हो, सूखता रहे, और तुम अञ्जुली भर करके जल अर्थात् चुल्लू भर करके पानी उसके सामने ले जाओ, वह भी बेचारे के मुंह में न डाल कर, बल्कि उसे दिखा कर जमीन पर डाल दो। और फिर जनेऊ बदल लो बायें से दायें पर ले आओ। अगर बायें पर ही रक्खे-रक्खे बाप को पानी पिला दोगे तो क्या प्यास नहीं बुझेगी ? ये स्वामी जी लिखते हैं कि—जनेऊ को बदलो, बायें कन्धें से दायें कन्धे पर लाओ, और दक्षिण दिशा की ओर मुंह करो। और बाप पूरब में बैठा हो तो यूं करके डालोगे खोपड़ी पर उसकी। इसलिए —बायें-दायें मत जाओ, स्वामी जी आपके ग्रन्थों की बात सुना रहे हैं। और भइया अगली टर्न में इनका श्राद्ध भी सुनायेंगे जो "जीवित श्राद्ध"—"जीवित श्राद्ध" ये चिल्ला रहे हैं। वह जीवित श्राद्ध कैसा लिखा है स्वामी जी ने ? इसलिए पहली बात पर हमारी ध्यान दो, श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज समावर्तन संस्कार के समय लिखते हैं कि—जिसका समावर्तन संस्कार हो रहा हो वह ब्रह्मचारी जनेऊ को हाथ में लेकर कन्धे से कन्धा बदल ले, बदल कर दूसरे कन्धे पर ले आये, और दक्षिण दिशा की ओर मुंह कर ले, और तब फिर ये वाक्य **"पिता शुन्धध्वम्"** ये बोल कर जल—जमीन पर छोड़ दे, यह क्रिया किसी जीवित मां-बाप के साथ नहीं घट सकती, ये तो भइया किसी मृत पितर के साथ ही सम्भव होती है। इन्होंने कहा **"पितर"** शब्द मां-बाप के लिए भी होता है। मां-बाप के लिए भी **"पितर"** शब्द होता है। हम कब इन्कार करते हैं कि मां-बाप के लिए नहीं होता ? अरे होता है पर प्रसंगानुसार उसका अर्थ क्या है ? वो बात वहां ठीक बैठ रहीं है कि नहीं ? चलो अर्थ करने पर बात सम्भव हो रही है कि नहीं ? अच्छा एक बात और सुनों ये बात है नामकरण संस्कार की—स्वामी दयानन्द जी महाराज लिखते हैं कि—जिस बालक का नामकरण संस्कार होता है तो जिस नक्षत्र में बालक का जन्म हुआ हो उस तिथि और नक्षत्र का नाम लेवें, उस तिथि और देवता के नाम से चार आहुतियां देना। तो भइया अमावस्या तिथि और मघा नक्षत्र का देवता है। "पितर" ये स्वामी जी ने जब गिनाये हैं टिप्पणियों में कि कौन नक्षत्रों के देवता हैं ? कौन तिथियों के देवता हैं ? आर्य समाज तो विद्वानों को ही देवता मानता है अन्य देवताओं को तो मानता ही नहीं। ये आर्य कहते हैं कि विद्वान ही देवता होते हैं। तो भइया ये बताओ कि, नक्षत्रों के साथ इन देवताओं का क्या सम्बन्ध विद्वानों का ? यहां इतने पण्डित बैठे हैं क्या ये सब देवता हैं ? जनता में हंसी······

सज्जनों ! हमारे मन्त्राशों पर विचार न करके स्वामी जी केवल दलीलबाजी से श्राद्ध की बात उड़ाना चाहते हैं। दलीलबाजियां तो भइया हमें भी बहुत आती हैं। कहते हैं साहब कि "पितर खाते हैं या ब्राह्मण खाता है" ब्राह्मण का पेट तो मुसाफिरखाना हुआ। हम ब्राह्मणों को जो खीर खिलाई जाती है जो कि वेदोक्त हैं, वेद कहता है कि ब्राह्मणों को खीर खिलाओ, वह हमारी खाई खीर स्वामी

जी के पेट में दर्द कर रही है। अरे खोर खाये कोई ! खिलाये कोई !! दर्द इनके पेट में !!! ..जनता में हंसी........अच्छा मान लो झगड़ा ब्राह्मण भोजन का ! सुनो,सुनों सज्जनो सुनों—सच्चाई सुनों, सूर्य को हथेली से नहीं ढक सकते। श्राद्ध को हथेली से नहीं ढका जा सकता, छुपाया नहीं जा सकता। श्राद्ध में आपको ब्राह्मण भोजन पर आपत्ति है, ब्राह्मणों को क्यों खिलायें ? अगर कोई कन्जूस-मक्खी चूस है तो नहीं कर सकता वह वर्ष में एक दिन भी अपने पितरों के नाम पर खर्च ! वह कुछ रोज तो नहीं मांगते, वे बेचारे साल में एक बार। पर ब्राह्मण भोजन ही तो केवल श्राद्ध नहीं है। श्राद्ध के चार अंग हैं। चार काम करने होते हैं श्राद्ध में। (१) हवन का करना (२) तर्पण करना (३) ब्राह्मण को भोजन कराना— और तो इनमें से ब्राह्मण भोजन पर आपत्ति हो सकती है। हवन पर क्या आपत्ति ? हवन कर दो। और दो अञ्जुली पानी अरे रविवार को तो आप हवन करते ही हो उसी दिन पितरों के नाम पर भी कर दो। उसमें तो ब्राह्मण भोजन का डर नहीं। अच्छा रही तर्पण की बात ? नदी-नाले पर जाते ही हैं। सन्ध्या-वन्दन करते ही हैं। लगे हाथों पितरों को भी कर दो। उस तर्पण में भी कोई पाई-कौड़ी खर्च नहीं होती। परन्तु जिन बाप दादाओं की सम्पत्ति पर कब्जा करके बैठ गये, बैंक बेलेन्स के तुम मालिक हो गये, उस बेचारे को साल में एक बार अगर कुछ देना पड़ जाये तो-सौ हुज्जत करना। यह बात न बनेगी। सुनों ! वेद के मन्त्र कहते हैं, वेद के मन्त्र सुनों। पितर लोग कहां रहते हैं ? सुनों भइया वेद बताता है पितरों का निवास। मैंने इनसे पूछा था कि—दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके पानी की अंजुलीं दे दे स्वामी जी ने लिखा है तथा जनेऊ कन्धे पर ले आओ और दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके वो पानी की अंजुली जमीन पर डाल दो तो हम यह पूछ रहे हैं कि दक्षिण दिशा की ओर मुंह क्यों करें ? इस विधि का क्या मतलब है ? अगर पितर माने पिता है। अगर पिता है पितर का मतलब तो सब जगह पिता ही है तो पिता तुम्हारे सामने बैठा है तो दे दो, पिला दो पानी। दक्षिण दिशा की ओर क्यों करें मुंह ? जरूरी है कि क्या तुम्हारे बाप-दादा सारे हैदराबाद रहते हों दक्षिण में उधर ही मुंह करो, ...जनता में हंसी ......यह जरूरी नहीं है भई। इसलिए हमारा तो यह कहना था कि, अरे जब पानी देने लगोगे तुम पितर को तो प्यासा होगा तभी न दोगे ? या वैसे ही उसकी खोपड़ी पर डालोगे जाकर ! इसलिए वह प्यासा है तभी तो पानी लेकर तुम चले हो इसलिए— **"ओ३म् पितरः सुन्धध्वम्"** अच्छा हमने पूछा था नक्षत्रों के नाम पर, स्वामी जी कहते हैं कि—बालक का जिस नक्षत्र में जन्म हुआ हो और जिस तिथि में हो, उस नक्षत्र और तिथि के नाम पर चार आहुतियां देना।अगर मघा नक्षत्र में और अमावस्या तिथि को कोई बालक हुआ हो तो मघा नक्षत्र और अमावस्या तिथि इनके देवता हैं पितर, उनके नाम पर ये आहुतियां देना लिखा है, वरना भाइयो आर्य समाज तो विद्वानों के अतिरिक्त और कोई देवता मानता नहीं, तो पितर नाम वाला कौन सा देवता है ? जिसके नाम पर स्वामी जी ने आहुतियां देनी लिखी हैं। और स्वामी जी—पितरों को कैसा भोजन मिलता है ? अब इन आर्यों का जीवित श्राद्ध भी सुन लो एक मिनट ! जीवित श्राद्ध-कहते हैं साहब कि हम जीवितों की ही सेवा करेंगे। तो क्या कहते हैं स्वामी जी, जीवितों की जब करने लगो सेवा, "जीवित श्राद्ध" सुनाएं आपको भाई सुनो ! मालूम नहीं हमारी घण्टी बड़ी जल्दी बज जाती है। समय हो जाता होगा, हम आक्षेप नहीं करते, ना-ना हम आक्षेप नहीं करते। हमें लगता है कि जल्दी बज जाती है।

सुनो भइया सुनो ! स्वामी जी लिखते हैं, जीवितों को जीते हुए माता-पिता आदि की यथावत् सेवा करनी चाहिए। वो क्या करो। गुड़-घी मिश्रित भात हो, उसमें नमक न हो, बिना नमक का भात

हो, और उसको ये—ये मन्त्र बोलकर अमुक-अमुक जगह पर रखें, "**सानुगाय इन्द्राय नमः**" यह कह कर पूरब में रखें, "**यमाय नमः**" ये कह कर दक्षिण में रखें और "**भद्रकाल्यै नमः**" बड़ी भद्रकाली की बात कर रहे थे। वहां भद्र काली को लिखा है, स्वामी जी ने भद्र काली को कहकर नैवेद्य में रखें और "**ओ३म् स्वाधायभ्यस्वधा नमः**" कह कर दक्षिण दिशा में रखें ? और वह कहां रखें ? पत्ताल के ऊपर रखें। पत्ते पर ! क्यों जी अगर माँ-बाप को भोजन कराना हो तो क्या वो थाली में नहीं खा सकते ! पत्तो पर क्यों रखें ! और भइया बिना नमक मिला भात का दे दे उनको पिण्ड। क्या उनको सुगर की बिमारी हैं ? या हाई ब्लड प्रैशर है ? जनता में हंसी...... क्या उनको नमक खाना मना कर रखा है डाक्टरों ने ! बिना नमक का भात उनको देवें और कितने ग्रास देवें वो भी निश्चित हैं। वो पत्तल पर रख दे। और बाप बेचारा तरसता ही रह जाये। वह बिना नमक के भात के ही। वह भी पत्तल पर रख दे, बाप को न देवे। और वो निश्चित ग्रास केवल सोलह हैं। सतरहवा न दे। केवल १६ ही देवे। अगर बाप का पेट ज्यादा हो वह ज्यादा खाता हो तो बस ज्यादा न देवे केवल सोलह ही देवें, और ये सोलह भी बाप को न देवे, जमीन पर रख देवें, पत्तल पर। जनता में हंसी........ तो कहने का तात्पर्य—हम यह कह रहे हैं कि, जो बार-बार दक्षिण दिशा की ओर मुंह करके पितरों का नाम लेकर करें। इसका क्या तात्पर्य है ? तो स्वामी जी ने ऐसा विधान करना लिखा है। जो किसी जीवित में नहीं घट सकते। यह सब तो मृतकों में ही घटते हैं। अच्छा एक बात और जिसको स्वामी जी बार-बार दोहरा रहे हैं कि, शायद इस बात पर इनको ज्यादा गर्व है, कि इसका कोई खण्डन नहीं। सुनों कहते हैं कि—जब पितर आते हैं तो पहले पितर खाता है कि ब्राह्मण ? अगर पहले पितरों ने खाया तो ब्राह्मण ने झूठा खाया, और अगर ब्राह्मणों ने पहले खाया तो पितरों ने झूठा खाया। क्या बालकों जैसी बातें हैं, कहते हैं ? कहते रहें, कहना पड़ता है, जब कुछ और न सही तो यही ऊल जलूल तुकें मारो। अरे भाई जब आप भगवान को भोग लगाते हो तब पितर भी देवताओं में सम्मलित हैं देव योनि विशेष है। आप भगवान को भोग लगाकर प्रसाद ग्रहण करते हो, तो क्या भगवान का झूठा खाने का आपके ऊपर आरोप होगा ? तो जैसे भगवान को भोग लगा कर खाते हैं, उसमें झूठेपन की बात ही नहीं है, इसी प्रकार वो भी "**वे देव योनि विशेष है**" हम उनकी बराबरी नहीं कर सकते। बाकी कहते हैं कि वे पितर आ जाते हैं, ब्राह्मण में, बड़ा अच्छा कहा स्वामी जी आपने। और जो मन्त्र आपने दिया, उसका खण्डन स्वयं कर डाला, स्वामीजी कहते हैं कि लाल गलीचे पर पितरों का बैठना लिखा है। मन्त्र में, "**आसीनासो अरुणीनामुपासते**" लाल कालीन बैठना लिखा है, अरे भाई जब पितर उस ब्राह्मण के शरीर में आते हैं, तो कालीन पर तो ब्राह्मण बैठता है, मनु जी लिखते हैं "**निमन्त्रतानि हि पितरः उपतिष्ठन्ति तान् द्वजान्**" जो ब्राह्मण भोजन के लिए तुम्हारे यहां आयेगा उसमें तुम्हारे आवाहित पितर तुम्हारे द्वारा दिये गये भोजन का सूक्ष्म अंश ग्रहण करते हैं, सूक्ष्मांश और ब्राह्मण जो हैं केवल पूत्तकं अन्न के अंश को ग्रहण करता है। तो मान लो तुम्हें ब्राह्मण को खिलाने में ननु-नज्जा, किन्तु-परन्तु, अगरचे-मगरचे, चुनाचे हो। तुम नहीं खिलाना चाहते हो तो बाकी जो श्राद्ध के तीन काम हैं वो सारे काम करना हमें वेद बताता है। सुनों उन वेद मन्त्रों को हम फिर दोहरा रहे हैं। फिर न कहना कि मन्त्र नहीं दिये, स्वामी जी सुन लो, अथर्ववेद का मन्त्र है,—"**पितृणाम् लोकमतिगचछन्तु ये मृता**" इसका मतलब है पितर लोग हमने बताया द्यो के मायने आकाश मण्डल में पितरों का निवास स्थान है। वो द्यौलोक में निवास करते हैं। "**अन्तर्हितः पितृलोको-मनुष्याणाम्**" मनुष्य लोका हवि ब्राह्मण भोजन आदि से तृप्ति होती है। ये ब्राह्मण......वेद कहता है। क्या मन्त्र है "**स्वार्य**

अग्नेइडितो जात वेद" मन्त्र तो सुन लो महाराज ! **"वाड़हृद्यानि सुरभीरित कृत्वा—"श्राद्धा पितृभ्यः"** अथर्ववेद अठारहवां काण्ड का तीसरा सूक्त व बयालिसवां मन्त्र, और देखिये—

"वही स्वानरे हविर्दन्जुमि नविर्भतिपितारं पितामहात्"। (अथर्ववेद-१८-४-३५)

"एता वसुधाराउपयन्तु विशवा स्वर्गेलोकमधुमत्तिसिंधुमाना" (अथर्ववेद-४-३४-७)

"जिम मोद मे जिमने ब्राह्मणेषु" अर्थात् ब्राह्मण भोजन। ये ब्राह्मणों पर बड़ी लाल-पीली आंखे कर रहे हैं, **"इमं मोदनं निवदो ब्राह्मणेषु"** इसका उद्धरण लिख लो ! अता-पता-अथर्ववेद ४-३४-८"।

सज्जनों ! स्वामी जी के कुआग्रह पर हमने एक दर्जन प्रमाण एक्सप्रैस स्पीड़ में सुनाये। हमारे उन प्रमाणों में स्वामी जी उलझ गये। कौन प्रमाण किस विषय का था ? इस बात पर भी ध्यान नहीं दिया। पर चलो एक फायदा तो हुआ। इन्होंने केवल आर्य समाजी भाइयों को सलाह दी है—सनातनी भाई तो जानते ही हैं केवल आर्य समाजी भाइयों को सलाह दी कि वे अपने मृत पितरों का श्राद्ध करें। और प्रेमाचार्य को खीर खिलायें। भाई जब ऐसा अवसर उपस्थित होगा तो प्रेमाचार्य तैयार हैं वह खीर खाने को। करें, श्राद्ध ! हमारे आर्य समाजी भाई, मृत पितरों का श्राद्ध करें। और खीर खिलाने को हमें बुलायें, हम इनकार न करेंगे। इसलिए सुनों यह बात तो हुई, मैंने कहा था कि केवल ब्राह्मण भोजन का नाम ही श्राद्ध नहीं है। और भी चार बातों का नाम श्राद्ध है, और उन चार बातों को पुष्ट करने वाले मन्त्र सुनाये थे। उन मन्त्रों को स्वामी जी ने छुआ तक नहीं। बोले ! कह दिया यूं कर दिया, वो कर दिया, फलाना कर दिया, ढ़िकाना कर दिया। उन चारों बातों के पोषक मन्त्र सुनाये, उनके प्रमाण बताये और उन सबको उद्धृत करवाया, अता-पता बताया **"त्वयं अग्नेइड़ितो जात वेदः। वहिस्वानरे हविद्न्जुमि [इममोदुननंजिमने ब्राह्मणेषु"** वेद कहता है मैं यह भोजन ये सामग्री **"ब्राह्मणेषु निददेतु"** तो ब्राह्मणभोजन, तर्पण, पिण्डदान, हवन, इन चारों क्रियाओं का नाम वेद **"श्राद्ध"** बताता है। यदि ब्राह्मण भोजन पर झगड़ा हो तो उसको निपटाओ। ये कहते हैं हमारी मांस की बात को नहीं छुआ। और प्रधान जी ने कह दिया कि विषयान्तर है। मांस की बात को नहीं छुआ। सुनों महाराज ! मांस की बात बतायें आपको। ये कोई इतना बड़ा भारी ब्रह्मास्त्र नहीं है, असल बात यह है कि संसार में सब प्रकार का भोजन करने वाले लोग मौजूद हैं। कोई दाल-भात खाने वाला है, तो कोई मछली खाने वाला, कोई बकरा, मेंढ़ा, खाने वाला और कोई कुछ खाने वाला, तो जब ये विधान बनाया जाने लगा तो सबका ध्यान रख कर बनाया गया आप दूर क्यों जाते हो ? आपके आर्य समाज में भी तो दो पार्टी हैं। "मांस पार्टी और घास पार्टी"……विघ्न…… **बीच में ही अमर स्वामी जी महाराज ने गर्ज कर कहा—"आर्य समाज में कोई मांस पार्टी नहीं है"**……… शोरोगुल…… पण्डित प्रेमाचार्य जी ने कहा… देखो ! देखो !! भाइयो स्वामी जी को कैसा ताव आया ? कैसा ताव आया मांस पार्टी का नाम सुनते ही महाराज जी को ! अरे जो आर्य समाज में **"मांस भोजन विचार"** करके पुस्तक लिखी। जौधपुर आर्य समाज ने **"मांस भोजन विचार"** नाम की पुस्तक लिखी ये कोई क्या नाम कोई जानी-अनजानी बात है ? इसलिए सुनों ! सब तरह का भोजन करने वाले लोग दुनियां में हैं। बंगाली बोले हम तो श्राद्ध में मछली खायेंगे। अमुख बोले हम तो ये खायेंगे। फ्रान्टियर वाले बोले हमें तौ बकरा ही खिलाओ साहब। तो भिन्न-भिन्न खान-पान वालों ने

श्राद्ध में अमुक-अमुक चीज खाने की बात कही तो विधानकर्त्ता मनु जी महाराज कहते हैं कि—भाई अगर तुम मछली खिलाते हो या अमुक अन्न खिलाते हो या अमुक पशु का मांस खिलाओगे तो उससे पितरों की दो महीने की, दो वर्ष की, वा १२ वर्ष को तृप्ति होगी। परन्तु अगर तुम पितरों की अनन्त तृप्ति चाहते हो तो अनन्त—सदा सर्वदा के लिए तुम्हारे मृत पितर तृप्त हो जायें तो, "**आनन्यातेव कप्यन्ते मुन्यानि सर्वष:**" इसमें "**मुन्यन्न**" अर्थात् मुनि लोग जिस अन्न को खाते हैं। अर्थात् शाकाहार भोजन—वह खिलाओगे तथा वह खीर खिलाओ। तब पितरों की अनन्त तृप्ति होगी। इसलिए भइया यह मनु का प्रमाण हम सुना रहे हैं। मनु और श्रीमद्भागवत आदि ग्रन्थ ! गरुड़ पुराण !! महाराज जी आप तो सिर्फ वेद की बात करने चले थे। हमारे गरुड़ पुराण में क्या लिखा है ? उसे हमारे ही पास रहने दो। आपको पुराणों का चाव है तो सुनो भागवत् का पुराण—श्रीमद्भागवत महापुराण क्या कहता है ?—"**न दत्या आनशन श्राद्धे, न चाप्या दर्मवित्तम:**" पुराणों में जाओगे तो महाराज जी गड़बड़ी में पड़ जाओगे। पुराण कहते हैं श्रीमद्भागवत् कि श्राद्ध में आमिश मत दो। जो अन्न उत्तम है वह मुन्नन्यु खिलाओं। यह मनु महाराज का कथन है। इसलिए श्राद्ध के चार अंग हमने बताये, चारों अंगों का विधान और मैंने मन्त्र बताया था कि पितरो का निवास स्थान कहां है ? अच्छा भाइयो एक और बात कही स्वामी जी ने। कहते हैं साहब ! कि अगर उनका जन्म हो गया तो वे शरीर रहित आयेंगे या शरीर सहित ? यह बात कही। "हमने तो किया श्राद्ध, परन्तु अगले का हो गया जन्म, तो श्राद्ध का क्या होगा" ? ये इन्होंने बात कही थी। सुनो भाई उत्तर सुनो ! आपने अपने मित्र के पास मनिआर्डर भेजा मनीआर्डर ! आगे पता लगा कि मित्र तो है नहीं मित्र तो **out of station** है। तो वह मनीआर्डर कहां जायेगा ? वापिस तुम्हारे पास आ जायेगा। श्राद्ध का परिणाम है तृप्ति ! अरे अन्न तो ब्राह्मण के पेट में रह जाता है। पितरों का तो श्राद्ध का परिणाम तृप्ति प्राप्त होती है तृप्ति ! वो अगर आगे पितरों का जन्म हो गया तो भिन्न-भिन्न योनि में चले गये कहीं। तो तुम्हारे श्राद्ध का फल नष्ट नहीं होगा, उस श्राद्ध का पुण्य तुम्हें प्राप्त हो जायेगा। भगवान नारायण की गवर्नमैन्ट······शोरोगुल····· भगवान की गवर्नमैन्ट में इतना न्याय······ शोरोगुल······ अरे ! दुनियां की गवर्नमैन्ट भी मनिआर्डर जब्त नहीं करती तो भगवान की ······शोरोगुल······ (गर्ज कर) स्वामी जी चिन्ता मत करो ! श्राद्ध करवाओ तो सही, फल भी आगे न पहुंचेगा तो तुम्हें मिल जावेगा। बीच में और कोई नहीं हड़पेगा। इसलिए यह सन्देह मत करो। कि साहब ब्राह्मण, "ब्राह्मण को खीर खिलादो या भोजन खिला दिया—पर आगे पितरों को कैसे मिल गया ? या प्राप्त हो गया ? ये समझते हैं कि शायद जो ब्राह्मण को खिलाया शायद वही पोटली की पोटली बन कर या पार्सल बन कर वहाँ पहुंचती होगी"। ऐसा नहीं है, अरे ! आप यहाँ से अमेरिका पैसा भेजते हो तो वहाँ तो रुपया नहीं चलता, वहाँ तो डालर चलता है। आपके भेजे रुपये का जितना डालर बनता होगा उतना डालर बना कर वहाँ पेड **Paid** कर दिया जायेगा। जहाँ पौण्ड होगा वहाँ पौण्ड दे दिया जावेगा। इसलिए सारे इण्टरनल एक्सचेन्ज आफिस हैं। जनता में हँसी······ ये हँसने की बातें नहीं हैं "जो करेंन्सी को एक्सचेन्ज करता है यही वो ऑफिस हैं। इसी प्रकार आप जो भोजन खिलाते हो अगर आपके पितर देवता बन गये तो आपका वह दाल-भात अमृत बन कर देवताओं को मिलेगा। क्योंकि उनका भोजन अमृत है। वहाँ दाल-भात नहीं जायेगा। वहाँ अमृत बन कर जायेगा, तो जिस देवता का जिस योनि का जो भोजन उस रूप में—जब दुनियाँदारी में एक्सचेञ्ज आफिस है आज जो खिलाओगे वह तबदील होकर निकल जायेगा। ······बीच में ही,

उसका क्या होगा ? ······झल्लाते हुए—अरे साहब ! आप खिलाना तथा देना तो शुरू करो, पहले ही पूछते हो "**उसका क्या होगा ?**" उसकी जिम्मेदारी हम पर छोड़ो। वो क्या मिलेगा, कैसे मिलेगा ? उसके प्रमाण भी हम आपको सुना रहे हैं। फिर हमने कहा देवलोक के बारे में, तथा पितृ लोक के विषय में, और क्या कहा—हमारी बात को उड़ा रहे हैं, कि स्वामी जी ने साहब लिखा तो यह, और सुना रहे हैं अमुक प्रकरण ! मैं फिर दोहरा रहा हूं अपनी बात !! महाराज - "**दक्षिण दिशा में मुँह करके पितृ यज्ञ करें तथा जनेऊ को इस कन्धे से उस कन्धे पर बदलें**" और ब्रह्मचारी उस समय '**पितरः सुन्धध्वम्**" कहे। समावर्तन संस्कार के समय जनेऊ को यहाँ बदल कर लावें। तब अंजली देवें "**पितरः सुन्धध्वम्**" जब अजली देवे। इस जनेऊ की अदला-बदली क्यों ? जिन्दा माँ-बाप को पानी देने के लिए जनेऊ की अदला-बदली जरूरी नही। पर स्वामी दयानन्द जी कहते हैं कि, जनेऊ बदलो और दक्षिण दिशा की ओर मुंह करो और बिना नमक का भात देवो। क्यों स्वामी जी महाराज ! ये क्या माजरा है ? जवाब दो। क्या पितरों को हाई ब्लड प्रैसर है ? जनता में हँसी···· उनको डॉक्टर ने नमक खाना बन्द कर रखा है। भात ही दो। विचार करो, क्यों दो उनको भात ! तो ये सब विधियाँ स्वामी जी ने लिखी हैं। इन सब का तात्पर्य यह है कि—ये सब जीवितों में संगत नहीं होता। और हमने मन्त्र सुनाया था, स्वामी जी महाराज कहते हैं—"**यमम् राजसां हविषादिशक्वयमम् राजानाम्**" हम पूछते हैं स्वामी जी से कि ये यम कौन हैं ? नामकरण संस्कार के समय अमावस्या तिथि के स्वामी ये पितर देवता कौन हैं ? आर्य समाजी तो विद्वानों को ही देवता मानते हैं, अगर विद्वान ही देवता होता है तो अमावस्या के साथ तुम्हारे कौन से देवता का विवाह हुआ ? अमावस्या का स्वामी कोई आर्य विद्वान नहीं हो सकता, स्वामी जी कहते हैं कि अमावस्या का स्वामी है।—पितर मघा नक्षत्र का स्वामी है, पितर उसके नाम पर चार अंजुली देवें, तो बात नहीं सुनते हमारी पितरों पर—"पितर जो स्वामी हैं अमावस्या के वो कौन देवता ? ये यम राजा कौन हैं, यम राजा हैं यमराजा जिसके लिये यम लिखा ? और भाई पितरों का लोक द्यौ स्थान में है। हाँ ! पितर कैसे आवें ? लिखा है—"**पर्तिभिदेवयाने पर्तिभिदेवयाने**" देवयान—आकाश मार्ग से आवें, क्यों भाई अगर घर में बाप बैठा हो तो न खिलाओ। आकाश मार्ग से ही आवें, तो क्या सारे हवाई सर्विस में हैं ? पायलट हैं सब ? जो हवाई जहाज से रोज उड़ें और आवें उन्हीं को भोजन खिलाओ। जनता में हँसी······ तो वहाँ हैं—"**पर्तिभिदेवयाने**" आकाश मार्ग से आवें पितर। इसलिए इन सब बातों का समाधान करो, तब अगली बात प्रारम्भ होवे, टर्न टन टन ऽ ऽ ऽ······

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

बहनो और भाइयो। मेंने बार-बार कहा कि ये, कौवों, और कुत्तों के लिए "बलिवैश्वदेव यज्ञ" होता है। पर उन्हें तो कहना है कुछ न कुछ उसे लोट-पोट करके बार-बार बिना नमक के क्यों हो ? बार-बार कहा है कि "बलि वैश्वदेव यज्ञ" कौवों-कुत्तों के लिए होता है। पितरों के लिए नहीं होता। और एक बात यह कि खीर बड़ी चुभती है इनको। भाइयो मुझे बिलकुल नहीं चुभती, मैं तो कहता हूं कि खूब खीर खाओ, पर मैंने कहा कि मरों के नाम पर मत खाओ। किसी को यह कह करके—कि तुम्हारा बाप मर गया है, तो खीर खिला दो। अरे भाई, वैसे ही खाओ, खूब खीर खाओ रही यम की बात ? जिसे आप बार-बार यम कह रहे हो वह तो विवस्वान का पुत्र है। विवस्वान

कौन है ? ये कौनसी वंश परम्परा चली, विवस्वान कौन किसका बेटा और किस का बेटा यम ? "पितर वहा रहते हैं द्यौलोक में ?" मैं पूछता हूं जो भी मरते हैं सब पितर हो जाते हैं या कुछ ही होते हैं। क्या सीमा है आपके यहाँ ? कि जो मरते हैं, सभी पितर होते हों तो यहाँ जन्म कौन लेता है ? यहाँ आकर कौन जन्म लेता है ? आप कहाँ से आये हैं, पितर लोक में से आये हैं कौन हैं ये जो श्री कृष्ण जी महाराज कहते हैं गीता में—"**वांसासिजीर्णानि यथा विहाय नवानि गृहणाति नरोपराणि। तथा शरीराणि विहाय जीर्णाबनन्यनि संयाति नवानि देहि**" अर्थात् पुराने शरीरों को छोड़ कर नया शरीर धारण करते हैं, यह कौन है ? वो पितर वहाँ जाकर बैठ जाते हैं, वो कौन हैं ? फिर एक बात और है कि - वे कहीं...... जाकर बैठ गये परमात्मा ने बिठाये, अपने आप तो बैठे नहीं, तो जिसने जाकर बिठाये हैं, उनकी चिन्ता उसको है, वह खुद उनका इन्तजाम करेगा। पुलिस पकड़ कर ले जाती है, किसी को तो आपके ऊपर जिम्मेदारी है कि जेलखाने में भोजन आप ही भेजें, जनता मैं जबर्दस्त हंसी......सुनों ! आचार्य जी ! जिसे भेजना होगा इन्तजाम खुद करेगा। और आपको न पता है कि वो कहाँ है, और न पता है कि उन्होंने जन्म ले लिया या नही ? न यह पता कि वो द्यौलोक में ही बैठे हुए हैं। न कोई पता है न कोई ठिकाना, आचार्य जी मनीआर्डर वैसे ही हवा में ही जा रहा है, जनता में पुनः अपार हँसी...... बिना पते के आज तक किसी का मनीआर्डर गया है ?...... बस कुछ भी हो ब्राह्मण को खिला दो। और मुर्दों के नाम पर खिलाओ तो वह सब वहाँ पर पहुंच जायेगा ? इनका कोई उत्तर नहीं, मैंने पूछा था कि—"**जीवात्मा का नाम पितर है कि शरीर का**" ? कोई उत्तर नहीं दिया। अगर जीवात्मा यहाँ आता है तो वह शरीर रहित आता है या शरीर सहित ? कोई उत्तर नहीं दिया। मैंने कहा—"**अकृताभ्यागम्**" और "**कृत हानि**" इस बात को छुआ तक नही, कह दिया कि नये प्रश्न मत करो। नये प्रश्न अन्तिम टर्न में नहीं किये जाते। भाइयो अभी अन्तिम बारी कहां आई ? अभी तो उसका उत्तर दिया जा सकता था। मैंने कहा कि जिसने श्राद्ध किया उसको कोई फल नहीं मिलेगा। और जिसने नहीं किया उसको मिलेगा, वह "**अकृताभ्यागम्**" हो रहा है। यहाँ "**कृतहानि**" हो रही है। आप कहते हैं अमावस्या का देवता पितर है। कौन पितर है ? कौन सा मरा हुआ पितर है वह ? अमावस्या से क्या सम्बन्ध है, पितरों का ? मैंने तो पहले ही कहा था। रक्षा करने वालों का रात्रि के साथ अँधेरी रात के साथ विशेष सम्बन्ध होता है। जो रक्षा करने वाले हैं वो,...... अमावस्या की रात में घोर अन्धेरा रहता है। पहरेदार और माता पिता कोई भी हो, जो भी हैं उनको ही चिन्ता रहेगी, अपने बच्चों की रक्षा करने की, कि अँधेरे में कोई भी जानवर आ न जाये, और बच्चों को कष्ट न पहुंचावे। रात्रि से पितरों का विशेष सम्बन्ध है। दिन में कोई विशेष आवश्यकता ही नहीं है, दिन में तो सब काम हो ही रहे हैं। पर जब अन्धेरा होता है तब रक्षा करने की आवश्यकता होती है। और दक्षिण दिशा से सम्बन्ध भी बता दिया, वो भी कह दिया था, हां ! एक बात आप बार बार कहते हैं कि, आर्य समाज तो केवल विद्वानों को ही देवता मानता है। यह बात पता नहीं आपने किस आर्य समाजी से सीखी है ? आर्य समाजी विद्वानों को भी देव मानते हैं यह ठीक है, लेकिन सिर्फ विद्वानों को ही देव मानते हैं ऐसा कैसे ? हम जड़ पदार्थों को भी देव मानते हैं, और उनकी पूजा क्या है ? देव वो हैं जो देते हैं, जैसे—सूर्य हमको प्रकाश देता है, तथा चन्द्रमा हमको प्रकाश देता है। ये अग्नि है, ये जल है, ये सब चीजें हैं ये भी देव हैं। और देवयज्ञ होता है। हवन होता है। "**अग्नये स्वाहा**"—"**सोमाय स्वाहा**" आदि से होता है। विद्वानों को हम देव मानते हैं। यह ठीक है। पर जो जड़ पदार्थ है जो हमको लाभ पहुंचा रहे हैं ये भी देव हैं। पूजा-पुजापा कुछ नहीं।

न ये बोलते हैं, न ये खाते हैं। न ये पीते हैं, हाँ ! अग्निहोत्र करने से उनकी शुद्धि हो सकती है। जल की शुद्धि हो सकती है, वायु की हो सकती है। आकाश की हो सकती है। संशोधन सबका हो सकता है। मृतकों के नाम पर ब्राह्मणों को भोजन करना चाहिये, ऐसा एक वेद मन्त्र बोल दीजिये, आप सिर्फ एक वेद का मन्त्र बोल दो, कि मृतकों के नाम पर ब्राह्मण को भोजन करना चाहिये। मान लूंगा ? ब्राह्मण को भोजन कराओ। मुर्दों के लिए, मुर्दों के नाम पर ब्राह्मणों को भोजन कराओ, वो भोजन ब्राह्मणों को कराया हुआ मृतकों को पहुंच जाता है ? यह प्रश्न है। इसका कोई प्रमाण दो। तब ये बात बनेगी, और मैंने कहा था कि ब्राह्मण पहले खा रहा है या पितर पहिले खाते हैं ? ब्राह्मण का झूठा पितर खाते हैं या पितरों का झूठा ब्राह्मण खाता हैं ? इसका कोई उत्तर नहीं है, "वे तो देव हैं देवों में झूठन-वूठन की कोई बात नहीं होती है, ये क्या बात कही ?" भाई मृतक श्राद्ध का खण्डन हो रहा है। वेदों से, शास्त्रों से, सब प्रकार से मृतक श्राद्ध का खण्डन होता है। और मैंने अपनी पुस्तक "**जीवित पितर**" में उनके लिए अनेक प्रमाण दिये, ये कहते थे कि श्राद्ध का अर्थ तो यही है कि, वह मृतकों के निमित्त दिया जाये। बोलो प्रमाण वेद का ? वह कौन सा वेद का प्रमाण है कि जो— "**मृतकों के निमित्त किया जाये उसका नाम श्राद्ध होता है। और जीवितों के निमित्त जो किया जायेगा उसका नाम श्राद्ध नहीं होगा**"। इसके लिए कोई सा वेद मन्त्र बोला है ? वैसे ही कह दिया कि जो मृतकों के नाम पर किया जाये वही श्राद्ध होता है। है कोई इसका प्रमाण ? कोई नहीं, मात्र आपकी कपोल कल्पना है। अपनी मन घडन्त बात है। जिसका कोई प्रमाण आपके पास नहीं है। ऐसे ही कल्पना जोड़-जोड़ कर कहीं कुछ भी बना लो, परन्तु मेरे प्रश्न जो हैं वो तो वैसे के वैसे ही विद्यमान हैं। मैंने अनेक प्रश्न किये—मैंने कहा था कि जब वह वहाँ पहुंच जाता है, तो घास का भी अमृत बन जायेगा। पर बात यह है कि मैं नहीं कह रहा हूं कि इनको घास खिलाओ। मैं तो कह रहा हूं कि— खीर ही खिलाओ, पर मुर्दों के नाम पर मत खिलाओ, जिन्दो के नाम पर खिलाओ, आप जीवित हैं, भगवान की दया है। मैंने अनेक प्रश्न किये हैं, उनका कोई उत्तर नहीं है कि जीव का नाम पितर है या शरीर का नाम ? और जीव चला गया तो वह कहाँ जला ? जीव तो जलता ही नहीं। जीव जो है वह तो "**अच्छेद्य**"—"**अदाह्य**" तथा "**अक्लेद्य**" है। उसका जलना वलना काहे का। जलने-वलने की उसकी कोई बात नहीं है "**अधामृताः पितृषु सम्भवन्तु**" अर्थात् खण्डन कर दिया उसकी बात का। और मैंने येन्निखाता का अर्थ कर दिया सब बातों के खण्डन कर दिये कि उनके अर्थ यह नहीं हैं। जो उनके अर्थ हैं उन अर्थों को समझने का यत्न करिये और जनेऊ को इधर का उधर कर दिया, तो मरे हुए पितर हो गये और यदि उतार दिया जाय तो मरे हुए क्या······ मरे हुए से भी अधिक मरे हुए हो गये। ये क्या सम्बन्ध है इसका इन मरे हुओं से ? कोई वेद मन्त्र बोलिये, कोई वेद का प्रमाण दीजिये कि जो मरे हुओं के लिए जो काम किया जाता है, उस समय जनेऊ को इधर से उधर कर लिया जाता है, दक्षिण की ओर मुंह कर लिया जाता है। ये सब बातें हमारे यहाँ हो रही हैं, और किस लिए होती हैं ? मैंने उसका कारण भी बतलाया था। सोचिये ! समझिये !! इस प्रकार से मृतक श्राद्ध सिद्ध नहीं हो सकता, मेरा दावा है कि उसमें "**कृति हानि**" व "**अकृताभ्यागम्**" ये दोष होते हैं। और ये होता है कि माँस खाना ही पड़ेगा। नहीं खायेगा तो वह मर करके २१ बार तक पशु बनेगा। "**श्राद्ध में मांस खाना अत्यावश्यक है।**" मृतकों का श्राद्ध भागवत में इसी प्रकार वर्णन किया गया है। - परन्तु भागवत में लिखा रहे, हमको भागवत से क्या लेना-देना टर्न टन टन···भागवत इनकी श्राद्ध इनका २१ बार का भोग ये खुद सोचें तथा टर्न टन टन ऽ६ऽ······ अच्छा बाकी अगली टर्न में सुनाऊँगा !

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों ! अब थोड़े समय बाद धीरे-धीरे शास्त्रार्थ का समय यों ही समाप्त हो जायेगा, मैंने शास्त्रार्थ के सम्बन्ध में चार अंगों से सम्बन्धित मन्त्र बोले,—१—ब्राह्मणों को भोजन कराये, २—पितरों के लिए पिण्डदान हो, ३—तर्पण हो, इन क्रियाओं के लिए हमने मन्त्र सुनाये। और श्री स्वामी जी महाराज ने उन मन्त्रों पर ध्यान नहीं दिया, उन मन्त्रों को अपनी आलोचना,-प्रत्यालोचना में लाये ही नहीं। और बार-बार कह रहे हैं कि—कोई मन्त्र पेश नहीं करते। और एक नई बात और कह दी, हमने पूछा था कि यम कौन है ? तो कहते हैं कि यम नाम तो परमात्मा का है। क्यों भाई किस को ये बार-बार कह रहे हैं कि तुम तो कुत्तों और कौवों के लिए बलिवैश्वदेव वाली बात सुना कर बात को उड़ाना चाहते हो। वह कुत्तों वाली बात तो स्वामी जी ने अतिथि यज्ञ के भीतर लिखी है...

......बीच में ही अमर स्वामी जी महाराज ने गर्ज कर कहा...... यह बिल्कुल झूठ है।...... हाँ ! हाँ !! झूठ है, झूठ है ..... साहब सुनिये हम तो कहते हैं कि दक्षिण दिशा का स्वामी। और **"सानुदाय यमाय नमः"** यह कह कर दक्षिण दिशा में पिण्ड रक्खें और वह पिण्ड नमक वाला न हो, भात का हो। क्यों भाई तो वो परमात्मा क्या—अगर यम परमात्मा है, और उसके नाम पर पिण्ड रखा जा रहा है, एक तो वह बिना नमक का हो, व भात का हो, तथा एक ही ग्रास हो। तो क्या यही परमात्मा की पूजा हुई आर्य समाज में ? पर वो यम कौन है ? सुनौं वेद मन्त्र सुना रहे हैं यम के रूप में। स्वामी जी महाराज ! यम कौन है ? इस बात को उड़ा देना चाहते हैं। यम कौन है ? अथर्व वेद का मन्त्र है, महाराज ध्यान से सुनिये पता भी नोट कर लो, काण्ड १८, सूक्त तीन का १३वां मन्त्र—**"यो ममाप्रक्रमो मर्तयानाम हविषा सपर्यत्"** इसका अर्थ किया जो **"मर्तयानाम् प्रथमाममां"** जो ऋषियों में सब से पहले मरा, और जो **"लोकं प्रथमं प्र इयायः"** इस यम लोक में सब से पहले गया उस **"जनानां संगमन्-जनो के संग न वैवश्वत् यमम् दिवास्वान्"** के पुत्र यम राजा की **"हविषा सपर्यत्"** हवि द्वारा पूजा करो। तो ये तो यम लोक के अधिष्ठाता, जो यम लोक के देवता हैं। उनका वर्णन किया जा रहा है। उन्हीं के नाम पर दक्षिण दिशा में एक पिण्ड रखने की बात कही जा रही है। तो हम जो बार-बार कहे जा रहे हैं कि जनेऊ बदलो फिर भी हमारी बात पर ये ध्यान नही दे रहे हैं। जनेऊ पितरों को। अगर पितर जीवित का नाम है, तो उनको पानी पिलाते समय जनेऊ क्यों बदलें ? स्वामी जी ने क्यों लिखा कि जनेऊ इस कन्धे से उस कन्धे पर लाओ, और भइया ! दक्षिण दिशा की ओर ही मुंह क्यों करें ? और भइया ! उनको बिना नमक का भात ही खाने को क्यों देवें ? जल की जो अंजुली हाथ में भर के वह उसको न पिला कर जमीन पर क्यों डाल दें ? ये सब जो विधियाँ बताई इन सब विधियों का क्या तात्पर्य है ? ये जीवित में नहीं घटती। ये विधियाँ तो मृतक में ही घटती हैं। मृतक के लिए ही दक्षिण दिशा में मुंह करो। और जब हमने मन्त्र सुनाया तब पितृ लोक कहाँ गया ? कहाँ पितृ लोग रहते हैं उसका भी हमने मन्त्र सुनाया था। उस मन्त्र को स्वामी जी ने भुला दिया, वह मन्त्र फिर बता देते हैं जिसमें पितरों के निवास का वर्णन है। कहाँ रहते हैं, पितर सुनो और नोट भी कर लो—**"काण्ड १८ सूक्त २ मन्त्र ४८—कुदन्वतिद्यो खगात् पिलुमती-तिमध्यमात् तृतीया हि प्रद्योलिपि अस्याम् पितर आसते"** वेद कह रहा हैं कि द्यौलोक में चन्द्रमा के अर्ध भाग में प्रकाशमान लोक है वहाँ पितर निवास करते हैं। तो वेद तो घोषणा करता है, नक्षत्र आकाश-मण्डल में द्यौ स्थान में पितरों का निवास ! वहाँ से देवता बुलावें, पितर देवताओं के बुलाने

पर आते हैं। हमारे इस मन्त्र का उत्तर दीजिये और —"**पितरः शुन्धध्वम्**" स्वामी जी ने जो लिखा कि ब्रह्मचारी हाथ में अंजुली बना कर और "**पितरः शुन्धध्वम्**" बोल कर जल जमीन पर डाले। कन्धे पर जनेऊ बदले, और दक्षिण दिशा की ओर मुंह करे। इन सब विधियों का क्या मतलब है? जीवित माँ-बाप के साथ इन विधियों का क्या मतलब है? हमारा कहना यह है, और स्वामी जी कहते हैं कि—"**श्रद्धया यद् क्रियते तत् श्राद्धम्**" जो श्रद्धा से किया जाये वह श्राद्ध है। वो तो हम भी कहते हैं। अरे महाराज! श्रद्धा से तो सभी काम किये जाते हैं। सभी श्रद्धा से करने भी चाहिये। परन्तु यहाँ तो श्राद्ध एक विधि (विशेष) का नाम है। जो विधि विशेष प्रकार की विधि से मृतक के लिए की जाती है। उसी मृतक संस्कार का नाम श्राद्ध है। उसी के लिए यह शब्द प्रयुक्त है। और जो काम आप श्रद्धा पूर्वक करोगे वहाँ श्राद्ध कहोगे तो बड़ी गड़बड़ी हो जायेगी। अगर कोई अपने बेटे का विवाह कर रहा हो विवाह, बारात, आने की तैयारी, आपके मन में बड़ा चाव, बड़ा उत्साह, बड़ी श्रद्धा प्रेम से कर रहे हो और आप से कोई पूछ ले कि—क्यों जी आपके बेटे का श्राद्ध कब हैं? तो कितना बुरा लगेगा? इसलिए श्राद्ध शब्द तो भइया एक विशेष संस्कार के लिए है। अगर सभी काम श्रद्धा से किये जाने पर श्राद्ध माने जावें तो भिन्न-भिन्न संस्कार लिखाने की जरूरत ही नहीं थी, सभी श्राद्ध ही थे। सभी को श्राद्ध कह देना चाहिए। इसलिए हम बातें फिर दोहरा रहे हैं, चूंकि अब समय समाप्त होने लगा, धीरे-धीरे इसलिए इन बातों पर नई बातें शुरू न करें। हमारे जो मन्त्र श्राद्ध के चारों अंग वाले। जाने दो ब्राह्मण भोजन को छोड़ो आपको खीर बड़ा परेशान कर रही है। आप बार-बार खीर को दोहराते हो, उसे जाने दो भइया। कोई बात नहीं हमें खिलाने वाले अभी बहुतों में हैं। आपको अभी खिलानी पड़ी नहीं आप पहले ही परेशान हो रहे हो तो खीर जाने दो। तो हमने मन्त्र सुनाया कि पितरों के लिए हवन करो, पितरों के लिए पिण्ड दान करो। पितरों के लिए तर्पण करो, ये तीनों काम करना वेद बताता है और तीनों कामों के लिए मैंने मन्त्र बताये, आपको ब्राह्मण भोजन का भी मन्त्र बताया, वे चारों मन्त्र जीवित के साथ घटित नहीं होते।

बिना नमक वाले चावल के पिण्ड जीवित माँ-बाप को नहीं खिलाये जा सकते वे मृतकों के निमित्त ही हो सकते हैं। जनेऊ बदलना, बायें कन्धे से दायें कन्धे पर लाना, इस बात को बार-बार छोड़ जाते हैं, और सबसे बड़ी बात है, अमावस्या! स्वामी जी कहते हैं अमावस्या तिथि के देवता हैं पितर। तो हम यह पूछ रहे हैं कि, आर्य समाजी तो आर्य समाज के विद्वानों के अतिरिक्त किसी को देवता मानते ही नहीं, विद्वानों को ही देवता मानते हैं तो किस विद्वान का अमावस्या के साथ सम्बन्ध है? जनता में हँसी...... जो उसके नाम पर स्वामी जी ने लिखा है कि ये देओ। चार अंजुली देओ। चार-चार अमुक काम करो।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

प्यारे भाइयों! सज्जन पुरुषों!! मैंने जो प्रश्न किये उनकी बात मैं पीछे कहूंगा पहले आचार्य जी की बातों का उत्तर सुनों, आचार्य जी कहते हैं कि हम एक वर्ष में एक बार माँगते हैं, एक बार तो मुर्दों के नाम पर दे ही दिया करो। हम कहते हैं कि रोज-रोज श्राद्ध करना चाहिये, रोज। पर मरों का नहीं करना चाहिये, बल्कि जीवितों का करना चाहिये। ये तो एक दिन मरों के नाम पर मांगते

हम कहते हैं रोज खाइये, जीवित हैं, आप ब्राह्मण हैं, इसलिए खाइये, इसमें कोई बात नहीं, एक मन्त्र बोला—"**इमं मोदनं निवदेत् ब्राह्मणेषु**" मैंने दावा किया कि इसमें पितर शब्द बताओ, आप नहीं बता सके, पितर शब्द है ही नहीं, ब्राह्मणों को भोजन कराने का मैं कब निषेध करता हूं? ब्राह्मणों को विद्वानों को भोजन कराना ही चाहिये, विद्वानों को भोजन करायें, उनकी पूजा उनका आदर सत्कार करना ही चाहिये। लेकिन मृतकों के नाम पर करना चाहिये यह कहाँ लिखा है? उसे आप नहीं बता सके। पितर शब्द नहीं है। मरे हुए पितर कहाँ, वो पितरों के साथ मृतक शब्द कहाँ है? पितरों के लिए कब मना किया है कि पितरों की सेवा नहीं करनी चाहिये? खूब करनी चाहिये। लेकिन मृतक शब्द उसके साथ कहाँ है? बार-बार ये कहते हैं कि ये विधि लिखी हुई है पत्ते पर यूं रक्खें। बिना नमक का ही रखें। विधि लिखी है। इन्होंने स्वामी दयानन्द के ही ग्रन्थों पर पानी फेर दिया। मैं कहता हूं कि ये कुत्तों आदि के लिए है। मनुष्यों के लिए नहीं है। आप व्यर्थ ही उसे पितृयज्ञ में घुसेड़ते हैं। मैंने जो प्रश्न किये वो वैसे के वैसे ही पड़े हुए हैं। मन्त्र बोला कि—"**शतकमन्नुस्वर्गोदेवा यन्त्र आमन्त्र**" बोला था मैंने, और मन्त्र में कहा "**पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति**" वेद मन्त्र में कहा है कि, हमारे पुत्र पितर हो जायें, तब तक हम जीवित रहें। साफ पता लगा कि पितर का अर्थ जीवित ही होता है, मरे हुए नहीं। ये मैंने वेद का प्रमाण दिया। यजुर्वेद के २५वें अध्याय का यह मन्त्र है। और मैंने बताया कि इसमें कहा गया है कि जीवित जो हैं, हमारे पुत्र जो हैं वो पुत्रों वाले हो जायें। हम पौत्रों वाले हो जायें। यह उसका अर्थ है, और यह कह दिया, शर्म आनी चाहिये, शर्म नहीं आती तुम्हें। ये सब अशिष्टाचार की बातें कहते हुए कि बाप को चौकीदार बना दिया, और बाप रक्षा करने वाला होता है। "**पिता पाता पालयितावा**" यह ही यास्काचार्य जी कहते हैं कि—पिता रक्षा करने वाला होता है। पिता को चौकीदार बना दिया, वह लालटेन ले-लेकर घूमा करे। पिता लालटेन भी लेगा। दीपक भी लेगा, और भी सब काम करेगा। माता भी करेगी और करने पड़ते हैं। माता-पिता को सन्तानों के निमित्त सभी कुछ करना पड़ता है। उनके गन्दे कपड़े भी धोते हैं, तो आप कहोगे कि भंगी बना दिया। जाने आप क्या-क्या कहोगे? काम जो है रक्षा करने का तो जितने भी रक्षा के काम हैं वह करेंगे, मैंने जो प्रश्न किये थे, वे मेरे प्रश्न वैसे के वैसे ही विद्यमान हैं। मैंने कहा था कि पितृ शब्द का धातु बताओ। नहीं बताया? अब तक नहीं बताया—क्यों नहीं बताया? मैंने कहा था कि "**पा रक्षणे**" धातु से पितृ शब्द बनता है, जिनमें रक्षा करने की सामर्थ्य है, वो ही पितर हो सकते हैं। जिनमें रक्षा करने की सामर्थ्य नहीं है वो पितर नहीं हो सकते। मैंने कहा शरीर को जला कर पितर कहते हो या जीवात्मा को कहते हो? कोई उत्तर नही दिया, मैंने कहा था कि जब जीवात्मा वहाँ से आता है यहाँ पर, तो शरीर छोड़ कर आता है, श्राद्ध जीमनें के लिए, या वह शरीर सहित आता है? कोई उत्तर नहीं दिया। मैंने पूछा था कि जो भी मर जाते हैं वो सब पितर हो जाते हैं या कुछ आधे होते हैं आधे नहीं होते? जो सब पितृ लोक में जाकर बैठ जाते हैं, द्यौलोक में। तो यहाँ फिर जन्म कौन लेता है? यहाँ शरीर धारण कौन करता है? इसका अभी तक कोई उत्तर नही दिया। मन्त्र में शब्द पितर नही आया, मैंने बार-बार दावा किया उस मन्त्र में पितर शब्द नहीं है। जब भी यह मैंने पूछा कि जब पितर वहाँ जाकर बैठ जाते हैं। वो कौन से पितर हैं? वे वहीं बैठे रहते हैं। क्या होता है। और जन्म कौन लेता है? कोई उत्तर नहीं दिया। "**अकृताभ्यागम्**" और "**कृतहानि**" का कोई उत्तर नहीं दिया। जिसने श्राद्ध किया, भोजन कराया, जिसका उसको कोई फल नहीं मिला। और जिसने कुछ नहीं किया, उसका उसको फल मिल गया ये दोनों काम उलटे हैं, एक मनुष्य पढ़ता है, परिश्रम करता है। उसे परीक्षा में बैठने न दिया जावे। उसको उपाधि न मिले। और जो बेपढ़ा

गंवार हो उसे बी० ए० और एम० ए० या आचार्य बना दिया जावे ? ऐसा तो कहीं नहीं होता कि ग्वालिया पशु घेरता है, पढ़ता-लिखता एक अक्षर नहीं, और उसे आचार्य बना दिया जावे।···जनता में अपार हंसी····· ···ये तो "**अकृताभ्यागम**" हो जायेगा। जिसने परिश्रम किया फल, भी उसी को मिलना चाहिये। मैंने श्लोक बोला "**न पितुः कर्मणापुत्रः पिता वा पुत्र कर्मणा स्वयं कृतेन गच्छन्ति, स्वयं बद्धाः स्वकर्मणा**"॥ पिता का किया हुआ पुत्र को नही मिलता, पुत्र का किया हुआ पिता को नहीं मिलता, उसका आपने अभी तक कोई उत्तर नहीं दिया, पितर आकर के ब्राह्मण के पेट में बैठते हैं, "**उदरस्थ पितातस्यवाम पाशर्वे पितामहः**" पिता पेट में आकर बैठ जाता है। बांयी पसली में आकर के, पितामह बैठ जाता है। पृपितामह दक्षिण या पूर्व में आकर बैठ जाता है। बस पेट बन गया मुसाफिरखाना ! ···जनता में हँसी····· इसका आपने कोई उत्तर नहीं दिया, इसको आपने छुआ तक नहीं। मैंने आपके सभी प्रश्नों के उत्तर दे दिये "**ये निखाता**" का मैंने खण्डन किया, कि—"ये निखाता मरे हुए जमीन में नहीं गाड़े जाते हमारे यहाँ, उसका मैंने खण्डन किया। मैंने "**अधामृताः पितृषुसम्भबन्तु**" इस मन्त्र का अर्थ बताया कि—पितर जीवित ही होते हैं और वहाँ "**अमरणाधर्मा**" कहा है। "**अमृता**" कहा है। "**मृता**" शब्द नहीं है। इस प्रकार से भाइयो और बहनो आपने बड़े प्रेम से हमारी सब की बातों को सुना। और मैंने पूछा था कि पापी कोई मर जाता है तो क्या वह भी कोई देव हो जाता है ? पितर देव होते हैं तो यह मैंने पहले ही पूछ लिया था, इसका भी कोई उत्तर नहीं दिया।

जो मैंने मन्त्र बोले कि—पितर जीवित को कहते हैं। व्याकरण पढ़े हुए हैं, गौ का दूध दुहने वाले, युद्ध करने वाले, रक्षा करने वाले, और पढ़ाने वाले उपदेश करने वाले, ये सब पितर हैं। ऐसे अनेक मन्त्र बोले। एक मन्त्र बोल दिया कि—"**इमंमोदनं निदधे ब्राह्मणेषु**" मैंने कहा बिल्कुल ठीक है, ब्राह्मण को भोजन खिलाना चाहिये। भात खिलाना चाहिये। भात ! और वहां तो बार-बार कहते हैं कि—बिना नमक का खिलावें। ये भात काहे का होगा ? ये भी तो बिना नमक का ही भात है। कुछ और डालना पड़ेगा। तब जाकर भात तो ऐसे ही होता है, नहीं तो खिचड़ी हो जायेगी। तो ये ब्राह्मण को भात खिलावें, ये तो कहा है। पर मुर्दों के लिए खिलावें यह कहाँ कहा है ? खूब खिलावें, भात ही न खिलावें, बल्कि खीर खिलावें, खूब खीर खिलावें, पर मुर्दों के लिए न खिलावें मुर्दों के लिए नहीं होता। राजाराम जी ने यह लिखा कि पितर जो हैं वहाँ चले जायें, ठीक लिखा है। राजाराम जी ने लिखा हो या किसी राम जी ने लिखा हो। राजाराम जी हमारे लिए प्रमाण तो नहीं, पर यहाँ तो राजाराम जी ने भी कहा कि "पितर" ! मरे हुए पितर तो नहीं कहा। पितर ही कहा है तो पितर हम भी कहते हैं। पितर यहाँ रहें, वहाँ रहें, जीवित रहें। पढ़ें-लिखें, पढ़ावें, काम करें। रक्षा का काम करें वही पितर होते हैं। हम भी यही कहते हैं। परन्तु मरे हुए पितर होते हैं ये कहाँ लिखा है ? मैंने पूछा था कि वह व्यवस्वान जिसका पुत्र यम है, वह कौन व्यवस्वान् ? कहाँ रहता है ?

मृतक श्राद्ध के लिए ढूंढ़ते-ढूंढ़ते एक प्रमाण रह गया है कि वही बलिवैश्वदेवयज्ञ का है कि यह भाग रखें। जनेऊ क्यों बदल लिया ? क्या जनेऊ बदलने से कोई मर गया ? उसे क्या हो गया ? पानी दे दिया भाई ये तो संकेत है। यूं तो बहुत से कामों में संकेत हैं। हम जब अग्निहोत्र के समय, पूर्व दिशा में, पश्चिम दिशा में, चारों ओर जल सिंचन करते हैं, तो इसका अर्थ यह है कि—किसी को पानी तक भी न पिलावें। किसी को खाना न खिलावें। वे क्रियायें हैं, संकेत हैं। वो शिक्षाएँ हैं, और भी बहुत सी बातें हैं। मैंने आपके सामने यह बता दिया कि मृतक श्राद्ध का एक भी प्रमाण वेद में नहीं है। और

अग्निष्वात्ता का अर्थ मैंने कह दिया कि—अग्निहोत्र न करने वालों का नाम "अग्निष्वात्त" है। जीवित पितरों का श्राद्ध वेदों में कहा है। उनकी सेवा करें, उनको भोजन दें। यह सब कर्म करें। बड़ा अच्छा हुआ परमात्मा करे आप सदा प्रसन्न रहें, सदा सुखी रहें, मैं आर्य समाज की ओर से आदरणीय प्रेमाचार्य जी का और प्रधान जी को विशेष धन्यवाद देता हूं। और इसी प्रकार से शास्त्रार्थ होते रहें। इसके लिए मैं आपका विशेष आभारी हूं। विशेष रूप से प्रधान जी का और आदरणीय पण्डित प्रेमाचार्य जी का।

नोट :—

अन्त में श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी ने सनातन धर्म की ओर से अध्यक्ष महोदय "**श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती**" जी का धन्यवाद करते हुए वही रटी-रटाई बातें दोहराईं। इसी बीच अध्यक्ष जी ने कहा—

"कोई नई बात हो तो कहिये, ये तो घण्टों से बैठे हुए श्रोता सुन ही चुके हैं, इनका पुनः दोहराने का क्या लाभ है ?"

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

सज्जनों ! आचार्य जी की इन बातो का उत्तर में कई बार दे चुका हूं। परन्तु इन्हें तो कहना हैं, कुछ न कुछ !

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

स्वामी जी महाराज ! हमें अपनी बात नहीं कहने दी जा रही है। जो हमारे साथ गैर इन्साफी है।

श्री अमर स्वामी जी महाराज—

आचार्य जी ! इन्साफी-गैरइन्साफी तो आज सब खुल गई, सब पता चल गया,...... गर्ज कर, "मेरा दावा है इस विषय पर आप भूल कर भी किसी के सामने शास्त्रार्थ नहीं करेंगे। श्रोताओं में आज आपने बिल्कुल स्पष्ट करा दिया कि "**श्राद्ध मृतको का हों ही नहीं सकता**" —श्राद्ध केवल जीवितों का ही हो सकता है।

चारों ओर से कोलाहल तथा नारों से आकाश गूंज उठा—

जनता में से ·····यह सब पेट भरने के लिए पोंगा पण्डितों ने किया हुआ है। बोलो—

मृतक श्राद्ध = मुर्दाबाद
श्राद्ध किनका होता है ? = जीवितों का
पितर कौन होते हैं ? = जीवित
आज तो खीर मारी गई = मारी गई भाई मारी गई
बोलो वैदिक धर्म की = जय
अमर स्वामी जी महाराज = अमर रहें।

नोट :—

देखते ही देखते इन जयकारों के साथ ही पण्डाल खाली हो गया, पौराणिक लोग अपने पोथी पत्रे उठा कर भाग गये। इति शम्॥ "**सम्पादक**"

सत्रहवां शास्त्रार्थ--

स्थान : जनता जूनियर हाई स्कूल, जसनपुर रजवाना (मैनपुरी)
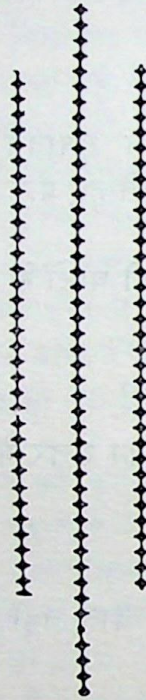
दिनाङ्क : रविवार २६ जनवरी सन् १९८६ ई०
(मध्याह्नोत्तर १ बज कर ४५ मिनट पर)

विषय : मूर्ति पूजा वेदानुकूल है या वेद विरुद्ध ?

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : श्री महेन्द्रार्य एम० ए० (संस्कृत) बी एड०
(प्रधानाचार्य) (विरजानन्द विद्यापीठ मैनपुरी)

पौराणिक पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : श्री १००८ स्वामी प्रेमदास जी महाराज
(घाटियाघाट—फर्रुखाबाद)

विशेष सहयोगी : श्री नरेन्द्र जी आर्य, ओ३म् भण्डार (मैनपुरी)

नोट :—यह शास्त्रार्थ सामग्री श्री पण्डित फूलचन्द जी शर्मा "निडर" भिवानी द्वारा प्राप्त हुई। उनका हम आभार प्रकट करते हैं। —"सम्पादक"

निर्णय के तट पर (प्रथम भाग) ग्रन्थ का चमत्कार

सज्जनों !

आपको विदित हो कि मैनपुरी जिले में ग्राम **"जसनपुर रजवाना"** में पौराणिक पण्डितों का एक उत्सव हुआ, उसमें इन्होंने आर्य समाज को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा। उस समय कोई भी आर्य पण्डित शास्त्रार्थ कर्त्ता वहाँ मौजूद नहीं था, तो **"श्री महेन्द्र जी आर्य एम० ए०"** ने उनके प्रश्नों का उत्तर देना चाहा। परन्तु वह डर रहे थे कि न जाने क्या पूछें, इसी बात को मन में लेकर वह सहयोग के लिए प्रसिद्ध कार्य कर्त्ता **"श्री नरेन्द्र जी आर्य"** मेंनपुरी निवासी के पास गये। उन्होंने उनके विचारों का स्वागत करते हुए उनको **"निर्णय के तट पर (प्रथम भाग)"** जो प्राचीन शास्त्रार्थों का संग्रह उनके पास था, छपा हुआ उनको दे दिया, और कहा कि मैं समझता हूं इससे हट कर वह अन्य कुछ शायद ही पूछें। आप इसे अपने साथ ले लो और मैदान में कूद पड़ो। आपकी अवश्य विजय होगी।

परिणाम स्वरूप श्री महेन्द्र जी आर्य की विजय हुई, उस समय मात्र प्रथम भाग ही छपा था, अन्य भाग नहीं छपे थे, इस अद्भुत ग्रन्थ का चमत्कार ऐसा हुआ कि जो वर्णन के बाहर है। आप स्वयं भी इस शास्त्रार्थ का अवलोकन करें। मेरी बात श्री नरेन्द्र जी आर्य से हुई, उन्होंने कहा— **"लाजपत जी ! सचमुच आपने तथा पूज्य अमर स्वामी जी महाराज ने यह शास्त्रार्थों का संकलन करके आर्य समाज के ऊपर भारी उपकार किया है, ऐसा ग्रन्थ आज तक देखने में नहीं आया"।**

मेरी शुभ कामनाएँ श्री महेन्द्र जी के साथ हैं, परमेश्वर करे वह एक अच्छे शास्त्रार्थ कर्त्ता बनें।

इन्हीं शुभ कामनाओं के साथ—

विदुषामनुचर :

"लाजपत राय अग्रवाल"

शास्त्रार्थ से पहले

श्री महेन्द्रार्य एम० ए० (संस्कृत) बी० एड० प्रधानाध्यापक "विरजानन्द विद्यापीठ मैनपुरी" और "श्री श्री १००८ स्वामी प्रेमदास जी महाराज घाटियाघाट, फर्रुखाबाद" के मध्य दिनांक २६-१-१९८६ ई० को मूर्ति पूजा विषयक शास्त्रार्थ हुआ उसका विवरण कि– शास्त्रार्थ क्यों हुआ तथा इसका कारण ? प्रधानाध्यापक पण्डित महेन्द्रार्य के ही शब्दों में इस प्रकार है :—

"वर्ष १९८२-८३ में मैं इलाहाबाद जनपद के हण्डिया डिग्री कॉलेज, हण्डिया में बी० ए० की (प्रशिक्षण) ट्रेनिंग कर रहा था। मेरे साथ ही भोगांव जनपद मैनपुरी के निकट दुर्गापुर ग्राम के निवासी श्री सोवरन सिंह राजपूत भी ट्रेनिंग (प्रशिक्षण) ले रहे थे। दोनों ही प्रभु की सत्ता में विश्वास रखने वाले आस्तिक विचारधारा के व्यक्ति थे किन्तु दोनों के सिद्धान्तों में वैभिन्य था। जब मैं सन्ध्योपासन किया करता था तब वह राम, सीता, लक्ष्मण तथा हनुमान जी के चित्र पर अगरबत्ती की आरती उतार कर कुछ समय तक राम-राम जपा करते थे। मेरा स्वभाव कुछ ऐसा है कि मैं अपने सामने अवैदिक कार्य होते देख वा सुनकर चुप नहीं रह पाता, इस कारण समय-समय पर उनसे एवं अन्य साथियों से वैदिक सिद्धान्तों को लेकर घण्टों वार्त्तालाप होता रहता था और मैं अकेला ही सबको निरुत्तर कर दिया करता था। एक बार घर आने पर श्री सोवरन सिंह मुझे गाँव लिवा ले गये। उनके गाँव में एक मन्दिर है, जिसमें राम, सीता व लक्ष्मण की सुन्दर मूर्तियाँ रखी हुई हैं और जहाँ एक सन्यासी भी रहा करते हैं श्री सोवरन सिंह ने उक्त सन्यासी जी के साथ-साथ सभी मूर्तियों के सम्मुख साष्टांग दण्डवत किया जब कि मैंने सन्यासी जी को नमस्ते कह कर अपना आसन ग्रहण किया। चहुं ओर पुष्प वाटिका के कारण वहाँ का दृश्य मनमोहक था। स्वामी जी को वहां की जनता गुरू कह कर सम्बोधित करती थी जिनसे श्री सोवरन सिंह ने मेरा परिचय कराया। स्वामी जी ने मुझे आर्य समाजी जानकर मुझ से कुछ प्रश्नोत्तर किये। मैंने मूर्ति पूजा की निस्सारता वेदादि सच्छास्त्रों से प्रमाणित की तो स्वामी जी निरुत्तर होते हुए भी बोले कि वह तब तक नहीं मानेंगे जब तक कि उनके गुरू जी को शास्त्रार्थ में न हराया जाये। मेंने कहा कि अभी बुला लीजिये तब स्वामीजी ने कहा कि वह तो फर्रुखाबाद में रहते हैं किसी अवसर पर बुला कर मुझसे शास्त्रार्थ करा दिया जायेगा। २५ जनवरी, १९८६ को श्री सोवरन सिंह राजपूत, प्रधानाचार्य जनता जूनियर हाई स्कूल, जसनपुर रजवाना (मैनपुरी) का लिखा पत्र मेरे पास आया जिसमें लिखा था कि २६ जनवरी, १९८६ को आयोजित उत्सव में मैं (महेन्द्रार्य) उनके यहाँ आमन्त्रित हूं जहां उनके गुरूजी पधार रहे हैं और मुझसे उनका पूर्व निर्धारित विषय पर शास्त्रार्थ होगा। मैं पढ़ कर असमन्जस में पड़ गया कि १२ घंटों में अकस्मात ही क्या तैयारी करूँ ? फिर सोचा कि यदि मैं नहीं गया तो वहां की जनता समझेगी कि हार के भय से नहीं आये बिना शास्त्रार्थ के ही पराजय का मुख देखना पड़ेगा और वह भी अपनी नहीं, अपितु पूरे आर्य समाज की। मेरे कारण ऐसा न होना चाहिये। यह सोच कर जाने का ही निश्चय कर लिया। इस कार्य में मैं **"श्री नरेन्द्र जी आर्य"** ओ३म् भण्डार, मैनपुरी का विशेष आभारी हूं जिन्होंने मुझे

उत्साहित किया और उनसे अमर स्वामी जी महाराज कृत शास्त्रार्थों का संग्रह **"निर्णय के तट पर"** का प्रथम भाग व कुछ अन्य आवश्यक ग्रन्थ लेकर निश्चित स्थान के लिये चल दिया। मैं साईकिल से ही २८ किलो मीटर चल कर मध्याह्नोत्तर १-३० बजे उक्त स्थान पर पहुंच गया। मंच से श्री श्री १००८ स्वामी प्रेमदास जी महाराज के ये शब्द उस समय मेरे कानों में पहुंचते पड़े कि—आर्य समाजियों मैं इतना साहस कहाँ कि उनका सामुख्य कर सकें। देख लो कि समय पर नहीं आये और न आयेंगे ही। साईकिल में मैंने शीघ्रता पूर्वक पैडिल मारे और कुछ सैकिण्डों में ही मंच के निकट पहुंच गया मुझे देखते ही प्रधानाचार्य जी ने संकेत कर स्वामी जी को रोक दिया और विषयान्तर बोलने को कहा, साथ ही दौड़ कर मुझ से हाथ मिलाते हुए कुशल क्षेम पूछी और कुछ अल्पाहार भी तत्काल कराया।

पौने दो बजे मुझे मंच पर बुला लिया गया। आर्य समाज की ओर से मैं अकेला था जब कि जटा धारी साधुओं का मन्च पर पूर्ण जमघट था। मेरी ओर देख कर स्वामी प्रेमदास जी बोले कि—बेटे आ ही गये यह तुम्हारा अर्थात् मेरा दुर्भाग्य है, यदि थोड़ी देर और भी न आते तो अच्छा होता। अब तुम देखो कि उन जैसे पुराने साधुओं से टकराने का क्या मजा (परिणाम) होता है ? तुम अभी भागते दृष्टिगोचर होगे। मैंने कहा कि स्वामी जी अपने मुख से डींग क्यों मारते हैं ! देखिये कौन भागता है ? इसके पश्चात् घण्टी बजा कर अध्यक्ष जी ने कहा कि प्रथम आर्य समाज डेढ़ घण्टे तक प्रश्न कर सकेगा और सनातन धर्म (पौराणिक धर्म) उत्तर देगा तत्पश्चात इतने ही समय अर्थात् डेढ़ घण्टे तक सनातन धर्म की ओर से प्रश्नावली चलेगी जिसका उत्तर आर्य समाज देगा।

शास्त्रार्थ आरम्भ

नोट :—

अध्यक्ष ने घण्टी बजा कर प्रथम पक्ष से प्रश्न करने को कहा। पण्डित महेन्द्रार्य ने ईश्वर प्रार्थनोपरान्त निम्न प्रकार प्रश्न किये —

श्री पण्डित महेन्द्र जी आर्य—

१ —वेद के किस मन्त्र में ईश्वर की मूर्ति बनाने की आज्ञा है ? २—चारों वेदों में कोई भी ऐसा मन्त्र बताइये जिसमें परमेश्वर की मूर्ति बनाने तथा उसके पूजने की आज्ञा हो ? ३—वेद मन्त्रों द्वारा बताइये कि ईश्वर की मूर्ति सोना, चांदी, पीतल, पत्थर, मिट्टी, लकड़ी आदि किस वस्तु की बनानी चाहिए ? ४ ईश्वर की मुर्ति कितनी लम्बी, कितनी चौड़ी, कितनी मोटी वा भारी बनानी चाहिए ? उसकी आकृति कैसी हो और उसका रंग लाल, हरा पीला आदि किस प्रकार का हो ? वेद मन्त्रों से सिद्ध करें। यजुर्वेद अध्याय ४० के प्रथम मन्त्र—**"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्चजगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्वित् धनम्"** ॥ इस मन्त्र में ईश्वर की सर्वव्यापकता का वर्णन है

कि सृष्टि में सभी चर और अचर ईश्वर से आच्छादित हैं अर्थात् वह अणु-अणु में व्याप्त है। सर्व-व्यापक की मूर्ति क्योंकर बन सकेगी ? जब तक इसे अधिक स्पष्ट किया तब तक अध्यक्ष महोदय की घण्टी बजी और मैं अपने शेष तीन प्रश्न अगली बार करने को कह कर चुप हो गया।

श्री स्वामी प्रेमदास जी—

सज्जनो ! इन पण्डित जी को यह भी नहीं ज्ञात है कि सभी वेद, शास्त्र व पुराणादि स्पष्ट रूप से मूर्ति पूजा के वर्णन से भरे पड़े हैं और यह कहते हैं कि मूर्ति पूजा की अनुकूलता में वेद मन्त्र सुनाओ। अरे एक हो तो सुनायें, अनेक हैं कहाँ तक सुनायें ? पूर्ति पूजा राम ने की, रावण ने की, एकलव्य ने की और उसका फल भी प्राप्त किया। मूर्ति पूजा वेदानुकूल थी, तभी तो इन लोगों ने की। यदि न होती तो ये रामादि महापुरुष क्यों करते ? मैं कहता हूं कि यदि वेद विरुद्ध है तो आप ही वेद मन्त्र से सिद्ध करें तब जानूं। तब तक अध्यक्ष की घण्टी बजी अर्थात् समय समाप्त हुआ।

श्री पण्डित महेन्द्र जी आर्य –

सज्जनों ! स्वामी जी ने मेरे एक भी प्रश्न का उत्तर न देकर इधर उधर की बातों में समय नष्ट कर दिया। मूर्ति पूजा वेदों में भरी पड़ी है यह तो कह दिया, परन्तु वेद का प्रमाण एक भी नहीं दिया और कहा कि मूर्ति पूजा राम ने की। कब की और कहाँ की ? यह नहीं बताया। क्या आपके घाटियाघाट, फर्रुखाबाद में की ? फिर मूर्ति की पूजा राम करें या श्याम करें, वेद विपरीत कार्य अनुकरणीय नहीं। रही राक्षसराज रावण तथा भीलराज एकलव्य की बात ! सो ये दोनों अनार्य संस्कृति से सम्बद्ध होने के कारण प्रमाण की कोटि में नहीं आते। अनार्य व्यक्ति कुछ भी कर सकता है आपको ऋषि महर्षि तो कोई मिला नहीं, भील और राक्षस जैसे गुरु मिले जिनका अनुकरण कर रहे हैं। आपकी बुद्धि पर खेद है देखो ! रावण को मूर्ति पूजा का फल मिला लंका सहित विनाश और एकलव्य को दाहिना अंगूठा देकर अंग भंग होना पड़ा। अब आप मूर्ति पूजा के विरोध में यजुर्वेद अध्याय ३२, मन्त्र ३ का प्रमाण देखें कि—"**न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः**" जिसमें बताया गया है कि ईश्वर की कोई प्रतिमा नहीं है। जड़ (मूर्ति) पूजा करने वालों की क्या दशा होती है ? उसे कितने सुन्दर शब्दों में यजुर्वेद अध्याय ४० मन्त्र ९ में बताया गया है—"**अन्धन्तमः प्रविशन्ति ये असम्भूतिमुपासते। ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्या ँ रताः॥** अर्थात् जो कारण रूप प्रकृति की ही उपासना करते हैं वे घने अन्धकार (अज्ञान) में गिरते हैं और प्रकृति से उत्पन्न पदार्थों की ही मात्र उपासना करते हैं वे उससे भी घने अन्धकार (अज्ञान) को प्राप्त होते हैं। इसे और भी स्पष्ट किया ही जाने वाला था कि अध्यक्ष ने घण्टी बजा कर समय समाप्ति की सूचना दी।

श्री स्वामी प्रेमदास जी—

सज्जनों ! इन्हें यह भी नहीं पता कि राम ने कब और कहाँ मूर्ति पूजा की। सेतुबन्ध रामेश्वर पर शिवलिंग की स्थापना राम ने ही की थी। तुम वेदों के प्रमाण माँगते हो, किन्तु कलियुग में तो पाँचवां वेद-रामायण, गीता व पुराणादि ही हैं फिर वेद का भी प्रमाण लो :—

एह्यश्मानमा तिष्टाश्मा भवतु ते तनुः। कृण्वन्तु विश्वदेवा आयुष्टे शरदः शतम्॥

(अथर्व० २।१३।४)

उपर्युक्त महामन्त्र स्पष्टतः पाषाण-प्रतिमा में ईश्वर का आह्वान करता है। हम लोग इसी **"मन्त्र से तो मूर्ति में प्राणः प्रतिष्ठा करते हैं"** और शतपथ में भी महावीर की मूर्ति बनाने की आज्ञा दी है यथा :—**अथमृत्पिण्डं परिग्रहर्णति। तन्मृदश्चापांच महावीर कृता भवन्ति॥** इस प्रकार मैंने सर्व प्रकार मूर्ति पूजा सिद्ध कर दी। इतना कह कर समय से पूर्व ही चुप हो गये और अध्यक्ष महोदय ने मुझे उत्तर देने के लिये घण्टी बजा कर संकेत दिया।

श्री पण्डित महेन्द्र जी आर्य—

सज्जनों ! मैंने स्वामी जी से वेद का प्रमाण माँगा परन्तु दे रहे हैं रामायण का प्रमाण और वह भी सर्वथा अशुद्ध। रामायण में मूर्ति पूजा की बात नहीं है वहां मात्र इतना वर्णन हैं :—

"एतत्तु दृश्यते तीर्थं सागरस्य महात्मनः। सेतुबन्ध इति ख्यातं त्रैलोक्येन च पूजितम्॥२०॥
एतत् पवित्रं परमं महापातक नाशनम्। अत्र पूर्वं महादेवः प्रसादमकरोद्विभुः॥२१॥
(बाल्मीकीय रामायण युद्ध काण्ड अध्याय १२५)

यह तो विस्तृत समुद्र के तराने वाला पुल दीख रहा है। इसका नाम सेतुबन्ध प्रसिद्ध है जो सारे संसार में आदर से देखे जाने योग्य हैं॥२०॥ यह पुल परम पवित्र है और महापातकी रावण का नाश करने वाला है। यहाँ पर पूर्व अर्थात् जाते समय विभुः महादेवः (व्यापक परमात्मा ने) प्रसादं अकरोत् (कृपा की) जिससे इस पुल के बाँधने में समर्थ हो सके। यह अभिप्राय है॥२१॥ यह वाक्य राम ने लंका से लौटते समय सीता से कहे थे, इसमें शिवलिंग पूजा वा किसी भी प्रकार की मूर्ति पूजा का लेशमात्र वर्णन नहीं है। इसी प्रकार अथर्व वेद के मन्त्र से भी पत्थर में प्राण प्रतिष्ठा सिद्ध नहीं होती। **मन्त्र में गुरु अपने ब्रह्मचारी को पत्थर पर चढ़ने का आदेश देकर कहता है कि "तू यहाँ बैठ और तेरा शरीर इस पत्थर के समान दृढ़ हो और सब उत्तम गुण वाले पदार्थ तथा पुरुष तेरी आयु को सौ वर्ष करें"**। कहिये, यह तो कुछ का कुछ निकला ? आपने अजरामर ईश्वर को भी १०० वर्ष तक जीने का आशीर्वाद दे दिया और आप ईश्वर के भी ईश्वर ही गये, परमात्मा जो अपरिमित है उसे भी परिमित कर दिया। जब आप पाषाण प्रतिमा में प्राण-प्रतिष्ठापना करते हैं तो मृतक शरीर में क्यों नहीं करते ? जो जीवित होकर फिर क्रियाशील हो सके। क्या कहूं आपकी पाषाण बुद्धि को जो जड़ की पूजा करते-करते स्वयं जड़ बन गई। आपने जिस मिट्टी के महावीर की बात की, वह तो यज्ञ पात्र का नाम है। शतपथ उठा कर देखिये कहीं मिट्टी के महावीर बनाने की बात नहीं है। आपने सारा समय इधर उधर की बातें करने में नष्ट किया, परन्तु मूर्ति पूजा की सिद्धि में कोई युक्ति संगत प्रमाण नहीं दिया। आपके पास इन प्रश्नों का उत्तर नहीं तो शेष निम्नांकित ३ प्रश्नों का ही उत्तर दें :—

१—आज कल मन्दिरों में पाई जाने वाली मूर्तियों में ईश्वर की मूर्ति कौन सी है ? दो मुख, चार मुख, छः मुख, एक मुख तथा दो भुजा वा एक मुख चार भुजा वा आठ भुजा वाली, रुण्ड मुण्ड और गोल मटोल आदि ? इनमें कौन सी वेदानुकूल हैं और कौन सी वेद विरुद्ध ? सभी ईश्वर की हैं तो फिर विरोध कैसा ? सप्रमाण बतावें।

२—वर्तमान समय में मन्दिरों में पाई जाने वाली मूर्तियाँ राम कृष्ण आदि मनुष्यों की, कछुआ व मछली आदि जलचरों की तथा बराह, नृसिंह आदि पशुओं की हैं। इनमें परमेश्वर की मूर्ति कौन सी है ?

३—आपके पंचम वेद गीता, रामायण व पुराणों में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, राम, कृष्ण आदि व्यवहारतः कोई भी परमेश्वर सिद्ध नहीं होता है फिर इनके नाम से बनी मूर्तियाँ भी परमेश्वर की किस प्रकार हो सकती हैं? जिन महावीर को आप ईश्वर मानते हैं वह जैनियों वाले तीर्थाङ्कर महावीर हैं या पूंछ वाले हनुमान ? यदि पूँछ वाले हैं तो क्या पूंछ घिस कर परमेश्वर बनाना चाहते हैं ? आपकी मूर्ति पूजा वेद विरुद्ध तो है ही, तथाकथित पंचम वेद पुराण के भी विरुद्ध है । यथा :—

यस्यात्म बुद्धिः कुण्पेत्रिधातुके । स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः ।।
यस्तीर्थ बुद्धिः सलिलेन कर्हिचित् । जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः ।।

(श्रीमद्भागवत स्क० १० अ० ८४)

देखिये उपर्युक्त श्लोकों में मूर्ति पूजक को **"बैल"** और **"गधा"** बताया है :—

"दुर्गाग्रे शिव सूर्यस्य वैष्णवाख्यान मेव च । यः करोति बिमूढात्मा गार्दभीं योनिमाविशेत् ।।

(भविष्य पुराण मध्य पर्व २, अ० ७ श्लोक ३१)

इसमें कहा है कि दुर्गा के आगे शिव, सूर्य वा विष्णु की जो स्तुति करता है वह मूढ़ गधे की योनि में जाता है ।

"अद्य प्रभृति ये लोका नैवेद्य भुञ्जते तव । ते जन्मैकं सार मेंया भविष्यन्तेव भारते ।।

(ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड ३७।३२)

अर्थात् पार्वती ने शिव जी से कहा कि आज से लेकर जो लोग तुम्हारा नैवेद्य लगा प्रसाद खावेंगे वे भविष्य में दूसरे जन्म में कुत्ते बनेंगे । टर्न टन टन ऽऽऽ……

श्री स्वामी प्रेमदास जी—

मैं आपको बार-बार समझाता हूं कि प्रभु को प्राप्त करने की मूर्ति पूजा एक सीढ़ी है और सभी विद्वानों ने इसकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हुये इसे स्वीकार किया है । अभी आप मेरे प्रश्नों के उत्तर देंगे तब पता चलेगा । मैंने आपके सारे प्रश्नों का उत्तर दे दिया और मूर्ति पूजा भी सिद्ध कर दी ।

नोट :—

इसके पश्चात् अध्यक्ष जी ने समय से पूर्व ही घोषणा की कि अब सनातन धर्म (पौराणिक धर्म) की ओर से प्रश्न और आर्य समाज की ओर से उत्तर दिये जावेंगे । यह कह कर उन्होंने स्वामी जी को प्रश्न करने का आदेश किया ।

श्री स्वामी प्रेमदास जी—

(स्वामी जी ने अपनी दाढ़ी मूंछों पर हाथ फेर कर एक ही बार में निम्नांकित ८ प्रश्न कर दिये) । जो इस प्रकार थे—

१—स्वामी दयानन्द ने उस्तरे को नमस्ते करना तथा ऊखल मूसल की पूजा लिखी है। स्पष्ट है कि उन्हें मूर्ति पूजा मान्य थो, तभी तो ऐसा लिखा। २—आपके द्वारा पौराणिकों को गधा बताने वाला श्लोक गलत (अशुद्ध) है, उसमें ऐसा नहीं है। यदि ऐसा हो भी तो स्वामी दयानन्द के बाप दादे भो तो मूर्ति पूजक थे। ३—स्वामी दयानन्द की माता का क्या नाम था? ४—आर्य समाजी ईश्वर को सर्व व्यापक मानते हैं, हम भी पत्थर में ईश्वर मानकर ही उसकी पूजा करते हैं, क्या पत्थर में ईश्वर नहीं है? ५—स्वामी दयानन्द ने नियोग का आदेश देकर पतियों की लाइन (पंक्ति) बना दी है, स्वामी जी व्यभिचार के प्रचारक थे। ६—स्वामी दयानन्द यदि अच्छे होते तो वेश्या के हाथों क्यों मारे जाते? उसके साथ उनका अनुचित सम्बन्ध रहा होगा, तभी तो ऐसी गन्दी मौत आई। ७—स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में अन्य मतों के सिद्धान्तों तथा संस्थापकों को गलत बताया है। कहो भला सबको गलत बताने वाला स्वयं गलत हो सकता है या बाकी सब गलत हो सकते हैं? पूरा असत्यार्थ प्रकाश बना दिया है। ८—यदि मूर्ति पूजा नहीं मानते हो तो मैं कहता हूं कि आर्य समाजी दयानन्द के चित्र की पूजा करते, भोग लगाते और आरती उतारते हैं। यदि ऐसा नहीं करते तो यह रहा दयानन्द का चित्र, इस पर लगाओ अपने हाथ से पांच जूते।

नोट :—

इस अन्तिम प्रश्न पर स्वामी जी ने पूरा बल दे डाला। तब तक घण्टी बज गयी और स्वामी जी के बोलने का समय समाप्त हुआ।

श्री पण्डित महेन्द्र जी आर्य—

सज्जनों! स्वामी दयानन्द ने कहीं भी उस्तरे को नमस्कार तथा ऊखल मूसल की पूजा करना नहीं लिखा। यदि यह दिखा दें तो मैं मात्र इसी पर अपनी पराजय स्वीकार कर लूंगा। मैंने संस्कार-विधि अध्यक्ष जी के पास पहुंचा दी। उन्होंने इसका कुछ समय तक अवलोकन करने के उपरान्त कहा कि इसमें कहीं नहीं लिखा। (इस पर स्वामी जी की विकलता दर्शनीय थी, क्रोध से मुख लाल हो गया और गुर्राते हुए अध्यक्ष जी से कहा, "मूर्ख! गधे!! हम तो तुम्हारे लिये मरते हैं और तुम उसी की बजाने लगे")। अगले प्रश्न के उत्तर में मैंने कहा कि आप भागवत "**गधा**" में शब्द स्कन्ध १० अध्याय ८४ श्लोक १३ पढ़ कर देखें उसमें स्पष्ट मूर्ति पूजक को गधा बताया गया है। फिर आपने कहा कि दयानन्द के बाप दादे मूर्ति पूजक थे वे कौन थे? मैं कहता हूं कि मैं स्वामी दयानन्द का वकील हूं, उनके बाप दादों का नहीं। उनके बाप दादे वही **थे,** जो आपके बाप दादे थे या आप हैं, मेरे ऊपर उनका उत्तर-दायित्व नहीं। तीसरे प्रश्न में स्वामी जी की माता का नाम पूछा है। उनकी माता का नाम "**यशोदा बाई**" था, परन्तु यह शास्त्रार्थ का विषय तो है नहीं। आपको प्रश्नों की संख्या बढ़ाना अभीष्ट है सो बढ़ा दी। मैं आपसे पूंछू यहाँ के सनातन धर्म के मन्त्री व प्रधान को दादी व पर दादी के क्या नाम थे तथा राम को परदादी का क्या नाम था आदि? आपको माताओं ने नाम सुनने में आनन्द आता है तो पौराणिक ऋष्यादि की माताओं के नाम भी सुन लीजिये और पुराणाधारों की "रिसर्च स्कालरी बुद्धि" का परिचय देखिये :—**शुकदेव जी तोती** से उत्पन्न हुये। **कणादि, उल्लुकी** से, **शृङ्गीऋषि, हिरणी** से, **द्रोणाचार्य, दोने** से, **वशिष्ठ जी, गणिका** (वेश्या) से, **माडव्य मुनि, मेंढ़की** से तथा **हनुमान जी, कान** से

आदि आदि । चतुर्थ प्रश्न में आपने कहा कि "पत्थर में ईश्वर मानकर पूजा करते हैं तो क्या पत्थर में ईश्वर नहीं है" ? पत्थर में ईश्वर तो है परन्तु उसमें आपकी आत्मा तो है ही नहीं । मेल तो वहीं होता है जहाँ मिलने वाला और जिससे मिला जाय दोनों ही उपस्थित हों । आपका प्रवेश पाषाण मूर्ति में असम्भव है और पाषाण का ईश्वर आपसे बाहर आकर नहीं मिलेगा । गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है :—

"ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति । भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ।।
(अध्याय १८ श्लोक ६१)

अर्थात् :—हे अर्जुन ! यन्त्रारूढानि (परमात्मा के नियम रूप यन्त्र में स्थिर) सर्वभूतानि (सब प्राणियों को) मायया (अपनी प्रकृति रूप माया से) भ्रामयन् (भ्रमण कराता हुआ) ईश्वरः (परमात्मा) सर्वभूतानां (सब प्राणियों के) हृद्देशे (हृदय देश में) तिष्ठति (स्थिर है) । जब आपके हृदय में ही वह विराजमान है तो मनुष्य द्वारा निर्मित पाषाण मूर्ति में क्यों सिर मार रहे हो ? परमात्मा द्वारा निर्मित शरीर के हृदयदेश में क्यों नहीं देखते ? तब तक अध्यक्ष ने समय समाप्ति की घण्टी बजा कर सूचना दी ।

श्री स्वामी प्रेमदास जी —

स्वामी दयानन्द ने नियोग लिख कर व्यभिचार का प्रचार किया और सत्यार्थ प्रकाश बनाकर संसार को बहकाया तथा वेद के नाम पर सब कुछ झूठ रगड़ मारा । आपको पता नहीं कि :—

"सनातन सूर्य पर जो मुंह उठा करके थूकेगा । जमाना ही नही वह स्वयं ही अपने मुख पर थूकेगा" ।।

आपने स्वामी जी के चित्र की जूतों से पूजा नहीं की जैसी कि बुद्धदेव विद्यालंकार द्वारा हैदराबाद में तड़ातड़ जूतों से हुई थी ।

नोट :—

इस पर मैंने अध्यक्ष जी को संकेत देकर कहा कि – इन्हें अशिष्ठता से रोकिये । अध्यक्ष जी ने अनुचित कहने से रोका तो वह पुनः क्रोध से कहने लगे कि—"मूर्ख कहीं के तुम क्या जानो" ? अध्यक्ष जी ने कहा कि—"मैं आर्य समाजी पण्डित की योग्यता तथा शालीनता दोनों पर मुग्ध हूं आप ढंग से वार्तालाप करें ।" स्वामी जी मुझे लक्ष्य करके बोले कि, अभी आपके आने पर लोग आपको "**यादव**" कह रहे थे, आप ब्राह्मण क्यों नहीं बने ? कहीं आर्य समाज की गुण कर्म स्वभाव वाली वर्ण व्यवस्था का दिवाला तो नहीं निकल गया ?" इतना कह कर वह चुप हो गए तब अध्यक्ष जी ने कहा कि उनका समय अभी शेष है, आगे बोलिए । इस पर स्वामी जी ने कहा कि अब वह अपना शेष समय इन पण्डित जी को अर्थात् मुझे देते हैं जिससे यह अच्छी प्रकार उत्तर दे सकें ।

श्री पण्डित महेन्द्र जी आर्य—

मैंने कहा कि मेरा स्वभाव उधार खाने का नहीं है । यह दया अपने भक्तों में बाँट देना । यह

क्यों नहीं कहते कि आपके पास बोलने को कुछ नहीं रह गया ? क्या गालियों का कोष भी रिक्त हो गया ? अब मैं आपकी गालियों का उपहार आपको ही लौटाता हूं कि इन्हें आप अपने मान्य देवों के लिए प्रयोग कर सकें। आपने सनातन सूर्य पर जो थूकने की बात कही वह भी ठीक है क्योंकि **"सनातनी सूर्य ने कामातुर होकर अपनी भतीजी संज्ञा से भोग कर डाला"**। यदि सनातनी सूर्य ऐसा व्यभिचार प्रचारक देवता है, तो हमी क्या, सम्पूर्ण संसार उसे थूकेगा जिसने **"कुवांरी कुन्ती के ही गर्भाधान"** कर डाला। परन्तु यदि वर्तमान में आपके सनातनी सूर्य ने ऐसा किया तो भारत की नारियाँ उसके प्रति विद्रोह खड़ा कर देंगी और आपका सूर्य हवालात के सींखचों से झाँकता दृष्टिगोचर होगा और वह किसी भी प्रकार प्रतिभूति (अपील) पर छोड़ा नहीं जायगा। आपने नियोग पर आपत्ति की, जबकि आपके घर में नियोगज सन्तान का बाहुल्य है। पांडव नियोगज थे, कर्ण तथा हनुमान भी नियोगज ही थे। रही व्यभिचार-प्रचार की बात, सो स्वामी जी ने आपके घर को व्यभिचार के कलंक से बचाने के लिए ही नियोग को वेदोक्त सिद्ध किया। आपके भगवान **"विष्णु ने छल से वृन्दा का सतीत्व नष्ट किया, इन्द्र ने अहिल्या का सतीत्व नष्ट किया, ब्रह्मा अपनी पुत्री सरस्वती पर आसक्त हो गए और शिव ने नंगे होकर मोहिनी का पीछा किया तथा दारुवन में जाकर ऋषि-पत्नियों से कुकर्म किया यहाँ तक कि ऋषियों के शाप से उनका लिङ्ग भी कट कर गिर गया"**। अब बताइए कि व्यभिचार के प्रचारक स्वामी जी थे या आपकी भगवान मण्डली ? जब आपके भगवानों का यह आचरण है तो भक्त भी उन्हीं का अनुकरण करते होंगे। अब रही पतियों की पंक्ति वाली बात ! सो स्वामी जी ने आवश्यक नहीं बताई, अपितु **"विशेष परिस्थिति में आपद्धर्म व्यवस्था का उल्लेख किया है"**। परन्तु आपके यहाँ तो अनावश्यक रूप से **"द्रोपदी के पाँच, जटिला के सात वार्क्षी के दस और दिव्या देवी के २१ पति"** बताये गये हैं आदि-आदि। अब बताइये पतियों की पंक्तियाँ आपके यहाँ हैं या स्वामी जी द्वारा मात्र आपद्धर्म व्यवस्था की व्याख्या करने में ? आपने कहा स्वामी जी की गन्दी मौत हुई क्योंकि वेश्या से उनका अनुचित सम्बन्ध था। सभी खोजों द्वारा सिद्ध हो चुका है कि वेश्यागमन का विरोध करने के कारण वेश्या द्वारा दिलाया गया विष **"आप ही के कुलकलंकी जगन्नाथ द्वारा दिया गया था"**। यदि वेश्या से उनका अनुचित सम्बन्ध होता तो क्यों इस प्रकार मरते ? वहीं सुखोपभोग करते जिस प्रकार आपके परमात्मा **"शिव जी महानन्दा वेश्या"** के घर जाकर शुल्क रूप में एक स्वर्ण कंगन देकर नर्म तकिये व गद्दे पर सोये और **"तीन दिन तक सुख पूर्वक सम्भोग किया"**। आपका **"भविष्य पुराण"** यह भी कहता है कि रविवार के दिन पौराणिक ब्राह्मणों को रण्डियां यदि विशेष रूप से रतिदान दें तो उन्हें विष्णुलोक की प्राप्ति होगी। कहिये आप भी ऐसा स्वर्ग का टिकट बांटते हैं या नहीं ? आपने सत्यार्थ प्रकाश को असत्यार्थ प्रकाश कहा जब कि सत्यार्थ प्रकाश के विज्ञान सम्मत एवं तर्क सङ्गत सिद्धान्तों पर मुंह खोलने का साहस ही किसी को नहीं है। जो जैसा था स्वामी जी ने वैसा ही लिख दिया है, क्या सत्य लिखने में भी बुराई है ? फिर आप औरों की वकालत क्यों करते हैं ? वे प्रश्न करेंगे तो उनको भी उत्तर देंगे। आप मात्र अपनी ही वकालत कीजिए। आपने कहा कि मैं ब्राह्मण क्यों न बना ? यादव ही क्यों रहा ? मैं कहता हूं कि आर्य समाज मुझे ब्राह्मण मानता है और मैं पुरोहित्य कार्य भी करता हूं जिसे यहाँ के प्रधानाचार्य भी जानते हैं। परन्तु कभी-कभी यादव इस कारण कहलवा लेता हूं कि उसमें मुझे गौरव की प्राप्ति और भी अधिक हो जाती है, क्योंकि आपके दादे परदादे यदुकुलभूषण कृष्ण की नकली मूर्तियों का चरणामृत घोट-घोट कर पीते आये हैं और आप भी ऐसा ही करते हैं। तो जब मैं आपके पूज्य कुल का हूं तो ब्राह्मण बनकर पुजारी क्यों

बनूं ? रही स्वामी जी के चित्र पर जूते मारने की बात ! सो ऐसे प्रश्न मूर्खों के संसार में मूर्ख ही उठाया करते हैं। इन गालियों जैसे प्रश्न पर किसी भटियारिन से आपको शास्त्रार्थ करना था। मूर्ति भी जड़ है और चित्र भी जड़ है, दोनों ही नहीं समझते कि उनकी पूजा हो रही है या जूते मारे जा रहे हैं ? मूर्ति पर फूल चढ़ाना या चित्र पर जूते मारना दोनों ही घोर मुर्खतापूर्ण कार्य हैं, अतः दोनों में से एक भी मूर्खता का कार्य मैं नही करूँगा। फिर क्या यह भी कोई पूजा (आदर) वा अपूजा (निरादर) की कसौटी है ? यदि ऐसा है तो मैं कहता हूं कि आप अपनी दाढ़ी मूंछों और वस्त्रों को जला कर और वस्त्रों को फाड़ कर दिखाओ और भी मैं कहता हूं कि आप पुरीष (विष्ठा) खाकर और मूत्र पीकर दिखाओ। यदि ईश्वर सर्वव्यापक की एकता पत्थर में मानते हो तो।

नोट :—

इतना कहते ही स्वामी जी क्रोध से लाल-पीले होकर मंच से उतर पड़े और अध्यक्ष जी को कहने लगे कि—**"आपने किस मूर्ख नास्तिक को मेरे सम्मुख लाकर खड़ा कर दिया है ? मैं इसके एक भी प्रश्न का उत्तर नहीं दूँगा "और न इसे क्षमा हो करूँगा"** मेरा कहना भी चलता रहा कि आप उत्तर देंगे ही क्या ? एक प्रश्न का भी उत्तर सन्तोषजनक नहीं दे सके। इस प्रकार शास्त्रार्थ समाप्त हो गया। श्रोताओं को सनातन धर्म की पोल का पता लग गया। और सभा विसर्जित हो गयी !!

अट्ठारह्वां शास्त्रार्थ--

स्थान : **बदरखा (मेरठ) उ० प्र०**
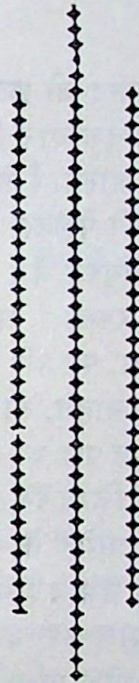
दिनाङ्क : **२ फरवरी सन् १९७६ ई० (द्वितीय दिवस)**

विषय : **क्या महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थ वेद विरुद्ध हैं ?**

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री, तर्कशिरोमणि**

सहायक : **श्री अमर स्वामी जी महाराज**

सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : **श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री**

सहायक : **(१) श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री**
(२) श्री पण्ड़ित वामदेव जी शास्त्री

शास्त्रार्थ के प्रधान : **श्री रघुवीरसिंह जी शास्त्री**
(भू०पू० उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी)

संचालक : **श्री पण्डित ओम प्रकाश जी शास्त्री विद्याभास्कर**

अन्य उपस्थित विद्वान : **श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी सरस्वती, श्री निरञ्जनदेव जी तीर्थ आर्य सिद्धान्ती, श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती आदि-आदि ।**

शास्त्रार्थ से पहले

आज का विषय **"क्या स्वामी दयानन्द जी कृत ग्रंथ वेद विरुद्ध हैं ?"** निश्चित था, जिसमें माधवाचार्य जी ने आरम्भ से अन्त तक अनेक बार विघ्न डालने का यत्न किया, और वह स्वयं ही पौराणिकों की ओर से प्रधान बन गये, और शास्त्रार्थ से पहले शास्त्रार्थ के स्थान में व्यर्थ भाषण देने की कुचेष्टा करने लगे। शास्त्रार्थ के प्रधान श्री पण्डित रघुवीर सिंह जी शास्त्री भूतपूर्व आचार्य तथा उपकुलपति विश्वविद्यालय गुरुकुल कांगड़ी नियुक्त थे। श्री शास्त्री जी ने बहुत गम्भीरता तथा दृढ़ता से माधवाचार्य जी के कुचक्रों को दबाये रक्खा। माधवाचार्य जी ने श्री शास्त्री जी के लिए अनेक अपशब्द बोले और उनका घोर अपमान किया, पर श्री शास्त्री जी ने माधवाचार्य जी के उद्देश्य को समझ लिया कि यह शास्त्रार्थ नहीं होने देना चाहते, तो भी उन्होंने बड़ी ही सूझबूझ से काम लिया, पौराणिक पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री का यह पक्ष था। जितने भी प्रश्न पौराणिक पण्डित ने उठाये उन पर श्री पण्डित रामदयालु जी ने चैलेञ्ज किया कि इनको वेद विरुद्ध सिद्ध करो, साथ ही पुराणों की अनेक कथाओं के उदाहरण दिये, और प्रत्येक के साथ वेद मन्त्र बोल-बोल कर बताया कि यह कथा इस वेद मन्त्र के विरुद्ध है। अमुक कथा उस वेद मन्त्र के विरुद्ध है। श्री रामदयालु जी शास्त्री ने बार-बार माँग की कि इस प्रकार वेद मन्त्र बोल कर, दयानन्द जी के ग्रन्थ की किसी बात को भी वेद विरुद्ध सिद्ध करो। पौराणिक पण्डित से एक भी बात को वेद विरुद्ध न बताया जा सका, बल्कि उल्टी पुराणों की पोल खुलते देख कर पौराणिक दल घबरा गया। माधवाचार्य जी का मुंह आज ऐसा लगता था, जैसे किसी व्यक्ति के सारे परिवार के मर जाने पर होता है। शास्त्रार्थ के संचालक के रूप में श्री पण्डित ओमप्रकाश जी शास्त्री (खतौली) थे, जिन्होंने माधवाचार्य जी को उद्दण्डता करने से शास्त्रार्थ के अन्त तक दबाये रक्खा। आज पौराणिकों का पक्ष आर्य समाज की पोल खोलने का था, पर श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री ने पुराणों की पोल खोल कर पौराणिकों के मनोरथों पर पानी फेर दिया। जैसी गत पौराणिकों की उस दिन बनी, शायद ही जीवन में कभी बनें। मैं इस शास्त्रार्थ में उपस्थित था, सभी वार्तालाप लिखा गया था, ये सारा दृश्य मैंने अपनी आँखों से देखा था। हजारों की भीड़ अद्भुत दृश्य देखते ही बनता था। हर श्रोता के चेहरे पर एक अलग ही रौनक थी एक अलग ही चाह थी, हर कोई शास्त्रार्थ का निर्णय सुनना या जानना चाहता था, सभी के दिलों में एक अद्भुत उमंग व चाह दिखाई देती थी। परमेश्वर करे फिर से वह शास्त्रार्थों का युग लौट आवे।

विदुषामनुचर :—

"लाजपत राय अग्रवाल"

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

स्वामी दयानन्द जी ने संस्कार विधि में—"**इमं तेउपस्थमधुना संसृजामि**" लिखा है कि पति अपनी पत्नी की योनि को शहद से सींचे, अर्थात् योनि में शहद भरना, वेद में दिखाओ ? विवाह से पूर्व ऐसा करना व्यभिचार है ।

श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री—

सज्जनो ! "**उपस्थ**" का अर्थ गोद भी होता है, "**अदिते रूपस्थे**" अथर्ववेद काण्ड २, तथा गीता में, "**रथोपस्थ उपाविशत्**" का अर्थ रथ की गोद में बैठना होगा, रथ की योनि में बैठना नहीं, विवाह से पहले कन्या की गोद फल व मिठाइयों से भरी जाती हैं, वर कहता है कि—मैं तेरी गोद भरता रहूंगा, आप स्तवगृहसूत्र में देखें "**उत्तर या मातुरूपस्थे**" माता की गोद में बालक को यहाँ "**उपस्थ**" गोद का नाम है । मेदिनोकोष में गोद और मुत्रेन्द्रिय दोनों का नाम है । अब आप बताइये गोभिल गृह सूत्र में "**दक्षिणेन् दाक्षिनोदस्थमभिस्पृशेत्**" विवाह के बाद पहले दिन सम्भोग करे, तो पहले योनि को हाथ से स्पर्श करे, तीन दिन तक एक शय्या पर बीच में डण्डा रख कर सोवे फिर छाती पकड़े, परदेश में जाये तो शतचरण जन्तु को मार कर सुखा कर चूर्ण करके पत्नी की योनि में भरने से वह किसी अन्य से सम्भोग नहीं करेगी । परदेश से लौट कर कपिला गौ के मूत्र से धो देवे, फिर सम्भोग के योग्य हो जावेगी, क्या यह विधान वेद में है ? वेद में "**शुद्धा पूताः योषितः याज्ञयासाः**" लिखा है । शंकराचार्य ने स्त्री को "**संमोहत्येव सुखेक्ता स्त्री द्वारं किमेकं नरकस्यनारी**" लिखा है । आप महर्षि के ग्रन्थों से ऐसा विरोध दिखाइये, जैसा मैंने आपके ग्रन्थों से दिखाया है ।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

स्वामी दयानन्द ने सन्ध्या में "**ओ३म् वाक्-वाक् तथा ओ३म् प्राणः प्राणः**" से अंग स्पर्श लिखा है, ये मन्त्र वेद में दिखाओ ? तथा "**यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं**" मन्त्र वेद में कहां है ?

श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री—

"**वेदं में वाङ् में आसन्नसोः प्राणः, वाचं मे तर्पयत् प्राणंमे तर्पयत् वाङ्सम आप्यायतां प्राणस्त आप्यायताम्**" ।। अनेक स्थलों में इनका वर्णन है इनके प्रतीक स्वामी जी ने लिखे हैं, सभी प्रतीक वेदानुकूल हैं। "**भीमा जाया ब्राह्मणस्योपनीता आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणंकृणुते**" वेद मन्त्रों में

यज्ञोपवीत का विधान हैं। इनके आधार पर पारस्कर का सार्थक और उपर्युक्त मन्त्र पहिनने के लिए लिखा है। मन्त्र समान्त मन्त्र से अन्य ग्रन्थों के भी मन्त्र हैं, यदि वेद यज्ञोपवीत का निषेध करता और महर्षि दयानन्द जी आज्ञा देते अर्थात् लिखते, तो विरोध कहा जाता, जैसे अथर्व वेद के छठे काण्ड में **"यथा मांसे यथा सुरा यथाक्षा अधिदेवने"** मांस शराब जुआ तीनों का निषेध है। किन्तु ब्रह्मवैवंत पुराण के कृष्ण जन्म खण्ड में **"वारुणी मंदीरांपीत्वा वुबु घेन दिवानिशम्"** चन्द्रमा ने शराब पीकर गुरुपत्नी से व्यभिचार किया, भागवत् १०म उत्तरार्ध में **"दीव्यतेऽक्षैर्भर्गवसे:"** कृष्ण जी का जुआ खेलना तथा **"तनाविध्यत् शरैर्व्याधान सूकरान् महिषान् रूरून्"** कृष्ण जी का व्याघ्र सूअर, भैंसा, हिरणों का शिकार करना अध्याय ६५-६७ में, बलराम जी का शराब पीना, कृष्ण जी के विवाह में एक लाख गौवों का मारना लिखा है। ये सब वेद विरुद्ध है, आप महर्षि दयानन्द जी के ग्रन्थों से इस प्रकार का विरोध दिखायें तो हम जानें, जैसे हमने आपके पुराणों का विरोध वेद से दिखाया। जनता में सन्नाटा········।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि बेटा किसी के घर में पैदा हो, और दूसरे के घर में चला जाये, अर्थात् पुत्र परिवर्तन का मन्त्र वेद में दिखाओ ? संस्कार विधि में लिखा है, पिता के घर में ही गर्भाधान करें, यह वेद में कहां लिखा है ? रजस्वला होने का पता कौन लगायेगा ?

श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री—

पुत्र परिवर्तन जीवन यात्रा की समस्या का एक समाधान है। कोई पुत्र दुराचारी-दुर्व्यसनी होकर माता-पिता के विपरीत चलता है, सेवा नहीं करता उसे आज भी सम्पत्ति से खारिज कर दिया जाता है, तथा सन्तान हीन पुरुष दूसरे के पुत्र को गोद ले लेता है। महर्षि दयानन्द जी ने भी एक परिस्थिति का समाधान लिखा है, यदि वेद में इसका विरोध होता तो अजीगर्त का पुत्र शुनः शेष विश्वामित्र का पुत्र क्यों न वन जाता ? देवकीनन्दन कृष्ण यशोदानन्दन क्यों बनता ? ये यशोदा के पेट से हुई कन्या देवकी के पास क्यों पहुच गई ? हीरा लाल गांधी को आपने अब्दुल्ला क्यों बना दिया ? यदि परिवर्तन नहीं मानते। दुष्यन्त ने शकुन्तला के घर में ही गर्भाधान किया था, जिससे भरत पुत्र पैदा हुए। उसी के नाम से संकल्प में **"जम्बूद्वीपे भरतखण्डे"** पढ़ते हैं। देखिये वेद में लिखा है—**"गृम्णामिते सौभगवाम हस्तं मया पत्याजर दष्टिर्यथास:"** अर्थात् एक स्त्रीवत् होना चाहिये। स्त्री को पतिव्रता होना चाहिये। किन्तु बृह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खण्ड अध्याय ७६ में लिखा हैं कि—**"वैश्याक्षैम करींदृष्ट्वा पुण्यं लभेतर:"** वेश्या के दर्शन करना पुण्य लिखा है। शिव पुराण में आता है कि—शिवजी महानन्दा वेश्या के घर में तीन दिन रहे और फीस के रूप में हाथ का कंगन दिया। कीर्ति मालिनी के घर में गये। महर्षि ने लिखा है, गर्भ धारण हो जाने पर पति एक वर्ष तक ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे। किन्तु उतथ्य की गर्भिणी स्त्री से बृहस्पति ने संभोग किया तो पेट के बालक ने पैर अड़ा दिये कि यहाँ स्थान नहीं हैं। कृष्ण जी ने अर्जुन को तालाब में घुसा दिया, वह अर्जुनी हो गयी, उसे कृष्ण जी ले गये और उससे खूब विहार किया, शिव पुराण रुद्र संहिता में शिवजी ने पार्वती से

एक हजार वर्ष तक खूब··· "**बुबुधेन दिवानिशम्, सहस्रांक जगत पिता**" भविष्य पुराण में लिखा है कि वेश्यायें रविवार के दिन ब्राह्मणों को मुफ्त सम्भोग करावें तब उनकी मुक्ति होगी एवं—"**आदित्य वारेणसदातद् व्रतमाचरेत्**" ये वेद विरुद्ध है। क्या प्रेमाचार्य जी आप इनसे इन्कार करते हैं? आप महर्षि के ग्रन्थों में से एक उद्धहरण तो दिखाइये जो वेद में न हो तथा महर्षि ने लिख दिया हो। जनता में चारों तरफ सन्नाटा······।

नोट :—

शास्त्री जी की इन बातों को सुन कर पौराणिक शास्त्रार्थ कर्त्ता बाप व बेटे का चेहरा देखने लायक था, सारे दूर-दूर से आये श्रोतागण पौराणिकों को गालियाँ निकाल रहे थे। स्त्रियाँ गाली देती हुई जाने लगी थी, ओर कहती थी—लानत है ऐसे पण्डितों को! जिनके धर्म शास्त्र ऐसी बातें बताते हैं। भाड़ में जायें ऐसे धर्म शास्त्र!

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

(पूर्व कही गई बातों को दोहराते हुए)······ श्री महाशय जी विवाह से पूर्व कन्या की योनि में शहद भरना आदि स्वामी जी ने व्यभिचार की छूट दे दी है। गर्म देश में चोटी कटवाना लिखा है। चोटी की रक्षा के लिए हमारे पूर्वजों ने लाखों जानें दे दीं, स्वामी जी ने धर्म का नाश किया है।

श्री पण्डित रामदयाल जी शास्त्री—

मैं आपके सब प्रश्नों के उत्तर दे चुका हूं। आपने महर्षि दयानन्द जी के ग्रन्थों में से एक भी वेद विरुद्ध बात नहीं दिखाई। आपकी बात मान ली जाय तो, शहद भरना व्यभिचार है। या परदेश में जाते समय शतचरणा (सोड़ोगी कातर) सुखा कर उसका चूर्ण भरना तथा फिर गौ मूत्र से धोना व्यभिचार फैलाना है। देखिये पद्म पुराण मातरम् खण्ड में –"यदि विधवा की योनि में खुजली होने लगे तो एकान्त में जाकर अंगुली से, लकड़ी से या अन्य किसी वस्तु से खुजा ले" तथा और देखिये— "**मर्दयित्वा करांश्मां ततसन्ताऽयच विवृत्यात् अज्ञाते-चेगरहेगत्वा रमयेदेव निश्चितम्**" अर्थात् किसी अनजान व्यक्ति के घर में घुस कर खुजली मिटा ले। देखा भाइयो आपने! इनके पुराण कितनी अच्छी वेदानुकूल बातों का बखान कर रहे हैं······ जनता में जबर्दस्त हंसी······ और देखिये—इसी पुराण में कहा है कि—भोजन प्रसाद मांगने पर शिव ने पराई स्त्री से कहा—"**अधोभागे च मेंनाभेवर्तु लौफल-संन्नि भौ-भक्षपध्वं लम्बौमे वृषणानिमौ**" अर्थात् मेरी नाभि के नीचे ये गोल-गोल दो फल लटक रहे हैं इन्हें खा लो! मैं पूछता हूं क्या इनसे व्यभिचार नहीं फैलता? क्या ये बातें वेदानुकूल है? "**कुमाराविशिखाइव**" वेद में मुण्डन, केश, शिखा तीनों विधान है, यदि धर्म का नाश है तो सनातन धर्म के सन्यासी शिर क्यों मुंड़ाते हैं? है आपके पास इन बातों का कोई जवाब? आपकी बराबर में श्री पण्डित माधवाचार्य जी बैठे हैं उनसे ही पूछ लीजिये। आज इधर उधर झांकने से भी पीछा छुटने वाला नहीं है। मुझे "**महाशय**" कहते हो "**पुजारी**" जो!······ चारों तरफ हँसी······। सज्जनों!

वैसे महाशय शब्द बुरा नहीं है, बल्कि इनके कहने का आशय बुरा है। मैं इनकी बराबर में बैठे इनके पिता जी (श्री माधवाचार्य जी शास्त्री) को घर में से खींच कर लाया था, फिर भी इन्होंने शास्त्रार्थ नहीं किया था। मैंने पुजारी जी तुम्हारे बाबा लक्ष्मीचन्द्र जी से दो शास्त्रार्थ तुम्हारे मूल जन्म स्थान ग्राम "**कौल**" जिला करनाल में तथा एक शास्त्रार्थ संस्कृत में भिवानी शहर में किया था। मुझे महाशय कहते हो! पुजारी जी !!...... पौराणिक सम्प्रदाय में सन्नाटे का वातावरण...... भइया! महर्षि दयानन्द जी के ग्रन्थ सभी वेदानुकूल हैं, उनमें कोई बात वेद विरुद्ध नहीं है। एक भी बात आप लोगों के सामने ये वेद विरुद्ध नही बता सकें, अपितु मैंने इनके ग्रन्थों में अनेक स्थल ऐसे बताये जिनका वेद में निषेध है। अतः इनके सब ग्रन्थ वेद विरुद्ध सिद्ध हुए तथा महर्षि दयानन्द जी के सभी ग्रन्थ वेदानुकूल सिद्ध हुए। मैंने जितनी बातें पुराणों की व इनके मान्य ग्रन्थों की बताई जिन्हें सुन कर लज्जा आती है। मैं इनसे पूछता हूं उनमें से एक ही बात वेदानुकूल सिद्ध कर दें? क्यों पुजारी जी! और हाँ !! एक बात और सुन लो, ऐसी शिक्षा का प्रचार करोगे तो याद रक्खो ये जाटों (क्षत्रियों) का इलाका है, जिसमें पुरुष तो दूर पहले स्त्रियां ही तुम्हारा मार-मार कर...... बना देंगी।

नोट :—

इस पर चारों तरफ वातावरण तनावपूर्ण बन गया माधवाचार्य ने स्थिति को देखते हुए तुरन्त राम धुन आरम्भ कर दी...... श्री राम जय राम जय जय राम......इस पर आर्य समाजियों ने बुलन्द आवाज से नारे लगाये!

बोलो वैदिक धर्म की......जय, महर्षि दयानन्द की.....जय, पण्ड़ित रामदयालु शास्त्री...... जिन्दाबाद, अमर स्वामी जी महाराज......जिन्दाबाद। आर्य समाज...... अमर रहे, वेद की ज्योति जलती रहे, ...के नारों से आकाश गूंज उठा, तथा सभा विसर्जित हो गयी। "**शास्त्रार्थ कला के उद्‌भट विद्वान शास्त्रार्थ महारथी श्री वयोवृद्ध अमर स्वामी जो महाराज ने श्री पण्डित रामदयालु जी को भरपूर सहयोग प्रदान किया था और शास्त्रार्थ के पश्चात् श्री शास्त्री जी की पीठ ठोकी, तथा छाती से लगा लिया**"। श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी ने जनता के सामने शास्त्री जी के शास्त्रार्थ की प्रशंसा करते हुए धन्यवाद दिया "**श्री रघुवीर सिंह शास्त्री जी ने कहा कि—"आज जिस योग्यता के साथ शास्त्रार्थ हुआ है वह अति सराहनीय है**"। शास्त्री जो को माला पहनाई, तथा सब लोगों ने शास्त्रार्थ की प्रशंसा की। श्रोताओं पर आर्य समाज की अमिट छाप पड़ी।

—"**सम्पादक**"

उन्नीसवां शास्त्रार्थ--

स्थान : बदरखा (मेरठ) उ० प्र०
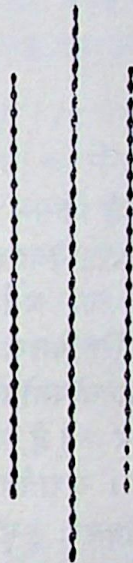
दिनाङ्क : ३ फरवरी सन् १९७६ ई० (तीसरा दिन)

विषय : क्या मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है ?

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री, तर्क शिरोमणि

सहायक : श्री अमर स्वामी जी महाराज

सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री

सहायक : श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री

प्रधान : श्री रघुवीर सिंह जी शास्त्री (भू०पू० उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी)

संचालक : श्री पण्डित ओम प्रकाश जी शास्त्री, विद्याभास्कर

अन्य उपस्थित विद्वान : श्री स्वामी रामेश्वरानन्द जी, श्री निरंजन देव जी तीर्थ आर्य सिधान्ती, श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती आदि।

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री—

भाइयों और बहनों ! आज का विषय है कि—"मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है या वेदो के विरुद्ध ?" सो सुनों हमारी दिन चर्या में आचार्यों ने ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथि यज्ञ, बलिवैश्वदेवयज्ञ इन पांच यज्ञों का विधान किया है। पितृयज्ञ का अर्थ जीवित माता-पितादि की सेवा करना है। **"पूर्ववयसिपुत्राः पितर मुप जीवन्ति, उत्तरे वयसि पितरः पुत्रमुप जीवन्ति"** गोपथ ब्राह्मण में पितर शब्द जीवित के लिये है। चाणक्य ने **"जनिता चोपनोता च यस्तुविद्यां प्रयच्छति, अन्नदाता भयत्रा-तापञ्चैते पितरः स्मृताः"** ये पाँच जीवित पितर कहे हैं, गीता अध्याय १ में आचार्य पितर शब्द का प्रयोग अर्जुन ने जीवितों के लिये किया है। ब्रह्मवैवर्तपुराण ३-८ में **"विद्यादाताऽन्नदाता च त्रय माताचजन्मदः कन्यादाता च वेदोक्तानराणां पितरः स्मृताः"** जीवित पितर माने हैं। इसी प्रकार महाभारत-रामायण में भी पितर शब्द जीवित के लिए आता है। **"पितृ देवो भव मातृ देवोभव"** से जीवित माँ-बाप की सेवा का आदेश है। मरने पर **"भस्मान्तं शरीरम्"** और **"वासांसिजीर्णानियथा विहाय......"** गीता में आता है, पुराने शरीर को छोड़ कर आत्मा दूसरे नये शरीर में चला जाता है, उससे सन्बन्ध समाप्त हो गया, तो मरने के बाद **"पितर"** कैसे होगा ? वेद में **"यां मेधां देवगणा पितरः श्चोपासते"** कहा है—तो मरने के बाद बुद्धि को माँगने का क्या अर्थ है ? इससे सिद्ध है कि जीवित पितरों की सेवा करनी चाहिये। मरे हुओं के लिए कुछ करना शास्त्र विरुद्ध और बुद्धि विरुद्ध है।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

सज्जनों ! इन्होंने कहा कि जीवात्मा तुरन्त चला जाता है। किन्तु स्वामी दयानन्द जी, यजुर्वेद अध्याय ३९ मन्त्र ६ में लिखते हैं कि जीवात्मा १२ दिन में पहुंचता है। स्वामी दर्शनानन्द जी का शास्त्रार्थ मैक्समूलर के पास भेजा गया था, उसने मृतक श्राद्ध के पक्ष में निर्णय दिया था। सनातन धर्म के सिद्धान्त सच्चे हैं, उपराष्ट्रपति श्री जत्ती जी गले में शिवलिंग धारण करते हैं। आर्य समाज की शताब्दी में उनका सम्मान और भाषण हुआ, प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी रामेश्वर मन्दिर में दर्शन करने गईं। श्राद्ध के चार भाग हैं, यज्ञ, तर्पण, पिण्ड, बलि, जो ब्राह्मण ये करायेगा। उसे भोजन कराने में क्या पाप हो गया ? पंचयज्ञ हम भी मानते हैं, किन्तु उपकार करने वाले माता-पिता के लिए कुछ भी न करना नास्तिकता एवं कृतघ्नता है। सनातन धर्म कहता है जीवितों के लिए और मरने के बाद भी श्राद्ध उनके लिए करना सन्तान का कर्तव्य है।

श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री—

यज्ञ तर्पणादि कराने पर ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिये, यह आपने मानलिया कि—मृत पितरों के लिए इसका कोई लाभ नहीं, मैक्समूलर ने निर्णय दिया था कि—"**ब्राह्मणों को खिलाया हुआ पितरों को पहुंचता है यह प्रश्न ही नहीं था, श्राद्ध तो मरे हुओं की यादगार मनाने के लिए है**" मैक्समूलर ने यह नहीं लिखा कि—"**मृतक श्राद्ध वेदानुकूल है**"।

आप दुनिया को धोखा देना चाहते हैं, (यह मैक्समूलर वाला शास्त्रार्थ निर्णय के तट पर प्रथम भाग में पूरा छपा हुआ है, पाठक गण उस भाग को मँगा कर देख सकते हैं) यदि उपराष्ट्रपति के कारण आपका सनातन धर्म सत्य है तो इस्लाम आपसे भी बड़ा है चूंकि राष्ट्रपति मुसलमान हैं, जनता में हँसी······ यह तो शासन और राजनीति है। शताब्दी पर इनके भाषण कराना आर्य समाजियों की उदारता और विश्वबन्धुत्व की भावना है। यदि मरने के बाद सभी जीवात्मा पितृ लोक में नहीं हैं तो कर्मानुसार जन्म कौन लेता है? यदि पुत्र के कर्मों का फल स्वयं पुत्र को नहीं मिलता तो "**कृत हानि दोष**" होगा आपने शास्त्र पढ़े हैं, इन दोषों को हटा कर बताइये।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

ये आपकी गर्जना किन पर आधारित है? हम सब समझते हैं (बराबर में बैठे अमर स्वामी जी महाराज की तरफ इशारा करते हुए) तो भी सुनो! गुरुकुल के स्नातक तड़ितकान्त जी ने यम और पितर परिचय पुस्तक में मृतक श्राद्ध को सत्य माना है, यह पुस्तक सातवलेकर ने छपवाई थी, किये हुए कर्मों का फल दूसरे को क्यों नहीं मिलता? पिता बाग लगाता है, पुत्र फल खाता है, पिता मकान बनाता है, पुत्र सुख भोगता है, पिता के रोग पुत्र को भी लगते हैं। अनाथालय, धर्मशाला को दान देते हैं, फल अन्य लोग भोगते हैं, वेद में आता है, "**ऊर्जं वहन्तीरमृतं**" यजुर्वेद २-१४ तथा "**आयान्तुनः पितरः सोम्यासः**" यजुर्वेद १९-५८ इस प्रकार बहुत मन्त्र हैं, जिनमें पितरों को बुलाना लिखा है, आप कोई मन्त्र दिखाइये, जिसमें जीवित पितरों का जिकर हो।

श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री—

आपको आर्य समाज के दादा भीष्म श्री अमर स्वामी जी मेरे पास बैठे हुए क्यों खटक रहे हैं? जब कि तुम्हारे इर्द-गिर्द इतने विद्वान बैठे तुम्हारी मदद कर रहे हैं, पण्डित माधवाचार्य जी भी बैठे हैं। अब सुनो तड़ित कान्त की पुस्तक के खण्डन में स्वामी ब्रह्ममुनि जी ने "**यम पितर परिचय**" पुस्तक लिखी है। मैक्समूलर का महर्षि ने स्वयं खण्डन किया है। मैक्समूलर, तडितकान्त, सातवलेकर, पोंगापन्थी और खिचड़ी थे "**आधे तीतर आधे बटेर**" ये मेरे लिए प्रमाण नहीं हैं, जो मन्त्र आपने बोले हैं ये सब जीवित पितरों (माता-पितादि) को सत्कार पूर्वक बुलाने के हैं, इनमें "**आधात्त-पितरोगर्भं**" आता है। मरे हुए गर्भ नहीं धारण करते। "**गृहान्नः पितरोदत्त**" मरे हुए किसी को घर नहीं देते। खोलिये—ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त ८९ मन्त्र ९ "**पुत्रासोयत्र पितरो भवन्ति मानोमध्यारीरिषतायुर्गन्तो**" इसका अर्थ है कि जब पुत्र पितर बन जाते हैं अर्थात् जब पुत्र का पुत्र हो जाता है, वहां स्पष्ट पुत्र को "**पितर**" कहा है। मकान बनाना, बाग लगाना, ये सब जीवन प्रक्रियायें हैं, इनका फल

जीवितों को ही मिलता है। अच्छे कर्मों से दूसरों को भी सुख मिलता है। यह कर्म फल भोग नहीं है। बताइये दूसरे शरीर से निकल कर जीवात्मा आयेगा तो वह शरीर मृत हो जायेगा लौटने में विलम्ब होने पर यदि उस शरीर को जला दिया गया हो तो लौट कह पितर कहाँ जायगा ? यदि बैल-घोड़ा आदि की योनि में जन्म हो जाये तो ब्राह्मण की खाई खीर-पूड़ी से उसे क्या लाभ ? आप कहेंगे ब्राह्मण की खीर-पूड़ी, योनि के अनुसार बदल कर भोजन बन जाता हैं तो ब्राह्मण को घास-कुट्टी खिलानी चाहिये यह भी खीर-पूड़ी आदि बन कर योनि के अनुसार बदल जायेगी जनता में हंसी······। मृतक श्राद्ध के लिए आपके पास न तो कोई युक्ति है और न ही कोई प्रमाण हैं।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

मैंने कितने ही वेद मन्त्रों से मृत पितरों का बुलाना श्राद्ध करना दिखाया है। **"अग्निष्वात्त निखात"** अग्नि में जलाये गये और गाड़े हुए पितृ लोक में जाते हैं। स्वामी दयानन्द ने **"सानुगाययमाय नमः भद्रकाल्यै नमः,"** कह कर पृथ्वी पर हिस्सा धरना लिखा है। यही तो श्राद्ध है। जब, मकान, बाग, खेती, आदि कर्मों का फल दूसरों को मिलना आपने मान लिया है तो मरने के बाद माता-पिता को क्यों नहीं मिलेगा ?

श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री—

आपका **"अग्निष्वात्त"** आदि पितरों की माया सर्वथा झूठ है। अपने घर को देखो शिव पुराण रुद्र संहिता सती खण्ड में जब ब्रह्मा जी अपनी पुत्री संध्या पर आशक्त हो गये तो शिवजी ने धिक्कारा शरीर से पसीना गिरा—**"अग्निष्वात्ता पितृगणाजाता सहस्त्रांणांचतुः षष्टिरग्निष्वाक्ताः, षडशीति-सहस्त्राणित यार्वाहिषदो मुनेः"** पसीने से चौंसठ हजार **"अग्निष्वात्त"** और छयासी हजार **"र्वाहिषद"** पैदा हुए। ये पितर यदि स्थिर हैं तो आप लोगों के मां-बाप आदि का ये नाम कैसे रखते हैं। गरुड़ पुराण पूर्व खण्ड आचार काण्ड में—**"न पितुः कर्मणाफलः पितावा पुत्रकर्मणा स्वयं कृतेनगच्छन्ति स्वयं वद्धाः स्वकर्मणा"**। स्पष्ट आता है कि पिता पुत्र के तथा पुत्र पिता के कर्मों का फल नहीं भोगता। अपने घर को बिना देखे बार-बार, बाग बगीचे सुना रहे हैं। मनुस्मृति अध्याय ३ में **"अक्रोधननाः शौचपराः"** से स्पष्ट है कि जो क्रोध न करे वह पवित्र ब्रह्मचारी हैं वे पितर हैं, जिन्होंने हथियार छोड़ दिये अत्यन्त भाग्य वाले हैं। क्या ये लक्षण मरे हुओं में घटते हैं ? गरुड़ पुराण प्रेत खण्ड धर्म काण्ड में **"उदरस्थः पितातस्य वाम पार्श्वे पितामहः। प्रपितामहो दक्षिणतः पष्ठतः पिण्ड भक्षकः"** ब्राह्मण के पेट में पिता, दादा, परदादा, और पिण्ड भक्षक बैठ जाते हैं। बताइये ब्राह्मण के पेट में किधर से घुसते है ? आपको तो अवश्य मालूम होगा, जनता में हँसी··· फिर, माता, दादी, परदादी, नानी आदि क्यों नहीं घुसती ? आते हुए पितरों का पता क्यों नहीं चलता ? बताइये !

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

स्वामी दयानन्द जी ने **"सानुगाय वरुणाय नमः"** भद्र काली के लिए भाग निकाले हैं, आपने उत्तर नहीं दिया, तो आपने श्राद्ध को मान लिया। आप कहते हैं पितर आते हुए दिखाई नहीं देते। तो आप जाते हुए दिखा दीजिये, जनता में हंसी·········हम आते हुए दिखा देंगे। चन्द्र लोक के पास पितृलोक

है, वहां पितर निवास करते हैं, पुत्र श्रद्धा से उनके लिये जो कर्म करता है उसका फल उन्हें मिलता है, हमने वेद मन्त्रों से सिद्ध कर दिया है।

श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री—

"सानुगाय वरुणाय नमः" आदि पितृयज्ञ नहीं है, बलिवैश्वदेवयज्ञ (भूतयज्ञ) और अतिथि यज्ञ है, मरे हुए को देने का प्रश्न ही नहीं। महर्षि ने तो इन भागों को अतिथि के लिए देना, या अग्नि में डालना लिखा है। सत्यार्थ प्रकाश प्रथमसमुल्लास में इन्द्र, वरूण, यम, काली, सभी नाम परमेश्वर के लिखे हैं। परमात्मा के भिन्न नाम और गुण कर्म को स्मरण करना है। उन्हें अतिथि को खिलाना विधिवत अथिति पूजा है। विवाह में भी तो ईश्वर के विभिन्न नाम के मन्त्रों से आहुति देते हैं। **"तदेवाग्निस्तदादित्यः इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुः"** सभी नाम परमेश्वर के हैं, जब शरीर से जीव निकल कर जाता है, सबको पता हो जाता है। अब आप आते हुए को दिखाइये? आपके पितृ लोक का आज तक किसी को पता नहीं चला, यह कहां है? चन्द्रलोक में लोग पहुंच गये। मैंने जितने प्रश्न किये हैं आप किसी का उत्तर नहीं दे सके, बताइये—ब्राह्मण, क्षत्रियादि के घर खाकर उनके पितरों की तृप्ति आप कर देते हैं। किन्तु भंगी, चमार, हाबुड़ा धानुक, आदि के घर आप नहीं खाते उनके पितरों की तृप्ति का उपाय बताइये? जनता में चारों तरफ सन्नाटा ·· ·····पौराणिक मण्डल में खलबली ····· (पीछे बैठे श्री अमर स्वामी जी ने शास्त्री जी को कहा) कि—**"या उनके घर की खीर इनको कड़वी लगती है?"** (इस बात को प्रेमाचार्य जी ने सुन लिया) तो बोले—स्वामी जी महाराज! इनको सारी विद्या आज ही पढ़ा देना, कोई कसर बाकी न रह जावे। **अमर स्वामी जी**—मेरे पास अथाह सागर है, आपको भी आवश्यकता हो तो आ जाना। जनता में बेहद हँसी व तालियों की गड़गड़ाहट······।

श्री पण्डित प्रेमाचार्य जी शास्त्री—

(पुरानी बातों को दोहराते हुए) चमार, भंगी, आदि भी हमारे भाई हैं, सनातन धर्म उनको भी प्यार करता है, उनके घरों में संस्कार कराये जाते हैं, शास्त्रार्थ के बीच में ही·········**"एक अद्‌भुत दृश्य"**······?

अद्‌भुत दृश्य—

इसी समय एक नौजवान (जाटव) बाल्टी में दूध व दो गिलास लेकर पौराणिक मंच पर पहुंच कर बोला! आप हमें प्यार करते हैं तो ये मेरी सेवा स्वीकार करिये। तब माधवाचार्य जी ने स्वयं सत्यार्थ प्रकाश की पंक्तियां पढ़ना प्रारम्भ किया कि, चमार भंगी, चांडाल, यवन, ईसाई के हाथ से खाने का निषेध लिखा है। वह नौजवान लौटकर आया और सभी आर्य विद्वानों को दूध पिला दिया, और पण्डित माधवाचार्य जी व प्रेमाचार्य जी और पौराणिक विद्वानों ने उधर मुंह तक न किया। तब उस नौजवान ने कहा—"भाइयो! **"ये पौराणिक हमारा उद्धार नहीं कर सकते"**। हमारा उद्धार तो ऋषि दयानन्द और आर्य समाज ही कर सकता है। जनता में तालियोंकी गड़गड़ाहट ········ (पौराणिक विद्वानों का चेहरा सूख गया तथा ऐसे हो गये कि—उनको काटो तो खून नहीं)।

श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री—

यदि महर्षि दयानन्द जी की पंक्तियां सुनाकर आप दूध नहीं पीते तो सब के सामने स्वीकार करिये कि दयानन्द जी की सब बातों को आप मानते हैं। महर्षि की पंक्तियों का अर्थ है, जो मुर्दा मांस खाते हैं, तथा झूठा खाते हैं, व मलमूत्र उठाते हैं और उन्हीं हाथों से खा लेते हैं। वे चमार, भंगी हैं। ये दूध लाने वाला शुद्ध है। आर्य सदस्य है। यह चमार नहीं है। हम श्री जगजीवनराम जी को, श्री अम्बेडकर जी को चमार नहीं मानते। संस्कृत में भाषण करने वाले श्री संसद सदस्य कन्हैया लाल बालमीकि को भंगी नहीं मानते आपने मृतक श्राद्ध के खण्डन में दी गई मेरी किसी भी दलील या तर्क का उत्तर नहीं दिया। एक पिता के चार पुत्र चार भिन्न स्थानों में श्राद्ध करते हैं। पिता किस, किसका श्राद्ध ग्रहण करेगा या चारों का ? यदि दस-बीस ब्राह्मण खिलायें जावें तो पिता कैसे ग्रहण करेगा ? आपके अन्दर मेरे प्रश्नों का उत्तर देने की शक्ति नहीं है। अभी और समय होता तो मैं बताता कि श्राद्ध में अनेक प्रकार के मांस खिलाने का विधान है। जो स्पष्ट वाम मार्ग का प्रचार है।

नोट :—

इसके बाद श्री प्रेमाचार्य जी ने अपनी वही पुरानी बातों को मरी-२ सी आवाज में दोहराया, जनता पर जो दूर-२ गांवों, व शहरों से आये थे, आर्य समाज का अच्छा प्रभाव पड़ा। पौराणिक पक्ष की हार साफ नजर आ रही थी। समाज की शानदार विजय का ढ़िंढ़ोरा प्रत्येक व्यक्ति ने पीटा, जिसके परिणाम स्वरूप उसी रात्रि में पौराणिक विद्वान रातो-रात भाग गये। सुबह देखा तो सभी गायब ! खेल खतम !! पैसा हजम !!!

"संग्रहकर्त्ता"

बीसवां शास्त्रार्थ--

स्थान : **सीवनी (मध्य प्रदेश)**
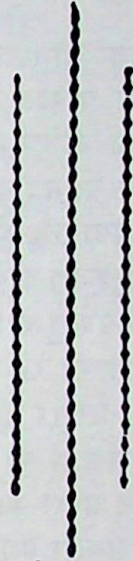
दिनांक : **२८ जून सन् १९२७ ई०**

विषय : **इलहामी किताब कौनसी है, वेद या कुरान ?**

शास्त्रार्थ कर्ता आर्य समाज की ओर से : **श्री पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी**

शास्त्रार्थं कर्ता मुसलमानों की ओर से : **श्री मौलवी खलील अहमद उर्फ बाबा खलीलदास-चतुर्वेदी**

प्रधान आर्य समाज की ओर से : **श्री दीनानाथ जी चड्ढा**

मन्त्री इस्लाम जमीअत तबलीग सिवनी : **श्री मौलवी मकबूल अहमद जी**

''सदर'' इस्लाम जमीअत तबलीग सिवनी : **श्री अब्दुर्रहब खां साहब तथा (श्री डिप्टी कमिश्नर साहब बहादुर)**

नोट :—

यह शास्त्रार्थ सामग्री ''आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ, नागपुर (महाराष्ट्र) द्वारा प्राप्त हुई। उनके हम हृदय से आभारी हैं।

''संकलन कर्ता''

शास्त्रार्थ से पहले

आर्य समाज के अधिकारियों ने हमेशा की तरह पण्डित रामचन्द्र देहलवी जी को सिवनी में बुला कर वैदिक सिद्धान्तों पर लैक्चर कराये, पण्डित जी की तकरीर को सुन कर वहाँ के मुसलमानों में भी जोश मारा, और शास्त्रार्थ की ख्वाहिश जाहिर की जिसे वहाँ के आर्य समाजियों ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। मुसलमानों ने श्री मौलवी खलील अहमद उर्फ बाबा खलील दास चतुर्वेदी को बुलवाया, जिनका मुख्य कार्य आर्य समाज व महर्षि दयानन्द को गाली देना था। जो जगह-जगह पर शास्त्रार्थ का चैलेन्ज दिया करते थे। एवं अपने को संस्कृतज्ञ होने का दावा भी करते थे। उनसे यह शास्त्रार्थ सम्बन्धी पत्राचार लगभग दो माह तक चला परन्तु वे किसी भी तरह से शास्त्रार्थ करने को सामने न आये बल्कि इधर-उधर की बातें करके डींग मारते रहे। हमारे पास इस विवरण की एक फोटो प्रति **"आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ"** नागपुर (महाराष्ट्र) द्वारा भिजवाई गई, एवं एक पत्र अलग से भेज कर इच्छा प्रकट की कि इस शास्त्रार्थ का समावेश इस ग्रन्थ में किया जावे। परन्तु पूरी कापी को पढ़ने पर पता चला कि ये तो केवल सारा का सारा पत्र व्यवहार ही है। जो लगभग पचास पन्नों में है। जिसका देना यहाँ उचित नहीं समझा गया। केवल जो थोड़ा सा भाग अन्त में जिसने शास्त्रार्थ का रूप लिया वह दिया जा रहा है। खलील दास चतुर्वेदी आदि जैसे अनेकों ऐसे व्यक्ति हुए हैं जो अपनी थोथी विद्वता से लोगों पर प्रभाव जमाते थे, परन्तु सामने आने से कि—**"कहीं पोल न खुल जावे"** कतराते थे। सिवनी में भी वही हुआ, बार-बार नियम तय किये। बार-बार उनसे पीछा छुड़वाया, आखिर आर्य समाज के अधिकारियों ने उनके ही बनाये नियमों पर शास्त्रार्थ करना मन्जूर कर लिया—तब भी क्या शास्त्रार्थ हो पाया—? स्वयं पढ़िये। यहां जो-जो मुख्य अंश हैं वही उद्धृत किये जाते हैं।

संकलनकर्ता—

"लाजपत राय अग्रवाल"

शास्त्रार्थ सम्बन्धी पत्राचार

आर्य समाज की सेवा में मुसलमानों की ओर से—

जनाब ! सदर साहब आर्य समाज सिवनी, तस्लीम !!

मुफ़स्सला जैल शरायत मुनाज़रे के मुताल्लिक हमको मन्जूर है।

१—पहला वक्त कुराने मजीद पर ऐतराज करने का होगा दूसरा वक्त वेद मुकद्दस का। २—मुनाज़िरा कल २८ जून १९२७ से शुरू कर दिया जावेगा, और मुनाज़िरा रात को ९ बजे से बारह बजे रात तक होगा। ३—एक रोज आपका और एक रोज हमारा होगा, इससे ज्यादा जितना आप चाहें। ४—एक वक्त में जानेबैन की तरफ से एक मुनाज़िर खड़ा होगा, दूसरे मुइने मुनाजिरा न होगा। ५—सदर, जलसा जनाब मोहम्मद मूर्तजाखाँ साहब होंगे। ६—जानी बैन की तरफ से पुलिस को तहरीरी इत्तला कर दी जायेगी।

"मकबूल अहमद"
सेक्रेटरी—जमीअत तबलीग़—सिवनी
२७-६-१९२७

मुसलमानों की सेवा में आर्य समाज की ओर से—

॥ ओ३म् ॥

कार्यालय— आर्य समाज, सिवनी
२७-६-२७

श्री मन्न् नमस्ते !

आपने जो शरायत श्री पण्डित हजारी लाल जी द्वारा भेजी वह प्राप्त हुई। खेद है कि हसबुल्लवादा आपने विषय का नाम नहीं लिखा, खैर ! आपकी मर्जी हमको वह भी स्वीकार है। और शरायते मुनाजिरा जो आपने भेजी है, वह आपके पहले पत्रव्यवहार के बिल्कुल भी अनुकूल नहीं है। आपने फर्माया है कि पहले हम इस्लाम पर जी भर कर ऐतराज कर लें, पीछे आप वेदों पर कर लें, इसका मतलब यह नही है कि एक दिन आप हम पर ऐतराज करें। और एक दिन हम आप पर करें। साफ मतलब आपकी चिट्ठी का यह निकलता है कि जितने दिन भी हम ऐतराज करना चाहें पहले कर लें, पीछे आपकी तरफ से उतने ही दिन तक होता रहेगा। दूसरे पाँचवी शर्त में इतना और बढ़ा दें जिनका काम सिर्फ समय को बराबर-बराबर बाँटना होगा, और शान्ती की रक्षा करना होगा, तकरीर पर राय देने का अधिकार बिल्कुल न होगा हम तेरह दिन तक कुरान पर लगातार शंका करेंगे बाद में आपकी शंकाओं का आरम्भ होगा, जो उतने ही दिन तक रहेगा।

भवदीय—
"दीनानाथ चड्ढा"
प्रधान—आर्य समाज—सिवनी
(मध्य प्रदेश)

नोट :—

इसके पीछे मुसलमानों ने नीचे वाला पत्र भेजा और कहा कि अगर आपको शास्त्रार्थ करना है तो इसके मुताबिक करना होगा। वर्ना हम यह समझ लेंगे कि आप शास्त्रार्थ नहीं करना चाहते। इस पर हमने अपनी मन्जूरी दे दी, क्योंकि दूसरी अवस्था में वह शास्त्रार्थ से भाग जाते। वे लोग वैसे भी इतने लम्बे समय से टाला-मटूली करते आ रहे थे। हमें तो जैसे-तैसे उनको घेर कर शास्त्रार्थ करना था।

आर्य समाज की सेवा में मुसलमानों की ओर से—

२८-६-२७

"बख़िदमत जनाब सदर साहब !

आर्य समाज सिवनी, तस्लीम !!

मुन्दर्जा जैल मजमून मुन्दर्जा जैल शरायत के साथ हमें मन्जूर है। मजमून यह होगा—"**कुरान पाक पर किये ऐतराजात् के जवाबात् आयाते कुरआनी और महज आयाते कुरआनी से दिये जायें, वेद पर किये गये ऐतराजात् के जवाबात् वेद मन्त्रों और महज वेद मन्त्रों से दिये जायें**"। तथा शरायत निम्न प्रकार होंगे।

शास्त्रार्थ के शरायत—

१. पहला वक्त कुरान मजीद का होगा, और दूसरा वेद मुक्कद्दस का। २. मुनाजिरा २८ जून १९२७ से शुरू होगा, और रात को ८ बजे से १२ बजे तक होगा। ३. एक रोज कुरान पाक पर ऐतराज होगा, दूसरे रोज वेद मुक्कद्दस पर। ४. एक वक्त में सिर्फ एक मुनाजिर खड़ा होगा, दूसरा मुईन मुनाजिर कोई न होगा। ५. हर रोज का मजमून जानीबैन की तरफ से कब्ल अर्ज बहस ज्यादा से ज्यादा चार बजे दिन तक बता दिया जावेगा। ६. सदर जलसा जनाब मौहम्मद मूर्तजा खां साहब होंगे। जिनके फरायज यह होंगे कि—वह वक्त को बराबर २ तकसीम करें। ज़लसे में अमन को कायम रक्खे और मजबून से बाहर जाने वाले मुनाजिर को रोक दें। ७. मुनाजिरा मजमुई हैसियत से सिर्फ २६ रोज होगा, जिसमें एक रोज कुरान पाक के लिए होगा, और दूसरा रोज वेद के लिए व अलाहाजल्तरीक। ८. मुजीब को सिर्फ तहकीकी जवाबात देने होंगे। ९. पुलिस को जानीबैन की तरफ से तहरीरी इत्तला कर दी जायेगी १०. आयाते कुरानी के तर्जुमे के लिए सिर्फ मुस्तनद व मोतबर अरबी लुगात और अरबी कवायद से मदद ली जावेगी। इसी तरह वेद मन्त्रों के तर्जुमे के लिये सिर्फ मुस्तनद और मोअतबर संस्कृत कोश और कवायद से मदद ली जावेगी। ११. कुरान पाक और चारों वेदों के अलावा किसी और किताब का हवाला पेश न किया जावेगा।

"मजकूरा बाला शर्तों में से सिर्फ चार शर्तों के अलावा शर्त नं० ६ का आखिरी टुकड़ा और शर्त नं० ७ के दिनों की तकसीम और शर्त नं० १० व ११ के अलावा तमाम शर्ते कल बतारीख २७ जून सन् १९२७ के तकरीबन दस बजे और ग्यारह बजे रात को हमारे मुहतरम बुजर्ग जनाब अब्दुल जब्बार खां साहब किब्ला और जनाब मुहम्मद मूर्तजा खां साहब किब्ला और जनाब मौलाना

मौहम्मद अली खाँ साहब किब्ला और मुझ खाकसार (मकबूल अहमद मुस्लिम मिश्नरी) और नीज सैक्रेटरी जमीयत तबलीग सिवनी के सामने ब इत्तफाक राय जानिबैन से तय पायी थी। अब आपकी हस्ब मर्जी शर्त नं० ७ के मुताल्लिक मजामीन के तअय्युब के लिए यह तहरीर रवाना करता हूं।—आपके हस्ब ख्वाहिश मैंने इस खत के अन्दर मजमून का भी जिक्र कर दिया है। सदर के फरायज से मुताल्लिक हमारी तरफ से सिर्फ इस टुकड़े का इजाफा होना चाहिये। **"मजमून से बाहर जाने वाले मनाजिर को रोक दें"** उम्मीद है कि आप इन बातों को मन्जूर फरमा कर आज वक्त मुअय्यना पर मुनाजरा शुरू कर देंगे। ताकि मजीद खतो किताबत में वक्त जाया न हो।

उम्मीद है कि आप अपनी मन्जूरी और अपने मजमून से मुत्तला फरमावेंगे—फकत !

"मक्बूल अहमद"
(मुस्लिम मिश्नरी)
सैक्रेटरी जमीअत, तबलीग—सिवनी।

२८-६-२७

मुसलमानों की सेवा में आर्य समाज की ओर से—

॥ ओ३म् ॥

श्री मन्न् नमस्ते !

आपका खत तारीख २८-६-२७ का अभी मौसूल हुआ, यह पढ़कर मालूम हुआ कि आपने बिला हमारे मश्वरे के तय शुदा शर्तों में कुछ तब्दीलियां और कुछ इजाफे कर दिये हैं। हम इसके लिए आपको फिर लिखने वाले थे लेकिन जब हमने यह देखा कि इस मुबाहिसे में हमारे मुअज्जम व मुकर्रम मेहरबान जनाब अब्दुल जब्बार खां साहिब किब्ला शामिल हैं, तो हम सिवाय छटी शर्त वाले पिछले टुकड़े के कि —**"मजमून से बाहर जाने वाले मनाजिर को रोक दें"** सब कुछ मानने को तैयार हैं, ताकि —**"किसी तरह से मुबाहिसा हो जावे"** और चार बजे तक हम अपने मजमून का नाम लिख भेंजेगें। आप शास्त्रार्थ के लिए तैयार हो जाइये।

भवदीय—
"दीनानाथ चड्ढा"
प्रधान, आर्य समाज सिवनी (म० प्र०)

उपरोक्त पत्र के उत्तर में मुसलमानों की ओर से निम्नलिखित पत्र आया—

॥ खत आर्य समाज की खिदमत में ॥

सिवनी
२८-६-२७

बखिदमत जनाब सदर साहब आर्य समाज, सिवनी तस्लीम !

बजवाब आपके खत नं० १६ मुअर्रखा २८-६-२७ बवक्त ११ बजे दिन, गुजारिश है कि, मुझे

की संख्या नियत है, नाम उनके लिखे हुए हैं, अगर कोई झगड़ा करेगा तो गिरफ्तार किया जा सकता है, दूसरे यह कि आज हमारा दिन है, हम जरूर बोलेंगे, उन्होंने कहा कि इस तरह तो मुसलमान भी कहने लगेंगे और हमारा मतलब पूरा न हो सकेगा जब उन्होंने बहुत जोर दिया तो हमने जवाब दिया कि अच्छा आप लोग, मुसलमान साहिबानों के पास जावें और खबर दें कि वह क्या कहते हैं ? इस पर वह सब चले गये और थोड़ी देर के बाद फिर तशरीफ लाये और कहा कि वह तो रजामंद हो गये हैं।

पाठकों ! वह रजामन्द क्यों न हो जाते ? जब कि यह सब कुछ ...... थी। अब आपकी रजामन्दी ही चाहिये, हमने कहा कि उस ६०० शब्दों के **Telegram** का क्या करेंगे ? जो रात ही को मुसलमानों ने भिन्न-भिन्न समाचार पत्रों को अपनी ओर से दे दिया है। **"क्या मुसमानों को ऐसा करना वाजिब था ?"** जब कि न तो शास्त्रार्थ खतम हुआ था, और न किसी न्यायाधीश (**Judge**) ने फैसला दिया था कि—**"अमुक हार गया और अमुक जीत गया"** इससे यह सिद्ध होता है कि शायद उन्हीं की तरफ से शास्त्रार्थ बन्द करने की कार्यवाही की गई हो, इस पर उन्होंने कहा कि आप चाहे सो कहें परन्तु हम यह जिम्मा लेते हैं कि, उन टेलीग्रामों को कैन्सिल करा देंगे और आपको दोनों टेलीग्रामों की नकल दे देंगे इस पर हमने उनका कहना मान लिया, रात्रि को शास्त्रार्थ के प्रधान द्वारा जनता को शास्त्रार्थ के बन्द करने की सूचना पढ़ कर सुना दी गई, लेकिन अपने वायदे के मुआफिक ६०० शब्द वाले तार की नकल आज तक नहीं दी परन्तु जिस तार से उसको कैन्सिल किया गया, वह जनाब अब्दुर्रहबखाँ साहब प्रधान खिलाफत कमेटी सिवनी के अपने दस्तखतों में हमारे पास मौजूद है, जिसकी नकल यहां दर्ज करता हूं। देखिये—

Daily Zemindar — Lahore
Daily Inquilab — Lahore
Aiaman — Delhi
Hamdam — Lucknow
Khilafat — Bombay

Stop public:t'on of telegram about Munazira in Seoni.

"*Sd = Abdurrab Khan*"

(**President Khilafat Committee**) **Seoni** (**C.P.**)

इसके पश्चात जब हमारे पण्डित इत्यादि को कुछ काम न रहा तो श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज तो एक दिन पीछे नागपुर चले आये परन्तु पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी जिनका विचार मुम्बई जाने का था वह भी ३ जुलाई को नागपुर चले गये क्योंकि वहाँ के आर्य यन्त्रालय हंसापुरी नागपुर का एक पत्र आया था कि यहाँ दो मौलवी आये हुए हैं, वह कहते हैं कि हम पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी से शास्त्रार्थ करने आये हैं, और उनको भगा कर जायेंगे, इस पर पण्डित जी ने अपने मुम्बई जाने के ख्याल को बदल दिया, जब पण्डित जी महाराज भी चले गये तो मुसलमानों ने एक नया खेल खेला कि मौलवी का जुलूस निकाला, जिससे न मालूम उनका क्या मतलब था, और जिसको शहर सिवनी के किसी भी संजीदा और समझदार लोगों ने जरा भी पसन्द नहीं किया, मेरे खयाल में तो उन्होंने अपनी जान की खैर में यह खुशी मनाई होगी क्यों कि खुदा-खुदा करके शास्त्रार्थ बन्द किया गया था, जो कि अगर जारी रहता तो इस्लाम की वह कलई खुलती कि छटी का दूध याद आ जाता।

"दीनानाथ चड्ढा" (प्रधान—आर्य समाज, सिवनी)

इक्कीसवां शास्त्रार्थ--

स्थान : **विभिन्न स्थानों पर**
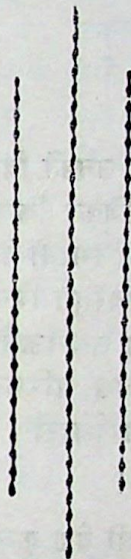
दिनांक : (**अस्सी वर्षों से भी अधिक पुराने संस्मरण**)

विषय : **विभिन्न विषयों पर**

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : **शास्त्रार्थ महारथी पूज्य पण्डित धर्म भिक्षु जी "लखनवी"**

अन्य मतावलम्बियों की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : **विभिन्न मतों के अनेकों विद्वान**

— आवश्यक द्रष्टव्य —

सज्जनों ! मैं चाहता था कि पूज्य पण्डित जी के शास्त्रार्थों का विस्तृत विवरण मिल जावे, जिसको प्रकाशित करूँ परन्तु बहुत प्रयास करने के बाद भी असफल ही रहा, इसलिए जो भी यत्र-तत्र उनके सम्बन्ध में शास्त्रार्थों के संस्मरण प्राप्त हुए उन्हीं का संग्रह देकर अपने आपको सन्तुष्ट किये लेता हूं ।

"सम्पादक"

दो शब्द

—"**सम्पादक**"

पूज्य पण्डित धर्म भिक्षु जी के बारे में, उनकी विद्वत्ता सादगी, आदि के बारे में मैं पूज्य गुरुवर श्री महात्मा अमर स्वामी जी महाराज प्रायः जिकर किया करते थे, कि—"**भाई मैंने ऐसा उद्भट विद्वान तार्किक शिरोमणि नहीं देखा**" मुसलमानों के साथ तो गजब का मुबाहिसा करते थे। मैं काफी वर्षों से उनके शास्त्रार्थों का प्रामाणिक विस्तृत विवरण प्राप्त करने की टोह में लगा हुआ था, परन्तु कहीं नहीं मिला, आर्य समाज गणेश गंज लखनऊ से पूज्य पण्डित जी का विशेष सम्बन्ध रहा है, वहाँ से सम्पर्क स्थापित किया, रजिस्ट्रर्ड पत्र लिखे, परिणाम स्वरूप विवरण भेजना तो दूर ! पत्र का उत्तर तक न मिला ! वाह रे आर्य समाज के कर्णधारो !

लखनऊ में ही कोई वृद्ध सज्जन श्री वैद्य कुन्दन लाल जी जो आलम बाग में रहते हैं, मैंने उनके दर्शन तो अभी तक नहीं किये, वह हमारे इस ग्रन्थ के सदस्य थे, मैंने उनको उपरोक्त जानकारी प्राप्त करने हेतु पत्र लिखा तो उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया, कि मैं आर्य समाज के अधिकारियों से सम्पर्क कर आपको उत्तर दूंगा। तथा पूज्य पण्डित धर्म भिक्षु जी के प्रमुख शिष्य पण्डित लालताप्रसाद जी से भी सम्पर्क करूँगा शायद उनके पास से कुछ शास्त्रार्थ सामग्री मिल जाय। मैं पत्र पाकर बहुत खुश हुआ. लगभग एक माह बाद पुनः वैद्य जी का पत्र मिला कि—"**मैं समाज के अधिकारियों से मिला, वहां कुछ सामग्री थी, परन्तु समाज के अधिकारियों के आलस्य व प्रमाद के कारण उसे दीमकों ने अपना भोजन बना लिया, अब वहाँ कुछ भी नहीं है**"। हाँ ! श्री पण्डित लालता प्रसाद जी के पास कुछ सामग्री है उन्होंने देने के लिए कुछ समय माँगा है। मैं उनसे वह सामग्री प्राप्त करके आपके पास भेजूंगा, यह सूचना पाकर जहाँ समाज के अधिकारियों पर खेद हुआ वहाँ पण्डित लालता प्रसाद जी के आश्वासन पर प्रसन्नता भी हुई। परन्तु कुछ समय बाद श्री वैद्य जी का पत्र आया कि वह मात्र कहते ही कहते हैं, ऐसा अनुमान है कि—है उनके पास भी कुछ नहीं। मुझे पता लगा कि वैद्य जी की टाँग में फ्रेक्चर है वह चारपाई पर पड़े हुए हैं। इस स्थिति में भी मैंने उनसे पुनः प्रार्थना की कि आप किसी भी तरह प्रयास करें कि वह सामग्री लालता प्रसाद जी से मिल जाय तो बड़ा भारी उपकार का काम हो ! उन्होंने पुनः लालता प्रसाद जी से सम्पर्क किया, तो वह फिर आश्वासन देकर बात को टाल गये। और आज तक उनके मात्र आश्वासन ही आश्वासन रहे। दिया एक अक्षर भी नहीं। "**ऐसे भी विद्वान आर्य जगत में मौजूद हैं**" अन्त में श्री वैद्य जी का पत्र आया कि—"**अब मुझे पूर्ण निश्चय हो गया है कि पण्डित लालता प्रसाद जी के पास भी कुछ है नहीं, वह व्यर्थ में ही झूठ बोलते हैं**"। अतः मैं क्षमा चाहता हूं, कि प्रयास करने के बावजूद भी आपकी समस्या का समाधान नहीं कर

पाया हूं ।।इति शम् ।।

इस पत्र के पाते ही में निराशा में खो गया, मैंने पूज्य पण्डित धर्म भिक्षु जी की पत्नी "**श्री मति सुभद्रा आर्या**" जी को इलाहाबाद पत्र लिखा, और सारा वृतान्त कहा । उन्होंने भी यही कहा कि—वहाँ कोई सामग्री किसी के भी पास नहीं है । आप पण्डित जी के विषय में अगर कुछ जानकारी चाहते हैं तो अमर स्वामी जो महाराज से जानकारी हासिल करें । पूज्य स्वामी जी ने अपनी स्मृति के आधार पर कुछ लिखवाया, उनका कहना था कि—अगर किसी शास्त्रार्थ का पूर्ण विवरण मिल जाये तो वह बड़े काम की चीज होगी । तथा श्री मति सुभद्रा आर्या जी ने यह भी सुझाव दिया कि मैंने पूज्य पण्डित (धर्म भिक्षु) जी का जीवन चरित्र प्रकाशित किया है । उसमें मुझे जो भी पूज्य पण्डित जी के शास्त्रार्थों की जानकारी मिल सकी है, उसे आप ले सकते हैं । यह जीवन-चरित्र पूज्य अमर स्वामी जी के पास मौजूद था । अन्त में पूज्य स्वामी जी के निश्चयानुसार ही अन्य कोई सामग्री न मिलने के कारण उस जीवन चरित्र में छपे संस्मरणों को ही क्रमवद्ध करके यहाँ उद्धृत किया जाता है । इसी बीच श्री पण्डित मेधावी जी शास्त्री जो हुसैन गंज (लखनऊ) में ही रहते हैं, उनके सुपुत्र श्री अखिलेश कुमार जी से सम्पर्क हुआ, उनको भी यह सब वृतान्त बताया गया, उन्होंने कहा कि मैं जाकर तलाश करूँगा तथा सम्बन्धित अधिकारियों से भी मिलूंगा । अन्त में उन्होंने भी श्री वैद्य जी वाला ही निर्णय दिया । श्री अखिलेश जी बड़े ही उत्साही लगनशील कट्टर आर्य नवयुवक हैं, मेरी शुभ कामनाएँ उनके साथ हैं ।

मैं श्री पण्डित लालता प्रसाद जी से अब भी निवेदन करता हूं कि अगर वास्तव में उनके पास पूज्य पण्डित धर्म भिक्षु जी से सम्बन्धित कोई शास्त्रार्थ सामग्री हो तो वह अवश्य भेजें, मैं उनका आभार प्रकट करते हुए उन्हीं के नाम से प्रकाशित करा दूंगा । इससे वह बहुत ही यश व पुण्य के भागी बनेंगे । अन्यथा जो भी उनके इस क्रिया कलाप को पढ़ेगा वह उनको सिवाय अपयश के और कुछ न दे पायेगा ! और अधिक क्या लिखूं ? माननीय श्री वैद्य कुन्दन लाल जी (आलम बाग) लखनऊ निवासी का मैं हृदय से आभारी हूं । जिन्होंने उस रुग्णावस्था में भी इस कार्य के लिए कष्ट उठा कर प्रयास किया । "**कर्म करना मनुष्य के आधीन है, फल परमात्मा के आधीन**" इसलिए वह अवश्य ही धन्यवाद के पात्र हैं ।

निवेदक—

"लाजपतराय अग्रवाल"

श्री पण्डित धर्म भिक्षु जी वाले शास्त्रार्थों के संस्मरण प्रारम्भ

—"पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ"

बदायूं (उत्तर प्रदेश) में शास्त्रार्थ—

बदायूं में मुसलमानों ने आर्य समाज को चैलेन्ज किया, बदायूं के आर्य समाजियों को मैंने श्री पण्डित धर्म भिक्षु जी को बुलाने की सलाह दी, मुझ पर और श्री बलदेब प्रसाद "सोजन" पर प्रतिबन्ध लगा रखा था, हम दोनों बदायूं नहीं जा सकते थे, पण्डित जी को प्रमाण आदि छाँटने की सहायता के लिये गवर्नमेण्ट हाई स्कूल के संस्कृताध्यापक पण्डित रामचन्द्र शास्त्री को मैंने नियुक्त कर दिया, म्युनिसिपल बोर्ड के सामने वाले मैदानों में दोनों पक्षों का शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ, बदायूं मुसलमानों का गढ़ है, इसलिये बड़े-बड़े २३ मौलवी एकत्रित थे। जिनमें हबीबुर्रहमान शास्त्री, (प्रोफेसर अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय) भी विद्यमान थे। शास्त्रार्थ करने के लिये पंजाब का एक कादयानी मौलवी आया था, यह भी संस्कृतज्ञ था, मेरी ही सम्मति से शेखपुर के रईस खान बहादुर मैकू मियां शास्त्रार्थ के अध्यक्ष बनाये गये, शास्त्रार्थ का विषय था—**"ईश्वरीय पुस्तक वेद है या कुरान शरीफ ?"** मौलवी साहब ने ऋग्वेद का वह सूक्त प्रस्तुत किया, जिसका ऋषि जाल बध्य मतस्य है और हँसी उड़ाते हुए कहा कि—वेद के पैगम्बर मछलियां भी थीं। खुदा का आदेश मछलियों पर आया। पण्डित धर्म भिक्षु जी ने उत्तर में कहा कि—मतस्य ऋषि का नाम था जैसे एक पैगम्बर थे, **"अबूहुरेरा"** तो यह उनका नाम था, न कि वह बिलौटे थे। इस पर मौलवी साहब ने कहा कि—यह गलत है, काफी विवाद होने पर अध्यक्ष महोदय ने म्युनिस्पल बोर्ड की लाइब्रेरी से अर्बी लुगत (कोष) को लाने की आज्ञा दी, अध्यक्ष महोदय म्युनिस्पल कमेटी के चेयरमैन थे, अरबी कोष आया, अध्यक्ष महोदय ने देखा कि उस कोष में **"हुरैरा"** का अर्थ बिल्ली लिखा हुआ था। इस पर अध्यक्ष महोदय ने मौलवी साहब से कहा कि जनता से क्षमा मांगिये, आपने जनता का इतना समय व्यर्थ में बर्बाद किया है। मौलवी साहब ने क्षमा मांगी। शास्त्रार्थ समाप्त हुआ, रात को मैकू मियां साहब ने सभी मौलवियों को घर पर बुला कर कहा कि - मुसलमानों का रुपया मुफ्त में ही खाते हो। एक जरा से कायस्थ के छोकरे ने सब के होशोहवास उड़ा दिये। (अध्यक्ष महोदय से किसी वकील ने पहले ही बता दिया था कि पण्डित जी कायस्थ हैं) अगर कल भी शास्त्रार्थ में यही स्थिति रही तो मैं शुद्ध हो जाऊँगा या शास्त्रार्थ बन्द करो। पण्डित जी की लच्छेदार उर्दू पर अध्यक्ष महोदय मुग्ध थे। पंजाब से आया हुआ मौलवी इतनी अच्छी उर्दू नहीं बोल सकता था, अब शास्त्रार्थ कैसे बन्द हो? यह प्रश्न था, तब शहर कोतवाल ने जो कि मुसलमान थे, कहा कि मैं बन्द करा दूंगा। अगले दिन जब दोनों पक्ष आमने-सामने डटे तो कोतवाल साहब ने आकर कहा कि आप दोनों हिन्दू और मुसलमान इस जगह को खाली कर दें, क्योंकि इस जमीन के मालिक ने आपको यह जमीन एक दिन के लिये किराये पर दी थी, आज उसने यह जमीन तमाशे वालों को दे दी है। इस प्रकार मुसलमानों का पीछा छूटा !

बदायूं में ही एक अन्य उत्सव पर—

पण्डित जी को उत्सव पर बुलाया गया, इस समय मुझ (बिहारी लाल शास्त्री) पर से सभी पाबन्दी हट गयी थी, इसलिये मैं भी उस उत्सव में उपस्थित था, मौलबी इदरीस अहमद खाँ जो बड़े मिलनसार थे, शंका समाधान करने को आये थे। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश पढ़कर सुनाया कि जो रोजाना हवन नहीं करता वह पापी है और हवन में एक आहुति ६ माशे की होनी चाहिये अब बताओ कौन सा आर्य समाजी है जो रोजाना ८-६ तोले घी की आहुति आग में लगाता हो? अगर नहीं लगाता तो वह पापी है। सभी मुसलमान इतना सुनते ही खुशी से फूल उठे। पण्डित धर्म भिक्षु जी ने कहा कि—सत्यार्थ प्रकाश का एक शब्द आप छोड़ गये, यहाँ लिखा है कि "**घृतादि**" 'केवल घी नहीं। मौलवी साहब ने कहा कि "**आदि**" से मतलब? पण्डित जी ने कहा आदि माने वगैरा यानी घी के अलावा यह चीजें, सुनिये—अब पण्डित जी ने शतपथ ब्राह्मण की श्रुतियां बोलनी शुरू कर दो, जिसमें महाराजा जनक और महर्षि याज्ञवक्ल्य का संवाद है। महाराज जनक पूछते हैं—"**वेत्सि अग्निहोत्रं याज्ञवल्क्य?**" अर्थात् क्या याज्ञवल्क्य अग्निहोत्र जानते हो? "**किम अग्निहोत्रं?**" अर्थात् अग्निहोत्र क्या है? "**वेदभि सम्राड्‌य इति सहोवाचं पयं इति**" अर्थात् हे सम्राट मैं अग्नि होत्र को जानता हूं। दूद्भ अग्निहोत्र है अर्थात् जब दूध से घी बनेगा तब अग्निहोत्र होगा महाराज जनक ने कहा—"**मुनिवर याज्ञवल्क्य! यदि पयो न स्यात् केन जुह्या इति**" अर्थात् यदि दूध न हो तो हवन किस प्रकार करोगे? महर्षि याज्ञवल्क्य जी वोले—"**ब्रीहि यास्याम् जुह्यामः इति,**" अर्थात् गेहूं और जौ से हवन कर देंगे, राजा ने कहा—"**यदि ब्रीहि यवौ न स्याताम् केसजुह्याः? इति**" अर्थात् यदि गेहूं व जौ न हों तो कैसे हवन करोगे? याज्ञवल्क्य जी ने उत्तर दिया—"**आरण्य कैः औषधभि जुह्याम्**" अर्थात् जंगल की जड़ो बूटियों से हवन कर देंगे, जनक बोले—"**यद्यं अरण्यानि न जुह्याति**" अर्थात् जंगल की जड़ी बूटियां न हों तो हवन काहे से करोगे? याज्ञवल्क्य जी ने कहा—"**समिद्‌भि, जुह्यामः इति**" अर्थात् समिधा से हवन कर देंगे, इस पर राजा जनक बोले—"**यदि समिधा न स्युः केन जुहयाति**" यदि समिधा भी न मिले तो,! याज्ञवल्क्य जी ने कहा—"**जलद्‌भिः जुहुयामः**" जल से हवन कर देंगे, इस पर जनक बोले—"**यद्यापो न स्युः केन जुहयात**" यदि जल न हो तो हवन काहे से करोगे? याज्ञवल्क्य ने कहा "**सत्येन श्रद्धायाम् जुहयाम.**" सत्य से श्रद्धा में हवन कर देंगे। अतः मौलवी साहब! पता चला कि—हवन इस भावना को बनाने के लिए किया जाता है कि मनुष्य दूसरों के लिए त्याग करना सीखें, पण्डित जी का समाधान सुन कर हिन्दू तो खुशी से उछल पड़े। मौलवी साहब खुश्क हँसी हँसते रहे। सभा के बाद आकर मौलवी साहब ने पण्डित जी से हाथ मिलाया और कहा कि—आपने सत्यार्थ प्रकाश के "**आदि**" शब्द की खूब व्याख्या की।

लखनऊ (डालीगंज) में शास्त्रार्थ—

आर्य समाज डालीगंज के उत्सव पर मुसलमानों से शास्त्रार्थ था। प्रधान मैं (बिहारी लाल शास्त्री) ही था, शास्त्रार्थ के मध्य मौलवी साहब ने पूछा कि—सनातन धर्मी कहते हैं कि वेद का जहूर ब्रह्मा जी से हुआ और आप कहते हैं कि—अग्नि, आदित्य, वायु, और अंगिरा से। तो पहले आप यह तय करिये कि वेद का इलहाम हुआ किस पर? आप दोनों ही पक्ष, वेदों के दावेदार होते हुए भी यह पता नहीं लगा सके कि वेद का इलहाम किस पर हुआ? पण्डित जी ने तत्काल उत्तर दिया कि—

हम दोनों की बात सही है, आपके समझने में फेर है। सनातन धर्मी पहिली सृष्टि की बात कहते हैं, ब्रह्मा नाम है सृष्टि रचने वाले भगवान का, उसी भगवान ने वेदों का प्रकाश किया। हम दूसरे स्टेज की बात कहते हैं—अग्नि, आदित्य, वायु, अङ्गिरा ने वेदों का प्रकाश मनुष्यों में किया। इस उत्तर को सुनते ही सनातन धर्मी हर्ष से मुग्ध होकर पण्डित जी की जय बोल उठे। आगे एक-दो प्रश्न और हुए, पण्डित जी के उत्तरों से मौलवी साहब निस्तेज हो गये। और मुसलमानों को बड़ी उदासीनता हुई।

गोरखपुर में शास्त्रार्थ —

गोरखपुर के उत्सव पर पण्डित धर्म भिक्षु जी भी थे, तथा मैं (बिहारी लाल शास्त्री) भी था, कलकत्ते वाले पण्डित अयोध्या प्रसाद जो भी उस उत्सव में पधारे थे। पण्डित अयोध्या प्रसाद जी बहुत योग्य थे परन्तु आजकल कुछ बहकी-बहकी सी बातें करने लगे थे, बहाई मत की प्रशंसा करते थे, पण्डित धर्म भिक्षु जी भला कब इन बातों को सह सकते थे ? बहाई मत सम्प्रदाय मुसलमानों का एक फ़िरका है। पण्डित धर्म भिक्षु जी ने पण्डित अयोध्या प्रसाद जी के व्याख्यान का खण्डन कर डाला, पण्डित अयोध्या प्रसाद जी ने उनके खण्डन करने पर बुरा नहीं माना बल्कि हँसते ही रहे। अगले दिन प्रातः काल मुसलमानों से शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ, मौलवी साहब का कहना था कि ईश्वर का जाति नाम "**अल्लाह**" है और पण्डित जी का पक्ष था कि उसका निज नाम "**ओ३म्**" है। शास्त्रार्थ चलता रहा, इसी बीच पण्डित धर्म भिक्षु जी ने दलील दी कि खुदा का जाति नाम वही हो सकता है जो बोलने में सुगम हो। जिसको बच्चे और हर देश के व्यक्ति बोल सकें, "ओ३म्" नाम सरल है और सब देश के बोलने वालों के लिए एक सा है। अल्ला नाम तो ऐसा है कि—चिराग के सामने बैठ कर अल्ला कहो तो चिराग बुझ जायेगा ! पैदा होने वाले बच्चे चाहे जिस मजहब के हों अपने रोने में ओ३म् की ध्वनि बोलते हैं मैंने मन्त्री आर्य समाज ठाकुर मिश्रीलाल से सोड़ा लैमन की एक बोतल मँगवायी और गिलास में डलवा कर मौलवी साहब के सामने पेश करा दी। मौलवी साहब ने शुक्रिया कहते हुए चढ़ा गये। सोडा पीते ही जो मौलवी साहब को डकार आई तो ओंकार की ध्वनि उसमें मिली हुई थी। मैंने कहा—मौलवी साहब ! आपके मुंह से "**ओ३म्**" क्यों निकला ? आपके मुंह से "**अल्ला**" क्यों नही निकला ? सब लोग हँस पड़े। शास्त्रार्थ समाप्त हुआ सब लोग हँसते-हँसते अपने-अपने घरों को चले गये।

लखनऊ (अमीनाबाद) में शास्त्रार्थ —

शास्त्रार्थ करने वाले मौलवी साहब बड़े ही अभिमानी थे, पण्डित जी से उन्होंने पूछा कि—पुनर्जन्म की बातें कुछ तो याद रहनी ही चाहिये। परन्तु एक भी बात याद नहीं रहती, इसलिये पुनर्जन्म का मानना गलत है। पण्डित जी ने उत्तर दिया कि—यदि पुनर्जन्म की बातें याद रहें तो वैर-विरोध और झगड़े बराबर चालू रहें, कभी समाप्त ही न हों। इसलिए एक जन्म के कार्य व्यवहार, वैर, विरोध, मोह, सब को भुला दिया जाता है। हाँ ! संस्कार अगले जन्म तक अवश्य जाते हैं और योगियों को याद भी रहता है। जैसा कि गीता में श्री कृष्ण भगवान ने कहा है—"**बहूनि में व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जु नः, तान्यहम् वेद्भि सर्वाणित्वम् न वेत्सि परंतपः**" अर्थात्—हे अर्जु न ! मेरे और तेरे

बहुत से जन्म बीत चुके हैं, मैं उन सबको जानता हूं। किन्तु हे शत्रु नाशक ! तू नहीं जानता। इस पर मौलवी साहब ने कहा कि—थोड़े बहुत योगी तो आप भी होंगे ही, आपको एक आध बात तो याद होगी ही। इस पर पण्डित जी ने कहा—हां ! एक बात याद है, "**पिछले जन्म में मैं आपका बाप था**" आप छोटे से थे और खांसी आ रही थी, आप रेवड़ियां खाने के लिए मचलने लगे तब मैंने तुम्हारे कान उमेठे थे, अपनी अम्मा से पूछ लेना, इतना सुनते ही मौलवी आपे से ब़ाहर हो गया, और एक दम गुस्से से बोला—तुम मेरी लुगाई थे, और मैं तुम्हारा खसम था, मैंने तुम्हें कई बार पीटा भी था। इस पर पण्डित जी ने कहा कि—भाइयो ? मौलवी साहब को पिछले जन्म की बात याद आ गई है, पुनर्जन्म सिद्ध हो गया। बस फिर क्या था ? चारों तरफ………तालियाँ ही तालियां………मुसलमान भाई मौलवी साहब पर कुड़कुड़ाने लगे, मौलवी साहिब का सारा अभिमान धरा का धरा ही रह गया, और चेहरा तो मौलवी साहब का देखने लायक था।

बाराबंकी में शास्त्रार्थ —

आर्य समाज बाराबंकी का उत्सव था उसमें शंकासमाधान का समय भी रखा गया था, उस उत्सव में वहां की समाज ने श्री पण्डित धर्म भिक्षु जी को भी बुलाया हुआ था। इसमें शंका समाधान के समय आर्य समाज की ओर से श्री पण्डित धर्म भिक्षु जी को नियुक्त किया गया। और मुसलमानों की ओर से मौलाना सज्जाद हुसैन साहब नियुक्त किये गये। यह शास्त्रार्थ धनोखर ताल जिला बाराबंकी शहर में हुआ था। जिसमें मुसलमानों की बड़ी जबरदस्त हार हुई। पण्डित जी ने मौलाना से पूछा कि आपका कलमा (गुरु मन्त्र) क्या है ? मौलाना ने उत्तर दिया कि—मेरा कलमा "**लाइलाह इल्लल्लाह मौहम्मद रसूलल्लाह**" है। तब पण्डित जी ने कहा कि—क्या यह कलमा किसी स्थान पर कुरान शरीफ में भी मौजूद है ? तब मौलवी साहब ने उत्तर दिया कि—क्यों नहीं है ? तब पण्डित जी ने खड़े होकर कहा कि—"**अगर मौलवी साहब सारे कुरान में किसी एक भी स्थान पर यह कलमा दिखा देंगे तो मैं अभी मुसलमान हो जाऊँगा**" तब मौलाना साहब और मुसलमान लोग कुरान में बड़े ध्यान से कलमे को खोजने लगे। ……श्रोताओं में चारों तरफ सन्नाटा छा गया……थोड़ी देर के बाद जब कहीं भी नहीं मिला तो मुसलमान भाई अत्यन्त लज्जित हुए और कहने लगे कि—आपको फिर कभी इसका उत्तर दिया जायेगा, और मैदान छोड़ कर उठ खड़े हुए।

(श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री, काव्यतीर्थ जी के सौजन्य से प्राप्त)

नोट :—

इसी प्रकार के अनेकों जगह श्री पण्डित धर्म भिक्षु जी ने शास्त्रार्थ किये, और विपक्षियों का मुंह मोड़ कर रख दिया एक वाकया पूज्य अमर स्वामी जी महाराज ने सुनाया जो इस प्रकार था—

दिल्ली (जामा मस्जिद) पर शास्त्रार्थ—

एक बार किसी मौलवी के साथ श्री पण्डित धर्म भिक्षु जी का शास्त्रार्थ "**नियोग**" विषय पर हो रहा था, मौलवी बहुत ही मुंह फट था, बहुत ही गन्दे-गन्दे अल्फ़ाज बोल-बोल कर मुसलमानों को

खुश कर रहा था। मौलवी ने किसी बात पर कहा कि—नियोग प्रथा भी कोई प्रथा हैं ? आज यहां सिक्का बिठवाया ! कल दूसरी जगह जा बिठवाया !! मुसलमान लोग इस प्रकार की बातें सुन-सुन कर खिले ही खिले जा रहे थे, श्री पण्डित जी ने नहले का जवाब दहले से देना आरम्भ किया—और इस बात का उत्तर दिया कि—"**मुता और हलाला**" की व्याख्या करते हुए कहा कि—आज यहां चांदमारी कराई, कल कहीं और जा कराई, फिर वहां जा कराई······इतना कह ही रहे थे कि मुसलमान लोग अपना बोरिया बिस्तर समेट कर भागते नजर आये।

मुझे इस प्रकार के रोचक संस्मरण पूज्य स्वामी जी महाराज ने काफी संग्रहीत करा दिये थे। इन सबको इस शास्त्रार्थ शृङ्खला की कड़ी के चौथे भाग के अन्त में देने का प्रयास किया जावेगा। अन्य भी शास्त्रार्थ महारथियों के रोचक संस्मरण हमारे पास संग्रहीत हैं। अब यह पूज्य श्री पण्डित धर्म भिक्षु जी के शास्त्रार्थ संस्मरणों का विवरण समाप्त होता है। जो बहुत ही संक्षेप में जितना प्राप्त हुआ था उतना प्रकाशित कर दिया गया है। इतिशम् ।।

विदुषामनुचर :—

"लाजपतराय अग्रवाल"

बाइसवां शास्त्रार्थ--

स्थान : **सहिलामऊ (मलिहाबाद) लखनऊ**
(न्यायालय मुन्सिफ मजिस्ट्रेट लखनऊ)

दिनाङ्क : **३० अक्टूबर सन् १९७९ ई०**

विषय : **जानवरों की कुर्बानी कुरान के विरुद्ध है या नहीं ?**

जानवरों की कुर्बानी के पक्ष में (प्रतिवादी गण) : **१-सर्व श्री शमशाद हुसैन, २-फारूख अली, ३-मौहम्मद जान, ४-युसुफ, ५-सतहर अली, ६-अब्बास अली, ७-सैय्यद अली, ८-मौहम्मद रफी कुद्दीन, (सभी सहिलामऊ ग्राम निवासी)**

जानवरों की कुर्बानी के विपक्ष में (वादी गण) : **१-सर्व श्री राम आसरे (ग्राम प्रधान), २-सुदधा लाल, ३-मदारू, ४-राम भरोसे, ५-काली चरण, ६-राम रतन, ७-ब्रज मोहन, ८-मुन्ना लाल, ९-बसुदेव, १०-महन्त विद्याधर दास, (सभी-सहिलामऊ ग्राम निवासी)**

निर्णायक : **१ श्री एस० पी० शुक्ला (षष्ठम अतिरिक्त मुन्सिफ मजिस्ट्रेट) लखनऊ**
२—श्री आर० सी० देव शर्मा जज हाईकोर्ट इलाहाबाद (लखनऊ ब्रांच)

निर्णायक : **श्री एस०पी० शुक्ला (मुन्सिफ मजिस्ट्रेट) लखनऊ**

अधिवक्ता वादी गण की ओर से : **१—श्री वेद प्रकाश एडवोकेट**
२—रेवती रमन एडवोकेट (लखतऊ)

अधिवक्ता प्रतिवादी गण की ओर से : **१—श्री जैड० जिलानी, लखनऊ,**
२—आरिफ खान, एडवोकेट
३—एच० एन० तिलहारी एडवोकेट

विशेष सहयोगी : **१--सर्व श्री कैलाश नाथ सिंह (प्रधान) २— मन मोहन जी तिवारी (मन्त्री) आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश)**

अन्य सरकारी अधिकारी गण : **१—सर्व श्री डिप्टी कमिश्नर (उत्तर प्रदेश सरकार)**
२ योगेन्द्र नारायण जी डिप्टी कमिश्नर (लखनऊ)
३—परगना अधिकारी, मलिहाबाद (लखनऊ), ४—सर्किल आफिसर, पुलिस सर्किल, मलिहाबाद (लखनऊ)
५—इन्चार्ज, पुलिस थाना, मलिहाबाद (लखनऊ)

नोट :—

यह विवरण महर्षि दयानन्द सरस्वती के निर्वाण शताब्दी के अवसर पर, नगर आर्य समाज गंगा प्रसाद रोड (रकाबगंज) लखनऊ द्वारा सन् १९८३ ई० में प्रकाशित हो चुका था, जिसकी प्रति हमें किन्हीं सज्जन ने भेज कर आग्रह किया कि इस शास्त्रार्थ शृंखला के अन्तर्गत यह सामग्री भी सुरक्षित होनी चाहिये ! हमने इसको उपयोगी समझते हुए प्रकाशित करा दिया है। **"सम्पादक"**

अन्तर अवलोकन

एक ज्वलंत प्रश्न है कि क्या पशुओं की कुर्बानी किसी भी मजहब में, विशेषकर इस्लाम में, अनिवार्य है ? इतिहास समय-समय पर और विद्वद्जन अपने मत एवं नीति अनुसार इसका उत्तर देते रहे हैं। धर्म निरपेक्षता धर्म विरोध नहीं मजहबी असहिष्णुता का विरोध है—असहनशीलता का निराकरण है।

इस्लाम के ही अनुयायी शहंशाह के राज्यकाल में गोवध बन्दी के फरमान मिलते हैं। और इसी देश में कुर्बानी के इसी सवाल को लेकर जाने कितने मजहबी झगड़े हुए हैं, निरीह मानव रक्त बहा है, जब कि सभी धर्म-मजहब प्यार और दया का सन्देश देते हैं।

आज के युग की एक विशेषता है कि प्रायः हर मजहब अपने को विज्ञानसम्मत मानता है, तर्क संगत मानता है और किसी न किसी रूप में हठवादिता, अंधविश्वास एवं रूढ़िग्रस्ता का विरोध करता है, देश के अनेक स्थलों पर पशुओं के विरुद्ध निर्दयता को रोकने के लिए मान्यता प्राप्त संस्थाएं हैं, कानून भी है।

विद्वान मुंसिफ द्वारा घोषित निर्णय सार्वजनिक महत्व का है—एक तर्क पूर्ण मीमांसा, एक विधि विशेषज्ञ द्वारा की गयी विवेचना से सभी को अवगत होना चाहिए—एतदर्थं इस निर्णय का ज्यों का त्यों प्रकाशन बिना किसी टिप्पणी के आपके सम्मुख प्रस्तुत है।

नगर आर्य समाज के उपमंत्री **"श्री रेवती रमन रस्तोगी, एडवोकेट"** ६५, राजा बाजार, लखनऊ व इसी समाज के भूतपूर्व मंत्री **"श्री वेद प्रकाश, एडवोकेट"**, सुभाष मार्ग लखनऊ ने इस मुकदमे को जिस योग्यता व निष्ठा से लड़ा है—वह प्रशंसनीय है।

प्रकाशन में हम आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश के प्रधान **"श्री कैलाश नाथ सिंह"** तथा आर्य समाज (गणेशगंज) लखनऊ के मन्त्री **"श्री मनमोहन जी तिवारी"** से जो प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है—उसके लिये हम उनके कृतज्ञ हैं। एवं बधाई के पात्र सभी ग्राम सहिलामऊ निवासी हैं जिनकी बदौलत यह प्रश्न निर्णीत हो सका है।

निवेदक—
"कुंवर शान्ति प्रकाश"
(मंत्री)
नगर आर्य समाज, लखनऊ

दिनांक
४-११-१९८३
निर्वाण दिवस

न्यायालय श्रीमान षष्टम् अतिरिक्त मुन्सिफ मजिस्ट्रेट, लखनऊ।
उपस्थितः—श्री एस० पी० शुक्ल, पी० सी० एस० (जे)
मूलवाद संख्या—२६२/७६

संस्थित दिनांक ३० अक्टूबर सन् १९७६

निवासी ग्राम सहिलामऊ, परगना व तहसील मलिहाबाद जिला लखनऊ
(वादीगण)

१. श्री रामआसरे ग्राम प्रधान, आयु लगभग ५५ वर्ष पुत्र बिन्दा प्रसाद।
२. श्री सुदधालाल आयु लगभग ५० वर्ष पुत्र श्री उधोलाल।
३. श्री मदारू आयु लगभग ५२ वर्ष पुत्र श्री भिलई।
४. श्री राम भरोसे आयु लगभग ५० वर्ष पुत्र सरजू प्रसाद।
५. श्री कालीचरन आयु लगभग ४० वर्ष पुत्र श्री परमेश्वरदीन।
६. श्री रामरतन आयु लगभग ५१ वर्ष पुत्र श्री अयोध्या।
७. श्री ब्रज मोहन आयु लगभग ३६ वर्ष पुत्र श्री गुर प्रसाद।
८. श्री बसुदेव आयु लगभग ५६ वर्ष पुत्र श्री ललइ।
९. श्री मुन्नालाल आयु लगभग ३२ वर्ष पुत्र श्री मैकू।

बनाम

निबासी ग्राम सहिलामऊ थाना, परगना व तहसील मलिहाबाद, जिला लखनऊ।
(प्रतिवादीगण)

१. श्री शमशाद हुसैन आयु लगभग ३६ वर्ष पुत्र श्री शाकिर अली।
२. श्री फारूक आयु लगभग ३२ वर्ष पुत्र श्री अन्वार अली।
३. मोहम्मद जान आयु लगभग ४५ वर्ष पुत्र श्री नवाब अली।
४. श्री यूसुफ आयु लगभग ३२ वर्ष पुत्र श्री मोहम्मद जान।
५. श्री अतहर अली आयु लगभग ४० वर्ष पुत्र श्री अब्बास।
६. श्री अब्बास आयु ६० वर्ष पुत्र श्री मुराद इलाही।
७. श्री सैयद अली आयु लगभग ७० वर्ष पुत्र श्री इलाही।

सरकारी अधिकारीगण—

८. उत्तर प्रदेश द्वारा डिप्टी कमिश्नर, लखनऊ।
९. श्री योगेन्द्र नारायण जी डिप्टी कमिश्नर लखनऊ।

१०. श्री परगना अधिकारी महोदय, मलिहाबाद, लखनऊ।
११. सर्किल आफिसर, पुलिस सर्किल मलिहाबाद, लखनऊ।
१२. इन्चार्ज पुलिस थाना मलिहाबाद, लखनऊ।

वाद स्थाई व्यादेश

वाद के निर्णय की नकल कापी––

वर्तमान वाद ! वादी ने प्रतिवादीगण द्वारा की जाने वाली कुर्बानी को प्रतिबन्धित करने के लिए दायर किया है। वादीगण के कथनानुसार वादीगण ग्राम सहिलामऊ, परगना मलिहाबाद जिला लखनऊ के स्थाई निवासी हैं। उक्त ग्राम में कभी भी ईद बकरीद के अवसर पर मुसलमानों द्वारा गाय भैंसों की कुर्बानी नहीं दी जाती रही है, परन्तु कुछ मुसलमानों ने हिन्दुओं की भावना को कष्ट पहुंचानें के लिए तथा साम्प्रदायिक तनाव बढ़ाने के लिए और दंगाफसाद करने की नियत से दिनांक १-११-७९ को भैंसों की कुर्बानी करनी चाही और इसके लिए इन लोगों ने रविवार के दिन वादीगण को बुलाकर आपस में भैंसों की कुर्बानी के बाबत बात-चीत की, तब उन्हें वादीगण ने समझाया कि इस गांव में कभी भी भैंसों की कुर्बानी नहीं हुई और उन्हें ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए जिससे परस्पर वैमनस्य और विद्वेष की भावना बढ़े। इस पर प्रतिवादीगण ने बताया कि उन्होंने प्रतिवादी नं. १०, ११ व १२ से कुर्बानी करने की अनुमति ले ली है और प्रतिवादी नं. १ के स्थान पर कुर्बानी अवश्य करेंगे। प्रतिवादीगण नं० १ से ७ के इस प्रकार कुर्बानी करने से ग्राम सहिलामऊ में लोक, व्यवस्था तथा लोकशांति भंग हो सकती है और साम्प्रदायिक तनाव बढ़ सकता है। प्रतिवादी गण का यह कार्य भैंसों की कुर्बानी करना नैतिकता एवं जन स्वास्थ्य के विपरीत है, क्योंकि इससे गंदगी एवं न्यूसेन्स उत्पन्न होगी, साथ ही पशुवध नियमों का उल्लंघन भी होगा। यह कुर्बानी धार्मिक दृष्टि से अनिवार्य नहीं है और न धर्म की परिधि में आता है। दिनांक ३-२-७९ को भैंसों की कुर्बानी न करने के एवज में प्रतिवादीगण ने वादीगण के कथन को अंशत: स्वीकार कर लिया। बाद का कारण दिनांक २८-१०-७९ को उत्पन्न हुआ और वर्तमान न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत है। वादीगण को ग्राम सहिलामऊ में प्रतिवादीगण द्वारा दी जाने वाली नई व अभूतपूर्व कुर्बानियों को रोकने का अधिकार है और उक्त अधिकार का बाजार मूल्य नहीं आंका जा सकता। प्रतिवादी नं. १ तथा ७ ने अपने जबाव दावा में यह स्वीकार किया कि वादीगण उन्हीं के गांव के निवासी हैं। शेष सभी अभिकथनों को अस्वीकार किया। अपने अतिरिक्त कथन में प्रतिवादीगण ने अभिकथित किया कि गांव सहिलामऊ में करीब ४०० मुसलमान मतदाता हैं और ३९४ अन्य धर्म के मतदाता है मुसलमानों को भारतीय संविधान की अनुच्छेद—२५ व २६ में कुर्बानी को करने का अधिकार है और उन्हें प्रदत्त धार्मिक स्वतंत्रता के कारण इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता। वर्तमान दावा चलने योग्य नहीं है। क्योंकि वादीगण के इस कृत्य से प्रतिवादीगण के मौलिक अधिकारों पर साथ ही साथ अनुच्छेद २५ व २६ भारतीय संविधान पर कुठाराघात हो रहा है। वर्तमान दावा गलत तथ्यों पर आधारित,

दोषपूर्ण एवं परि-सीमा अधिनियम से बाधित होने के कारण चलने योग्य नहीं है। प्रतिवादीगण की ओर से अतिरिक्त जवाब दावा में यह अभिकथित किया गया कि धारा—३ वादपत्र असत्य, निराधार एवं भ्रामक है। मुसलमानों को बकरीद व ईद के अवसर पर बकरी, मेंढ़ा, भैसा काटने का अधिकार है, क्योंकि इससे किसी की धार्मिक भावना को क्षति नहीं पहुंचती है। भैसे की कुर्बानी नैतिकता के विपरीत नहीं है और न इससेअ ाम जनता के स्वास्थ्य पर ही कोई विपरीत प्रभाव पड़ेगा। वादीगण यह बताने में असमर्थ रहे हैं कि यह कृत्य किस प्रकार जनता के लिए अस्वास्थ्यप्रद होगा और न ही इससे न्यूसेन्स पैदा होगा। यह असत्य है कि जानवरों को काटने के नियमों का हनन होगा। बलि देना मुसलमानों का धार्मिक अधिकार है और उसके तहत बकरी, मेंढ़ा, ऊँट, भैसा आदि की बलि अपने सामाजिक स्थिति के अनुरूप दिया करते हैं और उन्हें उनके इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता। प्रतिवादीगण की ओर से यह भी अभिकथित किया गया है कि जानवरों की कीमत रू १६००/—ले लेने से उन्होंने वादीगण के अभिकथनों को स्वीकार नहीं कर लिया है और इससे मुकद्दमे के गुणावगुण पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ेगा और यही कहकर प्रति- वादीगण ने पैसा वसूल किया जैसा कि आदेश दिनांक ३-११-७६ के आदेश से स्पष्ट है। उपरोक्त आधार पर वादीगण का वाद चलने योग्य नहीं है। उभय पक्ष को सुनकर एवं पत्रावली पर उपलब्ध अभिकथनों का अवलोकन कर निम्नांकित विवाद्यक मेरे पूर्व पीठासीन अधिकारीने दिनांक २५-७-८० व २०-८-८१ को बनाये :—

१. क्या ग्राम सहिलामऊ थाना परगना तहसील मलिहाबाद लखनऊ में ईद-बकरीद के अवसर पर मुसलमानों द्वारा गाय, भेंस अथवा भैसों की कुर्बानी नहीं दी जाती रही है? जैसा कि वाद पत्र की धारा-२ में कहा गया है?

२. क्या वादीगण को प्रतिवादीगण द्वारा दी जाने वाली कुर्बानी रोकने का अधिकार प्राप्त है, जैसा कि वाद पत्र की धारा-४ में कहा गया है?

३. क्या प्रतिवादीगण को कुर्बानी देने का भारतीय संविधान की धारा २५ व २६ में मूलभूत अधिकार प्राप्त हैं एवं वादीगण उसका हनन नहीं कर सकते, जैसा कि वादोत्तर में कहा गया है?

४. क्या वाद का मूल्यांकन कम किया गया है एवं न्यायशुल्क कम अदा किया गया है यदि हाँ तो इसका प्रभाव?

५. क्या वादीगण प्रतिवादीगण को रोकने से स्टोपिड होते हैं, जैसा कि वादोत्तर के धारा १० में कहा गया है यदि हाँ तो इसका प्रभाव?

६. क्या वादी किसी अनुतोष को पाने का अधिकारी है?

७. क्या प्रतिवादीगण द्वारा भैसों की कुर्बानी नैतिकता के विपरीत है तथा जन-स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है? तथा इससे न्यूसेन्स होगा व पशुवध के नियमों का उल्लंघन होगा, जैसा कि वादपत्र के पैरा-४ में उल्लिखित है?

८. क्या प्रतिवादीगण कुर्बानी की एवज में धनराशि ग्रहण करके विवंधित हैं, जैसा कि वादपत्र की धारा-६ में उल्लिखित है?

–निष्कर्ष–

विवाद्यक सं० ४—

इस विवाद्यक को सिद्ध करने का भार प्रतिवादीगण पर है। इस विवाद्यक को प्रारम्भिक विवाद्यक बनाना चाहिए था, परन्तु सम्भवतः साक्ष्य के अभाव के कारण इस विवाद्यक को प्रारम्भिक विवाद्यक नहीं बनाया गया। प्रतिवादीगण की ओर से प्रमुख तौर पर यह तर्क दिया गया कि उक्त ग्राम में मुसलमानों की आबादी ४०० है। सात व्यक्ति मिलकर एक भैंस या बैल की कुर्बानी दे सकते हैं। इस प्रकार ४०० को ७ से भागदेने पर ५७ भैंसे आते हैं। यदि एक भैंस की कीमत रु. ३००/= भी आंक ली जाए तो कुल कीमत रुपये १७,१००.०० होती है जो वर्तमान न्यायालय के क्षेत्राधिकार से परे है। देखने में विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क अत्यन्त सशक्त प्रतीत होता है, परन्तु प्रश्न यह उठता है कि क्या प्रत्येक मुसलमान बकरीद के दिन कुर्बानी करता है ? विवादित बकरीद के अवसर पर केवल दो भैंसों की कुर्बानी करने की अनुमति प्रदान की गई। ऐसी दशा में इस प्रकार के उपशम का सांख्यकीय मूल्यांकन कर पाना सम्भव नही है और अनुमानित मूल्यांकन ही अपेक्षित है। वादी ने अपनी बहस के दौरान यह तर्क दिया की रु. १९००/= प्रतिवादीगण को वादीगण द्वारा न्यायालय में दिये गये थे, वह भी वादीगण पाने के अधिकारी हैं, किन्तु जब रु. १९००/= के बाबत उपशम की ओर ध्यान दिलाया गया तो उसने कहा कि उपशम "स" में यह तथ्य भी आ जाता है यदि वादीगण रु. १९००/= भी प्रतिवादीगण से वापस चाहते हैं तो निसंदेह ही उन्हें रु. १९००/= पर न्याय शुल्क अदा करना होगा और इस प्रकार सम्पूर्ण वाद का मूल्यांकन रु. १००० + १९०० = २९००/= होगा। उपरोक्त व्याख्या के आधार पर विवाद्यक संख्या ४ तदनुसार निर्णीत किया गया।

विवाद्यक नं० १, २, ३ व ५—

विवाद्यक नं० १ व २ को सिद्ध करने का भार वादीगण पर है। विवाद्यक नं० ३ व ५ को सिद्ध करने का भार प्रतिवादीगण पर है। यह विवाद्यक एक दूसरे पर आधारित है। अतः इनकी व्याख्या अलग-अलग कर पाना सम्भव नहीं है। अतः न्याय की सुगमता के लिए ये विवाद्यक एक साथ निर्णीत किया जाना अधिक उपयुक्त एवं उचित होगा। विवाद्यक नं० १ के सम्बन्ध में वादी साक्षी नं० १ राम आसरे, वादी साक्षी सं० २ महन्त विद्याधर दास को परीक्षित किया गया। इन दोनों साक्षीगण ने शपथ पर न्यायालय में बयान दिया और कहा कि ग्राम सहिलामऊ में भैंस-भैंसा की कुर्बानी बकरीद के अवसर पर नहीं होती रही है, केवल बकरे की कुर्बानी मुसलमान भाई करते थे, जिसे कभी भी हिन्दुओं ने नहीं रोका और जिससे धार्मिक सद्‌भाव, सहिष्णुता, सदव्यवहार, सदाचार एवं सहयोग का वातावरण बना हुआ था, परन्तु श्री मोहम्मद रफीकुद्दीन के गाँव में आने पर भैंसों की कुर्बानी करवाने से गांव में साम्प्रदायिक तनाव, विद्वेष व घृणा का वातावरण पनप गया। धर्म की आड़ लेकर रफीकुद्दीन, भोलीभाली निरीह जनता को आपस में लड़वाना चाहते हैं। इन साक्षीगण के अनुसार ग्राम सहिलामऊ में कभी भी भैंसे की कुर्बानी नहीं दी गई। पृच्छा में भी इन साक्षियों से कोई विशेष बात प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता नहीं निकाल पाये हैं, जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि ग्राम सहिलामऊ में इस घटना के पहले भी भैंस-भैंसों की कुर्बानी हुआ करती थी। इसके विपरीत

प्रतिवादीगण की ओर से प्रतिवादी साक्षी नं० १ सैय्यद अली, दीन मोहम्मद, तथा फारूक को परीक्षित किया गया, जिन्होंने कहा कि इस गांव में आजादी के पहले गाय की भी कुर्बानी होती थी। भेड़, भेड़ा बकरी, बकरा, गाय-बैल, ऊँट-ऊँटनी की कुर्बानी का मजहबी प्राविधान इन लोगों ने बताया और कहा कि इस गांव में भैंसे की कुर्बानी पहले होती थी, जिससे कोई घृणा का वातावरण नहीं बना। वादीगण धार्मिक आड़ में प्रतिवादीगण की धार्मिक भावना को ठेस पहुंचाना चाहते हैं। इन साक्षीगण की साक्ष्य को पृच्छा की कसौटी पर कसा गया, तो सफाई साक्षी नं० १ सैय्यद अली ने स्वीकार किया और यह भी कहा कि हिन्दुओं ने मुर्गे की कुर्बानी पर कोई एतराज नहीं किया और इस साक्षी ने यह स्वीकार किया कि सन १९६४-६५ में जब राजबहादुर थाना मलिहाबाद में दरोगा थे, तब कुर्बानी की बात उठी थी, लेकिन सुलह हो गई थी, इस गांव में कोई भी बूचड़खाना नहीं है। इससे यह स्पष्ट होता है कि यदि किसी बड़े जानवर की कुर्बानी की जायेगी तो दूसरे लोगों को यानी हिन्दुओं को भी पता चलेगा, जिससे बड़ा बखेड़ा होगा जैसा कि यह प्रतिवादी सन् १९६४-६५ की वारदात स्वीकार करता है। साक्षी नं० ३ मोहम्मद फारूक ने भी पृच्छा में स्वीकार किया है कि सन् १९७९ में १७ बकरों की कुर्बानी दी गई, जिसमें से १४ बकरों की कुर्बानी न्यायालय से मिले पैसे से हुई थी और तीन बकरों का इन्तजाम उन्होंने स्वयं किया था। इस साक्षी एवं सैय्यद अली ने भी पृच्छा में स्वीकार किया है कि खून हड्डियाँ एवं बाल आदि को गढ़वाने वाली बात जवाब दावा में नहीं लिखी गयी है, जिससे यह स्पष्ट होता है ये बातें इन साक्षियों ने सोच-विचार कर न्यायालय में बतायी हैं और न ही इन साक्षियों ने कुर्बानी बन्द करने की बात कही है, बल्कि पृच्छा में यह बात बतायी जो विचार कर कहना प्रतीत होती हैं। ऐसी दशा में यदि कुर्बानी स्वतंत्रतापूर्वक होती है, तो निश्चय ही हिन्दुओं को इस बात का पता लगा होता और तनाव बढ़ता। यहां पर यह भी कहना अनुचित न होगा कि सफाई साक्षी सं० ५ मो० रफीकुद्दीन जो सम्पूर्ण कलह की जड़ कहे जाते हैं और ग्राम सहिलामऊ में मस्जिद में नमाज पढ़ाते हैं तथा गाँव के मुसलमानों के धार्मिक गुरू हैं, उन्होंने पृच्छा में इस बात को स्वीकार किया कि भैंस जानवर जिबाह करते हैं, वह उसका कोई रिकार्ड नहीं रखते हैं। हाजी सैय्यद अली मस्जिद में मुतवल्ली हैं और उनके पास कुर्बानी का पूरा रिकार्ड रहता है, उसमें कुर्बानी के जानवरों की जाति लिखी जाती है। और कुर्बानी किस किसने करायी उसका नाम लिखा जाता है। हाजी सैय्यद अली इस मुकदमे में प्रतिवादी नं० ७ हैं, परन्तु न्यायालय में मेरे समक्ष तथाकथित अभिलेख प्रस्तुत नहीं किया गया, जिसके आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता कि ग्राम सहिलामऊ में कुर्बानी काफी पुराने समय से चली आ रही है। वह अभिलेख प्रतिवादी नं० ७ के पास है जो महत्वपूर्ण अभिलेख है, जिसको प्रस्तुत करने का दायित्व प्रतिवादी नं० ७ पर है। इसको प्रस्तुत न करने से अनुमान प्रतिवादीगण के विरुद्ध लगाया जायगा। सैय्यद अली प्रतिवादी नं० ७ प्रतिवादी साक्षी नं० १ के रूप में न्यायालय में परीक्षित हुए हैं, इन्होंने उक्त अभिलेखों के बाबत एक शब्द भी नहीं कहा। इस साक्षी का बयान स्वयं में विरोधाभासी है। उसने अपने मुख्य कथन में यह कहा है कि इस गांव में आजादी के पहले गाय की बलि होती थी और उसके पहले भैंस-भैंसों की बलि होती रही हैं। पृच्छा में यह साक्षी स्वीकार करता है कि उसके मजहब में गाय और भेड़ की कुर्बानी की इजाजत नहीं है। ऐसी दशा में इसका स्वयं का कथन संदेहास्पद है। उपरोक्त व्याख्या के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि विवादित घटना से पहले ग्राम सहिलामऊ में भैंसे की कुर्बानी नहीं होती रही थी। विवाद्यक नं० १ व २ तदनुसार वादीगण के अनुकूल एवं प्रतिवादीगण के प्रतिकूल निर्णीत किये गये।

विवाद्यक नं० ३ व ५—

इसके बाबत उभय पक्ष की ओर से तर्क दिये गये। प्रतिवादीगण ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद २५ व २६ का सहारा लेकर अभिकथित किया कि मुसलमानों को कुर्बानी करने का मौलिक अधिकार प्रदत्त है और उससे उन्हें वंचित नहीं किया जा सकता। यह निःसन्देह सत्य है कि धार्मिक स्वतन्त्रता का प्राविधान भारतीय संविधान में निहित है और धर्म निरपेक्षता इस संविधान की विशेषता है, परन्तु संविधान में मौलिक अधिकारों के तहत किसी विशेष धर्म को विकसित करने, परिपोषित करने व प्रचार करने की सुविधा सरकार द्वारा प्रदत्त नहीं की गयी है, बल्कि उस धर्म के अनुयाइयों को अपने धर्म के विकास करने की सुविधा की स्वतन्त्रता है परन्तु यह स्वतन्त्रता असीमित व अनियमित नहीं है। धार्मिक स्वतन्त्रता, भारतीय संविधान में वहीं तक प्रदत्त है, जहाँ तक दूसरे धर्म वालों की भावनाओं पर कुठाराघात न हो, परन्तु जहाँ जिस धार्मिक भावना द्वारा दूसरे धर्म के लोगों की धार्मिक भावना का कुठाराघात होता है, वहाँ धार्मिक स्वतन्त्रता नहीं दी गयी है। मैं विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क से पूर्णतः सहमत हूं कि धार्मिक स्वतन्त्रता का प्राविधान भारतीय संविधान में प्रदत्त है, परन्तु इससे दूसरे के धर्म को आघात पहुंचाने का अधिकार नहीं मिलता है। जहाँ तक कुर्बानी मजहब का अङ्ग है, इस सम्बन्ध में हाजी मो० रफीकुद्दीन को परीक्षित किया गया। वही तथाकथित मुसलमानों के धार्मिक गुरू ग्राम सहिलामऊ में हैं, उनके समक्ष सम्पूर्ण पाक कुरान शरीफ रखी गयी और उनसे कहा गया कि वह न्यायालय को बतायें कि पाक कुरान शरीफ में कुर्बानी का प्राविधान कहाँ पर है? और विशेषतः भैंसे की कुर्बानी कहाँ पर दी गई है? परन्तु वह कोई भी ऐसा सन्दर्भ पाक कुरान शरीफ में निकाल कर दिखाने में असमर्थ रहे हैं। उन्होंने केवल पाक कुरान शरीफ की कुछ आयतों का सन्दर्भ दिया। उनके अनुसार पाक कुरान शरीफ सूरे हज्ज के पारा-१७ रूकू १२ के अनुसार कुर्बानी फर्ज है, लेकिन जब उन्हें कुरान शरीफ दी गई तो वह दिखा नहीं सके, बल्कि सूरे हज्ज की आयत ३६ में यह कहा कि "**अल्लाह के नजदीक न इसका गोश्त पहुंचता है और न खाल, लेकिन नीयत पहुंचती है। अल्लाह ताला नीयत को देखता है जानवर को नहीं देखता**"। **सूरे हज्ज रूकू ५ आयत ३ में यह लिखा है कि "खुदा तक न तो कुर्बानी का माँस पहुंचता है और न ही खून, बल्कि उनके पास तुम्हारी श्रद्धा भक्ति पहुंचती है**" यह कहना साक्षी ने गलत बताया। कुर्बानी की दुआ इस साक्षी ने सूरे इनाम रूकू १४ पारा ७ आयत ७६ बताया और फिर बाद में ७८ कहा, परन्तु जब यह पूछा गया कि कुर्बानी फर्ज है, ऐसा कहाँ पर लिखा है? तो यह बताने में साक्षी असमर्थ रहा इस साक्षी को यह भी नहीं मालूम कि दुआ में कुर्बानी का ज़िक्र आया है। इस साक्षी को पाक कुरान शरीफ के प्रकाशक भुवन वाणी ट्रस्ट (लखनऊ) का शास्त्रीय अरबी पद्धति पर हिन्दी में संस्करण दिखाया गया तो, उसने कहा कि इस ग्रन्थ के पेज नं० ५६० में सूरे हज्ज १७ वें पारे में ११ वें रूकू की ३३ वी आयत में यह लिखा है कि—"**हमने हर जमात के लिए कुर्बानी के तरीके मुकर्रर किये हैं, जो हमने उनको चौपाये जानवरों में से इनाम किये हैं। कुर्बानी करते हुए अल्लाह का नाम लें।**" इस साक्षी ने यह स्वीकार किया कि इसमें कुर्बानी फर्ज है, इसका जिक्र नहीं है। इस साक्षी ने अन्त में विवश होकर यह स्वीकार कर लिया कि हाफिज का मतलब पाक कुरान शरीफ हिफ्ज होने से अर्थात् रटे होने से है। पाक कुरान शरीफ की आयतों का अर्थ जानने से नहीं है। मुझे कुरान शरीफ की आयतों का अर्थ नहीं मालूम। जो कुरान शरीफ की आयतों का अर्थ जानता है उन्हें उलमा कहते हैं, वे कुरान शरीफ

की बारीकियों को समझा सकते हैं। इसके बावजूद भी प्रतिवादीगण की ओर से कोई भी उलमा पेश नहीं किया गया, जो न्यायालय को यह बताता कि इस्लाम धर्म में भैंस-भैंसे की कुर्बानी करना कहाँ पर लिखा है और कुर्बानी करना हर इस्लाम के बन्दे का फर्ज है। इस व्यक्ति से स्पष्ट प्रश्न पूछा गया कि कुरान शरीफ की किस आयत में कुर्बानी करना फर्ज लिखा है ? इस साक्षी ने स्पष्ट स्वीकार किया कि उसे पता नहीं है कि कुरान शरीफ की किस आयत में "कुर्बानी" को फर्ज लिखा है, बल्कि यह फिरंगी महल अथवा नदवे वाले हैं, उसके लोग जो बताते हैं वह करता हूं। फिरंगी महल अथवा नदवे का उलमा अथवा मुल्ला कोई भी मेरे समक्ष परीक्षित नहीं किया गया, जो इस बात को स्पष्ट करता कि इस्लाम मजहब में बकरीद के अवसर पर भैंस-भैंसे की कुर्बानी करना परमावश्यक है। इस साक्षी ने यह भी स्पष्ट स्वीकार किया है कि कुर्बानी अपनी सबसे अजीज चीज की दी जाती है। उदाहरण के लिए हजरत इब्राहिम ने अपने लड़के की कुर्बानी बकरीद के दिन दी थी परन्तु जब इब्राहिम ने अपनी आँखों से पट्टी खोली तो दुम्मा बना हुआ निकला। इससे अधिक से अधिक तात्पर्य यह निकाला जा सकता है कि दुम्मा की कुर्बानी करने के लिए इस्लाम में प्राविधान है, परन्तु दुम्मा का तात्पर्य भैंस, गाय से नहीं हो सकता। पारा १७ आयत २६ से ३८ तक ऊँटों की कुर्बानी का प्राविधान सूरे हज्ज में दिया गया है। इसी में आयत ३२ में कहा गया है कि तुम्हारे चौपायों में से एक खास वक्त तक फायदे हैं, जो तुम सवारी या दूध से उठा सकते हो। फिर उस पुराने ढाबे, कावा तक, कुर्बानी के लिए, जाना है। "आयत २७ में कहा गया है"—और लोगों में हज्ज के लिए पुकार दो कि हमारी तरफ दुबले-दुबले ऊँटों पर सवार होकर दूर-दूर की राहों से चलकर आवें। आयत २७ में अपनी भलाई की जगह के लिए हाजिर है। अल्लाह ने तो मवेशी उन्हें दिये हैं, उन पर जिबह (बलिदान) के समय अल्लाह का नाम लें। उनमें से असहायों, दीन दुखियों, और फकीरों को खिलाओ। आयत २८ में चाहिए कि अपना मैल-कुचैल उतार दे और अपनी मन्नतें पूरी करे और इस प्रकार तबाक परिक्रमा करे। यह सत्य है कि पाक कुरान शरीफ में कुर्बानी के लिए चौपायों के लिए कहा गया। पाक कुरान शरीफ में एक स्थान निश्चित कर दिया गया है और वह काबे के सामने पूरब की ओर है। कुर्बानी करने वाले जानवर का सिर काबा की ओर होगा और अल्लाह का नाम लेकर जिबह किया जायेगा। पाक कुरान शरीफ में स्पष्ट कहा गया है कि उन्ही चौपायों की कुर्बानी की जायगी जो आपके प्रयोग के लिए बेकार हो गये हैं अर्थात् जो दूध नहीं देते हैं और जो बोझ ढोने के लायक नहीं हैं, परन्तु डाक्टर ने इस वाद में स्वयं उन जानवरों को सर्टीफिकेट दिया जो जानवर काटने के समय स्वस्थ हों अर्थात् केवल स्वस्थ जानवरों को ही मारने के लिए यह प्रमाणपत्र दिया जाता है। ग्राम सहिलामऊ कभी काबा नहीं बन सकता और इस प्रकार की गई कुर्बानी भैंसों आदि की पाक कुरान शरीफ में अंकित है, इसमें सन्देह है। पाक कुरान शरीफ का उद्देश्य अनुपयोगी जानवरों की कुर्बानी से है, जिससे लोग उनके माँस आदि से अपना पेट पालन करते हैं, न कि हृष्ट-पुष्ट जानवरों की कुर्बानी करना, जिसके लिए डाक्टरी सार्टीफिकेट की आवश्यकता है। यहाँ पर यह भी कहना अनुचित न होगा कि धर्म के आधारभूत सिद्धान्तों को को अन्ध विश्वास में बदलना कहाँ तक उचित है और अन्ध विश्वास को भारतीय संविधान के अनुच्छेद २५ व २६ में प्रश्रय मिलेगा, यह सही नहीं है। हालाँकि उपरोक्त सभी आयतें साक्षी नं० ५ श्री मो० रफीकुद्दीन नहीं कह सके। इसलिए उन्हें इन आयतों का भी लाभ नहीं मिल सकता। मेरे समक्ष विद्वान अधिवक्ता प्रतिवादी ने मोहम्मद फारूक बनाम स्टेट आफ मध्य प्रदेश आदि ए० आइ० आर० १९७० सुप्रीम कोर्ट पेज ९३ की नजीर प्रदर्शित की। यह नजीर वर्तमान वाद में लागू नहीं होती है। यह नजीर

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-१९ (जी) व्यापार करने के सम्बन्ध में है, अतः इसकी व्याख्या करना उचित न होगा। मेरे समक्ष विद्वान अधिवक्ता प्रतिवादी ने श्रीमदपेरारू लाल तीर्थ राज रामानुजा जी० एस० स्वामी बनाम स्टेट आफ तमिलनाडु ए० आई० आर० १९७२ सुप्रीम कोर्ट पेज १५८६ प्रदर्शित किया, जिसमें सरदार सइदेना तेहर शिक्यूरिटी शाहिद बनाम बाम्बे सरकार ए०आई०आर० सुप्रीम कोर्ट पेज ८५३ पर विश्वास व्यक्त किया गया, जिसके अनुच्छेद ३४ में यह न कहा गया भारतीय संविधान के अनुच्छेद २५ व २६ में संरक्षणता केवल धार्मिक सिद्धान्त अथवा विश्वास को नहीं दी गई है। यह संरक्षणता वहाँ तक बढ़ाई जाती है जहाँ तक धार्मिक अक्षुण्णता प्रतिवादित करने में जो कृत्य किये जाते हैं और जिस प्रकार पूजा अर्चना त्यौहारों के रूप में मनाई जाती है, जो धर्म का एक अभिन्न अंग है। दूसरा यह कि यह धर्म का आवश्यक अंग है अथवा धार्मिक अभ्यास है, यह विशेष धर्म के सिद्धान्तों एवं उसके अभ्यासों पर जो उस धर्म के अनुयाइयों द्वारा धर्म का अङ्ग मानकर किया जाता है, पर निर्भर होगा। इस तथ्य को न मानने का कोई प्रश्न नहीं उठता १. यदि भैंसों की बलि के बिना बकरीद का त्यौहार मुसलमानों में नहीं मनाया जा सकता, तो निश्चय ही उन्हें भैंसे की बलि की इजाजत देनी होगी, परन्तु इस आवश्यक अङ्ग को प्रतिवादीगण सिद्ध करने में असफल रहे है। यदि भैंस-भैंसे की बलि विवादित ग्राम में होती रही होती तो निश्चय ही मेरे समक्ष अभिलेख प्रस्तुत किये गये होते, जबकि साक्षी नं० ५ ने स्वीकार किया है कि साक्षी नं० १ जो प्रतिवादी नं० ७ है। मस्जिद के मुतवल्ली होने के कारण इस सम्बन्ध में सभी अभिलेख रखते हैं इस तथ्य से यह भी स्पष्ट होता है कि उस गाँव में रहने वाले मुसलमान अब तक भैंसे की बलि देकर ही बकरीद मनाते रहे हैं अथवा नहीं। बकरे दुम्मे की कुर्बानी करने के लिए वादीगण को भी कोई आपत्ति नहीं है। जहाँ तक भारतीय संविधान के अनुच्छेद २५-२६ का प्रश्न है उनमें प्रारम्भ में ही **"Subject to public order morality & health"** शब्द जुड़े हुए हैं, जो इस बात के प्रतीक हैं कि धार्मिक कृत्य कोई भी पब्लिक आर्डर, नैतिकता एवं स्वास्थ्य के विपरीत नहीं किया जायेगा। उदाहरण के लिए हिन्दू धर्म में भी सती प्रथा अथवा आत्मदाह किसी पाप के प्रायश्चित करने के प्रकार बताये गये हैं परन्तु चूंकि वह उपरोक्त तीन शब्दों के प्रतिकूल होने के कारण न्यायालय उन्हें इजाजत नहीं दे सकती। इस बात को भी स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है कि दीवानी अधिकार [सिविल राइट] यदि मौलिक अधिकारों के समक्ष चुनौती उत्पन्न करते हैं तो मौलिक अधिकारों को वरीयता दी जायेगी और दीवानी अधिकार उस हद तक संशोधित एवं निरस्त समझे जायेंगे। यदि वादीगण को प्रतिवादीगण के विरुद्ध केवल दीवानी अधिकार ही प्रदत्त है, जबकि भैंसे की कुर्बानी करना प्रतिवादीगण का मौलिक अधिकार है, तो निश्चय ही वह प्रतिवादीगण का मौलिक अधिकार माना जायेगा और वादीगण के दीवानी अधिकार निरस्त समझे जायेंगे। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दुर्गा कमेटी अजमेर आदि बनाम सैय्यद हुसेन अली आदि ए० आई० आर० १९६४ पेज १४०२ के अनुच्छेद ३३ में यह स्पष्ट किया है कि बड़ी सफ़लतापूर्वक यह ध्यान देने योग्य है कि प्रचलित धर्म की रीति धर्म का आवश्यक एवं अभिन्न अङ्ग है अथवा वह चली रीति धर्म का अभिन्न एवं आवश्यक अङ्ग नहीं है और इस तथ्य को भारतीय संविधान के अनुच्छेद २६ के आवरण में दिखाना होगा। उसी प्रकार प्रचलित धर्म रीति केवल अन्धविश्वास है अथवा अनावश्यक एवं स्वयं में धर्म का अङ्ग न हो, जब तक धार्मिक प्रचलित रीति आवश्यक एवं अभिन्न धर्म का अङ्ग न हो। अनुच्छेद २६ के तहत सुरक्षा प्रदान नहीं की जा सकती तो उसका बड़ी सावधानीपूर्वक निरीक्षण करना होगा। दूसरे

शब्दों में संवैधानिक सुरक्षा उन्हीं धार्मिक रीतियों को है जो धर्म का आवश्यक एवं अभिन्न अङ्ग है। पाक कुरान शरीफ की सन्दर्भित आयतों को देखकर एवं विद्वान अधिवक्तागण के द्वारा प्रस्तुत किये गये तर्कों का सिंहावलोकन कर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि—**"भैंस-भैंसे की कुर्बानी एक अन्ध विश्वास की देन है"**। पाक कुरान शरीफ अथवा इस्लाम का आदेश न होने के कारण इस्लाम धर्म का आवश्यक और अभिन्न अंग नहीं है। इस्लाम धर्म ने बहुतेरे पैगम्बर सिद्धहस्त फकीर एवं महान मुसलमान आत्माओं को जन्म दिया है, जिन्होंने कोई कुर्बानी नहीं दी। इसका यह मतलब नहीं हुआ कि कुर्बानी के बिना बहिस्त प्राप्त नहीं हो सकता। वर्तमान वाद में प्रतिवादीगण भैंसे की कुर्बानी को इस्लाम का आवश्यक अंग सिद्ध करने में सर्वथा असमर्थ रहे हैं। यहाँ पर मैं यह भी कहना उचित समझता हूं कि विभिन्न धर्मों के लोग सहिलामऊ गाँव में रहते हैं, जहाँ अब तक भैंस-भैंसे की कुर्बानी नहीं हुई और यदि वे इसे बुरा मानते हैं और अहिंसा में विश्वास करते है, तो उनकी धार्मिक भावनाओं को भैंसे की कुर्बानी की इजाजत देकर, ठेस पहुंचाना कहाँ तक उचित होगा? जबकि वे इतने सहिष्णु हो चुके हैं कि बकरे, भेड़, भेड़ा की कुर्बानी करने में उन्हें कोई आपत्ति नहीं है।

मेरे समक्ष यह तर्क दिया गया कि एक बड़े जानवर में सात व्यक्ति तक शरीक हो सकते हैं इसलिये भैंस-भैंसे की कुर्बानी एक गरीब व्यक्ति के लिये लाजमी है, जबकि वह व्यक्ति इतना गरीब है कि एक बकरा खरीद कर कुर्बानी नहीं दे सकता तो क्या वह पब्लिक आर्डर, नैतिकता की सुरक्षा, मलमूत्र, रक्त आदि विसर्जित करके, ठीक से निर्वसन कर सकेंगे इसमें सन्देह है और निश्चय ही गन्दगी को बढ़ावा मिलेगा। सरकार ने इसलिए बड़े जानवरों को काटने के लिए बूचड़खानों का प्रबन्ध किया है।

यदि पाक कुरान शरीफ की गहराइयों में झाँका जाए और बारीकियों को परखा जाए तो व्यक्ति को काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह एवं अहंकार की कुर्बानी करनी चाहिये न कि बेचारे चौपायों की, जिन्हें चाँदी के कुछ सिक्कों में खरीदा जा सकता है। मनुष्य को इन्द्रियजीत मनोवृत्तिकाजित् होना चाहिये। किसी भी धर्म के आधारभूत सिद्धान्त हिंसा में विश्वास नहीं करते और मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि पाक कुरान शरीफ में भैंस-भैंसे की कुर्बानी का सन्दर्भ कहीं पर नहीं आया है अन्यथा मेरे समक्ष इस प्रकरण एवं तथ्यों पर हुई गवाही में अवश्य आता। इस साक्षी को अपने उलमाओं से भी मदद लेने का अवसर था परन्तु फिर भी यह साक्षी मेरे समक्ष इस प्रकार का कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सका, जिससे अनुमान लगाया जायेगा कि पाक कुरान शरीफ अथवा इस्लाम में कुर्बानी करना फर्ज नहीं है और कुर्बानी भैंस या भैंसे की नहीं हो सकती। साक्षी नं० १ हाजी सैय्यद अली ने और साथ ही साक्षी नं० ५ मो० रफीकुद्दीन ने यह स्वीकार किया है कि कुर्बानी के अलावा अन्य तरीकों से भी बहिस्त प्राप्त हो सकती है। गरीब आदमी इबादत के द्वारा बहिस्त प्राप्त कर सकता है। यदि कुर्बानी द्वारा ही एक मात्र बहिस्त प्राप्त किया गया होता तो निश्चय ही इस्लाम धर्म के सभी राजा-महाराजाओं सेठ-साहूकारों ने बहिस्त प्राप्त कर लिया होता और गरीब फकीर उधर लालायित होकर देखते रहते, जबकि सत्यता इसके प्रतिकूल है। इसके विपरीत वादीगण की ओर से "श्रीराम आर्य" (कासगंज) को परीक्षित किया गया, जिन्होंने करीब ८० किताबें धार्मिक विचारों पर लिखी हैं। उन्होंने स्वीकार किया कि पाक कुरान शरीफ में सम्बन्धित आठ-दस किताबें उन्होंने लिखी हैं। **कुरान शरीफ की छानबीन, कुरान शरीफ का प्रकाश व पुनर्जन्म, कुरान शरीफ में बुद्धि विज्ञान आदि**

कई कताबें लिखीं। इस साक्षी ने अपने मुख्य कथन में स्पष्ट स्वीकार किया है कि केवल एक ही आदेश हज़ के समय ऊँट की कुर्बानी का है अन्य किसी जानवर की कुर्बानी का नहीं है। किसी दूसरे जानवर यानी भैंसे की कुर्बानी का आदेश पाक कुरान शरीफ में नहीं है। जो व्यक्ति भैंस-भैंसे को काटता है उसकी कुर्बानी इस्लाम के खिलाफ है। इस साक्षी ने अपने मुख्य कथन में यह भी कहा कि उसने धार्मिक किताबें हिन्दी और उर्दू दोनों ही भाषाओं में प्रकाशित की हैं। पृच्छा में इस साक्षी ने यह भी स्वीकार किया कि पाक कुरान शरीफ में कुर्बानी का जिक्र सूरे हज्ज में है, सूरे बकर में नहीं। सूरे हज्ज में ही केवल कुर्बानी का आदेश है, अन्य कहीं नहीं। पारा बिना किताब देखे नहीं बता सकता। इस साक्षी ने यह भी स्पष्ट इन्कार किया कि उसने कुरान शरीफ अथवा मुस्लिम कल्चर का पूर्ण अध्ययन नहीं किया है इस साक्षी ने स्पष्ट स्वीकार किया कि कुरान शरीफ अरबी में उसने नहीं पढ़ा है, परन्तु कुरान शरीफ उसने कई बार पढ़ा। उसका ट्रांसलेशन अहमद बसीर, काबिल तवीर, काबिल मौलवी लखनऊ शाह अब्दुल कादिर के तर्जुमे पढ़े हैं। इस साक्षी ने भी स्वीकार किया कि ये लोग आलिम हैं या नहीं, परन्तु इनका अनुवाद मान्य है। मैं इस स्वतंत्र साक्षी की साक्ष्यकों मे ग्राह्य करने का कोई औचित्य नहीं समझता जबकि इस साक्षी की साक्ष्य का संपुष्टन सफाई साक्षी नं० ५ मो० रफीकुद्दीन ने भी किया है और कुरान शरीफ में कुर्बानी फर्ज है, नहीं ढूंढ सका और अन्त में उसने विवश होकर यह स्वीकार किया कि--"**हिंसा करना कुरान शरीफ में पाप है और सभी वस्तुएँ अल्लाह की बनाई हुई हैं, किसी को चोट पहुंचाना पाप हैं**"। ऐसी दशा मे निःसंकोच कहा जा सकता है कि जब प्रतिवादीगण भैंस-भैंसे की बलि इस्लाम में सिद्ध नहीं कर पाये हैं तो उन्हें अनुच्छेद २५ व २६ भारतीय संविधान का लाभ नहीं मिल सकता और वे किस हद तक प्रतिवादपत्र की धारा १० में वर्णित आधार पर लाभ पा सकते हैं? उत्तर नकारात्मक होगा। उपरोक्त व्याख्या के अनुसार विवाद्यक नं० २, ३ व ५ वादीगण के अनुकूल एव प्रतिवादीगण के प्रतिकूल निर्णीत किये गये।

विवाद्यक सं० ७—

इस विवाद्यक को सिद्ध करने का भार वादीगण पर है। इस सम्बन्ध में वादी साक्षी नं० २ महन्त विद्याधर दास ने अपने मुख्य कथन में अभिकथित किया कि कुर्बानी का प्रभाव जनता पर पड़ेगा। भैंसों की कुर्बानी से हिन्दुओं में उत्तेजना फैलेगी, साम्प्रदायिकता बढ़ेगी। इस गाँव में कोई पशुवधशाला नहीं है और न ही पशुवधशाला का अलग स्थान है। इस गाँव में कोई नाली आदि नहीं है जिससे भैंसों का खून आदि रास्ते में बहेगा। इस साक्षी से पृच्छा में जन स्वास्थ्य के बारे में एक भी शब्द नहीं पूछा गया, केवल अन्तिम सुझाव दिया गया कि घर के अन्दर कुर्बानी करने से खून आदि बहने का प्रश्न नहीं उठता, जिसे इस साक्षी ने इन्कार किया। इसके अतिरिक्त प्रतिवादी साक्षी नं० ६ डाक्टर मेहरोत्रा ने प्रथम प्रदर्शक-६ सिद्ध किया और बताया कि मेरे पूर्व डाक्टर श्री शर्मा ने यह प्रपत्र जारी किया था। पृच्छा में इस साक्षी ने स्वीकार किया कि जानवरों की बलि देने की बाबत प्रमाणपत्र जारी करने के लिए पशुचिकित्सक अधिकृत नहीं है और न ही पशु चिकित्सक पशुबलि के लिए कोई आदेश अथवा स्वीकृति देना भी निश्चित नियमों के तहत हैं, जिसमें पशुओं का वध बूचड़खाने में ही हो सकता है, खुले स्थान में नहीं। खुले स्थान में पशुबध करना प्रतिबन्धित है। विवादित गाँव सहिलामऊ में कोई बूचड़खाना नहीं है। बड़े जानवरों को बूचड़खाने के अतिरिक्त अन्य किसी जगह पर काटना उचित नहीं है। ऐसी दशा में यदि खुले स्थान में जानवर

काटा जाता है तो निश्चय ही साम्प्रदायिकता भड़केगी एवं समाज में घृणा फैलेगी, उसके खून के बहाव एवं हाड़ आदि की दुर्गन्ध से बीमारियाँ भी फैलने का अन्देशा रहेगा। यही नहीं इस तथ्य को ध्यान में रखकर ही सम्भवतः प्रदर्शक-१ आदेश परगनाधिकारी कुमारी लोरेसन, दिगोजा एवं क्षेत्राधिकारी सुभाष जोशी ने जारी किया है। उपरोक्त व्याख्या के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि विवाद्यक नं० ७ वादीगण के अनुकूल एवं प्रतिवादीगण के प्रतिकूल निर्णीत किया जाता है।

विवाद्यक नं० ८—

इस विवाद्यक को सिद्ध करने का भार वादीगण पर है। इस सम्बन्ध में मेरे पूर्व पीठासीन अधिकारी का आदेश दिनांक ३-११-७९ अवलोकनीय है, जो इस आदेश का एक अंग बनाया जाता है जो निम्न प्रकार है :—

The parties counsel agree that sacrifice of Goats and Lambs **(Waiht) Majht**—he made plffs are ready to deposit the costs of 14 Goats because in one buffaloes 7 persons may join. Mohd. Inayat are alleging that sacrifice of 2 buffaloes would be made as such plffs ready to afford 14 Goats or its price. The price of 2 buffaloes amounting to Rs. 900/- will be adjusted in the total price of 14 Goats. The defts, counsel stated costs of the 14 Goats would be Rs, 2800/-. Therefore after adjusting Rs. 900/- plffs. are directed to pay Rs. 1900/- to the defendants 1 to 7 as price of 14 Goats for sacrifice. The plffs are directed to pay Rs. 1900/- within one hour i.e. at 12.15 P.M. The defendants 1 to 7 Can make "KURBANI" of Goats and Lambs. c-10 recipt by the deft. cunsel Sri Z. Zillani for receving Rs. 1900/- in cash from the plff's counsel. The order dated 3-11-79 will not prejudice the merit of the case since the matter has been disposed of with the consent of parties hence date already fixed is here by cancelled deffts may file W.S. with 15 days Fix 24.11.79 for issues.

इसमें सेन्टेंस The Order dated 3-11-79 will not prejudice the merit of the Case. स्पष्ट करता है कि उक्त धनराशि प्रतिवादीगण द्वारा प्राप्त करने से मुकदमे के गुणावगुण पर कोई असर नहीं पड़ेगा। उपरोक्त व्याख्या के आधार पर वह विवाद्यक वादीगण के प्रतिकूल एवं प्रतिवादीगण के अनुकूल निर्णीत किया गया।

विवाद्यक नं० ९—

उपरोक्त व्याख्या के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि वादीगण सम्पूर्ण उपशम पाने के अधिकारी हैं। वादीगण प्रतिवादीगण से वाद-व्यय भी पाने के अधिकारी हैं। वादीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा तर्क दिये जाने पर कि वह प्रतिवादीगण से रु० १९००/- वापस पाने के अधिकारी हैं, न्याय संगत प्रतीत होता है और वादपत्र की धारा १० (स) के तहत न्यायालय इस उपशम को दिलवाने में स्वतंत्र है। अब न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि प्रतिवादीगण को भैंस-भैंसों की बलि देने का अधिकार नहीं था, जब उन्होंने ऐवज में वादीगण से रु० १९००/- वसूल किये और १४ बकरे खरीदकर बलि दी। दूसरों के पैसे से बकरे खरीदकर बलि देने का अधिकार

उन्हें नहीं है और वह रुपया प्रतिवादीगण, वादीगण को वापस करने के लिए बाध्य हैं। इस सम्बन्ध में वादीगण की ओर से पृच्छा में साक्षी नं० १ सैय्यद अली ने उस रुपये की बाबत अपनी अनभिज्ञता प्रकट की और कहा कि उन्हें नहीं मालूम कि इस रुपये का क्या हुआ। भैंसे जो बलि के लिये लाये गये थे, वे बेच लिये गये वादीगण को वापस नहीं किये गये और न विक्रय मूल्य ही वादीगण को वापस किया गया उसने यह भी स्वीकार किया कि भेड़, बकरे में सात आदमी शामिल हो सकते हैं, यह बात बुजुर्गों के समय से सुन रहा हूं। ऐसी दशा में मैं पाता हूं कि केवल बड़े जानवरों उदाहरणार्थ भैंस-भैंसे में सात आदमियों का शामिल होने वाला प्रतिवादीगण की बात मिथ्या घढ़ी है जबकि बकरे में भी सात व्यक्ति शामिल हो सकते हैं। प्रतिवादी साक्षी नं० ३ मो० फारूख ने पृच्छा में स्पष्ट स्वीकार किया कि वादीगण द्वारा दिये गये रु० १६००/- में बलि के लिए प्रतिवादीगण ने बकरे खरीदे हैं उस बकरीद में १७ बकरों की बलि दी गई, जिसमें से १४ बकरे अदालत से मिले पैसे से खरीदे गये थे। जब बकरों की कुर्बानी करके उसका शबाब प्रतिवादीगण ने पाया है तो बकरों की धनराशि भी प्रतिवादीगण अदा करने के उत्तरदायी हैं। इस धनराशि पर ब्याज लगाने के बाबत मेरे समक्ष तर्क दिया गया, परन्तु मेरे समक्ष प्रतिवादीगण की हालत अधिक अच्छी नहीं बताई गई, ऐसी दशा में प्रतिवादीगण से उक्त धनराशि पर ब्याज दिलाना उचित नहीं है। उपरोक्त व्याख्या के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि वादीगण प्रतिवादीगण के रु० १६००/- भी वापस पाने के अधिकारी हैं। जिस पर उन्हें आवश्यक न्यायशुल्क अदा करना होगा।

— आदेश —

एतदद्वारा वादीगण का वाद प्रतिवादीगण के विरुद्ध स्थायी निषेधाज्ञा हेतु सव्यय आज्ञप्त किया जाता है। स्थायी निषैधाज्ञा तदनुसार जारी की जाए।

एतदद्वारा पुनः आदेश किया जाता है कि प्रतिवादीगण वादीगण को तीन माह के अन्दर रु० १६००/- वापस करें, अन्यथा इसके बाद वादीगण, प्रतिवादीगण से रु० १६००/- पर ६/- प्रतिशत वार्षिक ब्याज पाने के अधिकारी होंगे और प्रतिवादीगण के खर्च पर ही डिग्री का निष्पादन वादीगण कराने के अधिकारी होंगे। तदनुसार डिग्री तैयार की जाए।

हस्ताक्षर—

२८-५-८३

(एस० पी० शुक्ल)
षष्ठम अति० मुन्सिफ मजिस्ट्रेट, (लखनऊ)

वादीगण के वकील :—

१. वेद प्रकाश एडवोकेट

२. रेवती रमन रस्तोगी एडवोकेट
राजा बाजार, (लखनऊ)

प्रतिवादीगण के वकील :—

१. जेड जिलानी, (लखनऊ)

IN THE HIGH COURT OF JUDICATURE AT ALLAHABAD (LUCKNOW BENCH) LUCKNOW

Writ Petition No. 5016 of 1983.
C. M, Application No 10658 (W) of 1983.

Shamshad Ali and others — Petitioners

Vs.

District Judge and others — opp, parties

Application for Stay

Lucknow Dated 20-9-1983

Hon'ble R. C. Deo Sharma. J.

Opposite parties No. 2 to 10 had filed a civil suit against the petitioners in the Court of Munsif, Lucknow, praying that the defendants be restrained from sacrifising buffalows on religious or other occasions. Please raised were several. It was alleged that the Personal Law of Mohammedan did not contemplates sacrifice of buffalow. It was also alleged that sacrifice of the buffalow would hurt the sentimental and religious feelings of other residents of the village, Other contenton was that there was an apprehension of breach of peace in case buffalows were allowed to be slaughtered. Yet other contention was that it would result in spreading disease and for reasons of public health also sacrifice of healthy buffalows, as was proposed, was not justified. The claim was contested on various grounds pleading inter alia that sacrifice was permitted by religion and provisions of Holy Quran. On a consideration of the entire matter the Court below decreed the suit for perpetual injunction restraining the defendants from sacrifising buffalows on religious occasions etc An appeal has been preferred which is pending before the learned District Judge. An application was also moved by the appellants praying for stay of the operation of the decree passed by the learned Munsif. The same has been rejected on the ground that there was provision for staying the execution of the decree but no provision existed for staying the operation of the decree. The present petition has been filed challenging the validity of the order passed by the first appellate court as also by the Court of the Munsif granting perpetual in junction. Learned counsel for the petitioners as also learned counsel for opposite parties No. 2 to 10 and Sri Tilhari, learned counsel appearing for the State have been heard at some length. The contention of the petitioner's learned counsel was that the sacrifice of quadrupeds was permitted by the Holy Quran and since buffalow was included amongst quadrupeds there should be no restraint on the sacrifice and that the trial court has incorrectly interpreted the provisions. A reference to the judgment of the trial court will indicate that while a witness of the petitioners was in the witness-box, relevant provisions of the Holy Quran were put to him and he was also asked to indicate if there was any specific provision permitting sacrifice of buffalows. A provisian was shown where it was mentioned that categories of quadrupeds were specified to be sacrificed by

specified classes of persons. When asked further with reference to this provision the witness could not indicate nor the learned counsel appearing for the petitioners has been able to show if there is any specific provision in the Holy Quran indicating that a buffalow could be sacrificed by any particular class of persons. Learned counsel for the State argued that the provisions in the Holy Quran indicate that no cattle could be sacrificed so long as it was useful to the community and in any case cow and buffalow dung was being used for manure purposes besides others. Be that as it may, while disposing of the in orim application it is not possible to go into the entire merits of the matter raised by the either side. The fact remains that the judgment of the trial court gives cogent reaons for arriving at the conclusions which without detailed hearing cannot be upset in these proceedings relating to interim order for suspending the operation of the trial court's judgment.

Looking also to the balance of convenience it would appear that if sacrifice of buffalow has not been made during the last two or three years, it may not be permitted as an interim measure unless the appeal itself is heard and decided on merits This is apart from the considerations of apprehension of breaca of peace, a point which was specifically raised in the litigation before the trial court. The learned counsel for the petitioners also argued that the learned District Judge was in error while rejecting the application for staying the operation of the trial court's decree. Order 41 Rule 5 states that an appeal shall not operate as a stay of proceedings under a decree or order appealed from except so far as the Appellate Court may order. It would appear that the appellate court could have passed appropriate order if it was convinced as to the merits of the matter. But it is useless to consider that aspect of the matter in view of the fact that looking to the balance of convinence and the totallity of tne circumstances already referred to above, there is no case for granting interim order suspending operation of the trial court's decree for a perpetual injunction. It may be observed that perpetual injunction has bsen granted only to restrain sacrifice of buffalows and consequently it cannot be said to be an absolute ban on sacrifice or that it would be unreasonable on the ground of absolute prohibition. Learned counsel for the petitioners also argued that the decree for realisation of Rs. 1900/- may in any case be stayed. The petitioners are free to move the first appellate court for stay where this point does not appear to have been pressed as the only point pressed was for staying the operation of the decree with respect to perpetual injunction. Learned counsel also argued that the first appellate court may be directed to decide the appeal expiditiously as the occasion for sacrifice will again come in the next year. It is expected that the appellate court will expeditiously decide the matter well in time before the occassion for sacrifice arises next year.

The application for interim relief is accordingly rejected.

Sd. R. C. Deo Sharma
20-9-1983

Present
Arif Khan Advocate — for Petitioners
H. N. Tilahari Advocate — For State
Ved Prakash Advocate — Opp. parties
Rewti Raman Rastogi, Advocate,

तेइसवां शास्त्रार्थ–

स्थान : **हापुड़ (गाजियाबाद) उ० प्र०**

दिनांक : **सितम्बर सन् १९६३ ई०**

विषय : **वैदिक सिद्धान्तों की सच्चाई ?**

सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री**

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता : **श्री अमर स्वामी जी महाराज (पूर्व श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ–केशरी) एवं उनकी शिष्य मण्डली**

शास्त्रार्थ आरम्भ

नोट—

श्री पण्डित माधवाचार्य जी सन् १९६३ में हापुड़ आये, और सनातन धर्म सभा की ओर से उनके कई भाषण हुए। उन्होंने अपने भाषणों में निम्न बातें कही।

श्री पण्डित माधवाचार्य जी शास्त्री—

१. सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि, **"सृष्टि के आरम्भ में सब मनुष्य जवान उत्पन्न** हुए, **और आकाश से धड़ाम-धड़ाम गिर गये"**।

२. स्वामी श्रद्धानन्द जी ने जब गुरुकुल कांगड़ी खोला, तब में उनके पास गया और मेंने कहा कि स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि, **"गुरुकुल शूद्रों के लिए होता है"** स्वामी श्रद्धानन्द जी बोले **"मैंने तो ऐसा कही नहीं पढ़ा"** तब मेंने कहा कि **"आपने एक आँख से पढ़ा है मैंने दोनों आँखों से पढ़ा है"** और मैंने सत्यार्थ में से वह स्थल निकाल कर दिखाया तो **"श्रद्धानन्द जी आवाक् रह गये"** उनसे कुछ भी उत्तर नहीं बन सका।

३. आर्य समाजियों को **"ॐ"** लिखना नहीं आता है, ये लोग **"ॐ"** को **"ओ तीन म्"** अर्थात् **"ओ३म्"** लिखते हैं।

नोट—

आर्य समाज हापुड़ में उन दिनों आर्योपदेशक विद्यालय था, जिसके आचार्य श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी थे। उनको इन बातों का पता चला, उन्होंने तुरन्त एक विज्ञापन छपाया, उसमें पुराणों के प्रमाण से बताया कि, सृष्टि के आदि में कौन कौन जवान उत्पन्न हुए ? कौन कौन दाढ़ी-मूंछों वाले उत्पन्न हुए ? कौन-कौन उत्पन्न होते ही युद्ध करने लगे और कौन-कौन उत्पन्न होते ही माता के पास से चले गये आदि ?

शिष्य मण्डली को निर्देश—

और श्री आचार्य जी ने अपने विद्यालय के शिष्यों को जिनमें मुख्यत: श्री पण्डित ठाकुर विक्रम सिंह जी व श्री पण्डित वीरपाल जी को पण्डित माधवाचार्य जी के पास भेजा, कि तुम श्री पण्डित जी के व्याख्यान के पश्चात् बड़ी सभ्यता व शिष्टाचार से यह पूछना कि—

१. गुरुकुल कांगड़ी श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी ने नहीं बल्कि श्री लाला मुन्शीराम जी ने खोला था, तो तुम स्वामी श्रद्धानन्द जी के पास कैसे पहुंच गये ?

२. श्री लाला मुन्शीराम जी ने गुरुकुल कांगड़ी को सन् १६०२ में खोला था, उस समय आपकी आयु क्या थी ? आपकी वर्तमान आयु तो इतनी है नहीं जो उस समय आप ऐसे प्रश्नोत्तर करने के योग्य हों ! या आप जवान उत्पन्न हुए थे ? जो जन्म लेते ही "सत्यार्थ प्रकाश" पढ़कर उनके पास पहुंच गये। दूसरे आपने यह कहा कि स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश को **"एक आँख से पढ़ा था"** तो पण्डित जी का चित्र दिखाते हुए कहना कि—स्वामी श्रद्धानन्द जी की दोनों आंखें थी उन्होंने एक आंख से क्यों पढ़ा होगा ? स्पष्ट है कि आपकी यह कहानी झूठी है।

३. सत्यार्थ प्रकाश उनके सामने रख कर उनसे कहना कि—इसमें से वह स्थल दिखलाइये जहां यह लिखा है कि सृष्टि आरम्भ में **"जवान मनुष्य धड़ाम-धड़ाम भूमि पर गिर पड़े"।**

४. इन यजुर्वेद के महीधर व उव्वट के भाष्यों को साथ ले जाओ, इनको दिखलाकर भरी सभा में श्री पण्डित माधवाचार्य जी से पूछना कि—महाराज जी ! इनके मूल में भी व दोनों के भाष्यों में भी "ॐ" की जगह **"ओ३म्"** ऐसा ही छपा हुआ है। कहीं आपके आचार्य भी तो ओम् लिखना नहीं जानते थे ? क्या आप अपने आचार्यों को भी वैसा ही मानने को तैयार हैं ?

५. जो विज्ञापन आचार्य जी ने छपवाये थे, उनको भी अपने शिष्यों को दिया, जिसमें जवान उत्पन्न हुए लोगों के नाम पुराणो के प्रमाणो सहित छपाये थे। इन्हें पण्डित जी को देना और दिखाते हुए पूछना क्या यह ठीक नहीं है ?

६. एक दूसरा विज्ञापन यह भी था कि—**"कल रात्रि को आर्य समाज हापुड़ के विशाल प्राङ्गण में ८ से ११ बजे तक शास्त्रार्थ पण्डित माधवाचार्य जी के साथ होगा"** सभी सज्जनों से निवेदन है कि वह इस बात का ध्यान रक्खें कि कहीं पण्डित जी भाग न जायें।

शिष्य मन्डली पण्डित माधवाचार्य जी के पास पहुंची और उनके व्याख्यान के बाद आचार्य जी के निर्देशानुसार बड़ी सभ्यता व शिष्टाचार के साथ उन प्रश्नों की झड़ी लगा दी। पण्डित माधवाचार्य जी को जैसे लकवा मार गया हो ! एकदम चुप्पी साध ली, यह देखकर सारा पौराणिक मण्डल दंग रह गया। पण्डित माधवाचार्य जी ने एक भी प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। और एक हंगामा खड़ा कर दिया, सारी सभा तितर-बितर हो गई। उन विद्यार्थियों का वहां पर उपस्थित श्रोताओं पर बड़ा भारी असर पड़ा। और पण्डित जी के ढ़ोल की पोल खुल गई। जो शास्त्रार्थ के लिए विज्ञापन दिया था। पण्डित माधवाचार्य जी अगले दिन जो शास्त्रार्थ का समय निश्चित था, उससे बारह घण्टे पहले ही हापुड़ छोड़कर भाग गये। निश्चित समय पर आर्य समाज मन्दिर का सारा मैदान खचाखच श्रोताओं से भर गया, पण्डित माधवाचार्य जी का पता नदारद। सभी लोग एक स्वर से बोल उठे—**"हार गये ! सनातन धर्मी हार गये"** !! बोलो वैदिक धर्म की=जय !!!

परिणाम—

उसके बाद शान्ति पूर्वक सबको बैठाया गया, और शास्त्रार्थ केशरी श्री पण्डित ठाकुर अमर सिंह जी, आचार्य आर्योपदेशक विद्यालय (हापुड़) जी का लैक्चर लगभग ड़ेढ़ घण्टा हुआ। जिसमें आचार्य जी ने सनातन धर्म की एक-एक परत को उतारा ! दिखाया !! और कसौटी पर कसा !!! तो झूठा साबित हुआ, उस लैक्चर का इतना भारी प्रभाव हापुड़ जनता पर पड़ा कि शायद ही आज तक उस नगर में किसी के लैक्चर का उतना प्रभाव हुआ हो। लैक्चर के बाद वैदिक नारों के साथ सभा विसर्जित हुई।

—"सम्पादक"

चौबीसवां शास्त्रार्थ--

स्थान : **खैर (फतहगढ़)**
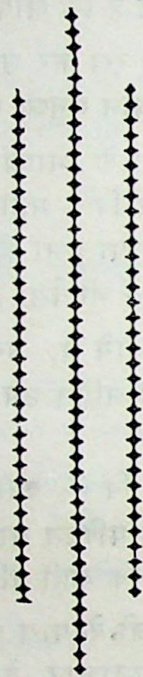
दिनाङ्क : **सन् १९५२ ई०**

विषय : **क्या आर्य समाज की मान्यताएं वेदानुकूल हैं ?**

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **आचार्य डा० श्री राम आर्य**

सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **(१) शास्त्रार्थ महारथी पण्डित पुत्तूलाल अग्निहोत्री (कर्मकाण्डाचार्य (खैर) फतहगढ़)**

(२) वेदाचार्य पण्डित रजनीकान्त शास्त्री (कानपुर)

(३) श्री वेणीराम शर्मा वेदाचार्य (काशी)

(४) श्री मदन मोहन जी शास्त्री, व्याकरण-तर्काचार्य (बम्बई)

पौराणिकों की ओर से प्रचारक : **श्री पौराणिक पण्डित अवस्थी जी**

शास्त्रार्थ से पहले

कई वर्ष हुए लगभग सन् १९५२ की बात है कि शास्त्रार्थ के चैलेंज का विचित्र शर्तों से युक्त एक विज्ञापन पौराणिक पण्डितों की ओर से प्रकाशित कराकर बांटा गया था। उस नोटिस में १०००) की जमानत दोनो पक्षों को सरकारी कोष में जमा करने की भी एक शर्त थी, साथ ही साथ तीन विषय भी शास्त्रार्थ के लिए दिये गए थे। नोटिस बटने से जनता में आर्य समाज के विरुद्ध विचार उत्पन्न होना स्वाभाविक बात थी। नोटिस बांटने वाला व्यक्ति अवस्थी जी के नाम से पुकारा जाने वाला एक पौराणिक पण्डित था। उसने आर्य समाज के विरुद्ध मौखिक रूप से भी बहुत जहर उगला था। हमने उस पण्डित को सम्मुख आने के लिए ललकारा तो वह सामने आने का साहस न कर सका अतः उस चैलेञ्ज का हमने तत्काल एक विज्ञापन के रूप में प्रत्युत्तर दिया, जिसमें वेदादि शास्त्रों से विपक्षियों के दावों का सप्रमाण खण्डन करते हुए पौराणिक पाखण्डों की खुलकर धज्जियाँ उड़ायी गईं थी। हमारे इस उत्तर के बाद पौराणिकों के छक्के छूट गये। हमें बताया गया कि हमारे उत्तर का जवाब देने को कई सनातनधर्म सभाओं ने देश के कई प्रसिद्ध पौराणिक शास्त्रार्थ महारथियों को बार-बार लिखा, पर किसी ने उत्तर देने की हिम्मत नहीं की आर्य जनता की ओर से अनेक स्थानों से उस उत्तर के लिए निरन्तर माँग आती रही है। यह देखकर हमको उस पौराणिक शास्त्रार्थ के चैलेञ्ज वाले नोटिस सहित अपने उस उत्तर को कुछ विस्तृत रूप से पुनः पुस्तक के आकार में प्रकाशित करने का निश्चय करना पड़ा। प्रस्तुत पुस्तक में वही सब कुछ दिया गया है।

पाठक इस पुस्तक को पढ़ कर देखेंगे कि पौराणिक विद्वान किस प्रकार कायरता पूर्ण हमला करने को मैदान में उतरते हैं? जिस ढंग की बेतुकी शर्तें इस नोटिस में चैलेञ्ज के साथ दी गई हैं उन्हें देख कर पौराणिकों के दिल की घबराहट का पता लगता है। वे चाहते हैं कि जनता में अपने झूंठे पाण्डित्य की धाक भी जमा लेवें और शास्त्रार्थ के लिए मैदान में भी न उतरना पड़े। नियमादि के अड़ंगे लगा-लगा कर वे अपनी जान छुड़ाने की सदा कोशिश करते रहते हैं। शास्त्रार्थ में जनता के सामने धार्मिक सिद्धान्तों को दोनों पक्षों को अपने-अपने तर्क व प्रमाणों के द्वारा सत्यता प्रतिपादित करने की जिम्मेवारी होती हैं, न कि हार-जीत का जुआ खेलने का ब बेतुके नियमों के अड़ंगे लगा कर शास्त्रार्थ से जान छुड़ा कर भागने की कोशिश करनी चाहिये। शास्त्रों का जिसने मन्थन किया है, जिसकी धार्मिक साहित्य में पूर्ण गति होगी, जिसने तुलनात्मक अध्ययन अपने व अन्य धर्मों के साहित्य का किया होगा वह पूर्ण विद्वान् ही शास्त्रार्थ समर में उतरने की योग्यता रखेगा। केवल व्याकरण या साहित्य शास्त्री शास्त्रार्थ के क्षेत्र में ५ मिनट भी खड़ा नहीं रह सकता, यह हर पढ़ा लिखा व्यक्ति समझ सकता है।

अतः इस प्रकार बेतुकी शर्तें विद्वानों के मध्य में अपमान-जनक व अमान्य होती हैं। न विद्वान् लोग जो शास्त्रार्थ के इच्छुक् होते हैं ऐसी शर्तें पेश ही करते हैं। स्पष्ट है कि पौराणिकों का चैलेञ्ज केवल जनता को धोखा देकर अपना पाण्डित्य दिखाने मात्र के लिए था।

कासगंज (उ० प्र०) — निवेदक—
दिनांक १५-११-१९६० ई० — **"आचार्य डा० श्री राम आर्य"**

पौराणिक विद्वानों की ओर से—

पौराणिक विद्वानों द्वारा जो शास्त्रार्थ के लिए नोटिस छापकर बांटा गया था व जिसके उत्तर में हमने यह पुस्तक लिखी है, वह निम्न प्रकार था—

॥ नोटिस ॥

१०००) नकद इनाम

भारतवर्ष के समस्त पुराण मत खण्डन मतावलम्बियों को सूचित किया जाता है कि सनातन संस्कृत के निम्नलिखित सिद्धान्त वेदान्तर्गत हैं। कोई भी महानुभाव वैदिक रीत्यानुसार इन विषयों पर शास्त्रार्थ कर सकते हैं।

१—नमस्ते का पारस्परिक प्रयोग वेद प्रतिकूल है वेदों में ऐसा एक भी मन्त्र नहीं जो आपस में नमस्ते की आज्ञा देता हो।

२—यज्ञोपवीत प्रणव तथा गायत्री मन्त्र का वेदों में स्त्री व शूद्र के लिए अधिकार नहीं।

३—श्राद्ध, तर्पण, मूर्ति पूजा, श्रीराम व श्रीकृष्ण अवतार, पुराण वेदानुकूल हैं।

शास्त्रार्थ के नियम—

१—जो भी महानुभाव शास्त्रार्थ करना चाहें १००) की नकद जमानत उत्तर प्रदेशीय सरकार के कोष में जमा करें (वादी प्रतिवादी दोनों के लिए यह नियम लागू होगा)।

२—शास्त्रार्थ संस्कृत में होगा। शास्त्रार्थ करने वाले उभय पक्ष कम से कम शास्त्री परीक्षा (**Government Sanskrit College Benaras**) की उत्तीर्ण हों, साथ में प्रमाणपत्र लाना अनिवार्य होगा।

निवेदक—

१—शास्त्रार्थ महारथी पण्डित पुत्तूलाल अग्निहोत्री कर्मकाण्डाचार्य (खैर) फतहगढ़।

२—वेदाचार्य पण्डित रजनीकान्त जी शास्त्री कानपुर।

३—वेणीराम शर्मा वेदाचार्य काशी।

४—मदनमोहन जी शास्त्री व्याकरण-तर्काचार्य बम्बई।

शास्त्रार्थ आरम्भ

श्री पौराणिक पण्डित समुदाय—

"नमस्ते" का पारस्परिक प्रयोग वेद प्रतिकूल है (वेदों में ऐसा एक भी मन्त्र नहीं जो आपस में नमस्ते की आज्ञा देता हो)।

श्री आर्य पण्डित—

आपने **"आँखों के अन्धे नाम नैन सुख"** वाली कहावत चरितार्थ की है। ज्ञात होता है कि आपने कभी वेदों की शक्ल तक नहीं देखी है, इसीलिए आप ऐसी बात कहते हैं। देखो परस्पर में नमस्ते करने की आज्ञा वेदों में दी है। **"नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय च चापराय च नमो मध्यमाय च नमोजघन्याय च बुध्न्याय च।** (यजुर्वेद अध्याय १६ मन्त्र २६) **अर्थात्**—बड़ों को, अति छोटों को, पूर्वजों को, अपने से छोटे व नीच को मध्य वालों को सरल स्वभाव वालों को व शूद्रादि सभी को परस्पर में नमस्ते (एक दूसरे का अभिवादन) करना चाहिये। वेद ने तो सभी को नमस्ते का अधिकार दिया है, किन्तु पौराणिक धर्म में तो विष्णु का उपासक यदि भूलकर भी शिव ब्रह्मा आदि देवताओं को प्रणाम कर बैठे तो मरकर पाखाने का कीड़ा बनता है। देखो प्रमाण—

वैष्णवःपुरुषोयस्तु शिव ब्रह्मादि देवतान्। प्राणमयेदर्चयेवापि विष्टायां जायते कृमिः॥
(वृद्धहारित स्मृति अ० ११ श्लो० २६१)

श्री पौराणिक पण्डित समुदाय—

यज्ञोपवीत—प्रणव तथा गायत्री मन्त्र का वेदों में स्त्री तथा शूद्रों के लिए अधिकार नहीं है।

श्री आर्य पण्डित—

इस प्रश्न से नितांत स्पष्ट है कि आपने वेदों को कभी नहीं पढ़ा है आप लोग कोरे पाण्डित्य का ढोंग बनाये फिरते हैं। लीजिये प्रमाण—**"देवां एतस्यावदन्तपूर्वे सप्त ऋषयस्तपसे ये निषेदुः भीमा जाया ब्राह्मणस्योपनीता दुर्धादधाति परमेव्योमन्"**। (ऋग्वेद १०।१०९।४) इस मन्त्र में दृष्टांत से ब्राह्मण की पत्नी को उपनीता (यज्ञोपवीत) धारण करने वाली बताया गया है। इससे स्पष्ट है कि स्त्रियों को यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार **है**। शिव पुराण में शिवजी की पत्नी पार्वती देवी का विवाह से पूर्व यज्ञोपवीत उसके पिता ने कराया था। पौरोहित्य कर्म स्वयं ब्रह्माजी की उपस्थिति में हुआ था देखिये प्रमाण—**"ततः शैलवरः सोपि प्रीत्या दुर्गोपवीतकम्। कारयामास सोत्साहं वेद मंत्रेश्शिवस्व च"** ॥१॥ (शिवपुराण पार्वती खण्ड अ० ४७) अर्थात् ब्रह्माजी बोले, तब शैल राज ने प्रीति पूर्वक वेद मन्त्रों से उत्साह के साथ दुर्गा (पार्वती) का जनेऊ कराया। इससे सिद्ध है कि लड़की का यज्ञोपवीत

विवाह से पूर्व हो जाना चाहिये। यह वैदिक प्रथा है। पार्वती का यज्ञोपवीत होना और स्वयं ब्रह्माजी की उपस्थिति में होना, संस्कार का वेद मन्त्रों से कराया जाना, तथा ऊपर वेदों में भी इसका विधान होना आर्य समाज के पक्ष को सत्य सिद्ध करता है। इससे यह भी प्रकट है कि पौराणिक विपक्षी पण्डितों ने पुराणों तक को भी नहीं पढ़ा है। उन्हें खामखां शास्त्रार्थ का शौक उठ खड़ा हुआ है। वैदिक धर्म में प्रणव व गायत्री मन्त्र ही क्या सम्पूर्ण वेद पढ़ने व सुनने का अधिकार तक स्त्री, शूद्र व चाण्डाल ही नहीं बल्कि मनुष्य मात्र को दिया है ताकि सभी अपना कल्याण उससे कर सकें। देखिये प्रमाण—"**यथेमां वाचं कल्याणी मा वदानि जनेभ्यः। ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।**" (यजुर्वेद अध्याय २६ मन्त्र २) अर्थात् ईश्वर कहते हैं कि—इस कल्याणी वेदवाणी का उपदेश ब्राह्मण क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र, स्त्री-सेवक और अन्त्यज के लिए (मनुष्य मात्र के लिए) मैं करता हूं। अतः सभी को वेद पढ़ने का अधिकार बिना किसी भेद भाव के है। प्रणव (ओ३म्) और गायत्री मन्त्र भी वेदों में होने से उनको जपने का अधिकार स्त्री व शूद्र सभी को हैं। वेद में भी कहा है—"**ओ३म् क्रतो स्मरः**" (यजुर्वेद अध्याय ४०/१५) अर्थात् - हे कर्मशील मनुष्य! तू ओ३म् का स्मरण कर। इसमें कहीं भी केवल पण्डित जी के लिए विधान व स्त्री शूद्रादि के लिए प्रतिबन्ध ओ३म् के नाम पर नहीं लगाया है। अतः आपका यह दावा भी गलत सिद्ध हुआ कि इनका विधान स्त्री शूद्र के लिए नहीं है। असल बात यह है कि धर्म के विषय में आपकी ठेकेदारी आर्य समाज ने समाप्त कर दी है। आप इससे कुढ़ते रहते हैं और उल्टे सीधे लांच्छन हम लोगों पर लगाया करते हैं आप जरा अपनी स्मृति की व्यवस्था भी हमारे पक्ष में देख लेवें। ,'**पञ्चयज्ञ विधानं तु शूद्रस्यापि विधीयते। तस्याप्रोक्तो नमस्कार कुर्वन्नित्यं न हीयते**"॥ (लघु विष्णु स्मृति अध्याय ५/१०) अर्थात्—इसमें शूद्र को पञ्चयज्ञ व नमस्कार करने का अधिकार दिया गया है। यदि ये पौराणिक पण्डित कुछ पढ़े लिखे होते और अपने ही शास्त्र भी इन्होंने देखे होते तो ऐसे व्यर्थ के प्रश्न इनको हमसे न करने पड़ते। एक बात और भी है कि वेद तो मनुष्य मात्र के लिये हैं, यह हमने ऊपर सिद्ध कर दिया पर आपके पुराण तो केवल शूद्रों के ही लिए बनाये गये थे। आप पौराणिक पण्डित उन्हें क्यों अपने गले से बाँधे फिरते हैं व क्यों शूद्रों के अतिरिक्त शेष तीन वर्गों को पढ़ कर सुनाया करते हैं? इसके लिये आप प्रमाण भी सुन लें।

पुराण शूद्रों के लिये हैं—

"**विशेष तश्च शूद्राणां पावनानि मनीषिभिः ॥५४॥ अष्टादश पुराणानि चरितं राघवस्य च ॥५५॥** (भविष्य पुराण ब्राह्म पर्व अ० १) अर्थात—१८ पुराण व रामायण विशेष कर शूद्रों को पवित्र करने के लिए बनाये गये थे। जहां पुराणकारों ने वेदार्थ को न समझ कर वेदों का स्त्री व शूद्रों के लिए निषेध लिख मारा है वहां यह भी स्पष्ट लिखा है कि पुराण केवल स्त्री व शूद्रों के लिए बनाए गए हैं। देखिये प्रमाण—"**स्त्री शूद्र द्विज बन्धूनान वेद श्रवणमतम्। तेषामेव हितार्थाय पुराणानि कृतानि च**" ॥२१॥ (देवी भागवत स्कन्ध १ अ० ३) अर्थात् स्त्री व शूद्रादि को वेद सुनने का अधिकार नहीं है अतः केवल इन्हीं के हित के लिए पुराणों की रचना की गई है। परन्तु आप लोग स्वार्थवश दोनों वेद और पुराणों पर कब्जा जमाये बैठे हैं। पुराण केवल शूद्रों को (बे पढ़े लिखे लोगों को) ठगने खाने के लिए आपने अपने हथियार बना रखे हैं जो कि वास्तव में शूद्रों की ही सम्पत्ति है व उन्हीं के लिए बने थे। रही वेद की बात! उसके लिए हमने ऊपर सिद्ध किया है कि वेद मनुष्य मात्र के लिये हैं। अतः आपका यह आक्षेप भी निर्मूल सिद्ध हो गया! अब शूद्र व स्त्रियों के लिये जनेऊ (यज्ञोपवीत) के चन्द उदाहरण और भी सुन लेवें।

शूद्रों को जनेऊ—

कुश सूत द्विजातोभ्यांद्राज्ञां कौशेय पट्ठकम् । वैश्यानां चीरणं क्षौमं शूद्राणां शणबल्कजम ॥६॥ कार्पासं पद्मजं चैव सर्वेषां शस्तमीश्वरः । ब्राह्मण्यां कर्तितं सूत्रं त्रिगुणं त्रिगुणो कृतम् ॥११॥ (गरुड़ पुराण ब्रा० का० अध्याय ४३) अर्थात्—कुश का सूत्र (यज्ञोपवीत) ब्राह्मण का, क्षत्रियों का रेशम का, वैश्यों का सूत का और शूद्रों का सनका होना चाहिये ॥६॥ हे राजन् अथवा सबके लिये हो सूत का होवे, जो ब्राह्मणी के हाथ का कता हुआ तीन बार तिहरा किया हुआ हो ॥११॥ पुराणकार स्पष्ट शब्दों में ब्राह्मणी स्त्रियों का कर्तव्य बताता है कि वे जनेऊ बनाकर चारों वर्णों को दिया करें। इस पुराण के प्रमाण से शूद्रों को यज्ञोपवीत धारण करने का पूर्ण अधिकार होना स्पष्ट है। पीछे दिये लघु विष्णु स्मृति के प्रमाण से शूद्र का पंच यज्ञ करने का अधिकार सिद्ध हो चुका है। स्त्री के जनेऊ धारण के प्रमाण और भी देखें।

स्त्री को यज्ञोपवीत—

प्रावृतां यज्ञोपवीतिनीवभ्युदानयज्जपते "सोमोऽद्दगंधर्वायिति" पश्चातग्ने संवेष्ठितं पाटमेव जातोयं वाऽन्यत्पदा प्रवर्तयन्ती वांचयेत् प्रमेपति यानः पन्था कल्पतामिति स्वयं जपेन्। (गभिलगृह्य-सूत्र २/१/१६-२१) अर्थात्—पीछे कन्या को कपड़े से ढक कर तथा जनेऊ पहिना कर पति के निकट ले आवे तथा "**सोमोऽद्द**" मन्त्र पढ़ें। अग्नि पीछे स्थापित कर या और कोई ऐसा ही आसन उस कन्या पैर से चला कर अग्नि के समीप "**र्बाह**" तक ले आये। इस समय इस भावी वधू को प्रेम से मन्त्र पढ़ावें।

एक प्रमाण और देखें—

"**द्विविधास्त्रियो ब्रह्मवादिन्यः सद्योवध्वश्च तत्र ब्रह्मवादिनीनां उपनयन, अग्नि बन्धन वेदाध्ययन स्वगृहे भिक्षा इति, वधूनां तप-स्थिते विवाहे कथञ्चिदुपनयनं कृत्वा विवाह कार्यः**" (मध्वाचार्य) अर्थात्—स्त्रियां दो तरह की होती हैं, ब्रह्मवादिनी और सद्य वधू। ब्रह्मवादिनियों को उपनयन-हवन-वेदाध्यन और अपने घर में ही भिक्षा करनी चाहिये। सद्योवधूओं को अवश्य विवाह के समय में नाम मात्र का उपनयन (यज्ञोपवीत) करना चाहिये। इससे स्त्रियों के यज्ञोपवीत धारण करने का पूर्ण समर्थन हो गया आशा है कि पौराणिक पण्डितों के ये भ्रम कि शूद्र व स्त्रियों को जनेऊ धारण व वेद पढ़ने तथा प्रणव व गायत्री जपने का अधिकार शास्त्रानुसार नहीं है दूर हो गये होंगे। जब सनातन धर्म के शास्त्र ही स्त्री व शुद्रों को वेदाध्ययनाधिकार व यज्ञोपवीत का समर्थन करते हैं तो इन अल्पशिक्षित अपनी ही शास्त्रमर्यादा को मेटने वाले पौराणिक पण्डितों को कोई अधिकार नहीं है कि वे उन पर प्रतिबन्ध लगा सकें। जहाँ तक अपने पक्ष का सम्बन्ध है, आर्य समाज वज्र मूर्खों (शद्रों) को यज्ञोपवीत का अधिकारी नहीं मानता है। यज्ञोपवीत का अधिकारी वही है जो शिक्षित एवं स्वच्छ है। जन्मना किसी को शूद्र मानना हमारी परिपाटी नहीं है। पर सनातन धर्म तो सभी को यज्ञोपवीत व यज्ञ का अधिकारी मानता है। तब उसे हमसे यह उल्टा प्रश्न करने का क्या अधिकार है? पौराणिक पण्डितों को अपने घर की व्यवस्था ठीक करनी चाहिये। उसके बाद हमसे टकराने की बात सोचनी चाहिये।

श्री पौराणिक पण्डित समुदाय—

श्राद्ध, तर्पण, मूर्ति पूजा, श्रीराम, श्रीकृष्ण अवतार व पुराण वेदानुकूल हैं।

श्री आर्य पण्डित —

ये सब बातें वेद के विरुद्ध हैं। आप व्यर्थ गलत बातें कह कर लोगों को बहकाते फिरते हैं। हम आपको बिना प्रमाणों के इस दावे का खण्डन करते हैं देखिए—"**पुराण धूर्तों ने बनाये हैं**"— "**धूर्तं पुराण चतुरैः हरि शंकराणाम्। सेवा पराश्च विहिता स्तव निर्मितानाम्॥** (देवी भागवत स्कन्ध ५ अध्याय १९ श्लोक १२) अर्थात्—पुराण बनाने वाले चतुर धूर्तों ने तुम्हारे बनाये हुए शिव और विष्णु की पूजा श्रेष्ठता लिखमारी है।) (यह देवताओं ने देवी से कहा था।) इससे सिद्ध है कि पुराण अनेक धूर्त लोगों ने व्यास ऋषि के नाम से बनाकर अपना-अपना धन्धा चलाया है और जनता को उन्हें धर्म ग्रन्थ बताकर उसे धोखे में रक्खा है। धूर्तों से ग्रन्थों को वेदानुकूल बताना यह पौराणिक पण्डितों का एक बड़ा पाखण्ड है। जब पुराण ही पुराणकारों को धूर्त बताते हैं तो उनके ग्रन्थों को प्रमाणिक ग्रन्थ कैसे माना जा सकता है? एक प्रमाण और देखिये। पद्म पुराण उत्तर खण्ड अध्याय २३६ (कलकत्ता छापा) में लिखा है कि शिवजी ने कहा है कि मैंने कुछ तामस शास्त्र बनाये हैं जिनके स्मरण मात्र से ज्ञानी भी पतित हो जाते हैं। फिर उन तामस पुराणों के नाम बताये हैं—"**मात्स्यं कौर्मं लैङ्गं शैवं स्कान्दं तथैव च ॥८१॥ आग्नेयञ्चषड़ेतानि तामसानि निबोधमे ॥८२॥** अर्थात्—मत्स्य, कूर्म, लिंग, शिव, स्कन्द, अग्नि ये ५ पुराण तामस पुराण हैं। आगे लिखा है। "**किमत्र बहुनोक्तेन पुराणेषु, स्मृतिष्वपि। तामसा नारकायेव वर्जयेत्तान् विचक्षणः**" ॥९०॥ अर्थात्—बहुत क्या कहें स्मृतियों में पुराणों में जो तामस शास्त्र हैं वे नरक में ले जाने वाले हैं। बुद्धिमान मनुष्यों को उनका बायकाट (बहिष्कार) कर देना चाहिए। आपने देखा कि सनातनी पण्डितों के पुराण व उनकी मान्य स्मृतियाँ आदि सब उनको घोर नरक में ले जाने वाले हैं। इसीलिए हमारा उनसे कहना है कि वे लोग इस शिव पुराणादि को सर्वथा त्याग देवें तो ठीक होगा। उपरोक्त वचन साक्षात् शिवजी महाराज के कहे हुए पुराण में लिखे हैं। किसी आर्य समाजी के नहीं हैं। इन अवैदिक पुराणों के अब कुछ चटपटे नमूने देखिए फिर उनको वेदानुकूल सिद्ध कीजिए। पुराणों में गोमांस भक्षण का विधान—"**पञ्चकोटि गवां मांसं सापूपं स्वान्नमेव च ॥९८॥ एतेषाञ्च नदी राशि भुञ्जते ब्राह्मणामुने**" ॥९९॥ (ब्रह्मवैवर्त पु० प्रकृति खण्ड अध्याय ६१) अर्थात् पाँच करोड़ गायों का मांस व मालपुए ब्राह्मण लोग खा गए अपने यहाँ के आप इस पाप कर्म को वेदानुकूल सिद्ध करें। और देखिए—"**रुक्मिणी की शादी में भयंकर वधशाला**"—**गवां लक्षं छेदनञ्च, हरिणानां द्विलक्षकम्। चतुर्लक्षं शशानाञ्च कूर्माणांच तथा कुरु ॥६१॥ दशलक्ष छागलानां भेटानांचतुर्गुणम् ॥६२॥ एतेषापक्वमासं च भोजनार्थं च कारय ॥६३॥** (ब्रह्मवैवर्त पु० कृष्ण जन्म खण्ड अध्याय १०५) अर्थात्—रुक्मिणी जी श्री कृष्ण की बाद को पत्नी बनी थी, उनकी शादी अन्यत्र हो रही थी। उसमें बारात को भोजन कराने के लिए रुक्मिणी के भाई ने यह आदेश दिया था कि १ लाख गायें, २ लाख हिरन, ४ लाख खरगोश, १० लाख कछुए, १६ लाख भेड़ें काटकर पकाई जावें। पौराणिक पण्डितों की मान्यतानुसार रुक्मिणी का परिवार पक्का सनातन धर्मी था। तब पौराणिक पण्डितों पर जिम्मेवारी आती है कि इस कसाई खाने को वैदिक सिद्ध करें। पुराणों में इसी प्रकार की ऊटपटांग बातें भरी पड़ी हैं जिनको पढ़ कर विद्वानो को परेशानी होती है। कुछ नमूने और देखिये—

पुराणों के श्री कृष्ण अवतार "विरजा" नाम की गोपी से एकांत में छिपकर व्यभिचार करते हैं। राधा को पता लग जाता है, तो वह कृष्ण को तगड़ी डॉट बताती हुई कहती है"--**हे कृष्ण ! वृजाकान्त गच्छ मत्पुरतो हरे। कथंदुनोषिमालोलं रति चौर अति लम्पटः ॥६१॥ हे सुशीले ! हे शशि कले ! हे पद्मावति हे माधवी निवार्यतांच धूर्तोऽयं किमस्यात्र प्रयोजनम् ॥६२॥** (ब्रह्मवैवर्त पु० कृष्ण जन्म खण्ड ४ पूर्वार्ध अध्याय ३) अर्थात् हे विरजा के प्रेमी कृष्ण तू मेरे घर से निकल जा, तू मुझे क्यों दुख देता है ? तू काम चोर और औरतों का लम्पट है। हे सुशीले ! हे शशीकला ! हे पद्मावती ! हे माधवी ! इस कृष्ण को यहां से निकाल बाहर करो, यह धूर्त है, इसका मेरे यहाँ क्या काम है ? और देखो "**गोपाल कामिनीजारश्चौर जार शिखामणि**"। (गोपाल सहस्रनाम श्लोक १३७) अर्थात्—श्री कृष्ण पराई औरतों के जार (लम्पट) चोर व व्यभिचारियों में शिरोमणि थे। सनातन धर्म के परम अवतार भगवान श्रीकृष्ण जी की कितनी गन्दी परिभाषा पौराणिक पण्डितों ने ऊपर उपस्थित की है। पढ़ कर श्रीकृष्ण के भक्तों को शर्म आनी चाहिए सनातन धर्म की यही तो विशेषता है कि वह अपने निष्कलंक पूज्य पुरुषों को भी व्यभिचारी शिरोमणि व धूर्त बताता है। महात्मा श्रीकृष्णचन्द्र जी महाराज बड़े विद्वान्, बड़े तपस्वी तथा कुशल राजनीतिज्ञ धर्मात्मा व्यक्ति थे। उन्हें पर-स्त्री गमन के लांछन लगाना बड़े पाप की बात है। पर पौराणिक लोगों को हमारी बात पसन्द नहीं आती है। तब हम उनसे पूछते हैं कि यदि आपकी बात ठीक हैं तो क्या ऐसे दुराचारी व्यभिचारी शिरोमणि व्यक्ति को आप त्रिकाल में भी अवतार सिद्ध कर सकते हैं ? महापुरुषों को दुराचारी बनाकर उन लोगों की भक्ति करके आप उनसे क्या सीखना चाहते हैं ? जिन पुराणों में महापुरुषों को कलंकित करने वाली ऐसी गन्दी बातों का समावेश है उनको त्रिकाल में भी वेदानुकूल सिद्ध नहीं किया जा सकता है। अपने रामावतार का ब्यान भी सुन लेवें। सीता से राम कहते हैं—"**यां त्वं विरहिता नीता चल चित्तेन राक्षसा। दैव सम्पादितो दोषो मानुषेण मर्याजितः ॥५॥** (बालमीकि रामायण युद्ध काण्ड सर्ग ११५) अर्थात्—जो तू चलायमान चित्त वाले रावण से हर ली गई थी, यह दैवकृत (भाग्य का) दोष था जो मुझ मनुष्य ने जीत लिया है। "**यत्कर्तव्यं मनुष्येण धर्षणा प्रतिमार्जिता। तत्कृतं रावणं हत्या मयेदं मान कांक्षिणा ॥१३॥ अथात्मानं मानुषं मन्ये रामं दशरथात्मजं ॥** (बालमीकि रामायण युद्ध काण्ड सर्ग ११७) अर्थात्—शत्रु द्वारा किये गये अपमान को मिटाने के लिये मनुष्य को जो कुछ करना चाहिए, वह मैंने मान चाहते हुए रावण को मार कर किया ॥१३॥ अब मैं अपने को मनुष्य तथा दशरथ का सच्चा पुत्र मानता हूं। रामायण में राम तो अपने को साक्षात् मनुष्य बताते हैं, पर उनके जिद्दी शिष्य उनकी बात को गलत बताकर उन्हें साक्षात् परमात्मा मानते हैं। यह सत्य की कैसी अवहेलना है ? राम तो सीता हरण को भाग्य का दोष मानते हैं पर पौराणिक लोग इसे राम का नाटक दिखाना मानते हैं। अब जरा सीताहरण के वियोग में राम का मार्मिक विलाप भी पाठक देखें—

न मद्विधो दुष्कृत कनकारी, मन्यद्वितीयेऽस्तु वसुन्धरायाम्।
शोकानुशोकाहि परम्पराया मामेतिभिन्दन् हृदयंमनश्च ॥

पूर्वमयानूनमभीप्सितानि, पापानिकर्मा ण्य सकृत्कृतानि ।
तत्रायमद्याय पतितो बिपाको, दुःखेन दुःखं यदहं विशामि ॥

**राज्यः प्राणाशः स्वजनैर्वियोगः पितुर्विनाशो जननी बियोगः ।
सर्वाणि में लक्ष्मण ! शोक वेगमापूर्यन्ति प्रविचिन्ततानि ।।**

**स राजपुत्रः प्रियया विहीनः शोकेन मोहेन च पीडयमानः ।।
विषादयन्भ्रातरमार्तरूपो भूयो विषादं प्रविवेष तीव्रम् ।।**

(बाल्मीकि रामायण अरण्य काण्ड सर्ग ६३)

अर्थात्—राम ने विलाप करते हुए कहा—मुझसा पृथ्वी पर कोई दूसरा पापी नहीं होगा, यह मैं मानता हूं क्योंकि शोक पर शोक मेरे हृदय और मन को भेदन करने के लिए प्राप्त हो रहे हैं। मैंने पूर्व जन्म में बहुत ही घोर पाप किये हैं और बहुत बार किये हैं जिनके फलस्वरूप दुःखों पर दुख मेरे ऊपर आ रहे हैं। में दुःखों में प्रवेश कर रहा हूं। राज्य का नाश सम्बन्धियों का बिछोह, पिता का मरण, और माता का छूटना, हे लक्ष्मण ! ये सारे ही शोक वेग विद्यमान है। प्रिया (सीता) से विहीन शोक तथा मोह से पीड़ित वह राजपुत्र (रामचन्द्रजी) अपने भाई लक्ष्मण को दुःखी करते हुए पुनः तीव्र दुःख में निमग्न हो गए। दुःखो को अपने कृत पापों का फल मानना एवं पत्नी हरण पर अत्यन्त विह्वल होकर बिलख-बिलख कर रोना राम के मनुष्य होने का प्रबल प्रमाण उपस्थित करता है। अन्धा हृदयहीन व्यक्ति ही राम के दुःख को दुःख न मानकर उनका ढोंग बनाना (लीला या नाटक) दिखाना मानेगा बाल्मीकि रामायण में ही आगे लिखा है—

**एवं संबिलपन् रामः सीता हरण कर्षितः दीन शोक समाविष्टो मुहूर्तं विह्वलोऽभवत् ।।२७।।
सन्तप्तेह्यवसनाङ्गो गतबुद्धि विचेतनाः । विषसादातरो दीनो निःश्वस्याशीतमायतम ।।१८।।**

(बाल्मीकि रामायण आरण्य सर्ग)

अर्थात् इस प्रकार विलाप करते हुए सीता हरण से अति दुःखी दीन, शोक युक्त राम थोड़ी देर के लिए व्याकुल हो गये ।।२७।। दुःख से कृश अङ्गों वाले संज्ञाहीन एवं चेष्टारहित राम आतुर हो बड़ा उष्णश्वांस लेकर बैठ गये। एक धार्मिक प्रवृत्ति के वैदिक आदर्शों पर चलने वाले व्यक्ति को पत्नीहरण पर जो मार्मिक मानसिक वेदना होनी चाहिए, राम भी पत्नी वियोग में उसी वेदना से पीड़ित हुए थे। इसी प्रकार क्रोध के आवेश में राम एक बार तो अपना विवेक यहां तक खो बैठे कि वह अपने भ्राता लक्ष्मण जी को मार डालने को उद्यत हो गये थे, जैसा कि पुराणकार ने लिखा है—**"राघवः कोप संयुक्तोभ्रातरं हन्तु मुद्यतः"** ।।२०।। (देवी भागवत स्क० अ० २५) अर्थात् राम क्रोध के आवेश में अपने भाई को मार डालने के लिए उद्यत हो गये थे। यह सब स्वाभाविक बातें थी। उस घोर एकांत निर्जन वन में राम विलाप करके किसी को तमाशा नहीं दिखा रहे थे। यह सब बातें राम को ईश्वर या ईश्वरावतार सिद्ध नहीं करती हैं। राम अपने दुर्भाग्य को सीताहरण पर कोसते हुवे कहते हैं—

"नास्त्य भाग्यतरोलोके मत्तोऽस्मिन्सचराचते" । येनयं महती प्राप्तामया व्यसन वागुरा ।।२६।।

(बाल्मीकि रामायण आरण्य काण्ड सर्ग ६७)

अर्थात् सचराचर लोकों में हमसे अधिक मन्द भागी और कोई नहीं होगा, क्योंकि हमने

इतना भारी दुख पाया है। **"उपास्य पश्चिमां संध्यां सहभ्रात्रास्यथाविधि। प्रविवेशाश्रमं पदतमषिचाभ्यवादयत्॥** (बा० रा० आ० काँ० सर्ग ११) अर्थात् राम ने भाई के साथ शाम को संध्योपासना करके अगस्त ऋषि के आश्रम में प्रवेश करके उनका अभिवादन किया। राम-लक्ष्मण-सीता सभी जगत्कर्त्ता प्रभु का नित्य संध्योपासन द्वारा ध्यान किया करते थे। यह बात बालमीकि रामायण के अनेक स्थानों में आई है। क्या ईश्वर या ईश्वर का अवतार भी किसी दूसरे ईश्वर की भक्ति करेगा ? सिद्ध है कि राम ईश्वरावतार नहीं थे वरन् श्रेष्ठ मनुष्य व राजपुत्र थे। उनके सम्पूर्ण कार्य उन्हें मनुष्य ही सिद्ध करते हैं अन्य कुछ नहीं, मेघनाथ के साथ युद्ध में लक्ष्मण के मूर्छित हो जाने पर राम ने अत्यन्त शोकातुर होकर विलाप करते हुये कहा था—**"किं मयादुष्कृतं कर्म कृतं मन्यत्र जन्मनि ॥१८॥ येन मे धार्मिको भ्राता निहिताश्चाग्रतः स्थितः ॥१९॥** (बाल्मीकि रामायण युद्ध कांड सर्ग १०१) अर्थात् मैंने ऐसे कौन से दुष्कर्म (पाप) पूर्व जन्म में किये हैं जिससे मेरा धर्मात्मा भाई मेरे सामने मरा पड़ा है। इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि राम ईश्वर या ईश्वरावतार नहीं थे। वह स्वयं अपने पूर्व जन्मों का होना स्वीकार करते थे तथा पूर्व जन्मों में किये हुये पापों का दण्ड ही वर्तमान जन्म के कष्टों को मानते थे। सीताहरण को भी राम अपने व सीता के पूर्व जन्मकृत दुष्कर्मों का फ़ल स्वीकार करते थे। उन्होंने स्पष्ट रूप से अपने मनुष्य होने की बात ऊपर के प्रमाणों में कही है। अब थोड़ा कृष्ण जी के बारे में देखिये। महाभारत में लिखा है कि अर्जुन ने कृष्ण से कहा—

दश वर्ष सहस्त्राणि यत्र सायँ गृहो मुनिः। व्यचरस्त्वंपुरा कृष्ण पर्वते गन्धमादने ॥११॥
दशवर्ष ! सहस्त्राणि दशवर्ष शतानि च। पुष्करेष्ववस कृष्णत्वमपो भक्षयन् पुरा ॥१२॥
ऊर्ध्वबाहु विशालाया वदर्या मधुसूदन। अतिष्ठ एक पादेन वायुभक्षः शतं समाः ॥१३॥
अवकृष्टोत्तरा संग कृषोधम निसंततः। आसीः कृष्ण सरस्वत्यां सत्रे द्वादश वार्षिके ॥१४॥
(महाभारत वन पर्व अध्याय १२)

अर्थात्—हे कृष्ण ! पूर्वकाल में आपने **"यत्र सायं गृह मुनि"** के रूप में दस हजार वर्षों तक गन्ध मादन पर्वत पर निवास किया है ॥११॥ हे कृष्ण ! पूर्वकाल में कभी आपने पुष्कर तीर्थ में ११ हजार वर्षों तक केवल जल पीकर रहते हुए वास किया ॥१२॥ हे मधुसूदन ! आप विशालपुरी के बद्रिकाश्रम में दोनों भुजा उठाये हुए केवल वायु का आहार करते हुए १०० वर्षों तक एक पैर से खड़े रहे ॥१३॥ हे कृष्ण ! आप सरस्वती नदी के तट पर उत्तरीय वस्त्र का त्याग करके बारह वर्ष तक यज्ञ करते समय शरीर से अत्यन्त दुर्बल हो गए थे। आपके सारे शरीर में फैली हुई नस नाड़ियाँ स्पष्ट दिखाई देती थी ॥१४॥ इस प्रमाण से स्पष्ट है कि कृष्ण जी पूर्व जन्मों में कोई बड़े तपस्वी रहे होंगे जो भिन्न-भिन्न जन्मों में भिन्न स्थानों में घोर कष्ट उठाकर तप किया करते थे अब इस महाभारत के उपरोक्त प्रमाण का समर्थन श्रीकृष्ण के मुंह से भी पुराण में ही देखिए—

मातर्मयादि तपसा परितोषितात्वम्, प्राग्जन्मनि प्रसुमनादि भिरर्चितासि।
धर्मात्मजेन बदरीवनखण्ड मध्ये, किं विस्मृतो जननि तेत्वयिभक्तिभावः ॥४८॥
(देवी भागवत् स्कन्ध ४ अध्याय २४)

अर्थात् - कृष्ण जी देवी से कहते हैं कि—हे माता ! मुझ धर्मात्मा के पुत्र ने पूर्व जन्म में बदरी

बन खण्ड में तुझे तप व अर्चना के द्वारा सन्तुष्ट किया था क्या तू उसे भूल गई जो मेरा उस जन्म में तुझमें भक्ति भाव था। इन प्रमाणों से यह स्पष्ट हो गया कि कृष्ण जी साधारण मनुष्य थे। उनको भी मनुष्यों की तरह जन्म मरण के चक्रों में निरन्तर घूमना पड़ता था। वे ईश्वर अवतार नहीं थे। आगे एक स्थान पर महाभारतकार ने कृष्ण अवतार की असलियत निम्न प्रकार खोली है। देखिये—

"स चापिकेशो हरि रुद्र वर्ह-शुक्ल मेकम् परचापि कृष्णम्। तौ चापि केशोनिविशेतां यद्नांकुल स्त्रियो देवकी रोहिणी च ॥३२॥ तयोरेकोवलदेवोवभूवण्योऽसो श्वेतस्तस्य देवस्य केशः। कृष्णो द्वितीयः केशवः सम्बभूव कैशोयोऽसौ वर्णतः कृष्ण उक्तः ॥३६॥ (महाभारत आदि पर्व अध्याय १९६)

अर्थात् - नारायण ऋषि ने अपने सिर से दो बाल उखाड़े जिस में एक सफेद व दूसरा काला था ॥३२॥ वे दोनों बाल यदुवंश की दो स्त्रियों देवकी व रोहिणी के भीतर (गर्भाशय में) प्रविष्ट हो गये। उनमें से रोहिणी के बल्देव प्रगट हुए जो नारायण के सफेद बाल थे। दूसरा जो काला बाल था वह देवकी के गर्भ से कृष्ण के रूप में प्रगट हुआ ॥६॥ इस प्रमाण ने पोराणिक अवतारवाद का दिवाला ही निकाल दिया। इससे कृष्ण का ईश्वरावतार होना कोरी गप्प रही। वह नारायण ऋषि की खोपड़ी के काले बाल का ही साक्षात् अवतार थे अर्थात् खोपड़ी का काला बाल ही स्वयं कृष्ण जी बना जिसे ये सनातनी भूल से ईश्वरावतार मानते हैं। पुराणों में श्रीरामचन्द्र जी की मजाक उड़ाते हुये पौराणिक मान्यतानुसार वेदव्यास जी ने उन्हें मूढ़ (मूर्ख) तक लिख मारा हैं। आप जरा उसका भी नमूना देख लेवें-—

सर्वज्ञत्वं गतं कुत्र प्रभु शक्ति कुतो गता। यद्धेम मृग विज्ञानं न ज्ञातं हरिणाँकिल ॥३९॥ राजन्माया बलं पश्य रामोहि काममोहितः। रामोविरह संतप्तो सरोद भृशमातुरः ॥४०॥ योऽपृच्छ-त्पादपान्मूढः क्व गता जनकात्मजा। भक्षिता वा हृता केन रुद्रन्मुच्चतरं ततः ॥४१॥

(देवी भागवत स्कन्ध ३ अध्याय २०)

अर्थात्—राम की सर्वज्ञता कहाँ गई? तथा उनकी प्रभु शक्ति कहाँ चली गई? उनको इतना भी पता नहीं लगा कि मारीच है या वास्तव में मृग है? ॥३९॥ राजन्! माया के बल को देखो राम कामदेव के प्रभाव से मोहित होकर और पत्नी के विरह में अति दुखी होकर रोते रहे ॥४०॥ और वृक्षों से वह मूढ़ (मूर्ख) राम पूछते रहे कि मेरी सीता कहाँ गई, उसे कोई हर ले गया या उसे किसी ने खा लिया? ॥४१॥ यहाँ पर पुराणकार ने राम के ईश्वरावतार का पर्दाफाश किया है। वह यह नहीं मानता कि रामचन्द्र जी नाटक खेलकर दुनियां को दिखाने आये थे। इससे सिद्ध है कि देवी भागवतकार राम को सर्वज्ञ परमात्मा या अवतार नहीं मानता था। अब बाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड सर्ग १४ को खोलकर देख लेवें जिसमे अश्वमेध यज्ञ में आपके महीधर जी द्वारा प्रदर्शित विधि के अनुसार भगवान राम की माता कौशल्या आदि रानियों को **"हयेन सम नियोजयन्**"लिख कर यज्ञीय घोड़े के साथ पौराणिक पण्डितों ने नियोजित (संभोग) करा दिया था। स्त्रियों का घोड़ों से संभोग करना क्या यह भी सनातन धर्म है? आपके यहाँ अवतारों की पैदायश के लिये गर्भाधान के तरीके भी विलक्षण प्रकार के काम में लाये जाते हैं। क्या इन विचित्र प्रकारों से जो पैदा हो उसे कोई भी अवतार सिद्ध कर सकता है? एक बात और भी बतावें कि इस प्रकार जो

पैदा होगा उसकी आकृति घोड़े की होगी या मनुष्य की? और वह घोड़े का पुत्र होगा या मनुष्य का? इस प्रकार हमने पीछे दिखाया कि राम व कृष्ण अपने कर्मों से एवं पुराणों के बनाने वालों की दृष्टि में भी अवतार नहीं थे। आपने कोई भी प्रमाण इनको अवतार सिद्ध करने के लिए नहीं दिए हैं अतः हमारा पत्र सिद्ध है। रही मूर्ति पूजा की बात! सो मूर्ति पूजा, गौ पूजा, पशु पूजा, बन्दर पूजा, उपस्थेन्द्रिय (शिवलिंग) पूजा आदि जो जिसकी पसन्द होती है वह करता हैं। हाँ इस प्रकार की पत्थर व मूर्ति पूजाओं का ईश्वर पूजा से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसीलिए भागवत पुराण में मूर्ति पूजकों को **"गधा"** लिखा है। देखिये—

यस्यात्म बुद्धिः कुणपे त्रिधातु के, स्वधीकलत्रादिषु भौम इज्यधीः।
यत्तीर्थ बुद्धिः सलिलेन कर्हिचित, जनेषु भिज्ञेषु स एव गोखरः॥३३॥

(भागवत पुराण स्कन्द १० अध्याय ८४)

अर्थात्—जो वात पित्त कफ से बने इस शरीर को आत्मा समझता है, जो स्त्री पुत्रादि में ममत्व बुद्धि रखता है, जो मिट्टी, पत्थर, धातु आदि से बनी मूर्ति आदि में पूज्य बुद्धि रखता है, विद्वान् मनुष्यों में वह साक्षात **"गधा"** है। जहां मूर्ति पूजकों को तथा गङ्गा आदि को तीर्थ मानने वालों को पुराणकार गधा बताता है वहाँ वेद भी जड़ प्रकृति की उपासना करने का निषेध करता है देखिये—

"अन्धन्तम प्रविशन्ति येऽसं भूतिमुपासते। ततो भूय इव तेतमो य उ संभूत्यांरताः"॥

(यजुर्वेद अ० ४० मंत्र ९)

अर्थात्—जो लोग ईश्वर के स्थान पर जड़ प्रकृति या उससे बनी मूर्तियों की पूजा उपासना करते हैं, वह लोग घोर अन्धकार (दुःख) को प्राप्त होते हैं। यजुर्वेद के कई स्थलों पर ईश्वर को अज तथा अजायमान कहा गया है जिसका अर्थ ही यह है कि वह जगदाधार परमेश्वर कभी जन्म नहीं लेता है। वेद से अवतारवाद का स्पष्ट खण्डन होता है कहीं भी मण्डन नहीं होता है। इस प्रकार वेद में अवतारवाद व मूर्ति पूजा का विधान व समर्थन बताना पौराणिक विद्वानों का कोरा ढोंग है जो कभी सिद्ध नहीं किया जा सकता है। मूर्ति-पूजा के बारे में बुद्धि से भी सोचा जा सकता है कि जिस कार्य को साक्षात् भागवत पुराण भी गधेपन का कार्य बतावे उसका समर्थन वेद कैसे कर सकते हैं? चारों वेदों में मृतक श्राद्ध, तर्पण का कोई विधान कहीं है? हां आपके पुराणों में विधि जरूर दी है मृतक श्राद्ध के खण्डन के लिये हमारी पुस्तक **"मृतक श्राद्ध"** देखी जा सकती है नमूना यहां भी देख लें—

"नियुक्तस्तु यथा श्राद्धे देवे वा मांस मुत्सृजेत्। यावन्ति पशु रोमाणि तावन्नरक मृच्छति॥

(वशिष्ठ स्मृति अ० ११ श्लोक ३१)

अर्थात् श्राद्ध व देवता के निमित्त न्योता देने पर जो ब्राह्मण मांस नहीं खाता है उस परोसे हुए माँस वाले पशु के शरीर पर जितने रोम हैं उतने समय (वर्ष) तक वह ब्राह्मण नर्क में जाता है।

और देखिये—

नियुक्तस्तु यथा न्यायं यो नात्ति मानवः । सप्रेत्य पशूताँ याति जन्म नामेक विंशतिम् ॥

(मनुस्मृति ५-२५)

अर्थात्—श्राद्ध में न्योता देने पर जो ब्राह्मण यजमान द्वारा पकाया व परोसा हुआ मांस नहीं खाता है वह ब्राह्मण मर कर २१ जन्म तक पशु बनता है। इसी प्रकार विष्णु पुराण अंश ३ अ० १६ में लिखा है देखिये—

हविष्य मत्स्यं मांसैस्तु शशस्य नकुलस्य च । सौकरच्छागलैणैयरोरवैर्ग वयेन च ॥१॥
और भ्रगव्यैश्च तथा मांसवृध्यो पितामहाः । प्रयान्ति तृप्तं मांसैस्तु नित्यं वर्घ्रीणासामिषैः ॥२॥

अर्थात् हविष्य भोजन से १ महीना, मछली से २ महीना, खरगोश के मांस से ३ महीना, नेवला के मांस से ४ महीना, सूअर के मांस से ५, बकरी के मांस से ६, कस्तूरी वाले हिरन के मांस से ७, सादा हिरण से ८, नीलगाय के मांस से ९, भेड़ के मांस से १०, तथा गाय के मांस से श्राद्ध करने से पितर ११ महीने तक (भूख प्यास से) तृप्त रहते हैं। यह है सनातन धर्मियों का मृतक श्राद्ध ! जिस पर उनको नाज है। है कोई माई का लाल पौराणिक पण्डित जो इस मांसाहार को जिसमें गौ मांस तक शामिल है वैदिक सिद्ध कर सके ? मृतक श्राद्ध तो पहले जमाने के पौराणिक पण्डितों (मांसाहारियों) द्वारा जुबान के जायके के लिए चलाया गया जो स्पष्टतया पाप कर्म है जिसमें खुलकर हिंसा का विधान प्रतिपादित किया गया है। आगे पुराण पढ़ने वाले पण्डित को श्राद्ध में बुलाने का निषेध किया गया है, देखिये—

ज्योतिर्विदोह्यथर्वर्णाः कीराः पौराण पाठकाः श्राद्धे यज्ञे महादाने वरणीयां कदाचन ॥२८३॥
श्राद्धे च पितरो घोरं दानं चेवतु निष्फलम् । यज्ञे च फलहानिःस्यात् तस्मान् परिवर्जयेत् ॥२८४॥

(अत्रिस्मृति)

अर्थात—ज्योतिषी अथर्ववेदीयकार (तोते की तरह जहां तहां रटा हुआ उपदेश करने वाले) तथा पुराण पढ़ने वाले ब्राह्मणों को श्राद्ध में नहीं बुलाना चाहिए ॥२८३॥ श्राद्ध में इनको बुलाने से श्राद्ध करने वालों के पितर घोर नरक में जाते हैं दान का फल निष्फल हो जाता है और यज्ञ का फल नष्ट हो जाता है ॥२८४॥

नोट—

आपने देखा कि पुराणों के बारे में सनातनी धर्म शास्त्रों की क्या सम्मति है। पुराण पढ़ने वाला जब इतना पतित माना गया है कि उसे किसी शुभ कार्य में नहीं बुलाना चाहिये तब पुराणों की क्या स्थिति बनती है ? यह हर विद्वान समझ सकता है। इसलिए हमारा कहना है कि पुराणों को धर्मग्रन्थों का स्थान नहीं देना चाहिये। उन्हें वेदानुकूल सिद्ध नहीं किया जा सकता है। इन ग्रन्थों को धर्म शास्त्र मानने के कारण ही वैदिक धर्म इतना बदनाम हुआ है। पुराणों ने सारे ही महापुरुषों व पौराणिकों के कल्पित देवताओं को बड़ा चरित्रहीन एवं भ्रष्ट साबित किया है। प्रत्येक ऋषि मुनि

को इन्होंने नाना प्रकार के मिथ्या कलंक लगाये हैं। इसीलिये हमारा परामर्श है कि हिन्दू कौम के उत्थान के लिये केवल वेदादि शास्त्रों को ही मानना चाहिये। पुराणों को अब सनातनी पण्डितगण छोड़-कर अगर वैदिक धर्मावलम्बी बन जायें तो उनका भी कल्याण होगा। वरना समय के चक्र में उनको बहुत घाटा उठाना पड़ेगा। पढ़ा लिखा समुदाय, अवतारवाद, मूर्तिपूजा, बहुदेवतावाद, मुर्दों के नाम पर श्राद्ध का ढोंग करना आदि अन्धविश्वासों की गलत अवैदिक बातों को अब मानने के लिए तैयार नहीं होगा। पौराणिक बातों से नवयुवक वर्ग नास्तिकता की ओर बढ़ेगा। इससे हिन्दू समाज को भारी हानि होगी वर्ण व्यवस्था गुण कर्म स्वभाव से माननी पड़ेगी। वरना चना बेचने वाले, पानी पिलाने अथवा दूकान करने वाले जन्मना ब्राह्मण को लोग लाला जी ही कहेंगे। शूद्र कर्म करने वाले वैश्य या क्षत्रिय को शूद्र ही माना जावेगा। साथ ही उन्नति करने वाले का वर्ण भी उसकी योग्यता गुण कर्म व स्वभावानुसार निश्चित होगा। ईश्वर चिन्तन करने से किसी को भी आप रोक नहीं सकेंगे संस्कृत विद्या को पढ़ने पर किसी भी व्यक्ति पर पाबन्दी नहीं लगाई जा सकेगी। इसी प्रकार प्रभु का ध्यान करने पर कोई भी गायत्री का जाप करेगा तो उसे रोकने का अधिकार किसी को नहीं है। नमस्ते का प्रचार पारस्परिक अभिवादन के लिए सारे संसार में प्रचलित हो रहा है। इसे हर कोई देख भी रहा है। वेदों का भी विधान पारस्परिक अभिवादन के लिए नमस्ते का ही है। आपके जै राम जी या जै गोपाल जी का नहीं है। इस प्रकार हमने इस पुस्तक में विपक्षी पौराणिक विद्वानों के तीनों मुख्य प्रश्नों का सप्रमाण खण्डन करते हुए वैदिक सिद्धान्तानुसार आर्य समाज की मान्यताओं का समर्थन किया है यदि किसी पौराणिक विद्वान् ने हमारे इस उतर का प्रत्युत्तर देने का साहस किया तो हम पुनः उसका जवाब पाठकों के सामने प्रस्तुत करेंगे।

हमारा कहना है कि यदि किसी सनातनी विद्वान में शास्त्रार्थ का साहस हो तो वह किसी सनातन धर्म सभा के द्वारा शास्त्रार्थ की बात तय करें। आर्य समाज को शास्त्रार्थ के चैलेंज सदा स्वीकार हैं। आर्य समाजी लोग इसके लिये सदैव तैयार रहते हैं। झूठे परचे छपा कर जनता में मिथ्या पाण्डित्य का रौब जमाने की अपेक्षा पौराणिक विद्वानों को शास्त्रार्थ के मैदान में अपनी योग्यता दिखाना हमारी दृष्टि में अधिक उचित होगा।

"डा० श्रीराम आर्य"
(कासगंज)

पच्चीसवां शास्त्रार्थ--

स्थान : शाहपुरा स्टेट (राजपूताना) राजस्थान
जिला—भीलवाड़ा ।
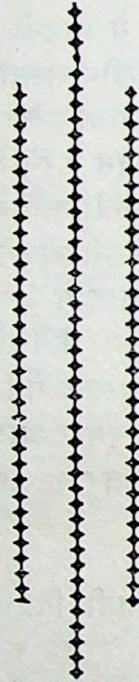
दिनाङ्क : ७ मई सन् १९२९ ई०

विषय : जैनियों के सिद्धान्तों का महत्व ?

जैन समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **श्री वर्धमान जी शास्त्री**

आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्त्ता : **श्री पंडित भगवान स्वरूप जी न्याय भूषण**

आर्य समाज के मन्त्री : **श्री पण्डित फतह लाल जी त्रिपाठी**

उपस्थित विद्वान् : **श्री ब्र० हरिश्चन्द्र जी शास्त्री**

शास्त्रार्थ के परिचय दाता : **विद्याभूषण विश्वेश्वर शर्मा, विशारद**
(मन्त्री आर्य समाज शाहपुरा स्टेट, राजपूताना)

आभार : यह शास्त्रार्थ सामग्री "**श्री भैरव सिंह वर्मा "आर्य" जोधपुर निवासी**" द्वारा प्राप्त हुई है। जिनके हम हृदय से आभारी हैं, जिन्होंने इस लुप्त सामग्री को प्रकाश में लाने के लिए सहयोग दिया। **"सम्पादक"**

शास्त्रार्थ परिचय

कुछ समय हुआ, मेरे एक मित्र ने एक पुस्तक मुझे देखने के लिए दी। उसका नाम **"शाहपुरा शास्त्रार्थ"** देख कर मैंने आश्चर्य एवं उत्कंठा से पुस्तक खोली। आश्चर्य इसलिए कि मुझे ६ वर्ष यहाँ रहते हो गये इस काल में यहाँ किसी शास्त्रार्थ के होने का मुझे ज्ञान नही और उत्कण्ठा स्वभावत: प्रत्येक आर्य को ऐसे विषयों में होती ही है। क्योंकि आर्य सर्वदा और सर्वथा सत्यासत्य का अन्वेषक रहता है परन्तु मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जबकि अपना ही नाम पुस्तक के अन्दर देखा।

बात यह है कि गत वर्ष एक जैन पण्डित जी यहाँ पधारे और आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में शंका समाधान के रूप में कुछ प्रश्न उन्होंने किये। जिनका उत्तर समाज की ओर से मैंने दिया। और कुछ प्रश्न मैंने किये, जिनका उत्तर उन्होंने दिया। इस प्रकार सात आठ दिन तक यह प्रश्नोत्तर चला, अन्त में पण्डित जी रुग्ण हो गये और प्रश्नोत्तर समाप्त हो गया। बस इसी का नाम **"शाहपुरा शास्त्रार्थ"** रख कर छपवा दिया, यही वह पुस्तक थी जो मेरे हाथ लगी।

वस्तुतः ऐसे शंका समाधान या प्रश्नोत्तर को शास्त्रार्थ का नाम देना शास्त्रार्थ शब्द से पूर्ण अनभिज्ञता प्रकट करना है। परन्तु हमारे नवयुवक पण्डित जी के लिए यह एक नई बात थी, इस लिए इसे बड़ा महत्व दिया और देवी, देवता मनाये कि पार पड़ गये। कहते हैं कि एक मनुष्य युद्ध में गोली लगने से मर गया, गोली सिर में आँख के पास से होकर गई थी, उसके एक साथी ने उसकी लाश देख कर कहा कि—ओहो! गनीमत है उसकी आँख तो बच गई। जरा इधर से गोली जाती तो उसकी आँख जाती रहती। वही दशा यहाँ है। पण्डित जी बीमार पड़ गये, प्रश्नोत्तर बन्द हो गया। तालियाँ पिट गईं, पर गनीमत है कि **"श्री गुरुचरणों"** की कृपा से शास्त्रार्थ तो कर लिया, अस्तु! **येन** केन प्रकारेण, पाँच सवालों में पण्डित जी को आना था। सो अपनी समझ में तो आ गये। परन्तु सचमुच बात क्या है? यह विज्ञ पाठक समझ ही लेंगे। आर्य समाज के प्लेटफार्म सदा ऐसे लोगों के लिये खुले रहते हैं। सैकड़ों आते हैं प्रश्नोत्तर कर चले जाते हैं। ऐसी बातों को कभी आर्य समाज महत्व नही देता। यह तो अखाड़े का उस्ताद है जो रोज बीसियों को कुश्ती लड़ा देता है। पर **"दङ्गल"** नाम उसी को देते हैं। जब बराबर की जोड़ होती है।

इसे तो प्रायः सभी धर्म वाले मानते हैं कि ऋषि दयानन्द की कृपा से **"दंदा शिकन यह जुबान हो गई"** !!

विनीत—

"भगवान स्वरूप"

शास्त्रार्थ से पहले

जिस समय यह प्रश्नोत्तर आर्य समाज में हो रहे थे उस समय यह स्वप्न में भी नहीं आया कि यह पुस्तकाकार होकर सर्वसाधारण के हाथों में पहुंचेगा। उसके पश्चात भी एक वर्ष तक इसका कोई विचार नहीं हुआ। प्रश्नोत्तर करने वाले "**श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्याय भूषण**" को रियासत ने ले लिया और उनके सुपुर्द दूसरा काम कर दिया, तथा उनके स्थान पर दूसरे उपदेशक पन्डित प्रसादी लाल जी आ गये और ये सब बातें भुला दी गई थीं, परन्तु "**शाहपुरा शास्त्रार्थ**" नामक एक पुस्तक आर्य समाज की अन्तरंग सभा के एक सदस्य पण्डित भूरालाल जी कथा व्यास के हाथ कहीं से आ गई, उसे उन्होंने स्वयं देखा तथा आर्य समाज के अन्य सदस्यों को भी दिखाया, तो सबको बड़ा आश्चर्य हुआ कि अभी कल की घटना पर इस प्रकार आवरण डाल कर पब्लिक के सामने रखने का अनुचित साहस, जैन समाज के उपदेशक और शास्त्री, झूठ-मूठ बड़प्पन पाने के लिए किस प्रकार चालाकी करते हैं। इसका पता चला। शास्त्री जी को ही इस कार्य में इसलिये अनुमान किया गया है कि यद्यपि पुस्तक के प्रकाशक व भूमिका लेखक एक अन्य सज्जन हैं, परन्तु वे अजमेर रहते हुये यहाँ के घटना क्रम वाले वर्णन के उत्तरदायी नहीं हो सकते। यद्यपि भूमिका उन्हीं सज्जन के नाम से है। परन्तु अनुमानतः वे हस्ताक्षर मात्र करने के उत्तरदाता हैं। घटना क्रम से उनका सर्वथा अनभिज्ञ होना स्वाभाविक है। सब कर्त्ता-धर्त्ता स्वयं शास्त्री जी हैं। जैसे यहाँ (शाहपुरा में) स्वयं जैन समाज की ओर से लिख कर आपने "**विद्यावाचस्पति**" की उपाधि व मानपत्र लिया सच तो यह है कि, जो बेचारे विद्या की परिभाषा ही नहीं जानते वे "**विद्यावाचस्पति**" की उपाधि क्या देंगे? जो वस्तु जिसके पास स्वयं ही नहीं वह दूसरों को देगा कहाँ से? कहा है—"**जगति विदितमेतद्दीयते विद्यते यन्नहि शशक निशांणकोऽपि कस्मै ददाति**" इसी पुस्तक को देख कर आर्य समाज़ का नवयुवक मण्डल उस प्रश्नोत्तर के पूर्ण रूप को जनता के सन्मुख रखने को अधीर हो उठा। "श्री मती अन्तरङ्ग सभा" आर्य समाज में विषय रक्खा गया, और सभा ने प्रकाशित करने की आज्ञा दे दी। जिसका परिणाम इस लघु पुस्तक का जनता के समक्ष आना है। यहाँ इस प्रश्नोत्तर के घटना क्रम को दिखाने के पूर्व यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि - "**शाहपुरा शास्त्रार्थ**" पुस्तक जो प्रकाशित हुई उसमें क्या चालाकी की गई है। पहले तो आद्यवक्तव्य में जो मिथ्या का सहारा लिया गया है वह क्रम से दिखाया गया है—

(१) "**शाहपुरा करीब बीस हजार घरों की बस्ती है. और करीब १५-२० हजार मनुष्यों की गणना है**"। पाठक स्वयं विचारें कि २० हजार घर और १५-२० हजार मनुष्य ! धन्य है रे !! शास्त्री जी की बुद्धि !!!

(२) "**यह भी सुनने में आया है कि आप (श्रीमान् दरबार साहब शाहपुरा) अखिल भारत-वर्षीय आर्य समाज के प्रेजीडैण्ट है**" खैर ! सुनने में आया है, आया होगा ! परन्तु बात यह है कि— आप अखिल भारतवर्षीय आर्य समाज ने प्रेजीडैण्ट हैं ही नहीं, श्रीमती परोपकारिणी सभा के मन्त्री हैं, हाँ ! आर्य समाज में आपका अधिक मान अवश्य है।

(३) "**तारीख ७ मई सन् १९२९ ई० को शास्त्री जी का "ईश्वर सृष्टि कर्तृत्व खण्डन" विषय था**" पाठकों ! ये अपने घर में चाहे जो विषय रक्खें, परन्तु जनता में केवल श्री ब्र० हरिश्चन्द्र जी शास्त्री ने यही सूचना दी थी कि "**जैन सिद्धान्तों के महत्व पर**" श्री पण्डित वर्धमान जी शास्त्री का भाषण होगा। सम्भव है जैन सिद्धान्तों का महत्व यही हो।

(४) "**दूसरे दिन आर्य समाज के मन्त्री महोदय ने शास्त्री जी से आकर यह कहा कि—आज आर्य समाज के प्रोग्राम में आपसे वाद-विवाद का समय रक्खा है सो आप आर्य समाज में पधारें।**" यह सरासर मिथ्या है, न आर्य समाज के प्रोग्राम में पहले से वाद-विवाद का समय रक्खा था, न मन्त्री जी बुलाने ही गये थे, इसका पूरा विवरण आगे घटना क्रम में देंगे। (प्रश्नोत्तर के समय आर्य समाज शाहपुरा के मन्त्री श्री पण्डित फतहलाल जी त्रिपाठी थे)।

प्रश्नोत्तर जो "**शाहपुरा शास्त्रार्थ**" में प्रकाशित किये उनमें अन्तिम पक्ष आर्य समाज का था, जो छोड़ दिया गया, और अपने पक्ष पर ही समाप्त कर दिया, यह एक महा चालाकी है। जो पण्डितों के लिये घोर लज्जा का स्थान है। अस्तु ! अब हम सर्व साधारण की जानकारी के लिये घटना क्रम का वर्णन करना आवश्यक समझ कर उसे ही रखते हैं बात यह है कि—तारीख ७-५-२९ के सन्ध्या समय श्री पण्डित वर्धमान जी शास्त्री का व्याख्यान सर्व साधारण जनता में हुआ उससे पूर्व पण्डित हरिश्चन्द्र जी शास्त्री ने पूर्व पीठिका के रूप में कहा कि शास्त्री जी का व्याख्यान "**जैन धर्म की खूबियों**" पर होगा। व्याख्यान में पण्डित जी ने निर्बल प्रमाणों द्वारा "**ईश्वर सृष्टि कर्तृत्व**" विषय के खण्डन करने का निष्फल प्रयास किया और पण्डित जी के व्याख्यान के पश्चात ही खड़े होकर उन्होंने (पण्डित हरिश्चन्द्र जी ने) प्रबल दार्शनिक प्रमाणों द्वारा पण्डित जी को "**ईश्वर सृष्टि कर्तृत्व**" विषय समझाया, परन्तु पण्डित जी पर तो साम्प्रदायिकता का नशा चढ़ा हुआ था। वे समझते कैसे ? फिर वे उत्तर देने खड़े हुए। समय अधिक हो गया था, इसलिये ब्र० हरिश्चन्द्र जी शास्त्री ने बात बढ़ाना अनुचित समझ कर कहा कि—"कल देख जायगा"। दूसरे दिन ८-५-२९ को बुद्धवार था औरआर्य समाज के साप्ताहिक अधिवेशन का समय था। (शाहपुरा में आर्य समाज का साप्ताहिक अधिवेशन बुधवार को हुआ करता है) सायंकाल से ही यह चर्चा बाजार में होने लगी कि आज आर्य समाज के साथ जैन पण्डित जी का शास्त्रार्थ होगा। परन्तु जब तक आर्य समाज में नियमित रूप से कोई सूचना न आवे तब तक आर्य समाज के अधिकारियों को क्या आवश्यकता जो ऐसे व्यर्थ के पचड़े में पड़ें। अस्तु ! सायंकाल आर्य पुरुष सत्संग में बैठे ही थे कि जैन समाज की ओर से एक व्यक्ति ने (जिसका नाम माँगीलाल जी सेठी हैं) आकर न्याय भूषण जी से कहा कि—"**शास्त्री जी आना चाहते हैं, यदि आप बुलावें**" न्याय भूषण जी ने उत्तर दिया कि—"**समाज में आने के लिए किसी को रोक-टोक नहीं है प्रत्येक व्यक्ति आ सकता है, यदि पण्डित जी आना चाहते हैं तो खुशी से आवें उनका स्वागत है**" सेट्ठी जी ने कहा कि—"**नहीं पण्डित जी शास्त्रार्थ करने को उद्यत हैं और इसीलिये आना चाहते हैं**" न्याय भूषण जी बोले—"**भाई यह हिन्दू संगठन का युग है शास्त्रार्थ का नहीं, शास्त्रार्थ से व्यर्थ वैमनस्य बढ़ता है, इसलिए आजकल आर्य समाज ने अपने क्षेत्र से इस कार्य को उठा दिया है, परन्तु फिर भी यदि आप लोगों को और शास्त्री जी की यही इच्छा है तो लिखित चैलेञ्ज भेजिये हम स्वीकार कर लेंगे, नियमादि निश्चय कर लेंगे और मध्यस्थ (निर्णायक) चुन कर**

नियम बद्ध शास्त्रार्थ करें तो अच्छा हो" सेठ जी और उनके दूसरे साथी बोल उठे कि—चलो जी ये तो शास्त्रार्थ करने से डरते हैं, और अपना पीछा छुड़ाना चाहते हैं। इस पर न्याय भूषण जी ने कहा कि—"यदि आप लोग ऐसा समझते हैं तो शास्त्री जी को भेज दीजिये"। इसके उपरान्त १०-१५ जैनी व पण्डित जी समाज मन्दिर पर आये और सन्ध्या, प्रार्थना के उपरान्त श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्याय भूषण ने खड़े होकर शास्त्री जी को अपने प्रश्न आर्य समाज के सन्मुख रखने को कहा। पण्डित जी ने ११२ प्रश्न आर्य समाज के सम्मुख रक्खे जो कि पहले से ही लिख कर तैयार कर लिये गये थे। यहाँ पाठकों को यह बतला देना आवश्यक होगा कि "**इन प्रश्नों में अधिक प्रश्न स्वामी दयानन्द और जैन समाज**" नामक पुस्तक से अक्षरशः उद्धृत किये हुये थे, जिनका उत्तर कि आर्य समाजों की ओर से पहले भी कई बार दिया जा चुका है। अस्तु ! किसी प्रकार प्रश्न करने का साहस तो किया। और शास्त्री जी ने यह भी कहा कि—"**आर्य समाज को २४ घण्टे का समय उत्तर देने के लिए मैं देता हूं और आर्य समाज चाहे तो जैन समाज से प्रश्न करे मैं अभी पाँच मिनट में उत्तर देता हूं**" न्याय भूषण जी ने खड़े होकर कहा कि—"**इन ११२ प्रश्नों का उत्तर मैं भी अभी दे सकता हूं। परन्तु यह प्रश्न लिखित आये हैं,** अतः औचित्य कहता है कि उत्तर भी **लिखित** ही **दिये जावें। इसलिए कल इसी समय मैं इनका उत्तर दूंगा। और जैन समाज से प्रश्न भी करूँगा। जिनका उत्तर मैं आशा करता हूं कि शास्त्री जी २४ घंटे में दे देंगे**" अनन्तर सभा विसर्जित हुई।

दूसरे दिन जैन प्रश्नों का उत्तर व १२१ नये प्रश्न समाज की ओर से दिये गये और सिलसिला चल पड़ा। पण्डित जी ने ५ मिनट के बजाये ४ दिनों में कठिनता पूर्वक आर्य समाज के उत्तर की समालोचना व प्रश्नों के उत्तर दिये। बीच-बीच में आप यह भी आग्रह करते रहे कि—"**निर्णायक के बिना कैसे निपटारा होगा ?**" एक दिन इसी सम्बन्ध में जनता में से एक श्रोता ने खड़े होकर यह भी कह दिया कि—"**पण्डित जी इस छोटे से शास्त्रार्थ रूपी** कार्य **में तो आप निर्णायक की आवश्यकता समझते हैं और सारे विश्व के कार्य का कोई निर्णायक मानते ही नहीं, यह कैसी उलटी बात है ? अब आप शास्त्रार्थ करें या न करें, हम लोग तो समझ चुके कि बिना निर्णायक के काम नहीं चल सकता, सकल संसार के प्राणियों के कर्मों का भी निर्णायक है और वही ईश्वर है**" यह सुनते ही पण्डित जी झुंझला उठे। यहाँ तक कि असभ्य शब्द भी बोलने लग गये। अन्त में बीमारी का बहाना करके अपना पीछा छुड़ाया। आर्य समाज के प्लेटफार्म पर अन्त में पण्डित भगवान स्वरूप जी न्याय भूषण ने प्रत्यालोचना और समालोचना जनता को सुनाकर कार्यवाही समाप्त कर दी, और यह भी कहला दिया था कि—"**अभी पण्डित जी बीमार हैं यदि चाहें तो अभी यह कार्य स्थगित कर दिया जावे और पण्डित जी के अच्छे हो जाने पर पुनः प्रारम्भ कर दिया जावे**", परन्तु कोई उत्तर न आने पर आठवें दिन कार्यवाही समाप्त कर दी गई।

परन्तु सत्य को छिपा कर "**उलटा चोर कोतवाल को डांटे**" वाली कहावत शास्त्री जी ने चरितार्थ की। चाहिये तो यह था कि मार खाकर, खिसिया कर, हार कर अगर चले गये थे, तो चुपचाप जाकर बैठ जाते, कोई भी न जानता कि क्या हुआ, परन्तु शास्त्री जी को तो अपने मताव-लम्बी (जैन) सेठ साहूकारों को उलटी-सीधी, झूठी सच्ची बातें सुना कर बड़ा बनना और ठगना अभीष्ट था। रहा नहीं गया और साधारण शङ्का समाधान को "**शास्त्रार्थ**" नाम देकर पाचों सवारों में नाम लिखाने की सूझी। उन्होंने समझा कि यह किताब अपने प्रेमियों तक ही रहेगी, दूसरों को पता

भी न चलेगा (नहीं तो शास्त्री जी को छपी हुई पुस्तक आर्य समाज में भेजनी तो चाहिये थी) आर्य समाजी चुपचाप रह जायेंगे, परन्तु उन्हें यह पता नहीं था, कि जिस आर्य समाज ने ईसाई-मुसलमान, पारसी, यहूदी, यहाँ तक कि इतने बड़े समाज अपने पौराणिक भाइयों तक के दाँत शास्त्रार्थ द्वारा कई बार खट्टे कर दिये हैं और सभी मतावलम्बियों को अपने-अपने दीपक रूपी मत को बचाने के लिए वैदिक धर्म रूपी सूर्य के सामने पर्दा डालने की कोशिश करनी पड़ रही है क्या यह शेर इन मच्छरों का शिकार पसन्द करेगा ? आप अजमेर, फिरोजाबाद, देहली आदि स्थानों में भी आर्य समाज के साथ जैनियों की अकाट्य त्रुटियों का वर्णन करने का दुःसाहस कर रहे हैं, न जाने शास्त्री जी ने स्वप्न में तो वे युक्तियें नहीं दी थीं, जो कि दिन निकलते ही स्वयं कट गईं, अब स्वयं जो (जैनी) १२ लाख थे घटोतरी की ओर जा रहे हैं। जो ६, ७ लाख ही रह गये हैं, परन्तु आज आर्य समाज के अकाट्य सिद्धान्तों का तो यह प्रबल प्रमाण है कि भारतवर्ष ही क्या ! समस्त संसार—क्या टर्की, क्या यूरोप, क्या चीन, क्या जापान ! यहाँ तक कि अमेरिका आदि देशों में भी अब आर्य समाज फूल-फल रहा है। यह सब आर्य सिद्धान्तों की सचाई का द्योतक है। शास्त्री जी जैनियों के सिद्धान्तों को गम्भीर बता कर उनकी अकाट्यता सिद्ध करते हैं ! सच है जैन सिद्धान्त इतने गम्भीर हैं कि जिनका पता स्वयं शास्त्री जी को भी नहीं लगा, भूले फिरते हैं और लोगों को खामख्वाह भुलावे में डाल कर पथभ्रष्ट कर पाप के भागी होने के लिए साधन इकट्ठे करते फिर रहे हैं। शास्त्री जी शीशे के मकान मे बैठ कर फौलाद के किले पर पत्थर फेंकते हैं, परन्तु ध्यान रहे कांच का मकान कुछ दिन का ही है। ईश्वर शास्त्री जी को सुबुद्धि दे कि वे अब शीघ्र सत्पथ वेदमत को स्वीकार करके अपना और दूसरों का कल्याण करने के लिये कटिबद्ध हो जावें।

हमारा विचार इस शङ्कासमाधान को छपाने का बिलकुल नहीं था, परन्तु शास्त्री जी ने **"शाहपुरा शास्त्रार्थ"** नामक पुस्तक छपवा कर जो जनता में भ्रम फैलाया है उसको दूर करने के लिए समस्त कार्यवाही सर्वसाधारण के समक्ष रख कर आशा करता हूं कि विज्ञ पाठक स्वयं ही समझ लेंगे कि सच्चाई क्या है ? केवल डींग मारने से कोई झूठा-सच्चा नहीं हो जाता।

॥ शामित्योम् ॥

निवेदक—

विद्याभूषण विश्वेश्वर शर्मा, विशारद
(मन्त्री, आर्य समाज शाहपुरा स्टेट)
राजपूताना

ता० १५-१०-१९३० ई०]

शास्त्रार्थ आरम्भ

(१) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

बिना कर्त्ता के कोई पदार्थ नहीं बन सकता, तब सृष्टि के कर्त्ता ईश्वर के कौन कर्त्ता हैं ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

सर्व सृष्टि के कर्त्ता ईश्वर का कोई कर्त्ता नहीं है, वह अनादि और अनन्त है, क्योंकि वह निराकार है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

परमात्मा अनादि और अनन्त है, इसमें जो हेतु दिया गया है वह निराकार है, इसलिये यह स्पष्ट करें कि ऐसी कौन-सी व्याप्ति है जो निराकार होकर अनादि, व अनन्त हो। आकाश निराकार अर्थात् शून्य है। सो क्या वह अनादि और अनन्त है ? अगर है तो स्वामी जी का ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पृष्ठ ११७ में जो यह लेख—"**जब यह कार्य-सृष्टि उत्पन्न नहीं हुई थी तब तक एक सर्वशक्तिमान परमेश्वर और दूसरा जगत का कारण अर्थात् जगत बनाने की सामग्री विराजमान थी, उस समय शून्य नाम आकाश अर्थात् जो नेत्रों से देखने में भी नहीं आता सो भी नहीं था, उस समय सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण, मिला के जो प्रधान कहाता है वह भी नहीं था उस समय परमाणु भी नही थे,**" उसका बाधक नहीं है ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

ईश्वर के अनादि और अनन्त में निराकार होने का हेतु दिया है। "**नियतावयवसमूहत्वमाकारत्वम्**" अर्थात् आकार नियत अवयवों के समूह का नाम है। उसकी व्याप्ति यह है जहाँ आकार है वहाँ अवयव-अवयवी हैं। और जहाँ अवयव-अवयवी का संयोग है वहाँ वियोग के पश्चात् व संयोग के पूर्व उसका नाश है, परन्तु जहाँ यह नहीं है, निराकारित्व है वहाँ अनादित्व व अनन्तत्व है। आकाश की उत्पत्ति से तात्पर्य उसका अविर्भाव और तिरोभाव है, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका में स्वामी जी के लेख को आपने पूरा नहीं पढ़ा, यदि पढ़ा होता तो आपको यह शंका नहीं होती, देखिये स्पष्ट लिखा है—"**जब यह कार्य-सृष्टि उत्पन्न नही हुई थी तब एक सर्वशक्तिमान परमेश्वर और दूसरा जगत का कारण अर्थात् जगत बनाने का कारण विराजमान था उस समय (असत्) शून्य नाम आकाश अर्थात् जो नेत्रों से देखने में, नहीं आता सो भी नहीं था, क्योंकि उस समय इसका व्यवहार नहीं था**" इत्यादि।

(२) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

निराकार के लिए कर्त्ता की आवश्यकता नहीं तो शून्य आकाश का कर्त्ता क्यों ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

आकाश शून्य है, इसकी उत्पत्ति से तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार एक कमरे में १० मनुष्यों के रहने का स्थान हो, और जब उसमें १० मनुष्य हो जाते हैं तो कहा जाता है कि—अब इसमें स्थान नहीं। फिर उनके निकल जाने पर कहते हैं कि—अब यहाँ स्थान हो गया, इससे यह तात्पर्य नहीं है कि पहले स्थान का नाश हो गया था और अब स्थान आ गया। इसी प्रकार आकाश की उत्पत्ति और नाश का तात्पर्य उसका आविर्भाव और तिरोभाव है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

आकाश के आविर्भाव तिरोभाव से आकाश की अनादिता सिद्ध होती है। उसके लिये भी स्वामी जी का उपर्युक्त लेख बाधक नहीं है ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

हाँ अनादिता सिद्ध होती है, और इसमें स्वामी जी का लेख बाधित नहीं है, (देखिये प्रश्न सं० १ की प्रत्यालोचना)।

(३) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

निराकार से साकार की उत्पत्ति कैसे हो सकती है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

निराकार-साकार का उपादान कारण नहीं हो सकता और निमित्त कारण होने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती, निराकार ईश्वर निमित्त कारण है, उपादान कारण नहीं।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

निराकार निमित्त कारण नहीं बन सकता, दूसरी बात निमित्त कारण उपादान कारण के बिना कुछ नहीं कर सकता इसलिये निमित्त उपादान के आधीन हुआ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

निराकारित्व और निमित्त कारणत्व के परस्पर विरोध में क्या हेतु है ? कई उदाहरण निराकार निमित्त कारण के हैं, यथा विद्युत जो निराकार है, ट्राम्बे चलाती है, चक्की पीसती है, रोशनी देती है, पंखा चलाती है। इत्यादि—दूसरे निमित्त कारण (कर्त्ता) जड़ उपादान के आधीन किस प्रकार हो सकता है ? हाँ ! जड़, चेतन के आधीन अवश्य है।

(४) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर सृष्टि को बनाया तो कब बनाया ? और कितने समय में ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्याय भूषण—

सृष्टि बनाने का समय आर्यसंवत्सर से प्रकट है जैसे कि आपने आगे चलकर अपने प्रश्न संख्या ९९ में उद्धृत किया है। और कितने समय में बनाया ? इससे आपका क्या तात्पर्य है ? क्योंकि सृष्टि का प्रारम्भ तो परमाणु के प्रथम स्पन्दन से ही हो जाता है। क्या आपका तात्पर्य यह है कि मनुष्य सृष्टि के उत्पन्न होने में कितना समय लगा ?

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

विसृष्टि की काल-संख्या जो आपके मत से है उससे पहले भी कोई समय था वा नहीं ? कितने समय में ? इसका यही मतलब है कि संयुक्त करने में कितना समय लगा ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

आपने सृष्टि बनाने का समय पूछा था, सो हमने बतला दिया। अब आपका विसृष्टि की काल संख्या के पूछने से क्या सम्बन्ध है ? क्या आपने सृष्टि और विसृष्टि में कोई भेद न समझ कर ऐसा लिखा है। यह तो हम कह ही चुके हैं कि सृष्टि के बाद विसृष्टि पुनः सृष्टि पुनः विसृष्टि प्रवाह रूप से अनादि हैं। कितने समय में बना इसके सम्बन्ध में यह है कि यद्यपि काल, प्रकृति के अन्तर्गत होने से अनादि है। परन्तु गणनार्थ सूर्यादि से होता है। फिर पहले कालगणना कैसे हो सकती है ?

(५) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

"बनाने" शब्द से संयुक्त पदार्थ से सृष्टि की उत्पत्ति सिद्ध होती है। किससे किसका संयोग किया ?

श्री भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

सजातीय परमाणुओं से सजातीय परमाणुओं का संयोग हुआ।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

मगर विरुद्ध संयोग क्यों प्रतीत होता है ? क्या जीव और प्रकृति (परमाणु) का सम्बन्ध सजातीय है ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

खेद है कि आप जीव और परमाणु का भेद नहीं जानते इसलिये ऐसा प्रश्न किया। अजी !

परमाणु में ही सजातीयता बतलाई थी, न कि जीव और परमाणु में ! जीव-परमाणु में तो व्याप्य व्यापक भाव सम्बन्ध बतलाया ही जा चुका है।

(६) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

और वे पदार्थ जिनका संयोग हुआ, कहाँ थे ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

परमाणुओं का संयोग हुआ और वे समस्त आकाश को आच्छादित किये हुये थे।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

इसके लिए स्वामी जी का वही लेख बाधित है जो आकाश को सादि बतला रहा है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

पहले प्रश्न के उत्तर में स्पष्ट कर दिया है।

(७) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

बिना सामग्री के पदार्थ बन नहीं सकते, तब वह सामग्री कहाँ से आई ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

सृष्टि की उत्पत्ति की सामग्री प्रकृति (परमाणु) है जो अनादि काल से है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

इसका बाधक वह लेख नहीं है, क्या परस्पर विरुद्ध भी प्रतिपादन कर सकते हैं ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

यह भी पहले प्रश्न के उत्तर में स्पष्ट कर दिया है।

(८) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

ईश्वर ने उन सामग्रियों को बनाया तो कैसे बनाया ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर प्रश्न ७ में है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

अनादि सामग्री कहाँ थी ? और स्वामी जी के लेख से वह कौन-सी सामग्री ली जाय ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना –

वही प्रकृति जिसे हम अनादि कहते हैं।

(९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

ईश्वर स्वयं निराकार है या साकार ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण –

उत्तर संख्या १ में दे चुके हैं।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

निराकर के पक्ष में पुनः वही दोष।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

उत्तर प्रश्न संख्या ३ में उत्तर में है।

(१०) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

निराकार हो तो उससे साकार की उत्पत्ति नहीं ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर प्रश्न संख्या ३ के उत्तर में देखो।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

निमित्त कारण उपादान के आधीन है, इसलिये ईश्वर निमित्त कारण होने से उपादान के आधीन है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

इसका उत्तर संख्या ३ में दे चुके हैं।

(११-१२) श्री जैन पण्डित वर्धमान श्री शास्त्री—

अगर साकार है तो कौन-सा आकार है ? तथा अगर संसारी जीवों के समान हाथ-पैर नाक वगैरा सब होता है तो हम में और ईश्वर में क्या भेद है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न ११-१२ का उत्तर प्रश्न संख्या १ के उत्तर में ही दिया जा चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

मानते ही नहीं है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

प्रश्न ११-१२ के उत्तर प्रश्न संख्या ३ में भी देखो।

(१३) श्री जैन पण्डित बर्धमान जी शास्त्री—

सृष्टि के पूर्व में इसकी क्या हालत थी ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

सृष्टि के पूर्व में सृष्टि लयावस्था में थी, अर्थात् सम्पूर्ण कार्य अपने उपादान कारणावस्था में थे।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जिस समय उपादान कारण लयावस्था में था, उसका क्या कारण है ? क्या निमित्त कारण का अभाव हो गया था ? या उस समय अभिव्यक्ति नहीं थी ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

न निमित्त कारण का अभाव था न अभिव्यक्ति का ! परन्तु यह नियम है कि जिसकी उत्पत्ति उसका लय। जिसका लय उसकी पुनः उत्पत्ति।

(१४) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि कुछ नहीं था तो किससे बनाया ? और कहाँ बनाया ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

पहले कहा जा चुका है कि सृष्टि का उपादान कारण प्रकृति (परमाणु) अनादि है और बनाने से तात्पर्य कारण का कार्यावस्था में परिवर्तन करने का है, स्थान का विवेचन पहले किया जा चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

क्या कारण सत्ता अनादि होने से, कार्य सत्ता अनादि नहीं है ? इस प्रश्न से सिद्ध होता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

यह कैसे ? कारण और कार्य दोनों अनादि कैसे हो सकते हैं ? कार्य का लक्षण शायद आप जानते ही नहीं। देखिये कार्य कारण से होता है। फिर दोनों अनादि कैसे ? क्या कहीं पिता और पुत्र दोनों एक अवस्था के हो सकते हैं ? जन्य-जनक में समता कैसी ?

(१५) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

पशु-पक्षी, सूरज, नदी, पहाड़ आदि कहाँ से आये ? और किस तरह आये ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

समस्त पदार्थ प्रकृति (परमाणु) के वैज्ञानिक संमिश्रण के फल हैं।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

वह वैज्ञानिक सम्मिश्रण कैसे किया गया ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

वैज्ञानिक सम्मिश्रण (रसायनिक प्रयोग) का उदाहरण अपने नित्य के भोजन व्यवहार में देख लीजिये।

(१६) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

और कहाँ उनको रक्खा ? वहाँ पहले क्या था ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जहाँ पर ये कारण रूप में थे, वहीं पर अब कार्य रूप में स्थित हो गये।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

"**जहाँ पर**" इस शब्द के द्वारा कौन से स्थान का संकेत है ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

आपके प्रश्न संख्या १६ में "**जहाँ**" शब्द का जिस स्थान के लिए प्रयोग है उसी स्थान के लिए हमने भी उत्तर में "**जहाँ**" शब्द का प्रयोग किया है।

(१७) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि शून्य था तो वह शून्य क्या चीज है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण -

इसका उत्तर प्रश्न १६ के उत्तर में दे दिया।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

१६वें प्रश्न का उत्तर समुचित होने पर ही यह विदित होवेगा।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

देखो प्रश्न संख्या १६ का उत्तर !

(१८) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि प्रलय के बाद परमाणुओं के संयोग से यह स्थूल रूप बना तो वे परमाणु किस हालत में थे ? और कहाँ थे ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण--

परमाणु अपनी अवस्था में ही थे ! और कहाँ थे ? इसका विवेचन हो चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

वह परमाणु जो स्वभाव से पृथक् रूप और जड़ है तो स्वभाव का परिवर्तन अर्थात् संयोग कैसे हो सकता है ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

हम कह चुके हैं कि, जड़ चेतन के अधीन होता है, और वह आवश्यकतानुसार उनका उपयोग कर सकता है। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि सर्वथा स्वभाव ही बदल देता है।

(१९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि पृथ्वी पर था तो अनादि है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इस प्रश्न का कोई अर्थ ही नहीं, पृथ्वी स्वयं परमाणुओं के संयोग से बनी है, फिर परमाणुओं को पृथ्वी पर कल्पना करना परमाणुओं के स्वरूप को न जानने का परिचायक है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जब आप इस बात को स्वीकार करते हैं कि यह पृथ्वी परमाणुओं के संयोग से उत्पन्न हुई है, तो क्या परमाणु पृथ्वी के विभाग से उत्पन्न नहीं है ? अगर ऐसा है तो पृथक् और जड़ स्वभाव कैसे ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

यह आपने ठीक ही कहा है कि परमाणु के संयोग से पृथ्वी बनी है तो पृथ्वी के विभाग से परमाणु की उत्पत्ति क्यों न मानें ? यही व्यवस्था रही तब तो बर्तनों से मिट्टी और मेज व सन्दूक आदि से लकड़ी बनी यह अच्छी व्यवस्था रही ?

(२०) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

प्रलय काल में ये एक से हो थे या छोटे बड़े ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण —

परमाणु कहते ही उसे है जो अतयन्त छोटा हो, और वह एक परिमाण है। यह प्रश्न ऐसे ही है जैसे कोई कहे कि मेरे पास १० तोला सोना है, उस पर कोई कहे कि दसों तोले बराबर हैं या छोटे बड़े ?

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

सब परमाणु एक से ही थे तो उनमें भिन्न-भिन्न गुणधारी क्यों ? गुण द्रव्य से भिन्न है या अभिन्न ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

मालूम होता है कि प्रश्न २१ का उत्तर देखने के समय रात्रि में निद्रा ने आक्रमण कर लिया होगा, इसलिये वह छूट गया, या आप भूख में हड़प कर गये।

(२१) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

सब समान गुणों के धारी थे या भिन्न-भिन्न ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

सृष्टि में जितने पदार्थ हैं या उत्पन्न हो सकते हैं उन सबका मूल परमाणु ही है। और क्योंकि कारण गुग कार्य गुणों के आरम्भक हैं और कार्य में अनेक प्रकार के गुण दिखलाई देते हैं, इसलिए तत्तद्गुण सम्पन्न कारण परमाणुओं का होना आवश्यक है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

२०वें प्रश्न की समालोचना देखिये।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना —

२०वें प्रश्न की प्रत्यालोचना देखिये।

(२२) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जड़ रूप थे या चेतन ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

परमाणु जड़ रूप ही होते हैं।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना –

ज़ड़ और पृथक् उसका स्वभाव ही है, उसका भी परिवर्तन होता है या नहीं ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना -

स्वभाव का सर्वथा परिवर्तन नहीं होता किसी निमित्त से कुछ काल के लिए परिवर्तन होता है।

(२३) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री…

या कुछ जड़ या कुछ चेतन ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर संख्या २२ के उत्तर में है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

मानते ही नहीं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

संख्या २२ की प्रत्यालोचना देखिये।

(२४) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

चैतन्य का जड़ से सम्बन्ध था या नहीं ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभषण—

जड़ और चेतन का तात्पर्य यदि परमाणुओं से है तो कह चुके हैं अन्यथा व्याप्य-व्यापक भाव है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जड़ के साथ चेतन का समवाय सम्बन्ध आप जो मानते हो वह व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध कैसे ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

जड़ परमाणु से चेतन का समवाय सम्बन्ध नहीं, प्रत्युत व्याप्य, व्यापक सम्बन्ध माना है। हाँ ! कर्म के साथ इसका समवाय सम्बन्ध है परन्तु द्रव्य नहीं, क्रिया है ।

(२५) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

चैतन्य सुख की हालत में थे; या दुःख की हालत में ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

चैतन्य स्व-स्व कर्मानुसार सुखी और मूर्छित अवस्था में थे ।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

स्वकर्मानुसार जब चैतन्य सुखी और मूर्छित अवस्था में थे उस समय ईश्वर को उन्हें जगाने का क्या अधिकार ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

कर्म फल की प्रेरणा ।

(२६) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

सब चैतन्य की शक्ति एक सी थी या पृथक्-पृथक् थी ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर प्रश्न २५ के उत्तर में है ।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

अगर स्व-स्व कर्मानुसार पृथक् शक्ति है तो इसमें ईश्वर को मानने की क्या आवश्यकता ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

तो क्या आप समझते हैं कि मुक्ति अनायास नंगे फिरने से प्राप्त होती है ?

(२७) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

मुक्त जीवों में और उनमें क्या भेद था ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर भी प्रश्न २५ के उत्तर में है ।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

क्या मुक्त जीव भी कर्मानुसार ही होते हैं ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

ईश्वर को मानने की आवश्यकता इसलिए है कि बुरे कर्म का फल कोई स्वयं लेने को उद्यत नहीं, हमारे व आपके प्रश्नोत्तर में व्यवस्थापक की आवश्यकता क्यों हैं ? प्रश्नोत्तर रूप कर्म ही आपको और मुझको फल दे देगा और हम दोनों को स्वीकार भी करा देगा ।

(२८) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

प्रलय के बाद उनको किस प्रकार की शकल दी ? और कैसे दी ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्याभूषण—

उनको किनको ? यदि उनसे तात्पर्य जीवों का है तो कहा जा चुका है कि जीव अनादि है और उसकी कोई शकल नहीं ।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

अगर जीव अनादि है तो क्या शकल नहीं है ? और अगर शकलधारी बना तो कब बना ? क्या मनुष्य का आकार नही है ? मनुष्य जीव नहीं है ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

शकल आप जानते ही नही किसे कहते हैं ? मनुष्य जीव नहीं है ? मनुष्य में जीव है । इसी प्रकार और भी समझें ।

(२९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

क्या इन्द्रिय शक्ति से बनाया या वचन शक्ति से ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

न इन्द्रिय शक्ति से न वचन शक्ति से केवल सत्ता मात्र से ।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

मानते ही नहीं ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

पहले आ चुकी ।

(३०) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि इन्द्रिय शक्ति से बने तो १०वां प्रश्न ही इसके लिए बाधक है।

(३१) इन्द्रिय शक्ति परिमित रूप से रहता है, इसलिए उससे परिमित कार्य ही हो सकता है।

(३२) अगर शब्द शक्ति से बनाया तो उसे श्रवण प्रत्यक्ष किसे किया ?

(३३) और वह शब्द कहाँ से निकला ? ईश्वर के जुबान थी ? और परमाणु के कान थे ?

(३४) ऐसा होना असम्भव है, परमाणुओं को ऐसी शक्ति की उत्पत्ति कैसे।

(३५) यदि प्रलय के बाद सब पदार्थ अपने आप हो गये तो ईश्वर ने क्या किया ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न ३० से ३५ तक के उत्तर ऊपर आ चुके हैं।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न ३० से ३५ तक मगर जो सत्ता शक्ति से मानी जाती है, वह सत्ता सृष्टि के पूर्व या पीछे नहीं थी, यदि नहीं थी तो ईश्वर नित्य कैसे ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

प्रश्न ३० से ३५ तक—सत्ता सर्वदा थी, और है, नित्य है, परन्तु सत्ता जैसे सृष्टि का कारण है वैसे विसृष्टि का भी।

(३६) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

प्रलय के बाद जब संसार परमाणु रूप में हुआ तो उसे स्थूल रूप में बनाने के लिये कौन से इञ्जन या मशीन से काम लिया ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसके लिए सृष्टि उत्पत्ति के विषय को समझने की आवश्यकता है, वह इस प्रकार है, कि सूक्ष्म परमाणु एक दूसरे की आकर्षण शक्ति से खिंचे हुए स्थिर थे। उस समय एक परमाणु के अन्दर स्वयम्भू परमात्मा ने अपनी सत्ता से गति उत्पन्न कर दी, फिर सभी परमाणुओं में स्पन्दन होकर सजातीय परमाणुओं के आपस में मिलने से आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी आदि का आविर्भाव हुआ। फिर अन्य पदार्थ उत्पन्न हुए।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जब परमाण पृथक् स्वभाव और जड़ रूप थे उस समय ईश्वर की सत्ता ने उन परमाणओं में कौन सी शक्ति का प्रयोग किया जिससे उसमें परस्पर आकर्षण व स्पन्दन होने लगा सत्ता मात्र से यह अपूर्व घटना होना असम्भव है, क्योंकि सत्ता तो इससे पूर्व के समय में भी थी, उस समय की सत्ता और इसमें क्या भेद है ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

परमात्मा अनन्त शक्तिमय है, उत्पत्ति के समय उत्पादक शक्ति का प्रयोग किया, असम्भव तो नहीं, हाँ विचार शक्ति के अभाव ने ही इसे असम्भव बनाया इसका क्या किया जाये? सत्ता में उत्पादक, विनाशक आदि अनेक शक्तियाँ हैं ।

(३७) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर उस समय इन्जन या मशीन नहीं थे तो कितने मजदूर लगाये गये ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न ३६ के उत्तार में देखिये। (समालोचना तथा प्रत्यालोचना भी प्रश्न ३६ की देखो)।

(३८) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

संयोग से पदार्थ अनादि उत्पन्न हो सकता है या नहीं ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जहाँ उत्पत्ति है वहाँ अनादित्व कहाँ ?

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

संयोगज, विभक्त दशा से विभाग संयोग से उत्पन्न जब होता है यह अनादि परम्परा क्यों नहीं ? जैसे कि आपने प्रश्न नं० ४१ में स्वीकार किया है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

हम यह मानते ही हैं कि यह संयोग, विभाग का क्रम स्वरूप से आदि और प्रवाह से अनादि हैं।

(३९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर नहीं तो जगत् किसके संयोग से हुआ ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

ऊपर कहा जा चुका है।

(४०) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

परमाणुओं के संयोग से हुआ तो वे किस दशा में थे ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

ऊपर कहा जा चुका है।

(४१) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

विभक्त दशा में थे तो संयोगनाशक गुण का नाम विभाग है।

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यह संयोग विभाग का क्रम प्रवाह रूप से अनादि है, यह हम कह चुके हैं।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न ३९ से ४१ का परमाणुओं के संयोग से ही पृथ्वी बनी है, यह स्वयं आप स्वीकार कर रहे हैं, ऐसी अवस्था में विभक्त परमाणु संयोगज थे या नहीं ? सिद्धान्त इसको अनादि मानना पड़ेगा, आप मान भी रहे हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

प्रश्न ३९ से ४१ तक का उत्तर, प्रश्न नं० ३८ की प्रत्यालोचना में देखिये।

(४२) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

क्या सूक्ष्म परमाणुओं से स्त्री-पुरुष की उत्पत्ति हो सकती है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यह प्रश्न ही निरर्थक है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जब सब परमाणु एक स्वरूप हैं, तो उससे स्त्री-पुरुष की उत्पत्ति जो कि परस्पर विरुद्ध है, उसकी उत्पत्ति कैसे ? क्या इन परमाणुओं में कोई अन्तर था, जो स्त्री और पुरुष के पिण्ड में बने हुए हैं यदि नहीं तो यह भेद और स्वभाव कार्य भिन्न क्यों होना चाहिये ? इतने विचारणीय प्रश्नों को आपने निरर्थक बतलाया यह आश्चर्य की बात है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

यह क्या अनर्थ कर रहें हैं ? हमने परमाणुओं का आकार एक जैसा माना है, गुण नहीं गुण तो हम कह चुके हैं कि—पृथक्-पृथक् हैं, स्त्री-पुरुष आदि की उत्पत्ति भी वैज्ञानिक सम्मिश्रण का फल है।

(४३) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

क्या विज्ञानवाद् इस बात को मानने के लिए तैयार है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न संख्या ४२ के उत्तर में आ चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ४२ के उत्तर की समालोचना देखिये।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

प्रश्न संख्या ४२ की प्रत्यालोचना देखिये।

(४४) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

ईश्वर ने जगत को क्यों बनाया ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जीव के पूर्व कर्म की सृष्टि के बनाने में प्रेरक है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जब जीव की पूर्व कर्म की प्रेरणा से सृष्टि रची गई तो क्या ईश्वर परतन्त्र नहीं है ? प्रेरकाधीन होगा तो अवश्य आश्रित होगा। यह नियम है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

इसके लिए न्यायाधीश का उदाहरण है उसे विचार लीजिये।

(४५) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

स्वेच्छा से ? परोपकारार्थ ? स्वभाव से ? या लीलावश ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर प्रश्न संख्या ४४ के उत्तर में है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

मानते ही नहीं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

मान लिया है।

(४६) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

इच्छा राग-द्वेषियों में होती है, जब ईश्वर वीतरागी है, तब उन्हें ऐसी इच्छा प्रकट करने की क्या आवश्यकता है ?

(४७) यदि इच्छा ही थी तो उस समय यह इच्छा जो सब जीव स्वतन्त्रता पूर्वक कर्म करे और उसको फल दिया जावे यह क्यों ?

(४८) यह स्वतन्त्रता किसने दी ? और इस स्वतन्त्रता के लिए परतन्त्रता से फल दिया जावे तो क्या यह सरासर धोका नहीं है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण —

प्रश्न संख्या ४६ से ४८ तक का उत्तर ऊपर आ चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ४६ से ४८ को मानते ही नहीं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

मान लिया है।

(४९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जब ईश्वर स्वयं सर्वज्ञ थे और उन्हें भूत, भविष्यत्, वर्तमान काल का विषय मालूम था, फिर यह भी ज्ञात था कि ये निन्द्य कार्य करेंगे, इसलिए इनकी सृष्टि करना या इन्हें स्वतन्त्रता देना उचित है ?

(५०) अगर स्वप्रतिष्ठार्थी होकर बनाया तो स्वप्रतिष्ठार्थी ईश्वर कैसे हो सकता है ?

(५१) मान लो कि ऐसे भी थे उनकी इच्छा पूर्ण नहीं हुई वर्तमान समय इसका विरोधी है इससे क्या सर्वज्ञत्व में विरोध नहीं आता ?

(५२) अगर ऐसा नहीं वैसे ही लोग क्या करते हैं ? इस बात को देखने के लिए किया हो तो ईश्वर तमाशा देखते हैं ?

(५३) मान लीजिये इच्छा पैदा हुई ? मगर वह इच्छा सृष्टि से पहले या पीछे क्यों न हुई ?

(५४) वह इच्छा कैसी है ? नित्य है या अनित्य ? ईश्वर से भिन्न है या अभिन्न ?

(५५) ईश्वर स्वयं नित्य है या अनित्य ?

(५६) ईश्वर की इच्छा या ईश्वर नित्य हो तो कार्य नित्य ही होने चाहिये, मगर ऐसा क्यों नहीं होता ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न संख्या ४९ से ५६ तक का उत्तर भी पहले आ चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना--

प्रश्न संख्या ४९ से ५२ तक कर्म के आधीन सिद्ध हुए। तथा **प्रश्न संख्या ५३ व ५४ में,** इच्छा शक्ति, मगर कर्म के आधीन। तथा **प्रश्न संख्या ५५ की**=ईश्वर नित्य है, पर अभिप्रेत है। तथा **प्रश्न संख्या ५६ पर**=ईश्वर नित्य हो तो सदा कार्य होना चाहिये इस प्रश्न का उत्तर ही नहीं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

प्रश्न संख्या ४५ से ५५ तक=मान लिया है। तथा **प्रश्न संख्या ५६** यह भी हो चुका है।

(५७) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

ईश्वर सर्वव्यापक हो तो सर्वत्र कार्य होना चाहिए ऐसा क्यों नहीं होता ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यह व्याप्ति दूषित है, क्योंकि व्याप्ति लक्षण का सम्यक् समन्वय नहीं होता।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

यह व्याप्ति दूषित नहीं, मगर भूषित है। कारण कि जहाँ-जहाँ धूम्र है वहाँ-वहाँ अग्नि है। और जहाँ-जहाँ अग्नि है वहाँ-वहाँ धूम्र है, और नहीं भी। नहीं उसी अवस्था में जहाँ धूम्रोत्पादक आर्द्रेन्धनादि महकारी सामग्री की आवश्यकता पड़ती है, जिससे व्याप्ति का सम्यक् समन्वय हो। क्या इससे ईश्वर को इच्छा की सिद्धि नहीं होती ? सर्व व्यापक नित्य होने पर तथा सत्तामात्र सृष्टि का कारण मानने पर क्या कार्य की उत्पत्ति में कोई बाधा दे सकता है ? अगर स्वेच्छा से वे रुके तो यही इच्छा नहीं ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

उपादान कारण परिमित और ईश्वर निमित्त कारण अपरिमित है, अतएव जिस प्रकार

आर्द्रेन्धनाभाव अग्नि में धूम्राभावकारक होता है, उसी प्रकार उपादान कारण के सर्वत्र होने से परिमित स्थान पर ही कार्य है। सर्वत्र नहीं।

(५८) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

देश व्यतिरेक, काल व्यतिरेक, न होने पर अन्वय का निश्चय कैसे हो सकता है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यहाँ जाप व्यतिरेक, व्याप्ति और अन्वय-व्यतिरेक व्याप्ति को छोड़ कर केवलान्वय व्याप्ति को ग्रहण कीजिये।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जहाँ व्यतिरेक व्याप्ति के अभाव में जो पदार्थ परोक्ष है उसमें केवलान्वय से कैसे सिद्धि हो सकती है ? कदापि नहीं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

इच्छा यदि आप व्यतिरेक व्याप्ति के अभाव से केवलान्वयी की सिद्धि नहीं मानते तो "**सर्वो विधेयः प्रमेयत्वात्**" इसकी व्यतिरेक व्याप्ति बना कर आप ही दिखला देवें। फिर हम ईश्वर की व्यतिरेक व्याप्ति आपको बना देगें।

(५९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर स्वभाव से, तो परस्पर विरुद्ध स्वभाव कैसे हो सकता हैं ?

(६०) परोपकार के लिए तो ईश्वर से भिन्न "**पर**" कौन थे ?

(६१) अनुकम्प्य प्राणियों के बिना अनुकम्पा कैसे उत्पन्न हुई ? लीला ईश्वर की नहीं हो सकती ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्याय भूषण—

प्रश्न संख्या ५९ से ६१ का उत्तर प्रश्न संख्या ४४ के उत्तर में है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ५९ से ६१ तक—इससे भी कर्म की अधीनता सिद्ध हुई।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

इनका उत्तर ऊपर दिया जा चुका है, पिष्टपेषण से कोई लाभ नहीं।

(६२) **श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—**

सृष्टि के आदि में ईश्वर ने प्रथम क्या चीज बनाई ?

(६३) जीव बनाया ? या कर्म या दोनों ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

उपरोक्त दोनों प्रश्नों का उत्तर यह है कि—ईश्वर ने जीव को कभी नहीं बनाया, कह चुके हैं कि यह अनादि है और जीव व कर्म का परस्पर समवाय सम्बन्ध है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जीव और कर्म का सम्बन्ध जो समवाय शब्द से कहा है वह समवाय सन्बन्ध नित्य है वा अनित्य ? कर्म जड़ है और जब आप व्याप्यध्यापक सम्बन्ध स्वीकार करते हैं तो समवाय सम्बन्ध कैसे और कब से ? इसकी व्युत्पत्ति हो सकती है या नहीं ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

प्रश्न संख्या ६२ व ६३ क्या समवाय सम्बन्ध भी आपको मालूम नहीं ? यह तो न्याय का पारिभाषिक शब्द है, यदि आपने न्याय देखा भी होता तो कदापि ऐसा प्रश्न करने का साहस न करते कि समवाय सम्बन्ध नित्य है वा अनित्य ? पहले कह चुके हैं कि व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध परमाणु और जीव में है जो कि दोनों ही द्रव्य हैं। कर्म क्रिया जन्य होने से द्रव्य नहीं, प्रत्युत जीवाश्रित समवाय सम्बन्ध से है।

(६४) **श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—**

यदि एक बनाया तो एक दूसरे का सम्बन्ध क्यों और कैसे किया ?

(६५) यदि दोनों साथ बनाये तो पहले शुभ कर्म या अशुभ कर्म ?

(६६) और किस जीव का किस के साथ सम्बन्ध किया ? और क्यों ?

(६७) उसमें उसके योग्य पात्रता कहां से आई ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न संख्या ६४ से ६७ तक का उत्तर प्रश्न ६२ व ६३ के उत्तर में देखो।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

इससे कर्म का सम्बन्ध ही प्रबल है, ऐसा सिद्ध होता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

कर्म का सम्बन्ध है ही।

(६८) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

पहले जीव को शरीर कब दिया ? और सबको कब दिया ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

"**पहला और पिछला**" का कोई अर्थ नहीं है, एक ही समय में बहुत से शरीर धारी उत्पन्न हुए।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना –

शरीर की उत्पत्ति कैसे हुई ? शरीरधारी उत्पन्न कैसे हुए ? क्या उनका शरीर पहले से नहीं था ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

शरीर की उत्पत्ति पञ्चमहाभूतों से हुई। जीव शरीरधारी इसलिए कहलाता है कि—वह शरीर धारण करता है। जीव कभी उत्पन्न नहीं हुआ, शरीर उसने पहले भी धारण किया था।

(६९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

क्या बिना वीर्य, और रज के संसर्ग से भी मनुष्य पैदा हो सकते हैं ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रति कल्प के आरम्भ में अमैथुनिक सृष्टि होती है। यह सदा का नियम है अर्थात् उद्भिज, सृष्टि से सृष्टि का आरम्भ होता है। यहाँ सांचा का उदाहरण मौखिक दिया गया था, कि सांचा (**Mould**) पहिले कारीगर बनाता है, सांचा बनने के बाद फिर रुपया वगैरा सांचे से बनते हैं इसी प्रकार सृष्टि उत्पत्ति समझिये।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जब उद्भिज सृष्टि से सृष्टि का आरम्भ होता है, अर्थात् सृष्टि अमैथुनिक होती है तो आप ही बताओ कि बिना ही माँ बाप के हजारों जवान पैदा होना क्या सृष्टि नियम के अनुकूल है ? अगर है तो ऐसा कोई भी मनुष्य बताओ जो बिना माँ-बाप के पैदा हुआ हो ? ऐसा नहीं तो ऐसी असम्भव गप्प क्यों मारी ? ईश्वर के पास बिना माँ-बाप के सहस्रों जवान मनुष्य पैदा करने का कोई लाइसेन्स था तो अब उसे किस ने खोस (छीन) लिया ? यदि कहा जाये कि ईश्वर प्रथम पैदा करते हैं, अब नहीं तो इसमें क्या प्रमाण ? कि पहले पैदा करते हैं, ऐसी गप्प होते हुए स्वमत की तरफ दृष्टि न डालते

हुए परमत के प्रति अकारण दोष लगाना क्या महर्षि जी को उचित है ? क्या आप इसे स्वीकार करने के लिए तैयार हैं ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

आपने उत्तर क्या दिया ? आपने **"आर्य समाज और जैन धर्म"** नामक पुस्तक के पृष्ठ ५६ से उद्धृत कर दिया, यही नहीं अधिकांश स्थानों के लिये आपने उसी पुस्तक का सहारा लिया है, अस्तु ! इसके सम्बन्ध में आपने मेरे **"सांचे"** के उदाहरण पर ध्यान नहीं दिया, ज्ञात होता है। जरा आधुनिक और वैज्ञानिक "जीव विद्या" (**Zoology**) और प्रकृति विज्ञान (**Science of Nature**) को देखें तो पता लगे कि किस-किस प्रकार से प्राणियों की उत्पत्ति का वैज्ञानिकों ने शोध लगाया है ?

(७०) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

उत्तर में ईश्वर सर्वशक्तिमान ठहराया जावे तो सर्व शक्ति से बुरी बातों को क्यों नहीं रोका ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

कर्म करने में जीव को स्वतन्त्रता है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

वह स्वतन्त्रता किसने प्रदान की ? अगर कर्म करने के लिए स्वतन्त्रता देते हैं तो उसका फल भोगने के लिये परतन्त्र क्यों बनाना चाहिये ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

कर्म करने में स्वतन्त्र तो वह है ही, किया किसने ? परन्तु जीव अल्पज्ञ और ईश्वर सर्वज्ञ है अत: कर्मफल जीव को सर्वज्ञ के अधीन भोगना ही पड़ता है।

(७१) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जहरीला जानवर, हिंसा, चोरी झूठ इत्यादि को शक्ति से क्यों नही मिटाया ?

(७२) यदि संसार के परिज्ञानार्थ किया, कि सद्सत के निर्णय के लिये ? तब जान बूझ कर यह क्यों किया ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न संख्या ७१ व ७२ का उत्तर ऊपर दिया जा चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न ७१ व ७२ के लिए प्रश्न संख्या ७० का खण्डन देखिये ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

प्रश्न संख्या ७१ व ७२ के विषय में प्रश्न ७० की प्रत्यालोचना का अवलोकन करिये।

(७३) **श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री** –

अकर्म जीव को शरीरधारी बना कर क्या लाभ किया ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण –

जीव को अकर्मा कह ही नहीं सकते, क्योंकि जीव और कर्म का समवाय सम्बन्ध है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जीव को अकर्मा नहीं कह सकते, यह ठीक है मगर कर्म और जीव का सम्बन्ध समवाय से अनादि है क्या ? अगर अनादि है तो आपकी दृष्टि में इसका अन्त कैसे होगा ? इस अवस्था में क्या किसी को मुक्ति हो सकती है ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

जीव और कर्म का समवाय सम्बन्ध कह चुके हैं मुक्ति में कर्म का अत्यन्त अभाव नहीं है, वह एक सुख विशेष की अवस्था है।

(७४) **श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—**

अगर बनाया तो अधिकांश बुरी बातों को उसमें क्यों रक्खा ?

(७५) अधिकांश व्यक्ति आज ईश्वर की आज्ञा को मानने वाले नहीं हैं, यह क्यों ?

(७६) क्या इससे भी ईश्वर की सर्वज्ञता में सन्देह नहीं हो सकता ?

(७७) अगर लोगों ने स्वेच्छा से किया तो क्या ईश्वर की इतनी शक्ति भी नहीं कि उसे रोक सके ?

(७८) अगर जानबूझ कर ऐसी प्रेरणा करते हैं तो पिता या हितैषी नहीं बन सकते।

(७९) संसारी पिता या हितेषी हमेशा बुरी बातों से रोकते हैं यह पवित्र पिता इसके विरोधी क्यों ?

(८०) यदि रोकने पर भी न रुके तो सर्वशक्तिमान कैसे ?

(८१) अगर है तो एक दम ऐसी बुद्धि को क्यों नहीं देता जिससे हम बुरी बातों को छोड़ें ?

(८२) इससे क्या यह सिद्ध नहीं कि ईश्वर हमारा हितेषी नहीं बल्कि हमारा शत्रु है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न ७४ से ८२ तक का उत्तर प्रश्न संख्या ७० के उत्तर में दे चुके हैं।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न ७४ से ८२ तक के उत्तर से क्या यह नहीं मालुम होता है कि जीव कर्म के आश्रित है, ईश्वर ने स्वतन्त्रता दी है तो क्या वे कर्म के प्रेरक हैं या कर्म उनके प्रेरक हैं ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

प्रश्न संख्या ७४ से ८२ तक जीव कर्म के आश्रित कैसे ? कर्म का कर्त्ता है।

(८३) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर यह सब कर्म का फल है तो क्या इससे ईश्वर को परतन्त्रता नहीं, आती ? इस बीच में ईश्वर को आने की आवश्यकता क्या है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

ईश्वर स्वतन्त्र है, परन्तु उच्छृङ्खल नहीं है। क्या न्यायानुसार दण्ड देने वाला न्यायाधीश परतन्त्र है ? और यदि कोई सम्राट किसी मनुष्य को अकारण प्राणदण्ड दे दे तो क्या तभी वह स्वतन्त्र समझा जावेगा ?

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

उच्छृङ्खल तो नहीं मगर पराधीन है। जो पराधीन है वह उच्छृङ्खल कैसे हो सकता है ? न्यायाधीश उन अपराधियों के कार्य के आश्रय से ही दण्ड देता है। अतः आश्रित तो जरूर है, सम्राट किसी को प्राणदण्ड अकारण दे, तभी वह स्वतन्त्र है, यह कोई व्याप्ति नहीं है। हाँ ! अगर सम्राट स्वतन्त्र है तो वह अवश्य अकारण दण्ड दे सकता है। मगर ईश्वर तो कर्म जैसा है वैसा ही फल देता है, इसलिए कर्म की आज्ञा उन्हें शिरोधार्य करनी पड़ती है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

पराधीन नहीं स्वतन्त्र हैं, उच्छृङ्खल भी नहीं है, न्यायाधीश अपराधियों के कर्म के आधीन नहीं, प्रत्युत न्याय के आधीन है। सम्राट अकारण दण्ड दे सकता है। परन्तु देता नहीं। यह **"सकता"** आपने कैसे जाना ? न्याय विरोधी होने से, बस इसी प्रकार ईश्वर भी दे सकता है। पर देता नहीं, क्यों ? अन्याय होगा, वह अन्यायी नहीं है।

(८४) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर यह कहा जाये कि पहले से ईश्वर ने जीवों को कर्म करने के लिए स्वतन्त्र और फल भोगने के लिए परतन्त्र बनाया है तो यह स्पस्ट करें कि पहले जीव को जो ज्ञान शक्ति दिया गया था उससे जीव पहले बुरे कामों की ओर झुका, या बुरे कामों को देख कर बुरे काम करने लगा ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

पहले से आपका तात्पर्य क्या है ? सृष्टि प्रवाह से अनादि है, इसमें पहले और अन्त का सवाल नहीं हो सकता ।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

तो ठीक है, क्या आपका यह मतलब है कि कर्म करने के लिए स्वतन्त्रता भी ईश्वर नहीं देते। तथास्तु —जीव स्वयं ही कर्म करे, और फल भोगे, यह अनादि सन्तति है ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

यह हमने कब कहा कि, स्वतन्त्रता ईश्वर देता है या नहीं, वह (जीव) कर्म करने में स्वतन्त्र है ही ।

(८५) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि ज्ञान से, तो ऐसा ज्ञान ईश्वर ने क्यों दिया ?

(८६) अगर बुरे कर्मों को देख कर प्रवृत्त हुए तब वे बुरे काम ईश्वर कृत नहीं हैं ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न संख्या ८५ व ८६ का उत्तर ऊपर दिया जा चुका है ।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

इससे भी कर्म ही प्रधान ठहरता है ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

हम ऊपर कह चुके हैं ।

(८७) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि यह कहा जाये कि—जीव, और प्रकृति, अनादि हैं, उन्हें ईश्वर नहीं बनाते हैं, मगर कर्मानुसार फल देते हैं, तो क्या ईश्वर को परतन्त्रता नहीं आती ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रकृति जड़ है, वह शुभाशुभ कर्मों के फल की भोक्त्री नहीं हो सकती।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जीव को साफ क्यों निगल गये, क्या जीव भी जड़ है? वह भी शुभाशुभ कर्मफल भोग नहीं सकता?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

जीव के सम्बन्ध में पहले लिख चुके हैं, इसलिए केवल प्रकृति के सम्बन्ध में लिखा है।

(८८) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर यह कहा जाय कि प्रलय के बाद जीव प्रकृति को सकल दी तो उससे पहले क्या दशा थी? और शकल क्यों दी और कैसे दी?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

पहले कहा जा चुका है कि जीव और प्रकृति अनादि हैं।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

क्या यह कोई नियम है कि, जो अनादि हो वह निराकार भी हो, उसकी शकल नहीं होती है तो जिस सृष्टि को आप प्रवाह से अनादि मानते हो वह साकार है या निराकार?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

हाँ! यह नियम है कि जो अनादि व अनन्त हो वह निराकार होगा। प्रवाह से अनादि या स्वरूप से अनादि इसका भेद कृपया आप समझ लेवें। ये न्याय के पारिभाषिक शब्द है, अटकलपच्चू से काम नहीं चलेगा।

(८९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि कर्मानुसार फल देते हैं तो क्या ठीक-ठीक कर्म के अनुसार फल देते हैं? या कम ज्यादा देते हैं।

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर प्रश्न संख्या ८३ के उत्तर में दे चुके हैं, परन्तु विदित होता है कि आप "कर्मानसार" शब्द का अर्थ ही नहीं जानते।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

फिर भी वही पराधीनता ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

न्यायानुसार फल देने से पराधीनता नहीं।

(६०) **श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—**

अगर ठीक देते हैं तो ईश्वर कर्मों के आधीन नहीं हुए ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

ईश्वर कर्म के आधीन नहीं, किन्तु न्याय के आधीन है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

वह न्याय किस पर आश्रित रहा ? कर्म पर, पराधीनता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

कह चुके हैं कि न्यायानुसार कार्य करने से पराधीनता नहीं है।

(६१) **श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—**

इसलिए ईश्वर की स्तुति से कर्म देव की स्तुति विशेष लाभकर न होगी ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

स्तुति करने का तात्पर्य यह होता है, कि स्तुत्य पदार्थ के गुणज्ञान स्तोता के हृदय में अङ्कित होवें। और गुणज्ञान चैतन्य-निष्ठ धर्म है और कर्म देव जी महाराज जड़ हैं। इसलिए इनकी स्तुति से स्तोता के हृदय में जड़त्व की सम्भावना है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

मगर जो जड़ के आधीन चेतन है सो उससे जड़ ही बलिष्ठ हुआ या नहीं ? वह कैसे ? इसके लिए सो ऊपर के प्रश्नों को देखो ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

बार-बार जड़ को वलवान बनाया, मगर ध्यान दीजिये जड़ तो जड़ ही है। चैतन्य-चैतन्य हैं, बात कही है कि—**"अकल बड़ी कि भैंस"** ?

(६२) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर न्यूनाधिक फल देते हैं तो न्यायवान् नहीं रहा, प्रार्थना पर ही सब कुछ निर्भर है।

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न संख्या ८३ के उत्तर में देखो।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

वही पराधीनता फिर आ दबाती है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

इसका उत्तर देखो प्रत्यालोचना संख्या ६१ में।

(६३) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

कर्म करने में स्वतन्त्र कैसे हो सकता हैं ? जैसे कि किसी जीव ने ऐसा कर्म किया जिसका फल यह होता है कि उसका धन नाश हो जाय, ऐसा होने में ईश्वर स्वयं फल देने के लिए जाता नही, मगर दूसरों के द्वारा दिलाता है, मान लिया जाये किसी चोर को भेज कर उसके धन को चुरवा लिया, या उनको कष्ट दिलाया, जिससे उन्हें कर्म का फल मिला, यद्यपि चोर ईश्वर की आज्ञा पालन करने में सर्वथा निर्दोष हैं, मगर उन्हें ईश्वर की तरफ से भी उसका दण्ड मिलता है। संसार में राजाज्ञा पालन करने वाले नौकर को राजा दण्ड नहीं देते, मगर ईश्वर की आज्ञा को पालन करने वाले को राजा के द्वारा दण्ड मिलता है। एक तो ईश्वर के द्वारा यह अन्याय ? दूसरा ईश्वर के कार्य में बाधा देने वाला राजा ईश्वर से भी जबर्दस्त है। यह क्या ? क्या यह आज्ञाधारी भी दण्ड के योग्य है ? इससे व्यवहार लाभ होने की संभावना है।

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इस प्रश्न के लिये कर्म की गति को समझिये, एक चोर को लोग पकड़ते हैं, और यह समझ कर कि अदालत इसे चार मास के कारागार का दण्ड देगी। अपने यहीं कारागार में बन्द कर दें तो क्या कोई भी सरकार इस व्यवस्था को स्वीकार कर लेगी ? कदापि नहीं। दण्ड देने का अधिकार ईश्वर को है। जो अनेकों साधनों द्वारा देता है। जिसको प्रत्यक्ष सृष्टि का वैचित्र्य है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

क्या कोई चोर चोरी करे और अपना धन लुट जाय तो क्या यह कर्म फल नहीं है ? अगर है तो यह फल ईश्वर से प्रेरित नहीं है ? अगर नहीं है तो व्यर्थ ही फल देने के बखेड़े में ईश्वर जो सच्चिदानन्द है उन्हें क्यों फंसाना चाहिये ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

चोर ने चोरी की, तो क्योंकि वह कर्म करने में स्वतन्त्र है अतएव वह दण्ड का भागी है, ईश्वर की आज्ञा से नहीं।

(६४) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

सर्वव्यापक के अन्दर अर्थ क्रिया या हिलन चलन कैसे हो सकता है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जिस प्रकार शरीर व्यापक जीव शरीर की प्रत्येक प्रतिक्रिया करता है। उसी प्रकार समस्त ब्रह्माण्ड में व्यापक ईश्वर संसार की सम्पूर्ण क्रियाओं का संचालक है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

क्या कोई मनुष्य स्वयं अपने कन्धे पर चढ़ सकता है ? **"स्वात्मनि क्रियाविरोधात्"** इस सिद्धांत का क्या अर्थ है ? ईश्वर सर्वव्यापक होने पर भी क्रियावान है तो आकाश क्रियावान क्यों नहीं ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

यह कौन कहता है कि, क्रिया परमात्मा में हो रही है। क्रिया तो परमाणुओं में हो रही है, जो व्याप्य है। आकाश तो जड़ है, जड़ में क्रिया कैसी ? मनुष्य शरीर में जीव व्यापक है। और इसके अन्दर रक्त-सञ्चलन, अन्न पचना आदि क्रियायें जीव की सत्ता से ही हो रही है या नहीं ? यदि नहीं तो मृतक में इनका अभाव क्यों हो जाता है ?

(६५) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

कार्यकर्त्ता होने से सर्वव्यापक कैसे बन सकता है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

सर्वव्यापकत्व और कार्यकर्तृत्व में परस्पर कोई दोष नहीं है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जब कारण है, वह कार्य के समान अनित्य है जो सर्वव्यापक होकर अनित्यता को स्वीकार करने को तैयार हैं। तो वह भी सर्वव्यापक नही बन सकता।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

यह पण्डित जी का अपूर्व अविष्कार है कि जो कारण है वह कार्य के समान अनित्य है, न मालूम यह कहाँ का सिद्धान्त है। यह कौन स्वीकार करता है कि—सर्वव्यापक और अनित्य है।

(९६) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जब प्रत्येक पदार्थ के अन्दर ईश्वर की शक्ति भरी हुई है तो दान करने वाला लेने वाला, मरने वाला, मारने वाला, शत्रु या मित्र ईश्वर स्वयं नही है।

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

सबमें ईश्वर व्यापक है, परन्तु सब ईश्वर नहीं हैं। आपके व्यापक कहने से ही व्याप्य-व्यापक सिद्ध होता है, आश्चर्य है कि इसे स्वीकार करते हुए भी दोनों को एक करने का आपने साहस कैसे किया ?

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

व्यापक की शक्ति व्याप्य में व्याप्त है या नहीं ? अगर व्याप्त है तो व्यापक से भिन्न है या अभिन्न ? भिन्न है तो उनका शरीर के साथ सम्बन्ध कैसा ? अगर अभिन्न हैं तो मेरा प्रश्न ठीक है।

श्री आर्य पडित द्वारा प्रत्यालोचना—

जब व्याप्य और व्यापक भिन्न-भिन्न हैं तो उनकी शक्तियां भी इसी सम्बन्ध से हैं।

(९७) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

दो चीजों के मिलने पर तीसरी चीज उत्पन्न हो सकती है या नहीं ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

दो चीजों के मिलने से विकार होता है, पदार्थ नही।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

इसके लिए ज्वलन्त उदाहरण यही है कि, वीर्य और रज के मिलने से तीसरा ही शरीर पिण्ड बनता है, वह विकार नही।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

विकार को जरा समझें। रज, वीर्य तथा शरीर सभी पञ्चभूतों के विकार हैं।

(९८) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जीव और अजीव के सिवाय संसार में कोई पदार्थ भी हैं ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जीव, बृह्म और प्रकृति (परमाणु) तीन वस्तुएं हैं।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

क्या ब्रह्म, जीव नहीं है, तो क्या अजीव है, तो फिर जीव किसे कहते हैं ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

बृह्म को जीव या अजीव बताना केवल उसके और जीव के स्वरूप को न जानने का परिचायक है। जीव अल्पज्ञ है, बृह्म सर्वज्ञ है। जीव अणु है, ब्रह्म विभू है।

(९९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

स्वामी दयानन्द जी के मत से जो इस सृष्टि के लिए आज १,९६,०८,५२,९७६ वर्ष हुए हैं (ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पृष्ठ २३) उससे पहले सृष्टि की क्या हालत थी ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर ऊपर दिया जा चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

आर्याब्द से पहले समय था या नहीं ? काल था या नही ? उसके पहले आर्य समाज था या नहीं ? महर्षि दयानन्द जी के पहले आर्य समाज के प्रवर्त्तक कोन थे ? और यह प्रणाली कब से है ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

आर्याब्द से पहले काल क्यों नहीं था, परन्तु जैसा कि पहले बतला चुके हैं, काल गणना विभाग के आधार पर और विभाग सूर्य चन्द्रादि के आधार पर होने से व्यवहारित नहीं था, क्या काल और समय भी आपके यहाँ अलग-अलग होते हैं ? यदि अलग-अलग हों तो आप अपने किसी सिद्धान्त से इनकी परिभाषा अलग-अलग दीजिये ? समाज और आर्य शब्द को समझिये। समाज मनुष्यों के समुदाय के एक संगठित रूप को कहते हैं, आर्याब्द सृष्टि के आदि से आरम्भ हुआ, उससे पहले आपके ईश्वरों का समाज हो हो सकता हैं, आर्य समाज तो सृष्टि उत्पन्न होने के उपरान्त से है। प्रवर्त्तक का अर्थ तो जरा समझिये।

(१००) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

मगर दुनियाँ नहीं थी तो इसमें क्या प्रमाण ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

दुनियां थी परन्तु कारणावस्था में थी कार्यावस्था में नहीं थी।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

कारण अवस्था में दुनियां एक दम क्यों हो गई ? ईश्वर इसके लिये प्रेरक है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

जहाँ-जहाँ कार्य है, वहाँ-वहाँ नाश है, और नाश का अर्थ ही है कार्य का कारणावस्था में हो जाने का, फिर शंका क्यों ?

(१०१) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

और नहीं थी तो फिर वह कहां से आई ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर ऊपर दिया जा चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

थी अनादिता प्रवाह से।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

इसका उत्तर भी ऊपर दिया जा चुका है।

(१०२) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि सूक्ष्म रूप में थी स्थूल रूप में नहीं थी तो सूक्ष्म रूप में क्यों बनीं ? क्या स्थूल रूप इसे बुरा लगता था ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर प्रश्न संख्या ४४ में आ चुका है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

इसके उत्तर से ईश्वर पराधीन ठहरता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

इसका उत्तर भी ऊपर दिया जा चुका है।

(१०३) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यदि स्थूल रूप से सूक्ष्म और सूक्ष्म रूप से स्थूल बनना पदार्थ का धर्म है तो इससे ईश्वर का क्या सम्बन्ध था ?

(१०४) ईश्वर इसे क्यों करता है ? क्या ईश्वर से इस काम को किये बिना नहीं रहा जाता ?

(१०५) यदि सृष्टि की उत्पत्ति व नाश करना ईश्वर का स्वभाव है तो इसमें क्या प्रमाण है ? ईश्वर का स्वभाव सृष्टि के विनाश के बखेड़े से मुक्त होना ऐसा मानने में क्या बाधक प्रमाण हैं।

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

प्रश्न संख्या १०३ से १०५ का उत्तर भी प्रश्न संख्या ४४ में देखें।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

इनके उत्तर में ईश्वर पराधीन ठहरता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

इसका भी उत्तर ऊपर दिया जा चुका है।

(१०६) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

धाता परमात्मा ने जिस प्रकार से सूर्य चन्द्र और भूमि आदि जो लेख (सत्यार्थ-प्रकाश पृष्ठ २३० से पृष्ठ २३५ तक) प्रश्न और उत्तर से क्या सृष्टि की आदिता स्वामी जी के मत से सिद्ध होती है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

स्वामी जी के मत से सृष्टि प्रत्येक स्थान पर प्रवाह से अनादि व स्वरूप से सादि प्रतिपादित है ?

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

जब सृष्टि स्वरूप से सादि है तो स्वामी जी के मत से प्रवाह से अनादि होने पर वह मान्य नहीं होगा, क्योंकि स्वरूप नहीं बदल सकता। हाँ ! अगर स्वामी जी में कोई अद्भुत शक्ति हो तो नहीं कह सकते। वह भी हमारे लिये अभिप्रेत है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

आप जरा स्वरूप और प्रवाह शब्द को समझिये। और बतलाइये कि स्वरूप से सादि व प्रवाह से अनादि से आप क्या समझते हैं ? और जो स्वरूप से सादि हैं, वह प्रवाह से अनादि क्यों नहीं हो

सकता ? स्वामी जी में तो अद्भुत शक्ति थी ही। पर आपकी बुद्धि अद्भुत है जो बार-बार दर्शनों के नाम लेने में तो "**षट्दर्शन**" कह डालते हैं और न्याय के पारिभाषिक शब्दों का आपको पता ही नहीं।

(१०७) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

परमाणु स्वभाव से प्रथक् और जड़ है, तो उनको सम्मिलित करने का ईश्वर को क्या अधिकार है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जड़ पदार्थ चेतनाधीन है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

क्या आधीन का यह अर्थ है कि वह परमाणुओं के स्वभाव बदल सकता है ? आप अब उच्छृंखल कहने में भी नहीं हिचकते ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

हम उच्छृंखल नहीं कहते, नियमानुसार कर्त्ता ही मानते हैं, विशेष स्वभाव बदलने के सम्बन्ध में पूर्व कह चुके हैं।

(१०८) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर उनके स्वभाव को ही ईश्वर बदल सकते हैं तो उनका जड़ स्वरूप बदल कर चेतन स्परूप क्यों नहीं कर देते ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

परमेश्वर किसी के स्वभाव का परिवर्तन नहीं करता, प्रत्युत उनका उपयोग लेता है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

परमाणुओं का प्रथक स्वभाव बदल कर उपयोग में लेते हैं वा वेसे ही।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

"**स्वभाव बदलना**" और "**उपयोग लेना**" दोनों भिन्न-भिन्न हैं, लोग पानी गर्म करते हैं या नहीं ? पानी को नल द्वारा ऊपर चढ़ा देते हैं वा नहीं ? यहाँ जल का स्वभाव बदलने से आप क्या समझते हैं ?

(१०९) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

परमाणुओं का पृथक् स्वभाव नित्य है या अनित्य ?

(११०) अगर नित्य है तो सृष्टि से ही नही हाथ धोने पड़ेंगे ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

परमाणु का पृथक स्वभाव तो नित्य है, परन्तु निमित्त से परिवर्तन हो जाता है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना –

प्रश्न संख्या १०९ व ११० नित्य का स्वभाव भी परिवर्तन होता है तो ईश्वर का नित्यत्व में परिवर्तन नहीं होता है ? नहीं तो क्यों ? होता हैं तो क्यों ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

ऊपर के प्रश्न में देखो।

(१११) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अगर अनित्य हों तो उन्हें किसने और कब बनाया और क्यों ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

ऊपर आ गया है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

अनित्य ही है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

मान लिया।

(११२) श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के पृष्ठ १२७ में जो लेख स्वामी जी का है। **"अर्थात् जब यह कार्य सृष्टि उत्पन्न हुई थी"** इत्यादि लेख परमाणु को अनादि बतलाता है, या आदि या सिद्ध कर रहा है ?

श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

इसका उत्तर प्रश्न संख्या १०६ के उत्तर में है।

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

इसका खण्डन भी प्रश्न संख्या १०६ में है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा प्रत्यालोचना—

प्रश्न १ में निराकरण किया जा चुका है।

नोट :—

अगले दिन ६-५-१६२६ को उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर के साथ-साथ निम्न प्रश्न भी रक्खे गये, जिनके उत्तर जैन समाज की ओर से दिये गये एवं उनकी समालोचना आर्य समाज की ओर से रक्खी गई, जिसकी प्रत्यालोचना जैन समाज ने आज तक नहीं की।

अगले दिन ५-६-१६२६ का विवरण

(१) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

आप ईश्वर को मानते हैं या नहीं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

मैं ईश्वर को मानता हूं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

स्वागत है।

(२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि मानते हैं तो किस प्रकार ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

वीतराग, सर्वज्ञ और आगमेशी ईश्वर है

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

"वीतरागी" भी कहते हैं, और **"आगमेशी"** भी। आगमेशी का अर्थ आपने हितोपदेष्य कहा —फिर क्या हितोपदेशिता राग नहीं ? हितोपदेश देने में तो वीतरागिता बाधक नही ! और कर्मफल देने में ही क्यों ?

(३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

सृष्टि का कोई कर्त्ता है या नहीं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री |

कोई कर्त्ता नही।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

सृष्टि शब्द का अर्थ है—**"सृज्यते या सा सृष्टिः"** अर्थात् जो बनी है। जहाँ बनता है वहाँ कर्त्ता आवश्यक है। क्या कोई दृष्टान्त ऐसा दे सकते हैं जहाँ कार्य, बिना कर्त्ता के हो गया हो ?

(४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि नहीं तो सृष्टि कैसे उत्पन्न हुई ?

श्री जैन पण्डित द्वारा समालोचना—

उत्पत्ति से प्रश्न कर्त्ता का क्या आशय है ? सृष्टि की उत्पत्ति एकान्त रूप से सादि कभी नहीं हुई, मगर द्रव्य रूप से यह सृष्टि अनादि और अनन्त और पर्याय रूप से सादि और सान्त है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

उत्पत्ति का आशय स्पष्ट है, यदि आप न समझें तो दुख है। सृष्टि की उत्पत्ति एकान्त रूप से कभी नहीं हुई, तो क्या सृष्टि एक वस्तु का नाम है या समुदाय का नाम है ? वह कैसे कि मकान के खम्बे छत तो टूटते बनते रहते हैं, परन्तु क्या सारा मकान कभी नहीं बना ? आप की लीला आप ही जानें।

(५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जैन मत में कौन-कौन से पदार्थ अनादि हैं और कैसे ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जैन मत से जीव और अजीव अनादि माने गये हैं, द्रव्य रूप से अनादि हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

कृपया अजीव के भेद तो समझा देवें। जीव से तो आप जीव और ईश्वर दोनों ही लेगें।

(६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि सृष्टि उत्पन्न नहीं हुई, अनादि काल से ऐसे ही है तो जिस अवयवी के अवयव जीर्ण होकर उपचयापचय होते हैं वह अवयवी में स्थिरता कैसे ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अवयव-अवयवी का सम्बन्ध सजातीय परमाणुओं में कल्पना की जा सकती है, विजातीय में नहीं

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

अवयव-अवयवी की कल्पना सजातीय परमाणु में ही आपने कैसे की ? एक मकान में लोहा, पत्थर, लकड़ी, ईंट चूना, सभी लगे हैं और मकान में छत, स्तम्भ, किवाड़ आदि लगते हैं, ये सभी मकान के अवयव हैं, तो क्या इन अवयवों में तो बनना-बिगड़ना हो और मकान कभी बना ही नहीं क्या यह बात मानी जा सकती है ?

(७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

अवयवों का ह्रास प्रत्यक्ष है, तो इसका निषेध कैसे कर सकते हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जहाँ अवयव-अवयवी का सम्बन्ध ही नहीं उसका ह्रास होना भी असम्भव है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

अवयव-अवयवी का सम्बन्ध ऊपर बतलाया गया है।

(८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि स्वभावतः उत्पन्न हुई तो फिर कभी इसका नाश भी होगा या नही ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

द्रव्य स्वभाव से नाश नहीं, पर्याय-स्वभाव से नाश है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

स्वभाव से नाश नहीं है तो **"पर्याय स्वभाव"** क्या है ? क्या संज्ञा से आपका तात्पर्य है ? यदि हाँ ! तो संज्ञा ही सृष्टि के अवयव हैं, क्योंकि पहले कहा है कि, अनेक संज्ञाओं के समुदाय का ही नाम सृष्टि है। अवयव-अवयवी के सम्बन्ध में पहले कह ही चुके हैं।

(९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि नाश होगा तो किस शक्ति से होगा ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

पर्याय शक्ति से।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

पर्याय शक्ति क्या है ? ऊपर तो पर्याय स्वभाव कहा यहाँ पर्याय शक्ति, यह क्या लीला है ? आप ही जानें।

(१०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि नाश होगा तो फिर इसके सम्पूर्ण अवयव विकारी प्रत्यक्ष होते हुये अवयवी अविनाशी कैसे ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

इसका उत्तर प्रश्न संख्या ६ और ७ वाले प्रश्नों के उत्तर में आ चुका है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

अवयव, अवयवी पहले कह चुके हैं।

(११) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि नाश होना और बनना दोनों ही स्वाभाविक हैं, तो जिस पदार्थ में ये दोनों मौजूद हैं, उसमें सदा से हैं- या बारी बारी से ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

दोनों एक समय में और सदा से हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रकरण सृष्टि का चल रहा है, शक्ति का जो कारण है, उसमें बनने-बिगड़ने की शक्ति पूछी थी, और आपने कपाल-घट के उदाहरण से बनना बिगड़ना दिखाया।

(१२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि बारी बारी से आ जाती है तो किसकी प्रेरणा से ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

प्रश्न संख्या १२ का उत्तर भी ऊपर आ चुका है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ऊपर कहा जा चुका है।

(१३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि स्वभावत: आ जाती है तो स्वभाव जड़ है या चैतन्य ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जीव के लिए चैतन्य स्वभाव, अजीव के लिए जड़।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रकरण तो उन वस्तुओं का चल रहा है जो सृष्टि के उपादान कारण हैं। जीव से क्या सम्बन्ध ? जड़ का स्वभाव जड़ है। और फिर जड़ों के संयोग से बनना बिगड़ना स्वयमेव किस प्रकार हो जाता है ? यह अभिप्रेत है ? क्या घड़ा बिना कुम्हार के बनता और बिना बिगाड़ने वाले के बिगड़ता है ?

(१४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि स्वभाव जड़ है तो उसमें इच्छा कैसी ? और यदि चैतन्य है तो वहीं ईश्वर है।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

द्रव्य का, स्वभाव परिगमन के लिए इच्छा की आवश्यकता नहीं। चैतन्य सभी ईश्वर नहीं हुआ करते।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

क्या द्रव्य में परिगमन, बिना चैतन्य की प्रेरणा से कभी और कहीं सम्भव है ? और जड़ द्रव्य में क्रिया कैसी ?

(१५)श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि दोनों गुण एक साथ हैं, तो किस परिमाण से ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

घट के विनाश से कपाल की उत्पत्ति, कपाल की उत्पत्ति से घट का विनाश एक ही साथ होता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या १५ में हमने परिमाण पूछा था, आपने उत्तर समय का दिया।

(१६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि बनाने बिगाड़ने की शक्ति बराबर है या बनाने की कम और बिगाड़ने की अधिक, तो दोनों दशाओं में सृष्टि नहीं बन सकती।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यह हमारा सिद्धान्त ही नहीं कि बनता या बिगड़ता है, इसलिए उसमें शक्ति की कल्पना व्यर्थ है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

पर्याय रूप से बनना, बिगड़ना तो आप मानते हैं, फिर वह बनना बिगड़ना क्या ? बिना कर्त्ता के उन पदार्थों ने जिनसे वस्तु बनती हैं, बिना किसी शक्ति के स्वयमेव होना सम्भव है ?

(१७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि बनाने की शक्ति अधिक और बिगाड़ने की कम तो सृष्टि सर्वदा बढ़ती ही जावेगी।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

इसका उत्तर प्रश्न संख्या १६ में देखिये।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

उत्तर १६ वें प्रश्न की समालोचना में है।

(१८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

मनुष्य और दूसरे प्राणियों की उत्पत्ति एक ही समय में हुई या भिन्न-भिन्न समयों में ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

इसके लिए सिद्धान्त ही बाधक है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आप मानते ही नहीं।

(१९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

पहले स्थावर की उत्पत्ति हुई या जंगम की ?

(२०) पहले-पहल मनुष्य की उत्पत्ति कैसे हुई ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

उपर्युक्त प्रश्न संख्या १८ में इसका उत्तर है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आप मानते ही नहीं।

(२१) **श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—**

हीरा माणिक, मणि आदिक क्या मृत्तिका के विकार हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

मृत्तिका का विकार नहीं, मगर अजीव का भेद है।

(२२) **श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—**

यदि हो तो मृत्तिका से इस रूप में आने के लिए उनको कितना समय लगा ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

२१वें प्रश्न के उत्तर में है।

(२३) **श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—**

यदि मृत्तिका के विकार नहीं हैं तो ये क्या हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

इसका उत्तर भी २१वें प्रश्न के उत्तर में है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न सख्या २१ से २३ आपके उत्तर से स्पष्ट है कि ये भी अजीव के भेद होने से नित्य हैं, परन्तु रसायनशास्त्र (**Chemistry**) और भूगर्भशास्त्र (**Geolagy**) इसका बाधक है।

(२४) **श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—**

पृथिव्यादि कार्य हैं या नहीं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

पृथ्वी कार्य नहीं है। नित्य होने से और अकारण होने से **"सदकारण वन्नित्यम्"** इस सिद्धांत से आदि शब्द से क्या लिया जाय ? यह प्रश्नकर्त्ता का गूढ़ अभिप्राय वे ही जानें।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

पृथ्वी यदि कार्य नहीं है तो कभी आपने इसकी रसायनिक प्रक्रिया पर ध्यान दिया है ? भू-गर्भशास्त्र (Geolagy) तो इसमें अग्नि, जल, वायु, मिश्रित बतलाता है। ओर प्रत्यक्ष भी है। यदि इसमें जल, अग्नि, न हों तो इसके परमाणु ही संयुक्त नहीं रह सकते, जहां संयोग है, वहाँ वियोग अवश्य है, फिर नित्य कैसे ?

(२५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि हैं तो किसके ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

देखो प्रश्न संख्या २४।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या २४ में सम्मिलित।

(२६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि पृथिव्यादि कार्य नहीं है तो क्या भूगर्भशास्त्र इसका बाधक नही है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

बाधक नहीं है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

बाधक नहीं है ! यह उत्तर तो आपकी उस शास्त्र से अनभिज्ञता प्रकट करता हैं, ऊपर दिखा चुके हैं कि न केवल भूगर्भशास्त्र प्रत्युत रसायन शास्त्र भी बाधक है।

(२७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

पृथिव्यादि चैतन्य हैं या जड़ ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री —

पृथिवी जड़ है, आदि शब्द को स्पष्ट करें ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आदि शब्द से सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र. तारे आदि अभिप्रेत हैं।

(२८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि जड़ है तो उसमें क्रिया कैसे उत्पन्न हुई ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

क्रिया जड़ में नहीं होती।

(२९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि चैतन्य है तो हमारे शरीर और पृथिव्यादि में क्या अन्तर है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

चैतन्य नहीं है। शरीर भी चैतन्य नहीं है।

(३०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि सृष्टि की उत्पत्ति स्वाभाविक है तो आपके मतानुसार एकेन्द्रिय द्वेन्द्रियादि वैषम्य क्यों हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

सृष्टि की उत्पत्ति ही नहीं, यह वैषम्य कर्मबन्ध के अनुसार अनादि हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या २८ से ३० ठीक है, आपका सिद्धान्त है।

(३१) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

संसार में अनेक प्रकार के प्राणी अनेक दशाओं में क्यों है ? क्या कर्मानुसार हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

हाँ ! कर्मानुसार हैं।

(३२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण –

यदि कर्मानुसार हैं तो वे कर्मफल किस प्रेरणा से भोग रहे हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

प्रेरक चैतन्य हो सकता है जड़ नहीं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

कर्मानुसार फल भोग रहे हैं यह स्वीकार करते हैं फिर लिखते हैं कि प्रेरक चैतन्य होता है, जड़ नहीं, कर्म तो जड़ है, वह जीवों को फल भुगाता है। यह हमारा तात्पर्य था और साफ भी लिखा था परन्तु उत्तर में आपने गोलमाल कर दिया।

(३३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि कर्म स्वयं फल देता है तो कर्म जड़ है या चैतन्य ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

कर्म जड़ है, वह फल दे सकता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ३२ के उत्तर में कहा था कि प्रेरक चैतन्य हो सकता है, जड़ नहीं। यहाँ कह रहे हैं कि कर्म जड़ है, वह फल दे सकता है, धन्य हो ! आपने पूर्वापर विरोध का भी ध्यान नहीं रक्खा। कर्म जड़ है स्वीकार करते हैं और फल दे सकता है।

(३४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि जड़ है तो कर्म फल कैसे दे सकता है ? क्या किसी चोर को "चौर्य कर्म" किये बिना न्यायाधीश दण्ड दे सकता है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जैसे जड़ मदिरा, भंग वगैरा चैतन्य को भ्राम्यरूप में कर देती हैं इसी प्रकार जड़ कर्म भी चैतन्य को फल दे सकता है। बिना चौर्य कर्म के चोर कहलाना बन्ध्यासुत के सदृश हैं। वह चोर नहीं उन्हें न्यायाधीश दण्ड नहीं दे सकते।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

यह स्पष्ट नहीं किया कि बिना प्रेरक के स्वयं कैसे दे सकता है ? भंग, मदिरा आदि का उदाहरण तो दिया और न्यायाधीश के उदाहरण को हड़प गये, धन्य है निष्पेक्षिता ! (१) आपने जो भंग, शराब का उदाहरण दिया उसमें तनिक विचार कीजिये। भंग द्रव्य है न कि कर्म ! कर्म पीना है, यदि पीने से ही नशा हो तो पानी, शरबत, आदि सब के पीने से नशा होना चाहिये, परन्तु ऐसा नहीं होता। (२) यदि कर्म ही आप फल देता है जैसा कि—भंग, मदिरा आदि तो जो मनुष्य पहले-पहल

भंग-शराब आदि पीता है, उसे तो नशा आता है, परन्तु जो इनका अधिक व्यसनी हो जाता है, उसे नशा नहीं आता। तो जो मनुष्य थोड़े दुष्कर्म करेगा उसे तो फल मिल जाया करेगा और जो दिन-रात दुर्व्यसनों में फंसा रहेगा उसे फल नही मिलना चाहिये। क्या अच्छा सिद्धान्त है ?

(३५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि चैतन्य है तो क्या प्रमाण इसमें बाधक नहीं हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

चैतन्य है ही नही, कर्म जड़ है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

एक उदाहरण में जो "बिना" का सम्बन्ध "न्यायाधीश" के साथ था, उसे "चौर्य कर्म" से जोड़ कर और बीच में "ही" को उड़ा कर उत्तर का मार्ग निकाल लिया, यद्यपि आपको व्याख्या करते समय समझा भी दिया, फिर भी वही उत्तर ! खैर !! किसी तरह पीछा भी तो छुड़ाना था।

(३६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

कर्म नियत हैं या अनियत ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

इससे प्रश्न कर्त्ता का क्या भाव है ? क्या काल से नियत अथवा संख्या से नियत ? या और किसी प्रकार ? स्पष्ट करें।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्राणियों के लिए क्रिया, रूप से नियत है या नहीं ? यदि है तो महाअन्याय ! कि उन नियत कर्मों के अतिरिक्त कोई कर ही नहीं सके। यदि नहीं नियत है तो अन्य कोई इसी प्रकार कर्म करके तीर्थङ्कर क्यों नही होता ? क्या चौबीसों के लिए ही ठेका हो गया है ?

(३७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

कर्मों की व्यवस्था आप किस प्रकार मानते हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

कर्म जैन सिद्धान्त में मूल आठ भेद माने गये हैं। वही आत्मा को अपने-अपने फल देते हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आठ कर्मों के नाम आपने लिखे ही नही, अस्तु व्याख्या की थी, उसके आधार पर ही सुनिये,

आपने कहा था—(१) नाम कर्म आत्मा को स्थूल व सूक्ष्म कर देता है ? क्या आत्मा भी स्थूल व सूक्ष्म हो जाता है ? क्या वह भौतिक पदार्थ है ? और "कर देता है" जबरदस्ती, फिर तो वह बड़ा ही प्रबल है। जीव बच जाय तो उसकी दया से, अन्यथा आपके चक्कर में ही रहे। (२) आपका एक कर्म है जो आत्मा को नीच ऊँच बना देता है। वह कर्म व्यक्तिगत है, या वंशपरम्परागत ? यदि व्यक्तिगत है तो उसे करने या न करने से कोई न ऊंच न नीच हो सकता है। यदि वंशपरम्परागत है तो महाअन्धेर है कि एक अपराध करे और दण्ड सब परिवार भोगे। (३) "आयुकर्म" स्वयं ही जीव को शरीर में रोकता निकालता है, बन्दी का उदाहरण तो ठीक नहीं जंचा। बन्दी को बन्दीग्रह का अफसर करता है जो कि चैतन्य है। हथकड़ी-बेड़ी स्वयं नही खुलती न लगती, कोई अन्य चैतन्य लगाता व खोलता है ? (४) आपका "अन्तराय कर्म" तो ईसाइयों का शैतान मालूम होता है। जो जीवों को कर्म करते हुए सफलता नहीं मिलने देता बीच में आ कूदता है, यदि स्वयं ही अकारण आकर बीच में पड़ जाता है तो कभी-कभी सफलता क्यों मिलती है ? क्या उस समय वह सो जाता है ?

(३८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि ईश्वर सृष्टि कर्त्ता और कर्म फल दाता नहीं हैं तो वह क्या करता है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

वह अपने स्वभाव परिणाम में रहता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

स्वभाव में रहता है तो क्या उसका स्वभाव सब कुछ देखता और सबका ज्ञान रखता और स्वयं चुपचाप जड़वत् पड़ा रहता है ? अच्छा ईश्वर है।

(३९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि वह निष्क्रिय है तो उसमें चैतन्यता ही कैसे मानी जा सके ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

चैतन्य का लक्षण, सक्रिय नहीं है। ज्ञान और दर्शन का नाम चैतन्य है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

चैतन्य का लक्षण केवल ज्ञान और दर्शन है, क्रिया नही, ठीक है। परन्तु क्रिया बिना ज्ञान कैसे ? कि उसे ज्ञान और दर्शन है ! बनी हुई आंख वाले और प्राकृतिक आँख वाले का भेद तो तभी होगा जब उनसे उनका कार्य पाया जाय, अन्यथा दोनों ही बराबर हैं।

(४०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

ऐसे ईश्वर को मानने, न मानने से क्या प्रयोजन है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

निर्दोष ईश्वर को मानने से शुभ कर्म का बन्ध होता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना —

"निर्दोष ईश्वर" (जैसा कि आप मानते हैं) के मानने से शुभ कर्म का बन्ध होता है। फिर सदोष ईश्वर के मानने से अशुभ कर्मों का बन्ध होगा। और ईश्वर को सर्वथा न मानने से कर्म बन्ध होगा ही नहीं, चलिये ठीक हुआ। अगर कर्म बन्ध से पृथक होना है तो सरल कुञ्जी पण्डित जी बतलाते हैं, ईश्वर को मानना छोड़ दो, फिर क्या है, कर्म बन्ध छूटा और तीर्थङ्कर हुए।

(४१) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

ईश्वर एक है या अनेक ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अनेक हैं, जीवात्मा के अन्दर परमात्मा या ईश्वर बनने की शक्ति है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना —

प्रत्येक जीवात्मा में जब ईश्वर बनने की शक्ति है तो वह शक्ति क्यों दबी हुई है ? आप कहते हैं कि, कर्म का आवरण पड़ा हुआ है। लालटेन पर पर्दे का उदाहरण दिया, परन्तु पर्दा स्वयं आकर नही पड़ता, कोई डालने वाला होता है। लालटेन खुद पर्दा नहीं डाल सकती, न हटा सकती है। जो जीव शक्तिमान है, उस पर कर्म जबरदस्ती चढ़ बैठता है। तो कर्म तो सर्वशक्तिमान से भी बड़ा हुआ, परन्तु फिर हट कैसे जाता है ? शक्ति क्षीण भी हो जाती है, स्वयमेव ?

(४२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि अनेक हैं तो क्या उनमें कभी लड़ाई-झगड़े भी हुआ करते हैं ? और यदि होते हैं तो उनका फैसला कौन करता है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जहां वीतरागता है वहाँ लड़ाई झगड़े का क्या काम ?

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ठीक है।

(४३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

और वे सब ईश्वर कहाँ रहते हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अपने-अपने स्वभाव में रहते हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

अभी तक यह नियम रहा है कि स्वभाव द्रव्य के आश्रित रहता है। अब यह नई प्रणालो दर्शन की सुनी है जो कि, षट्दर्शन के नाम लिया करते हैं, कहते हैं कि ईश्वर जो कि द्रव्य है अपने स्वभाव में रहता है। प्रश्न में पूछा कि ईश्वर कहाँ (किस जगह) रहता है ? जिसका कुछ जवाब ही नहीं दिया।

(४४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

और एक-एक ईश्वर के रहने के लिए कितना-कितना स्थान चाहिये ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री -

साकार पदार्थ के लिए स्थान परिमाण की आवश्यकता है।

(४५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

ईश्वर सशरीर है या अशरीर ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

ईश्वर अशरीर है।

(४६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण -

यदि सशरीर है तो उसका शरीर कितने योजन का है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

ऊपर के प्रश्न में उत्तर है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ४४ से ४६ = ईश्वर अनेक हैं, सब निराकार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् हैं फिर उसमें अनेकता की कल्पना कैसे हो सकती है ?

(४७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि अशरीर है तो उसके होने में क्या प्रमाण ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जीव सशरीर तो प्रत्यक्ष है, उससे सापेक्षिक कल्पना करने से शरीर विकार के अभाव में ईश्वर निर्विकार, अशरीरी ठहरता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

यह ठहरता है कि जीव अशरीर दशा में भी हो सकते हैं। परन्तु इससे यह नहीं निकलता कि, जीव अशरीर होने से निर्विकार और सर्वज्ञ हो जाता है, आपने यह कहां से निकाल लिया ?

(४८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

ईश्वर रागी है या वीतरागी ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

दूसरे प्रश्न का उत्तर देखो ?

(४९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि वीतराग है तो ये गुण ईश्वर में नित्य है, वा नैमित्तिक ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

नित्य हैं, नैमित्तिक नहीं।

(५०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि नैमेत्तिक हैं तो उस निमित्त के दूर होने पर फिर संसार में आकर रागी होना पड़ेगा, तो फिर उसे मुक्त जीव ही क्यों न मानें ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

ऊपर के प्रश्न का उत्तर देखो, मुक्त जीव संसार में नहीं आता।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ४८ से ५०, यह अजीब बात कौन और कैसे मान ले कि वीतरागी, सर्वशक्तिमान सर्वज्ञ अनादि काल से तो कर्मबन्ध में रहा अचानक छूटा और सर्वदा के लिए छूट गया। अनादि काल का बन्धन छूट गया और छूटा तो सर्वदा के लिए।

(५१) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जीवों की संख्या परिमित है या अपरिमित ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जीवों की संख्या असंख्यात है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

असंख्यात है, ठीक है, अर्थात् आधुनिक गणितज्ञ इसकी गणना नहीं कर सकते, परन्तु यदि पूर्ण गणितज्ञ हो तो गिन सकता है। अच्छा अनादि काल से इनमें से मुक्त भी हो रहे हैं। जो फिर आवे ही नहीं तो कोई समय आयेगा जब की सब मुक्त होकर ईश्वर बन जायेंगे, और यह दुनियाँ रहेगी ही नहीं। ठीक है तो ईश्वरों की दुनियाँ बस जायेगी, बात ही क्या है ?

(५२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जीव का स्वरूप आप कैसा मानते हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जीव का स्वरूप चेतना।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आपत्ति नहीं।

(५३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जीव अल्पज्ञ है या सर्वज्ञ ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जीव अल्पज्ञ भी है और सर्वज्ञ भी।

(५४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जीव कभी ईश्वरत्व को प्राप्त कर लेता है या नहीं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जीव ईश्वरत्व को प्राप्त कर सकता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ५३ व ५४, इसके सम्बन्ध में पहले कहा जा चुका है, कि स्वभाव से सर्वज्ञ जीव पर अनादि काल से कर्म का आवरण कैसे चढ़ गया ?

(५५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

मुक्त जीवों की क्या दशा होती है ? सम या विषम ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

सम दशा है ।

(५६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि विषम है तो उनमें राग-द्वेष होना भी आवश्यक है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

ऊपर का प्रश्न देखो ।

(५७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि सम है तो उनका नियामक कौन है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

बद्ध जीवों के लिए नियामक की आवश्यकता है, मुक्त जीवों के लिए नहीं ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ५५ से ५७, मुक्त जीवों के लिए नियामक की आवश्यकता नहीं, ठीक है उदाहरण आपने बन्दी का दिया था । क्या आप कोई देश या ग्राम बता सकते हैं, जहाँ प्रबन्धक न हो, या कोई संस्था जहां नियम पूर्वक काम चल रहा हो, और नियामक न होवें ?

(५८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

आपके तीथङ्कर विकारी हैं या अविकारी ? शरीरी हैं या अशरीरी ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

तीर्थङ्कर एक कर्म प्रकृति के उदय से होने वाली अवस्था विशेष का नाम है, कर्म प्रकृति विकारी नहीं, मगर स्वयं विकार है । कर्म प्रकृति के कोई शरीर नहीं होता, मगर शरीर के साथ इसका सम्बन्ध है ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना –

तीर्थङ्कर कर्म प्रकृति के उदय से होने वाली अवस्था विशेष का नाम है तो क्या वह अवस्था आकस्मिक आकर उदय हो जाती है या किसी प्रेरणा से ? वह कर्म प्रकृति किसका विकार है ?

(५९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि शरीरी है तो विकारी क्यों नहीं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

देखो प्रश्न संख्या ५८, शरीर होते हुए विकारी है भी और नहीं भी।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ठीक है, योगी महात्मा होंगे।

(६०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि विकारी है तो दोषी है।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

बेशक ! जब तक विकारावस्था है तब तक दोषी है।

(६१) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि दोषी है तो आप्त नहीं, और आप्त न होने से उनका उपदेश भी प्रामाणिक नहीं।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जब तक दोषी है तब तक आप्त नहीं। दोषी आप्त का उपदेश प्रामाणिक नहीं।

(६२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि अविकारी है तो शरीरत्व और अविकारित्व का समानाधिकरण नहीं पाया जाता।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

समानाधिकरण नही पाया जाता, शरीर होते हुए भी उसमें निर्मोह रह सकता है। राग-द्वेष का रहित होना ही निर्विकार अवस्था है।

(६३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि अशरीरी है, तो उपदेश कैसे किया ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

शरीरी ही है, उससे उपदेश किया।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ६० से ६३, थोड़ी देर के लिए मानते हैं।

(६४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

आपके तीर्थङ्कर कितने हैं ? आदि तीर्थङ्कर कौन और कब हुए ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

एक अल्प काल में जो १० कोटाकोटि सागर हैं। उस समय के भीतर २४ तीर्थङ्कर इस भारत क्षेत्र में होते हैं। होते आये हैं, और होते रहेंगे। इसी प्रकार और क्षेत्रों में भी होते हैं। इस कल्प काल में प्रथम तीर्थङ्कर श्री ऋषभनाथ जी हुए हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

एक अल्प काल में। आप उस काल की गणना किस प्रकार करते हैं ? गणना तो आपकी विलक्षण है। यह नियम कि २४ ही तीर्थङ्कर होते आए, होते हैं, और होते रहेंगे किसका है ? कोई नियामक नहीं, तो कभी २४ के बजाय २३ या कभी २५ भी हो जावेंगे ? घण्टा का उदाहरण भी आपने दिया, वह तो मनुष्यों ने अपनी गणना के लिए कर रक्खा है। कोई-कोई ३२ घड़ी ही मानते हैं, गणना का और क्रम रक्खें यह नियामक की मर्जी पर है। एक कल्प काल की समाप्ति पर क्या-क्या परिवर्तन होते हैं ? कैसे मालूम हो जाता है कि अब दूसरा कल्पकाल प्रारम्भ हुआ ? कब हुआ ? इसे क्यों छोड़ गये ?

(६५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

आदि तीर्थङ्कर के पहले सृष्टि थी या नहीं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यह अनादि है।

(६६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि नही थी तो सृष्टि सादि हुई ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री —

देखो प्रश्न संख्या ६५ का उत्तर।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ६५-६६, यह (सृष्टि) अनादि हैं। अर्थात् आदि तीर्थङ्कर के पहले भी सृष्टि थी, ठीक है।

(६७) श्री पण्डित भगवान स्वरूपजी न्यायभूषण—

यदि थी तो क्या आदि तीर्थङ्कर के होने के पहले सभी लोग अज्ञान में डूबे हुए थे ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

नहीं अज्ञान में डूबे हुए नहीं थे।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

अज्ञान में डूबे हुए नहीं थे, तो ज्ञानी थे। तीर्थङ्करों को इसका श्रेय नहीं है, फिर उन्होंने किया ही क्या ? व्यर्थ ही हुए और गये।

(६८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि सभी अज्ञानावृत थे तो इनको उपदेश किसने दिया ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

देखो प्रश्न संख्या ६७ का उत्तर।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ऊपर देखो।

(६९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जैनी लोग मन्दिर में किसकी उपासना करते हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

वीतरागी, अर्हन्त, भगवान की उपासना करते हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

अर्हन्त भगवान तो अनेक होते होंगे, क्योंकि सभी तीर्थङ्कर अर्हन्त होते गये और यह क्रम अनादि काल से है। फिर मन्दिर में मूर्तियाँ तो गिनती की ही रखते हैं क्यों ?

(७०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि तीर्थङ्करों की उपासना की, तो आदि तीर्थङ्कर ने स्वयं किसकी उपासना करके तीर्थङ्कत्व को पाया था ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

प्रश्नकर्त्ता का "आदि तीर्थङ्कर" इससे क्या आशय है ? हम तो तीर्थङ्करों की प्रणाली अनादि मानते हैं।

(७१) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण –

जिसकी उपासना करके आदि तीर्थङ्कर ने तीर्थङ्कर पद को प्राप्त किया था, अब आप उसकी उपासना को छोड़ कर क्यों तीर्थङ्करों की उपासना करते हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री--

इसका उत्तर प्रश्न संख्या ७० में देखो।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न ७०-७१ ठीक है।

(७२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

क्या तीर्थङ्करों की उपासना से मनुष्य के दुष्कृत का नाश हो जाता है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

हाँ ! परमात्मा के साध्य के लिए वह साधन स्वरूप है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

हमने पूछा कि पिछले किये हुए दुष्कर्म भी तीर्थङ्करों की उपासना से नाश होते हैं ? आपने भविष्य के लिए बतलाया कि साध्य का वह साधन है। इससे हमारा तात्पर्य ही नहीं था। अस्तु उदाहरण में आपने **"अन्य क्षेत्रे कृतं पापं"** से **"विनश्यति"** अर्थात् नाश होना बतलाया है। यह दुरंगी चाल कैसी ? यदि नाश होता है तो किस प्रकार ?

(७३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

तीर्थङ्करों और ईश्वर में क्या अन्तर है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

तीर्थङ्कर विकल परमात्मा और ईश्वर (सिद्ध) सकल परमात्मा हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आपने तीन प्रकार की आत्माएं (१) बहिरात्मा (२) अन्तरात्मा (३) परमात्मा। बतला कर ईश्वर से दूसरा दर्जा तीर्थङ्कर को दे दिया है। परन्तु दोनों की ही उपासना करना पवित्र करने वाली, दोनों ही निर्विकार। तो यह दर्जे का अन्तर कैसे? तीर्थङ्कर निर्विकार है, वीतरागी है, फिर वे उस अवस्था से अनायास ईश्वर कैसे हो जाते हैं? क्या यह दर्जा ईश्वरत्व की उम्मेदवारी के लिए है?

(७४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

तीर्थङ्करों को क्या-क्या अधिकार हैं?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

इसमें प्रश्नकर्त्ता का क्या आशय है? तीर्थङ्करों में किस प्रकार के अधिकार की अपेक्षा की है? स्पष्ट करें।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ठीक है वे तो बेचारे उम्मेदवारी में हैं कि ईश्वर बनें। परन्तु ईश्वर बन कर ही बेचारे क्या पावेंगे? कैद तनहाई ही तो वह भी है।

(७५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

तीर्थङ्कर शब्द की व्युत्पत्ति व्याकरण से कैसे हैं?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

"तीर्थङ्करोति इति तीर्थङ्करः"।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आपने जो व्युत्पत्ति की है, उससे तो **"तीर्थङ्कारः"** बनना चाहिये यथा—**"कुम्भकारः"**। इसमें "मुम्" का आगम कहाँ से किया? यदि ऐसा ही है तो, **"कुम्भकरः"** क्यों नहीं बनता?

(७६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

आज तक जितने तीर्थङ्कर हुए हैं, वे सब मौजूद है या नहीं?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

परमात्मा अवस्था में मोजूद हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

कैसे पहुंच गये ? पहले भी पूछा है, क्योंकि उस अवस्था में वे बेचारे करते तो कुछ हैं ही नहीं।

(७७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

अगर हैं तो कहाँ रहते हैं ? और क्या करते हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

मोक्ष स्थान में, कृतकृत्य हो गये।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

यह मोक्ष स्थान कहाँ और कैसा है ? जरा स्पष्ट तो करें ?

(७८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

और उनका कोई सृष्टि से सम्बन्ध है या नही ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

कोई सम्बन्ध नहीं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

पहले तो आपने कहा कि पाप दूर कर देते हैं, अब कहते हैं कि कोई सम्बन्ध नहीं। फिर वे पाप दूर कैसे करते हैं ?

(७९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि उनका सृष्टि से कोई सम्बन्ध नहीं है तो आप उनकी उपासना क्यों करते हैं ?

श्री जैन पण्डि तवर्धमान जी शास्त्री—

उनके माफिक गुणों की प्राप्ति के लिए।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

किसी के गुण के अनुसार, गुण प्राप्ति के लिए उन गुणों को जान लेना और प्राप्ति का उपाय जान कर प्राप्त्यर्थ प्रवृत्त होने की आवश्यकता होती है। उसकी प्रार्थना करने से, उनकी मूर्ति के सामने हाथ जोड़ने से, गुणों की प्राप्ति कैसे होती है ? भक्तामर स्तोत्रं तो हमने देखा है, उसमें ऐसी विधि तो कोई बतलाई नहीं, जिससे आदि नाथ जी के गुणों के समान बन सकें। दूसरे जब आपके सिद्धान्तानुसार तीर्थङ्कर २४ ही होंगे, होते हैं और हुए, तो फिर सबका, **"उनके समान गुणों में बनने का यत्न व्यर्थ नहीं ?"**

(८०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

और यदि उनका सृष्टि से कोई सम्बन्ध है तो कैसे ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

देखो प्रश्न संख्या ७८ में।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

हो चुका प्रश्न संख्या ७८ की समालोचना में।

(८१) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

आपके तीर्थङ्करों का आकार कितना है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

तीर्थङ्करों के आकार से आप संस्थान का ग्रहण करते हैं तो सब एक संस्थान में थे। अथवा यदि शरीर प्रमाण लेते हैं तो जघन्य ७ हाथ और उत्कृष्ट ५२५ धनुष थे।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आकार से आप संस्थान लेते हैं इसे हम क्या करें ? तीर्थङ्करों का छोटे से छोटा आकार ७ हाथ और बड़े से बड़ा ५२५ धनुष (प्रत्येक धनुष ४ हाथ का) अत: २१०० हाथ माना हैं, तब तो वह रामायण के वर्णित कुम्भकरण के छोटे भाई ठहरे। कल्पों में तीर्थङ्कर बड़े होते थे। धीरे-धीरे छोटे होते गये। इस कल्प में सात हाथ के ही रहे तो सम्भव है आगे और भी कमी हो जाय, इससे सिद्ध होता है कि सृष्टि क्रम में ह्रास हो रहा है। फिर क्यों नहीं किसी समय इसका सर्वथा लोप हो जाना अर्थात् कारणावस्था में हो जाना मानते ?

(८२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

सब तीर्थङ्करों में मत भेद हैं या मतैक्य ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

मतैक्य।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आपत्ति नहीं।

(८३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

अन्तिम तीर्थङ्कर कौन और कब हुआ ? और उनके बाद अब कोई हो रहा है या नहीं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

इस कल्प में अन्तिम तीर्थङ्कर भगवान श्री महावीर हुए जो २४५५ वर्ष पहले हुए थे इस समय यहाँ नहीं होते हैं, दूसरे क्षेत्र में होते हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

इस कल्प के तीर्थङ्करों की संख्या समाप्त हो गई। अब फिर पहले तीर्थङ्कर दूसरे कल्प में होंगे तो कल्प परिवर्तन कैसे होगा? क्या मूसा की तरह तूफान आवेगा? या किस प्रकार? तीर्थङ्कर का समय पूछा था, तब तो यह कह कर टाल दिया कि पहला कोई है ही नहीं, अनादि प्रणाली है, और श्री महावीर का समय बतला दिया, श्री आदिनाथ का भी समय बतला देते तो क्या अच्छा था। अन्य क्षेत्र में हो रहे हैं यहाँ नहीं, ये बातें आपके पास वायरलेस टेलीग्राफ से आई होंगी।

(८४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जैन धर्म की उत्पत्ति कब से हुई? सृष्टि के आदि से या पीछे?

श्री पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जैन धर्म अनादि है, उत्पत्ति शब्द का प्रयोग ही व्यर्थ है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ठीक है।

(८५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि आदि से हैं तो इसमें क्या प्रमाण है?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

देखो प्रश्न संख्या ८४ का उत्तर।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आपने कहा देखो प्रश्न संख्या ८४ का उत्तर! वहाँ क्या देखें? आपने कह दिया जैन धर्म अनादि है, बस यही प्रमाण है? ठीक है! आप अपने को आप्त समझते होंगे। और **"आप्तोपदेशः शब्दः"** के अनुसार शब्द प्रमाण मनवाते होंगे परन्तु जैन धर्मियों के लिए आप आप्त हों तो सम्भव है। हम तो आपको आप्त नहीं मानते, हम पर यह बोझा क्यों?

(८६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

और यदि जैन धर्म की उत्पत्ति पीछे से हुई, तो पहले कौनसा धर्म था?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

देखो प्रश्न संख्या ८४ का उत्तर।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

समीक्षा हो चुकी।

(८७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जिन और जैन पद का वाच्यार्थ क्या है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

"दुर्जयकर्मठ कर्मारातीन् जयतीति जिनः"– "जिन" के उपासक को जैन कहते हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ठीक है, परन्तु दुर्जय कर्मों को जीता किसने ? जिसके उपासक जैन कहलाए ?

(८८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जैन धर्म की नींव किस आधार पर है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जैन धर्म की नींव **"अहिंसा परमो धर्मः"** के सच्चे सिद्धान्त के आधार पर है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

बहुत अच्छा ! परन्तु जब यह परमधर्म है तो क्या इसका पूर्णतया पालन गृहस्थ अच्छी तरह कर सकता है ? यदि नहीं तो यह व्यवहारिक धर्म नहीं, यदि हाँ तो क्या स्नान करने, भोजन बनाने, खेती करने, मकान में बुहारी लगाने आदि नैत्यिक कार्यों में हिंसा नहीं होती ?

(८९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जैन धर्म में स्वर्ग नर्क की क्या व्यवस्था है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जैन धर्म में ७ नरक और १६ स्वर्ग माने गये है। जो कर्म के अनुसार प्राप्त किये जा सकते हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

अर्थात् शुभाशुभ कर्म से प्राप्त होते हैं। १६ प्रकार के कर्म तो स्वर्ग के लिए ७ प्रकार के

कर्म नरक के लिए, एक तीर्थङ्करत्व व एक ईश्वरत्व के लिए, इस प्रकार २५ प्रकार के कर्म हुए, आपने तो ८ कर्म बतलाये, और क्या वे स्वर्ग और नरक स्थान विशेष पर हैं, यदि हाँ तो कहां हैं ? उनका वर्णन कीजिए ।

(९०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जैन शास्त्र में मोक्ष का क्या स्वरूप है ? और वह कैसे प्राप्त हो सकता है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

"निरवशेषनिराकृतकर्ममलकलंकस्या-शरीरस्यात्मनोऽचिन्त्यज्ञानादिगुणव्याबाधसुखमात्यन्तिकमवस्थान्तरं मोक्षः" इति । यह मोक्ष का स्वरूप और उसका उपाय सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चरित्र है ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ठीक है ।

(९१) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

"लोक प्रकाश" नाम वाले जैन ग्रन्थ के **"काल लोक प्रकाश"** के तृतीय प्रकरण में जो बतलाया गया है कि नितान्त सूक्ष्म काल का नाम **"समय"** असंख्य समयों की एक **"आवली"** एक करोड़ सड़सठ लाख सतहत्तर हजार दो सौ सोलह आवली का एक **"मुहूर्त"** तीस मुहूर्तों का एक **"दिन"** पन्द्रह दिन का एक **"पक्ष"** ओर दो पक्ष का एक **"मास"** बारह मास का एक **"वर्ष"** चौबीस लाख वर्ष का एक **"पूर्वाङ्ग"** और इतने ही पूर्वाङ्गों का एक **"पूर्व"** कहलाता है । और असंख्य पूर्वों का एक **"पल्योपम"** और दस कोटाकोटि पल्योपम का एक **"सागरोपम"** इत्यादि । इसमें दो बार असंख्य आ गये । क्या असंख्य की भी कोई संख्या निश्चित है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

विशेषण, विशेष्य से ही उसमें भेद है ।

(९२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि संख्या निश्चित है तो असंख्य नहीं हो सकता ।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जिस संख्या को गिनने के लिए असमर्थ हैं उसको असंख्य कहेंगे या संख्य ? पल्य के वर्षों की संख्या ४५ अंक प्रमाण है । आपकी संख्या १९ अंक प्रमाण है । अगर गणित विद्या से इसे आप गणना कर सकेंगे तो वह संख्या ठहर जायेगा, आप में अगर कोई अद्भुत शक्ति हो तो गिन लीजिये, जैन-सिद्धान्त में हर एक संख्या के लिए प्रमाण है ?

(९३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि असंख्य की कोई संख्या निश्चित नहीं तो क्या कोई गणितज्ञ इस गणनाक्रम के अनुसार काल-गणना कर सकता है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

कर सकता है, मगर वास्तविक गणितज्ञ होना चाहिये।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ९१ से ९३, विशेषण, विशेष्य से भेद क्या ? कोई असंख्य, कोई बड़ी असंख्य, हमारा तात्पर्य तो यह है कि है तो दोनों ही असंख्य फिर इसका प्रयोग काल-गणना में करना काल-गणना को असम्भव बनाना ही तो है। हमारी गणित में १९ संख्या का परिमाण है। पर आप अपनी गणित से बतलाते ? हम आपका पूछते हैं, हमारा तो हमें मालूम है।

(९४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि कोई गणना कर सकता है तो कृपया आप ही एक पल्योपम का "**समय**" बना दीजिये ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

प्रश्न संख्या ९२ से अनुसार समय की गणना कीजिये।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

हमारी अद्भुत शक्ति आपके गणित के लिये नही हैं। हम तो वैदिक प्रश्नों के उत्तरदाता हैं, आपकी गणित के लिए तो आपको ही यत्न करना पड़ेगा।

(९५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

क्या जैन-धर्माचार्यों का नग्न रह कर ग्राम-ग्राम व घर-घर में फिरते रहना भी जैनमत की सभ्यता है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

वास्तविक साधुता यथाजात रूप में ही है। यह कोई कृत्रिम वेष नहीं है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

यदि जात अवस्था में रहना ही पवित्रता और सच्ची साधुता का द्योतक है तो मनुष्य से बड़े साधु तो पशु हैं, खैर ! यह तो बतलाइये कि बाल क्यों नुचवाते हैं ? क्या जब ये पैदा हुए थे तो सिर

में बाल नहीं थे ? बाद में आ गये इसलिए नुचवा डालते हैं या गर्भ में भी नोचे गये थे ? और मोरपंख तो शायद लिये हुए ही पैदा हुए हों ? सुखदेव जी का दृष्टान्त आपने दिया था। यद्यपि हमारा सिद्धान्त ऐसा नहीं है। परन्तु थोड़ी देर के लिए मान लेते हैं। सुखदेव जी को देख कर स्त्रियाँ नग्न रह गई। परदा नहीं किया, अब जैन भाइयों की स्त्रियाँ "**त्यागी जी**" से पर्दा क्यों करती हैं ?

(९६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि सभ्यता है तो अष्ट मैथुनों में से एक मैथुन होने के कारण ऐसा होना शीलव्रत के आचरण में बाधक है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

स्पष्ट करें कि कौन से अष्ट मैथुन आपको अभिप्रेत हैं। उत्तर मिलने पर इसका उचित उत्तर दिया जावेगा, मैथुन, विकार भाव से होता है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

"**स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्, संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिवृत्तिमेव च। एतन्मैथुनमष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः**" ॥ ये अष्ट मैथुन हैं, यह मान लें कि स्वयं मुनि भी निर्विकारी हैं, परन्तु अन्य दर्शक सभी तो निर्विकारी नहीं। एक ओर तो शील व्रत का उपदेश करें, दूसरी ओर गुह्य अङ्गों का प्रदर्शन कर विकार उत्पन्न कराना, विरोध क्रिया नहीं तो क्या है ?

(९७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि सभ्यता नहीं तो इसका परित्याग क्यों नहीं किया जाता ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

देखो प्रश्न संख्या ९५ का उत्तर

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रश्न संख्या ९६ की समालोचना में लिखा जा चुका है।

(९८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

और आप उनको त्यागी जी कहते हैं, तो क्या उसी का नाम त्यागी है जो मन में, किसी वस्तु की चिन्तना करके उस वस्तु के मिलने पर ही भोजन करें।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

यह इन्द्रिय संयम के लिये है, संयम के बिना साधु नहीं बल्कि स्वादु है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

इन्द्रिय संयम के लिए हैं तो क्या मनश्चिन्तन भी इन्द्रिय संयम में सहायक हैं ? आप यह तो बार-बार कहते हैं कि, मन ही बन्ध मोक्ष का कारण है, फिर मन को इतना उच्छृङ्खल करने से इन्द्रिय संयम कैसे हो गया ? और फिर एक निश्चित नियम के अनुसार भोजन करने के पूर्व पूजन कराना क्या अभिमान बढ़ाने वाला कार्य नहीं ? अभिमान तो मनुष्य को और भी नीचे गिराने वाला है।

(९९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

त्यागी जी के निमित्त प्रत्येक जैन गृहस्थ के यहाँ जो नैत्यिक भोजन के अतिरिक्त विशेष भोजन बनाया जाता है, उससे जो जीव हिंसा होती है, क्या उस पाप के भागी त्यागी जी नहीं होते ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

त्यागी जी के निमित्त गृहस्थ के घर में भोजन नहीं बनता। ये सर्वथा उद्दिष्टविरत हैं ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

यदि त्यागी जी के निमित्त गृहस्थ भोजन नहीं बनाते तो जिस समय त्यागी जी भिक्षा के लिए निकलते हैं, गृहस्थ स्त्री व पुरुष जल कलश के साथ अनेक पदार्थ लिए खड़े रहते हैं। त्यागी जी के पहुंचते ही **"भो-स्वामिन अत्र तिष्ट तीन आहार जल शुद्ध हैं"** आदि कह कर भोजन के लिए आमन्त्रित करते हैं। वैसे ही त्यागी जी किसी के यहाँ भिक्षा लेकर भोजन कर लें तो अलबत्ता कह सकते हैं कि, उनके निमित्त नहीं बनाते। त्यागी जी के भोजन का कहीं निश्चित्त न होने से तो और भी ज्यादा भोजन बनता हैं। और अधिक हिंसा होती है। इससे तो अच्छा यही था कि कहीं एक स्थान पर ही रूखा-सूखा जो भी मिला, थोड़ा सा शरीर निर्वाह के लिए खाकर चलते होते। हाँ रास्ते के लिए गाड़ियों में सामान भरा हुआ चलता है, रास्ते में गृहस्थ के घर बनाये जाते हैं। और भिक्षा कराई जाती है, यह किसके निमित्त ? त्यागी हैं तो अकेले ही फिरें। जहाँ जो कुछ मिले भोजन कर लें। जैसा वैदिक सन्यासियों के लिए बतलाया है।

(१००) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि यह कहा जावे कि उनके निमित्त विशेष भोजन नहीं बनाया जाता तो क्या कोई दिगम्बरी हृदय पर हाथ रख कर यह कह सकता है कि हमारे यहाँ हमेशा ऐसा ही भोजन बनता है जैसा कि त्यागी जी के यहाँ रहने पर बनाया जाता था।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

विशेष भोजन जब इच्छा हो जाय, तभी बनाया जा सकता है। इसके लिए कोई नियत समय की आवश्यकता नहीं है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

विशेष भोजन बनाना इच्छा पर ही है तो त्यागी जी के आने पर सबको ही विशेष भोजन की इच्छा क्यों हो जाती है ? तर्क की क्या आवश्यकता ? हमारे जैनी भाई ही हृदय पर हाथ रख कर कह देवें कि विशेष भोजन केवल इच्छा होने से बना था, मुनि जी का कोई भी निमित्त नही था तो बस है। मगर ऐसा नहीं।

(१०१) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

और त्यागी जी भोजन को जाते समय कुत्ते-बिल्ली रास्ते में देख कर वापिस लौट जाया करते हैं तो क्या कुत्ते-बिल्ली से उनको इतना द्वेष है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

त्यागी जी कुत्ते-बिल्ली को देख कर कभी नहीं लोटते। यह लिखना "**त्याग धर्म**" का दुरुप-योग करना है। हाँ ! उन हिंसक प्राणियों से स्पर्श होने या भोजन के समय अकस्मात् किसी जीव का रुदन होने पर, वह अपने आहार में अन्तराय मानते हैं। यहाँ भी उसी अहिंसामय परमधर्म का ही ध्येय है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

क्या हिंसक पशुओं के स्पर्श से ही हिंसा दोष लग जायेगा ? रुदन होने से ही भोजन छोड़ देते हैं, तो बच्चे का रुदन भी वे हिंसा मानते ही हैं। हिंसा से दुखी होकर उसे दूर करने का यत्न तो कुछ करते ही नहीं, उल्टे घर में से भाग कर घर वालों को और दुखी करते हैं। और सम्भव है कि छोटा बच्चा रोवे तो माता बाद में उसे और भी पीटती होगी कि क्यों रोकर स्वामी (त्यागी) जी को भगाया। इस प्रकार थोड़ी हिंसा के बदले बड़ी हिंसा और कराई। इस बड़ी हिंसा का श्रेय त्यागी जो को नहीं तो और किसको है ?

(१०२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि उनसे द्वेष है तो फिर वे त्यागी जी कैसे ? वे तो महाद्वेषी हुए।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

द्वेषी नहीं वह परम पवित्र अवस्था है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

द्वेषी नहीं तो क्या हैं ? हमारे यहाँ तो बतलाया है कि, पाप से घृणा करो, पापियों से प्रेम करो और उसे पाप प्रवृत्ति से हटाओ। ये यदि हिंसक पशुओं से स्पर्श नहीं करेंगे, तो क्या हिंसक पशु हिंसा छोड़ देंगे ? हाँ ! यदि उन्हें पाल कर बचपन से दूध आदि दें, तो सम्भव है कि, हिंसा करने का उनको अवसर न मिले, जैसे पालतू कुत्ता, इत्यादि।

(१०३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जब कोई जैनी "**त्यागी**" होता है तो वह सकाम भाव से या निष्काम भाव से ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

निष्काम भाव से ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

निष्काम भाव से कैसे हुआ ? यह इच्छा तो है कि आपके कथनानुसार कर्म का आवरण आत्मा पर से हट जाय यह एक कामना है, सर्वज्ञता प्राप्त होगी, यह भी एक कामना है । हाँ ! और स्वर्ग जो १६ बतलाये हैं । क्या उनकी कामना भी कामना नहीं ? यह किस रोग की औषधि है ? और किसके लिए है ?

(१०४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण –

यदि सकाम भाव से होते हैं तो उनकी क्या कामना है ? जहाँ कामना हैं वहाँ राग-द्वेष भी होता है । जब तक राग-द्वेष का त्याग नहीं होता, तब तक त्यागी नहीं कहे जा सकते ।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

देखो प्रश्न संख्या १०३ में ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना –

ऊपर देखो

(१०५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि निष्काम भाव से तो बिना कामना के प्रवृत्ति नहीं हो सकती, जहाँ प्रवृत्ति है वहाँ दोष, और जहाँ दोष है वहाँ जन्म और जहाँ जन्म है वहां दुःख होते हैं, इसलिए जैन धर्म के अनुसार त्याग से जीवात्मा को मोक्ष मिल ही नहीं सकता ।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री –

वे प्रवृत्ति नहीं करते, वे निवृत्ति करते हैं, जिससे आगे के कोई विकल्पकारी कार्य न होगा ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रवृत्ति नहीं यह कैसे ? और नहीं तो त्यागी जी की प्रवृत्ति तो रहती है, घर में घुसना एक प्रवृत्ति है, उसमें से निकलना भी प्रवृत्ति है, प्रत्येक किया प्रवृत्ति से ही होती है ।

(१०६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

त्याग कितने प्रकार के हैं ? और उनमें कौन से त्याग से "त्यागी" कहलाया जाता है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

आत्मा के स्वभाव को भुलाने वाले पंचेन्द्रिय सम्बन्धी विषयों का त्याग करना ही त्याग कहाता है। और त्याग करने वाले का नाम "त्यागी" है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ठीक है।

(१०७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जब त्यागी हो जाते हैं तो स्पृश्यास्पृश्य का विचार क्यों रखते है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

स्पर्शास्पर्श भेद लोप से संयम की सिद्धि नहीं हो सकती।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

जब इन्द्रियों के विषय का त्याग करना संयम है तो स्पृश्यास्पृश्य क्या इन्द्रियों के विषय के बाहर हैं ? स्पृश्यास्पृश्य का विचार सिद्ध करता है कि उनमें समदर्शिता नहीं आदि, हम भी व्याख्या में अपनी वर्ण व्यवस्था पर उत्तर दे आये। परन्तु त्यागी जी वर्ण-धर्म से परे हैं उन पर यह नियम लागू कैसे करते है ?

(१०८) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

क्या त्याग में स्पृश्यास्पृश्य का त्याग नहीं है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

त्याग में स्पृश्यस्पृश्य का त्याग नहीं है। त्याग का लक्षण प्रश्न संख्या १०६ के उत्तर में देखो।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

फिर त्याग क्या नंगे फिरने में हैं ? यह भाव तो अभिमानद्योतक हैं, जो आत्मा को गिराने वाला है।

(१०९) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जब त्यागी ही हो गये तो शरीर का त्याग क्यों नहीं कर देते ? जिससे कि इनको गली-गली में फिर कर अनेकों दु:ख भोगने पड़ते हैं।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

शरीर का त्याग नहीं किया जाता है ; गली-गली में फिरने से उनको कोई दु,ख नहीं होता है। वह संयम पालन के लिए कर्त्तव्य पालन है।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ठीक है, शरीर त्याग किया नहीं जाता और करना भी नहीं चाहिये, परन्तु अभी (कुछ दिन हुए) किशनगढ़ में एक त्यागी जी ने उपवास से शरीर त्याग किया उसे क्या कहोगे ? गली-गली फिरने की अपेक्षा यदि कहीं एक स्थान पर तपश्चर्या करें, तो क्या ठीक नहीं है ?

(११०) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

त्यागी जी को शरीर धारण करके घूमने फिरने से अनेकों जीवों की हिंसा होतीं है, तो क्या वे उस हिंसा के दोष के भागी नहीं होते ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

दोष जो हैं वे प्रसाद कृत हुआ करते हैं, उनका इस प्रकार चलने में कोई प्रमाद नहीं है, अतः वह दोष के भागी नहीं होते।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

प्रमाद कृत ही क्यों ? अपने काम के लिए भी तो दूसरे को कष्ट देना हिंसा है। भोजन भिक्षा आदि के लिए फिरने से हिंसा करते हैं। क्या आवश्यकता फिरने की है ?

(१११) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

क्या त्यागियों को भोजन में भी विशेष इच्छा होनी चाहिए ? यदि नहीं तो जैसा भी भोजन उसके सामने आ जावे उसके ग्रहण करने में वे आना कानी क्यों करते हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

त्यागियों को भोजन में विशेष इच्छा नही होनी चाहिए। हाँ ! अशुद्ध और नियम विरुद्ध भोजन नही ले सकते हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

विशेष की इच्छा नहीं तो क्या है ? कि अमुक वस्तु मिले, तभी भोजन करेंगे। बिचारे गृहस्थ तरह-तरह के भोज्य पदार्थ बनाते हैं, कि क्या जाने त्यागी जी क्या भोजन करेंगे ? आपने यह भी कहा है कि ये बैठ कर इसलिए भोजन नहीं करते कि कहीं ज्यादा न खा जायें। तो क्या उन्हें अपने मन पर

काबू नहीं ? तो इससे अच्छे तो वे ही हैं जो बैठ कर भी भोजन करते हुए कभी अधिक न खाकर बीमार नहीं पड़ते ।

(११२) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

क्या त्यागी होकर संसार से सम्बन्ध रखना त्याग में बाधक नहीं हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

हाँ ! बाधक है ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ठीक है ।

(११३) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

क्या नवंकार मन्त्र के जाप मात्र से ही पापों से छुटकारा हो सकता है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

प्रश्न कर्त्ता का नवकार मन्त्र से क्या तात्पर्य है ? और कैसे नवकार ? हां ! अगर आपने भूल से **"णमौकार"** मन्त्र के लिए यह **"नव"** लिख दिया। तो उसके लिए यह उत्तर है कि णमोकार मन्त्र के जाप से शुभ कर्मों का बन्ध होता है । शुभ कर्मों के बन्ध से पापों का नाश होता है ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

शुभ कर्मों के बन्ध से आगे अशुभ कर्म न होना तो सम्भव है, परन्तु पहले के दुष्कर्मों का नाश कैसे होता है यह आप ही जानें ?

(११४) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि हो सकता है तो बहुत पाप करके जप करने से किसी को पाप नही लगेगा ।

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

पाप करके उक्त मन्त्र को भक्ति से जपने से वही फल हो सकता है, मगर उस पाप का बन्ध तो अवश्य होगा । मगर उसकी निर्जरा इससे हो सकती है ।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आपके **"मगर"** मगर का अर्थ आप ही जानें । हाँ ! व्याख्या में आपने कहा था कि पिछले पाप तो नहीं छूटते आगे के पाप कर्म से छुटकारा होता है । यदि यही ठीक है तो **"एष पंचणमोकारो सब्बपापविणाशणो"** में विनाश शब्द से तो यही प्रकट होता है कि पापों का नाश करता है । यदि प्रतिषेध करना अभिप्रेत होता, तो विनाश न रखते ।

(११५) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जैन मत स्वत:प्रकाश है या परत:प्रकाश ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जैन मत अभ्यास दशा में "स्वतः प्रकाश" और अनभ्यास दशा में "परतः प्रकाश" हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

व्यक्तियों के लिए नहीं। हमारा तात्पर्य यह है कि, जिस प्रकार सूर्य स्वत:प्रकाश है, चन्द्र परत:प्रकाश है जो सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित है, इस प्रकार (जैन मत स्वत:प्रकाश है या परत:प्रकाश ?) यह प्रश्न था आपने व्यक्तियों के लिए कहा।

(११६) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

जो जैन मत के **"विवेकसार"** पृष्ठ २२१ में लिखा है कि अन्य मत वालों का गुण कीर्तन, वन्दन अलापन, संलपन, अन्न वस्त्र आदि दान, गन्ध पुष्पादिदान, जैन मतावलम्बी कभी न करें। क्या इससे जैनाचार्यों का अन्य मत वालों के साथ द्वेष नहीं विदित होता ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

हमारे मत में **"विवेकसार"** कोई ग्रन्थ नही। अगर किसी जैन सम्प्रदाय की किसी शाखा के ग्रन्थ में यह लेख उपलब्ध हुआ है तो वह भी ठीक है। यह द्वेष को प्रकट नहीं करता।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

खैर ! आपके यहाँ नहीं है। तो जाने दीजिये।

(११७) श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—

यदि जैनाचार्य को द्वेष नही होता तो इसका क्या ताप्पर्य है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

इसका तात्पर्य अन्ययोग-व्यवच्छेद और स्वमत प्रतिपादन, जो कि कोई वैयक्तिक बुद्धि से नहीं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ये बातें सिद्धान्त से सम्बन्ध रखती हैं, व्यक्ति से नहीं। व्यक्तिगत द्वेष क्यों ? परन्तु यह आपका ग्रन्थ ही नहीं, फिर बात ही क्या ?

(११८) **श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—**

और यदि द्वेष होता है तो वीतरागता का उपदेश कैसा ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री -

देखो प्रश्न संख्या ११७ का उत्तर।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ऊपर हो गया।

(११९) **श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—**

यदि कर्मों का ही फल मिलता है तो "भक्तामर" आदि स्तोत्र-पाठ का क्या तात्पर्य है ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

भक्तामर आदि का स्तोत्र-पाठ भी शुभ कर्म है, देखो प्र,श्न संख्या ११३ के उत्तर में ! |

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

आलोचना संख्या ११३ में देखो।

(१२०) **श्री पण्डित भगवान स्वरूप जी न्यायभूषण—**

यदि कर्मों के फल को ही मुख्य मानते हो तो जब आपका कोई सम्बन्धी बीमार हो जाता है तो कर्मों के फल के आधार पर ही क्यों नही रहते हो ? किसी डॉक्टर या वैद्य की शरण में क्यों जाते हो ? ऐसा क्या करके आप कर्मों को भी मिटाने का प्रयत्न नहीं करते हैं ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग कारण से ही कार्य की सिद्धि होती हैं।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

ऊपर देखो।

(१२१) **श्री पण्डित भगवान स्वरूपजी न्यायभूषण—**

अन्य मत वालों की तरह अपनी इष्ट मूर्तियों पर चढ़ाये हुए नैवेद्य को प्रसाद रूप में ग्रहण क्यों नही करते ? क्या उन मूर्तियों के स्पर्श से वह नैवेद्य विषैला हो जाता है या ऐसा दूषित हो जाता है, जिसे आप ग्राह्य नहीं समझते ?

श्री जैन पण्डित वर्धमान जी शास्त्री—

जब आप "चढ़ाये हुए" इस शब्द को अंकित कर रहे हैं तो वह पदार्थ फिर ग्रहण करने योग्य नहीं रहा। जो दान दिया हुआ पदार्थ है वह कभी आदान योग्य नहीं हुआ करता है। जिसमें एक दफै हम संकल्प कर चुके हैं, फिर वह दूसरे के योग्य नहीं रहा इसलिए हम अन्य मतावलम्बियों का अनुकरण करना नहीं चाहते।

श्री आर्य पण्डित द्वारा समालोचना—

जिनके लिये चढ़ाते हैं वे मूर्तियां तो वीतराग तीर्थङ्करों की होती हैं। जिन्हें राग-द्वेष, खान-पान, से कोई सम्बन्ध नहीं। चढ़ाना तो केवल उनके भाव प्रदर्शित करना है अर्थात् उनकी प्रतिष्ठा

करनी है, फिर वह दान कैसे हुआ ? क्या आपके तीर्थङ्कर दान भी लेते थे ? मैं समझता हूं उन्हें दान से क्या प्रयोजन ! फिर चढ़ाए हुए का प्रसाद तो इसी प्रकार है जिस प्रकार यदि पिता की थाली में भोजन बच गया तो लड़का खा लेता है । इष्ट-देव हमारे माता-पिता के तुल्य हैं। फिर उनका प्रसाद लेने में दान-आदान का क्या सम्बन्ध ?

श्री पण्डित फतह लाल जी त्रिपाठी (मन्त्री आर्य समाज) का इस शास्त्रार्थ के सम्बन्ध में अन्तिम निवेदन—

सज्जनों ! यह निष्पक्ष भाव से शास्त्री जी के प्रश्नोतरालोचना, प्रत्यालोचना तथा हमारे प्रश्नों का जो उत्तर शास्त्री जी ने दिया था, उस पर हमने जो प्रश्न पुनः किये, तथा उनके प्रश्नों की जो प्रत्यालोचना की उसका उत्तर न आज तक आया न युग-युगान्तर में आने की आशा है, क्योंकि शास्त्री जी, यहाँ भरी सभा में निरुत्तर होकर, खिसियाकर, गाली गलोच देकर, पिण्ड छुड़ा कर, जान बचाते हुए भाग गये थे । **"जान बची और लाखों पाये, लौट के बुद्धू घर को आये"** यह कहावत यथार्थ में शास्त्री जी पर घटती है । और हमें तो आश्चर्य यह है कि, जो व्यक्ति शुद्ध हिन्दी भी लिख व बोल नहीं सकता, जो **"समवाय आदि"** दार्शनिक शब्दों के अर्थ तक नहीं समझता वह **"शास्त्री"** उपाधि अपने नाम के साथ लगा कर शास्त्री पद की क्यों भिट्टी पलीद कर रहा है ? परन्तु तिस पर भी आप टाँग ऊँची करके दूसरों को गीदड़ कह कर अपनी अयोग्यता का परिचय देते हुए कहते हैं कि—**"पत्र का उत्तर आज तक नहीं दिया, न इस युग में देने का आशा है"** जब आप भाग गये तो पत्र का उत्तर दें किसको ? यही हमारी समझ में नहीं आया। और फिर पत्र का उत्तर भी तो आपने नहीं माँगा। आपने जो जनता को सुनाने के लिए एक चिट्ठी भेजी थी, सो सुना दी गई थी, और आपको भी सैकड़ों बार उस सभा में बुलावे भेजें । परन्तु आप बाहर से दूसरे जैन पण्डितों के आने की प्रतीक्षा में बैठे रहे । और जब कोई भी पण्डित नहीं आया तो आप **"गधे के सिर के सींग के मानिन्द"** रफूचक्कर हो गये । तथा दूसरे पत्र में लिखा तो केवल निर्णायक के विषय में था, सो शास्त्री जी से तो पहले ही दिन कहा गया था कि आप यदि शास्त्रार्थ करना चाहते हैं तो **"विषय"** तथा **"नियम"** व **"निर्णायक"** का पहले निर्णय कर लेवें । परन्तु शास्त्री जी तथा उनके अनुगामियों ने कहा कि, **"आर्य समाजी तो इस प्रकार शास्त्रार्थ टालना चाहते हैं, निर्णायक के बहाने बातचीत करने से भागते हैं"** बस आप लोगों की उस शङ्का को दूर करने के लिए हमने **"निर्णायक"** से निर्णय न कराने के लिए निश्चय कर लिया। और इस पर भी जब सारी विद्वज्जनता शास्त्रार्थ का निर्णय भरी सभा में कर चुकी कि शास्त्री जी—**"इस छोटे से दो मनुष्यों के झगड़े का निपटारा करने के लिए निर्णायक की आवश्यकता है तब इतनी बड़ी सृष्टि रूपी पहेली के सुलझाने के लिए, इस सारी व्यवस्था के लिए, व्यवस्थापक की आवश्यकता है और वही ईश्वर है ।"**

क्या यह जनता का एक स्वर से कहना पूर्ण निर्णय नहीं ? यह बात दूसरी है कि, दिन दहाड़े सूर्य का प्रकाश यदि उल्लू को न दीखे, तो इसमें सूर्य का क्या दोष है ? सज्जनों ! ये सब सच्ची बातें आपके सामने हैं, आशा है कि आप लोग सत्पथ ग्रहण कर, कल्याण प्राप्त करेंगे ।

॥ शमित्योम् ॥

"मन्त्री"
[आर्य समाज—शाहपुरा स्टेट]
राजस्थान

पूज्य श्री अमर स्वामी जी महाराज शास्त्रार्थ केशरी जी
का
स्वलिखित एवं स्वकथित जीवन परिचय

लेखक एवं संग्रहकर्त्ता:
"लाजपत राय अग्रवाल"

दो शब्द

—"**सम्पादकीय**"

यह जीवन चरित्र दस-बारह वर्ष पहले पूज्य अमर स्वामी जी महाराज ने लिखवाना आरम्भ किया था, जो धीरे-धीरे जैसे-जैसे समय मिलता था वह स्वयं भी लिखते थे, तथा मुझसे भी लिखवाया करते थे, कई बार इसे अलग भी प्रकाशित कराने का विचार हुआ परन्तु वही आर्थिक समस्या सामने आती थी, इस लिए यह आज तक छप ही नहीं पाया था, अब ४ सितम्बर सन् १९८७ को जब स्वामी जीमहाराज स्वर्ग सिधार गये तब कई व्यक्ति मेरे पास आये कि यह सामग्री हमें दे दो हम प्रकाशित करायेंगे, मैंने कह दिया कि ओरिजनल कापी तो मैं दूंगा नहीं, आप इसकी दूसरी कापी फोटो करा लें या टाइप करा लें। पुनः वे व्यक्ति आज तक लौटकर नहीं आये, मैं पहले से ही जानता था कि यह छपना-वपना है नहीं, व्यर्थ में सामग्री और नष्ट हो जाएगी।

इसी दौरान यह ग्रन्थ "**निर्णय के तट पर**" छप ही रहा था, तो मैंने इस सामग्री को अलग न छपा कर इसी ग्रन्थ के अन्त में छपाने का निश्चय किया, क्योंकि मैंने इसमें देना ज्यादा उपयुक्त समझा वह इस लिए कि जब तक यह ग्रन्थ कायम रहेगा तब तक यह सामग्री भी सुरक्षित रहेगी। अलग छपने पर होसकता था कि छोटी पुस्तक को हर कोई संभाल कर न रख पाता। अतः मैंने तुरन्त पुनः उस ओरिजनल कापी की प्रैस कापी तैयार कराई, और इस ग्रन्थ में प्रकाशनार्थ भिजवा दिया।

यह जीवन चरित्र भी अपने आप में एक अद्भुत शिक्षाप्रद सामग्री है, जिससे हर व्यक्ति शिक्षा ले सकता है एवं जिसके द्वारा हमें प्राचीन आर्य समाज के कार्य कलापों की झलक मिलती है जहां तक स्वामी जी महाराज के निजि जीवन एवं दिनचर्या का सवाल था उसके बारे में मैं केवल इतना ही कह सकता हूं कि **"मेरे जीवन में ऐसा अदभुत, योग्य एवं सादा जीवन व्यतीत करने वाला संन्यासी नहीं आया"** स्वामी जी महाराज का जीवन, वास्तव में जैसा एक सन्यासी का जीवन होना चाहिये वैसा था लालच का नामोनिशान तक नहीं था, जो मिल गया उसी में सतुष्ट जैसा मिल गया उसी में खुश, नहीं मिला तो भी खुश, कभी किसी से ईर्ष्या-द्वेष नही, हमेशा सत्य का साथ देना, स्पष्ट वादिता हमेशा उनके साथ रहती थी। जो भी सज्जन स्वामी जी के सम्पर्क में थोड़े समय के लिए भी आये, उन्होंने इन सब बातों को स्वयं महसूस किया है। मैं खुद ऐसे महान, आप्त सन्यासी के बारे में कुछ लिखूं यह छोटे मुंह बड़ी बात ही होगी। जबकि मेरा सम्पर्क उनके जीवन काल में सबसे ज्यादा रहा। मैंने उनको बड़े नजदीक से देखा अन्त में मैं केवल इतना ही कह सकता हूं, अगर आर्य समाज में अमर स्वामी जी महाराज जैसे त्यागी, तपस्वी, योग्य सन्यासी हों तो समाज का कार्य दिन दूनी-रात चौगुनी उन्नति कर सकता है।

किमधिकम् लेखेन् !!

विद्षामनुचर :—

"लाजपत राय अग्रवाल"

जीवन परिचय

"अमर स्वामी सरस्वती"

जन्म स्थान परिचय—

पेशावर से कलकत्ता तक सीधी जाने वाली सड़क (जी. टी. रोड) पर दिल्ली से ६३ मील, खुर्जा से ६ मील पूर्व की ओर तथा अलीगढ़ से २१ मील पश्चिम की ओर एक छोटा सा ग्राम **"अरनियाँ"** जो जिला बुलन्दशहर के अन्तर्गत है। सन् १८५७ से पूर्व इस गांव में अंग्रेजों का एक बंगला था, उसमें दो अंग्रेज अपने परिवारों सहित बसते थे। सन् १८५७ की क्रान्ति के समय अरनियां ग्राम के लोगों ने दोनों अग्रेजों को मार कर उनको भूमि में **"शिर नीचे पैर ऊपर करके"** (शीर्षासन) अवस्था में, खड़ा ही गाड़ दिया और उनके बच्चों को मेरठ में अन्य अंग्रेजों के पास पहुंचा दिया उस समय तक मेरठ वाले अंग्रेजों को अरनियां वाले अंग्रेजों के मारे जाने का पता नहीं था, केवल गुम होने का पता था इसलिए उन्होंने अरनियां के ठाकुरों को (उन दोनों अंग्रेजों के स्त्री व बच्चों को सुरक्षित पहुंचाने के कारण) **"वफादारी का परवाना"** लिख कर दे दिया। क्योंकि उन अंग्रेजों के मारे जाने का पता उनके स्त्री-बच्चों को भी नहीं था, उन्हें भी गायब होने की ही बात बतायी गई थी, परन्तु जब मेरठ वाले अंग्रेजो को किसी ने यह बताया कि—अरनियां के ठाकुरों ने अरनियां में रहने वाले दोनो अंग्रेजों को मार दिया है, तब उन्होंने अरनियां ग्राम को तोपों से उड़ाने का हुक्म जारी कर दिया। अरनियां के पश्चिम की ओर लगभग छः फर्लांग दूर जी० टी० रोड पर ही तोपों का मोर्चा लगा दिया गया, कुछ ही देर में तोपों से ग्राम को उड़ाया जाना था, कि दूसरी अरनियां जो खुर्जा जंकशन के पास है, उसके जमींदार **"श्री ठाकुर पदम सिंह जी"** घोड़े पर चढ़ कर अंग्रेजी तोप खाने के पास पहुंचे और तोप खाने के अफसर से कहा—**"अरनियां ग्राम के लोगों ने अंग्रेजों को नहीं मारा इन्होंने तो उनके स्त्री-बच्चों की रक्षा की है उनको (मेरठ से मिला हुआ वफादारी का पत्र दिखाते हुए) वफादारी का परवाना भी हासिल है"** उसे देखकर तोपें हटा ली गयीं, और वह तोप खाना अलीगढ़ को चला गया, और अरनियां ग्राम की रक्षा हो गयी। उस तोप खाने से **"मंगत और महताब"** दो भाई थे जो अंग्रेजों के घोर विरोधी थे, उनको उन तोपों से बांध कर उड़ा दिया गया था। उसके बाद अरनियाँ ग्राम में अंग्रेजों ने अपना थाना बनाया, और डाकघर भी स्थापित् किया वह थाना सन् १६२० ई० तक रहा, बाद में उसे तोड़ दिया गया। स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् एक बीज गोदाम और एक पशुओं का अस्पताल खोला गया, जो अब तक है, उसमें एक डाक्टर भी रख दिया गया।

अंग्रेजों की क्रूर दृष्टि—

उसके बाद इस ग्राम पर अंग्रेजों की क्रूर दृष्टि सदा बनी रहीं उसके फलस्वरूप अरनियां ग्राम के चारों तरफ इलाके भर के ग्रामों को नहर का पानी उपलब्ध कराया गया, परन्तु अरनियां ग्राम को नहर के पानी से भी वंचित रक्खा गया। अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध महात्मा गांधी ने जब-जब सत्याग्रह कराया तब-तब इस गाम के युवकों ने उसमें भाग लेकर जेल यात्राएं की। इसलिए अंग्रेज सरकार की आँखों में यह ग्राम और भी अधिक चुभता रहा।

वंश परिचय—

इस ग्राम में भारत के अन्तिम सम्राट पृथ्वीराज चौहान (राय पिथौरा) के वंशज चौहान क्षत्रिय प्रधानता से निवास करते हैं, उन्हीं चौहान वंशीय क्षत्रियों में एक प्रतापी ठाकुर श्री दौलतसिंह जी थे, उनके चार पुत्रों में छोटे पुत्र ठाकुर (श्री कुंवर सेन जी) श्री कुंवर सिंह जी बहुत वीर और धर्मात्मा तथा परम ईश्वर भक्त और सदाचारी पुरुष थे। ६५ वर्ष की आयु में उनका बिना किसी रोग के बैठे-२ ही देहान्त हुआ था, ६५ वर्ष की आयु तक उनकी कमर नहीं झुकी थी। सदा सीधे चलते, थे उनके दांत मृत्यु पर्यन्त विद्यमान रहे। श्री कुंवर सिंह जी के छः पुत्रों में सबसे बड़े "**श्री ठाकुर टीकम सिंह जी**" थे, अन्य पांच पुत्र—१. श्री ठाकुर चन्दन सिंह जी, २. ठाकुर हुलासी सिंह जी, ३. श्री ठाकुर सांवल सिंह जी, ४. श्री ठाकुर गणपति सिंह जी, ५. श्री ठाकुर शहजाद सिंह जी थे। श्री कुंवर सिंह का परिवार सैकड़ों ग्रामों में प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित था। श्री ठाकुर कुंवर सिंह जी के ज्येष्ठ पुत्र "**श्री ठाकुर टीकम सिंह जी**" बहुत वीर, न्याय प्रिय, उदार तथा सदाचारी पुरुष थे, बलवानों द्वारा निर्बलों के सताये जाने पर श्री ठाकुर टीकम सिंह जी, निर्बलों का पक्ष लेते थे, और पापी कोई चाहे कितना भी बलवान क्यों न हो, उससे न कभी डरते थे, और न कभी उसका पक्ष ही लेते थे। बल्कि उनका सदा विरोध तथा धर्मात्माओं की सदा सहायता किया करते थे। श्री ठाकुर टीकमसिंह जी के चार पुत्र हुए। १. श्री कुंवर गोकुल सिंह जी, २. श्री ठाकुर सरदार सिंह जी, ३. श्री दफेदार सिंह जी (जिनकी बारह वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी थी) ४. मैं (अमर सिंह) सबसे छोटा था। हमारी एक बहन थी जो हम सब भाइयों से बड़ी थी, उनका नाम कश्मीरी देवी था। वह खुर्जा के निकट "**धरपा**" ग्राम में श्री ठाकुर रामचन्द्र सिंह को बिवाही थी।

जन्म काल—

मेरा जन्म सम्वत् १९५१ के वैशाख मास कृष्ण पक्ष की द्वितीया (अप्रैल सन् १८९४ ई०) को प्रातः काल हुआ था। सम्वत् १९५६ विक्रमी में हमारी पितामही (दादी) जी का देहान्त हुआ। हमारी दादी जी "**बोनेर**" ग्राम जि० अलीगढ़ के राठौर परिवार में से थी जो बहुत ही धार्मिक वृत्ति की वृद्धा थी, उनकी मृत्यु पर मेरे पिता जी ने माल पूड़ों का भारी भोज दिया, हजारों लोगों ने भोजन किया इनमें सैकड़ों भूखे "**बागड़ी**"(१) भी थे जिनको प्रेम पूर्वक भोजन कराके तृप्त किया गया। उस समय

टिप्पणी—

(१.) उन दिनों बागड़ और बीकानेर में भंयकर दुर्भिक्ष पड़ा हुआ था, बीकानेर के एक क्षत्रिय वंश की महिला भूख से मर गयी थी, उसकी छाती पर एक भूखा बालक माता के स्तनों से दूध पीने का यत्न करता था, वह दूध न निकलने पर रोता था, "**महा क्रांतिकारी श्री लाला लाजपत राय जी**" लाहोर से, धन, अन्न आदि लेकर दुर्भिक्ष पीड़ितों की प्राण रक्षा के लिए वहां गये हुए थे, उस बच्चे की दशा को देखकर वह रो पड़े और उन्होंने उस बच्चे को गोद में उठा कर उसे दूध शीशी से पिलाया, और बहुत से अनाथ बच्चों के साथ इस बच्चे को भी साथ ले आये थे, कुछ बच्चों को आर्य अनाथालय फिरोजपुर में प्रविष्ट किया गया था तथा कुछ बच्चों को आर्य अनाथालय आगरा में प्रविष्ट किया था, उन्हीं में वह बालक भी था उसका नाम "**गंगासिंह**" था। आगरा अनाथालय में ही इस बच्चे का पालन

बागड़ी लोग गीत गाते थे —"**छःपनियां काल फिर मत आइयो म्हारे बागड़ में**" बाद में पिताजी की स्थिति अच्छी नहीं रही। यह "**मृतक श्राद्ध**" का परिणाम था। हमारे पितामह श्री कुंवर सिंह जी की जमींदारी जो थी उसे कुछ तो पितामह (बाबा)जी ही ने छोड़ दी थी जो शेष थी, वह पिताजी के पांच भाइयों (चाचाओं) में बंट गयी, हमारे पिताजी ने उसमें से कोई हिस्सा लेना स्वीकार नहीं किया, केवल बाबा जी का एक बाग था उसमें जरूर हिस्सा रखा था वह भी इस लिए कि इस बाग के आमों से मेरे बच्चे वंचित न रहें, मेरे ग्राम से आधा मील दूरी पर पश्चिम दिशा में ग्राम "**रुकुनपुर**" है, यहां के गौड ब्राह्मण जमीदार, नम्बरदार "**श्री देवी सिंह जी**" की छः ग्रामों में जमींदारी थी, उनकी और मेरे पिताजी की घनिष्ठ मैत्री थी, दोनों सगे भाइयों की तरह ही रहते थे, श्री नम्बदार देवी सिंह जी के साथ सुपरिटैंडेण्ट पुलिस (बुलन्दशहर) और अकबर खां नामी थानेदार पुलिस थाना "**अरनियां**" की कुछ गर्म-गर्म बातें हो गयी, पुलिस वाले झूठा मामला बनाकर नम्बरदार साहिब को फंसाना चाहते थे, इसलिए मेरे पिता जी नम्बरदार साहिब को लेकर अपनी ननिहाल "**बोनेर**" जिला अलीगढ़ में कुछ समय के लिए चले गये, तथा कुछ दिनों राजस्थान का भी भ्रमण किया।

पोषण तथा शिक्षा-दीक्षा दी जाती रही, बालक बड़ा होता गया, डील डौल में भी अच्छा लम्बा, चौड़ा दिखाई देने लगा, अर्थात् छोटी आयु में ही बड़ा प्रतीत होने लगा। बड़ा ही पुरुषार्थी तथा परिश्रमी बन गया, धर्म शिक्षा में भी विशेष रुचि लेने लगा तथा संगीत में भी उसकी रुचि एवं प्रगति दिखाई दी। "**श्री ठाकुर नत्था सिंह**" जी ग्राम "**मानकपुर**" (उटरावली) जि० बुलन्दशहर के रहने वाले थे जो पुलिस विभाग में हैड मुर्हारिर थे पक्के आर्य समाजी थे, हमारे ग्राम अरनियां के पुलिस थाने में भी रहे थे, आर्य समाज के भजन गाने में उनकी बड़ी रुचि थी, हमारे एक चाचा जी "**श्री ठाकुर नारायण सिंह जी**" भी भजन गाते थे, दोनों की मैत्री हो गयी थी। पुलिस के कुछ अफसर एक निर्दोष व्यक्ति के विरुद्ध श्री ठाकुर नत्था सिंह जी से पुलिस के रजिस्टर में झूठी शिकायत दर्ज कराना चाहते थे, जिससे वह निर्दोष व्यक्ति व्यर्थ में ही आपत्ति में पड़ सकता था। श्री ठाकुर नत्था सिंह जी ने वह झूठी शिकायत नहीं लिखी, वह आर्य पुरुष थे, वीर थे, इसी कारण पुलिस विभाग को सदा के लिए छोड़ दिया, और आर्य समाज के "**भजनोपदेशक**" हो गये।

आप आर्य अनाथालय फिरोजपुर की ओर से प्रचार और अनाथालय के लिए धन संग्रह करने लगे बहुत प्रसिद्ध हो गये, उन्हीं ठाकुर नत्था सिंह जी ने उस होनहार बालक "**गंगासिंह**" को देखा और उसको गाना-बजाना सिखाने लगे, परिणाम स्वरूप कालान्तर में गंगासिंह भी "**ठाकुर गंगासिंह आर्य भजनोपदेशक**" बन गये, जो बहुत समय तक ग्राम "**कौरह**" (तहसील खैर) जि० अलीगढ़ में रहते हुए यत्र-तत्र प्रचार करते रहे। फिर न जाने किस कारण से किस प्रकार "**बलिया**" शहर में चले गये वहीं उनका विवाह हो गया, और जिला बलिया के ग्राम "**गडवार**" में स्थायी रूप से रहने लगे, आर्य समाज का सारी आयु भर बहुत ही प्रचार किया, श्री ठाकुर गंगा सिंह जी के देहावसान के बाद उनके तीन सुपुत्र १. श्री विजयपाल सिंह जी शास्त्री, एम०ए० (प्रौफेसर डी० ए० वी० कालेज-कानपुर) २. श्री ठाकुर महीपाल सिंह जी (प्रसिद्ध-भजनोपदेशक ग्राम गडवार जिला बलिया), ३. श्री ठाकुर वेदपाल सिंह जी, भजनोपदेशक के रूप में, अब भी कार्यरत हैं, इनके द्वारा आर्य समाज का बहुत प्रचार हो रहा है। मैं तीनों बच्चों को बहुत ही प्यार करता हूं तथा सदा ही इनकी उन्नति चाहता हूं।

वैदिक धर्म का—

"अमर स्वामी सरस्वती"

मैं (अमर सिंह) मृत्यु के मुख में—

मेरी आयु दो वर्ष की हुई थी तो मैं मर गया, हमारे घर में स्त्रियों और पुरुषों का भारी जमघट लग गया, अनेकों स्त्रियां मेरी माता जी और हमारी एक मात्र बहन कश्मीरी देवी जी के साथ रोती थी, मेरे पिता जी तथा मेरे चाचा और अन्य मित्रादि मेरे शव को कफन में लपेट कर पोखर (हमारे ग्राम के सब से बड़े जलाशय) में गाढ़ने के लिए ले चले। हमारे यहाँ यह ही परिपाटी है कि—लगभग तीन वर्ष तक के बालक को भस्म नहीं किया जाता है, एक निश्चित जलाशय के किनारे थोड़े जल में गड्ढा खोद कर उसमें दबा दिया जाता है। गीदड़ आदि उसे उखाड़ कर न खा जायें इस लिए उस शव को गाढ़ कर उसके चारों ओर पानी की खाई सी बना दी जाती है, और बबूल आदि की कांटेदार शाखें गाढ़ दी जाती हैं। गांव के और हमारे परिवार के लोगों की भीड़ मेरे शव को लेकर पोखर की ओर जा रही थी कि—हमारी एक ताई **"उमराव कौर"** जिनका मेरी माता जी के साथ अगाध प्रेम था, मेरी मृत्यु का समाचार सुन कर तीव्रता से हमारे घर की ओर जा रही थी, मार्ग में मेरे शव को ले जाती हुई भीड़ उनको मिली, ताई जी ने मेरे पिता जी के हाथों में से मेरे शव को छीन लिया, कि मेरे बेटे का मुझे मुख तो देख लेने दो। ताई जी का हमारे घर में बहुत मान था। उनको किसी ने न रोका, ताई जी ने कफन में से मेरा मुख उघाड़ (खोल) कर जो देखा त्यों ही मैंने एक लम्बा श्वांस लिया, मेरे श्वास को देखते ही वह चिल्ला पड़ी—कि मेरे बेटे को कहां ले जा रहे हो ? यह तो जीवित है, श्वास ले रहा है। औरों ने भी बड़ी उत्सुकता से देखा तो मेरा श्वांस चलता उनको भी नजर आया। ताई जी मुझको लेकर घर की ओर दौड़ पड़ी, घर तक आते-आते मेरी आंखें खुल गयीं, मेरी आंखें खुलते ही सारे घर में प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी, तत्काल ढोल लेकर एक भंगी आ गया, ढोल बजने लगा, बधाइयां दी जाने लगीं, घोड़े पर आदमी भेज कर दूसरे गांव से लड्डू मंगवाये गये। जो सारे गांव में तथा आस-पास के गांवों में भी बांटे गये। यह मेरा **"दूसरा जन्म"** ही माना गया।

चेचक का भयंकर प्रकोप—

मैं (अमरसिंह) जब लगभग तीन वर्ष का हुआ तो मेरे और मुझसे बड़े भाई श्री दफेदार सिंह जी के शरीर में (जिनकी आयु लगभग छः वर्ष की थी) भयंकर चेचक निकली, चेचक पकने वाली और बहुत बड़ी-बड़ी थी, हमारे शरीरों में एक अंगुल स्थान भी ऐसा नहीं बचा था जहां चेचक न हो। पांव आदि अवयवों को तथा हमको भी धुनी हुई (मुलायम) रुई के साथ पकड़ कर उठाया जाता था। गऊओं के जंगली उपले (गऊ का जंगल में पड़ा हुआ सूखा गोबर) ढेर के ढेर मंगाये जाते और उनकी राख बना कर कपड़े में छानी जाती, हमारे बिस्तरों पर उस राख को बिछा कर उसके ऊपर हम दोनों को पृथक-पृथक सुलाया जाता था। दोनों के बचने की आशा हमारे परिवार वाले छोड़ चुके थे। हमारे पिता जी ने घर छोड़ कर बाहर मैदान में झोंपड़ियां बनवा कर उसमें हम दोनों को रखा था, माता जी व पिता जी दोनों हमारे पास रहते थे, भगवान की दया से हम दोनों ही बच गये। मेरे बड़े भाई दफेदार सिंह जी की एक आंख में चेचक का फोड़ा निकला था जिसके परिणाम स्वरूप उनकी एक आंख नष्ट हो गयी थी। इस भयंकर बिमारी से बच निकलने पर भी हमारा नया जन्म ही माना गया था। जिसके निमित्त बहुत सा दान-पुण्य भी किया गया था।

प्लेग का प्रकोप—

सन् १९०५ ई० में हमारे ग्राम "**अरनियां**" में भारी प्लेग का प्रकोप हुआ। अभी जब इधर-उधर ग्रामों में प्लेग कुछ-कुछ दिखाई दी और हमारे ग्राम में कुछ चूहे मरे। तभी पिता जी ने ग्राम के लोगों को कहा कि—ग्राम छोड़ कर जंगल में निवास करो अथवा कहीं दूर देश में चले जाओ। उन्हीं दिनों जयपुर राज्य "**खोयरा**" (पद्मपुरा वाले दुर्ग के पास साधपुरा "हुजूर साहिब") एक पहाड़ी ग्राम में जहां सांवलदासिये साधुओं की एक गद्दी है, वहां साधुओं का भण्डारा था। सांवलदासी सन्तों व साधुओं का यहां गुरुद्वारा था, यहां एक महन्त रहते हैं, इस गद्दी की एक शाखा हमारे ग्राम अरनियां से चार फर्लांग पश्चिम की ओर ग्राम "**रुकुनपुर**" में भी है। ग्राम रुकुनपुर के सभी लोग इसी सम्प्रदाय के हैं। और हमारे ग्राम में भी अधिक लोग इसी सम्प्रदाय के थे, हमारा सारा परिवार भी इसी सम्प्रदाय में था। इस सम्प्रदाय के सभी लोग "**साध**" कहलाते हैं, ये लोग आपस में जब मिलते हैं तब एक व्यक्ति "**सत्य साहिब**" कहता है, दूसरा भी प्रत्युत्तर में "**सत्य साहिब**" है, कोई-कोई "**सत्य अवगति**" भी बोलते हैं। इन लोगों में सेवा-भाव और प्रेम बहुत है। एक "**साध**" के घर पर दूसरा "**साध**" अगर पहुंच जाता है तो घर वाला अपने सगे सम्बन्धियों से अधिक उसकी सेवा करता है, जब रुकुनपुर में भण्डारा होता है तो "**साधपुरा**" राज्य जयपुर से साध मण्डली रुकुनपुर आती है। और जब साधपुरा में भण्डारा होता है तो रुकुनपुर से साधमण्डली साधपुरा को जाती है। उसमें अरनियां के लोग भी होते हैं। उस वर्ष "**साधपुरा**" में भण्डारा था, मेरे पिता जी की प्रेरणा पर हमारे गांव से भी दस-बारह बैलगाड़ियां साधपुरा को गईं, जिनमें पचास-साठ स्त्री, पुरुष और बच्चे होंगे। हमारा सारा परिवार था, हम चारों भाई पिता जी और माता जी, एक बैलगाड़ी में थे। अलीगढ़, मथुरा, भरतपुर, टोडाभीम और पद्मपुरा—खोयरा होते हुए हम लोग कई दिनों में साधपुरा पहुंचे थे। जब साधपुरा के साधों को पता चला कि—अरनियां-रुकुनपुर की साध मण्डली निकट आ गयी है तो वह लोग ढोल बजाते और गीत गाते हुए हमारा स्वागत करने के लिए साधपुरा से बाहर आये, जब दोनों दल मिले तो उस समय के लिए "**आपस मिलन**" का जो निश्चित गीत था वह गाया गया कि—"**जा दिन साध ते साध मिलाय वही दिन लेखे में**" अर्थात् जिस दिन साध से साध मिलते हैं, वह दिन भगवान के यहां भी लिखा जाता है। और वह दिन महान होता है। लगभग १५ दिन वह भण्डारा चला। प्रातःकाल जलेबियां आदि से प्रातःराश होता तथा दोपहर को मालपूड़े व शाम को दही-बड़े आदि का भोजन होता, रात को लड्डू व कचौड़ी का भोजन होता। इस प्रकार **१५ दिन** का भण्डारा समाप्त करके हम लोग वापिस आये तो हाथरस के निकट पता लग गया कि—ग्राम अरनियां में प्लेग चल रही है। इस कारण हम जिला अलीगढ़ के एक ग्राम "**सहारनपुर**" में रुक गये, और यहां भी पन्द्रह-बीस दिन तक रहे, यहां एक दिन प्रातःकाल भूचाल के भयंकर झटके हम सबको अनुभव हुए। यह वह दिन था जिस दिन पंजाब का जिला कांगड़ा उलट-पुलट हुआ था यह दिन काँगड़े के भूचाल के नाम से ही प्रसिद्ध हो गया था। जिला कांगड़ा में करोड़ों रुपयों की हानि हुई थी, कांगड़ा नगर सारा नष्ट हो गया था। सारे जिले में लाखों जन बिना घर घाट के हो गये थे, तब महात्मा हंसराज जी की आज्ञा से पंजाब केशरी लाला लाजपत राय जी तथा लाला देवीचन्द जी एम० ए० आदि ने जिला कांगड़ा में कई जगह सहायता शिविर खोले थे और कांगड़ा, धर्मशाला, पालमपुर, बैजनाथ और शाहपुर आदि में विश्रामस्थान नाम से बड़े-बड़े मकान बनाये थे, जिनमें भूचाल पीड़ितों ने आश्रय लिया था। वह स्थान

आज भी बने हुये हैं, और अब आर्य समाज मन्दिरों का कार्य कर रहे हैं। भूचाल वाले दिन से कुछ दिनों बाद हम अपने ग्राम अरनियां में आ गये, तब प्लेग शान्त हो चुकी थी। सन् १९०७ में फिर हमारे ग्राम और उसके आसपास के ग्रामों से प्लेग का प्रकोप हुआ था, हम लोग ग्राम छोड़ कर जङ्गल में झोंपड़े डाल कर बस गये थे, उन दिनों हमारे पास हमारे मामा की बेटी सुन्दर देवी जो "बड़े सूरतपुर" में विवाही थी, वो विधवा हो गयी थी, वह और उनकी विधवा सास जो **"उगहती"** जिला बदायूं की थीं, दोनों रहती थीं, उनको जमीन का मुकदमा चल रहा था, हमारे पिता जी उनके संरक्षक थे। उगहती वाली के पिता ठाकुर महरबान सिंह जो भी हमारे ही घर पर रहते थे' उगहती वाली मुझको बहुत प्यार करती थीं यहां तक वह चाहती थी कि वह मुझे गोद लेकर अपनी समस्त सम्पत्ति तक देना चाहती थीं, उनको ढोलक बहुत अच्छी बजानी आती थी, मुझे भी गोद में बिठा कर ढोलक बजाना सिखाया करती थीं, परिणाम स्वरूप मुझे ढोलक बजाने का शौक पड़ गया, और मैं अन्य ढोलक बजाने वालों से भी ढोलक बजाना सीखने लगा। प्लेग के दिनों में उगहती वाली को भयंकर ज्वर हुआ और उसी दिन सायंकाल तक उनकी मृत्यु हो गयी थी, तथा बहन सुन्दर देवी जी का भी देहान्त हो गया। इस प्रकार वह खेल खतम हो गया था।

पूर्व जन्म की स्मृति—

मैं जब तीन वर्ष का था तब से मैंने भी यह कहना आरम्भ किया कि—मैं तो ब्राह्मण हूं, मैं अहमद गढ़ के एक संस्कृत विद्यालय में प्राध्यापक अर्थात् आचार्य था, स्नान करता हुआ एक जलाशय में डूबने से मेरी मृत्यु हुई थी, कई वर्ष तक यह सब मुझको याद था, परन्तु किसी ने भी इस बात का पता नहीं लगाया, गांव के लोग जानते भी न थे कि अहमद गढ़ कहां है ? जब कि अहमद गढ़ जिला बुलन्दशहर में ही है। वहीं पूर्व जन्म(१) में मैं संस्कृत तथा शास्त्रों का विद्वान था, पूर्व जन्म के संस्कारों का प्रभाव आयु भर मुझ पर रहा, मैं बाल्यकाल से ही सन्ध्या आदि करने और चन्दन लगाने का प्रेम रखता था। धार्मिक व्याख्यानों, कथाओं आदि में श्रद्धा पूर्वक जागते रहना, श्रद्धा से उनको सुनना, और बहुत कुछ याद कर लेना, यह मेरा स्वभाव था। मैं पानी में घुसने से सदा डरता था, नदी नालों और तालाबों में कभी भीतर घुस कर स्नान नहीं करता था किनारे पर बैठ कर सदा लोटे से ही स्नान करना पसन्द करता था। पानी में तैरना कभी सीखा ही नहीं। हमारी चौपाल पर छोटे बच्चों की पाठशाला थी उसमें अकबर अली नामक मुसलमान अध्यापक थे, लगभग सात वर्ष की आयु में मुझको उनके पास पढ़ने को बिठाया गया। उन्हीं दिनों हमारे पिताजी के साथ उनके छोटे भाइयों का किसी बात पर विवाद हो गया, पिता जी के सामने उनके छोटे भाई कभी नहीं बोला करते थे, पर उस दिन पिताजी के सम्मुख कुछ अपमानजनक शब्द उन्होंने कह दिए, इस

टिप्पणी—

(१)—पूज्य स्वामी जी महाराज के पूर्व जन्म के विषय में पूर्ण विवरण जानने के लिए **"निर्णय के तट पर (द्वितीय भाग)"** के प्रथम शास्त्रार्थ के आरम्भ की भूमिका में पढ़िये।

"लाजपत राय अग्रवाल"

पर दुखी होकर पिताजी ने प्रतिज्ञा कर ली कि—**मैं आज से इस घर में भोजन नहीं करुंगा**, पिताजी ने पशुओं के लिए एक घेर बनाया हुआ था उसमें चारों ओर दीवार थी तथा एक कमरा बना हुआ था, उसके आगे छान पड़ी हुई थी। हमारी माता जी ने उसी में आकर भोजन बनाया तब पिता जी ने भोजन किया, उस दिन से हमने अपना पहला घर छोड़ दिया, और इस पशुशाला में ही रहने लगे, जब मैं नौ वर्ष का हुआ उस समय मुझसे बड़े भाई दफेदार सिंह जी जो बड़े भाइयों में तीसरे नम्बर पर थे, उनको रक्तातिसार रोग हो गया, पिता जी ने ग्रामों के वैद्यों को लेकर खुर्जा और अलीगढ़ तक के बड़े-बड़े हकीमों और वैद्यों और डाक्टरों से चिकित्सा कराई, बहुत सा धन व्यय किया, पर कुछ लाभ नहीं हुआ, भाई दफेदार सिंह जी की बहुत कष्ट पाने के बाद बारह वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी। माता जी ने अपार दुख मनाया, हमारी चौपाल पर जो चटशाल मुंशी अकबर अली चलाते थे, वह किसी कारण से टूट गयी थी, मैं कुछ पढ़ा नहीं था, मेरे दूसरे बड़े भाई सरदार सिंह जी, पुस्तकें पढ़ने के बड़े अभ्यासी थे, मैं उनको पढ़ते हुए देखता तो मुझको पढ़ने की बहुत इच्छा होती थी, उनको कविताएं बहुत याद थीं, मैं भी उन कविताओं को याद करता था, पर पुस्तक पढ़े बिना सन्तोष नहीं होता था, मैं चाहता था कि जहां से यह कविताएं कंठस्थ करते हैं, वहीं से मैं भी कंठस्थ करूं तथा इनके अतिरिक्त और भी याद करूं, जो कुछ भी हो उसे पढ़ूं। अभी तक ग्राम अरनियां में स्कूल नहीं था, वहां से एक मील की दूरी पर **"कैरौला"** ग्राम में प्राइमरी स्कूल था, उसके प्राधानाध्यापक मुंशी सरदार खां मुसलमान थे। पर उनमें मुसलमानों का सा एक भी लक्षण नहीं था, उनका रहन सहन सर्वथा हिन्दुओं का सा ही था, मैं स्वेच्छा से ही उनके मदरसे में पढ़ने के लिए प्रविष्ट हो गया, मैंने वहां वर्णमाला की पहली पुस्तक पढ़ी, जिस श्रेणी में वर्णमाला पढ़ाई जाती थी, उसका नाम उन दिनों **"अलिफ जमात"** बोला जाता था, उस अलिफ जमात की परीक्षा हुई, पण्डित घनानन्द जी पन्त एक पहाड़ी ब्राह्मण उन दिनों इन्सपैक्टर (निरीक्षक) थे, उन्होंने मुझको इमला बोला उस इमले में उन्होंने बोला—**"चने का पौधा छोटा होता है"** मैंने यह सुन कर सुन्दर व शुद्ध लिख दिया, परीक्षा में पास हो गया, घर पर आकर कवितामय द्रोणपर्व और सुन्दर दास जी के **"सुन्दर स्वैये"** पढ़ने लगा। स्कूल में पढ़ने की कोई आवश्यकता न रही। समाचार पत्रों को बिना किसी झिझक के पढ़ने लगा। हिन्दी में धार्मिक पुस्तकें पढ़ने लग गया, नौ वर्ष की आयु में सन्ध्या करनी सीख ली, लोटा-डोर लेकर प्रातः सायं शिव मन्दिर पर सन्ध्या करने नियम से जाने लगा। चन्दन घिस कर माथा, कानों, गला, छाती, और भुजाओं पर लगाने लगा। इसे देख कर, कोई व्यंग्य से, कोई श्रद्धा से, कोई प्रेम से मुझको **"पण्डित जी ! पालागन !!"** ऐसा अभिवादन करने लगे।

श्री ठाकुर जौहरी सिह जी रिश्ते में हमारे चाचा जी होते थे। उनके पुत्र कोई नहीं था, केवल पुत्रियां ही थीं। उन पुत्रियों में से कोई न कोई सदा उनके पास रहा करती थी, जब उनकी पुत्रियों के बालक को कुछ कष्ट होता था तो वह गिलास लेकर मेरी सन्ध्या से बचे हुए जल को लेने आया करते थे। उनका दृढ़ विश्वास था कि— यह पानी बच्चों के रोगों को समूल नष्ट कर देता है। हमारे ग्राम में **"आर्य समाज स्थापित् था"** हमारे ही जिले के चान्दोख ग्राम के ठाकुर महावीर सिह जी तथा ठाकुर गिरवर सिंह जी जो ऋषि दयानन्द जी के सम्पर्क में रहते थे, और ऋषि दयानन्द के परम भक्त थे, उनके साथ हमारा सम्बन्ध था, ठाकुर महावीर सिंह जी हमारे फूफा लगते थे, इन दोनों महानुभावों का हमारे गाँव में बहुत आना जाना था, इनके व्याख्यान भी हुआ करते थे। मेरे

तीसरे चाचा जी श्री मुंशी साँवल सिंह जी(१) पक्के आर्य समाजी थे तथा सिद्धान्तों पर व्याख्यान भी देते थे। कुंवर सुखलाल जी हमारे तायरे भाई थे, वह मुझसे दो-तीन वर्ष बड़े थे, वह बहुत ही सुन्दर गाना गाते थे। तथा मेरे भाई श्री ठाकुर सरदार सिंह जी भी बहुत सुन्दर व्याख्यान देते थे। आर्य समाज हमारे ग्राम में कैसे आया ? यह मुझको ठीक पता नहीं है। शायद चान्दोख से ही आया हो, एक बार तो चान्दोख से एक बारात हमारे गांव में आई थी, उस समय चान्दोख के आर्य जनों से हमारे गांव वालों का झगड़ा हो गया था, बारात से बन्दूक आदि भी छीन ली थी, फिर समझौता होने पर दे दी गई। मेरे चाचा श्री ठाकुर मुंशी साँवल सिंह जी, ठाकुर बलवन्त सिंह जी, ठाकुर हेतराम सिंह जी, ठाकुर नारायण सिंह जी ये सभी आर्य समाजी थे, तथा श्री लाला जौहरीमल्ल जी पटवारी, लाला कोमल किशोर जी, तथा महाशय नेतराम जी स्वर्णकार आर्य समाजी थे।

महर्षि दयानन्द जी महाराज के दर्शन—

मेरे पिताजी पूरे आर्य समाजी तो नहीं थे, परन्तु ऋषि दयानन्द जी के परम् भक्त अवश्य थे, **"पिताजी ने कर्णवास में ऋषि दयानन्द जी के एक बार दर्शन किये थे"** और एक भाषण भी सुना था हमारे पिताजी बताया करते थे, कि— **"जब मैंने कर्णवास में उनका भाषण सुना तो भाषण समाप्त होते-होते एक गुण्डे ने झोली में गंगा की रेती भर कर ऋषि दयानन्द जी के ऊपर फैंक दी, ऋषि के भक्त ठाकुर लोग चिल्लाये, कि— पकड़ो—मारो, गुण्डो को जाने मत दो—तभी ऋषि ने गर्ज कर कहा कि—इनको कुछ मत कहो, ये बच्चे हैं। ठाकुरों ने कहा महाराज ! बच्चे नहीं हैं, ये तो दाढ़ी-मूंछों**

टिप्पणी—

१—हमारे तीसरे चाचा श्री ठाकुर सांवल सिंह जी पोस्ट मास्टर थे, उस पोस्ट आफिस के साथ उन दिनों ६४ ग्रामों का सम्बन्ध था, अरनियां के पुलिस थाने से भी उन्हीं ६४ ग्रामों का सम्बन्ध था, इन ग्रामों में श्री मुंशी सांवल सिंह जी का बहुत प्रभाव था, उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी, उनका आचार व्यवहार बहुत ऊँचा था, वह एक आदर्श आर्य समाजी थे, तथा कुशल चिकित्सक भी थे, बड़े निर्लोभ और परोपकारी सज्जन थे, मास के शुक्ल पक्ष में प्रायः नित्य रात्रि को अपना बैलों का तांगा लेकर (कभी-कभी दो तांगे भी हो जाते थे) निकट के तीन-चार मील दूर तक के ग्रामों में प्रचार करने को जाया करते थे, अपने-अपने घर से सायंकाल का भोजन करके सब चलते थे, और किसी न किसी ग्राम में आर्य समाज का प्रचार करके अपने घर पर ही आकर सोते थे।

प्रचार मण्डली में श्री मुंशी सांवल सिंह जी, मुंशी नारायण सिंह जी, (जो करतालें बजा कर भजन गाते थे) और खड़े-खड़े, बोलते-बोलते ही साथ-साथ गीत बनाते जाते थे, श्री ठाकुर बलवन्त सिंह जी (प्रधान—आर्य समाज अरनियां), ठाकुर सरदार सिंह जी (हम से बड़े भाई) तथा कुंवर सुखलाल जी एवं मैं (अमर सिंह आर्य पथिक जो अब सन्यास लेकर अमर स्वामी हो गया हूं) उस प्रचार मण्डली में जाते थे। इस प्रकार मुंशी सांवल सिंह जी द्वारा ग्रामों में आर्य समाज का बहुत प्रचार होता था।

"अमर स्वामी सरस्वती"

वाले हैं, ऋषि ने फिर गर्ज कर कहा कि—अज्ञानी लोग दाढ़ी-मूंछों वाले भी बच्चे ही होते हैं, इनको कुछ मत कहो" यह सब दृष्य मेरे पिताजी के सामने हुआ था, इसे देख कर तभी से वह ऋषि दयानन्द के परम भक्त बन गये थे।

मुझको पिताजी ने सत्यार्थ प्रकाश लेकर दे दिया था, और यह कहा करते थे कि इसको ही पढ़ो। सन्ध्या की पुस्तक भी पढ़ी और संस्कार विधि सामान्य प्रकरण भी, "नगलिया उदयभान" नामक ग्राम हमारे ग्राम अरनियां से दो कोस की दूरी पर था, उस ग्राम में भी आर्य समाज था, वहां लाला छेदालाल जी ने एक यज्ञ कराया, उसमें हमारे गांव के आर्य समाजी भी गये थे। मेरी आयु उस समय १०-११ वर्ष की थी, मुझको भी साथ ले जाया गया, यज्ञ के समय संस्कार विधि से हवन मन्त्रों को मैंने ऐसा सुन्दर पढ़ा कि दोनों ग्रामों के लोग बहुत ही प्रसन्न हुए। मेरी बहुत प्रशंसा हुई, मेरी बुद्धि तर्क-वितर्क में बहुत चलती थी मुझको तर्क-वितर्क में आनन्द आता था। मैं आर्य समाजियों से ही मूर्तिपूजा, अवतारवाद, मृतक श्राद्ध जन्म से वर्ण व्यवस्था आदि पर वाद-विवाद करने लगा यह वाद प्रायः रात्रि को नित्य ही होने लगा हमारी चौपाल पर नित्य ही रात्री को कोई न कोई ग्रन्थ पढ़ कर सुनाया जाया करता था। ग्रन्थ पढ़ कर सुनाने की बारी मेरी भी बहुत बार आती थी। जब ग्रन्थ समाप्त हो जाता था, तब दूसरा प्रारम्भ कर लिया जाता था। कोई ग्रन्थ अधूरा नहीं छोड़ा जाता था। ग्रन्थ पाठ के बाद शंका समाधान और वाद-विवाद नित्य होता था, मैं सनातन धर्म की ओर से बोला करता था। इस कारण मुझको कुछ उसका असर सा भी होने लगा था, मेरे परिवार के लोग चाहते थे कि यह पक्का आर्य समाजी बनें, आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के एक उपदेशक श्री प्यारेलाल जी शर्मा थे। वह हमारे ग्राम में प्रचारार्थ आये तो मुझे उनके सुपुर्द किया गया कि इसकी शंकाओं का समाधान करके इसको आर्य समाजी बनाया जावे वह मेरा कुछ भी समाधान न करके उलटा मुझे डांटने व धमकाने लगे, इस पर मेरे भाई ठाकुर सरदार सिंह जी ने उनसे कहा कि—पण्डित जी धमकाने डांटने का काम तो हम आपसे अधिक कर सकते थे, पर हम डांट धमका कर इसको आर्य समाजी बनाना नहीं चाहते हैं, हम तो इसके हृदय और मस्तिष्क पर प्रभाव डालना चाहते हैं, एक बार मुझको श्री पण्डित मुरारीलाल जी शर्मा (संचालक गुरुकुल सिकन्द्राबाद) के सुपुर्द भी किया, वह बहुत बड़े तार्किक थे, उन्होंने मेरी बातें सुन कर उत्तर कुछ न दिया, केवल इतना ही कहा कि—बेटा अभी पढ़ो! मैं गाने बजाने का भी बहुत शौकीन था मेरी आवाज भी अच्छी थी मैंने पहले वैसे ही सुन-सुना कर गाना सीखा, पीछे पण्डित मोहनलाल जी कान्यकुब्ज जो हमारे ग्राम के थाने में "थानेदार" थे, और संगीत के विशेषज्ञ थे, उनसे विधिवत संगीत सीखा, संस्कृत पढ़ने की मेरी उत्कट इच्छा थी, हमारे ग्राम के एक पण्डित संस्कृतज्ञ माने जाते थे, मैने उनसे प्रार्थना की कि मुझको आप संस्कृत पढ़ाइये, उन्होंने यह नहीं कहा कि मैं संस्कृत नहीं जानता हूं, उन्होंने कहा कि—पढ़ाया करूंगा। मैं कई दिन उनके पास गया, पर वह टाल-मटोल करते रहे। रुकुनपुर ग्राम हमारे ग्राम अरनियां से आधा मील की दूरी पर है उसमें नम्बरदार देवी सिह जी ब्राह्मण जमींदार थे, मेरे पिताजी के वह भाई बने हुए थे, उनके घर पर वह पण्डित जी दुर्गा सप्तशती का पाठ करने जाया करते थे, मैं वहीं पढ़ने को जाने लगा। पण्डित जी मुझसे छुपने लगे। मैंने नम्बरदार जी को जिनको मैं ताऊजी कहा करता था उनसे कहा कि—पण्डित जी मुझको लघु कौमदी नही पढ़ाते हैं आप कह दीजिये कि पढ़ा दें। ताऊ जी हंस कर बोले—बेटा इस पण्डित ने लघु कौमदी खुद कभी नहीं पढ़ी, यह लज्जा के मारे

कहता नहीं है, यह तो यजमानों में झूठ मूठ वह देता है कि— मैं संस्कृत पढ़ा हुआ हूं, यह सुन कर मैंने उनका पीछा छोड़ दिया। लघु-कौमदी, श्रुत बोध, ऋजु पाठ, तर्क संग्रह, हितोपदेश आदि खुरजे में विद्वद्वर श्री पण्डित चण्डी प्रसाद जी आचार्य तथा विद्वद्वर श्री पण्डित परमानन्द जी से क्रमशः पढ़ कर प्रथमा परीक्षा काशी की दे डाली में अच्छे नम्बर लेकर पास हो गया। जब मैंने पढ़ना आरम्भ किया था, तब श्री पण्डित चण्डी प्रसाद जी तथा श्री पण्डित स्वामी हरि प्रसाद जी वैदिक मुनि का खुरजे में शास्त्रार्थ भी हुआ था। पण्डित चण्डी प्रसाद जी को खड़े होकर बोलने का अभ्यास नहीं था। वह खड़े होकर कांपने लगते थे, इसलिए दोनों विद्वानों के लिए बैठने का सुन्दर प्रबन्ध किया गया, दोनों ओर से गद्दियां लगा दी गयी पूरी बात तो याद नहीं रही, पर इतना याद है कि स्वामी हरि प्रसाद जी वैदिक मुनि का वेद मन्त्रों पर बड़ा अधिकार था, किसी वेद के किसी भाग का कोई भी मन्त्र उनके सम्मुख आये वह उसी समय उसका पदार्थ बोलने लगते थे, पण्डित चण्डी प्रसाद जी सायण, उव्वट, महीधर के भाष्यों पर आधारित अर्थ बोलते थे। स्वामी हरिप्रसाद जी से शास्त्रार्थ के दौरान पण्डित चण्ड़ी प्रसाद जी ने पूछा कि—आप मन्त्रों का अर्थ किस आचार्य के भाष्य से लेते हैं ? स्वामी जी ने हंस कर कहा कि—आप आचार्यों की झोलियां टटोलते हैं, और मैं स्वयं आचार्य हूं। मैं मन्त्रार्थ स्वयं करता हूं। आपको वह ठीक नहीं लगता हो तो उसमें दोष बतलाइये ? पण्डित चण्डी प्रसाद जी दोष कुछ नहीं बता सके, अन्त तक यही कहते रहे कि मैं आपके भाष्य को नहीं मानता हूं। आप किसी आचार्य का भाष्य पेश कीजिये। पण्डित चण्ड़ी प्रसाद जी, सेठ गौरी शंकर गोयन्दका के "गोयन्दका संस्कृत महाविद्यालय" (कालिज) काशी चले गये थे, परन्तु श्री पण्डित परमानन्द जी बाद में भी खुरजा में पढ़ाते रहे और मैंने उनसे सिद्धान्त कौमदी सारी पढ़ ली और काव्य नाटक भी कई पढ़ लिये।

मेरा विवाह—

मेरा विवाह छोटी आयु में ही हो गया था, जिला अलीगढ़ में मड़राक रेलवे स्टेशन से दो तीन मील उत्तर पूर्व की ओर एक ग्राम "**परौरी**" है, वहां के श्री ठाकुर झम्मन सिंह जी की पुत्री मेरे साथ विवाही गयी थी। उस समय मेरी आयु मात्र तेरह वर्ष की थी।

मैं बाद में भाई साहब कुंवर सुखलाल जी के साथ आगरा चला गया, वहां श्री पण्डित भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर जी के साथ कुंवर सुखलाल जी भी प्रचार का कार्य करते थे, उनकी इच्छा थी कि मैं भी उनके साथ गाने बजाने का कार्य, करूं पर मैं विद्वान बनना चाहता था। मुसाफिर विद्यालय आगरा में रात्री को नित्य ही विद्यार्थियों का किसी न किसी विषय पर वाद-विवाद कराया जाता था श्री पण्डित भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर जिन्होंने हुतात्मा धर्मवीर पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफिर की स्मृति में यह विद्यालय स्थापित् किया था, वह स्वयं रात्री को दो घन्टे विद्यालय में आकर बैठते थे, और उनके दोनों सुपुत्र श्री डा० लक्ष्मीदत्त जी तथा श्री पण्डित ताराचन्द जी एडवोकेट भी नित्य उनके साथ आते थे, विद्यार्थियों को नित्य व्याख्यान देने तथा शास्त्रार्थ करने का ढ़ंग सिखाते थे। उनके वाक् व्यवहार, युक्ति और प्रमाणों में जो भी त्रुटि होती बताई जाती थी। मैं भी वाद-विवाद को प्रेम से सुनता था, मेरी उत्कट इच्छा उसमें भाग लेने की होती थी। एक विद्यार्थी को मैंने कहा भी कि—मैं भी इसमें भाग लेना चाहता हूं, उसने मेरी बात का उपहास किया, और कहा कि—यहां तो बाल की खाल उतारी जाती है, आप यहां क्या बोल सकते हो ? मैं मन मार कर चुप रह गया, श्री डाक्टर

लक्ष्मीदत्त जो छोटे बच्चों का भी मान करते और उनका उत्साह बढ़ाते थे, उनको कुछ आभास हुआ कि—यह भी कुछ बोलना चाहता है। वह बोले कि—अमर सिंह तुम कुछ बोलना चाहते हो? मैंने तुरन्त कहा—जी हां, उन्होंने कहा अच्छा बोलो, उस दिन मांस विषय पर शास्त्रार्थ था, मैं जिधर बैठा था उधर मांस भक्षण के पक्ष में बोलने बालने वाले बैठे थे। मैं बोलने के लिये खड़ा हो गया और कहा--मैं दुर्भाग्य से उस ओर बैठा हूं जिधर मांस भक्षण के पक्ष में बोलने बाले बैठे हैं, यद्यपि मैं भी मांस भक्षण का हृदयसे विरोधी हूं, ये सब भी विरोधी हैं, तो भी शास्त्रार्थ का अभ्यास करने के लिए एक पक्ष में बोल रहा हूं। मैं इधर बैठा हूं, इसलिए मैं भी इसी पक्ष में बोलूंगा, मैं बोलने लगा, मेरी युक्तियां और मेरे बोलने की शैली डाक्टर साहब जी को बहुत पसन्द आई, उन्होंने मेरी बहुत प्रशंसा की, और मुझको कहा कि—तुम रोज इसमें भाग लिया करो। मेरा उत्साह बढ़ने लगा। कुछ दिनों के पीछे मैं यह कहने लगा कि जो पक्ष झूठा हो, वह ही मुझ को दिया जावे, एक दिन ऐसा भी हुआ कि—जिस विद्यार्थी ने मेरा उपहास किया था, उसने सारे विद्यार्थियों को मेरे विरोध में खड़ा कर दिया, एक ओर सारे विद्यार्थी थे और एक ओर मैं अकेला था, उस दिन मेरी निर्भीकता और मेरी चतुराई पर डाक्टर साहब तथा पण्डित तारा चन्द जी तथा पण्डित भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर जी भी बहुत ही प्रसन्न हुए। मुझको विजयी घोषित किया गया। उस विद्यार्थी ने डाक्टर साहब जी के लिए कुछ अनुचित शब्द बोल दिये, वह विद्यालय से निकाल दिया गया। मुझको कहा कि—बेटा तुम विद्यालय में प्रविष्ट हो जाओ, मैं तो भगवान से नित्य यही माँगता था, परन्तु मेरे मार्ग में सबसे बड़ी रुकावट यह थी कि—"**मैं विवाहित था**"। और विद्यालय में विवाहित विद्यार्थी लिया नहीं जाता था, मेरा विवाह तेरह वर्ष की आयु में ही हो गया था। मैंने कहा कि—मैं तो विवाहित हूं। यह मेरा दुर्भाग्य है, आप मुझ विवाहित को प्रविष्ट कर सकें तो मैं सहर्ष उद्यत हूं और मैं अपना सौभाग्य समझूंगा, तीनों महापुरुषों ने कहा कि—विचार करेंगे! दूसरे ही दिन मुझको कह दिया गया कि—तुम बहुत होनहार विद्यार्थी हो, इसलिए तुम्हारे लिए यह छूट दी जाती है और तुमको विद्यालय में प्रविष्ट किया जाता है, मेरे हर्ष की सीमा न रही, मैं पढ़ने लगा। जब मैं प्रविष्ट हुआ था, तब एक मौलवी साहब, सरफ नहव, फारसी अरबी, मन्तिक और सिलसफा पढ़ाते थे। और एक पौराणिक पण्डित सिद्धान्त कौमदी आदि व्याकरण तथा संस्कृत साहित्य पढ़ाते थे। डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी, तथा वकील साहब पण्डित ताराचन्द जी, आर्य सिद्धान्त, शास्त्रार्थ तथा शंका समाधान सिखाते थे। बड़े पण्डित जी भी यही सब कुछ सिखाते थे। हमारे दुर्भाग्य से हम सब के पिता तुल्य, पूज्य पण्डित भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर का मसूरी में देहान्त हो गया, उस समय ऐसा लगा कि—विद्यालय टूट जायेगा, पर श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी पण्डित ताराचन्द जी एडवोकेट, और कुंवर सुखलाल जी ने विद्यालय को जारी रक्खा और सुचारु रूप से चलाया।

श्री पण्डित भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर—

श्री पण्डित जी जिला मुजफ्फर नगर (उ० प्र०) के "**थाना भवन**" नामक कस्बे के एक प्रतिष्ठित पण्डित गौड़ ब्राह्मण परिवार में जन्मे थे। उनका विवाह जिला सहारनपुर (उत्तर प्रदेश) के "**गंगोह**" नामक स्थान से हुआ था। पण्डित जी सिचाई विभाग में मिन्टगुमरी (पंजाब) मैं नौकर थे धर्मवीर पण्डित लेखराम जी के कतल कर दिये जाने के बाद उन्होंने सरकारी नौकरी में रहते हुए भी व्याख्यानों द्वारा इस्लाम का खण्डन प्रारम्भ कर दिया, पण्डित जी की प्रहुत प्रसिद्धि होने लगी, मुसल-

मानों ने महकमा नहर (सिंचाई विभाग) के अंग्रेज अफसर से पण्डित जी की शिकायत की, पण्डित जी का काम सुन्दर था, अंग्रेज अफसर उन पर बहुत प्रसन्न था, उन्होंने पण्डित जी को समझाया कि वह इस्लाम के विरुद्ध प्रचार न करें। पण्डित जी ने इसे स्वीकार न किया तब अफसर ने कहा कि—पण्डित जी आपके खिलाफ मुसलमानों की बहुत शिकायतें हैं, इस लिए आपको एक काम अवश्य छोड़ना पड़ेगा। या तो इस्लाम के विरुद्ध प्रचार या नौकरी? पण्डित जी ने कहा कि--मैं कल आकर बताऊंगा कि मुझको क्या करना है? अफसर ने कहा कि - देखो पण्डित जी! कहीं नौकरी मत छोड़ बैठना! आखिर एक दिन पण्डित जी ने नौकरी से इस्तीफा लिख कर दे ही दिया। और कह दिया कि—मैंने एक काम छोड़ दिया। उसके बाद पण्डित जी ने आगरा आकर मुसाफिर मिशन की ओर से **"मुसाफिर"** नामक अखबार निकाला, और **"मुसाफिर प्रेस"** बनाया। कुछ समय के बाद ही "मुसाफिर प्रैस" को सरकार ने जब्त कर लिया। तब पुनः **"हितकारी प्रेस"** नाम से दूसरा प्रेस स्थापित् किया तथा **"भारत शुद्धि सभा"** के नाम से एक शुद्धि सभा भी बनाई, इसके प्रधान-लाहौर के प्रसिद्ध नेता और प्रसिद्ध वक्ता श्री चौधरी रामभज दत्त जी थे, इस सभा के द्वारा पण्डित जी ने अपने जीवन में ३६ हजार व्यक्तियों को वैदिक धर्म में प्रविष्ट किया, जिनमें हजारों ईसाई थे तथा हजारों मुसलमान थे। जिला मैनपुरी के **"बन्थरा"** आदि कई ग्रामों के प्रतिष्ठित राजपूत जमींदार थे, जिनमें श्री राय साहिब ठाकुर बलवन्त सिंह जी ओनरेरी मजिस्ट्रेट भी एक थे, ये सारी आयु पण्डित जी के गुण गाते रहे, ये पहले मुसलमान थे, श्री पण्डित जी ने इनको और इनके साथ कई सज्जनों को शुद्ध किया था।

मौलाना गुलाम हैदर—

अरबी के बड़े विद्वान्, जन्म से वह ईरानी थे, बहुत ही सुन्दर थे, वह श्री पण्डित भोजदत्त जी के पास आए कि –**"आप मुझको अपने एतराजों के साथ कुरान सुनाइये"**। मैं आपके एतराजात को सुनना और उन पर विचार करना चाहता हूं। श्री पण्डित भोजदत्त जी ने अपने एतराजात के साथ उनको कुरान सुनाया। यह कार्य लगभग दो मास तक ही चल पाया था कि—**"श्री मौलाना मौलवी गुलाम हैदर जी ने अपने बक्स में से एक लम्बा छुरा निकाल कर श्री पण्डित जी की धर्मपत्नी के चरणों पर रख दिया"** और कहा कि—**"मैं तो इस छुरे से पण्डित जी को कतल करने के लिए आया था, परन्तु मैं खुद ही कतल हो गया, श्री पण्डित जी के द्वारा कुरान पर प्रश्न सुनकर मैं मुसलमान हो नहीं रहा मैं तो उनका खादिम [सेवक] बन गया हूं"** "मौलाना की इस बात को सुन कर हमारे विद्यालय आदि में बड़ी प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी" मौलाना गुलाम हैदर शुद्ध हुए, और उनका नाम "पण्डित **सत्यदेव**" रक्खा गया, काशी में रह कर इन्होंने संस्कृत भी पढ़ी, तथा इस्लाम के विरुद्ध कुछ पुस्तकें भी उन्होंने लिखी थी।

मौलवी मुहम्मद अली कुरैशी—

हजरत मौहम्मद साहब "कुरेशी" थे तथा उनके खानदान का नाम **"कुरैश खानदान"** था भारत में भी कुछ **"कुरैश"** लोग अरब से आकर बस गये थे। उन्हीं के परिवारों में से **"मौलवी मौहम्मद अली कुरैशी"** थे जो अरबी के बड़े भारी विद्वान् थे। तथा कुरान बहुत अच्छा पढ़ते थे वह भी श्री पण्डित भोजदत्त जी के सम्पर्क में आये तथा शुद्ध हुए। उनका नाम **"श्री पण्डित शान्ति स्वरूप"** रक्खा

गया वह प्रायः फर्रुखाबाद व हरदोई में ही रहा करते थे। प्रचार करने को वह वहीं से आया जाया करते थे। पण्डित शान्ति स्वरूप जी बहुत ही सज्जन, साधु स्वभाव वाले तथा निर्लोभ व्यक्ति थे। कांग्रेस में भी उनका बड़ा सम्मान था। एक बार वह कांग्रेस के टिकट पर एम० एल० ए० बन कर उत्तर प्रदेश असेम्बली में भी एक राजा को हरा कर गये थे।

मियां अकबर अली—

वह एक ईरानी खानदान में से थे, जो ईरान से आकर बीकानेर में बस गये थे, अकबर अली बीकानेर में पुलिस सब इन्सपेक्टर नियुक्त हो गये थे, वह सत्यार्थ प्रकाश का चौदहवाँ समुल्लास पढ़ कर शुद्ध होने के लिए श्री पण्डित भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर के पास आये, श्री पण्डित जी ने उसका डील-डौल तथा सुन्दर शरीर और बहादुराना चेहरा देखकर उसका नाम **"ठाकुर उत्तम सिंह"** रख दिया। पीला यज्ञोपवीत पहन कर वह बीकानेर गया। उसकी माता केवल फारसी बोलना जानती थी, और कोई भाषा उसे नहीं आती थी, उत्तम सिंह ने माता के पांव दोनों हाथों से छुए और कहा—**"वालदा नमस्ते"** माता ने ये नया ढंग (पांव छूना) देख कर कहा—**"अकबर तो काफिर गश्ती"** (अकबर तू काफिर हो गया) फिर उत्तम सिंह ने कहा—**"वाल्दा काफिर न गश्तुम बल्कि अजकुफ्र बराम्दम्"** अर्थात् (माता मैं काफिर नहीं हुआ बल्कि कुफ्र से बाहर निकल आया हूं)। माता ने कहा—**"जुन्नार मीदारी काफिर गश्तीं"** (जनेऊ रखता है काफिर हो गया है), उत्तम सिंह माता को कुछ रुपये देकर आगरा आ गये, थानेदारी को इस्तीफा दे दिया, श्री पण्डित भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर ने उनको अपने साप्ताहिक पत्र **"आर्य मुसाफिर"** का मैनेजर बना दिया, मैं जब आर्य मुसाफिर विद्यालय में पढ़ता था, तब श्री ठाकुर उत्तम सिंह जी **"आर्य मुसाफिर"** साप्ताहिक के मैनेजर थे, मेरे साथ उनका बहुत प्रेम था, "आर्य मुसाफिर विद्यालय" आगरा के नामनेर मुहल्ले में था, विद्यालय का अपना कोई मकान नही था। किराये के मकान में विद्यार्थी रहते और उसी में भोजन करते थे, एक रसोइया भोजन बनाता था, दाल, चावल और रोटी दोपहर का और रोटी, शाक, रात्रि का भोजन होता था, दोनों समय घी भी भोजन में होता था, विद्यार्थियों से भोजन व्यय आदि के लिए कुछ नही लिया जाता था, विद्यार्थी प्रायः दस से अधिक नहीं रखे जाते थे, परन्तु पूरे दस के दस अच्छे उपदेशक बन कर निकलते थे। दिन में फारसी, अरबी, संस्कृत और आर्य सिद्धान्त आदि की शिक्षा और रात्रि को नित्य व्याख्यान देने और शास्त्रार्थ करने का अभ्यास यह सब कार्य आर्य समाज मन्दिर नामनेर में होता था। विद्यार्थियों में परस्पर अगाध प्रेम रहता था, छोटे विद्यार्थी बड़ों को भाई साहब कह कर बोलते थे।

ईसाइयों का प्रचार—

एक बार नामनेर मोहल्ले में एक ब्राह्मण ने ईसाइयों से रुपया लेकर ईसाइयों का प्रचार मैजिक लालटेन के द्वारा एक चौक में करा दिया, विद्यार्थियों ने इसका विरोध किया, एक विद्यार्थी बीच में खड़ा होकर उस प्रचार के विरोध में कुछ कह रहा था, उस पर ईसाइयों और उस ब्राह्मण ने उस विद्यार्थी पर आक्रमण कर दिया, इस पर सारे विद्यालय के विद्यार्थियों ने इकट्ठे होकर ईसाइयों को भी पीटा, और उस रिश्वतखोर ब्राह्मण को भी। विद्यार्थियों का नेता मैं ही था,

उस ब्राह्मण की लड़की मेरे पैरों पर गिर पड़ी, और रो कर कहने लगी कि—मेरे पिता जी को बचाओ मुझको दया आ गई और मैंने तत्काल उसको छुड़वा दिया, इसके दूसरे दिन एक नये विद्यार्थी को ताजमहल दिखलाने के लिए हम सब विद्यार्थी जा रहे थे, मार्ग में ईसाइयों का अड्डा था, चार-पांच ईसाइयों ने हमको रोक लिया, और हमसे झगड़ा करने लगे। कुछ देर तक मैं उनको समझाता रहा, इतने में वहां कुछ हिन्दू-मुसलमानों की भीड़ इकट्ठी हो गई, हम सब निहत्थे थे। केवल एक विद्यार्थी के हाथ में एक गज भर का डण्डा था मैंने उसके हाथ में से डण्डा छीन कर तड़ातड़ ईसाइयों को मारना प्रारम्भ कर दिया, सारी भीड़ ने हमारा समर्थन किया। और ईसाइयों को सबने धिक्कारा। हम विद्यार्थियों को जब कुछ खर्चे आदि की बात करनी होती थी तो श्री पण्डित तारादत्त जी बी०ए०, एल० एल० बी० (एडवोकेट) से बात कहते थे, और जब कभी मार-धाढ़ और वीरता की बात करनी होती थी तब श्री डा० लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर से समर्थन प्राप्त करते थे। ईसाइयों को पीटने की दोनों समय की बात श्री डाक्टर साहब ने सुन ली, वे बहुत प्रसन्न हुए, और उन्होंने सब विद्यार्थियों के लिये अच्छी-अच्छी लाठियां मँगवा दीं- तब से हम सब विद्यार्थी लाठियां हाथ में लेकर ही आवश्यकता पड़ने पर आगरा में यत्र-तत्र, जाते-आते थे, सब लाइन में चलते थे, लगभग सारे नगर में विद्यार्थियों की धाक सी बैठ गयी थी। श्री पण्डित भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर का देहान्त हो चुका था। नित्य रात्रि को श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर और श्री पण्डित तारादत्त जी आर्य मुसाफिर व्याख्यान देने और शास्त्रार्थ करने की शैली सिखाते। शास्त्रार्थ व व्याख्यान नित्य ही कराते थे।

हमारा प्रचार कार्य—

आगरा में समय समय पर कई मेले होते हैं, आषाढ़ मास में हर मङ्गलवार को एक मेला होता था, हम मुसाफिर विद्यालय के विद्यार्थी उन मेलों में दो टोलियां बना कर जाया करते थे, और दो तरफ से आकर मिलते, पश्चात आपस में एक टोली दूसरी टोली से शङ्का समाधान और शास्त्रार्थ भी करते थे, व्याख्यान देते थे, मेलों में बहुत अच्छा प्रचार हो जाता था।

ईसाई पादरी कन्हैयालाल—

पादरी कन्हैयालाल भी उन मेलों में ईसाई मत का प्रचार करने को जाया करते थे, वह कहते थे कि—"**हजरत ईसा का नाम वेद में भी है**" प्रमाण के रूप में यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय का प्रथम मन्त्र—"**ईशावास्यमिदं सर्वम्**" पेश करते थे, हम लोग इस मन्त्र का अर्थ करते हुए कि—"(यह सारा जगत परमेश्वर से आच्छादित है) इसमें "**ईसा**" कहां ? उनका खण्डन किया करते थे, हम उनकी बातों का उपहास उड़ा कर फिर बाईबिल का खण्डन किया करते थे।

ब्रह्मचारी कुतुबुद्दीन—

इस नाम का एक मुसलमान गेरुवे वस्त्र और खड़ाऊँ पहनता था, शिर पर जटायें और दाढ़ी रखता था, उसने आगरा में हमारे होते हुए अपने प्रचार में कहा कि—वेद में "**मदिना**" शब्द है, तथा "**तच्चक्षुर्देवहितं**......मन्त्र में... ..."**प्रब्रवामशरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्**"॥ हमने इसकी पोल खोली, और सिद्ध किया कि—यह व्यक्ति संस्कृत बिल्कुल नहीं जानता है, उस मन्त्र में तो

"शरदः शतम "अदीनाः" शतम् और "अदीनाः" की सन्धि होकर "शतमदीनाः" बना है। इसमें "मदीना" कहां है ? यहां तो "अदीनाः" है। वही कुतुबुद्दीन यह भी कहता था कि—वेद में "कलमा" भी है, यथा—ध्रुवादिग्विष्णुरधिपति "कल्माष" ग्रीवः..." अर्थात् वह "कल्माष" में "कलमा" बताता था, हमने दावा किया कि—मुसलमानों का कलमा "ला इलाहइल्लिल्लाह, मुहम्मद-रसूलिल्लाह" यह तो कुरआन में भी कहीं नहीं है। फिर वेद में उसका नाम आने का क्या फायदा ? हमने कहा—मुसलमानों ! "कल्माषग्रीव" में तो नहीं है, पर हमारा कलमा पढ़ो—"ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सबितुर्वरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहिः, धियो यो नः प्रचोदयात्" ॥

पौराणिक पण्डित अखिलानन्द के भाषण—

अखिलानन्द को आर्य समाज से निकाला गया था, उसने आगरा में आकर आर्य समाज के विरुद्ध असभ्यतायुक्त भाषण दिये, एक दिन हम सब **"मुसाफिर विद्यालय"** के विद्यार्थी भी उसका भाषण सुनने को गये, और यह संकल्प लेकर गये कि—यदि वह असभ्यतायुक्त भाषण देगा तो भरी सभा में उसका विरोध करेंगे और उसको शास्त्रार्थ के लिये ललकारेंगे। उसने अपने भाषण में ऋषि दयानन्द जी के लिये अपशब्दों का प्रयोग किया, श्री ठाकुर उत्तम सिंह जी, हमारे साथ थे, वह मन्च के ठीक पास जाकर बैठ गये, ज्यों ही उसने ऋषि के लिये अपशब्द बोले, श्री ठाकुर उत्तम सिंह जी ने उठ कर—**"उनके मुख पर पड़ाक से ऐसा थप्पड़ मारा कि उसका मुंह पूरब से उत्तर को हो गया"** एकदम हुल्लड़ मच गया, उस दिन आर्य समाजियों की भीड़ भी काफी संख्या में थी, जो सनातन धर्मियों की भीड़ से कम नहीं थी और तैयार पर तैयार पक्के इरादे से गये हुये आर्य वीरों की भीड़ थी, अखिलानन्द तो थप्पड़ खाकर तुरन्त भाग कर कहीं छुप गया, सनातन धर्मी लोग भी उसके उन भाषणों और असभ्यतायुक्त वाक्यों को पसन्द नहीं कर रहे थे श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर के प्रयास से आगरा के अँग्रेज कलक्टर ने अखिलानन्द को हुक्म दिया कि—वह आगरा में कोई व्याख्यान न दे और चौबीस घण्टों के अन्दर-अन्दर आगरा जिला छोड़ कर बाहर चला जावे। उस घटना के कुछ समय पश्चात श्री कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर और मैं (अमर सिंह आर्य पथिक) राज्य बलराम पुर, जिला गोण्डा उत्तर-प्रदेश में प्रचारार्थ गये, वहां श्री बाबू भगवती प्रसाद बड़े कर्मठ आर्य समाजी थे, उन दिनों उस राज्य के दीवान श्री कन्हैयालाल जी मिश्र के पास "अखिलानन्द" ठहरा हुआ था, हमने वहां उसको शास्त्रार्थ के लिए ललकारा, लिखित चैलेन्ज उसके पास भेजा, और सारे नगर में मुनादी करायो, परन्तु वह शास्त्रार्थ के लिए तैयार नहीं हुआ। पौराणिक या आर्य समाजी कोई भी उससे पूछता कि—शास्त्रार्थ क्यों नहीं करते हो ? तो वह कहता था कि—"हम तो शास्त्रार्थ करने को तैयार हैं, पर इनसे नहीं, ये योग्य नहीं हैं" आप लोग लाहौर से पण्डित राजाराम जी शास्त्री को बुलाओ, उनके साथ हम शास्त्रार्थ कर सकते हैं। हमारी ओर से बार-बार कहा गया कि—**"जो अयोग्य है उनको पहले हरा दो पोछे और किसी की बुलाने पर विचार किया जावेगा"** ॥ परन्तु वह हर्गिज तैयार न हुए। अखिलानन्द जन्म की वर्ण व्यवस्था पर केवल दो व्याख्यान बलराम पुर में देकर वहां से भाग गया। हमारा प्रचार कई दिन तक वहां होता रहा, हमारे प्रचार में बड़ी भारी भीड़ होती थी। एक मुसलमान को शुद्ध भी किया गया था। एक बार बलराम पुर के महाराजा श्री भगवती प्रसाद सिंह जी भी उस भीड़ को देखने और कुछ कुंवर सुखलाल जी के भाषण को सुनते हुए

बहुत धीरे-धीरे कार चलाते हुए वहां से गुजरे। एक दिन पौराणिकों ने बहुत सी थालियां बजा-बजा कर हमारे प्रचार में विघ्न डालने का प्रयास किया, पर वह कुछ बिगाड़ न सके, प्रचार धड़ल्ले से होता रहा।

श्री बाबू भगवती प्रसाद जी का दरबार से निष्कासन—

श्री महाराजा साहिब एक बार घोड़े से गिर गये, उनकी टांग की एक हड्डी भी टूट गयी, तीन मास तक महाराजा साहिब दरबार नहीं लगा सके, बाबू भगवती प्रसाद जी भी महाराजा जी के दरबारियों में से एक दरबारी थे, उनको दरबार में आने का वेतन मिलता था। वह तीन मास तक बन्द रहा, और इन तीन मासों में कई बार महाराजा साहिब को घी आदि पदार्थों से तोला गया, और वह तुले हुए घृतादि पदार्थ पौराणिक पण्डितों में वितरित कर दिये गये। एक बार महाराजा साहिब ने एक पौराणिक ज्योतिषी से पूछा कि—"**हमारी हड्डी क्यों टूटी ?**" हमसे ऐसा कौन सा पाप हुआ जिसका फल हमें यह भोगना पड़ा ? पौराणिक पण्डितों ने आपस में षड़यन्त्र बना कर यह कारण बताया कि—"**महाराज आपके दरबार में देवों का निन्दक नास्तिक भगवती प्रसाद बैठता है उसका कुफल आपको यह भोगना पड़ा**" इसलिए हे श्री महाराज जी ! उस अशुभ व्यक्ति का दरबार में आना बन्द कर दीजिये। महाराजा साहिब ने भगवती प्रसाद जी का दरबार में आना रोक दिया।

बाबू भगवती प्रसाद जी की श्री महाराजा साहिब से भेंट—

बाबू भगवती प्रसाद जी ने प्रार्थना पत्र लिख कर, महाराजा साहिब की सेवा में भेजा कि—श्री महाराज ! मुझको एक बार भेंट का शुभ अवसर प्रदान करने की कृपा करें, महाराजा साहिब ने पत्र पाते ही मिलने का अवसर दे दिया। श्री बाबू भगवती प्रसाद जी ने बड़ी ही नम्रता के साथ पूछा—महाराज ! क्या यह बताने की कृपा करेंगे कि श्री महाराज के दरबार में मेरा आना किस कारण बन्द हुआ है ? क्या मेरे द्वारा कोई अक्षम्य अपराध हो गया है ? श्री महाराज ने कहा कि—आपसे कोई अपराध नहीं हुआ है, आप तो बहुत सभ्य और राज्य के शुभ चिन्तक है, परन्तु पण्डितों ने कहा है कि—आप दरबार में आते हैं इसीलिए हमको चोट आई है। श्री बाबू भगवती प्रसाद जी ने बड़ी नम्रता से निवेदन किया कि, श्री महाराज ! मैं पुरुषार्थी आदमी हूं और भगवान पुरुषार्थ का फल प्रदान करने वाले तथा सब को भोजन देने वाले हैं, मेरे आने से श्री महाराज को कुछ कष्ट पहुंचे तो मेरा आना अवश्य रोक दीजिये, पर एक बात पर विचार करने की कृपा अवश्य करिये ! श्री महाराज को चोट लगी तो पण्डितों को मनों घृत, चावल, खाण्ड, सूजी आदि खाद्य पदार्थ प्राप्त हुए। और मेरा तीन मास का वेतन बन्द रहा। श्री महाराज ! विचार करें कि—ये पण्डित लोग नित्य परमेश्वर से प्रार्थना करेंगे कि—महाराज को जल्दी-जल्दी चोट लगती रहे, जिससे हमारा हलुआ आदि बार-बार बने और मैं नित्य परमेश्वर से प्रार्थना करता हूं और करूंगा कि—हे प्रभो ! श्री महाराज को कभी कांटा भी न चुभे और श्री महाराज का कभी एक बाल भी न टेढ़ा हो, कभी शिर भी भारी न हो, यदि श्री महाराज को थोड़ा भी कष्ट पहुंचेगा तो मेरा और मेरे परिवार के भरण-पोषण का मार्ग बन्द हो जायेगा, श्री महाराज ! विचार करें कि, इन पण्डितों की कामनाएं श्री महाराज के लिए शुभ रहेंगी या भगवती प्रसाद की ? यह सुन कर महाराज साहिब हँसे, मुस्कुराये, और बोले—भगवती प्रसाद जो ! आर्य समाजी बहुत बुद्धिमान होते हैं और ये ब्राह्मण तो सदा स्वार्थी और बुद्धू ही रहे हैं,

इनके कहने से हम आपको दरबार में आने से बन्द नहीं करेंगे, आप बराबर आते रहिये, महाराज साहिब ने तीन मास का वेतन जो रुका हुआ था वह भी दिलवा दिया और आने पर जो रोक लगी थी, वह भी हटा ली।

पण्डित अखिलानन्द और कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर—

अखिलानन्द ने बलरामपुर में हमसे चिड़ कर एक पौराणिक पत्र में लिख दिया कि—"बलरामपुर में आगरा के मुसाफिर विद्यालय में पढ़ने वाले वाचाल विद्यार्थी अमर सिंह तथा सुखलाल **"चमार"** मेरे विरुद्ध शास्त्रार्थ की डींगें मारते रहे" आदि-आदि...श्री कुंवर सुखलाल जी ने उस पर मानहानि का अभियोग चला दिया उससे घबरा कर अखिलानन्द ने आगरा के न्यायालय में लिखित क्षमा माँगी।

हमारी एक और प्रचार यात्रा—

सन् १९१७ के ग्रीष्मावकाश में, मैं (अमर सिंह आर्य पथिक) श्री कुंवर सुखलाल जी के साथ प्रचार यात्रा में गया, राज्य बलराम पुर की तहसील हरीपुर के उस समय के तहसीलदार बड़े पक्के आर्य समाजी और श्री पं० भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर तथा कुंवर सुखलाल जी के बहुत प्रेमी थे, उन्होंने प्रचारार्थ हमको बुलाया और एक हाथी हमारी सवारी के लिए भेजा, हम हाथी पर सवार होकर बलराम पुर से हरीपुर तक गये, हमारा बिस्तर आदि कुछ सामान था, जो हाथी पर नहीं रक्खा गया था, तहसील के सिपाही जो हमको लेने के लिए आये थे, वे खेतों में काम करने वाले किसानों से वह सामान उठवा कर ले जाते थे, कुछ दूर जाकर उनको छोड़ दिया, तो दूसरे किसान को पकड़ लिया यहां तक हुआ कि—एक हल जोतने वाले किसान को हल खेत में खड़ा छोड़ कर सामान ले जाना पड़ा। इसका मुझे बहुत दुःख होता था, मैं उन किसानों को सिपाहियों के मना करने पर भी कुछ न कुछ मजदूरी दे दिया करता था, इस पर किसान बहुत प्रसन्न होकर हमको नमस्ते करके लौट जाते थे। जिला गोंडा के तुलसीपुर और उतरौला उपनगरों में भी हमने प्रचार किया। जिला बस्ती की **"बाँसी"** तहसील में भी बस्ती से दो घोड़ों की गाड़ी में बिस्तर लगा कर बांसी के लिए रात्रि में चले थे, और प्रातः बांसी पहुंचे थे, जिला शहाजहांपुर के एक ग्राम...में भी उत्सव पर गये वह ग्राम दो ओर से दो नदियों से घिरा हुआ है, ग्राम पार करके दोनों नदियाँ मिल गई हैं, प्रयाग का सा छोटा दृश्य बन गया है। उस ग्राम के लोग बड़े मांसाहारी हैं, कुछ ग्रामवासी नदी में से एक बहुत बड़ी और लम्बी मछली पकड़ कर ले गये, कई मनुष्यों ने उस मछली को कन्धों पर उठा रक्खा था, और हमको दिखाने व चिढ़ाने के लिए **"राम नाम सत्य है, सत्य बोलो गत्य है"** इस प्रकार बोलते हुये हमारे पण्डाल के पास से निकले।

आर्य मुसाफिर विद्यालय के विद्यार्थियों ने शुद्धियां की—

आर्य समाज नामनेर के सामने सड़क की दूसरी ओर एक मिलिटरी की खच्चर कोर थी उसमें हिन्दू भी थे और मुसलमान भी थे, मुसलमान अधिक थे, मुसलमान लोग हिन्दुओं के घड़ों को झूठा कर देते, और जब हिन्दू उस घड़े का पानी पी लेता, तब मुसलमान लोग तालियां बजा-बजा

कर हँसते ओर हिन्दुओं को कहते कि—तुम मुसलमान हो गये। अन्य हिन्दू भी उन हिन्दुओं को मुसलमान बताने लगते थे। इस प्रकार उस कमसिरेट खच्चर कोर में खलबली मच गई, ५० हिन्दू मुसलमान बना लिये गये, हमारे विद्यालय के पड़ोस में ही एक पान की दूकान थी, उस पर पान खाने के लिए उस खच्चर कोर में से भी बहुत से लोग आया करते थे, उनसे यह सब पता उस दुकानदार को लगा उसने हम लोगों को बताया, हमने उसी दुकान पर आने वाले हिन्दुओं के द्वारा मुसलमान हुए लोगों को बुला-बुला कर शुद्ध कर दिया उनके तथा अन्य हिन्दुओं के विचारों को भी बहुत पक्के बना दिया। एक दिन रात्रि के समय हम कई विद्यार्थी और ठाकुर उत्तम सिंह जी उसी पान की दुकान के पास खड़े थे, उसी समय एक लम्बा चौड़ा पठान आया और ठाकुर उत्तम सिंह का नाम ले-लेकर गालियाँ देने लगा, कुछ देर तो ठाकुर उत्तम सिंह सुनते रहे, फिर उन्होंने अपने हाथ का अंगूठा उसके गले पर रख कर दबाया, और उस पठान को भूमि पर पटक लिया, ठाकुर उत्तम सिंह के दाहिने हाथ का अंगूठा गाँठ पर से कटा हुआ था, उसमें थोड़ी सी हड्डी बाहर को आगे की तरफ निकली हुई थी, वह अंगूठा उनका बिना लाइसेंस का घातक हथियार था. उस अंगूठे को उस बदमाश के गले पर रख कर दबाया तो उसकी चीख निकल पड़ी- और चिल्ला-चिल्ला कर कहने लगा कि—उत्तम सिंह तुम हमारा बाप है। हमको बख्श दो, हमको मुआफ कर दो, उत्तम सिंह जी ने उसको खूब परेशान करके छोड़ा। श्री डाक्टर साहिब के द्वारा हमने मिलिटरी के बड़े अफसरों को भी मुसलमानों की शरारतों की सूचना दिलवा दी। बड़े-बड़े अफसर लोग हमारे विद्यालय में आये और सब काम ठीक हो गया, वह हमसे बहुत प्रभावित हुए।

श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर -

श्री पण्डित भोजदत्त जी आर्य मुसाफिर जी के ज्येष्ठ पुत्र थे, इनमें बहुत गुण थे, जो हर व्यक्ति में एक साथ इतने गुण प्रायः देखने में नहीं आते हैं। जैसे -(१)—सिद्धि हस्त चिकित्सक थे, (२)—उर्दू के बहुत अच्छे लेखक थे, पहले कई उपन्यास (नाविल) भी उर्दू में उन्होंने लिखे, पीछे **"मुसाफिर अखबार"** के बहुत वर्षों तक सफल सम्पादक रहे। **"इस्लाम की अक्ली तसवीर"** आदि कई पुस्तकें उर्दू में लिखी थीं। (३)—बहुत बढ़िया प्रभावशाली (लेक्चरार) वक्ता थे। (४)—ऊँचे दर्जे के मुबाहिस और मुनाजिर थे ईसाइयों और मुसलमानों से बड़े-बड़े मार्के के मुबाहिसे और मुनाजिरे उन्होंने किये थे। पादरी फ्रैंक जानसन (श्री पण्डित नील कंठ शास्त्री जी जो ईसाइयों से हार कर ईसाई हो गये थे उनका पौत्र था) तथा डाक्टर साहिब का महाविद्यालय ज्वालापुर के एक वार्षिकोत्सव पर मुबाहिसा हुआ था, उसके प्रश्नों के डाक्टर साहब ने बहुत ही बढ़िया उत्तर दिये थे, यहाँ तक कि उसका मुंह बन्द कर दिया था, और जो प्रश्न ईसाई मत पर श्री डाक्टर साहिब जी ने किये उनका उससे उत्तर न दिया जा सका। आँखों में आँसू भर कर उसने कहा था कि -**"डाक्टर साहिब अगर मेरे दादा जी (पण्डित नीलकण्ठ जी शास्त्री) के समय में आप जैसे योग्य व्यक्ति उपस्थित होते तो वह ईसाई क्यों बनते ?**(१) श्री डाक्टर जी ने पादरी फ्रैंक जानसन को छाती से लगा लिया

टिप्पणी—

(१) एक मुबाहिसा डाक्टर साहिब का श्री मौलाना अबुल फरह पानीपती के साथ सन् १९१२ ई० में **"इस्लामी सिद्धान्तों की सच्चाई"** पर हुआ था, इस मुबाहिसे में तीन घण्टे के अन्दर ही

ओर कहा कि—हम अब आपको अपने और आपके पुराने धर्म में लेने को तैयार हैं, इस पर पादरी फ्रैंक जानसन ने कहा, डाक्टर जी ! अब कुछ नहीं हो सकता है, जो तनख्वाह मैं ईसाइयों में पाता हूं उसका चौथाई हिस्सा भी आर्य समाज नहीं दे सकता है और दूसरी बात यह है कि—वहां मैं ऊँचा गिना जाता हूं, मेरे लिए वहाँ कहा जाता है कि—यह बहुत ऊँचे कुल का आदमी है, यह ब्राह्मणों में से आया है, आदि-आदि। और आपके यहाँ आने पर मेरी ओर उंगलियों से इशारे किये जायेंगे कि—यह ईसाई था, ईसाइयों में से आया है, इस प्रकार में घृणा का ही पात्र बना रहूंगा। इस प्रकार मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं होता कि—डाक्टर साहब ने अपनी दलीलों, युक्तियों व प्रमाणों से तो उसे हरा दिया था, परन्तु व्यवहार में आर्य समाज उसको जीत न सका—**"वही रफ्तार बेढंगी जो पहले थी वह अब भी है"**(१) (५)—लीडर बनने की उनमें अद्‌भुत शक्ति थी। (६)—उर्दू के वह ऊँचे दर्जे के शायर थे, उनके लिखे मुसद्दस बहुत अच्छे थे, मैं बानगी रूप में यहाँ भी थोड़े से पेश करता हूं, आप स्वयं देखिये—

यह कैसा माजरा है मुल्को मिल्लत के ओ शैदाई ? रहेगा कब तलक बाजारे मगरिब का तमाशाई ?॥
कमर में बैलटोगैलिस गले में कालरो टाई। हजामत(२) मगरिबी फैशन से तूने खूब बनवाई॥

अन्दर डाक्टर साहिब ने मौलाना के छक्के छुड़ा दिये थे इस शास्त्रार्थ में अन्तिम फैसले के रूप में शास्त्रार्थ के प्रधान के वाक्य देखने और पढ़ने लायक हैं। यह शास्त्रार्थ मेरे विशाल पुस्तकालय के अन्दर उर्दू में छपा हुआ मौजूद था, मैंने इसका हिन्दी रूपान्तर कर अपने प्रिय शिष्य लाजपतराय को दे दिया जिसे उन्होंने इस शास्त्रार्थ शृङ्खला के द्वितीय भाग में प्रकाशित करा दिया। मैं श्री पण्डित धर्मवीर जी व डाक्टर साहिब के मुबाहिसों की तलाश में हूं। अगर मुझे कहीं भी प्राप्त हो जायेंगे तो अवश्य प्रकाशित करवाऊँगा, एक शास्त्रार्थ **"जबलपुर शास्त्रार्थ"** के नाम से डाक्टर साहिब जी का हुआ जो बहुत ही प्रसिद्ध हुआ था, तथा उस समय छपा भी था, उसकी प्रति मुझे मिल नहीं रही, जिस किसी भी सज्जन के पास हो तो अवश्य भेजें **"मेरे से किसी सभा या संस्था ने तो काम नहीं लिया, तब मैंने स्वयं अपने लिए रास्ता खोज लिया और प्रिय लाजपतराय जी का दामन पकड़ा, उनकी मेहनत, भाग-दौड़ और मेरा मार्ग-दर्शन यह रङ्ग लाया कि जो शास्त्रार्थ सामग्री आपके हाथों में है, यह प्रकाश में आ सकी, जिस कार्य को आज तक एक सौ वर्ष हो गये कोई सभा या संस्था नहीं कर सकी, न ही अपनी इस अप्राप्य अमूल्य सम्पत्ति की ओर किसी ने ध्यान दिया उसे मेरे प्रिय शिष्य ने जीवित कर दिखाया"**। मेरा आप सभी आर्य भाइयों से अनुरोध हैं कि मेरे नाम पर जो प्रकाशन श्री लाजपत राय जी ने खोला है इसमें भरपूर सहयोग दें, जिससे इस प्रकाशन के माध्यम से उत्तम से उत्तम सामग्री प्रकाश में आ सके।

—"अमर स्वामी सरस्वती"

टिप्पणी—

१—स्वामी जी महाराज ने उपरोक्त कथन में हम सभी आर्यों के लिए कितनी बड़ी नसीहत की है ? हमें अपने व्यवहार को बदलना होगा तभी हमारे माथे से इस प्रकार के कलंक मिट सकते हैं।

२—**"हजामत"** शब्द के यहां दो मायने हैं, समझदार लोग समझते हैं।

—"लाजपत राय अग्रवाल"

एक और मुसद्दस पढ़िये यह मुझे पूरा याद नहीं रहा उसमें था—

अर्शे अजमत से उतर कर फर्शे जिल्लत पर गिरा। देखते ही देखते तू हो गया है क्या से क्या ?॥

एक मुसद्दस(३) में था—

ओ ! तंवगर !! तुझे दुनियां की खबर है कि नहीं, तेरे पहलू में भी दिल और जिगर है कि नहीं ?।
आखिरी वक्त पर कुछ तेरी नजर है कि नहीं ?, अपने खालिक का भी कुछ खौफो खतर है कि नहीं ?॥
कैसी मिट्टी से बना है तू मुझे बतलादे ?, अपनी हस्ती का मुद्दआ तो जरा समझा दे।
जब जमीं धूप से गर्मी में है जलने लगती, सितहये आब भी गर्मी से उबलने लगती॥
लूयें जां सोज भी जोरों से है चलने लगती, जर्रे-जर्रे से है जब आग निकलने लगती।
संग दिल चर्ख को भी रहम तब आ जाता है, सूरते अब्र जमीं पर वह बरस जाता है॥
तुझको दीनों पै कभी रहम न आते देखा, जब कभी देखा गरीबों को सताते देखा॥
सूद जर अस्ल से ज्यादा तुझे खाते देखा, माल बेवाओं यतीमों का दबाते देखा॥
तुझको बेवाओं यतीमों का जरा ध्यान नहीं, तेरी नजरों में जो मुफलिस हैं वह इन्सान नहीं।

श्री डाक्टर साहिब ने अपनी नजमें इकट्ठी करके नहीं रक्खीं, अपनी नज्मों का मजमूआं कोई नहीं छपाया, वह अगर होतो तो बड़े काम की थी। श्री पण्डित तारा दत्त जी बी०ए० एल०एल०बी० एडवोकेट, बहुत सीधे सज्जन, देवता पुरुष ही थे, लेक्चर तो कभी-कभी खोजपूर्ण देते थे, और लेक्चर देने को बड़े-बड़े उत्सवों पर बुलाये भी जाते थे, दिल्ली, खुर्जा, महाविद्यालय ज्वालापुर और लाहौर में भी मैंने स्वयं उनके अच्छे भाषण सुने थे।

आर्य मुसाफिर विद्यालय—

यह एक अद्भुत और अनुपम उपदेशक विद्यालय था, उपदेशक बनाने का ढंग जो इसके संचालको को आता था वह किन्हीं औरों को आया नहीं "**मुझको वह ढंग आता है, पर मुझसे किसी संस्था ने काम न लिया**" जैसे उपदेशक इस विद्यालय से निकले वैसे किसी विद्यालय से निकल न सके। यहां से जो जो उपदेशक बनकर निकले उन सभी के नाम तो मुझे याद नहीं हैं, परन्तु जिन-जिन के याद हैं मैं यहां देता हूं (१) "**श्री साधु महेश प्रसाद जी मौलवी फाजिल**" अध्यक्ष अरबी फारसी विभाग हिन्दू युनिवर्सिटी (हिन्दू विश्वविद्यालय) काशी। इन्होंने ईरान की यात्रा भी की, कई पुस्तकें भी लिखीं बहुत विद्वान और वास्तव में साधु पुरुष थे, काशी में ही रहते थे। (२) "**श्री केदार नाथ जी पाण्डे**" यह पहले राम उदार नामी उदासी साधु बने फिर "**राहुल सांकृत्यायन**" नाम रखकर बोद्ध

टिप्पणी—

३—इन मुसद्दसों को अनेकों बार व्याख्यानों के बीच मैंने स्वयं स्वामी जी महाराज के मुखसे सुना था जब स्वामी जी इनको बोलते थे तो श्रोताओं में एक समा सा बन्ध जाता था,

"लाजपत राय अग्रवाल"

बने, काशी के पण्डितों से "**महापण्डित**" की उपाधि प्राप्त की, फिर घोर कम्युनिस्ट बन गये, बड़े ग्रन्थ लिखे, बहुत से ग्रन्थ उनके अब भी प्रचलित हैं, सब कुछ खाने और सब कुछ करने में निरंकुश हो गये। वैदिक धर्म और वैदिक सभ्यता से उनका दूर का भी सम्बन्ध न रहा। काशी के पण्डितों से इन्होंने "**पण्डितराज**" की उपाधी भी लेनी चाही, पर इसका बहुत विरोध उनके आचार-विचारों के कारण से ही हुआ, वह उपाधि उनको नहीं मिली। (३) —"**रईसुल मुनाजिरीन् श्री पण्डित धर्मवीर जी**" बड़े ही तार्किक और प्रभावशाली वक्ता थे, कमाल के मुबाहिसे करते थे, पण्डे, मौलवी और पादरी भी उनका नाम सुन कर घबराते थे कांग्रेस की जोरदार लहर में वह अपने आपको बेकार समझने लगे। मुबाहिसे और व्याख्यान छोड़ कर पुस्तक प्रकाशक और विक्रेता बन गये। पुस्तकें भी चालू ही छपाई और बेची, सैद्धान्तिक नहीं। गांधी जी की हत्या का समाचार रेडियो पर सुना और हृदय की गति रुक जाने से समाप्त हो गये। (४)—"**पण्डित अयोध्याप्रसाद जी**" खुसरुपुर (पटना) के थे, बाद में पण्डित वेदव्रत उनका नाम हो गया था, ब्रह्मा आदि देशों में जाकर उन्होंने बहुत प्रचार किया था। (५)—"**पण्डित परमानन्द जी**" धौलपुर सत्याग्रह तक हमारे साथ थे, पीछे ब्रह्मा देश को चले गये थे, एक बार वहां से आये थे, तो मेरे लिये एक प्रेम प्रसाद भी लाए थे, फिर वापिस ब्रह्मा देश को ही चले गये थे, और शायद वहां के उपद्रवों में मारे गये क्योंकि बाद में उनका कोई पता नहीं चला। (६)—"**पण्डित मुरारि लाल जी**" आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा लाहौर में उपदेशक थे, वहां से स्वेच्छया त्याग पत्र देकर काशी चले गये थे, प्रचार कार्य छोड़कर वैद्य बन गये थे, (७)—"**पण्डित भगवती प्रसाद जी**" कोटा-सनोटा (बुलन्दशहर) के थे प्रचार कार्य भी किया, पर घर का बन्धन उनको अधिक पड़ गया। (८)—"**पण्डित मुरारि लाल जी शास्त्री**" (श्री पण्डित भगवती प्रसाद जी के ही लघु भ्राता थे) डी० ए० वी० हाई स्कूल शाहाबाद (करनाल) तथा सी० ए० वी० हाई स्कूल (हिसार) में संस्कृत और धार्मिक अध्यापक रहे व्याख्यान देने के लिए भी भिन्न-भिन्न प्रान्तों में जाते रहे। बहुत ही प्रभावशाली एवं पाण्डित्यपूर्ण व्याख्यान देते थे। (९)—"**पण्डित रामगोपाल जी**" जिला आजमगढ़ के थे, प्रचार भी वर्षों तक भिन्न-भिन्न प्रान्तों में किया, फिर लाहौर के बोरस्टल जेल में अध्यापक हो गये थे, अच्छे वक्ता थे। (१०)—"**पण्डित परमानन्द जी**" शेर कोट (बिजनौर) में थे, बड़ो लगन के कर्मठ कार्य कर्त्ता थे। (११)—"**श्री पण्डित रामचन्द्र जी आर्य मुसाफिर**" डी० ए० वी० हाई स्कूल (अजमेर) में अध्यापक रहे, व्याख्यानों द्वारा बहुत ही प्रचार किया, भगवान की कृपा से अभी जीवित-जाग्रत हैं। (१२)—"**अमर सिंह आर्य पथिक**" (मैं अब अमर स्वामी नामक सन्यासी हूं) मैंने बड़े-बड़े पौराणिक पण्डितों, जैनी पण्डितों, ईसाई पादरियों, मुसलमान मौलवियों, और बड़े-बड़े अहमदी, मुनाजिरों के मान मर्दन किये, इस समय ८८ वर्ष की आयु में चल रहा हूं, घुटनों से बेकार हो गया हूं, मस्तिष्क बहुत काम करता है, वाणी भी अच्छा काम करती है, पर "**चिरागे सुबह हूं बुझा चाहता हूं**" अस्तु ॥ बहुतों के नाम, काम, पते मुझको याद नहीं रहे बहुतों के नाम आदि मेरे सम्मुख आये नहीं, "**श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ**" यद्यपि थोड़े से दिनों ही मुसाफिर विद्यालय में आचार्य रहे, तथापि उस विद्यालय की स्प्रिट उनमें बहुत आई। "श्री कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर" मुसाफिर विद्यालय के विद्यार्थी नहीं बल्कि संचालकों में से एक थे, पर उनमें पूरी स्प्रिट उसी विद्यालय और उसी मिशन की है। ये दोनों ही महापुरुष मुझसे बड़े हैं, जिनका मैं हृदय से सम्मान करता हूं। कुंवर साहब भी अब घुटनों से बेकार ही हैं। हां ! वाणी ठीक है।

मसाफिर विद्यालय बन्द क्यों हो गया ?—

श्री कुंवर सुखलाल जी का फरुंखाबाद से विवाह हो गया था, वह अपनी पत्नी को लेकर अपने जन्म स्थान, ग्राम अरनियां (बुलन्दशहर) में जा बसे। विद्यालय का संचालन छोड़ गये, साथ ही घोर कांग्रेसी बन गये, बार-बार जेल यात्राएँ करने लगे, कांग्रेसी होकर इस्लाम के विरोधी विद्यालय का संचालन करना सम्भव ही नहीं था। श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी भी घोर कांग्रेसी तथा कांग्रेस के नेता बन गये थे, वह भी जेल यात्राएं करने लगे, ये दोनों ही बिद्यालय के कर्त्ता-धर्त्ता तथा प्राण स्वरूप थे। जब प्राण ही न रहे तो शरीर कैसे रहता ? श्री डाक्टर साहब जी ने उन दिनों एक नज्म बनाई जो इस प्रकार थी—

हिन्दू मुस्लिम हों चाहे दो, पै वतन एक ही है। दोनों के वास्ते जालिम की भी गन एक ही है॥
गांधी, वारी, अली भाई, तिलक, मालविया। लाल सदहा हैं मगर मुल्के यमन एक ही है॥
कोई कुमरीं कोई बुलबुल कोई कोयल हो भले। मरने जीने को बले सबके चमन एक ही हैं॥
एक मिट्टी से बने हिन्दू मुसलमां दोनों। सर पै दोनों के मियरं चर्खे कुहन एक ही हैं॥
एक ही मां के हैं आगोश में बैठे दोनों। एक ही सब की खुशी रजों, गमन एक ही हैं॥

जो सज्जन कुरआन की यह आयत सुनाते थे—"**यत्तखिल् मोमिनूनल् काफिरीन् औलिया, मिन् दूनिल् मोमिनीन् व मंयिफअल् जालिका फल्यसा मिनल्लाहि**···" अर्थात् न बनावे कोई मोमिन् (मुसलमान) दोस्त किन्हीं काफिरों (हिन्दुओं आदि) को सिवाय मोमिन् (मुसलमान) के। बस करे कोई ऐसा (काफिरों को दोस्त बनाये) तो वह अल्लाह की ओर से नहीं (अल्लाह के दुश्मनों की ओर से है) यह आयत सुना कर जो अपने भाषणों में कहा करते थे कि—इस आयत के होते हुए हिन्दू-मुस्लिम इत्तिहाद (मेल-मिलाप) होना असम्भव है, वह ही डंके की चोट पर मुनादी करने लगे कि—"**हिन्दू मुस्लिम एक ही हैं**" तथा "**हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई**" इस प्रकार कांग्रेस की एक बाढ़ आई और उसमें बड़े-बड़े दिग्गज बह गये। उससे "**मुसाफिर विद्यालय**" अनाथ रह कर समाप्त हो गया। अर्थात् हिन्दू मुस्लिम इत्तिहाद की भेंट चढ़ गया। उस विद्यालय की आज भी आवश्यकता है, परन्तु "**एम० पी० युग में उसको कौन जिलायेगा ?" "कोवेदानुद्धरिष्यति ?'' मैं फिलहाल तो दो के सहारे पर चलता हूं, परन्तु चार के कन्धों पर चढ़ कर चलने का समय भी निकट है"** ॥

आगरा में दर्शनीय स्थान—

(१)—"**ताज महल**" यह भवन आगरा में ही नहीं सारे विश्व में अनुपम है जो कभी जयपुर के "**महाराजा सवाई मानसिंह**" का भवन था, और अब बादशाह "**शाहजहां**" और उसकी बेगम "**मुमताज महल**" का मकबरा है, देखने योग्य स्थान हैं, सारे विश्व के लोग उसको देखने के लिए आते हैं, और उसके चित्र भी साथ ले जाते हैं, (२)—"**आगरा का किला**" (लाल किला) दिल्ली के जैसा ही है, बनाया कभी हिन्दुओं ने ही था, पर अब मुसलमानों का बनाया हुआ बताया जाता है। किले की एक दीवार में चौथाई इंच से भी छोटा एक पत्थर लगा हुआ है, जिसमें ताजमहल पूरा दीखता है, और बहुत सुन्दर लगता है, पूर्णमासी की उजली रात्रि में वह दृश्य बहुत ही आनन्ददायक होता है। (३)—"**ऐतमादुद्दौला**" (४)—"**फतहपुर सीकरी**" जो पहले हिन्दू नगर था, और अब अकबर का बसाया

हुआ बताया जाता हैं। (५)—"**आर्य अनाथालय**" (६)—"**आर्य समाजें**" आगरा शहर में उस समय केवल दो आर्य समाजें थीं, एक तो "**हींग की मंडी**" तथा दूसरी "**नामनेर**" इस दूसरी समाज का भवन टूटा फूटा था। अब "**नामनेर समाज**" का भवन बहुत सुन्दर बन गया है। तथा आर्य समाजों के भवनों में भी वृद्धि हो गयी है, इस समय आगरा नगर में जहां तक मुझे याद आ रहा है आर्य समाज मन्दिर इस प्रकार हैं—(१)—नामनेर, (२) हींग की मण्डी, (३)—फ्रीगंज, (४)—नाई की मण्डी, (५)—राजा की मण्डी, (६)—बटकेश्वर, (७)—ताजगंज, (८)—गोकुलपुरा। ये सभी समाजें यथा शक्ति प्रचार का कार्य कर रही हैं। परन्तु मैं जहां तक समझता हूं उस समय उन दो समाजों द्वारा जितना काम हुआ, आज ये आठ समाजें भी मिल कर नहीं कर पा रही हैं। हमारे समय में श्री साधु महेश प्रसाद जी (मौलवी फाजिल) पण्डित धर्मवीर जी मुनाजिर, श्री केदार नाथ जी पाण्डेय (राहुल साँकृत्यायन के नाम से विख्यात हुए) ये सब स्नातक हुए थे, श्री साधु महेशप्रसाद जी लाहौर में अरबी की परीक्षाएं देने चले गये थे, मेरी शिक्षा के तब तीन वर्ष व्यतीत हो गये थे, उस समय में यत्र-तत्र व्याख्यान देने के लिए भी जाने लग गया था।

श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री—

श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर, श्री कुँवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर, तथा मैं (अमर सिह आर्य पथिक) विद्यालय के लिए कुछ धन संग्रह करने के निमित्त बरेली गये थे, बरेली में श्री डाक्टर श्याम बिहारी जी, जो बिहारी पुर मोहल्ले में ही रहते थे, उनके घर पर ठहरे, बरेली नगर के बहुत बड़े और बहुत प्रसिद्ध डाक्टर श्री श्याम स्वरूप जी सत्यव्रत के घर भी हमको आमन्त्रित किया गया था, तभी बरेली में श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री, काव्यतीर्थ मिले, बहुत प्रेम हो गया। श्री पण्डित जी को आर्य मुसाफिर विद्यालय, आगरा में पढ़ाने के लिए हम लोग ले आये। अब पौराणिक पण्डित के स्थान पर आर्य पण्डित की नियुक्ति हो गयी, एक वर्ष के लगभग श्री पण्डित जी से शिक्षा लेने का सौभाग्य प्राप्त रहा, उस एक वर्ष में इनसे अपार लाभ हुआ। सन् १९१८ ई० के मई मास में मैंने स्नातक की उपाधि हासिल की, देव योग से इसी माह में मुझे "**पितृ वियोग**" हो गया हमारे पिता जी श्री ठाकुर टीकम सिंह जी का ११-१२ मई के मध्य रात्रि में देहावसान हो गया। उसी रात्रि में मुझे स्वप्न में श्री पिताजी के देहान्त की सूचना किसी मित्र के द्वारा प्राप्त हुई, मैं रात्रि में उठ करके रोया, और बारह की प्रातः मैंने घर को इस विषय में पत्र लिखा, जो १३ तारीख को घर पहुंचा, बारह की प्रातः ही घर से मुझको पिताजी की मृत्यु की सूचना देने के लिए पत्र लिखा गया जो मुझे १३ तारीख को मिला, मैं उसी समय घर को चला गया।

धौलपुर का सत्याग्रह—

धौलपुर (राजस्थान) के महाराजा श्री उदयभान सिंह जी थे और उस राज्य के प्रधान मन्त्री श्री काजी अजीजुद्दीन साहिब थे। मुख्य मन्त्री ने निश्चय किया कि धौलपुर में एक बाजार "**उदयभान स्ट्रीट**" के नाम से बनाया जावे, जिसकी दोनों ओर के मकानों की आकृति एक जैसी हो, जिस सड़क पर उदयभान स्ट्रीट बननी थी, उसी पर आर्य समाज मन्दिर भी था, मुख्य मन्त्री के हुक्म से आर्य समाज मन्दिर गिरा दियवा गया और उसके ऊपर एक मोटर हाऊस बनाना आरम्भ कर

दिया, विद्यालय की ओर से मुझको घर पर एक पत्र मिला कि ऐसी-ऐसी बात है इस लिए धौलपुर में सत्याग्रह होगा। आप शीघ्र आओ, मैं पत्र मिलते ही आगरा (विद्यालय) को चला गया। मेरे जाते ही, हमने तुरन्त सत्याग्रह के लिए जत्था तैयार किया, जो ग्यारह व्यक्तियों का बना, जिसमें श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री, श्री साधु महेश प्रसाद जी, श्री केदार नाथ जी पाण्डेय, श्री बाबू नाथ मल जी अधिष्ठाता, आर्य मित्र श्री पण्डित धर्मवीर जी मुनाज़िर और मैं (अमर सिंह आर्य पथिक) तथा पांच और नये विद्यार्थी थे। धोलपुर में सबसे पहला जत्था हमारा पहुंचा, हमारा जत्था उस स्थान पर पहुंचा जहां आर्य समाज मन्दिर को गिराया गया था। तथा उसकी जगह पर मोटर हाऊस बनाया जा रहा था, मोटर हाऊस के भवन की दीवारें लगभग डेढ़ गज ऊँची बन चुकी थीं, हम सब ग्यारह के ग्यारह सत्याग्रही उस दीवार पर लेट गये, हमने कहा कि हम आगे दीवार नहीं बनने देंगे, यदि दीवार बनानी हो तो हमारे ऊपर बनाओ। राज्य के चीफ इन्जीनियर और श्री नाजिम (कलक्टर) साहिब हमारे पास आए तथा हमें वहां से हट जाने के लिए उन्होंने बहुत आग्रह किया, हमने उनकी बात को नहीं माना, तो उनके हुक्म से पचास पुलिस के सिपाही बन्दूकें लिये और बन्दूकों पर संगीनें चढ़ाये हुए आ गये। उन्होंने हमको गिरफ्तार कर लिया, तत्काल समाचार पत्रों तथा आर्य संस्थाओं को तार द्वारा हमारी गिरफ्तारी की सूचना दे दी गई। सूचना मिलने पर और भी सत्याग्रही आने लगे। प्रत्येक गाड़ी पर दस पांच सत्याग्रही उतरने लगे। हमको गिरफ्तारी के कुछ घण्टों बाद छोड़ दिया गया। एक बड़े से मकान में हम ठहरे, पुलिस ने मकान मालिक को धमकाया तथा हमें वहां से निकाल दिया, हम खुले मैदान में भूमि पर बिस्तरे बिछा कर लेट गये। कुछ देर सोने के बाद मैं जागा तो एक काला नाग कुण्डली मारे मेरे सिर के पास बैठा दिखाई दिया, मैं घबरा कर दूर हो गया तथा अपने साथियों को जगाया, इतने में वह सर्प भाग गया सायंकाल हम सड़क पर शौचादि से निवृत्त होने के लिए जा रहे थे, तब कितने ही सर्प सड़क के दोनों ओर दिखाई दिये, हम दुकानों पर भोजन करने जाते थे, तो पुलिस उन दुकानदारों को धमकाती थी, परिणाम स्वरूप दुकानदारों ने भोजन देना बन्द कर दिया। ग्यारह व्यक्ति तो हम थे कुछ और भी आ गये, उस रात को भोजन न मिलने के कारण सब भूखे ही सो गये, परन्तु रात्रि के आरम्भ में ही अन्धेरे में कोई दो व्यक्ति चुपचाप धीरे-धीरे हमारे पास तक आये और एक टोकरी पूरी तथा खुश्क आलू का शाक हमारे पास रख कर दबे पांव तुरन्त भाग गये, जाते-जाते मात्र धीरे से यह कह गये कि—कृपया आपस में बांट लीजिये, हमें अन्त तक उन सज्जन पुरुषों का पता नहीं लगा, हमने पूड़ियां बांट कर खा लीं और सो गये, प्रातः काल होते-होते बाहर से आये हुए कुल मिला कर लगभग सत्तर व्यक्ति इकट्ठे हो गये, श्री महात्मा "**स्वामी श्रद्धानन्द**" जी भी आ गये थे। अब भोजन की समस्या हुई कि भोजन कौन बनावे ? श्री महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने सब व्यक्तियों को इकट्ठे बुला कर पूछा कि—भोजन बनाना किन-किन सज्जनों को आता है ? सब ने कह दिया कि भोजन नहीं बना सकते। मेरा यह स्वभाव था कि—जिस काम को कठिन समझ कर कोई और न करना चाहे उसे मैं कर लेता था। सबके मना करने पर मैंने महात्मा जी से निवेदन किया कि—भोजन मैं बनाऊंगा, श्री महात्मा जी ने पूछा कि—बेटा ! आप भोजन बनाना जानते हो ? क्या आपने कभी बनाया है ? मैंने उत्तर दिया कि—महाराज ! मैंने भोजन कभी नहीं बनाया है, पर जब कभी भी बनाना आरम्भ किया जायेगा तब जैसा बनेगा वैसा ही आज भी बन जायेगा। रोटियां बिल्कुल गोल नही बनेंगी तो

-टेढ़ीमेढ़ी ही बन जायेंगी। परन्तु यत्न करूँगा कि--कच्ची न रहें, महात्मा जी मेरी बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। मैंने उस दिन रोटियों के साथ उड़द की दाल बनाई, उन रोटियों को देख-देख कर मुझे स्वयं भी हंसी आती थी, कोई लंका का नक्शा तो कोई आस्ट्रेलिया का! पर कच्ची कोई नहीं थी। सबसे प्रथम महात्मा जी ने रोटी खाई तो बड़े ही प्रसन्न हुए, सारी रोटियां बन जाने पर महात्मा जी ने मुझे अपने पास बुलाया, मेरे हाथ देखे जो कोहनियों से नीचे-नीचे सूज गये थे, मेरी पीठ ठोकते हुए उन्होंने आशीर्वाद दिया कि —"**बेटा मेरा आशीर्वाद है तुम सारी आयु भर सदा सर्वत्र सर्व कार्यों में सफल ही होवोगे, तुमको कभी कहीं असफलता नहीं मिलेगी**" श्रद्धेय श्री महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का आशीर्वाद आज तक मेरे साथ है, मैं आज तक किसी भी कार्य में असफल नही रहा। धौलपुर राज्य के वजीर आजम काजी अजीजुद्दीन की चालबाजियों और श्री महात्मा जी की सरलता से आगे सत्याग्रह भी नहीं चला, और आर्य समाज को सफलता भी नहीं मिली।

श्री महात्मा हंसराज जी से सम्पर्क—

उन दिनों दिल्ली में एक "**सदर नाला आर्य समाज**" होता था। उसके उत्सव पर श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर, श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री, काव्यतीर्थ, श्री कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर और मैं (अमर सिंह आर्य पथिक) चारों व्यक्ति आगरा से आये थे, और पूज्य महात्मा हंसराज जी भी उस उत्सव में उपस्थित थे, इस्लाम की ओर से दो व्यक्ति मुबाहिसा करने को उस उत्सव में आये थे, एक मौलवी फारसी और अरबी पढ़ा हुआ था। उसका मुबाहिसा श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर के साथ होना था। पर वह प्रस्तुत विषय पर पांच मिनट भी नहीं जमता था। इसलिए कुछ न हो सका, दूसरा मौलवी कुछ संस्कृत पढ़ा हुआ था, उसको उर्दू का एक अक्षर भी नहीं आता था, ऐसा पता लगता था कि—किसी पौराणिक ब्राह्मण को मुसलमान लोग किराये पर ले आये हैं। उसने कुछ प्रश्न किये, और श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री काव्यतीर्थ जी ने उत्तर दिये, वह व्यक्ति उसके बाद कभी कहीं देखने में आया नहीं। मेरा एक व्याख्यान उन दोनों व्यक्तियों की बातों के आधार पर हुआ, श्री महात्मा हंसराज जी को वह व्याख्यान बहुत पसन्द आया, और मेरी व्याख्यान शैली, तात्कालिक सूझ तथा सैद्धान्तिक जानकारी महात्मा जी को बहुत अच्छी लगी। श्री महात्मा जी ने श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर तथा कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर से मुझको आर्य प्रादेशिक सभा (पंजाब, सिन्ध, बलोचिस्तान) लाहौर के लिए मांग लिया, निश्चय हो गया कि -शीघ्र ही अमर सिंह आर्य पथिक को लाहौर भेज दिया जायेगा।

आगरा में महामारी—

सन् १९१८ ई० में योरुप का महायुद्ध समाप्त हुआ था। वर्षा ऋतु में भयंकर श्लैष्मिक ज्वर सारे देश में फैला, उन दिनों उसको "**वारफिवर**" नाम दिया गया। यह समझा गया था कि—योरुप के महायुद्ध से वायु दूषित होने के कारण यह हुआ है। आगरा में भी इस ज्वर ने भयंकर रूप धारण किया था। इस रोग से प्रतिदिन तीन-तीन सौ तक व्यक्ति मर जाते थे। कोई-कोई लाशों को तो उठाने वाला तक कोई न मिलता था, ऐसी स्थिति में विद्यालय के विद्यार्थी हमेशा तत्पर रहते थे। नामनेर से शमशान भूमि लगभग तीन मील दूर थी। इतनी दूर सब लाशों को बार-बार ले जाना

होता था। कई दिन ऐसे भी गुजरे कि ६-७ लाशों को बार-बार ले जाना पड़ा, इस कार्य में हमारे सहयोगी किनारी बाजार के पुस्तक विक्रेता श्री महाशय कपूर चन्द जी थे, श्री महाशय जी को एक दिन एक ऐसा शव भी उठाना पड़ा जो घर में पड़ा-पड़ा सड़ गया था, बहुत दुर्गन्धी उसमें हो गयी थी, उसके पास खड़ा होना भी दूभर हो रहा था, जैसे-तैसे मैंने तथा महाशय जी ने उसको भस्म किया, भस्म करने के बाद महाशय जी भी उसी रोग में ग्रसित हो गये, महाशय जी का तो उसी रोग में देहान्त हो गया, भगवान की कृपा से मैं बच गया ॥

लाहौर को प्रस्थान—

श्री महात्मा हंसराज जी का पत्र श्री कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर जी के नाम आया जो इस प्रकार था—

॥ ओ३म् ॥

श्रीयुत्, *लाला कुंवर सुखलाल जी नमस्ते !

आपके भाई अमर सिंह जी के लिए निश्चय हुआ था कि—उनको आर्य प्रादेशिक सभा लाहोर में कार्य करने के लिए भेज दिया जायेगा। वह अभी तक लाहोर नहीं पहुंचे, उनको शीघ्र ही लाहोर भेजने की कृपा करें !

आभार मानूंगा ॥

आपका शुभ चिन्तक—
"हंसराज"

इस पत्र के आने के बाद मुझको सितम्बर के अन्त में लाहौर भेजा गया। मेरे लाहौर पहुंचने पर श्री महात्मा जी बहुत प्रसन्न हुए। मुझको आर्य समाज मन्दिर अनारकली में ठहराया गया, पहले दिन मेरा भोजन श्री महात्मा जी के घर पर हुआ। दूसरे दिन श्री बाबू रामानन्द जी एडवोकेट (मन्त्री) आर्य प्रादेशिक सभा—लाहौर के घर पर हुआ, तीसरे दिन मैं एक हिन्दू होटल में भोजन करने गया, वहां एक टोकरा प्याज का रक्खा हुआ मुझे दिखाई दिया, उन दिनों मैं प्याज से घृणा किया करता था, प्याज रक्खा हुआ देखकर मेरा मस्तिष्क ठनका और मैंने होटल वालों से पूछा कि—तुम्हारे होटल में क्या क्या बना है ? उन्होंने बताया कि—**"महाप्रसाद भी बना है"** मैं महाप्रसाद को नहीं जानता था कि यह क्या होता है ? पर मुझे इस नाम से कुछ सन्देह हुआ, मैं उठकर चलने लगा तो होटल के मालिक ने कहा—"आप महाप्रसाद तथा अण्डे" न खाना चाहें तो न खाइये,......." इन वाक्यों को

टिप्पणी—

*पंजाब में **"लाला"** शब्द बहुत ही आदर का शब्द माना जाता था।

सुनते ही मैं समझ गया कि—"महाप्रसाद क्या होता है ?" और मैं चुप पांव दबा कर होटल से बाहर निकल आया, उस दिन मैंने कहीं भोजन नहीं किया, न मुझे भोजन की इच्छा ही हुई। उसी दिन सायं काल या दूसरे दिन प्रातः मैं महाराजा रणजीतसिंह को समाज पर गया, वहां ओरियेन्टल कालेज का छात्रावास था, अरबी, फारसी और संस्कृत पढ़ने वाले विद्यार्थी उस छात्रावास में रहते थे' वहां पर हमारे धर्म भाई श्री साधु महेश प्रसाद जी मौलवी फाजिल परीक्षा देने के लिए रहते थे, मुझको उनकी तलाश थी, मैं उनको जाकर मिला, बड़े प्रेम का व्यवहार किया, भोजन कराया।

हमारे आर्य मुसाफिर विद्यालय की विशेषता—

आर्य मुसाफिर विद्यालय आगरा की एक यह विशेषता थी, कि वहां के सब विद्यार्थी एक-दूसरे को अपने सहोदर भाई से भी ज्यादा मानते थे। मैं श्री साधु जी को अपना बड़ा भाई मानता था, और वह भी अपना छोटा सहोदर भाई समझते थे, उन्होंने मिलने पर बहुत ही प्रेम का व्यवहार किया, उन्होंने पूछा कब आये हो तथा भोजन कहाँ करते हो ? मैंने तीनों दिन की पृथक-पृथक कहानी विस्तार से वर्णन की, हिन्दू होटल की बात सुनकर उन्होंने कहा लाहौर में जितने दिन भी रहना हुआ करे तो भोजन यहीं मेरे पास किया करो। और यदि कभी यहां तक न आ सको और होटल में भोजन करने जाना ही पड़ जाये तो हिन्दू होटल में भोजन कभी मत करना, "**वैष्णव होटल**" जिस पर लिखा हो वहां पर भोजन करना, वैष्णव होटल में मांस नहीं बनता। हिन्दू होटल कोई भी ऐसा नहीं होगा जिसमें मांस न बनता हो।

एक वैष्णव होटल—

मैं एक दिन एक वैष्णव होटल में भोजन करने गया, उसके बिल्कुल बराबर में ही एक हिन्दू होटल था। बाहर से दोनों पृथक-पृथक दिखाई देते थे, मगर भीतर से दोनों एक थे। यह पता लगते ही में वहां से भो वापिस चला आया, उस समय भोजन न करके मात्र दूध पीकर रह गया। मैंने निश्चय किया कि—मैं भोजन स्वयं ही बनाऊंगा, एक दिन सामान लेकर भोजन बनाने को बैठा, तो आर्य समाज अनारकली का सेवक जो जिला गोण्डा (उत्तर-प्रदेश) का रहने वाला था। अपने आपको ठाकुर कहता था, उसने मुझसे सामान लेकर भोजन बना दिया और उसने यह कह दिया कि लाहौर में जितने दिन भी आप रहा करोगे आपका भोजन मैं ही बनाया करूंगा, वह बहुत मोटी-मोटी रोटी बनाता था, तथा प्रायः चने व उड़द की मिश्रित दाल बनाता था। जो स्वाद उसके द्वारा बनाये हुए प्रेम भरे भोजन में आता था वह किसी अमीर के भोजन में भी नहीं आया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की ओर से मेरा सर्व प्रथम कार्यक्रम—

मेरा प्रोग्राम सर्व प्रथम "**ऐमनाबाद**" जिला गुजरांवाला (वर्तमान पाकिस्तान) का बनाया गया, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा (पंजाब, सिन्ध, बिलोचिस्तान, फ्राण्टियर) लाहौर में जो नया उपदेशक रखा जाता था, उसको सबसे पहले ऐमनाबाद ही भेजा जाता था, इसीलिये मुझको भी सर्व प्रथम वहीं भेजा गया। विजय दशमीं का पर्व था, इस उपलक्ष में रामायण की कथा मुझसे कहलवाई गयी, ऐमनाबाद के चौक में उन्हीं दिनों रामलीला भी होती थी, फिर भी मेरी कथा के लिए जो स्थान

नियत था वह कथा के समय तक नित्य ही सारा भर जाता था, कथा बहुत ही सफल समझी गयी, ऐमनाबाद आर्य समाज के सर्वस्व श्री लाला मेलाराम जी सभरवाल थे, वह धनी भी थे, और दानी भी बहुत थे। पूज्य महात्मा हंसराज जी को वह बहुत प्रिय थे। प्रादेशिक सभा में उनका बड़ा मान था। उन्होंने सभा को मेरी बहुत ही प्रशंसा लिख कर भेजी, उससे सभा में मेरा बहुत ही मान बढ़ गया। उनके सगे छोटे भाई श्री लाला धर्मवीर जी सभरवाल आजकल आर्य समाज कुरुक्षेत्र में सर्वस्व हैं, इन्होंने प्रचार के लिए एक भवन भी बना दिया।

मेरा दूसरा प्रोग्राम—

मुझे दूसरा प्रोग्राम **"हाफिजाबाद"** जिला गुजरांवाला का बना कर दिया गया, वहां पर दो आर्य समाज थे, एक गुरुकुल विभाग का तथा दूसरा कालिज विभाग का। हाफजाबाद में एक डी० ए० वी० हाई स्कूल भी था, उसके हैड मास्टर श्री लाला रामसहाय जी बी० ए०, बी० टी० थे, वह महान कर्मठ व्यक्ति थे, आर्य समाज की उनको बड़ी लगन थी। आर्य समाज कालिज विभाग (हाफजाबाद) के वह प्राण स्वरूप थे। उनको और उनके परिवार को मेरे साथ बहुत प्रेम हो गया था। उन्होंने मुझको एक मास तक अपने पास रक्खा, मेरा भोजन प्रायः उनके ही घर में होता था। वह प्रति रविवार को कुछ अध्यापकों और स्कूल के विद्यार्थियों को साथ लेकर निकट के ग्रामों में प्रचार करने जाया करते थे।

हाफिजाबाद में कविरत्न पण्डित अखिलानन्द जी—

एक बार पौराणिक पण्डित कविरत्न अखिलानन्द जी मेरे सामने ही हाफिजाबाद में आये, उनका व्याख्यान सुनने के लिए मैं और श्री लाला राम सहाय जी इकट्ठे गये, बहुत से स्कूल के विद्यार्थियों को भी साथ ले गये, अखिलानन्द जी ने अपने व्याख्यान में आर्य समाज के मन्तव्यों और ऋषि दयानन्द जी की व्यर्थ निन्दा की। मैंने शंका समाधान के लिए चिट लिख करके दी, अखिलानन्द जी ने उसे चुपचाप दबा कर रख लिया, श्री लाला राम सहाय जी ने सभा में खड़े होकर पूछा कि उस चिट को आपने दबा करके क्यों रख लिया है? उत्तर क्यों नहीं दिया? आप एक ओर तो शास्त्रार्थ का चैलेन्ज करते हैं, (अखिलानन्द ने अपने व्याख्यान में कहा था कि—"है कोई माई का लाल आर्य समाजी जो हमारे प्रश्नों का उत्तर दे सके" और शास्त्रार्थ कर सके) और जब आपका चैलेन्ज स्वीकार किया जाता है तो उसको छुपाते हो, जनता को धोखा देते हो! ये क्या बात है? अखिलानन्द जी ने कहा कि - इस समय शास्त्रार्थ नहीं हो सकता, सभा में बैठे हुए डी० ए० वी० हाई स्कूल के विद्यार्थी चारों ओर से बोलने लगे या तो शास्त्रार्थ करो या अपना चैलेन्ज वापिस लो। सनातन धर्मी सभी मौन साध गये। अखिलानन्द जी को ऐसा महसूस हुआ कि यहां के सनातनधर्मी कमजोर हैं, या किसी कारण से मेरा साथ देने को तैयार नहीं हैं, और आर्य समाजी मुझको पीटेंगे, बस! फिर क्या था सभा गड़बड़ हो गयी, उस भीड़ में अखिलानन्द चुपचाप मञ्च से उठ कर उस मन्दिर के पीछे वाले दरवाजे से निकल अपने निवास स्थान पर पहुंच गये। और अन्त में बात करने पर वह सब कुछ टाल गये। और उसके बाद उनका कोई व्याख्यान नहीं हुआ अगले दिन प्रातः ही सनातन धर्मियों ने उनको विदा कर दिया।

हाफिजाबाद में महामारी—

उन दिनों हाफिजाबाद में आगरा जैसा ज्वर प्रबल वेग से चल रहा था, शायद ही कोई घर ऐसा बचा हो जिसमें दो-चार व्यक्ति इस ज्वर के शिकार न हों। इस ज्वर में खांसी का प्रबल वेग होता था, हाफिजाबाद में इस भयंकर और संक्रामक रोग से नित्य बहुत से लोग मृत्यु का ग्रास बनते थे। श्री मास्टर राम सहाय जी औषधियां लेकर सारे नगर में घर-घर घूमते थे, मैं भी उनके साथ सब घरों में जाता था, कुछ औषधियाँ मैंने भी स्वयं बनाई थीं उनका बहुत अच्छा प्रभाव होता था, श्री मास्टर राम सहाय जी मुझसे बहुत ही प्रसन्न रहते थे, मैंने उनके जैसा पुरुषार्थी परिश्रमी ओर परोपकारी मास्टर इससे पहले कोई नहीं देखा था और उनका भी कहना यही था कि—मैंने ऐसा उपदेशक कोई नहीं देखा हैं। हमारा परस्पर घनिष्ट प्रेम हो गया था—उनके कनिष्ट भ्राता पिंसिपल बिशनसहाय जी एम ए० दिल्ली में योग की शिक्षा में प्रसिद्ध हैं। श्री मास्टर रामहाय जी ने श्री महात्मा हंसराज जी को मेरी बहुत प्रशंसा लिखकर भेजी थी। इस प्रकार मैं आर्य प्रादेशिक सभा और श्री महात्मा हंसराज जी की दृष्टि में एक प्यारा उपदेशक बन गया था। श्री लाला देवी चन्द जी एम० ए० प्रिंसिपल डी० ए० वी० कालिज होशियारपुर एक त्यागी, तपस्वी और बड़े कर्मठ व्यक्ति थे, उन्होंने जिला होशियारपुर में डी० ए० वी० स्कूलों का बड़ा जाल जैसा बिछा दिया था। कितने ही हाईस्कूल कितने ही मिडिल स्कूल और कितने ही प्राईमरी स्कूल उनके खोले हुए उस जिले में थे, पंजाब का कोई जिला शिक्षा में उस जिले के बराबर नहीं रहा था। शिक्षा प्रसार के कारण ही श्री लाला देवी चन्द जी सारे देश में विख्यात थे। मेरा श्री लाला देवीचन्द जी से कुछ मतभेद भी हो गया था, मैं उन दिनों अपने व्याख्यानों में अंग्रेजी राज्य की कड़ी आलोचना किया करता था, और इस्लाम तथा ईसाई मत का भी युक्तियुक्त सभ्यता सहित प्रबल खण्डन करता था, श्री लाला देवी चन्द जी, मेरे द्वारा की गई अंग्रेजी राज्य की कड़ी आलोचना को पसन्द नहीं करते थे, मजहबों के खण्डन को भी वह नहीं चाहते थे, स्कूलों के कारण उनका ऐसा मत था। अपने व्याख्यानों में भी मेरा विरोध करने लगे। और यहां तक भी हुआ कि उन्होंने मेरी शिकायत लिखकर श्री महात्मा हंसराज जी के पास भेज दी। और अंग्रेजों के विरुद्ध बोलने के कारण उन्होंने लिखा श्री ठाकुर अमर सिंह जी आर्य पथिक आर्य समाज को कांग्रेस की एक शाखा बनाना चाहते हैं। श्री महात्मा जी ने मुझको अपने घर पर बुलाकर इस शिकायत की सूचना दी, और मुझसे मेरा अभिप्राय पूछा—मैंने उनको बतलाया कि—ईसाई मत और इस्लाम की सच्ची और युक्ति, प्रमाण पूर्वक आलोचना तथा समीक्षा करने के लिए तो मैं बना ही हूं। रही आर्य समाज को कांग्रेस की शाखा बनाने की बात ! इस पर मैंने उनको बताया कि—लाला देवीचन्द जी ने यह उल्टी बात लिखी है कि कांग्रेस को आर्य समाज की एक शाखा बनाना चाहता हूं। मेरे उत्तर पर श्री महात्मा जी बहुत प्रसन्न हुए और श्री लाला देवीचन्द जी को लिख दिया कि—"ठाकुर पण्डित अमर सिंह जी कट्टर वैदिक सिद्धान्तवादी, सिद्धान्तों के प्रचारक, जोशीले होते हुए भी होशमन्द पण्डित हैं, मेरे विचार में उनको प्यार करना ही उत्तम है, उनको छेड़ना और चिड़ाना ठीक नहीं है।"

मेरे जीवन का सर्वप्रथम शास्त्रार्थ जिसने मुझे "शास्त्रार्थ केशरी" बना दिया—

मेरे जीवन का सर्वप्रथम शास्त्रार्थ **"मृतक श्राद्ध"** विषय पर **"पिण्डीघेप"** जिला अटक (कैम्बलपुर) सीमा प्रान्त (वर्तमान पाकिस्तान) में पौराणिक पण्डित गीता राम शास्त्री के साथ हुआ, जिसमें मेरी

बड़ी भारी विजय हुई, वहां की समाज के प्रधान श्री लाला अमीर चन्द जी एवं मन्त्री श्री लाला नत्थूराम जी एडवोकेट आदि ने उस विजय पर मुझे **"शास्त्रार्थ केशरी"** की पदवी प्रदान कर दी। एवं उस दिन से मेरे नाम के साथ यह वाक्य जुड़ गया, यहीं से मेरे शास्त्रार्थों का सूत्रपात हुआ, यहीं से शास्त्रार्थो के लिए तैयारी करने का मुझको शौक हुआ और सभाभी मुझको शास्त्रार्थकर्त्ता मानने लगी। दूसरा शास्त्रार्थ **"कोहाट"** सोमा प्रान्त में हुआ उसका विषय था **"ईश्वर साकार है या निराकार?"** इस शास्त्रार्थ में भी मुझको भारी विजय प्राप्त हुई, ये दोनों शास्त्रार्थ **"निर्णय के तट पर प्रथम भाग"** (शास्त्रार्थ संग्रह) पुस्तक में मेरे अन्य बहुत से शास्त्रार्थों के साथ छप चुके हैं, इनको अवश्य पढ़िये।

मेरे प्रचार की शैली और उसका प्रभाव—

मेरा व्याख्यान किस समय हो? किसके आगे या किसविद्वान के पीछे हो? अथवा बड़ी भारी उपस्थिति हो तभी मेरा व्याख्यान हो ऐसी इच्छा और ऐसा आग्रह मैंने कभी नहीं रक्खा, मेरा व्याख्यान न हो तो इस पर मैं रुष्ट हो जाऊँ, यह भाव भी मेरा कभी नहीं रहा। सभा की ओर से प्रचार करने के लिए कहीं भेजा जाय और जहां जिनके पास हमको भेजा गया उन्होंने प्रचार का प्रबन्ध न किया तो देश, काल और सुविधानुसार स्वयं भी प्रचार कर लिया जाय यह भावना भी मेरी रहती थी, एक बार **"जीरा"** (लुधियाना) में हमको प्रचार के लिए भेजा गया। मेरे साथ श्री महाशय मंगल सैन जी (मथुरा जिला निवासी) थे, एक आर्य समाजी डाक्टर जीरा नगर में थे, हम उनके पास पहुंचे, उन्होंने दोपहर को भोजन तो हमें करा दिया, पर यह कहा कि—यहां जैनियों का गढ़ है और पौराणिकों का भी गढ़ है, इस कारण यहां आर्य समाज का प्रचार नहीं हो सकता है, दोपहर के बाद लगभग ४ बजे मैं श्री महाशय मंगलसेन जी को साथ लेकर जीरा नगर के बाजार में चला गया, श्री मंगलसेन जी मेरे साथ अगाध प्रेम और श्रद्धा रखते थे, और मेरी सदा आज्ञा मानते थे। बीच बाजार के चौक में एक ऊंचे चोतरे पर खड़े होकर श्री मंगलसेन जी ने बिना बाजा आदि के दो-तीन गीत गाये, और मैंने एक घण्टा व्याख्यान दिया, काफी भीड़ हो गई थी, प्रचार सुन कर लोग बहुत प्रसन्न हुए, किसी ने कहा आप मेरे बगीचे में ठहरिये, किसी ने कहा मेरी कोठी पर ठहरिये, भोजन मेरे यहां करिये, प्रचार की चर्चा सुन कर श्री डाक्टर साहिब भी आ गये और कहने लगे कि—भोजन और निवास मेरे यहां ही होगा, हम वहां कई दिन रहे प्रचार हुआ और आर्य समाज की स्थापना भी हुई, **"निक्की सुइयां"** नामक जिला अमृतसर में एक ग्राम है वहां हमको प्रचारार्थ भेजा गया। वहां एक हकीम जी आर्य समाजी थे, शायद उनका नाम श्री हकीम चुन्नीलाल जी था, उनके घर पर मैं और मेरे साथ भजनोपदेशक श्री महाशय भक्तराम जी (महतपुर जिला जालन्धर निवासी) थे, वह मुझसे आयु में लगभग पन्द्रह वर्ष बड़े थे, मैं युवक था। वह प्रोढ़ थे, वह मेरा बड़ा सम्मान करते थे। हम दोनों जहां कहीं भी जाते थे प्रायः लोग उनको बड़े पण्डित जी कहते थे, और मुझको छोटे पण्डित जी कहा करते थे, मैं इस प्रकार के बोलने को कभी बुरा नहीं मानता था, इस भावना का भी श्री भक्तराम जी पर बड़ा प्रभाव था, वह राग गाने के शौकीन थे और मैं राग सुनने का प्रेमी था, इस प्रकार मेरा और उनका जोड़ा अच्छा रहता था। निक्की सुइयां वाले श्री हकीम जी ने कहा कि यहाँ तो कोई प्रचार सुनता नहीं है। मैंने कहा, हकीम जी सुना तो हम लेंगे, तो भी उन्होंने मेरी छोटी आयु देखकर कहा—यहां प्रचार हो नहीं सकेगा। हमने कहा कि—हम कल प्रातः चले जायेंगे प्रातः काल हवन हम यहीं करेंगे और उसके बाद हम चले जायेंगे, (मैं हवन का सामान सदा साथ रखता था तथा नित्य ही हवन करता था) हम दोनों

प्रातः काल होते ही जंगल में शोचादि से निवृत होने के लिए गये वहीं जंगल में एक कुए पर स्नान किया, हम दोनों वापिस हकीम जी के घर को जा रहे थे, मार्ग में उस नगर का एक छोटा सा बाजार आ गया, उन दिनों बाजार दिन निकलते ही खुल जाते थे, उस समय तक बाजार खुल गया गया था, उस बाजार में एक छोटा सा चौराहा भी था, मेंने बड़े पण्डित जी से कहा कि—पण्डित जी! मैं यहां व्याख्यान दूंगा, आप मेरे सामने खड़े होकर सुनिये, वह भी बड़े विनोद प्रिय थे। मेरे सामने खड़े हो गये, और कहने लगे कि—व्याख्यान दीजिये में सुनूंगा! मैंने एक वेद मन्त्र और कुछ श्लोक गाकर वोले और फिर अकबर-बीरबल की एक कहानी से व्याख्यान आरम्भ कर दिया कि--बादशाह अकबर, बीरबल का बहुत मान करते थे इस पर अन्य दरबारी लोग क्षुब्ध होते थे, एक दिन कुछ दरबारियों ने बड़ा साहस करके बादशाह अकबर से पूछा कि जहाँपनाह! आप बीरबल का हम सबसे अधिक सम्मान क्यों करते हैं? उसमें ऐसी क्या विशेषता है? बादशाह ने कहा—वह बहुत अक्लमन्द है, दरबारियों ने कहा—इसका हमको प्रमाण मिलना चाहिये। बादशाह ने सबके सामने अपनी छड़ी से एक रेखा एक गज लम्बी खींच दी, और सबसे कहा कि—इस रेखा को हाथ, छड़ी आदि कुछ बिना लगाये छोटी करो। सब दरबारियों ने कहा—इसको बिना छुए कोई भी इसे छोटी या बड़ी नहीं कर सकता, (मैंने भी बोलने के साथ-साथ अपनी छड़ी से अपने सामने भूमि पर एक गज की रेखा खींच दी) बहुत से लोग दर्शक के रूप में जमा हो गये, मैं आगे कहानी को बढ़ाता गया कि—जब सभी दरबारियों ने रेखा को छोटी करने से इन्कार कर दिया तब बीरबल को बुलाया गया और बीरबल को कहा गया कि तुम बिना हाथ या छड़ी लगाये इस रेखा को छोटी कर सको तो छोटी कर दो। बीरबल ने कहा—मैं अभी इसको छोटी करके दिखाता हूं। उसने उस रेखा को तो हाथ न लगाया न ही छड़ी लगाई, उससे एक हाथ की दूरी पर छड़ी से दो गज की रेखा खींच दी और कहा देखिये बादशाह सलामत! आपकी रेखा छोटी हो गयी, (मैंने भी अपनी छड़ी से बड़ी रेखा बना कर दिखा दी तो लोग बहुत प्रभावित हुए।) यहां तक लोगों की अच्छी खासी भीड़ जमा हो गयीं, तब मेंने गीता का एक श्लोक बोला—**"देवी संपद् विमोक्षाय, निबन्धायासुरीमता"**(गीता १६-५) मैंने यह श्लोक बोलकर कहा--यदि कोई मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य को छोटा बनाना चाहता है तो उसको छोटा बनाने का एक ढंग यह है कि—उसके धन को चोरों से चुरवा दें, डाकुओं और सहजनों से उसको लुटवा दे, उस पर झूठे मुकदमे चलवा दे, अनेक प्रकारों से उसको हानि पहुंचवाये उसकी झूठी निन्दा करके उसके यश और गौरव को घटाने का भरपूर यत्न करे। यह सब आसुरी व राक्षसी ढंग हैं, नीच, दुष्ट लोग इन उपायों को प्रयोग करते हैं, इनमें सफलता न मिले यह भी सम्भव है। तथा इनमें खतरा भी है, इसका नाम **"आसुरी सम्पद"** है। दूसरा ढंग यह है कि किसी की कुछ भी हानि न पहुंचावे, किसी का कभी अनिष्ट न सोचे, किसी की निन्दा न करे, किसी को छोटा बनाने के लिए यत्न न करे, किन्तु अपने आपको बड़ा बना लेवे, अपने में गुण बढ़ावे आप बड़ा हो जावेगा तो अन्य अपने आप ही छोटे हो जायेंगे इस वृत्ति का नाम **"देवी संपद्"** है। यही उन्नति का सर्वोत्तम उपाय है। इससे अपनी अधिक से अधिक उन्नति होती है, दूसरों की उन्नति में बाधा नहीं पड़ती यदि संसार के सब मनुष्य इसी मार्ग पर चलने लगें तो सारा विश्व सुखों से भरपूर हो जाय। आसुरी मार्ग से अपनी उन्नति तो है ही नहीं, औरों को भी हानि है इस आसुरी मार्ग पर चलने से सारे संसार को दुख ही दुख और हानि ही हानि है। महर्षि दयानन्द जी ने आर्य समाज के दस नियम बनाये उनमें नौवां नियम यह है—**"प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये"** इस प्रकार उस चौक में खड़े-खड़े मैंनेव्याख्यान

दिया और एक सौ से भी अधिक लोगों ने उसको सुना, सबने आग्रह किया कि—आप इस नगर में कुछ दिनों ठहरिये और हम लोगों को इसी प्रकार सन्मार्ग बताइये, भोजन के लिए अनेक व्यक्तियों ने निमन्त्रण पर निमन्त्रण दिये। हम वहां उन लोगों के आग्रह पर ९ दिन लगातार रुके और बड़ी धूम-धाम से प्रचार किया, उस कस्बे का एक मुसलमान युवक तो मेरे व्याख्यानों पर इतना मुग्ध हो गया कि—वह अपने संतरों के बाग में से १५-२० सन्तरे नित्य प्रातः ताजे-ताजे उतार कर दे जाया करता था इसमें उसने उन नौ दिनों में एक दिन भी नागा नहीं की। हम लोग जिस दिन उस गांव(कस्बे) से विदा हुए उस दिन भी मार्ग में खाने के लिए वह सन्तरे दे गया था।

मृत्यु योग—

जिला झेलम में एक **"संघोई"** नामक ग्राम है, श्री लाला दीवान चन्द जी एम० ए० (फिलास्फर) जो कानपुर डी० ए० वी० कालेज के प्रिंसिपल थे और आगरा विश्वविद्यालय के उपकुलपति (वायसचांसलर) भी रहे वह ग्राम उनका जन्म स्थान था, श्री लाला बृजलाल जी बी० ए० एल० एल० बी०, डी० ए० वी० स्कूलों के इन्सपेक्टर भी उसी ग्राम के थे, श्री प्रिंसिपल साहिब के वह सगे भतीजे थे। उस ग्राम के उत्सव में प्रचार करके मैं और श्री पण्डित गंगा सहाय जी उपदेशक तथा श्री सोहन लाल जी भजनोपदेशक एक घोड़ा साथ लेकर संघोई से झेलम को चले। घोड़े पर हम तीनों का सामान लदा हुआ था तथा श्री सोहनलाल जी उस पर सवार थे, वर्षा होकर चुकी थी, झेलम के मार्ग में एक छोटी सी बरसाती नदी थी जो वर्षा होने पर तीव्र वेग से पहाड़ से झेलम नदी की ओर दौड़ती थी,हमारे मार्ग से एक ओर को ऊंचा पहाड़ था, जिस पर गोरखनाथ जी का टिल्ला था,उस पर उनके सम्प्रदाय की गद्दी थी, उसी पहाड़ में आगे चल कर खिड्डे की सेंधानमक वाली खान थी, मार्ग के दूसरी ओर झेलम नदी लगभग दो फर्लांग पर थी। हमारा मार्ग पहाड़ और नदी के मध्य में था। पहाड पर जब वर्षा हो जाती तब वह नदी दो चार घण्टों तक इतने तीव्र वेग से चलती थी कि—उसमें कोई मनुष्य तो क्या पशु तक भी उसे पार नहीं कर सकते थे। उस नदी का प्रबल वेग देखकर श्री पण्डित गंगासहाय जी और मैं, हम दोनों रुक गये। श्री सोहनलाल जी को भी मैंने रोका कि जल को कुछ कम हो जाने दो तब इस नदी को पार करेंगे।, श्री सोहनलाल जी घोड़े पर सवार थे उन्होंने हमारी बात को नहीं माना,घोड़े सहित नदी में घुस पड़े, और घुसते ही उलट-पलट हो गये, घोड़ा जल के धक्के से गिर गया उसके पांव न जम सके। सामान पानी में गिर गया सन्तरे जो मार्ग में खाने को मिले थे वह सब पानी में बह गये,उस दिन अगर सोहनलाल जी अकेले होते तो अवश्य बह जाते, घोड़े के सहारे सामान और सामान के सहारे सोहनलाल जी जैसे तैसे करके रुके रहे, नदी गहरी नहीं थी, इस दृश्य को देखते ही श्री पण्डित गंगासहाय जी लंगोट बांधते थे, उन्होंने लंगोट के ऊपर से झटपट धोती खोली और उसके एक सिरे में छोटा सा पत्थर लपेटकर पत्थर वाला सिरा सोहनलाल जी की तरफ फेंका और एक सिरा स्वयं पकड़े रक्खा, सोहनलाल जी को कहा गया कि इसे पकड़ कर तुरन्त बाहर आ जाओ, सोहनलाल जो ज्यों त्यों बाहर आये, श्री पण्डित गंगा सहायजी ने मुझको किनारे पर खड़ा करके एकहाथ अपना मुझको पकड़ाया और दूसरे हाथ से घोड़े को खींच लिया, फिर सामान को खींचा, लगभग दो घण्टे हमने नदी के किनारे पर बैठ कर तपस्या की, बहाव उतर जाने पर नदी पार करके झेलम शहर में पहुचे झेलम आर्य समाज के सदस्यों तथा अधिकारियों ने हमारा बहुत स्वागत और सत्कार किया, और बचकर आने पर बहुत-२ बधाइयां दी।

लाहौर में आर्य समाज का प्रचार—

सन् १९१८ ई० में एक अक्तूबर से मैं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा (पंजाब, सिन्ध, बलोचिस्तान, फ्रान्टियर आदि) लाहौर का उपदेशक नियुक्त हुआ था, नवम्बर सन् १९१८ ई० के अन्त में मैंने लाहौर में आर्य समाज के उत्सवों में प्रचार देखा। लाहौर में बड़े-बड़े आर्य समाज दो थे, जिनमें एक तो गुरुकुल विभाग का ज़ो **"आर्य समाज बच्छोवाली"** और एक कालिज विभाग का जो **"अनारकली आर्य समाज"** के नाम से था दोनों के विशाल भवन थे, आर्य समाज अनारकली का भवन कुछ ज्यादा ही विशाल था। दोनों समाजों के उत्सव प्रतिवर्ष नवम्बर मास के अन्तिम सप्ताह में शुक्रवार, शनिवार, और रविवार को ही हुआ करते थे, तिथियां व तारीखें उन दिनों में कोई भी चाहे हों, पर नवम्बर मास के अन्तिम सप्ताह के शुक्र, शनि, रवि, दिवस निश्चित थे, दोनों समाजों के उत्सव इन्हीं निश्चित दिनों में एक ही समय, भिन्न-भिन्न स्थानों में हुआ करते थे, आर्य समाज बच्छोवाली का उत्सव लोहे के तालाब (वाटर वर्क्स) के पास और आर्य समाज अनारकली का उत्सव डी० ए० वी० मिडिल स्कूल में हुआ करता था। पंजाब, सिन्ध, बलोचिस्तान, फ्रान्टियर, जम्मू और कश्मीर इन प्रान्तों के हजारों प्रतिष्ठित आर्य जन इन उत्सवों में सम्मिलित होते थे, उत्तर प्रदेश से भी कुछ आर्यजन इन आर्य समूहोंको देखने जाते थे। आर्य समाज बच्छोवाली के उत्सव में—श्री महात्मा श्रद्धानन्द जी महाराज, श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज, (साधु आश्रम हरदुआगंज जि० अलीगढ़), श्री स्वामी अच्युतानन्द जी महाराज, श्री विशुद्धानन्द जी महाराज, श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज, श्री स्वामी सत्यानन्द जी (कथावाचक **"दयानन्द प्रकाश"** लिखने वाले), श्री आचार्य रामदेव जी, श्री महाशय कृष्ण जी आदि-आदि महानुभावों के व्याख्यान होते थे। भजनोपदेशकों में उत्तर प्रदेश से दो भजनोपदेशक प्रायः अवश्य जाते थे, श्री ठाकुर नत्थासिंह जी ग्राम (मानकपुर "उटरावली") जिला बुलन्दशहर के रहने वाले थे, बहुत अच्छा गाते थे उनका बहुत अच्छा प्रभाव होता था, प्रायः सारे देश में उनकी माँग थी, बहुत ही सज्जन पुरुष थे, दूसरे महाशय डोरी लाल जी बरेली निवासी थे, बहुत मधुर गाते थे, राग विद्या भी अच्छी जानते थे, हारमोनियम अच्छा बजाते ही थे, साथ ही तबला बजाने में भी निपुण थे। आर्य समाज अनारकली का वार्षिकोत्सव डी० ए० वी० मिडिल स्कूल के अहाते में हुआ करता था। उस उत्सव में श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज प्रतिवर्ष आते थे, श्री महात्मा हंसराज जी, श्री प्रिंसिपल साईंदास जी एम० ए० (प्रिंसिपल डी० ए० वी० कालेज लाहौर), श्री लाला दीवान चन्द जी एम० ए० प्रिंसिपल डी० ए० वी० कानपुर श्री महता रामचन्द्र जी शास्त्री, श्री पण्डित भगवद्दत जी रिसर्च स्कालर, श्री पण्डित रामगोपाल जी शास्त्री, (जो बाद में वैद्य बनकर आर्य समाज करौल बाग दिल्ली में रहे थे), श्री पण्डित सन्तराम जी वैद्य मोगा वाले, श्री पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी श्री पण्डित शिवचरण जी गायनाचार्य, श्री लाला हरिचन्द्र जी भजनोपदेशक, श्री लाला सोहन लाल जी भजनोपदेशक (इनके व्याख्यान व भजन दोनों होते थे), **"श्री कुंवर सुखलाल जी आर्य मुसाफिर"** इनका नाम मैंने उपदेशकों एवं भजनोपदेशकों दोनों से ही अलग रख लिया, क्योंकि ये दोनों से ही विलक्षण थे, इनका प्रभाव भी विलक्षण था। वह गाते भी अद्भुत थे, और बोलने में भी अद्भुत थे, इनके प्रचार में विद्वान और अविद्वान सभी सामान रूप से भाग लेते थे, दोनों उत्सवों में से नर-नारी इतनी बड़ी संख्या में उनका प्रचार सुनने को आते थे कि, डी० ए० वी० मिडिल स्कूलों के प्रांगण में भीड़ समाती नहीं थी कई बार भीड़ नियन्त्रण से बाहर हो जाने से इनका कार्य क्रम बन्द

करना पड़ता था, फिर दूसरे दिन डी० ए० वी० हाई स्कूल के विशाल अहाते में उनका प्रोग्राम रक्खा जाता था। श्री महात्मा हंसराज जी ने आर्य समाज अनारकली के अधिकारियों को बुलाकर यह कहा कि कुंवर सुखलाल जी का प्रोगाम हाई स्कूल के खुले मैदान में ही रक्खा करो। दिन भर सारा उत्सव मिडिल स्कूल के अहाते में होता था, और केवल कुंवर सुखलाल जी का कार्यक्रम रात्रि को हाई स्कूल के खुले मैदान में होता था। यहां भी कभी-कभी भीड़ नियन्त्रण के बाहर हो जाती थी। एक बार महात्मा जी ने कहा कि—कुंवर सुखलाल को बुलाना हो तो शहर से बाहर कहीं जहाँ ४-५ मील लम्बी चौड़ी जगह खाली हो उसे तैयार करा कर रखा जाये। इस बात से आप कुंवर साहब की लोकप्रियता का अनुमान लगा सकते हैं।

एक तीसरा उत्सव—

बच्छोवाली समाज में दो पार्टियाँ हो गयी थीं, एक पार्टी राय साहिब श्री लाला ठाकुरदत्त जी धवन (रिटायर्ड जज) की, और दूसरी पार्टी श्री महाशय कृष्ण जी की! आर्य समाज बच्छोवाली के अधिकारियों के चुनाव में राय साहिब लाला ठाकुर दत्त जी धवन प्रधान चुने गये, श्री महाशय कृष्ण जी ने इस चुनाव को अवैध माना, उन्होंने दूसरा निर्वाचन करा लिया, झगड़ा यहाँ तक बढ़ गया कि मुकदमे तक नौबत पहुंची, आर्य समाज बच्छोवाली में पुलिस का ताला लग गया। श्री रायसहाय ठाकुर दत्त जी धवन ने झगड़ा समाप्त करने के लिये बच्छोवाली समाज को छोड़ कर साप्ताहिक सत्संग कहाँ करते थे? इसका मुझको पता नही पर वार्षिकोत्सव अपने समाज का वह उन्हीं तिथियों में जिन तिथियों में आर्य समाज अनारकली तथा आर्य समाज बच्छोवाली के होते थे मनाने लगे उनका वार्षिकोत्सव शाहआलमी दरवाजे के अन्दर **"नकीबों की हवेली के मैदान"** में होता था। उस उत्सव में व्याख्यान देने के लिए सन् १६१८ के नवम्बर मास में - श्री पण्डित मुरारिलाल जी शर्मा, संचालक गुरुकुल सिकन्द्राबाद (बुलन्दशहर) श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर (आगरा) श्री ठाकुर इन्द्र वर्मा जी "**न्होटी**" (अलीगढ़) श्री पण्डित बिहारी लाल जी शास्त्री (बरेली), आदि—आये थे। में तीनों उत्सवों में जाता था, तीनों उत्सवों के कार्य-क्रम मैंने ले रखे थे। जो व्याख्यान सुनना मुझको अभीष्ट होता था उसको सुन लेता था।

एक विवाद—

पार्लियामैण्ट के सदस्य श्री डाक्टर हरिसिंह गौड़ ने पार्लियामैण्ट में एक बिल उपस्थित किया उसका नाम था—"**इण्टर नेशनल मैरिज बिल**" (अन्तर्जातीय विवाह का बिल) इस पर आर्य समाज में दो मत हो गये, श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज और श्री महाशय कृष्ण ज आदि इस बिल के पक्ष में थे, तथा श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर और महाविद्यालय ज्वालापुर का पण्डित मण्डल इस बिल के विरुद्ध था। महाशय कृष्ण जी अपने साप्ताहिक उर्दू पत्र "**प्रकाश**" में इसके पक्ष में लेख लिखते थे और इसके विरोधियों को चैलेञ्ज करते थे। श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी आर्य मुसाफिर साप्ताहिक "**मुसाफिर**" पत्र में इस बिल के विरुद्ध लिखते और इसके पक्ष वालों को चैलेञ्ज करते थे, श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी और श्री महाशय कृष्ण जी का शास्त्रार्थ कहां हो यह निर्णय नहीं हो पा रहा था। श्री महाशय जी के पक्ष वाले कहते थे कि—शास्त्रार्थ गुरुकुल कांगड़ी में हो और डाक्टर जी के पक्ष वाले महाविद्यालय ज्वालापुर में चाहते थे, श्री महाशय जी शास्त्रार्थ करने में समर्थ नहीं थे और श्री

डाक्टर जी इस मैदान के पूरे पहलवान थे । श्री महाशय जी की ओर से टालमटोल होती देख श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी लाहौर में ही आ धमके और **"दरे दौलते पर हाजिरी"** ऐसा शीर्षक देकर बड़े-बड़े विज्ञापन लाहौर की दीवारों और दरवाजों पर लगवा दिये । उस विज्ञापन में लिखा था कि— **"अन्तर्जातीय विवाह"** विषय पर शास्त्रार्थ करने के लिए मैं श्री महाशय कृष्ण जी के घर लाहौर ही में आ गया हूं," वह स्थान और समय का निश्चय करके यहीं शास्त्रार्थ कर लें । श्री महाशय कृष्ण जी की ओर से इसका कोई उत्तर नहीं दिया गया । केदारनाथ पाण्डेय (जो उस समय राम उदार साधु कहलाते थे, और पीछे राहुल साँकृत्यायन बन गये) उन दिनों लाहौर में ही थे, उन्होंने एक विज्ञापन छपवा कर लाहौर में बंटवाया कि--**"अन्तर्जातीय विवाह"** विषय पर श्री डाक्टर जी के साथ शास्त्रार्थ करने के लिए मैं उद्यत हूं मैंने इस विज्ञापन को पढ़ते ही अपनी ओर से विज्ञापन छपवा कर बंटवा दिया कि— श्री रामउदार जी साधु के साथ **"अन्तर्जातीय विवाह"** विषय पर शास्त्रार्थ मैं करूँगा । राहुल सांकृत्यायन अन्त तक लेखनी के ही धनी रहें । वह जानते थे कि—मौखिक शास्त्रार्थ में, मैं इससे पार न पा सकूंगा । अतः वह अनारकली आर्य समाज के भवन मैं मुझसे मिलने को आये और मुझसे कहने लगे कि—**"आप और मैं तो भाई-भाई हैं"** (हम दोनों मुसाफिर विद्यालय आगरा में पढ़े थे) आप मुझसे शास्त्रार्थ न करें, मैंने कहा श्री डाक्टर लक्ष्मीदत्त जी यदि आपके गुरु नहीं हैं तो **"गुरु पुत्र"** तो हैं आप उनसे शास्त्रार्थ करने को क्यों उद्यत हुए ? मेरे ऐसा कहने पर वह बहुत लज्जित हुए । श्री साधु महेश प्रसाद जी जो लाहौर में मौलवी फाजिल की परीक्षा देने के लिए रहते थे; उन्होंने उनको बहुत फटकारा और मेरी साधु जी ने बहुत प्रशंसा की, परिणाम स्वरूप शास्त्रार्थ कोई नहीं हुआ । सन् १९१९ ई० के नवम्बर मास के अन्त में शुक्रवार, शनिवार, और रविवार को फिर तीनों उत्सव तीन स्थानों में हुए । धवन पार्टी के उत्सव में श्री पण्डित तारादत्त जी बी० ए०, एल० एल० बी०, आगरा से आये हुए थे और श्री पण्डित मुरारिलाल जी शर्मा सिकन्द्राबाद (बुलन्दशहर) से । शनिवार को तीन बजे से पांच बजे तक लोहे के तालाब पर बच्छोवाली समाज के उत्सव में **"अन्तर्जातीय विवाह"** विषय पर कान्फ्रैंस श्री महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के सभापतित्व में थी, वहां जिसको समझा जाता था कि—यह उस बिल के पक्ष में बोलेगा उसको बोलने के लिए समय दिया जाता था और जिसको यह समझा जाता था कि—यह उसके विरुद्ध बोलेगा उसकी पर्ची दबा दी जाती थी, उसको बोलने का समय नहीं दिया जाता था । उसी दिन और उसी समय में धवन पार्टी के उत्सव में इसी विषय पर विचार करने के लिए श्री पण्डित तारादत्त जी एडवोकेट (आगरा) के सभापतित्व में कान्फ्रैंस हो रही थी । यहां खुली छूट थी कोई उस बिल के पक्ष में बोले चाहे विपक्ष में ! पक्ष में बोलने वाले का समाधान किया जाता था । गुरुकुल कांगड़ी के एक स्नातक एम० ए० भी वहाँ विराजमान थे, उन्होंने कहा कि—यह बिल आर्य समाज के सिद्धान्तानुकूल है, क्योंकि—आर्य समाज जन्म से वर्ण व्यवस्था नहीं मानता है, इस बिल के पास हो जाने पर किसी वर्ण में जन्मी लड़की का विवाह किसी भी वर्ण में जन्में लड़के के साथ हो सकेगा । मैं (अमर सिंह आर्य पथिक) भी वहां मौजूद था, मैंने कहा—यह बिल पास हो जायगा तो आर्य समाज की मानी हुई गुण कर्म स्वभावानुसार वर्ण व्यवस्था के यह सर्वथा विरुद्ध पड़ेगा, मनु जी महाराज ने कहा है—**"उद्वहेत् द्विजो भार्या सवर्णां लक्षणान्तिताम्"** कि अपनी सवर्णा से ही विवाह किया जाय, गुण कर्म स्वभाव से जो कन्या ब्राह्मणी है उसका विवाह गुण कर्म स्वभाव वाले ब्राह्मण के साथ ही होना चाहिये । हमारे आचार्य गण लड़के को गुण कर्म स्वभावानुसार शूद्र वर्ण देंगे वह गुण कर्म स्वभाव की ब्राह्मण कन्या से विवाह करने में

इस बिल के द्वारा स्वतन्त्र होगा। इस बिल में कोई धारा ऐसी नहीं हैं जो सवर्णा कन्या के साथ विवाह का नियम बांधता हो इसलिए यह आर्य समाज के सिद्धान्त से सर्वथा विरुद्ध है। श्री मुरारिलाल जी शर्मा ने कहा कि—यह बिल गुण कर्म-स्वभाव की वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध विवाह करने की छूट देता है और वैसे तो इस बिल का नाम ही गलत है अन्तर्जातीय विवाह तो तब होगा जब मनुष्य अपना विवाह भैंस या गधी के साथ करेगा। मनुष्य का विवाह मानुषी कन्या के साथ होगा तो यह सजातीय विवाह होगा। अन्तर्जातीय कैसा ? इस पर इतनी हंसी पड़ी कि लोग हंस-हंस कर लोट पोट हो गये, बड़ी देर में हँसी रुकी, उसी दिन लोहे के तालाब पर बिल के पक्ष में प्रस्ताव पास हुआ और नकीबों की हवेली पर बिल के विरुद्ध प्रस्ताव पास हुआ ॥

आर्य प्रादेशिक सभा से सम्बन्ध विच्छेद—

प्रादेशिक सभा के प्रायः सभी उपदेशक और भजनोपदेशक आर्य समाज होशियारपुर और विशेष करके श्री लाला देवीचन्द जी एम० ए० के व्यवहार से असंतुष्ट तथा रुष्ट थे, इन सबका कहना था कि—यदि सभा हमको होशियारपुर जाने के लिए विवश करेगी तो हम सब सभा को छोड़ देंगे, दो वर्ष से किसी को वेतन वृद्धि भी नहीं हुई थी, सबकी ओर से वेतन वृद्धि के लिए भी एक ही प्रार्थना पत्र सांझा दिया गया। सभा के अधिकारियों में से किन्हीं ने मौखिक यह कह दिया कि—उपदेशक कम होंगे तभी वेतन वृद्धि हो सकती है और होशियारपुर भी जाना ही पड़ेगा। इन दोनों बातों को सुनकर उपदेशक मण्डल की विशेष बैठक में त्यागपत्र देने का सर्व सम्मति से निश्चय हो गया। त्याग-पत्र सांझा लिख कर जब हस्ताक्षर कराये जाने लगे तो हस्ताक्षर केवल सात व्यक्तियों के हुए जो इस प्रकार थे,—(१) श्री पण्डित गंगा सहाय जी उपदेशक, (२) श्री पण्डित हरिदेव जी, (३) श्री पण्डित मुरारि लाल जी आर्य पथिक, (४) श्री पण्डित रामशरण जी उपदेशक, (५) मैं (अमरसिंह आर्य पथिक), (६) श्री महाशय मंगल सैन जी भजनोपदेशक, (७) श्री महाशय गणेशदत्त जी भज-नोपदेशक। इन सातों में, मैं एक ऐसा था जिसको न होशियारपुर जाने में कोई आपत्ति थी और न वेतन वृद्धि की मेरी मांग थी, फिर भी भाइयों का साथ देना है उस भावना से मैंने भी हस्ताक्षर कर दिये थे, एक बुरी बात यहां यह हो गयी थी कि त्याग पत्र पए हस्ताक्षर न करने वाले सब पंजाबी थे, और हस्ताक्षर करने वाले सब उत्तर-प्रदेश के थे, श्री पण्डित गंगा सहाय जी जिला आगरा के थे, और मुसाफिर मिशन आगरा जिसका "**आर्य मुसाफिर विद्यालय**" आगरा में था उसके वर्षों तक कर्मठ उपदेशक रहे थे श्री स्वामी दर्शनानन्द जी के शिष्य थे, मैं उनको अपना बड़ा भाई मानता था, श्री पण्डित मुरारिलाल जी आर्य पथिक काशी के रहने वाले थे, और आर्य मुसाफिर विद्यालय के स्नातक होने के नाते मेरे भाई थे, क्योंकि मैं भी उसी विद्यालय का हूं। उत्तर प्रदेश और पंजाब का भेद पड़ना सर्व प्रकार आवांछनीय था, और मैं कभीं भी इसको पसन्द नहीं करता था, पर मुझको इन दोनों का साथ देना आवश्यक जंचा, मैंने बड़े धर्म भाई श्री साधु महेश प्रसाद जी मौलवी फ़ाजिल से भी त्याग-पत्र पर हस्ताक्षर करने की आज्ञा ले ली थी। श्री महात्मा हंसराज जी त्याग-पत्र देने वाले सातों व्यक्तियों में से छः व्यक्तियों के त्याग-पत्र स्वीकार करना चाहते थे। बस केवल मुझको रखना चाहते थे, मुझको उन्होंने स्वयं भी बहुत समझाया, और अन्यों द्वारा भी मनाने का यत्न किया, पर मैं श्री महात्मा जी का सम्मान करता हुआ भी अपने भाइयों का साथ नहीं छोड़ सकता

था। मुझको प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा से भी कोई शिकायत नहीं थी, पर ! **"बन्धनानि खलु सन्ति बहूनि, प्रेमरज्जुकृत बन्धन मन्यत्"** अर्थात् बन्धन तो जगत में बहुत हैं, पर प्रेम की रस्सी का बन्धन कुछ और ही है अर्थात् विशेष ही है, श्री पण्डित गंगा सहाय जी, श्री पण्डित मुरारिलालजी, तथा महाशय मंगलसेन जी भजनोपदेशक इन तीनों के साथ मेरा विशेष प्रेम था। मैं इनका साथ न छोड़ सका और हम सातों व्यक्ति त्याग पत्र स्वीकार होने से पहिले ही प्रादेशिक सभा के कार्य को छोड़ कर बैठ गये। श्री पण्डित हरिदेव जी, मारवाड़ी सभा बम्बई में उपदेशक हो गये। मेरा इनके साथ परिचय भी नहीं था। श्री पण्डित मुरारिलाल जी जिला काशी के थे, वह वहां ही चले गये, और वहां औषधालय खोल कर वैद्य बन गये, पण्डित रामशरण जी और महाशय गणेशदत्त जी भजनीक दोनों अपने-अपने घर चले गये, पीछे पौराणिकों में मिल गये, कुछ समय पश्चात वहां से भी चले गये, **"न इधर के रहे, न उधर के रहे"** महाशय मंगल सैन जी किसी मिल में नौकर हो गये, मुझको मिलने के लिए बाद में भी कई बार आते रहे। पक्के आर्य समाजी रहे, मिल में भी आर्य समाज का बहुत काम करते रहे। पीछे उनकी मृत्यु हो गयी। त्यागपत्र देने वाले हम लोग सात व्यक्ति थे, उनमें से हम दो व्यक्ति लाहौर में ही रहे, श्री पण्डित गंगा सहाय जी तथा में (अमरसिंह आर्य पथिक) हम दोनों ने कुछ और साथी बना कर लाहौर में ही "**दर्शनानन्द उपदेशक मण्डल**" सन् १९२० ई० में बना लिया, उसका कार्यालय मुहल्ला-किला गूजरसिंह में था। हम दो उपदेशक थे और दो भजनोपदेशक हमने और रख लिये थे एक जिला मुरादाबाद के महाशय नारायणदत्त जी थे और दूसरे जिला आजमगढ़ के महाशय पहाड़ीलाल जी थे, हमने उनका नाम महाशय बिहारीलाल जी रख दिया। उनकी आवाज अच्छी थी, भजन गाना, और कुछ राग भी मैंने उनको सिखला दिये, वह अच्छे भजनीक बन गये। दर्शनानन्द उपदेशक मण्डल का प्रथम वार्षिकोत्सव हमने बहुत धूमधाम के साथ मार्च सन् १९२० ई० में मौहल्ले किला गूजरसिंह में ही किया, हमने उसमें व्याख्यानदाता, गुरुकुल व कालिज विभाग दोनों के ही विद्वानों को बुलाया। हमारे उत्सव में श्री पण्डित बुद्ध देव जी विद्यालंकार, श्री पण्डित लोक नाथ जी तर्क वाचस्पति, श्री आचार्य रामदेव जी, ये गुरुकुल विभाग से लिये, और श्री पण्डित राजाराम जी शास्त्री, श्री पण्डित राम गोपालजी शास्त्री, श्री पण्डित भगवदत्त जी रिसर्च स्कालर, श्री पण्डित भक्त राम जी शास्त्री वेद तीर्थ, कालिज विभाग से बुलाये। श्री पण्डित बुद्ध देव जी, जो पीछे **"मीरपुरी"** कहलाये उनके भी हमने दो उपदेश कराये, उस समय तक वह बिल्कुल भी प्रसिद्ध नहीं थे। राय साहिब लाला ठाकुर दत्त जी धवन बहुत स्वाध्यायशील थे उनका भी एक उपदेश प्रातःकाल हुआ उन्होंने ऋग्वेद मण्डल १० के सूक्त ११७ के पूरे नों मंत्रों की संक्षिप्त व्याख्या की, मुझको वह बहुत ही अच्छी लगी। मैं राय साहिब के घर पर उन मन्त्रों की व्याख्या दोबारा सुनने के लिए गया। उन्होंने बड़े प्रेम से मुझे सम्मानपूर्वक बिठाकर ९ मन्त्रों के पूरे सूक्त की व्याख्या पुनः सुनाई। मुझको पूरी व्याख्या बिना लिखे याद हो गई, और मैंने उस सूक्त के ९ मन्त्रों पर पूरे ९ व्याख्यान दिये।

दर्शनानन्द उपदेशक विद्यालय—

"दर्शनानन्द उपदेशक मण्डल" के प्रथम उत्सव के साथ ही हमने "दर्शनानन्द उपदेशक विद्यालय" खोल दिया, उसमें दस विद्यार्थी रख लिये, मुझे उस विद्यालय का आचाय बना दिया गया। एक मकान उस विद्यालय के लिए किराये पर ले लिया गया। लाहौर नगर में से थालियां, कटोरियां, लोटे, गिलास आदि सब बर्तन विद्यार्थियों के लिए आ गये, कपड़े भी आ गये, आटा इतना आने लगा कि—

आवश्यकता से भी अधिक, परिणामस्वरूप विद्यालय अच्छे ढंग से चलने लगा। यहीं रहते हुए मैंने अनेकों शास्त्रार्थ किये, जिनमें अद्‌भुत विजय प्राप्त की, "**चूनियाँ**" एक जगह थी जो जिला लाहौर में ही पड़ती थी, वहां की समाज के मन्त्री श्री महाशय चुन्नीलाल जी और प्रधान श्री लाला बरक़त राम जी वकील थे। मैंने वहां भी शास्त्रार्थ किया, जिसका पूर्ण विवरण "**निर्णय के तट पर**—भाग २" में प्रकाशित हो चुका है, जैसे कर्मठ व्यक्ति इस चूनियां समाज के अधिकारी थे, ऐसे कम ही देखने को मिलते हैं, उनकी जितनी प्रशंसा की जावे थोड़ी है। मैंने उनके बारे में उस शास्त्रार्थ के अन्त में कुछ परिचय दिया है, वहां देखें और शिक्षा ग्रहण करें। कुछ समय बाद ही मुझे फिर महात्मा जी ने सभा में ही बुला लिया, मैं पुनः वहां उपदेशक रूप में प्रचार करने लगा। फिर स्थिति वश में होशियारपुर में आ गया, वहां पर श्री लाला देवीचन्द जी द्वारा खोला हुआ पुरोहित विद्यालय था, मुझे १९२७ ई० में उसका आचार्य बना दिया गया। मेरा संक्षिप्त जीवन मेरे अभिनन्दन ग्रंथ जो मेरे शिष्य श्री ठा० विक्रम सिंह एम० ए० ने छपाया है, उसके अन्दर है, अगर में विस्तार करूँ तो यह जीवन चरित्र ही अपने आप में एक विशाल ग्रन्थ बन जायेगा। अतः संक्षेप रूप में इतना ही निवेदन करता हूं कि—मैंने एक शास्त्रार्थ में भाग लिया जो लाहौर में १९३१ ई० में माननीय महात्मा हंसराज जी की अध्यक्षता में हुआ था, जिसका विषय था "**वेद में इतिहास है या नहीं ?**" यह शास्त्रार्थ पण्डित विश्वबन्धु जी के साथ हुआ था, इसमें अनेकों विद्वानों ने भाग लिया जिनमें मैं भी एक था। इसका विवरण रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित भी हो चुका है। परन्तु वह विवरण पूरा नहीं है, मैं उसे पूरा लिखकर तैयार करूँगा* वह बड़े काम की चीज है, वह भी इस शास्त्रार्थ संग्रह की शृङ्खला में छपेगा। सन् १९३९ ई० में हैदराबाद में निज़ाम के विरुद्ध सत्याग्रह किया—जिसने आर्य समाज के प्रचार पर प्रतिबन्ध लगा दिया था, फलस्वरूप साढ़े चार माह कारावास भी भुगती, इस सत्याग्रह में जब मैं जत्था लेकर हैदराबाद गया तो मैंने एक नज़म बनाई थी जो इस प्रकार थी—

कायम "निजाम" रह चुका हो चुकी हुक्मरानियां। जुल्मो सितम बिला वजह मिटने की है निशानियां॥
मेरा कहा गलत ही सही, फिर भी ये बात ठीक है। जुल्मों सितम से मिट गई, राजों की राजधानियां॥
बूढ़ों ने बढ़ के धर्म पे, कुर्बां बढ़ापा कर दिया। आयेंगी काम कब कहो, चढ़ती हुई जवानियां॥
ये तो बता दो बात वह क्या थी जो गढ़ चित्तौड़ में। जिन्दा चिता में जल गई चौदह हजार रानियां॥
जीना उन्हीं का ठीक है, मरना उन्हीं का खब है। करते हैं धर्म के लिए कुर्बां जो जिन्दगानियां॥
जग में रहेगी आर्यो, आपकी "अमर" कहानियां। जड़ से मिटेगी एक दिन जालिम की सितमरानियां॥

इसे गाते हुए मैं अपने जत्थे के साथ हैदराबाद तक गया, लोग बार-बार इसको गाने का

टिप्पणी—

*इस शास्त्रार्थ की मूल कापी में स्वामी जी महाराज जैसा संशोधन करना चाहते थे, वह काफी कुछ कर दिया था, परन्तु पूर्ण रूपेण पूरा नहीं कर पाये थे, इसी बीच रुग्ण हो गये, और ऐसे रुग्ण हुए कि भगवान को प्यारे हो गये। अतः अब जिस स्थिति में वह सामग्री है उसी स्थिति में उसे "निर्णय के तट पर" ग्रन्थ के चौथे भाग में प्रकाशित किया जावेगा।

"सम्पादक"

आग्रह करते थे तथा स्वयं भी गाते थे। इसके बाद सन् १९४४ ई० में मोहन आश्रम हरिद्वार में आर्योपदेशक विद्यालय का आचार्य बना। देश विभाजन के बाद सभा की सेवा से मुक्त हो गया, और सन् १९५१ ई० में अपने जन्म स्थान ग्राम अरनियां जिला बुलन्दशहर में ही जी० टी० रोड पर स्थित एक वेद विद्यालय खोल कर उसमें उपदेशक बनाने का कार्य आरम्भ कर दिया, और स्वतन्त्र रूप से समाज का प्रचार व प्रसार करने लगा। इस विद्यालय के बड़े-बड़े उत्सव हुए जिसमें उच्च कोटि के विद्वान भाग लेते थे, इस विद्यालय को सफलता पूर्वक सात वर्ष तक चलाया तत्पश्चात् सन् १९५८ ई० में कलकत्ता आर्य समाज के अधिकारियों के विशेष अनुग्रह पर वहां की समाज का पुरोहित पद ग्रहण किया, पौरोहित्य कार्य करने का यह अवसर मेरे जीवन का प्रथम और अन्तिम अवसर था, इस पद पर रहते हुए मैंने वहां "अमर औषधालय" की स्थापना की जो आज भी बड़ी सफलता के साथ चल रहा है। जिससे प्रतिदिन सैकड़ों रोगी उससे लाभ उठा रहे हैं। चार वर्ष लगातार कलकत्ता रहा, इसके बाद पुरोहित पद छोड़कर सन् १९६१ ई० में दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार में अध्यापन कार्य किया, वहां उपदेशक तैयार किये, पश्चात् १९६२ ई० में स्वतन्त्र रूप से आर्य समाज मन्दिर हापुड़ में स्वयं का विद्यालय खोल कर उपदेशक तैयार किये, परन्तु यह विद्यालय ज्यादा समय चल नहीं पाया, पश्चात् सन् १९६५ ई० में सन्यास आश्रम—गाजियाबाद में स्वामी विज्ञानानन्द जी के विशेष अनुग्रह पर आकर वेद पथ (मासिक) का प्रकाशन एवं सम्पादन कार्य आरम्भ किया, इस पत्र ने सारे देश में अच्छी ख्याति प्राप्त की, इस पत्र में बहुत ही खोज पूर्ण लेख छपने के कारण यह मासिक पत्र अत्यन्त लोकप्रिय बन गया था। यह क्रम भी ज्यादा दिन नहीं चल सका क्योंकि—

डेमोक्रेसी में "अमर" सबका एक ही रेट।
वोट गिने जाते यहां नहीं क्वालिटी ना वेट॥

वही स्थिति मेरे सामने आई, अन्त में मैंने सन् १९६७ ई० में आर्य वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर (हरिद्वार) में श्री स्वामी विवेकानन्द जी सरस्वती के कर कमलों द्वारा सन्यास ग्रहण किया और स्वतन्त्र रूप से वैदिक धर्म का प्रचार एवं प्रसार करना आरम्भ कर दिया। परन्तु मेरे लिए एक समस्या बन गई थी कि—"मुझे इस समय आखों में मोतियाँ उतर आया था" जिसके कारण मैं अकेला कहीं भी जाने आने में असमर्थ हो गया था। उस समय मेरे पास दो विद्यार्थी थे (१) श्री वीरपाल जी विद्यालंकार, (२) श्री विजयपाल जी, इसी बीच मेरे पास श्री लाजपत राय जी भी दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय से उपदेशक बनने हेतु आ गये थे। और वह भी मेरे पास रह कर उपदेशक बनने की तैयारी करने लगे।

नोट—

केवल यहीं तक यह विवरण पूज्य स्वामी जी ने लिखवाया था, आगे का विवरण उनकी मृत्योपरान्त मैंने जो उनके जीवन काल में स्वयं अपनी आंखों से देखा उसे बहुत ही संक्षेप में यहां लिखता हूँ। आप भी पढ़िये।

"लाजपत राय अग्रवाल"

मैं जिस समय पूज्य स्वामी जी महाराज के पास पहुंचा उस समय मेरे पीछे सी० आई० डी०

थी, क्योंकि मैंने दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय में रहते हुए उस समय देश की प्रधान मन्त्री श्री मती इन्द्रा गांधी जी को एक पत्र लिख दिया था जिसमें उनको देश में व्याप्त भ्रष्टाचार का वर्णन करते हुए कहा गया था कि अगर आप इसको समाप्त करने में कोई कदम नहीं उठायेंगी तो इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। उन्होंने इसका मतलब उल्टा लगा लिया कि "परिणाम अच्छा नहीं होगा" का मतलब शायद यह व्यक्ति मुझे मारने की धमकी दे रहा है। यही सोच कर हरियाणा व उत्तर-प्रदेश की सी० आई० डी० को मेरे पत्र की फोटो कापी देकर उन्हें खोज बीन के लिए मेरे पीछे लगा दिया मुझे विद्यालय वालों ने वहां से पूज्य स्वामी जी के पास भेज दिया मैंने सभी कुछ सच-सच पूज्य स्वामी जी को बता दिया, उन्होंने कहा कि—बेटा कोई चिन्ता मत करो- सब ठीक हो जायेगा। उस समय स्वामी जी ने श्री पण्डित प्रकाशवीर शास्त्री जी को एवं हमारे तायरे भाई श्री कृष्ण चन्द्र जी (जो उस समय दिल्ली के उपराज्यपाल थे) को पत्र लिख कर स्थिति से अवगत कराया, तो भी सी० आई० डी० नें ३ वर्ष तक मुझे व पूज्य स्वामी जी महाराज को परेशान किया, एक बार तो मुझे श्री देवराज जी सन्धीर (एडवोकेट) हिसार जी के संरक्षण में गायब भी किया गया, पश्चात् स्थिति धीरे-धीरे सुधरी और मैं इस झंझट से मुक्त हो गया। मैं बहुत ही संक्षेप में वह बातें लिखता हूं जो मैंने पूज्य स्वामी जी महाराज के जीवन में देखी हैं। अगर पूर्ण विवरण लिखूं तो वह दो सौ पृष्ठों में भी शायद ही आ पाये।

मैंने स्वामी जी के जीवन में देखा कि, वह अत्यन्त सादगी पसन्द करते थे, तथा छोटे से छोटे व्यक्ति को भी ऊँचा उठने के लिए प्रोत्साहित करते थे, अभिमान उनको छू कर भी नहीं गया था, इसीलिए कोई भी व्यक्ति उनके सम्पर्क में अगर थोड़े से भी समय के लिए आया तो वह बिना प्रभावित हुए नहीं गया। स्वामी जी महाराज ने सारा जीवन वैदिक धर्म के प्रचार एवं प्रसार में होम कर दिया उन्होंने न मकान बनाया न धन ही संचय किया, मात्र जो भी कहीं से राशी मिली उसकी पुस्तकें खरीद लीं, रात दिन अपना समय शोध कार्य में ही लगाते थे, कभी भी एक मिनट को खाली नहीं बैठते थे। मरते दम तक इनकी लेखनी कार्य करती रही। उनके अपने जीवन के कुछ कटु अनुभव थे, जिनको वह अक्सर कहा भी करते थे, कि—

प्रजातन्त्र में अमर सबका एक ही भोल।
वोट गिने जाते यहां, लखी स जाती तोल ।।

स्वामी जी महाराज बहुत ही स्पष्टवादी थे, वह किसी भी सत्य बात को कहने में तनिक मात्र भी नहीं हिचकते थे, जैसे उन्होंने अपने कुछ "अमर सूत्र" बनाये, कुछ व्यक्तियों (अधिकारियों) ने जब इन सूत्रों को पढ़ा तो बुरा भी माना, परन्तु स्वामी जी अपनी बात पर अडिग रहे—उन्होंने अपने **"अमर सूत्रों"** में लिखा था कि—

१—पुराने आर्य नेताओं ने अपने घरों को उजाड़ कर आर्य समाज को बनाया था। नये, आर्य समाजी नेता आर्य समाज को उजाड़ कर अपने घरों को बना रहे हैं।

२—पौराणिकों में पुरोहित अपने यज्ञमान को ठगता है। आर्य समाजी यज्ञमान अपने पुरोहित को ठगता है।

३—पौराणिकों में ज्ञानी अज्ञानियों को अपनी आज्ञा में चलाते हैं। आर्य समाजी अज्ञानी ज्ञानियों को अपनी आज्ञा में चलाते हैं।

४—पौराणिकों में अपूज्यों की पूजा होती है। आर्य समाज में पूज्यों का अनादर होता है।

५—पौराणिकों में सन्यासी सबसे बड़ा माना जाता है। आर्य समाज में सन्यासी का कोई महत्व नहीं है।

६—पौराणिकों में सन्यासी जीवन निर्वाह के लिए निश्चिन्त होता है, आर्य समाजी सन्यासी को जीवन निर्वाह की चिन्ता तो निरन्तर रहती ही है। मरने के लिए भी चिन्ता रहती है कि कहां मरूँ?

७—आर्य समाज में एक ओर यज्ञ और योग के नाम पर पाखण्ड प्रबल वेग से बढ़ रहा है। दूसरी ओर राजनीति का राक्षस आर्य समाज को जिन्दा ही खा जाना चाहता है।

इन वाक्यों से स्वामी जी की स्पष्टवादिता का साफ पता चलता हैं। स्वामी जी जहां उच्च कोटि के व्याख्याता थे वहां वह उच्च कोटि के संगीतज्ञ भी थे, उनके बनाये गीत, व नज्में सारे देश में प्रसिद्ध हैं। शास्त्रार्थ कला का तो कहना ही क्या? इस विषय के तो वे प्रकाण्ड पण्डित माने जाते थे। जहां कोई भी विद्वान् सफल न हो उस जगह पर उनको याद किया जाता था, मैं तो यह आर्य समाज का दुर्भाग्य ही समझूंगा कि उनसे जितना लाभ लिया जा सकता था उतना लाभ समाज नहीं ले पाया, यह त्यागी, तपस्वी, अदम्य साहस की मूर्ति, प्रकाण्ड विद्वान् सन्यासी, अपने जीवन के छियानवे वर्ष पूरे कर चार सितम्बर सन् १९८७ ई० को सायं पांच बजे परलोक सिधार गया। ऐसा कर्मठ सन्यासी मैंने अपने जीवन में नहीं देखा, उनके चले जाने पर जो क्षति समाज को हुई है वह शायद ही भविष्य में पूरी हो! इस महान आत्मा को मेरा शत् शत् प्रणाम है॥ इतना ही कहते हुए में अपनी लेखनी को विराम देता हूं। इति शम्॥

निवेदक—

"लाजपत राय अग्रवाल"
(प्रोपराईटर)
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग,
(गाजियाबाद-उ० प्र०)

✻ ✻ प्रस्तुत ग्रन्थ पर प्राप्त सम्मतियाँ ✻ ✻

श्री पं० जगदेव सिंह जी सिद्धान्ती—

पहाड़ी धीरज, सदर बाजार, (दिल्ली)

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि आप पूज्य अमर स्वामी परिव्राजक जी के समस्त शास्त्रार्थों को अमर स्वामी प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित कर रहे हैं। आप इस अत्यन्त आवश्यक बहुमूल्य पुस्तक को प्रकाशित कर रहे हैं। मेरी सम्मति में यह शास्त्रार्थों का संग्रह आर्य जगत में अपना उच्च कोटि का स्थान प्राप्त करेगा। इस पवित्र कार्य के लिए आप यश प्राप्त करेंगे, परमेश्वर आपको इस प्रयोजन के लिए सामर्थ्य देवे।

"जगदेव सिंह सिद्धान्तती"

प्रो० श्री राजेन्द्रसिंह जी जिज्ञासु—

दयानन्द कॉलिज—अबोहर, (पंजाब)

आर्य समाज के पहली व दूसरी पीढ़ी के सब प्रमुख नेता सिद्धान्तों के जानने वाले, विद्वान व शास्त्री थे। यथा—महात्मा मुन्शीराम, पं० लेखराम, पं० कृपाराम, पं० गुरुदत्त, मास्टर आत्माराम, स्वामी स्वतन्त्रानन्द, महात्मा नारायण स्वामी आदि, महात्मा मुन्शीराम आर्य शास्त्रार्थी थे, जिनका जन्म ब्राह्मण कुल में नहीं हुआ था। परन्तु अपने तपोबल से ब्राह्मण बने, तब यह एक विचित्र सी घटना थी कि क्षत्रिय कुलोत्पन्न विद्वान् शास्त्रार्थ करता है। इसी परम्परा में श्रीमान् अमर स्वामी जी ने अपनी ज्ञान प्रसूता वाणी व लेखनी से जीवन में अवैदिक मतों के विद्वानों से अनेक शास्त्रार्थ करके एक इतिहास बनाया है। उनके गहन अध्ययन प्रतिभा व सूझ की अपनों, बेगानों सभी पर छाप पड़ी, सिंह समान चुनोती स्वीकार करके किरानी, कुरानी, जैनी, पुराणी, मिर्जाई लोगों से लोहा लेनें वाले इस महाविद्वान के शास्त्रार्थों का यह संग्रह सबके लिए पठनीय है।

"राजेन्द्र जिज्ञासु"

श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री (संसद सदस्य)—

केनिंग लेन—नई दिल्ली

श्रीमान् लाजपत राय जी,

आप आर्य समाज के उद्भट विद्वान और शास्त्रार्थ महारथी श्री ठाकुर अमर सिंह जी वर्तमान (महात्मा अमर स्वामी जी) के शास्त्रार्थों का संकलन प्रकाशित कर रहे हैं। यह जानकर प्रसन्नता हुई, यह संकलन अगली पीढ़ियों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगा। इस महत्वपूर्ण योजना को हाथों में लेने के लिए मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

"प्रकाशवीर शास्त्री" (संसद सदस्य)

३-४-१९७६

श्री ओम प्रकाश जी त्यागी (संसद सदस्य)—

(नई दिल्ली)

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि महात्मा अमर स्वामी जी द्वारा किये गये शास्त्रार्थों का संकलन एक ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित होने वाला है। यह आयोजन वरेण्य है।

प्रभु से इसकी सफलता की कामना करता हूं।

ओमप्रकाश त्यागी "पुरुषार्थी" (संसद सदस्य)

श्री डा० गोविन्द सहाय जी गुप्त—
९६७, लक्ष्मी बाई नगर
नई दिल्ली—२४

आप यह एक बड़ा ही पुण्य एवं यश का कार्य कर रहे हैं, जो समाज के एक उद्भट विद्वान के विचारों को संकलित करके एक ग्रन्थ के रूप में संसार के सामने ला रहे हो, इस ग्रन्थ से संसार में अज्ञान का नाश होगा, हर आदमी को सत्यासत्य की परख करने हेतु एक उच्च कोटि की कसौटी मिल जायेगी, तथा यह ग्रन्थ संसार में एक पारसमणि का कार्य करेगा यह जिस भी अज्ञान रूपी गड्ढे में पड़े हुए लोहारूप सज्जन को छुएगा वही ज्ञान रूपी स्वर्ण के समान हो जावेगा। एवं भविष्य में यह ग्रन्थ एक उत्तोलक का कार्य करेगा, जिसके द्वारा भारी से भारी अज्ञान रूपी भार को भी उठाकर जीवन से दूर किया जा सकेगा। ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है, इस पुस्तक के प्रकाशन पर मैं प्रकाशक को हार्दिक बधाई देता हूं, परमेश्वर आपको सफलता प्रदान करे।

"डा० गोविन्द सहाय गुप्त"

श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती—
आचार्य, गुरुकुल झज्जर
जि० रोहतक (हरियाणा)

मुझे यह जान कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि, पूज्य अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का यह संकलन प्रकाशित हो रहा है पूज्य स्वामी जी के प्रति, मेरी क्या सम्पूर्ण आर्य जगत की अपार श्रद्धा है। स्वामी जी महाराज जैसा शास्त्रार्थ में निपुण, विद्वान तार्किक सन्यासी आर्य जगत में अन्य कोई नहीं है, स्वामी जी महाराज की शास्त्रार्थ शैली कमाल की है, इसके प्रकाशन पर मैं श्री लाजपत राय जी को बधाई देता हूं। जिन्होंने ऐसा पुण्य कार्य हाथ में लिया।

"ओमा नन्द सरस्वती"

महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज—

महात्मा अमर स्वामी जी से मेरा चिरकाल से घनिष्ठ सम्बन्ध चला आ रहा है आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब, सिन्ध, बलोचिस्तान, लाहौर के चोटी के विद्वानों में से ठाकुर अमर सिंह जी एक थे। जो कि अब "अमर स्वामी परिव्राजक" बन गये हैं, उनकी विद्या, उनकी स्मरणशक्ति और शास्त्रार्थ शैली के गुण वो लोग भी गाते हैं, जो कि उनके सामने शास्त्रार्थ के लिए खड़े होते थे। महात्मा अमर स्वामी जी ने सन्यास लेकर भ्रमण नहीं छोड़ा, निरन्तर प्रचार कार्य में लगे हुए हैं, मेरे हृदय में उनके लिए अगाद्ध प्यार है। बेटे, लाजपत राय को भी मैं उनके परिवार सहित जानता हूं, उन्हें इस कार्य को संभालने के लिए आशीर्वाद देता हूं।

"आनन्द स्वामी सरस्वती"

श्री प्रेमचन्द जी शर्मा—
पूर्व प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश लखनऊ तथा
(पूर्व स्वास्थ्य मन्त्री उत्तर प्रदेश सरकार)

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि, श्री लाजपत राय जी अमर स्वामी प्रकाशन विभाग की

ओर से पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज के जीवन के समस्त शास्त्रार्थों का संकलन **"निर्णय के तट पर"** नाम से प्रकाशित कर रहे हैं। मैं स्वामी जी महाराज के जीवन से पूर्ण परिचित हूं, तथा उनके अनेकों शास्त्रार्थ भी पढ़े हैं। आर्य जगत में ऐसी प्रतिभा के धनी एवं वैदिक साहित्य के मर्मज्ञ शास्त्रार्थ महारथी कम ही हैं, मैं भगवान से उनकी दीर्घायु होने की प्रार्थना करता हूं।

"**प्रेमचन्द शर्मा**"

श्री डा० स्वामी सत्यप्रकाश जी सरस्वती—
(इलाहाबाद)

मुझे यह जान कर अतीव प्रसन्नता हुई कि आर्य समाज के वयोवृद्ध, तपस्वी संन्यासी पूज्यपाद श्री अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संकलित विवरण प्रकाशित होने जा रहा है, श्री अमर स्वामी जी के इन शास्त्रार्थों का आर्य समाज के इतिहास में गौरव पूर्ण स्थान है, पं० लेखराम जी, स्वामी दर्शनानन्द जी और पण्डित श्री रामचन्द्र जी देहलवी की परम्परा में अपनी अलग विशेषता रखते हुए अमर स्वामी जी महाराज के ये शास्त्रार्थ हैं। श्री अमर स्वामी जी के पास जो प्राचीन उद्धरणों और प्रमाणों की सामग्री है, वह अन्यत्र कम ही मिलेगी, वे चलते फिरते इस विषय के विश्वकोश हैं, मुझे उनका स्नेह प्राप्त है, यह मेरे लिये बड़े काम की वस्तु है। मैं सदा उनके आशीर्वाद का आकांक्षी हूं।

सस्नेह—
"**"स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती**"

श्री डा० भवानी लाल जी भारतीय एम० ए०
मन्त्री-आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान अजमेर, व
सम्पादक "परोपकारी" मासिक (अजमेर)

"निर्णय के तट पर" आर्य जगत के सुप्रसिद्ध, शास्त्रार्थ महारथी विद्वान महात्मा अमर स्वामी सरस्वती के शास्त्रार्थों का अद्वितीय संग्रह आर्य समाज के स्वाध्यायशील पुरुषों के लिए अतीव रुचिकर होगा, अमर स्वामी जी ने अपने सुदीर्घ कालीन, उपदेशक जीवन मैं पौराणिकों तथा अन्य मतावलम्बियों से सैकड़ों शास्त्रार्थ किये हैं। उन्होंने वैदिक धर्म के आधार भूत सिद्धान्तों की पुष्टी में **"आर्य सिद्धान्त सागर"** जैसा अद्वितीय ग्रन्थ भी लिखा था, स्वसिद्धान्त पोषण में अमर स्वामी जी एक सिद्धहस्त तार्किक एवं शास्त्रार्थ कर्त्ता विद्वान हैं। आशा है आर्य जनता इस ग्रन्थ को अपना कर लाभ उठाएगी।

"**डा० भवानी लाल भारती**"

पं० प्रकाश चन्द्र जी "कविरत्न"—
पहाड़गंज, अजमेर (राजस्थान)

प्रिय लाजपत राय जी !

अतीव हर्ष है कि आर्य जगत के सुप्रसिद्ध, महोपदेशक, शास्त्रार्थ महारथी परिव्राजक अज्ञेय अमर स्वामी जी महाराज के जिन प्रभावोत्पादक, मनोरंजक शास्त्रार्थों के संग्रहीत ग्रन्थ की आर्य जनता बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी, वह आपने अपने अथक परिश्रम से प्रकाशित करा दिया, एतदर्थ आप धन्यवाद के भाजन हैं। जब मैं स्वस्थ था, तब मुझे अनेकों

आर्य समाजों के उत्सवों में स्वामी जी महाराज के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त होता था, उनकी आर्य समाज की सेवा की अमिट लग्न, वैदिक सिद्धान्त तथा अन्य मत मतान्तरों के गहन अध्ययन, अनुशीलन एवम् चतुर्मुखी परम प्रभावशाली प्रखर प्रतिभा के क्या कहने ?

महोपदेशक कहूँ उन्हें या शास्त्रार्थ निष्णात कहूँ मैं,
कवि, लेखक, गायक या वैदिक विद्वद्वर विख्यात कहूँ मैं।
या स्नेही अलिदल हित उनको मधुदानी जल जात कहूँ मैं,
पूज्य अमर स्वामी परिव्राजक कहूँ या कि गुरु तात कहूँ मैं ॥१॥
वेद संस्कृति की रक्षा हित वे अति कष्ट उठाते देखे,
ब्रिटिश, निजाम क्रूर शासन की जेलों में वे जाते देखे।
शास्त्रार्थ जब कभी हुए तब स्मरणीय जय पाते देखे,
विपक्षियों के हृदयों पर पर्याप्त प्रभाव जमाते देखे ॥२॥
उनके अनुपम शास्त्रार्थों का संग्रह शुचि "निर्णय के तट पर",
किया प्रकाशित अथक परिश्रम से है, ग्रन्थ सत्य, शिव, सुन्दर।
पहुँचे यह सब आर्य समाजों, आर्य बन्धुओं के शुभ घर-घर,
आग्रह है यह लाभ उठावें सब आबाल वृद्ध नारी नर ॥३॥

प्रकाश चन्द्र "कविरत्न"
(अजमेर)

श्री रविकान्त जी शास्त्री, एम० ए०
राजकीय इण्टर कॉलेज,
शाहजहाँपुर—उ० प्र०

विविधविद्या विलासोल्लसितान्ता, गीर्वाणवाणी बन्दनविधान विदग्धा, स हृदयदयानुरञ्जन क्षमा, वैदिक धर्म प्रचार विचार सरणी समारोहण चतुराः विद्वासः गुरुवर पूज्यामर स्वामि महात्मनः महान्तोऽयम् प्रयासः। यत् तैः पाण्डित्यप्रवरै सकला शास्त्र प्रमाणै अज्ञान सरोवरे निमज्जतानां नराणां हृदय पटलेनिर्णय तटे विज्ञानदीपं प्रकाशितम्।

अयं महात्मप्रवर गुरुवर पूज्यामरस्वामि परिव्राजकरूपेण सहर्ष सप्रत्ययं नक्षत्रमध्ये शिशिरांशुरिव विद्वन्मण्डले भासमानानाम ज्ञान रूपविषवृक्षारोहणावलोकिताशान्तानाँ शास्त्र विद्याजल प्रक्षालित मानसोत्तरीयाणां जनानां प्रकाशाभावं दूरी करोति। महात्मप्रवर श्री अमरस्वामि विश्व विदुषांमध्येमणिरिव स्वकीयं वैशिष्टयं बिभर्ति भारत वर्षेऽस्मिन् न कोऽपि एवं विद्योऽस्ति मन्दभाग्यः पुमान् यो पूज्यामर गुरुवरं नैव वेत्ति। असंख्याता हि अन्तेवासिनः ऐतेषां सकाशात् शास्त्रमधीत्य सुविज्ञायन्तः एतेषां पाण्डित्यं प्रकटयन्तः सर्वत्र कीर्ति प्रसार-यन्ति, यत्रापि भवान् गमत् यस्यामपि सभायामभवान्भाषत् तत्संस्थानं सा सभा तजत्याश्च जना प्रतिष्ठापितभवत्प्रभावा अजायन्तः। भवन्ति ये पुण्यकर्माणों वस्तुतस्तेषां रसनामधिव-सतीदृशी सरस्वती। शास्त्रार्थं न सुसाध्यं कार्यम्। शास्त्रार्थः कः ? शास्त्राणां य सम्यगर्थः स शास्त्रार्थः। द्वयोः पक्षयोः यस्य पक्षे निर्णयो भवतिः सैव मानव जीवनस्य नौकाया पथ प्रदर्शकः भवति ; न केवलं शास्त्राणि वाङ्मयस्य वेद-शास्त्र-पुराण-स्मृति-आयुर्वेद-काव्यालङ्कारादि विषयिणी विद्वता च काङ्क्ष्यते। नीति शास्त्रार्थ शास्त्रादि सम्बन्धिनी अभिज्ञता च वाञ्छयते।

अथ च लोकानुभवः काम्यते, जनता भवतः शास्त्रार्थमाकर्ण्य कथा सुधां च निपीय सर्वथैव स्वां कृतार्थां मन्यते। भजनोपदेश कथावाचन माधुर्यन्तु जनान् मोहति एव। श्री अमर स्वामी प्रकाशन विभागस्य प्रधान प्रबन्धककस्यापि महत् परिश्रमः, य एतादृशं ग्रन्थं प्रकाश्यमानवा जीवनोन्नति प्रकाशनोन्नतिञ्च वर्द्धयति। अतः निर्णय तट नाम्नाग्रन्थेन सर्वे जना सदसत्मार्ग-विचार्य, अज्ञान पथं च विहाय ज्ञानमार्गे व्रजन्तः अवश्यमेव स्वात्यामंसफली करिषयन्ति इति में निश्चयः।

"रविकान्त शास्त्री"
एम० ए०, बी० एड०

महापण्डित जी पण्डित युधिष्ठिर जी मीमांसक—

रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़
सोनीपत (हरियाणा)

श्री माननीय अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का संकलन "निर्णय के तट पर" नाम से छाप रहे हैं, यह कार्य आर्य समाज के इतिहास में अमर रहेगा। श्री माननीय अमर स्वामी जी महाराज (भूतपूर्व श्री पण्डित अमर सिंह जी) महोपदेशक एवं शास्त्रार्थ महारथी हैं। आपका स्वाध्याय अत्यन्त गम्भीर है, विशेष कर पुराणों के सम्बन्ध में आपके शास्त्रार्थों के संकलन माध्यम से शास्त्रार्थ सम्बन्धी अनेक स्थितियां व प्रमाण संग्रहीत हो जावेंगे, जो आर्य समाज के भावी विद्वानों शास्त्रार्थियों के मार्गदर्शक बनेंगे।

"युधिष्ठिर मीमांसक"

श्री आचार्य पण्डित महेन्द्र प्रताप सिंह जी शास्त्री (एम० ए०)—

कन्या गुरुकुल हाथरस (उ० प्र०)

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आदरणीय श्री अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संग्रह "निर्णय के तट पर" नाम से प्रकाशित किया जा रहा हैं, श्री स्वामी जी का अध्ययन अत्यन्त विस्तृत व गहन है। उनकी युक्तियां, विरोधी पक्ष को भी स्वीकार्य होती हैं, वे विरोधी पक्ष का खण्डन बड़ी प्रबलता से करते हैं। उनके ये सब गुण उनके शास्त्रार्थों में स्पष्टतया झलकते हैं। कहने की आवश्यकता नही कि उनकी इन विशेषताओं के कारण उनके शास्त्रार्थों का संग्रह सब दृष्टियों से उपादेय होगा, वह रुचिकर होने के साथ-साथ ज्ञानवर्धक भी होगा, मैं इस स्तुत्य प्रयास की सफलता की कामना करता हूं।

"महेन्द्र प्रताप शास्त्री"

श्री पण्डित शान्ति प्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी—

सुभाष नगर—गुड़गांवा कैण्ट (हरियाणा)

माननीय श्री अमर स्वामी जी महाराज आर्य समाज के शास्त्रार्थी, विद्वान्, अद्भुत वक्ता, सिद्धान्तनिष्ठ अन्वेषक (रिसर्च स्कालर) तथा महर्षि दयानन्द जी के अनन्य भक्त मनीषी कवि, धर्मोपदेष्टा है। इनका समस्त जीवन वैदिक धर्म प्रचार में व्यतीत हुआ हैं। हो रहा है, होगा। मेरा इनके साथ शास्त्रार्थों, उत्सवों एवं कथाओं में यदा-कदा मेल होता रहता है। परमेश्वर की कृपा से वह चिरंजीव रहकर वैदिक नाद गुंजाते रहें।

"शान्ति प्रकाश"

श्री पण्डित आचार्य रामानन्द जी शास्त्री—

बिहार आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना।

मान्यवर, श्री लाजपत राय जी !

मुझको यह जानकर परम प्रसन्नता हुई है, कि आप अमर स्वामी जी के जीवन सम्बन्धी शास्त्रार्थों का संकलन प्रकाशित करने जा रहे हैं, यह पुस्तक वैदिक धर्म के लिए अजेय दुर्ग (फोर्ट, किला) सिद्ध होगी। तथा महर्षि स्वामी दयानन्द जी की कल्याणमयी वाणी के प्रचारकों के लिए वर्म (कवच) बनेगी। आर्य उपदेशक उसे साथ लेकर अकुतोभय होकर विचरेंगे। मैं शीघ्र उसका प्रकाशन तथा घर-घर में उसका प्रसारण चाहता हूं।

"रामानन्द शास्त्री"

श्री पण्डित जयप्रकाश जी शास्त्री, एम० ए०—

आर्य समाज, सिकन्द्राबाद (बुलन्दशहर)—उ० प्र०

सरस्वती तुल्य आर्य समाज के कर्मठ, कार्यशील, विनयशील, सुविख्यात, पूज्यपाद, गुरुवर श्री अमर स्वामी जी महाराज द्वारा प्रणीत **"निर्णय के तट पर"** शास्त्रार्थ संग्रह अति उच्च कोटि का संग्रह है, जिसके स्वाध्याय से प्रत्येक मनुष्य का भविष्य उज्ज्वल होगा, श्री लाजपत राय जी को भी मैं धन्यवाद देता हूं, जिन्होंने ऐसा अत्यावश्यक कार्य हाथों में लिया।

"जयप्रकाश शास्त्री"

श्री स्वामी जगदीश्वरानन्द जी सरस्वती एम० ए०—

(भूतपूर्व ब्रह्मचारी जगदीशचन्द्र जी विद्यार्थी)

पूज्य अमर स्वामी जी शास्त्रार्थ संग्राम के योद्धा हैं। उन्होंने जब-जब भी शास्त्रार्थ किये विपक्षी को चारों खाने चित्त गिराया है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि, आप उनके शास्त्रार्थों का संग्रह प्रकाशित कर रहे हैं, इस प्रकाशन पर लेखक और प्रकाशक दोनों को हार्दिक बधाई। यह ग्रन्थरत्न प्रत्येक स्वाध्यायशील व्यक्ति के लिए उपादेय है। ऐसा इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि के अवलोकन से निःसंकोच कह सकता हूं।

शुभ कामनाओं सहित—

"जगदीश्वरानन्द सरस्वती"

शास्त्रार्थ महारथी पण्डित ओमप्रकाश जी शास्त्री—

विद्याभास्कर, खतौली (मुजफ्फर नगर) उ० प्र०

आदरणीय अमर स्वामी जी महाराज द्वारा अपने जीवन में किये गये शास्त्रार्थों का संग्रह **"निर्णय के तट पर"** नाम से आप प्रकाशित कर रहे हैं। ये जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई, स्वामी जी महाराज आर्य जगत के उन उद्भट्ट विद्वानों में से हैं, जिन्होंने वैदिक सिद्धान्तों के मण्डनात्मक, गहन अध्ययन तथा वेद विरोधी मतमतान्तरों के खण्डन की दृष्टि से असंख्य ग्रन्थों का गहराई से अध्ययन किया है। उनकी शास्त्रार्थ शैली, वाक्पटुता, गम्भीर ओजस्वी बाणी तथा साथ ही प्रमाणों की भरमार देखकर जहां आश्चर्य होता है, वहां गौरव की अनुभूति भी होती है। उनके इस ग्रन्थ से आर्य जगत के विद्वानों को विशेषकर शास्त्रार्थ कर्त्ताओं को अत्याधिक लाभ होगा ऐसा मेरा विश्वास है। उनका मुझ पर स्नेह है, ये मेरे लिए कम गौरव की बात नही !

"ओमप्रकाश शास्त्री"

श्री आचार्य उमाकान्त जी उपाध्याय—

१६, विधान सरणी, कलकत्ता-७

आर्य समाज के इतिहास में शास्त्रार्थ का एक यशस्वी युग रहा है। किन्तु अब वह समाप्त सा ही है। परम श्रद्धेय अमर स्वामी जी महाराज शास्त्रार्थ युग के दिग्गज शास्त्रार्थ महारथी हैं, आपकी शास्त्रार्थ शैली आपका उत्तर प्रत्युत्तर प्रकार आपकी प्रत्युत्पन्नमति, सब निराली है, आपके शास्त्रार्थों के दांव-पेंच एवं शास्त्रार्थो की नोंक-झोंक में आपकी ऊर्जस्विता निखर पड़ती है। आपके तीखे पैने किन्तु हृदय ग्राही तर्क श्रोताओं पर अद्‌भुत प्रभावकारी होते हैं। आदरणीय स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संग्रह प्रत्येक आर्य समाज के भक्तों के लिए सैद्धांतिक रूप से अति रोचक एवं प्रमाणों से भरपूर प्रमाण महासागर की तरह ही होगा, हमारे जैसे पण्डित सेवकों के लिये तो यह अनिवार्यत: पठनीय एवं संग्रहणीय ग्रन्थ होगा, ऐसा ग्रन्थ रत्न प्रत्येक पं० उपदेशक के पास तथा प्रत्येक आर्य समाज के पुस्तकालय में अवश्य होना चाहिए।

स्वामी जी ने वृद्धावस्था में भी यह अविस्मरणीय सेवा की है। आपकी इस अविचल प्रचार निष्ठा पर हम श्रद्धावत् है। माननीय श्री लाजपतराय जी अग्रवाल के अथक प्रयास से इस एक महान अभाव की पूर्ति हो गई। बड़ी उत्कण्ठा से इस ग्रन्थरत्न की प्रतीक्षा हो रही थी।

"उमाकान्त उपाध्याय"

श्री राय बहादुर चौ० प्रताप सिंह जी –

माडल टाउन, करनाल (हरियाणा)

श्री अमर स्वामी जी को सारा आर्य जगत जानता है। बतौर शास्त्रार्थ महारथी और बतौर लेखक के उनको पुस्तकें अनूल्य हैं। स्वामी जी तो (ENCYCLOPAEDIA) हैं। उनका सारा साहित्य छपना चाहिए, ताकि नवयुवकों व आने वाले विद्वानों को सामग्री मिल सके।

"प्रताप सिंह चौधरी"

श्री ओमप्रकाश जी वर्मा "संगीताचार्य"

यमुना नगर अम्बाला (हरियाणा)

मान्यवर पूज्य अमर स्वामी जी महाराज को कौन नहीं जानता ? अर्थात् "**ठाकुर अमर सिंह**" यह तो वों हस्ती है जिसने अपने जीवन में सहस्रों शास्त्रार्थ अनेकों मतावलम्बियों से किये हैं स्वामी जी अपने आप में एक चलती फिरती लायब्रेरी हैं, विकट आर्य समाज के शत्रु तो स्वामी जी के नाम से हो भाग जाते हैं। पुराने शास्त्रार्थ मैंने स्वामी जो के देखे, जैसे डेराबसी के पास "**पतरेड़ी**" करनाल में '**फरल**" आदि शास्त्रार्थों में आर्य समाज की बड़ी जीत हुई, यह सब स्वामी जो के प्रमाण, युक्ति, दलोल, मन्तक का प्रभाव हैं। प्रकाशक महोदय धन्य-वाद एवं साधुवाद के पात्र हैं, जिन्होंने अथक परिश्रम करके यह ग्रन्थ छपवाकर, एक अच्छा कार्य किया।

"ओमप्रकाश वर्मा"

श्री पण्डित दीनानाथ जी शास्त्री –

अध्यक्ष सनातन धर्मालोक महाविद्यालय" बी०-१६, लाजपत नगर नई दिल्ली-२४,

स्वामी श्री अमर स्वामी जी ने आर्य अमाज की अच्छी सेवा की है। अब आपके शास्त्रार्थों का संग्रह छप रहा हैं। यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई। आपने कई नये शिष्यों को इस विषय में दीक्षित किया है। भगवान आपको चिरायु करे।

"दीनानाथ शास्त्री सारस्वत"

श्री स्वामी इन्द्रवेश जी महाराज—

महर्षि दयानन्द साधु आश्रम, गुरुकुल सिंहपुरा,
सुन्दरपुर, जिला रोहतक (हरियाणा)

मान्यवर श्री लाजपतराय जी।

आप अमर स्वामी जी महाराज के द्वारा किये गये शास्त्रार्थों का संग्रह "निर्णय के तट पर" नाम से प्रकाशित कर रहे हैं। पूज्य अमर स्वामी जी शास्त्रार्थ युग के महान योद्धा एवं विजेता रहे है। वैदिक धर्म के लिए की गयी उनकी सेवाओं के लिए समस्त आर्य जगत श्रद्धान्वित है। आपके इस प्रकाशन से युवा पीढ़ी को आर्य समाज के भूतकालिक संघर्ष का परिचय मिल सकेगा। तथा आर्य सिद्धान्तों में आस्था पैदा हो सकेगी। इस सम्भावना के साथ मैं आपके इस पवित्र प्रयास का अभिनन्दन करता हूं।

"इन्द्रवेश"

माननीय श्री चन्द्रभानु जी गुप्त—

(कोषाध्यक्ष जनता पार्टी)
(लखनऊ) उ० प्र०

प्रिय लाजपत राय जी!

आपके प्रयास द्वारा माननीय महात्मा अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संग्रह "**निर्णय के तट-पर**" नाम से प्रकाशित हो रहा है। मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। आशा है इससे जन मानस को मार्गदर्शन मिलेगा। शुभ कामनाओं सहित।

आपका—
"चन्द्रभानु गुप्त"

परम् विदुषी, बहन प्रज्ञा देवी—

व्याकरणाचार्या, पी० एच० डी०, वाराणसी ५

पूज्यपाद अमर स्वामी जी सरस्वती जी की गहरी विद्वत्ता एवं वाक्पाटव की धाक उनके अनुयायियों पर ही नहीं उनके विरोधी विभिन्न मतावलम्बियों पर भी है यह उनके गहरे पाण्डित्य की खरी कसौटी है। इस वार्धक्यावस्था में भी वैदिक धर्म की सेवार्थ आपकी लेखनी तथा वाणी इतने उत्साह एवं निर्बाध गति से चलती है कि किसी नवयुवक को भी लज्जित होना पड़ेगा - इस समय आपका एक उत्तम ग्रन्थ "**निर्णय के तट पर**" छपकर लगभग तैयार है जिसमें पुष्कल प्रमाणों के सङ्गत के साथ-साथ विधर्मियों को परास्त करने के लिये शास्त्रार्थ व्यूह रचना कला का भी निर्देशन पाठकों को मिलेगा, जो स्वाध्याय-प्रिय लोगों के लिये परम उपयोगी सिद्ध होगा अत; मेरा सभी आर्य बन्धुओं से आग्रह है कि वे इस उत्तम ग्रन्थ को अवश्य अपने-अपने घरों में रख कर उसका स्वाध्याय कर उससे लाभान्वित हों।

"प्रज्ञा देवी"

शास्त्रार्थ महारथी श्री पण्डित रामदयालु जी शास्त्री —

३ कृष्णा टोला, अलीगढ़—उ० प्र०

आदरणीय अमर स्वामी जी महाराज आर्य समाज के उन उज्जवल रत्नों में से एक हैं। जिन्होंने अपनी प्रतिभा के द्वारा आर्य समाज के गौरव की रक्षा की है, आप श्री ठाकुर अमर

सिंह जी आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के उन मूर्धन्य विद्वानों में से गिने जाते थे, जिनके कार्य व योग्यता एवं भाषणों की धूम थी। मैं उन दिनों आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, गुरुदत्त भवन लाहौर में उपदेशक था पंजाब की कुछ आर्य समाजें दोनों सभाओं के योग्य उपदेशकों को उत्सवों पर बुलाती थी। प्रायः हम दोनों वहाँ मिलते थे। हमारे अति स्नेह का कारण अलीगढ़-बुलन्दशहर का सम्बन्ध भी था। उन दिनों शास्त्रार्थों की धूम थी पौराणिकों से शास्त्रार्थ करने के लिये पण्डित बुद्धदेव जी विद्यालंकार श्री बुद्धदेव जी मीरपुरी, पण्डित लोकनाथ जी, पण्डित मनसाराम जी, ठाकुर अमर सिंह जी, की युक्ति, धारा प्रवाह प्रमाणों की झड़ी, सूझ-बूझ और वाणी की कड़क के आगे विपक्षियों के होश उड़ जाते थे।

श्री अमर स्वामी बन कर आपके गौरव में और भी चार चांद लग गये हैं। यह संकलन आने वाले उपदेशकों के लिये अनोखा रत्न होगा।

"राम दयालु शास्त्री"

श्री पण्डित गङ्गाधर जी शास्त्री (व्याकरणाचार्य)—

महोपदेशक, आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना, (बिहार)

मुझे बड़ी प्रसन्नता हैं कि पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों के संग्रह को पुस्तकाकार निकाल रहे हैं। पूज्य स्वामी जी ने अपने जीवन में हिन्दू, मुसलमान तथा ईसाइयों से दक्षता पूर्ण शास्त्रार्थ कर वैदिक धर्म की मर्यादा की रक्षा की है। वह वैदिक धर्मावलम्बियों के लिए प्रस्तुत हैं। आशा है इस पुस्तक द्वारा आर्य बन्धुओं को महान लाभ होगा।

पूज्योयतिवरोधीमान सर्व शास्त्र विशारदः। विजेता सर्व शास्त्रार्थे वाग्मी नम्रो यशोधरः ॥१॥
आबालाज्जीवनं येन दत्तं धर्मस्य रक्षणे। वने ग्रामे नगर्यावा प्रचारं चरितंमुदा ॥२॥
आर्यधर्मस्य रक्षार्थं दुखं सोढुं महामुनिः। अद्यापि ह्यमर स्वामी तिष्ठति स दिवा निशम् ॥३॥
लेखेन वचसा नित्यं पाखण्डस्य च खण्डनम्। सत्यस्य दर्शनं स्वामी कारयन परिराजते ॥४॥
शशि दिवाकरौ यावत् स्थास्यति गगने विभौ। कीर्तिस्तु स्वामिनस्तावत् स्थास्यति धरणीतले ॥५॥
निर्णय के तट परम् (नाम) पुस्तकं सर्व बोधकम्। सत्यासत्य विचाराय मानवानां भविष्यति ॥६॥
इतिमहेश्वरं याचे सर्व लोकस्य पालकम्। आयुश्च स्वामिनो भूमौ बर्धयेत्स जगत्पतिः ॥७॥

"गंगाधर शास्त्री"

श्री आचार्य ओंकार मिश्र "प्रणव" जी शास्त्री, एम० ए०—

उपाचार्य—डी० ए० वी० कालिज फीरोजाबाद - उ० प्र०

आप पूज्य स्वामी अमर भारती जी के शास्त्रार्थों का संग्रह प्रकाशित कर रहे हैं। अत्यन्त हर्ष हुआ, वस्तुतः पूज्य स्वामी जी महाराज अपनी अप्रतिम, वाग्मिता, विद्वत्ता, एवं तर्क शालीनता से शास्त्रार्थ रणांगन के विख्यात् विजेता रहे हैं। उनकी पावन प्रतिभा ने वैदिक सिद्धान्तों का जय केतु धरातल पर सदैव लहराया है। महर्षि दयानन्द के प्रति उनकी असीम श्रद्धा है। निश्चित ही उनके शास्त्रार्थों का संग्रह—**"निर्णय के तट पर"** आर्य जनिधि की अनुपम निधि सिद्ध होगा। मेरी मंगल कामनाएं, सदैव आपके साथ हैं।

"ओंकारमिश्र "प्रणव" शास्त्री एम० ए०"

श्री श्रद्धेय स्वामी अभेदानन्द जी सरस्वती—

प्रधान—आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार (पटना)

मैं राजधनवार (बिहार) के दोनों शास्त्रार्थों में उपस्थित था, श्री पण्डित अमरसिंह जी की शास्त्रार्थ शैली मुझको बहुत अच्छी लगी, उनकी योग्यता एवं उनके पास प्रमाणों की प्रचुरता और उनका प्रबल तर्क प्रशंसा के ही योग्य हैं। उनके धैर्य और उनकी शान्ति की भी मैं प्रशंसा करता हूं। सनातन धर्मी कहलाने वाले दोनों पण्डितों ने उत्तेजना उत्पन्न करने वाले पर्याप्त शब्दों का प्रयोग किया, पण्डित अखिलानन्द जी तो सभ्यता की सीमाओं का भी उल्लंघन ही करते रहे, पर पण्डित अमर सिंह जी आर्य पथिक ने सभ्यता, शिष्टाचार और शान्ति के साथ ही अपनी प्रबल युक्तियों और अपने प्रचुर पुष्ट प्रमाणों से ही पौराणिक मत को पराजय और आर्य समाज को प्रबल विजय प्राप्त कराई। मैं पण्डित जी को बधाई और अनेक साधुवाद देता हूं।

"अभेदानन्द सरस्वती"

श्री के० नरेन्द जी (सम्पादक)—

दैनिक वीर अर्जुन, प्रताप भवन

बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली—१

मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि आप अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का एक ग्रन्थ प्रकाशित कर रहे हैं। मैं इस प्रयास में आपकी सफलता का इच्छुक हूं। स्वामी जी की नि:स्वार्थ भावना और वैदिक सिद्धान्तों के प्रति उनकी निष्ठा एक ऐसी बात है, जिस पर उनकी जितनी प्रशंसा की जाये कम हैं। गलत न होगा अगर यह कहा जाये कि, उन्होंने तन, मन, और धन से आर्य समाज के कार्यों को सफल बनाना अपने जीवन का लक्ष्य बना रक्खा है। ऐसे त्यागी, तपस्वी सन्त हमें कहीं-कहीं ही देखने को मिलते हैं।

"के० नरेन्द्र"

श्री लाला राम गोपाल जी शालवाले

(भू० पू० संसद सदस्य)

प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

रामलीला मैदान, दयानन्द भवन, नई दिल्ली-२

प्रिय लाजपत राय जी!

मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि, अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का संग्रह **"निर्णय के तट पर"** नाम से प्रकाशित करने का आयोजन हो रहा है। स्वामी जी महाराज का वैदिक एवं अवैदिक सभी ग्रन्थों का गहन अध्ययन है। उन्हीं से चुन-चुन कर जो संग्रह उन्होंने तैयार किये हैं, वे **"निर्णय के तट पर"** नामक पुस्तकाकार में छप कर आर्य समाज के प्रचारकों व उपदेशकों के लिए बड़ी लाभदायक सिद्ध होगी - ऐसी आशा करता हूं।

मैं इस संग्रह के प्रकाशन की सफलता की कामना करता हूं।

"स्वामी आनन्द बोध सरस्वती"

(पूर्व—रामगोपाल शालवाले)

श्री महामहिम ब० दा० जत्ती—
उपराष्ट्रपति—भारत सरकार
(नई दिल्ली)

मुझे यह जान कर प्रसन्नता है कि आप अमर स्वामी प्रकाशन की ओर से महात्मा अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों का एक संकलन **"निर्णय के तट पर"** नामक प्रकाशित करने जा रहे हैं, मैं इस संकलन की सफलता के लिए अपनी हार्दिक शुभ कामनाएं भेजता हूं।

आपका—
"ब० दा० जत्ती

श्री बिन्दा प्रसाद जी—
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
मुनीश्वरानन्द भवन-पटना-४

हमें यह जान कर हार्दिक आनन्द हुआ कि आप महात्मा अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संकलन **"निर्णय के तट पर"** नाम से प्रकाशित कर रहे हैं। वस्तुतः उनके शास्त्रार्थ प्रेरणाप्रद रहे हैं, और आशा है कि यह पुस्तक भी लोगों को सन्मार्ग पर प्रेरित करेगी, हमारी सभा पुस्तक की सफलता की कामना करती है।

भवदीय—
"बिन्दा प्रसाद"
कृते (विद्या भूषण प्रसाद)
पटना (बिहार)

श्री पण्डित शिवराज सिंह जी शास्त्री, अरबी फाजिल,—
(बम्बई)

संसार में सर्व प्रथम मानव सृष्टी भारत में हुई, यह अब निर्विवाद सत्य संसार के सभी देशी विदेशी विद्वानों ने एक मत से स्वीकार किया हैं धर्म व धर्मशास्त्र की कल्पना व रचना भी भारत में हुई, लाखों वर्ष तक मनुष्य, मात्र एक ही धर्म के अनुयायी रहे। कालान्तर में व्यक्तिगत हितों को लेकर धर्म, सम्प्रदायों के रूप में विभाजित हो गया, और आज यह अवस्था है कि जहां ईंट उखाड़ो नीचे कोई न कोई धर्म सम्प्रदाय उससे लिपटा हुआ मिलेगा, परिणाम स्वरूप वास्तविक धर्म को छोड़ मनुष्य अरबों की संख्या में मनमाने धार्मिक सम्प्रदायों में विभक्त हैं। मानव मात्र को एकता का मार्ग दिखाते हुये ऋषि दयानन्द ने वैदिक धर्म की पुनः स्थापना की, अधिक मिथ्या मत मतान्तरों पर प्रहार भी किये। आर्य समाज का गत १०० वर्ष से अधिक का इतिहास अनेक शास्त्रार्थों व शास्त्रार्थ महारथियों के महाकौशल का इतिहास है। धर्मवीर पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफिर को तो इस महाभारत में अपने प्राणों की आहुति भी देनी पड़ी। आर्य मुसाफिर जी की इस महान परम्परा के श्रेष्ठतम् उत्तराधिकारी महामुनि महात्मा अमर स्वामी जी का सारा ही जीवन शास्त्रार्थों में बीता है। वे आर्य समाज के अजेय महारथी रहे हैं, उनके अकाट्य तर्क प्रत्युत्पन्न मतित्व व प्रगाढ़ पांडित्य ने आर्य समाज की ध्वजा पताका सर्वत्र लहराई है। राजनीति के क्षणिक प्रवाहों में आर्य समाज के विपथगामी होने से पुनः नये-नये सम्प्रदायों तथा नये-नये भगवानों की नवीनतम् रचनाएँ हो रही हैं। इधर स्वामी जी जीवन के अन्तिम चरण में प्रवेश कर चुके हैं। काश ! कि जो संग्रह

श्री लाजपत राय जी प्रकाशित कर रहे हैं। उसे शिरोमणि सार्वदेशिक सभा प्रकाशित करती ! फिर भी लग्नशील, महान परिश्रमी "**श्री लाजपत राय जी के इस स्तुत्य प्रयास को जितना भी सराहा जाये कम है**"। महर्षि साहित्य को निकाल दें तो आर्य समाज में रक्खा ही क्या है, ? आर्य समाज मन्दिरों से तो मूल्यवान मस्जिदें, गिरजाघर एवं अन्य मन्दिर हैं, काश ! कि आर्य समाज इस स्थाई सत्य को समझने की क्षमता वाला होता ? पर क्या किया जाये। '**तेरी महफिल भी गई, चाहने वाले भी गये**" परम श्रद्धेय श्री स्वामी जी तो प्रशंसा-सराहना के व्यक्तिगत भावों से परे एक महानात्मा के रूप में है। प्रभु उन्हें हमारे बीच बनाये रक्खे जिससे उनकी प्रतिभा का अधिक से अधिक लाभ मानव मात्र को प्राप्त हो सके।

"शिवराज सिंह शास्त्री"

श्री शिव कुमार जी शास्त्री—

भूतपूर्व संसद सदस्य (लोक सभा)

सी-२ (३५-३) मलकागंज-दिल्ली

पूज्य अमर स्वामी जी महाराज आर्य समाज के शास्त्रार्थ समर के उन अद्वितीय सेनानियों में से है जिनकी अदभुत प्रतिभा का सिक्का प्रतिपक्षी विद्वानों ने भी सदा स्वीकार किया है। यद्यपि वे पादरी, मौलवी और सनातनधर्मी विद्वानों से, सभी से शास्त्रार्थ करते रहे हैं किन्तु विशेष रूप से पौराणिक विद्वानों के साथ शास्त्रार्थ में तो सरस्वती उनकी जिह्वा पर आ विराजती है। शास्त्रकारों ने उस वाणी को सभा के योग्य बताया है जिसका प्रभाव अपने पराये, विद्वान और मूर्ख पर जादू का सा होता चला जाये। "**तास्तुवाचः सभायोग्या याश्चित्ताकर्षणक्षमाः। स्वेषां परेषां विदुषां द्विषामविदुषामपि**"॥ यह उक्ति पूज्य स्वामी जी के शास्त्रार्थ में उन पर अक्षरशः घटती रही। सनातनधर्मी शास्त्रार्थी विद्वान श्री पण्डित माध्वाचार्य ज़ी ने जो पूज्य स्वामी जी के प्रति उद्‌गार प्रकट किये हैं वे सूचित करते हैं कि उनके हृदय में श्री स्वामी जी की योग्यता का क्या स्थान हैं ? मुझे यह जान क़र प्रसन्नता हुई है कि पूज्य स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संग्रह प्रकाशित होने जा रहा है। निश्चित रूप से यह सामग्री स्वाध्यायशील व्यक्तियों के लिये बड़े काम की होगी और शास्त्रार्थ के अखाड़े में उतरने वालों के लिए एक शिक्षक का काम करेगी। मेरा विश्वास है कि प्रत्येक आर्य समाज इस उपयोगी महत्वपूर्ण संग्रह को अपने पुस्तकालयों की श्रीवृद्धि के लिये क्रय करके रक्खेगी।

"शिव कुमार शास्त्री"

श्री० डा० पुरुषोत्तम दत्त जी गिरिधर—

अद्वितीय नेत्र चिकित्सक, नेत्र चिकित्सालय, भिवानी

(हरियाणा)

पूज्य श्री अमर स्वामी जी महाराज की अमर पुस्तक "**निर्णय के तट पर**" स्मरण होते ही मस्तिष्क में आर्य समाज का वह समय चित्रवत् उभर आया, जब में लाहौर में १९२१ से १९२५ तक पढ़ता था, वह दिन आर्य समाज के जोश और जीवन के थे, नित्य ही चारों और शास्त्रार्थों की धूम रहती थी, कभी सनातनधर्मी भाइयों से तो कभी ईसाइयों से ! और मुसलमानों से तो नित्य ही मुबाहिसे होते रहते थे। उन दिनों की स्मृति मन में ताजा हो गयी। उन्हीं दिनों ही तो महाशय राजपाल जो शहीद हो गये थे, उन दिनों जुबानी ही नही प्रत्युत

लिखित मुबाहिसे मुसलमानों एवं अन्य मतावलम्बियों के साथ होते थे, दैनिक पत्र दोनों ओर से निकलते थे, जिनमें तर्क, दलीलें-उत्तर-प्रत्युत्तर दिये जाते थे। बल्कि मुझे स्मरण आ रहा है, कई बार तो दिन में दो-दो बार दोनों ओर से जोशीले नौजवान पत्रांक छाप-छाप कर जनता में बांटते। और जनता भी चाह और शौक से उनके छपने की प्रतीक्षा में रहती थी। बड़ी रोचक और अकाट्य दलीलें और तर्क दोनों ओर से दैनिक छपती थीं, जनता बड़ी उत्सुकता और उत्साह से उनको पढ़ती थी, और धार्मिक जोश से बावली हो उठती थी। हमारे आर्य समाज के नौजवान "**गुरुघण्टाल**" और "**शैतान**" नामक दैनिक पत्र निकालते थे। उधर मुसलमानों की ओर से भी बदले में ऐसे ही पत्र निकाले जाते थे, आशय कहने का यह है कि उन दिनों हर व्यक्ति बच्चा, बूढ़ा, नवयुवक शास्त्रार्थी समझा जाता था। हर आदमी स्वाध्याय करता था। इसी का परिणाम था कि उन दिनों आर्य समाज का इतना प्रचार बढ़ सका था, परन्तु वर्तमान युग में शास्त्रार्थ बन्द होने से वह समय केवल एक यादगार सा बन कर रह गया है। आज स्वार्थी लोग सिद्धान्तों पर पर्दा डाल कर अपना कार्य सिद्ध कर रहे हैं। उससे समाज की यह दशा बन गई है, अगर हम उस युग को देखना चाहते हैं तो सिद्धान्तों को सामनें लाना होगा, जब तक सत्य असत्य पर विचार विमर्श नहीं होगा तब तक सत्य का पता संसार को नहीं लग सकता, उसकी कसौटी केवल "**शास्त्रार्थ**" ही है, अँग्रेजी में कहावत हैं कि—"OFFENCE IN THE BEST DEFENCE" (अपनी सत्यता की रक्षा के लिए दूसरों की असत्यता पर प्रहार करो) और यह तभी सम्भव है जब शास्त्रार्थ हो। श्री पूज्य अमर स्वामी जी की इस पुस्तक से कुछ उन दिनों के शास्त्रार्थों का दिल में स्वाद ताजा हो जाता है, और हृदय गर्व से भर जाता है, छाती फूल उठती है, और जी कहता है कि काश ! वह दिन फिर भी आ सके। वह भी क्या समय था ? जब हर आर्य समाज के स्कूल, कन्या पाठशालाओं एवं कालिजों में धर्म शिक्षा तथा सिद्धान्तों का ज्ञान कराया जाता था, परन्तु आज तो वह सब स्वप्नवत् सा लगता है, आज जिस रफ्तार से आर्य समाज के कर्णधार चल रहे हैं, उससे तो पता चलता है, कि डी० ए० वी० के नाम पर केवल डी० वी० अर्थात् राष्ट्र, "**वैदिक**" शब्द ही आर्य संस्थाओं के नाम से हटा दिया जायेगा, और अब भी यह केवल नाम मात्र के डी० ए० वी० हैं। प्रैक्टीकल में केवल शून्य है, "**कृणवन्तो विश्वमार्यम्**" आर्य समाज का यह स्वप्न केवल स्वप्नवत् ही रह जायेगा, जब तक कि वह शास्त्रार्थों वाला युग, उत्साह जनक समय फिर नहीं आ जाता, श्री पूज्य अमर स्वामी जी की यह पुस्तक पिछले शास्त्रार्थों की स्मृति ताजा करती है, हृदय में जोश भरती है, जो वातावरण अनुकूल न होने के कारण अन्दर ही घुट कर रह जाता है, पर फिर भी इस पुस्तक की आवश्यकता है, और इसको केवल सजावट की दृष्टि से रखने की नहीं बल्कि उसे पढ़ने की आवश्यकता है, जिससे यदि गुड़ खाने को नहीं मिलेगा तो गुड़ का नाम लेने से ही मन में गुड़ का सा स्वाद तो आ ही जावेगा। श्री स्वामी जी की इस पुस्तक को प्रत्येक युवक एवं वृद्ध नर एवं नारियों को पढ़ना चाहिए, ताकि समय पड़ने पर हम विरोधियों को मुंह तोड़ जवाब दे सकें। वह समय दूर नहीं है, जब यह पुस्तक संसार में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करेगी। ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। श्री लाजपत राय जी विशेष धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने इस महान ज्ञानयज्ञ की शुरूआत की। **"डा० पुरुषोत्तम दत्त गिरिधर"**

श्री पण्डित आचार्य सत्यप्रिय जी शास्त्री, एम० ए०—

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, (हिसार)

आज के तथा कथित वैज्ञानिक कहते हैं, कि सृष्टि के आदि काल में सूर्य तीव्र गति से घूमता था, कालान्तर में उसके कुछ टुकड़े उससे पृथक् हुए, जो कि चन्द्र पृथ्वी एवं नक्षत्रों के रूप में विद्यमान हैं। तत्त्वज्ञों की दृष्टि से उनके इन कथन को आलंकारिक मानने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है, इसे हम यों कह सकते हैं, कि उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में इस भारत भूमि पर देव दयानन्द के रूप में वेद ज्ञान के एक सूर्य का उदय हुआ, जो बड़ी तीव्र गति से घूमा। उसी सूर्य का ज्ञान (प्रकाश) लेकर-लेखराम, दर्शनानन्द, गणपति शर्मा, धर्म भिक्षु, स्वामी योगेन्द्र पाल, रामचन्द्र जी देहलवी, भोजदत्त आर्य मुसाफिर, बुद्धदेव मीरपुरी, ठाकुर अमर सिंह जी, बुद्धदेव विद्यालंकार, मनसाराम वैदिक तोप, पण्डित व्यास देव, देवेन्द्रनाथ शास्त्री इत्यादि नक्षत्रों ने देव दयानन्द रूपी सूर्य के अस्त होने के पश्चात् वैदिक धर्म के अन्तरिक्ष को प्रकाशित किया। इनमें सभी एक से एक बढ़कर रहे, इस इन्द्र वृत्तासुर संग्राम में सभी इन्द्र सदृश पराक्रमी सिद्ध हुए इनमें सभी की अपनी-अपनी विशेषतायें थीं। इन महारथियों के उस शास्त्रार्थ युग के अपूर्व पराक्रमों को सुन कर आज की पीढ़ी आश्चर्य चकित एवं गौरवान्वित हो जाती है। वैदिक संस्कृति के भव्य भवन के निर्माण में अपने को उसकी नीव में खपा देने वाली इन दिव्य विभूतियों के दर्शनों को आज का आर्य युवक उत्कण्ठित हो उठता है, सौभाग्य से उस युग की स्मृतियों में से श्री श्रद्धेय अमर स्वामी जी महाराज (पूर्व श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केसरी) हमारे मध्य में विराजमान हैं। श्री श्रद्धेय स्वामी जी की अपनी कुछ निराली ही विशेषताएं रही हैं। प्रमाणों के तो आप सागर ही हैं। किसी भी विषय पर हजारों प्रमाणों की झड़ी लगा देते हैं। यदि आपको चलता-फिरता पुस्तकालय कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं है, शास्त्रार्थ काल में, आपके मुख से असंख्य प्रमाण प्रवाह को देख कर श्रोता चकित रह जाता है। दूसरी विशेषता यह है कि, आपका चहुंमुखी ज्ञान है। शास्त्रार्थ समर में आप चतुर्दिक लड़ने की योग्यता रखते हैं। जब कि हमारे अन्य महारथी एक-एक मोर्चे के विशेषज्ञ रहे हैं। जैसे पण्डित मनसा राम जी वैदिक तोप, पण्डित बुद्धदेव जी मीरपुरी पुराणों के विशेषज्ञ थे। देहलवी जी तथा धर्म भिक्षु यवनों का मुंह तोड़ उत्तर देने में सफल एवं सक्षम थे। इसी प्रकार कोई क्रिश्चियनों का विशेषज्ञ था, और कोई जैनियों का ! परन्तु आज किसी भी मोर्चे पर आवश्यकता पड़े तो आर्य जगत बड़े विश्वास के साथ पूज्य स्वामी जी को शास्त्रार्थ के लिए भेज देता है। और स्वामी जी भी चुटकी बजाते-बजाते विजय प्राप्त कर लेते हैं, तीसरी विशेषता वैदिक धर्म के प्रचार में प्रगाढ़ निष्ठा है, मुझे याद आता है कि, शायद आपके गाँव में ही जब थोथेश्वर माधवाचार्य ने शास्त्रार्थ की इच्छा प्रकट की तब आप १०४ डिग्री ज्वर में पड़े हुए थे, यह सुनते ही, हितैषी जनों के मना करने पर भी और अपनी मृत्यु की परवाह न करते हुए आपको चारपाई पर लिटाकर चार आदमी उठा कर शास्त्रार्थ करने को लाये थे। और उस अवस्था में भी आपने दम्भी दुश्मन को नाकों चने चबवा दिये थे। आज लगभग ८५ वर्ष की आयु में भी जबकि चलने फिरने तथा देखने में भी असमर्थ हो गये हैं। तो भी आप प्रचार कार्य में व्यस्त हैं। अभी-अभी पीछे ही आपने दिल्ली सब्जी मण्डी आर्य पुरा समाज में शास्त्रार्थ किए, जिसमें विरोधी छोकरे के छल-कपट

करने के बावजूद भी उस बेचारे को पराजित तथा लज्जित होना पड़ा, अभी दो मास भी नहीं हुए थे कि, मेरठ के समीपस्थ ग्राम (बदरखा) में आपकी अपने पुराने प्रतिद्वन्दी माधवाचार्य से जोरदार टक्कर हुई, और लोगों ने देखा कि, इस बूढ़े शेर की गर्जना से वह युद्ध के बहाने से दक्षिणा प्राप्त कर भागा जा रहा है। जहां आप वाणी द्वारा वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार करते रहे हैं। वहां आपने आर्य जगत को मौलिक साहित्य भी दिया है। जिसमें—"आर्य सिद्धान्त सागर" एक अनुपम कृति है। इसी प्रकार जीवित पितर, हनुमानादि बानर बन्दर थे या मनुष्य ?, कौन कहता है द्रोपदी के पाँच पति थे ?, क्या रावण वध विजय दशमी को हुआ था ? इत्यादि ग्रन्थ आपके मौलिक ज्ञान, गम्भीर पाण्डित्य तथा विस्तृत स्वाध्याय एवं गहन चिन्तन के परिचायक हैं। अंग्रेजी राज्य में स्वाधीनता प्राप्ति के लिए आपने अनेक बार जेल यात्राएँ की, हैदराबाद सत्याग्रह, हिन्दी रक्षा आन्दोलन, तथा गौरक्षा सत्याग्रह में भी आपने जेल यात्रायें की, वैदिक धर्म के प्रचारक तैयार करने के लिए मोहन आश्रम हरिद्वार में संचालित उपदेशक विद्यालय के आप आचार्य रहे, दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय में भी आपने अध्यापन कार्य किया है। स्वामी जी के प्रिय एवं योग्य शिष्य, "श्री लाजपत राय जी" ने पूज्य स्वामी जी के नाम से प्रकाशन विभाग आरम्भ किया है। जिसके माध्यम से उत्तमोत्तम ग्रन्थों का प्रकाशन हो रहा है। आर्य जगत् की नई युवा पीढ़ी की यह इच्छा रही कि शास्त्रार्थ युग के रोचक संस्मरण प्रकाश में आने चाहिये, जिससे कि वर्तमान पीढ़ी प्रेरणा प्राप्त कर सके, मुझे यह जानकर अतीव हर्ष है कि, प्रिय लाजपत राय जी—अमर स्वामी प्रकाशन विभाग के अन्तर्गत पूज्य अमर स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थों का संग्रह **"निर्णय के तट पर"** नाम से एक विशाल प्रकाशन करने जा रहे हैं। मैं इनके इस शुभ कार्य का अभिनन्दन करता हुआ उनकी सफलता का प्रार्थी हूं।

तथा साथ ही अन्तर्यामी जगदीश्वर से श्री श्रद्धेय अमर स्वामी जी महाराज के उत्तम स्वास्थ्य दीर्घायुष्यनैरोग्य एवं सबलता की याचना करता हूं। जिससे कि वे हमारे मध्य में रहते हुए हमें उचित दिशा का संकेत करते रहें। **भूयश्च शरदः शतात्,......**

"सत्य प्रिय शास्त्री, एम० ए०"

श्री प्रो० राम प्रसाद जी वेदालंकार—

उपकुलपति—गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय (हरिद्वार)

प्रियवर, श्री लाजपत राय जी !

यह सुखद वृतान्त जानकर अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि शास्त्रार्थ समर के योद्धाओं द्वारा विभिन्न अवसरों पर किये गये ऐतिहासिक शास्त्रार्थों का विस्तृत एवं प्रामाणिक इतिवृत्त आप प्रकाशित करने जा रहे हैं, आपका यह कार्य निःसन्देह स्पृहणीय एवं स्तुत्य है, युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द से लेकर शास्त्रार्थ केशरी महात्मा अमर स्वामी जी तक विद्वत्ता एवं तर्क पूर्ण शास्त्रार्थों की इस सुदीर्घ परम्परा का सत्य की गवेषणा में धर्म की प्रतिष्ठापना में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि प्रकाशयमान यह ग्रन्थ **"निर्णय के तट-पर"** भविष्य में वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार व प्रसार में आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रकाश-स्तम्भ सिद्ध होगा। इस शुभ कार्य के लिए मेरी हार्दिक बधाई एवं शुभकामनायें।

"राम प्रसाद वेदालङ्कार"

श्री बालक राम जी कमल—
(बम्बई)

गये सप्ताह आपके द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'निर्णय के तट पर" (प्रथम भाग) प्राप्त हुई, थी मैं तो उसे घोट कर पी गया, बहुत ही स्वादिष्ट लगी, वास्तव में ज्ञान का भण्डार है।

"बालक राम कमल"

श्री शम्भूमल्ल मित्तल आर्य—
तालड़ा (मुजफ्फर नगर) उ० प्र०

आपके द्वारा प्रकाशित "**निर्णय के तट पर**" (प्राचीन शास्त्रार्थों का संग्रह) पढ़ा, परन्तु मन ये चाहता है कि इसे बार-बार पढ़ता ही रहूं, आपकी कर्मठता एवं ओजिस्वता ने आर्य समाज में जान डाल दी है। ग्रन्थ विद्वत्ता पूर्ण एवं अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

"शम्भूमल्ल मित्तल आर्य"

श्री राजवीर जी शास्त्री—
सम्पादक—दयानन्द सन्देश (दिल्ली)

श्री युत् लाजपत राय जी अग्रवाल !

आप द्वारा प्रेषित "**निर्णय के तट पर**" ग्रन्थ का (द्वितीय भाग) प्राप्त हुआ तदर्थ अतिशय धन्यवाद। और समाचार यह है कि पुस्तक का यह भाग मुझे तो प्रत्यु प्रयुक्तालय आर्य, पुरुषों को एक तरह से एक संग्रहीत प्रमाण संग्रह ही मिल गया है जिसके आश्रय से विपक्ष की पोल तथा स्व पक्ष का मण्डन आर्य पुरुष स्वयं भी कर सकते हैं।

"राजवीर शास्त्री"

श्री श्यामलाल जी आर्य—
अमौली (फतेहपुर) उ० प्र०

मान्यवर, महोदय '**निर्णय के तट पर**" ग्रन्थ के सभी खण्ड निःसन्देह उत्तम है। और जो आपका अथक-प्रयास रहा है वह निश्चय ही सराहनीय है, मैं समझता हूं इस प्रकार के ठोस कार्यों पर ही समाज की सेवा, सुरक्षा व उन्नति सम्भव है।

"श्यामलाल आर्य"

श्री उत्थान मुनि जी—
(दिल्ली)

आप द्वारा प्रेषित **निर्णय के तट पर**" पुस्तक को मैं बड़े मनोयोग से पढ़ रहा हूं, आपने यह पुस्तक प्रकाशित कर आर्य समाज के १०० वर्षों के बुलन्द इतिहास को अमर बना दिया है जिससे अनेक पीढ़ियाँ आपकी ऋणी रहेंगी एवं आपके इस पुरुषार्थ से मार्ग दर्शन प्राप्त कर सकेंगी। इस पुस्तक के माध्यम से आपने भावी शास्त्रार्थ महारथियों का मार्ग प्रशस्त कर दिया है।

"उत्थान मुनि"

श्री वैद्य कुन्दन लाल जी आर्य—
(अवकाश प्राप्त चिकित्सा अधिकारी) लखनऊ

आपके द्वारा प्रकाशित पुस्तक "**निर्णय के तट पर**" को शीघ्रता में पढ़ना आरम्भ कर दिया, ज्यों-ज्यों इस ग्रन्थ को पढ़ता जाता, त्यों-त्यों नित्य नयास्वाध्याय योग्य मसाला विवरण

सहित मिलता रहा, एक बार पूर्ण पढ़ चुका हूं, परन्तु मन नहीं भरा पुनः आरम्भ कर दिया है। "**पुस्तक क्या है ? वास्तव में ज्ञान का भण्डार है**" यह ग्रन्थ प्रकाशित कर वास्तव में आपने आर्य जगत पर महान उपकार किया हैं। आने वाली स्वाध्यायशील पीढ़ी के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त मार्ग दर्शक सिद्ध होगा।

"वैद्य कुन्दन लाल आर्य"

श्री ज्ञानेन्द्र जी शर्मा (आर्योपदेशक)

औरङ्गाबाद (महाराष्ट्र)

"निर्णय के तट पर" (भाग २) की प्रति मिली, ग्रन्थ अवलोकन कर अत्यन्त हर्ष हुआ, आपने जो इसके संकलन एवं प्रकाशन में घोर परिश्रम इस अल्प आयु में किया वह वास्तव में आश्चर्य जनक है, प्रभु आपको सदा साहस व स्वास्थ्य प्रदान करे। यह ग्रन्थ प्रत्येक आर्य समाजी के लिए एक अमूल्य निधि तो है ही, परन्तु हम उपदेशकों के लिए तो वास्तव में यह ग्रन्थ एक अमूल्य शस्त्र एवं अमर कृति, समाज के लिए आपकी देन है, आपका यह उपकार समाज के ऊपर हमेशा रहेगा।

"ज्ञानेन्द्र शर्मा आर्योपदेशक"

श्री डा० ओ३म् प्रकाश जी (एम० बी० बी० एस०)—

भू० पू० मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा (बर्मा)

प्रिय श्री लाजपत राय जी नमस्ते।

"निर्णय के तट पर" मिलते ही में उन्हीं दिनों २५० पृष्ठ पढ़ गया ग्रन्थ बहुत ही अच्छा बना है, पढ़ने में अत्यन्त रोचक है, सिद्धान्तों का विवेचन जिस प्रकार शास्त्रार्थों के माध्यम से हुआ है वह विद्वत्ता पूर्ण है, में आपको बहुत ही साधुवाद देता हूं कि ऐसा ग्रन्थ आपने प्रकाशित करा दिया, यह साहित्य अमर रहेगा, और भविष्य में Reference "संदर्भ ग्रन्थ" का स्थान ग्रहण करेगा। प्रत्येक उपदेशक एवं प्रचारक को इसका अध्ययन करना अत्यावश्यक है।

"डा० ओ३म् प्रकाश (एम० बी० बी० एस०)"

श्री महात्मा प्रेम प्रकाश जी वानप्रस्थी—

आर्य कुटिया, धूरी (पंजाब)

आप द्वारा प्रकाशित "**निर्णय के तट पर**" (शास्त्रार्थ संग्रह भाग-२) मिला, पढ़ कर सेर भर खून बढ़ गया, तथा ऐसे लगा जैसे पुनः विश्व में आर्य समाज की जय-जयकार हो रही है, मुझे तो यह पुस्तक नहीं अपितु एक ऐसा अवैतनिक आर्य समाज का पुरोहित लगता है, जो वेदों, शास्त्रों, उपनिषदों, गीता, सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका अर्थात् भारत भर में कही जाने वाली सभी धर्म पुस्तकों का विद्वान हो तथा तुलनात्मक और वैज्ञानिक ढंग से वैदिक सिद्धान्तों को प्रस्तुत करता है, मैं इसी रूप में इस ग्रन्थ को देख रहा हूं, मैं चाहूंगा कि सभी आर्य समाजों के सत्संगों में इस पुस्तक की कथा अवश्य हुआ करे जिससे हम सबको सिद्धान्तों की जानकारी हो सके। आपके इस पवित्र प्रयास का फल तब तक विद्वानों को अपेक्षित रहेगा जब तक सूर्य व चाँद जगमगाते रहेंगे। **"महात्मा प्रेम प्रकाश"**

(वानप्रस्थी)

श्री कृष्ण लाल आर्य (प्रधान)—
आर्य प्रतिनिधि सभा—हिमाचल प्रदेश
सुन्दर नगर (हि० प्र०)

श्री अमर स्वामी जी के शास्त्रार्थों का संग्रह आर्य समाज के साहित्य का एक अमूल्य अंग है, यह उनके दीर्घ कालीन, स्वाध्याय, उनकी विद्वत्ता तथा उनके घोर तप और त्याग के परिणाम स्वरूप हैं, जो उनकी पावन स्मृति को सदैव के लिए बनाये रक्खेगा।

"कृष्णलाल आर्य"

श्री नरेन्द्र जी आर्य—
ओ३म् भण्डार (मैनपुरी)

"एक शास्त्रार्थ महारथी महात्मा का अवसान"

खिदमते धर्म में जो कि मर जायेंगे। नाम दुनियां में अपना अमर कर जायेंगे।।

उपर्युक्त पंक्तियां आर्य जगत के प्रसिद्ध एवं स्वर्गीय भजनोपदेशक श्री कुंवर सुखलाल जी "आर्य मुसाफिर" के एक गीत के हैं। कुंवर सुखलाल जी, स्वर्गीय श्री अमर स्वामी जी महाराज जिनका पूर्व नाम ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केशरी था इनके तायरे भाई थे। ये उपर्युक्त शब्द स्वामी जी के ऊपर शतप्रतिशत घटित होते हैं, जिनका सारा जीवन केवल वैदिक धर्म की सेवा करने में ही व्यतीत हुआ और अपने नाम के अनुरूप वास्तव में अमर हो गये। आर्य जगत में आपका एक विशिष्ट स्थान था और जिन शीर्षस्थ विद्वानों पर आर्य समाज को गर्व है उनमें महात्मा अमर स्वामी जी का नाम भी सर्वदा स्मरण किया जावेगा। यद्यपि आज भी शास्त्रार्थ महारथी, तर्क शिरोमणि वा तर्क वाचस्पति बोले जाने वाले विद्वान किन्हीं अंशों में उपलब्ध हैं, पर यह कहना कुछ भी अतिशयोक्ति न होगी कि स्वामी ज़ी महाराज शास्त्रार्थ महारथियों की परम्परा में अन्तिम कड़ी थे।

स्वाजी जी में तर्क और प्रमाणों का प्राकट्य करने की अपूर्व क्षमता थी और जिन ग्रन्थों का आधार उनको प्राप्त था उनका निजी भण्डार भी विपुल मात्रा में उनके पास था। स्वर्गीय पण्डित लेखराम जी ने आर्य जगत को यह परामर्श दिया था कि—"आर्य समाज में तहरीरी व तकरीरी अर्थात् (लेखन व भाषण) का कार्य वा शास्त्रार्थ कार्य बन्द नहीं होने चाहिये" इस परामर्श का पूज्य अमर स्वामी जी महाराज ने जीवन भर निर्वहन किया। जिसके लिए प्रमाण की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्होंने स्वयं भी बहुत कुछ लिखा और जीवन भर प्रवचन व शास्त्रार्थ करते रहे, साथ ही "**अमर स्वामी प्रकाशन विभाग**" के माध्यम से पर्याप्त साहित्य सर्व साधारण तक पहुंचाते रहे और अब उनकी मृत्योपरान्त उनके योग्य शिष्य श्री लाजपत राय जी अग्रवाल इस कार्य को पहले की ही भाँति पूर्ण मनोयोग से संभाले हुए हैं। एवं उन्होंने जीवन पर्यन्त इस प्रकाशन को चलाने का संकल्प लिया है। स्वामी जी चिन्तित थे कि नई पीढ़ी में स्वाध्याय करने का तथा योग्य उपदेशक बनने का अभाव बढ़ता ही जा रहा है और आर्य समाज के कार्य में दिनानुदिन शैथिल्य आता जा रहा है। अतः अब तक आर्य समाज की ओर से हुए सभी न सही पर जितने भी उपलब्ध हो सके उन सबको अधिक से अधिक शास्त्रार्थों का संग्रह सुरिक्षत किया जाये। इस कार्य के लिए "**निर्णय के तट पर**" शीर्षक से प्राचीन शास्त्रार्थों के २ भाग तो प्रकाशित हो चुके हैं, तीसरा भाग भी लगभग

पूरा हो चुका है। एवं चोथा भाग भी छपाने का पूर्ण निश्चय श्री लाजपत राय जी कर चुके हैं। इन तीनों भागों में एक सौ के लगभग शास्त्रार्थ संग्रहीत हो चुके हैं। शेष शास्त्रार्थ चौथे भाग मे आ जायेंगे।

स्वामी जी महाराज ने गाजियाबाद के कवि नगर प्रभाग में रेलवे लाइन के निकट "वेद मन्दिर" की भी स्थापना की थी, और उनकी योजना थी कि यहां योग्य उपदेशक तैयार किये जायें। अब वेद मन्दिर का दायित्व जिन सज्जनों को स्वामीजी महाराज सौंप गये हैं वह उसे कितना पूरा करते हैं? यह उन पर निर्भर है। पूज्य स्वामी जी महाराज के देहावसान पर मैंने एक छोटा सा छन्द लिखा है जो प्रस्तुत है—

हा ! अमर स्वामी जी !!

हारे न कभी श्रीमान खड़े रहे सीना तान,
अमर हुए धीमान विरोधी के मारे मान।
मनीषी तुम्हारे ज्ञान पै था हमें अभिमान,
रसना पै गुणगान सभी के ही हैं समान ॥१॥
स्वल्प था न स्वाभिमान कभी न था अभिमान,
वाणी पै रहा प्रधान वेद धर्म का ही ज्ञान।
मीत "नरेन्द्र" महान आर्य जगत के प्राण,
जी में भरा यशगान धन्य धन्य थे महान ॥२॥

"नरेन्द्रार्य" (मैनपुरी)

पौराणिक पण्डित श्री माधवाचार्य जी शास्त्री (शास्त्रार्थ महारथी) —
धर्मधाम कमला नगर
(दिल्ली)

श्रीमानार्यसमाजलब्धसुयशा व्याख्यातृष्वग्रणीः
सिद्धान्तादिव तत्त्वलाभनिपुणः सामाजिकः प्राड्विवाकः।
बद्धोमल्लीपुरीयवादविषयाद् बद्धोऽपि वादाननेक—
शास्त्रार्थे विजितान्वितोऽयममरः स्वामी चिरञ्जीवतु ॥१॥
परलोकं यदि याति यात्यकृतपुण्य भस्मनो।
तदाप्यस्मात्प्राड् मित्र ! सेव्यो धर्मः सनातनः ॥२॥

धर्मधाम—
203ए. कमलानगर
दिल्लीस्थः
इत्यभिलषति—
माधवाचार्यः

पृष्ठ सं० ४७६ पर छपे (संस्कृत लेख) ब्लाक का हिन्दी अनुवाद—

अमर स्वामी जी दीर्घायु हों, श्रीमान (अमर स्वामी) जो आर्य समाज में बहुत सुयश प्राप्त, व्याख्यान दाताओं में अग्रणी, सिद्धान्तों के शास्त्रार्थ युद्ध की शत कलाओं में निपुण, आर्य समाज के प्राड़विवाक (वकील हैं) बड्डोमल्ली नगर के शास्त्रार्थ वाले दिन से अब तक शास्त्रार्थों में अभिनन्दन प्राप्त करने वाले "**अमर स्वामी**" लम्बी आयु तक जीवित रहें। परलोक में यदि खीर पुड़ी खाने की इच्छा हो तो मृत्यु से पहले सनातन धर्मी हो जाइये।

धर्मधाम
१०३, कमला नगर (दिल्ली)

ऐसी अभिलाषा करने वाला—
"माधवाचार्य"

श्री पन्नालाल जी आर्य—
(जौनपुर)

"**निर्णय के तट पर**" ग्रन्थ क्या है ? एक "**हीरा**" है, जिसकी जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है। प्रकाशक एवं सम्पादक का प्रयास सराहनीय है।

"पन्नालाल आर्य"

श्री राजर्षि कुंवर रणञ्जय सिंह जी (राजा-अमेठी)

भूपति भवन, अमेठी
जनपद—सुलतानपुर (उ० प्र०) २२७४०५

प्रिय लाजपत राय जी !

"**निर्णय के तट पर**" ग्रन्थ का तृतीय भाग प्राप्त हुआ, तदर्थ बहुत-बहुत धन्यवाद। परम पूजनीय अमर स्वामी सरस्वती महाराज जी का सेवा भाव हम लोगों के हृदय में हैं, तदनुसार आप सराहनीय कार्य कर रहे हैं, शास्त्रार्थ महारथी स्वामी जी महाराज के रचित ग्रन्थ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

वैदिक धर्म के ग्रन्थों में उनके ग्रन्थ मेरे विचार से महर्षि दयानन्द रचित सत्यार्थ प्रकाश तथा ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के उपरान्त सर्वाधिक स्थान रखते हैं, श्री स्वामी जी के बारे में क्या लिखा जाये ? वे आदर्श सन्यासी थे, उनके अनुपम गुणों की प्रशंसा करना सूर्य को दीपक दिखाने के समान हैं। आप उनके नाम पर खोले गये इस प्रकाशन को दत्तचित्त होकर चला रहे हो, यह बहुत हर्ष की बात हैं जिसके निमित्त मेरी शुभ कामनाएं हमेशा आपके साथ हैं।

भवदीय—
"रणञ्जय सिंह"
(अमेठी)

नोट – "**निर्णय के तट पर**" ग्रन्थ हेतु वैसे तो हजारों पत्र इसकी प्रशंसा में देश व विदेशों से प्राप्त हुए, परन्तु हमने मुख्य-मुख्य सम्मतियां ऊपर उद्धृत कर दी हैं, इन्हीं से आप अनुमान लगा सकते हैं। वैसे तो कढ़ाई के एक चावल से पूरी कढ़ाई के चावलों की पोजीशन का पता चल जाता है कि वह किस स्थिति में हैं ? तो भी हमने यहां कुछ सम्मतियां छपा दी हैं। जिन सज्जनों के इस ग्रन्थ से सम्बन्धित "सम्मति रूप" पत्र हमें मिले उनके न छपने पर हम उनसे क्षमा चाहते हैं। धन्यवाद।

निवेदक—
"सम्पादक"

नम्र निवेदन

मान्यवर ! पाठक वृन्द !! यह "निर्णय के तट पर" ग्रन्थ के प्रथम भाग का द्वितीय संस्करण आपके हाथों में हैं, पुस्तक का प्रारूप व सामग्री के सम्बन्ध में आप स्वयं निर्णय कर सकते हैं कि यह कितनी उपयोगी है ? मैंने इस प्रकाशन को व्यापार करने के उद्देश्य से नही खोला है। मैं इसकी आमदनी से एक पैसा भी नहीं लेता हूं, मैं चाहता हूं कि—पूज्य अमर स्वामी जी महाराज की अन्तिम इच्छा को पूरा कर सकूं, इस ग्रन्थ के तैयार होने में काफी समय लगा, कारण समयाभाव ही रहा तथा अर्थाभाव भी रहा। तो भी मैंने सभी समस्याओं को स्वयं ही सुलझाया, क्योंकि मुझे ऐसी उम्मीद नहीं थी कि कोई आर्य समाजी मदद करता आर्य समाजी मात्र कीचड़ उछालना जानता है, वह न स्वयं कुछ करना चाहता है, न किसी को करने ही देना चाहता है। ऐसी कुछ स्वार्थी आर्यों की आदत सी बन गयी है। इस खण्ड में लगभग १०० पेज बढ़ गये, मैंने उनके निमित्त कोई मूल्य नहीं बढ़ाया, न ही पुस्तक में किसी प्रकार से उसके प्रारूप को ही गिराया।

वर्तमान आर्य भाई अपनी शक्ति लड़ाई-झगड़े, ईर्ष्या-द्वेश में लगाये बैठे हैं। उनसे कोई मदद की क्या उम्मीद करे ? पूज्य अमर स्वामी जी महाराज की प्रेरणा मुझे हमेशा याद रहेगी। जिन सज्जनों ने इस ग्रन्थ के निमित्त अग्रिम बुकिंग कराई थी उन्होंने अन्य उदाहरण दे देकर बताया कि कहीं हमारा दिया हुआ पैसा मर तो नहीं जायेगा ? तथा अन्त में कहीं आप पुस्तक का मूल्य तो नहीं बढ़ायेंगे, मैं उनकी इन बातों का बुरा नहीं मानता क्योंकि—**"दूध का जला छाछ को फूंक-फूंक कर पीता है"** उनका ऐसा कहना अपनी जगह पर ठीक था, मैंने उनको आश्वासन दिया कि आप निश्चिन्त रहें, ऐसा कुछ नहीं होगा, आपको ग्रन्थ अवश्य मिलेगा, देर हो सकती है पर अन्धेर नही, सो मैंने अपना कथन जैसे-तैसे पूरा कर दिया, आगे भी मैं अपको विश्वास दिलाता हूं कि इस प्रकाशन द्वारा कोई भी ऐसा कार्य नहीं होगा जिससे प्रात: स्मरणीय पूज्य महात्मा अमर स्वामी जी महाराज के नाम को कलंक लगे, और उनकी बदनामी हो, मैं हमेशा इस बात का ख्याल रखूंगा।

इस ग्रन्थ को भी पूरा करने में मुझे अपने पास से लगभग पचास हजार रुपया लगाना पड़ा, एक साथ इन्तजाम करके खर्च करना तथा उसे धीरे-धीरे प्राप्त करना, इसमें कितना बड़ा अन्तर हैं ? यह आप स्वयं अनुमान लगा सकते हैं। स्वामी जी महाराज की मरते दम तक यही इच्छा रही कि—**"किसी भी तरह से हमारे पूर्वज शास्त्रार्थ कर्ताओं के शास्त्रार्थ, प्रकाश में आ जायें"**। मैं उनकी इस अन्तिम इच्छा को पूरी करूँगा, इसी लिए जो शास्त्रार्थ सामग्री इन तीनों भागों में छपने से रह गयी है उसे इस ग्रन्थ के चौथे भाग मैं प्रकाशित करा दूंगा। इस विषय में मेरा निवेदन यह है कि किसी भी सज्जन के पास अगर वह शास्त्रार्थ सामग्री हो जो अब तक प्रकाशित नहीं हुई उसे हमारे पास रजिस्टर्ड डाक द्वारा भेज दें, मैं उस सामग्री को उन्हीं सज्जनों के नाम से प्रकाशित करा दूंगा।

आप लोगों का सहयोग अपेक्षित हैं, तभी यह प्रकाशन अपने उद्देश्यों में भली भांति सफल हो सकेगा। ऐसा मेरा विश्वास है। आशा है उस दिवंगत आत्मा के नाम पर खोले गये इस प्रकाशन की ओर आपका ध्यान अवश्य रहेगा एवं इसमें आप तन, मन, धन से भरपूर सहयोग प्रदान कर सकेंगे। ऐसी मैं आप सभी आर्य सज्जनों से उम्मीद करता हूं।

निवेदक—

विदुषामनुचर :

"लाजपत राय अग्रवाल"

शास्त्रार्थकर्त्ताओं के लिए आवश्यक नियम व निर्देश

श्री पण्डित बिहारीलाल जी शास्त्री, काव्यतीर्थ, शास्त्रार्थ महारथी

यद्यपि अब तो शास्त्रार्थ समाप्त से ही हो गये हैं, परन्तु अब से चालीस वर्ष पहले शास्त्रार्थों की धूम मची रहती थी। तर्क और बुद्धि से बैर रखने वाले कुछ राजनैतिक नेताओं ने प्रचार किया कि—"शास्त्रार्थों से मजहबी झगड़े पैदा होते हैं अतः शास्त्रार्थ बन्द होने चाहिये" परन्तु यह बात निर्मूल थी, जब शास्त्रार्थ होते थे तब रात के बारह-बारह बजे तक मस्जिदों में शास्त्रार्थ हुए हैं और मौलवी तथा पण्डित हाथ मिलाकर बिदा होते थे। बाज-बाज दफा तो एक ही स्थान में दोनों ठहरते और शास्त्रार्थ करते थे। शास्त्रार्थों के कारण एक पक्ष दूसरे पक्ष के ग्रंथ पढ़ता था और विचार करता था। इससे बुद्धिवाद और सहिष्णुता (Tolerance) बढ़ते थे, जब से शास्त्रार्थ बन्द हुये तब से मजहबी संकीर्णता तंग दिली और असहिष्णुता (Intolerance) बढ़ गई। स्वराज्य मिलने के बाद तो मुसलमानों ने आर्य समाज में आना ही बन्द कर दिया, और इन २८ वर्षों में २५ या २६ साम्प्रदायिक दंगे हुये। विचार के स्थान को मानसिक विद्रोह ने ले लिया। शास्त्रार्थ से पहले नियम निर्धारित करने आवश्यक हैं, और पक्ष प्रतिपक्ष निश्चित हो जाना चाहिये, शास्त्रार्थ का अध्यक्ष जनता पर प्रभाव रखने वाला व्यक्ति हो, और समझदार भी। शास्त्रार्थ में जय-पराजय का निर्णय सदा जनता के अधिकार में रहना चाहिए क्योंकि जनता के विचार बदलने को ही शास्त्रार्थ होता है। जनता में लिखित शास्त्रार्थों की बात समय की बरबादी के अतिरिक्त कुछ नहीं है, शास्त्रार्थ मौखिक ही होने चाहिये, दोनों पक्ष समय का पालन करें। और अध्यक्ष समय का निर्देश करें, तथा जनता को शान्त रखें। जनता को हर्ष या खेद प्रकट करने के लिए ताली बजाना या शोर करना ये न होने दिया जाये, केवल मनों में ही जनता विचार करे, पक्ष तथा प्रतिपक्ष के नियम न्यायदर्शन में दिये हुए हैं। उनसे बाहर होने वाले वक्ता को रोकना अध्यक्ष का कर्त्तव्य है, शास्त्रार्थ तीन प्रकार का होता है, **१. वाद, २. जल्प, ३. वितण्डा।**

(१) **वाद**—

"प्रमाण, तर्क, साधनोपालम्भः सिद्धांताविरुद्धः पंच पंचावयबोपपन्नः पक्ष प्रतिपक्ष परिग्रहो वादः।" (न्याय दर्शन, १-२-१) अर्थात्—उचित प्रमाण और तर्कों से अपने पक्ष को सिद्ध करना और विपक्ष का उपालभ्य (खण्डन) करना, सिद्धाँत के विरुद्ध न होना, पांच अवयवों से युक्त पक्ष और प्रतिपक्षों का ग्रहण करके जो कथोपकथन हो वह "वाद" हैं। **"प्रतिज्ञा हेतूदांहरणोपनयन, निगमान्यवयवाः"।।** (न्याय दर्शन, १-१-३२) अर्थात्—१. प्रतिज्ञा (साध्य) २. हेतु (साधना) ३. उदाहरण ४. उपनय (इन्हें युक्त करना) ५. निगमन (पूरी संगति के साथ मेल करा देना) ये पांच "अवयव" हैं, शास्त्रार्थ (वाद) के।

(२) जल्प—

"यथोक्तोपपन्नश्छल जाति निग्रह स्थान साध्नोपालम्भो जल्पः" । (न्यायदर्शन १-२-२) अर्थात्—प्रतिज्ञा आदि से युक्त छल जाति और निग्रह स्थानों से खण्डन मण्डन "जल्प" है। **"छल"?**—**"वचन विधातोऽर्थेपपत्याछलम्"** । (न्यायदर्शन, १-२-५१) अर्थात् वक्ता के भावों के विरुद्ध कल्पना करके वक्ता के पक्ष पर आक्षेप करना भूल है, यह वाक् छल, उपचार छल, आदि कई प्रकार का होता है जैसे **"जातिः"**—**"साधर्म्य वैधर्म्याभ्यां प्रत्यवस्थानं जातिः"** । (न्यायदर्शन, १-२-५९) अर्थात् विवाद करना और सब नियमों की उपेक्षा करना **"जाति"** कहाता है। **"निग्रह-स्थान?"**— **विप्रतिपत्तिरप्रतिपत्तिश्च निग्रह स्थानम्** । (न्याय दर्शन १-२-६०) अर्थात् वक्ता के कहे हुए को उलटा समझना और विवाद करना निग्रह स्थान है, जाति और निग्रह स्थान कई प्रकार के हैं। **"हेत्वाभासः"**?—जो हेतु सा लगे, परन्तु साध्य पर ठीक न बैठे, वह **हेत्वाभास** है। यथा—**"सव्यभिचार, विरुद्ध, प्रकरणसम साध्यसम, कालतीता हेत्वाभासः"**। (न्यायदर्शन, १-२-४५) अर्थात्—सव्यभिचार अर्थात् अनैकान्तिक, अतिव्याप्ति, विरुद्ध प्रकरणसम, साध्यसम, अतीत काल ये **"हेत्वाभास"** है।

(३) वितण्डा—

"स प्रतिपक्षस्थापना हीनो वितण्डा" । (न्यायदर्शन, १-२-४४) प्रतिपक्ष, पक्ष स्थापना के बिना ही विवाद करने लगना **वितण्डा** है। शास्त्रार्थ की ये मोटी-मोटी बातें स्मरण रखना चाहिये, शास्त्रार्थ दो प्रकार के होते हैं। (१)—सत्यासत्य के निर्णय के लिए। (२)—केवल हार जीत ने लिए। हमने पौराणिक पण्डितों के साथ हमेशा यही देखा है कि छल से, दुंद-दपाड़े से, हुल्लड़ से, शास्त्रार्थों में अपनी जीत कराना। वाराणसी में ऋषि दयानन्द जी के साथ शास्त्रार्थ में श्री स्वामी विशुद्धानन्द जी ने तथा अन्य पौराणिक पण्डितों ने यही किया था। विषयान्तर कर देना, हुल्लड़ मचाना और आज तक भी उनका यह व्यवहार बदला नहीं है मौलवियों तथा पादरियों से जितने भी शास्त्रार्थ आज तक होते रहे हैं, वे सभी मन्तक के अनुसार ही होते रहे हैं।

शास्त्रार्थों में ऐसे हुल्लड़बाजों से रक्षा के लिए मजबूत स्वयं सेवकों का एक दल रखना चाहिए, शास्त्रार्थ में उत्तेजित भी कभी न होना चाहिये उत्तेजित होने वाला शास्त्रार्थकर्त्ता पराजित हो जाता है। प्रमाण सही होने चाहिये, और अपने स्वयं देखे ग्रन्थों के ही हों, न कि दूसरों के बताये। दूसरों पर निर्भर रहना भी हार का कारण बन जाता है। झूठे प्रणाणों से छल कपट से नैतिकता नष्ट हो जाती है। धर्मोपदेशकों को कभी कचहरी के वकीलों की नकल नहीं करनी चाहिए, हार हो या जीत ! नैतिकता और सत्य का नाश न होने पावे यह अवश्य ध्यान रखना चाहिए। पौराणिकों के शास्त्रार्थ हमने देखे हैं। नैतिकता, सभ्यता और सत्य का गला, ये लोग घोट डालते हैं। विशेषकर श्री माधवाचार्य का तो आधार ही कुतर्क, छल, और असत्य रहते हैं। मुसलमान-ईसाई विद्वान् लज्जायुक्त होते हैं पर ये माधवाचार्य आदि पौराणिक पण्डित लज्जा को दूर भगा देते हैं।

"अध्यक्ष"—

शास्त्रार्थ में एक उत्तम अध्यक्ष होना चाहिए, जिसका जनता पर प्रभाव हो, प्रबन्ध में निपुण हो, पक्षपात रहित हो, परन्तु उसे निर्णय देने का अधिकार नहीं है। निर्णय तो जनता खुद

अपने मन में करेगी। जनता भी प्रत्यक्ष निर्णय नहीं दे सकती जनता के विचार बदलने के लिए ही शास्त्रार्थ किये जाते हैं। हार जीत के लिए नहीं। जनता का ज्ञान बढ़े, तर्कों को समझें, पर यह काम शास्त्रार्थों में शान्ति रखने से होता है। अध्यक्ष महोदय समय का निर्देश करेंगे। और वक्ता को बद-जुबानी करने से रोकेंगे। कोई भी पक्ष दुराग्रह करे तो अध्यक्ष उसे न माने। स्वयंसेवक बलशाली व चौकन्ने, सावधान होने चाहिये, जो हुल्लड़ करने वालों एवं झगड़ा उठाने वालों को बाहर निकाल सकें, पुलिस का प्रबन्ध भी रहे तो अच्छा है।

"प्रमाण"—

शास्त्रार्थ में प्रमाण उन ग्रन्थों के होने चाहिये जिनको दूसरा पक्ष स्वीकार करता हो तथा बुद्धि और तर्क संगत हो।

"ग्रन्थ"—

शास्त्रार्थ जिस विषय पर भी हो उस विषय से सम्बद्ध प्रमाणिक ग्रन्थ अपने साथ रखने चाहिये।

"लिखित शास्त्रार्थ"—

यह घरों पर बैठे बैठे भी हो सकते हैं। इसके लिए सभा की आवश्यकता नहीं है। परन्तु समय नष्ट करने के लिए पौराणिकों ने यह निराला ढंग निकाल रक्खा है कि—"शास्त्रार्थ लिखित हो और संस्कृत में ही हो" इससे जनता के पल्ले कुछ नहीं पड़ता, संस्कृत जानने वा व्याकरण अथवा दर्शन पर शास्त्रार्थ होना विद्या पर शास्त्रार्थ है, धार्मिक शास्त्रार्थ के लिए संस्कृत बोलने की आवश्यकता नहीं है। सम्भव हो तो शास्त्रार्थ के कथोप-कथन को "टेप रिकार्ड" पर लिया जावे।

असंगति और प्रकरण विरुद्धता—

शास्त्रार्थ को मुख्य पक्ष से हटाकर अन्यथा मोड़ देना "असंगति और प्रकरण बिरुद्धता" कहना कहाता है। यह काम धूर्त्त, बेईमान, शास्त्रार्थकर्त्ता करते हैं, हमारे शास्त्रार्थ कर्त्ताओं को इस विषय में सावधान रहना चाहिये।

शास्त्रार्थ भारत की पुरानी परम्परा है, महाराजा जनक की सभा में शास्त्रार्थ होते रहते थे, जैन, बौद्ध, चार्वाक, और वैदिक ब्राह्मणों में शास्त्रार्थ चलते रहे। शास्त्रार्थ करने से स्वाध्याय की रुचि बढ़ती है ईसाई और पौराणिक तो शास्त्रार्थों में अक्सर भाग लेते रहते हैं। हमें मुसलमानों एवं अन्य मतावलम्बियों को भी सप्रेम समझा कर शास्त्रार्थों में आगे लाना चाहिये।

निवेदक—

"बिहारीलाल शास्त्री" "काव्यतीर्थ"

(बरेली)

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित एवं प्रसारित
उपलब्ध साहित्य की संक्षिप्त सूची

क्रम सं०	पुस्तक का नाम	लेखक व भाष्यकार व संग्रह कर्त्ता	मूल्य
१.	निर्णय के तट पर (शास्त्रार्थ संग्रह) प्रथम भाग	अमर स्वामी सरस्वती तथा लाजपतराय अग्रवाल	रु० पै० १५०-००
२.	,, ,, ,, (उत्तरार्ध भाग)	,,	८०-००
३.	,, ,, ,, (द्वितीय भाग)	,,	१५०-००
४.	,, ,, ,, (तृतीय भाग)	,,	१५०-००
५.	,, ,, ,, (चतुर्थ भाग)	,,	१५०-०० (प्रैस में)
६.	कौन कहता है द्रोपदी के पाँच पति थे ?	अमर स्वामी सरस्वती	१०-००
७.	गीता में ईश्वर का स्वरूप	,,	३-००
८.	सन्ध्या के मन्त्रों की व्याख्या	,,	३-००
९.	शिवाजी का पत्र-महाराजा जयसिंह के नाम (मूल फ़ारसी तथा हिन्दी काव्य अनुवाद सहित)	अमर स्वामी सरस्वती	३-००
१०.	अमर गीतांजली (नये व पुराने सभी भजनों का अपूर्व संग्रह) (२ भाग)	भिन्न-भिन्न कवि	४-०० प्रति भाग
११.	सत्यार्थ प्रकाश मण्डन	अमर स्वामी सरस्वती	८-००
१२.	सत्य साईं बाबा का कच्चा चिट्ठा	श्रीमति वीना गुप्ता एम० ए०	०-५०
१३.	रजनीश भगवान या शैतान ?	,,	०-५०
१४.	ईश्वर सिद्धि	पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी	०-५०
१५.	Murder of Gandhi (What ? Why ?? When ???)	Statement By—Nathuram Godse	१०-००
१६.	दयानन्द दर्शन (Philosophy of Swami Daya Nand)	डॉ० वेद प्रकाश	१५-००

नोट—

अन्य किसी भी ग्रन्थ के लिए प्रकाशन से सम्पर्क स्थापित् करें। एवं विशेष जानकारी के लिए नवीन सूची पत्र मंगायें।

निवेदक—
"लाजपतराय अग्रवाल"
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग
१०५८, विवेकानन्द नगर गाजियाबाद
(उ० प्र०) २०१००१
(भारत)

* सहयोगी वर्ग की सूची *

नोट—इस भाग का प्रथम संस्करण सन् १९७९ ई० में छपा था तब निम्न महानुभावों ने इसके प्रकाशनार्थ निम्न राशी अनुदान स्वरूप दी थी, जिनके सहयोग से इसका प्रथम संस्करण प्रकाशित हुआ था—उसी की बिक्री से जो राशी एकत्रित हुई तथा उसमें अन्य राशी अपने पास से लगाकर यह द्वितीय संस्करण प्रकाशित कराया गया है—

१.	श्री महाराजा रणञ्जय सिंह जी, (अमेठी)	५००-००
२.	श्री बालक राम जी कमल, (बम्बई)	५००-००
३.	श्री चान्द रत्न जी दमानी (माता सुलखनी देवी धर्मार्थ ट्रस्ट) कलकत्ता	१०००-००
४.	श्री ओमप्रकाश जी कपूर (चण्डीगढ़)	२५०-००
५.	आर्य समाज ईश्वर नगर, भाण्डूप (बम्बई)	२५१-००
६.	श्री भगवती प्रसाद जी गुप्ता, सागर बिहार (बम्बई)	२५१-००
७.	श्रीमती प्रकाशवती अरोड़ा, सान्ताक्रुज (बम्बई)	५००-००
८.	श्री देव राज जी गुप्ता, दयानन्द कॉलेज शोलापुर (महाराष्ट्र)	२००-००
९.	श्री पण्डित प्रेमचन्द जी (रिटायर्ड जज) चण्डीगढ़	१०१-००
१०.	श्री आर० डी० शर्मा, शान्ताक्रुज (बम्बई)	२००-००
११.	श्रीमती विद्यावती सभरवाल, नासिक (महाराष्ट्र)	१२६-००

हम अपने इन सभी सहयोगियों के हृदय से आभारी हैं जिनके सहयोग से इस ग्रन्थ के प्रथम व द्वितीय संस्करण का प्रकाशन सम्भव हुआ। इस सम्बन्ध में **"एक नई परम्परा का"** शुभारम्भ **"आर्य समाज शिवाजी पार्क-बम्बई"** द्वारा हुआ है जिसका विवरण अन्तिम पृष्ठ संख्या ४८४ पर दिया गया है उसका अवलोकन करें आप भी उस परम्परा को आगे बढ़ायें और यश प्राप्त करें।

मिट जायेंगे एक दिन, सब धन धरनी धाम।
"अमर" रहेगा कल्प तक दानबीर का नाम॥

"व्यवस्थापक"
अमर स्वामी प्रकाशन विभाग
गाजियाबाद (उ० प्र०)

एक नई परम्परा का शुभारम्भ

आर्य समाज शिवाजी पार्क (बम्बई) के प्रधान **"श्री जयन्ती लाल हरजीवन दास संध्वी"** जी ने मेरे अनुरोध पर एक बहुत ही प्रशंसनीय एवं सराहनीय परम्परा की शुरूआत की है। ज्यादातर लोग अपना पैसाभवनों के निर्माण आदि में देते है और अपने आपको पाप से मुक्त समझते हैं या फिर ऐसे कार्यों में आर्थिक मदद करते हैं, जो कुछ ही समय के लिए उपयोगी होता है बाद में उसका कोई लाभ नहीं होता। आज सारे देश में सैकड़ों मन्दिर, समाज सेवी संस्थाओं के भवन वैसे ही खाली पड़े हुए हैं कि जिनमें झाड़ू लगाने वाला भी कोई नहीं है। वे सभी भवन दानियों के दान से निमित हुए, परन्तु उनकी उपयोगिता कुछ भी नहीं। "आर्य समाज शिवाजी पार्क (बम्बई)" ने पांच हजार रुपया अमर स्वामी प्रकाशन विभाग को इन प्राचीन शास्त्रार्थों को छपाने के निमित्त प्रदान किया हैं। जिससे इस ग्रन्थ के छपाने में बड़ी भारी सहायता मिली, अन्य भी आर्य सज्जनों ने इसमें अपना योग-दान दिया है। जिनकी सूची यहां पृष्ठ सख्या ४८३ पर दी गई है। ज्ञानयज्ञ से बड़ा कोई यज्ञ नहीं है। अतः मैं जहां श्री संध्वी जी को आशीर्वाद एवं साधुवाद देता हूं वहाँ अन्य आर्य पुरुषों को भी कहूंगा कि वे भी इससे प्रेरणा लें। जब तक यह ग्रन्थ कायम रहेगा तब तक देश-विदेश में इन सहयो-गियों का नाम **"अमर"** रहेगा।

मिट जायेंगे एक दिन, सब धन धरनी धाम।
"अमर" रहेगा कल्प तक दानवीर का नाम॥

वैदिक धर्म का—
"अमर स्वामी सरस्वती"